प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रकाशन का पूर्व इतिहास

चिरकाल की प्रतीक्षा के बाद सिंघी जैन ग्रन्थ-माला का तरुणप्रभाचार्यकृत 'षडावश्यक बालावबोध वृत्ति' नामक यह एक विशिष्ट-ग्रन्थ विद्वानों के हाथ में उपस्थित हो रहा है।

इस ग्रन्थ के प्रकाशन का इतिहास मेरे साहित्यिक-जीवन के प्रारंभ काल के जितना पुराना है।

सन् १९१९ में पूना में रहते हुए सबसे प्रथम मुझे इस ग्रन्थ का परिचय हुआ। मैं उन दिनों पूना में नूतन स्थापित भाण्डारकर प्राच्यविद्या संशोधन मंदिर में राजकीय ग्रन्थ संग्रह का निरीक्षण कर रहा था; प्रो. उटगीकर उस समय उक्त संग्रह के अधीक्षक थे। वे संग्रहगत पुराने ग्रन्थों की सूचियों का निरीक्षण कर रहे थे, तब उन्होंने जैन ग्रन्थों की सूची में 'षडावश्यक वृत्ति' नामक इस ग्रन्थ की बहुत सुन्दर प्राचीन हस्तलिखित प्रति (पांडुलिपि) मेरे सामने लाकर रखी और पूछा कि इस ग्रन्थ का क्या विषय है?

चूंकि इसके पहले मैंने भी इस ग्रन्थ को देखा नहीं था इसलिये प्रो. उटगीकर की जिज्ञासा को पूरी करने के लिये मैंने ग्रन्थ को हाथ में लेकर उसके आदि अन्त के कुछ पत्रों को उलट पुलट किया, तो मुझे मालूम हुआ कि आवश्यक सूत्र पर प्राचीन गुजराती भाषा में सुलिखित, बालजनों को बोध कराने की दृष्टि से लिखा गया, विवरणात्मक बालावबोध वृत्ति अर्थात् व्याख्या है।

उस समय मेरे पास उक्त प्राच्य विद्या संशोधन मंदिर के मुख्य पुरस्कर्ता स्व. प्रो. पांडुरंग दामोदर गुणे बैठे हुए थे। डॉ. गुणे फर्गुसन कॉलेज में संस्कृत भाषा एवं तुलनात्मक भाषा विज्ञान के मुख्याध्यापक थे। उन्होंने जर्मनी जाकर डॉ. हर्मन जेकोबी के पास प्राकृत भाषा का विशेष अध्ययन किया था और पीएच. डी. की डिग्री ली थी। प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषा में लिखित साहित्य का उस समय तक विद्वानों को विशेष परिचय प्राप्त नहीं हुआ था। मुझे जैन साहित्य एवं जैन ग्रन्थ भंडारों का अच्छा अध्ययन एवं अवलोकन होने के कारण डॉ. गुणे मुझसे इस विषय में विशिष्ट जानकारी प्राप्त करना चाहते थे। अतः उनका मेरे साथ घनिष्ट-सा सम्बन्ध हो गया था। जैन भंडारों में प्राकृत अपभ्रंश तथा प्राचीन देशी भाषाओं में लिखित बहुत विशाल साहित्य भरा पड़ा है। इसका परिचय मैं उनको देता रहता था। कुछ छोटी अपभ्रंशी रचनाओं का मैंने उनको परिचय दिया तो वे उनको सम्पादित कर किसी संशोधनात्मक अंग्रेजी पत्रिका में प्रगट करना चाहते थे। उसी सिलसिले में डॉ. गुणे को मैंने इस ग्रन्थ का भी कुछ परिचय कराया। बालावबोध शब्द का अर्थ उनको समझाया। मराठी भाषा में बालबोध शब्द प्रचलित है। परन्तु वह तो प्रायः देवनागरी लिपि के अर्थ में प्रयुक्त होता है। बालबोध अर्थात् देवनागरी लिपि में लिखी तथा छपी हुई मराठी पुस्तक। इससे भ्रान्त होकर डॉ. गुणे ने पूछा कि क्या यह ग्रन्थ मराठी भाषा में है? तब मैंने उनको बताया कि प्राचीन जैन ग्रन्थों का आबाल-जनों को ज्ञान प्राप्त कराने की दृष्टि से उन पर प्रचलित देश भाषा में जो कोई अर्थ, विवरण या विवेचन आदि लिखे जाते हैं वे सामान्य रूप से बालावबोध के नाम से पहचाने जाते हैं।

जैन आगमों में आवश्यक सूत्र-नामक नामक प्राकृत भाषा का जो एक मूल सूत्र है, उस पर प्राचीन काल में संस्कृत भाषा में अनेक व्याख्याएँ तथा टीकाएँ आदि लिखी गई हैं; परंतु यह आवश्यक सूत्र संस्कृत तथा प्राकृत भाषा नहीं जानने वाले जैन गृहस्थ-स्त्री, पुरुष या बाल आदि सामान्य जनों को भी अवश्य पठनीय है। इसलिये इसका ज्ञान होना आवश्यक मानकर मध्य-कालीन जैन विद्वानों ने अपने समय की प्रचलित देश भाषा में विवरण आदि लिखने का प्रयत्न

किया है और इस प्रकार अनेक प्राचीन जैन ग्रन्थों का तत्कालीन देश भाषा में ऐसे बहुत से बालावबोध स्वरूप लिखे गये ग्रन्थ मिलते हैं।

डॉ. गुणे को जब यह मालूम हुआ कि इस ग्रन्थ की रचना विक्रम की पन्द्रहवीं शताब्दि के प्रारंभ में हुई और इसकी भाषा बहुत ही व्याकरणबद्ध तथा शुद्ध उच्चारण पूर्वक ग्रथित है तो उनको एक जिज्ञासा उत्पन्न हुई और वे कुछ दिन तक मेरे पास बैठकर इस ग्रन्थ के कुछ अंशों को समझने का प्रयत्न करते रहे।

डॉ. गुणे का विचार उस समय अपभ्रंश भाषा के साथ सम्बन्ध रखनेवाला छोटा-मोटा व्याकरणात्मक निबन्ध लिखने का था इस दृष्टि से वे प्राचीन मराठी भाषा का सबसे महत्व का ग्रन्थ जो 'ज्ञानेश्वरी' है–उसका भी अध्ययन कर रहे थे। चूंकि 'ज्ञानेश्वरी' की मूल प्राचीन मराठी भाषा का सम्बन्ध प्राचीनतम गुजराती भाषा के साथ भी कुछ कुछ साम्य रखता है। इसलिये मैं भी ज्ञानेश्वरी की रचना का उस दृष्टि से अध्ययन करता रहता था। डॉ. गुणे का यह विचार हुआ कि तरुणप्रभाचार्य कृत-प्रस्तुत षडावश्यक बालावबोध के कुछ अंशों को प्राचीन मराठी ग्रन्थ के रूप में अन्तर्गत किया जाय तो कैसा रहेगा?

यों मैं कई वर्षों से गुजराती भाषा में लिखित प्राचीन पद्य-गद्यात्मक उल्लेखों का संग्रह करता रहा था। पाटण में रहते हुए मैंने ताडपत्रों पर लिखे गये कितने ही गद्यांशों का भी संग्रह कर रखा था और वैसे ही वैसी अनेक पद्य रचनाओं का भी संग्रह करता रहा।

प्रस्तुत बालावबोध की विशिष्ट उपयोगिता और उसके प्रकाशन निमित्त मेरे प्रयत्न

पर जब मैंने तरुणप्रभाचार्य कृत प्रस्तुत षडावश्यक बालावबोध का विशेष ध्यानपूर्वक अवलोकन किया तो मुझे इसकी विशिष्टता का अच्छा ख्याल हुआ और मैंने सोचा कि इस ग्रन्थ का प्राचीन गुजराती भाषा के अध्ययन की दृष्टि से विशिष्ट महत्व है और प्रकाश में लाना चाहिए।

यों मैंने इससे तो पहले सोम सुन्दरसूरि कृत रचनाओं में से ऐसे कितने प्राचीन भाषा के गद्यात्मक अवतरणों का संग्रह कर रखा था। तथा माणिक्यसुन्दरकृत–'वाग्विलास' नामक एक सम्पूर्ण गुजराती गद्यग्रन्थ का प्रकाशन भी गायकवाड़ ओरिएण्टल सिरीज के एक ग्रन्थ में प्रकाशित करवाया था। परन्तु उक्त रचनाओं की अपेक्षा मुझे प्रस्तुत 'षडावश्यक बालावबोध' अनेक दृष्टि से अधिक महत्व का मालूम दिया। इसके रचयिता तरुणप्रभाचार्यने गुजरात राजस्थान सिन्ध आदि प्रदेशों में विशेष परिभ्रमण किया था। अतः इनको तत्कालीन देश भाषा के विविध स्वरूपों का अच्छा परिचय था।

प्रथम तो इस ग्रन्थ की रचना वि. सं. १४११-१२ में हुई, जो तब तक प्राप्त मुझे सबसे प्राचीनतम गद्यरचना मालूम दी और दूसरी विशिष्टता इसकी यह मालूम दी कि जो प्रति पूना में उपलब्ध है वह उसी समय लिखी गई और वह भी स्वयं ग्रन्थकार के निजी तत्त्वावधान में तैयार की गई है। प्रतिलिपि को ग्रन्थकारने स्वयं पदच्छेद आदि के चिन्हों से अंकित की और लिपिकर्ता से कोई शब्द या अक्षर छूट गया मालूम दिया तो उसे स्वयं उन्होंने शुद्ध कर दिया। इस प्रकार प्रस्तुत ग्रन्थ की उक्त प्रतिलिपि सर्वथा प्रमाणभूत प्रतीत हुई। अतः विचार हुआ कि इस ग्रन्थ को उस मूल प्रति के आधार पर तैयार करवाकर प्रकाशित करना चाहिए।

इसके बाद सन् १९२० में महात्मा गांधीजी ने अहमदाबाद में गुजरात विद्यापीठ नामक राष्ट्रीय विश्वविद्यालय की स्थापना की और उसमें सेवा देने के लिए स्वयं महात्माजी ने मुझे आमंत्रित किया। तब मैं पूना स्थित अपने मुख्य कार्यालय को संकुचित कर अहमदाबाद के गुजरात विद्या-

प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रकाशन का पूर्व इतिहास

चिरकाल की प्रतीक्षा के बाद सिंघी जैन ग्रन्थ-माला का तरुणप्रभाचार्यकृत 'षडावश्यक-बालवबोध वृत्ति' नामक यह एक विशिष्ट-ग्रन्थ विद्वानों के हाथ में उपस्थित हो रहा है।

इस ग्रन्थ के प्रकाशन का इतिहास मेरे साहित्यिक-जीवन के प्रारंभ काल के जितना पुराना है।

सन् १९१९ में पूना में रहते हुए सबसे प्रथम मुझे इस ग्रन्थ का परिचय हुआ। मैं उन दिनों पूना में नूतन स्थापित भाण्डारकर प्राच्यविद्या संशोधन मंदिर में राजकीय ग्रन्थ संग्रह का निरीक्षण कर रहा था; प्रो. उटगीकर उस समय उक्त संग्रह के अधीक्षक थे। वे संग्रहगत पुराने ग्रन्थों की सूचियों का निरीक्षण कर रहे थे, तब उन्होंने जैन ग्रन्थों की सूची में 'षडावश्यक वृत्ति' नामक इस ग्रन्थ की बहुत सुन्दर प्राचीन हस्तलिखित प्रति (पांडुलिपि) मेरे सामने लाकर रखी और पूछा कि इस ग्रन्थ का क्या विषय है?

चूंकि इसके पहले मैंने भी इस ग्रन्थ को देखा नहीं था इसलिये प्रो. उटगीकर की जिज्ञासा को पूरी करने के लिये मैंने ग्रन्थ को हाथ में लेकर उसके आदि अन्त के कुछ पत्रों को उलट पुलट किया, तो मुझे मालूम हुआ कि आवश्यक सूत्र पर प्राचीन गुजराती भाषा में सुलिखित, बालजनों को बोध कराने की दृष्टि से लिखा गया, विवरणात्मक बालावबोध वृत्ति अर्थात् व्याख्या है।

उस समय मेरे पास उक्त प्राच्य विद्या संशोधन मंदिर के मुख्य पुरस्कर्ता स्व. प्रो. पांडुरंग दामोदर गुणे बैठे हुए थे। डॉ. गुणे फर्गुसन कॉलेज में संस्कृत भाषा एवं तुलनात्मक भाषा विज्ञान के मुख्याध्यापक थे। उन्होंने जर्मनी जाकर डॉ. हर्मन जैकोबी के पास प्राकृत भाषा का विशेष अध्ययन किया था और पीएच. डी. की डिग्री ली थी। प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषा में निबद्ध साहित्य का उस समय तक विद्वानों को विशेष परिचय प्राप्त नहीं हुआ था। मुझे जैन साहित्य एवं जैन ग्रन्थ भंडारों का अच्छा अध्ययन एवं अवलोकन होने के कारण डॉ. गुणे मुझसे इस विषय में विशिष्ट जानकारी प्राप्त करना चाहते थे। अतः उनका मेरे साथ घनिष्ट-सा सम्बन्ध हो गया था। जैन भंडारों में प्राकृत अपभ्रंश तथा प्राचीन देशी भाषाओं में लिखित बहुत विशाल साहित्य भरा पड़ा है। इसका परिचय मैं उनको देता रहता था। कुछ छोटी अपभ्रंश रचनाओं का मैंने उनको परिचय दिया तो वे उनको सम्पादित कर किसी संशोधनात्मक अंग्रेजी पत्रिका में प्रगट करना चाहते थे। उसी सिलसिले में डॉ. गुणे को मैंने इस ग्रन्थ का भी कुछ परिचय कराया। बालावबोध शब्द का अर्थ उनको समझाया। मराठी भाषा में बालबोध शब्द प्रचलित है। परन्तु वह तो प्रायः देवनागरी लिपि के अर्थ में प्रयुक्त होता है। बालबोध अर्थात् देवनागरी लिपि में लिखी तथा छपी हुई मराठी पुस्तक। इससे भ्रान्त होकर डॉ. गुणे ने पूछा कि क्या यह ग्रन्थ मराठी भाषा में है? तब मैंने उनको बताया कि प्राचीन जैन ग्रन्थों का अल्पज्ञ-जनों को ज्ञान प्राप्त कराने की दृष्टि से उन पर प्रचलित देश भाषा में जो कोई अर्थ, विवरण या विवेचन आदि लिखे जाते हैं वे सामान्य रूप से बालावबोध के नाम से पहचाने जाते हैं।

जैन आगमों में आवश्यक सूत्र-नामक नामक प्राकृत भाषा का जो एक मूल सूत्र है, उस पर प्राचीन काल में संस्कृत भाषा में अनेक व्याख्याएँ तथा टीकाएँ आदि लिखी गई हैं; परन्तु यह आवश्यक सूत्र संस्कृत तथा प्राकृत भाषा नहीं जानने वाले जैन गृहस्थ-स्त्री, पुरुष या बाल आदि सामान्य जनों को भी अवश्य पठनीय है। इसलिये इसका ज्ञान होना आवश्यक मानकर मध्य-कालीन जैन विद्वानों ने अपने समय की प्रचलित देश भाषा में विवरण आदि लिखने का प्रयत्न

किया है और इस प्रकार अनेक प्राचीन जैन ग्रन्थों का तत्कालीन देश भाषा में ऐसे बहुत से बालवबोध स्वरूप लिखे गये ग्रंथ मिलते है।

डॉ. गुणे को जब यह मालूम हुआ कि इस ग्रन्थ की रचना विक्रम की पन्द्रहवीं शताब्दि के प्रारंभ में हुई और इसकी भाषा बहुत ही व्याकरणबद्ध तथा शुद्ध उच्चारण पूर्वक ग्रथित है तो उनको एक जिज्ञासा उत्पन्न हुई और वे कुछ दिन तक मेरे पास बैठकर इस ग्रन्थ के कुछ अंशों को समझने का प्रयत्न करते रहे।

डॉ. गुणे का विचार उस समय अपभ्रंश भाषा के साथ सम्बन्ध रखनेवाला छोटा-मोटा व्याकरणात्मक निबन्ध लिखने का था इस दृष्टि से वे प्राचीन मराठी भाषा का सबसे महत्त्व का ग्रन्थ जो 'ज्ञानेश्वरी' है–उसका भी अध्ययन कर रहे थे। चूंकि 'ज्ञानेश्वरी' की मूल प्राचीन मराठी भाषा का सम्बन्ध प्राचीनतम गुजराती भाषा के साथ भी कुछ कुछ साम्य रखता है। इसलिये मैं भी ज्ञानेश्वरी की रचना का उस दृष्टि से अध्ययन करता रहता था। डॉ. गुणे का यह विचार हुआ कि तरुणप्रभाचार्य कृत–प्रस्तुत षडावश्यक बालावबोध के कुछ अंशों को प्राचीन मराठी ग्रन्थ के रूप में अवतरित किया जाय तो कैसा रहेगा?

यों मैं कई वर्षों से गुजराती भाषा में लिखित प्राचीन गद्य-पद्यात्मक उल्लेखों का संग्रह करता रहा था। पाटण में रहते हुए मैंने ताड़पत्रों पर लिखे गये कितने ही गद्यांशों का भी संग्रह कर रखा था और वैसे ही वैसी अनेक पद्य रचनाओं का भी संग्रह करता रहा।

प्रस्तुत बालावबोध की विशिष्ट उपयोगिता और उसके प्रकाशन निमित्त मेरे प्रयत्न

पर जब मैंने तरुणप्रभाचार्य कृत प्रस्तुत षडावश्यक बालावबोध का विशेष ध्यानपूर्वक अवलोकन किया तो मुझे इसकी विशिष्टता का अच्छा ख्याल हुआ और मैंने सोचा कि इस ग्रन्थ का प्राचीन गुजराती भाषा के अध्ययन की दृष्टि से विशिष्ट महत्त्व है और प्रकाश में लाना चाहिए।

यों मैंने इसके तो पहले सोम सुन्दरसूरि कृत रचनाओं में से ऐसे कितने प्राचीन भाषा के गद्यात्मक अवतरणों का संग्रह कर रखा था। तथा माणिक्यसुन्दरकृत–'वाग्विलास' नामक एक सम्पूर्ण गुजराती गद्यग्रन्थ का प्रकाशन भी गायकवाड़ ओरिएण्टल सिरीज के एक ग्रन्थ में प्रकाशित करवाया था। परन्तु उक्त रचनाओं की अपेक्षा मुझे प्रस्तुत 'षडावश्यक बालावबोध' अनेक दृष्टि से अधिक महत्त्व का मालूम दिया। इसके रचयिता तरुणप्रभाचार्यने गुजरात राजस्थान सिन्ध आदि प्रदेशों में विशेष परिभ्रमण किया था। अतः इनको तत्कालीन देश भाषा के विविध स्वरूपों का अच्छा परिचय था।

प्रथम तो इस ग्रन्थ की रचना वि. सं. १४११-१२ में हुई, जो तब तक प्राप्त मुझे सबसे प्राचीनतम गद्यरचना मालूम दी और दूसरी विशिष्टता इसकी यह मालूम दी कि जो प्रति पूना में उपलब्ध है वह उसी समय लिखी गई और वह भी स्वयं ग्रन्थकार के निजी तत्त्वावधान में तैयार की गई है। प्रतिलिपि को ग्रन्थकारने स्वयं पदच्छेद आदि के चिन्हों से अंकित की और लिपिकर्ता से कोई शब्द या अक्षर छूट गया मालूम दिया तो उसे स्वयं उन्होंने शुद्ध कर दिया। इस प्रकार प्रस्तुत ग्रन्थ की उक्त प्रतिलिपि सर्वथा प्रमाणभूत प्रतीत हुई। अतः विचार हुआ कि इस ग्रन्थ को उस मूल प्रति के आधार पर तैयार करवाकर प्रकाशित करना चाहिए।

इसके बाद सन् १९२० में महात्मा गांधीजी ने अहमदाबाद में गुजरात विद्यापीठ नामक राष्ट्रीय विश्वविद्यालय की स्थापना की और उसमें सेवा देने के लिए स्वयं महात्माजी ने मुझे आमन्त्रित किया। तब मैं पूना स्थित अपने मुख्य कार्यालय को संकुचित कर अहमदाबाद के गुजरात विद्या-

प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रकाशन का पूर्व इतिहास

चिरकाल की प्रतीक्षा के बाद सिंघी जैन ग्रन्थ-माला का तरुणप्रभाचार्यकृत 'षडावश्यक बालावबोध वृत्ति' नामक यह एक विशिष्ट-ग्रन्थ विद्वानों के हाथ में उपस्थित हो रहा है।

इस ग्रन्थ के प्रकाशन का इतिहास मेरे साहित्यिक-जीवन के प्रारंभ काल के जितना पुराना है।

सन् १९१९ में पूना में रहते हुए सबसे प्रथम मुझे इस ग्रन्थ का परिचय हुआ। मैं उन दिनों पूना में नूतन स्थापित भाण्डारकर प्राच्यविद्या संशोधन मंदिर में राजकीय ग्रन्थ संग्रह का निरीक्षण कर रहा था; प्रो. उटगीकर उस समय उक्त संग्रह के अधीक्षक थे। वे संग्रहगत पुराने ग्रन्थों की सूचियों का निरीक्षण कर रहे थे, तब उन्होंने जैन ग्रन्थों की सूची में 'षडावश्यक वृत्ति' नामक इस ग्रन्थ की बहुत सुन्दर प्राचीन हस्तलिखित प्रति (पांडुलिपि) मेरे सामने लाकर रखी और पूछा कि इस ग्रन्थ का क्या विषय है?

चूंकि इसके पहले मैंने भी इस ग्रन्थ को देखा नहीं था इसलिये प्रो. उटगीकर की जिज्ञासा को पूरी करने के लिये मैंने ग्रन्थ को हाथ में लेकर उसके आदि अन्त के कुछ पन्नों को उलट पुलट किया, तो मुझे मालूम हुआ कि आवश्यक सूत्र पर प्राचीन गुजराती भाषा में सुलिखित, बालजनों को बोध कराने की दृष्टि से लिखा गया, विवरणात्मक बालावबोध वृत्ति अर्थात् व्याख्या है।

उस समय मेरे पास उक्त प्राच्य विद्या संशोधन मंदिर के मुख्य पुरस्कर्ता स्व. प्रो. पांडुरंग दामोदर गुणे बैठे हुए थे। डॉ. गुणे फर्गुसन कॉलेज में संस्कृत भाषा एवं तुलनात्मक भाषा विज्ञान के मुख्याध्यापक थे। उन्होंने जर्मनी जाकर डॉ. हर्मन जेकोबी के पास प्राकृत भाषा का विशेष अध्ययन किया था और पीएच. डी. की डिग्री ली थी। प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषा में लिखित साहित्य का उस समय तक विद्वानों को विशेष परिचय प्राप्त नहीं हुआ था। मुझे जैन साहित्य एवं जैन ग्रन्थ भंडारों का अच्छा अध्ययन एवं अवलोकन होने के कारण डॉ. गुणे मुझसे इस विषय में विशिष्ट जानकारी प्राप्त करना चाहते थे। अतः उनका मेरे साथ घनिष्ट-सा सम्बन्ध हो गया था। जैन भंडारों में प्राकृत अपभ्रंश तथा प्राचीन देशी भाषाओं में लिखित बहुत विशाल साहित्य भरा पड़ा है। इसका परिचय मैं उनको देता रहता था। कुछ छोटी अपभ्रंशी रचनाओं का मैंने उनको परिचय दिया तो वे उनको सम्पादित कर किसी संशोधनात्मक अंग्रेजी पत्रिका में प्रगट करना चाहते थे। उसी सिलसिले में डॉ. गुणे को मैंने इस ग्रन्थ का भी कुछ परिचय कराया। बालावबोध शब्द का अर्थ उनको समझाया। मराठी भाषा में बालबोध शब्द प्रचलित है। परन्तु, वह तो प्रायः देवनागरी लिपि के अर्थ में प्रयुक्त होता है। बालबोध अर्थात् देवनागरी लिपि में लिखी तथा छपी हुई मराठी पुस्तक। इससे भ्रान्त होकर डॉ. गुणे ने पूछा कि क्या यह ग्रन्थ मराठी भाषा में है? तब मैंने उनको बताया कि प्राचीन जैन ग्रन्थों का आबाल-जनों को ज्ञान प्राप्त कराने की दृष्टि से उन पर प्रचलित देश भाषा में जो कोई अर्थ, विवरण या विवेचन आदि लिखे जाते हैं वे सामान्य रूप से बालावबोध के नाम से पहचाने जाते हैं।

जैन आगमो में आवश्यक सूत्र-नामक नामक प्राकृत भाषा का जो एक मूल सूत्र है, उस पर प्राचीन काल में संस्कृत भाषा में अनेक व्याख्याएँ तथा टीकाएँ आदि लिखी गई हैं; परंतु यह आवश्यक सूत्र संस्कृत तथा प्राकृत भाषा नहीं जानने वाले जैन गृहस्थ-स्त्री, पुरुष या बाल आदि सामान्य जनों को भी अवश्य पठनीय है। इसलिये इसका ज्ञान होना आवश्यक मानकर मध्यकालीन जैन विद्वानों ने अपने समय की प्रचलित देश भाषा में विवरण आदि लिखने का प्रयत्न

किया है और इस प्रकार अनेक प्राचीन जैन ग्रन्थों का तत्कालीन देश भाषा में ऐसे बहुत से बालवबोध स्वरूप लिखे गये ग्रंथ मिलते हैं।

डॉ. गुणे को जब यह मालूम हुआ कि इस ग्रन्थ की रचना विक्रम की पन्द्रहवीं शताब्दि के प्रारंभ में हुई और इसकी भाषा बहुत ही व्याकरणबद्ध तथा शुद्ध उच्चारण पूर्वक ग्रथित है तो उनको एक जिज्ञासा उत्पन्न हुई और वे कुछ दिन तक मेरे पास बैठकर इस ग्रन्थ के कुछ अंशों को समझने का प्रयत्न करते रहे।

डॉ. गुणे का विचार उस समय अपभ्रंश भाषा के साथ सम्बन्ध रखनेवाला छोटा-मोटा व्याकरणात्मक निबन्ध लिखने का था इस दृष्टि से वे प्राचीन मराठी भाषा का सबसे महत्त्व का ग्रन्थ जो 'ज्ञानेश्वरी' है–उसका भी अध्ययन कर रहे थे। चूंकि 'ज्ञानेश्वरी' की मूल प्राचीन मराठी भाषा का सम्बन्ध प्राचीनतम गुजराती भाषा के साथ भी कुछ कुछ साम्य रखता है। इसलिये मैं भी ज्ञानेश्वरी की रचना का उस दृष्टि से अध्ययन करता रहता था। डॉ. गुणे का यह विचार हुआ कि तरुणप्रभाचार्य कृत–प्रस्तुत षडावश्यक बालावबोध के कुछ अंशो को प्राचीन मराठी ग्रन्थ के रूप में अवतरित किया जाय तो कैसा रहेगा?

यों मैं कई वर्षों से गुजराती भाषा में लिखित प्राचीन गद्य-पद्यात्मक उल्लेखों का संग्रह करता रहा था। पाटण में रहते हुए मैंने ताड़पत्रों पर लिखे गये कितने ही गद्यांशों का भी संग्रह कर रखा था और वैसे ही वैसी अनेक पद्य रचनाओ का भी संग्रह करता रहा।

प्रस्तुत बालावबोध की विशिष्ट उपयोगिता और उसके प्रकाशन निमित्त मेरे प्रयत्न

पर जब मैंने तरुणप्रभाचार्य कृत प्रस्तुत षडावश्यक बालावबोध का विशेष ध्यानपूर्वक अवलोकन किया तो मुझे इसकी विशिष्टता का अच्छा ख्याल हुआ और मैंने सोचा कि इस ग्रन्थ का प्राचीन गुजराती भाषा के अध्ययन की दृष्टि से विशिष्ट महत्त्व है और प्रकाश में लाना चाहिए।

यों मैंने इसके तो पहले सोम सुन्दरसूरि कृत रचनाओं में से ऐसे कितने प्राचीन भाषा के गद्यात्मक अवतरणों का संग्रह कर रखा था। तथा माणिक्यसुन्दरकृत–'वाग्विलास' नामक एक सम्पूर्ण गुजराती गद्यग्रन्थ का प्रकाशन भी गायकवाड़ ओरिएण्टल सिरीज के एक ग्रन्थ में प्रकाशित करवाया था। परन्तु उक्त रचनाओ की अपेक्षा मुझे प्रस्तुत 'षडावश्यक बालावबोध' अनेक दृष्टि से अधिक महत्त्व का मालूम दिया। इसके रचयिता तरुणप्रभाचार्यने गुजरात राजस्थान सिन्ध आदि प्रदेशों में विशेष परिभ्रमण किया था। अतः इनको तत्कालीन देश भाषा के विविध स्वरूपो का अच्छा परिचय था।

प्रथम तो इस ग्रन्थ की रचना वि. सं. १४११-१२ में हुई, जो तब तक प्राप्त मुझे सबसे प्राचीनतम गद्यरचना मालूम दी और दूसरी विशिष्टता इसकी यह मालूम दी कि जो प्रति पूना में उपलब्ध है वह उसी समय लिखी गई और वह भी स्वयं ग्रन्थकार के निजी तत्त्वावधान में तैयार की गई है। प्रतिलिपि को ग्रन्थकारने स्वयं पदच्छेद आदि के चिन्हों से अंकित की और लिपिकर्ता से कोई शब्द या अक्षर छूट गया मालूम दिया तो उसे स्वयं उन्होंने शुद्ध कर दिया। इस प्रकार प्रस्तुत ग्रन्थ की उक्त प्रतिलिपि सर्वथा प्रमाणभूत प्रतीत हुई। अतः विचार हुआ कि इस ग्रन्थ को उस मूल प्रति के आधार पर तैयार करवाकर प्रकाशित करना चाहिए।

इसके बाद सन् १९२० में महात्मा गांधीजी ने अहमदाबाद में गुजरात विद्यापीठ नामक राष्ट्रीय विश्वविद्यालय की स्थापना की और उसमें सेवा देने के लिए स्वयं महात्माजी ने मुझे आमंत्रित किया। तब मैं पूना स्थित अपने मुख्य कार्यालय को संकुचित कर अहमदाबाद के गुजरात विद्या-

पीठ में सबसे प्रथम एक राष्ट्रीय सेवक के रूप में सम्मिलित हुआ। मेरी प्रेरणा से गांधीजीने उक्त विद्यापीठ में प्राचीन भारतीय संस्कृति, साहित्य और इतिहास के विशिष्ट अध्ययन, अध्यापन की दृष्टि से पुरातत्त्व-मंदिर नामक एक विशिष्ट संशोधन विभाग की स्थापना की और उसके मुख्य आचार्य के रूप में मेरी नियुक्ति हुई।

इस विभाग में अनुस्नातक और स्नातकोत्तर विद्यार्थियों के अध्ययन की विशिष्ट व्यवस्था की गई थी। संस्कृत, पालि, अपभ्रंश, प्राचीन गुजराती, राजस्थानी फारसी और अरबी भाषा के अध्ययन की भी समुचित व्यवस्था की गई थी। साथ में भारत के प्राचीन इतिहास, स्थापत्य कला आदि सांस्कृतिक विषयों का भी विशिष्ट परिचय प्राप्त करने, कराने की भी योग्य व्यवस्था की गई। इन विषयों के विशिष्ट ज्ञाता विद्वानों का भी यथायोग्य प्रबन्ध किया गया।

अध्ययन, अध्यापक के सिवाय उन उन विषयों के प्राचीन ग्रन्थों के प्रकाशन कार्य करने की भी व्यवस्था की गई। तद्नुसार सर्वप्रथम संस्कृत, प्राकृत, पालि भाषा की प्राथमिक पाठ्यपुस्तकें प्रकाशित की गई। श्री काका साहेब कालेलकर जो उस समय उक्त पुरातत्त्व मंदिर के एक विशिष्ट परामर्शदाता, मंत्री के रूप में सम्मिलित हुए थे, उन्होंने 'उपनिषद्-पाठावली' नामक एक पुस्तक तैयार की। मैंने भी प्राकृत भाषा तथा पालि भाषा के विद्यार्थियों के लिए प्राकृत-पाठमाला तथा पालि पाठावली नामक दो प्राथमिक पुस्तिकाएँ तैयार की। प्राचीन गुजराती, राजस्थानी भाषा का विशेष अध्ययन एवं संशोधन करने, कराने की दृष्टि से 'प्राचीन गुजराती-गद्य संदर्भ' नामक एक विशिष्ट ग्रन्थ का संकलन तैयार किया। इस ग्रन्थ में सर्वप्रथम मैंने इसी 'षडावश्यक बालावबोध' में से कुछ कथाओं का संचयन किया। इसके उपरान्त सोमसुन्दरसूरिकृत कुछ कथाओं का संग्रह भी संकलित किया। माणिक्यसुन्दरकृत पृथ्वीचंद्र चरित्र अपरनाम 'वाग्विलास' नामक एक पूर्ण कृति भी उक्त संदर्भ में संकलित की गई तथा कितने ही पुरातन औक्तिक निबंधों का भी संकलन किया गया।

इस संदर्भ के संपादन के समय मेरा विचार हुआ कि प्रस्तुत 'षडावश्यक बालावबोध' पूर्ण रूप में 'गुजरात पुरातत्त्व मंदिर' ग्रन्थावली में यथासमय प्रकाशित किया जाय। तद्नुसार मैंने इस ग्रन्थ की सम्पूर्ण सुवाच्य अक्षरों में प्रेस कॉपी तैयार करवाई। इस समय मुझे पता लगा कि इस ग्रन्थ का मेरुसुन्दरकृत-संक्षिप्त रूप भी भंडारों में प्राप्त होता है। पता लगाने पर बम्बई की रॉयल एशियाटिक सोसायटी के ग्रंथ संग्रह में भी उसकी एक प्राचीन प्रति विद्यमान है। तब मैंने उसको भी मंगवाई और इन दोनों ग्रन्थों के पाठों का मिलान करना चाहा तो मुझे मालूम हुआ कि मेरुसुन्दर ने बहुत से अंश तो तरुणप्रभाचार्य के ग्रन्थ से वैसे के वैसे ही उद्धृत कर लिये हैं और कहीं कहीं वाक्यान्तर और शब्दान्तर का भी प्रयोग किया है। मैं चाहता था कि ग्रन्थ के मूल भाग में तरुणप्रभकृत पाठ दे दिया जाय और उसके नीचे पाद टिप्पणी के रूप में मेरु-सुन्दरकृत पाठ दिया दे जाय। क्योंकि तरुणप्रभ और मेरुसुन्दर के बीच में प्रायः एक शताब्दि के जितना अन्तर है। इसलिए भाषा का तुलनात्मक अध्ययन करनेवाले शोधक-विद्वानों को यह पता लग जाय कि तरुणप्रभ की भाषा में और मेरुसुन्दर की भाषा में कितना अंतर पाया जाता है। इस दृष्टि से मैंने मेरुसुन्दरकृत रचना की पूर्ण प्रतिलिपि करवा ली थी।

यह समय सन् १९२६-२७ का था। मैंने इस ग्रन्थ को छपवाने के लिये बम्बई के निर्णय सागर जैसे विख्यात एवं सुन्दर छपाई करनेवाले प्रेस में जाकर इसके टाइप आदि का प्रबन्ध किया।

इसके साथ ही उसी गुजरात पुरातत्त्व मंदिर ग्रन्थावली में, गुजरात के प्राचीन इतिहास का एक मुख्य आधारभूत ग्रन्थ, मेरुतुंगाचार्य रचित 'प्रबन्ध चिन्तामणि' नामक ग्रन्थ का मुद्रण कार्य भी मैंने प्रारंभ किया और उसे बम्बई के वैसे ही प्रख्यात कर्नाटक प्रिंटिंग प्रेस में छपने को दे दिया। निर्णय सागर प्रेस में 'सम्मति तर्क' नामक महाग्रन्थ, पुरातत्त्व मंदिर ग्रन्थावली के अन्तर्गत छप रहा था इसलिए उस प्रेस ने कुछ समय बाद प्रस्तुत ग्रन्थ का काम हाथ में लेने को कहा।

सन १९२८ के प्रारंभ में मेरा विचार जर्मनी जाने का हुआ और उसके लिए मैंने, गुजरात विद्यापीठ से दो साल की अनुपस्थिति की स्वीकृति के लिये, महात्मा गांधीजी से निवेदन किया और उन्होंने मुझे सहर्ष एवं सोत्साह वैसा करने की अनुमति प्रदान की। साथ ही उन्होंने कृपा करके अपने यूरोपियन मित्रों को उद्दिष्ट कर अपने हस्ताक्षरों से अंकित एक संक्षिप्त सिफारसी पत्र भी मुझे प्रदान किया।

सन् १९२८ के मई महीने के अन्तिम सप्ताह में पी. एण्ड ओ. कम्पनी की स्टीमर द्वारा मैंने युरोप के लिये प्रस्थान किया। पेरिस और लन्दन की युनिवर्सिटियों और ब्रिटिश म्युझियम आदि का अवलोकन करता हुआ हालेंड और बेलजियम की कुछ विशिष्ट संस्थाएँ देखता हुआ, अगस्त महीने में जर्मनी के प्रख्यात बन्दरगाह हाम्बुर्ग में पहुँचा। वहाँ पर मेरे कई सम्मान्य जर्मन विद्वान मित्र- जैसे कि डॉ. हर्मन याकोबी, प्रो. फोनग्लाझेनाप, प्रो. ओट्टोश्रायडर, प्रो. शुब्रिंग, डॉ. आल्सडोर्फ आदि विद्वानों से मुलाकातो करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। दुःख के साथ लिखना पड़ता है कि इन विद्वानों में से प्रो. आल्सडोर्फ के सिवाय आज कोई विद्यमान नहीं है।

हाम्बुर्ग युनिवर्सिटी में इण्डोलोजी (भारतीय ज्ञानविज्ञान) विषयक शिक्षापीठ के अध्यक्ष प्रो. शुब्रिंग थे, जो सन् १९२६ में अहमदाबाद स्थित हमारे गुजरात पुरातत्त्व मंदिर का कार्य निरीक्षण करने के लिए आये थे। उनके साथ वहाँ पर प्रायः चार महीने व्यतीत किये। उनके शिष्यों में डॉ. ओल्सडोर्फ तथा डॉ. तवाड़िया (जो गुजरात के पारसी कौमके एक रिसर्च स्कॉलर थे और खासकर गुजराती भाषा के अध्ययन, अध्यापन एवं संशोधन कार्य का उच्च ज्ञान प्राप्त कर रहे थे), आदि पाँच-सात रिसर्च स्कॉलर जिनमें कुछ जर्मन बहिनें भी थी—काम कर रहे थे। डॉ. आल्स डोर्फ अपभ्रंश भाषा साहित्य का विशेष अध्ययन एवं संशोधन सम्पादन आदि कार्य कर रहे थे। डॉ. तवाड़िया भी जो गुजराती भाषा एवं साहित्य का विशिष्ट अध्ययन कर रहे थे के साथ प्राचीन गुजराती भाषा साहित्य विषयक चर्चा होती रहती थी। प्रसंगवश मैंने प्राचीनतम गुजराती गद्य साहित्य का जब परिचय कराया तो उसमें प्रस्तुत तरुणप्रभाचार्यकृत 'षडावश्यक बालावबोध' का भी परिचय विशेष रूप से कराया। चूंकि डॉ. तवाड़ियाने मेरी सम्पादित 'प्राचीन गुजराती गद्य सदर्भ' नामक पुस्तक का अच्छी तरह अवलोकन किया था। और उनके पास मेरी वह पुस्तक भी रखी हुई थी। प्रसंगवश मैंने उनसे कहा कि जब मैं जर्मनी से वापस लौटकर अपने स्थान गुजरात पुरातत्त्व मंदिर पहुँचूंगा तब इस पूरे ग्रन्थ को छपवाने का प्रबन्ध करूँगा इत्यादि।

प्रो. डॉ. शुब्रिंग अपने समय के जर्मन विद्वानों में जैन साहित्य के सबसे बड़े अभ्यासी और उच्च कोटि के मर्मज्ञ विद्वान थे। प्राकृत और संस्कृत, अपभ्रंश भाषा के अतिरिक्त प्राचीन गुजराती तथा हिन्दी भाषा के भी ज्ञाता थे। प्राचीन गुजराती गद्य-पद्य वे अच्छी तरह समझ लेते थे और मुझसे उनका आग्रह था कि मैं उन्हें जो पत्र लिखूँ वह गुजराती में ही लिखा करूँ। उनने भी प्रसंगवश प्रस्तुत 'षडावश्यक बालावबोध' ग्रन्थ का परिचय मैंने उनको कराया और वे इन सब बातों को बराबर नोट करते रहे।

हाम्बुर्ग से दिसम्बर में मैं बर्लिन गया और वहाँ पर मुझे युनिवर्सिटी में भारतीय विद्या संस्कृति के प्रधानाध्यापक तथा जर्मन ओरिएंटल सोसायटी के अध्यक्ष विश्वविख्यात गेहाइमराट डॉ. हाईन्रीस ल्युडर्स तथा उनकी विदुषी पत्नी डॉ. एल. जे. ल्युडर्स, डॉ. वाइवमेन आदि अनेक विद्वानों से परिचय करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

उसी तरह जर्मनी के विश्व विख्यात, वर्ल्ड पोलिटिक्स के महान् आचार्य, जर्मन साम्राज्य की पोलिटिक्स एकेडेमीके अध्यक्ष, प्रो. फोनशुल्स गेवेर्निल्स जैसे महान् राजनीतिज्ञ आदि अनेक विद्वानों का भी यथेष्ट परिचय प्राप्त करने का शुभअवसर मिला। फोनशुल्स गेवेर्निल्स अपने समय के संसार के एक राजनीतिशास्त्र के महान् शिक्षा गुरु थे। उनको भारत की तत्कालीन राजनीतिक परिस्थिति का भी बहुत कुछ परिज्ञान था। इग्लेंड के सुप्रसिद्ध राजनीतिज्ञ विद्वान और नेता प्रो. हेरल्ड लास्की जैसे उनके प्रिय शिष्यों में से थे। उनके साथ महात्मा गांधीजी द्वारा चलाई जाने-

वाली राजकीय प्रवृत्ति के विषय में भी बहुत-सी चर्चायें होती थी। उनकी एक मात्र विदुषी पुत्री थी, जिसको भी भारतीय संस्कृति और जागृति के विषय में बहुत रुचि थी और वह कई बार मेरे द्वारा बर्लिन में स्थापित हिन्दुस्तान हाउस में मिलने आया करती थी। डॉ ल्यूडर्स तथा उनकी पत्नी एवं प्रो. गेदेनित्स तथा उनकी पुत्री एक बार हिन्दुस्तान हाउस में चाय पान करने के लिए भी आये थे।

बर्लिन में बैठे बैठे भी गुजरात पुरातत्त्व मंदिर द्वारा छपते हुए और छपायेजाने वाले ग्रन्थों के विषय की चिन्ता बराबर बनी रहती थी। प्रबन्ध चिन्तामणि के कुछ प्रूफ भी मैं वहाँ मंगवाता रहा। प्राचीन गुजराती गद्य संदर्भ की प्रस्तावना जो मैं विस्तार के साथ लिखना चाहता था, परन्तु जर्मनी चले जाने के कारण वह लिख नहीं पाया। बाद में पीछे से पुरातत्त्व मंदिर को उसी स्वरूप में छपवाकर उसे प्रसिद्ध कर देना पड़ा। यदि उस प्रस्तावना को मैं उस समय लिख पाता तो उसमें प्रस्तुत 'षडावश्यक बालावबोध' के साथ सम्बन्ध रखनेवाली उपयुक्त माहिती लिख देता।

जर्मनी से आने पर ज्ञात हुआ कि गुजरात पुरातत्त्व मंदिर की स्थिति शिथिल-सी हो गई है, और मुझे महात्मा गांधीजी द्वारा प्रारम्भ नमक सत्याग्रह आन्दोलन में से संलग्न होकर सन् १९३० के मई महीने में अंग्रेज सरकार के जेल खाने में छ महीने की विश्रान्ति का आनन्द लेना पड़ा।

नासिक की सेंट्रल जेल में रहते हुए स्व. मित्रवर श्री कन्हैयालाल मुंशी से घनिष्ठ सम्बन्ध हुआ। हम दोनों पास पास की कोठरियो में रातको सो जाया करते थे, परन्तु सारा दिन; खाना पीना, उठना बैठना, चर्चा वार्ता करना आदि सब एक साथ ही करते रहते थे। मुंशीजी वहीं जेल में रहते हुए अपनी 'गुजरात एंड इट्स लिटरेचर' नामक प्रसिद्ध पुस्तक का आलेखन भी करते रहते थे। उसके विषय में उनके साथ हमेशा विचार-विमर्श होता रहता था। 'कुवलय माला' आदि ग्रन्थो का परिचय मैंने उनको कराया उसी तरह और भी अनेक ग्रन्थ तथा ऐतिहासिक प्रमाणों आदि के विषय में भी उनको बहुत से नोट्स कराये। उनके साथ भी प्राचीन गुजराती गद्य विषयक साहित्य के अनेक ग्रन्थों का परिचय देते हुए प्रस्तुत 'षडावश्यक बालावबोध' नामक ग्रन्थ का भी विशिष्ट परिचय कराया। यह सुनकर मुंशीजी की बड़ी तीव्र अभिलाषा हुई कि गुजराती भाषा के ऐसे महत्त्व के ग्रन्थों का उद्धार करने की कोई योजना बनानी चाहिए।

चूंकि गुजरात पुरातत्त्व मंदिर की विघटना हो चुकी थी, अतः उसके स्थान पर बम्बई के पास अन्धेरी में एक ऐसी नूतन साहित्यिक संस्था स्थापित की जाय, जिसमें श्री मुंशीजी, मैं तथा अन्य इसी प्रकार के दो चार विद्वान आसन लगा कर बैठें और गुजरात की संस्कृति के साधनभूत विविध प्रकार के ग्रन्थों का आलेखन, सम्पादन तथा प्रकाशन आदि का कार्य किया जाय। श्री मुंशीजी की योजना थी कि उनके द्वारा पूर्वस्थापित गुजरात साहित्य सभा का पुनर्निर्माण किया जाय और अन्धेरी में एक अच्छीसी उपयुक्त जगह लेकर वहाँ पर कार्यारंभ किया जाय। इस विषय में जेल में बैठे बैठे हम अनेक मनोरथ किया करते थे।

इसी नासिक जेल में गुजरात बहुश्रुत, वयोवृद्ध, ख्यातनामा कवि श्री बलवन्तराय कल्याण-राय ठाकोर मुझसे मिलने आये। वे गुजराती साहित्य के उद्भट विद्वान थे। उस समय वे प्राचीन गुजराती भाषा की साहित्यिक कृतियों का अध्ययन एवं सम्पादन कार्य करना चाहते थे। उन्होंने जब मेरी सम्पादित उपर्युक्त 'प्राचीन गुजराती गद्य संदर्भ' नामक पुस्तक देखी तो उस पर उनको काम करने की इच्छा हुई। प्रसगवश वे नासिक के पास देवलाली नामक स्थान में रहनेवाले अपने एक मित्र के पास हवा खाने की दृष्टि से कुछ दिन आकर रहे थे। उनको ज्ञात हुआ कि मैं भी नासिक की जेल में हवा खा रहा हूँ। तब वे जेल सुपरिंटेंडेंट की खास इजाज़त लेकर मुझसे मिलने आये, सबसे पहले तो मुझे बहुत मीठे शब्दों में उन्होंने उपालम्भ दिया, कि आप साहित्य सेवा के महान् पुण्य कार्य को छोड़कर इस राजनैतिक खटपट के गोरखधन्धे में पड़कर अपना अमूल्य समय क्यों नष्ट कर रहे हैं-इत्यादि। चूंकि प्रो. ठाकोर एक विशिष्ट विचारधारा रखनेवाले बड़े स्वतंत्र मिजाज के धनी थे। महात्मा गांधीजी द्वारा चलाई गई कुछ राजकीय प्रवृत्तियों के वे खास विरोधी

थे। इसलिये मुझे उन्होंने उक्त प्रकार का मीठा उपालम्भ दिया, उनके साथ मेरा बहुत वर्षों से घनिष्ट सम्बन्ध था मैं जब पूना में भांडारकर रिसर्च इंस्टीट्यूट के लिए कार्य कर रहा था, तब वे पूना के देश प्रख्यात डेक्कन कॉलेज में एक वरिष्ट प्रोफेसर के पद पर काम कर रहे थे। तभी से उनके साथ मेरा विशिष्ट स्नेह सम्बन्ध हो गया था। प्रो. ठाकोर के साथ अनेक प्रकार की साहित्यिक चर्चा वार्ता के प्रसंग में उन्होंने अपनी यह इच्छा प्रकट की, कि 'प्राचीन गुजराती गद्य संदर्भ' गत गद्य रचनाओं पर भाषाकीय विवेचन रूप एक निबन्ध और विशिष्ट शब्द कोश तैयार करने का विचार है। इसलिए तरुणप्रभाचार्य कृत-'षडावश्यक बालावबोध' के रचना समय तथा उपलब्ध प्राचीन लिखित प्रति एवं ग्रन्थकार के विषय में उपयुक्त जानकारी मांगी। मैंने उनसे गुप्तरूपेण सब जानकारी दी और कहा कि मैं जेल से मुक्ति पाने के बाद इस पूरे ग्रन्थ को छपवाने का प्रबन्ध करना चाहता हूँ।

सुनकर प्रो. ठाकोर बोले कि आप जब यहाँ से मुक्त होकर अहमदाबाद जावें तब मुझे सूचित करना जिससे मैं वहाँ आकर इस विषय में विशेष बातचीत करना चाहूँगा।

जेल का समय पूरा होने पर मैं और श्री मुन्शीजी दोनों ही एक साथ नासिक के सेन्ट्रल जेल के द्वार से बाहर निकले और साथ ही रेल द्वारा बम्बई पहुँचे। उस समय मुंशीजी सान्ताक्रुज में रहते थे, हम दोनो वहाँ पहुँचे। मुंशीजी की पूजनीया माताजी ने हमारा स्वागत किया। मैं उनके साथ दो-तीन दिन वहाँ रहा और उसी समय अन्धेरी में जाकर, जिस संस्था की स्थापना की कल्पना जेल में बैठे कर रहे थे उसके लिये उपयुक्त जगह की भी तलाश की। दो-तीन जगह भी देखी गई। मुंशीजी चाहते थे कि महीने दो महीने में ही यह नूतन संस्था शुरू कर दी जाय। उसके लिये अपेक्षित रकम कैसे प्राप्त की जाय इसकी भी कुछ रूपरेखा उन्होंने आलेखित कर ली और मुझे भी उसमें शीघ्र ही सम्मिलित होकर कार्यारम्भ करने का आग्रह किया। मैं वहाँ से फिर अहमदाबाद अपने स्थान पर पहुँचा।

शांतिनिकेतन में सिंघी जैन ज्ञानपीठ की स्थापना तथा सिंघी जैन ग्रन्थमालाका कार्यारंभ

दो-तीन महीने अहमदाबाद रहना हुआ इस बीच में कलकत्ता से स्व. श्री बहादुर सिंहजी सिंघी का आग्रहपूर्वक आमंत्रण मिला और जेल जाने के पहिले शांतिनिकेतन जाने का और वहाँ पर सिंघी जैन ज्ञानपीठ स्थापित करने का जो कच्चा-सा विचार निश्चित होकर एक आकार ले ही रहा था। तदनुसार १९३१ के दिसम्बर महीने में अहमदाबाद से अपने सम्पर्क के कुछ छात्रों और पण्डितों को लेकर मैं शांतिनिकेतन पहुँचा। वहाँ पर सिंघीजी की विशिष्ट साहित्य निष्ठा एवं उदारता के कारण सिंघी जैन ज्ञानपीठ और सिंघी जैन ग्रन्थमाला की सुन्दर व्यवस्था की। फलतः सिंघी जैन ग्रन्थमाला में अनेकानेक ग्रन्थों के सम्पादन और प्रकाशन की योजना हुई थी, उसके परिणाम स्वरूप जैन साहित्य के अनेक विशिष्ट ग्रन्थ प्रकाश में आने लगे।

ग्रन्थमाला में प्रकाशित किये जानेवाले ग्रन्थों की विस्तृत सूचनामें मैं प्रस्तुत 'षडावश्यक बालावबोध' ग्रन्थ का भी समावेश किया गया। क्योंकि इसकी ऐक प्रति जो मैंने अहमदाबाद के पुरातत्त्व मंदिर में रहते हुए बनवाई थी वह मेरे पास में सुरक्षित थी।

बाद में सन् १९३८ में मुन्शीजी के विशिष्ट प्रयत्न से उनकी पुरानी योजना और कल्पना (जो हमने नासिक की सेन्ट्रल जेल में बैठकर सोची और जेल से छूटने के बाद अन्धेरी में जगह के लिये तलाश आदि भी की थी) ने देहधारण कर लिया। भारतीय विद्या भवन की सुन्दर स्थापना का शुभारम्भ हुआ। श्री मुन्शीजी ने आरम्भ ही से मुझे इसके संचालन करने के लिए बम्बई आने का आग्रह किया। मैंने इसके [illegible] शान्तिनिकेतन, [illegible] आदि अनेक विशिष्ट [illegible] के [illegible] होकर [illegible] भारतीय विद्या भवन के कार्य में अपनी सेवा देने का स्वीकार किया। भवन के उद्देश्य और योजना को स्पष्ट कर मुन्शीजी ने मुझे उसका [illegible] नियामक (डायरेक्टर

डायरेक्टर) का कार्य भार सम्हालने को कहा। यद्यपि ऐसे समय सिंघी जैन ग्रन्थमाला के सम्पादन एवं प्रकाशन का बहुत बड़ा काम था और जिसका मुझे [illegible] होने से इस विषय का [illegible] श्री मुन्शीजी के सतत आग्रह के कारण मुझे भारतीय विद्या भवन के डायरेक्टर का कार्य भार भी कुछ समय के लिये हाथ में लेना पड़ा सिंघी जैन ग्रन्थमाला के [illegible] बाबू बहादुरसिंहजी सिंघी के परामर्श से ही मैंने यह काम स्वीकार किया। बाद में श्री मुन्शीजी के आग्रह से तथा ग्रन्थमाला की भावी सुव्यवस्था एवं सुविधा की दृष्टि से ग्रन्थमाला का सारा कार्य भार भी भारतीय विद्या भवन को सौंप देने का मैंने निर्णय किया। तदनुसार ग्रन्थमाला भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित की जा रही है।

प्रस्तुत ग्रन्थ का संपादन कार्य डॉ. श्री प्रबोध पंडित को देने का प्रसंग

उपरोक्त उल्लेखानुसार सिंघी जैन ग्रन्थमाला प्रकाशनार्थ ग्रन्थों की सूची में प्रस्तुत बालावबोध का भी समावेश कर रखा था और तदनुसार सन् १९४२-४३ में इस काम को हाथ में लेने का और प्रेस में छपवाने का विचार मैं कर ही रहा था उन्हीं दिनों डॉ. प्रबोध पंडित भारतीय विद्या भवन में एक स्कॉलर के रूप में कुछ अध्ययन करना चाहते थे। तभी से मैंने इनको स्कॉलरशिप देने का प्रबन्ध किया। बाद में उनका लंदन जाकर डॉक्टरेट का काम करने का विचार हुआ तो मैंने इनको सुझाव दिया कि तरुणप्रभसूरि रचित बालावबोध के कुछ अंशों का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन करने जैसा है। इनको मेरा सुझाव उपयुक्त लगा और इन्होंने लंदन जाकर इसी विषय पर अपना थीसिस तैयार करना निश्चित किया। जब ये विलायत जा रहे थे तब मैंने इनको ही साथ में प्राचीन गुजराती गद्य संदर्भ नामक पुस्तक भी इनको दी क्योंकि इस ग्रन्थ की मुख्य जो कथाएँ हैं वे सब उसमें मैंने छपवा दी थी।

श्री प्रबोध पंडित लन्दन से डिग्री प्राप्त कर वापस आये तब इन्होंने मुझे अपना यह थीसिस दिखलाया इसकी विशिष्ट उपयोगिता देखकर मैंने इस सिंघी जैन ग्रन्थमाला में छपवा देने का निर्णय किया, परन्तु इन्होंने जो काम किया वह तो ग्रन्थ गत विशिष्ट शब्दों वाक्यों का भाषा-वैज्ञानिक विश्लेषण रूप है। ग्रन्थ का मुख्य विषय क्या है और इसमें ग्रन्थकारने किन किन विषयों का विचारों का विवेचन किया है वह तो मूल ग्रन्थ का पूरा अध्ययन किये बिना ठीक परिज्ञान नहीं हो सकता और मेरा लक्ष्य जो इस ग्रन्थ की तरफ प्रारंभ ही से आकृष्ट हुआ है वह तो भाषाकीय विश्लेषण के उपरान्त ग्रन्थ गत विविध विषय की विशिष्टता के कारण है। अतः मैंने अपने पूर्व संकल्पानुसार डॉ. प्रबोध पंडित के प्रस्तुत थीसिस के साथ पूरे ग्रन्थ का मूलरूप में शुद्धता के साथ छपवा देने का निर्णय किया और इस पूरे ग्रन्थ का सम्पादन कार्य करने का भी इनको परामर्श दिया। तदनुसार बम्बई के निर्णय सागर प्रेस में मुद्रण कार्य मैंने चालू कराया।

निर्णय सागर प्रेस में इसका काम जब चालू किया तब उस प्रेस में सिंघी जैन ग्रन्थमाला के और भी ऐसे अनेक महत्त्व के ग्रन्थ छप रहे थे। इसलिये प्रेस सुविधानुसार धीरे धीरे इसका मुद्रण कर रहा था। इसी बीच मेरा बम्बई निवास कम होने लगा और अधिक समय राजस्थान में मेरे प्रयत्न द्वारा नूतन प्रस्थापित और राजस्थान सरकार द्वारा सञ्चालित 'राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान' का कार्यभार मुझे सम्हालना प्राप्त हुआ। अतः अधिक समय इस नूतन प्राच्य विद्या मंदिर की व्यवस्था में व्यस्त रहने लगा।

उधर बम्बईमें निर्णय सागर प्रेस जिसमें मेरे अनेकानेक ग्रन्थ छपते रहे, इसकी व्यवस्था में भी कुछ विशेष शिथिलता होने लगी और प्रेस अपनी इच्छानुसार काम देने में असमर्थ मालूम दिया। तब अधूरा रहा हुआ काम पूना के आर्य भूषण प्रेस में कराना निश्चित किया। ग्रन्थ सम्पादक डॉ. प्रबोध पंडित भी उस समय पूना के एक इन्स्टीटयूट में काम कर रहे थे, इसलिये इनको प्रूफ आदि देखने में सुविधा रही। इस प्रकार कई वर्षों के परिश्रम के बाद अब यह ग्रन्थ प्रकाशित होने का अवसर प्राप्त कर रहा है।

प्रस्तुत सम्पादन में, जैसाकि श्री प्रबोध पंडित ने सूचित किया है तीन-चार प्राचीन हस्तलिखित प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं इसमें सबसे पहले जो प्रति मेरे देखने में आई वह ऊपर उल्लेखित पूना के भांडारकर प्राच्य विद्या संशोधन मंदिर के संग्रहगत राजकीय ग्रन्थागार की है। परन्तु बाद में बीकानेर के प्रसिद्ध जैन भंडार में इस ग्रन्थ की एक वैसी ही विशुद्ध प्रति उपलब्ध हुई जो प्रसिद्ध साहित्योपासक और बहुपरिश्रमी लेखक श्री अगरचंदजी नाहटा द्वारा प्राप्त हुई। वैसी ही दो अन्य प्रतियाँ क्रमशः पाटण (गुजरात) और लींमड़ी (सौराष्ट्र) के ज्ञान भंडारों से प्राप्त हुईं। ये सब प्रतियाँ ग्रन्थकार के समय की है। ग्रन्थकार के उपदेश ही से उनके भक्त श्रावकोंने इन प्रतियों का आलेखन कराया है। अतः इस दृष्टि से इस ग्रन्थ का यह सम्पादन एक विशिष्ट महत्त्व रखता है।

इस ग्रन्थ की एक ऐसी ही विशिष्ट प्रति हमको जैसलमेर के भंडार में देखने को मिली थी। हमारे विचार से यह प्रति सर्वोत्तम थी। इसके प्रथम पृष्ठ में सुवर्णमय जिन भगवान का चित्र था और दूसरे पृष्ठ के प्रथम पार्श्व में तरुणप्रभाचार्य का रेखांकित स्वर्णमय चित्र था। मालूम देता है कि इस प्रति को स्वयं ग्रन्थकारने अपने हाथ से संशोधित की थी। इसकी अन्तिम प्रशस्ति में उल्लेख किया गया है कि इस 'षडावश्यक बालावबोध' की अट्ठारह प्रतियाँ उस समय तैयार की गई थी। उनको भिन्न-भिन्न भंडारों में स्थापित की थीं। इस प्रशस्ति की हमने नकल करली थी। परन्तु वह हमारे संग्रह के इधर उधर हो जाने से अब हमें प्राप्त नहीं है।

कुछ ऐसे अन्य बालावबोध भी उपलब्ध हुए हैं

अन्यान्य भंडारों के अवलोकन करते समय हमें ऐसे और भी षडावश्यक बालावबोधों की प्रतियाँ देखने में आईं, जिनसे मालूम होता है कि तरुणप्रभाचार्य प्रस्तुत बालावबोध के अतिरिक्त भी अन्य कुछ विद्वानों ने ऐसे बालावबोधों की रचनाएँ की हैं, जो इसी प्रकारकी भाषा शैली में लिखी गई हैं।

तरुणप्रभाचार्य खरतर गच्छ के एक विशिष्ट अनुयायी थे और उन्होंने अपने गच्छ के उपासक जनों की दृष्टि रखकर अपने गच्छ की परंपरानुसार इस ग्रन्थ में सूत्र पाठ संशोधित किया है। संभव है इसी तरह तपागच्छ आदि अन्य गच्छों के विद्वानों ने भी अपने-अपने गच्छों की परंपरा-अनुसार मान्य मूल पाठ पर बालावबोध लिखे होने चाहिए। इसी प्रकार का एक अन्य 'षडावश्यक बालावबोध' हमारे अवलोकन में आया है,–जिसके स्थान का अब हमें ठीक से स्मरण नहीं है। शायद अहमदाबाद के ही किसी भंडार से उपलब्ध हुआ था। परन्तु उसके अन्तिम दो पन्नों की फोटोकापी हमने अहमदाबाद में रहते हुए करवा ली थी, जो अभी तक हमारे पास है। यह प्रति भी बहुत पुरानी है। यह बालावबोध भी बहुत पुराना लिखा हुआ है। इसकी पत्र संख्या १५५ है। इसका जो अन्तिम पत्र है वह मूल प्रति की, आकृति और लिपि से कुछ भिन्न है। इससे मालूम होता है कि मूल प्रति का अन्तिम पत्र किसी कारण से नष्ट या भ्रष्ट हो जाने के कारण पीछे से नया पत्र लिखकर मूल प्रति के साथ संलग्न कर दिया गया है। यह नया पत्र से १८५५ में लिखा गया है। अतः मूल प्रति इससे अवश्य पुरानी लिखी गई होनी चाहिए तथापि स. १८५५ का उल्लेख सूचित करता है कि कम से कम तरुणप्रभाचार्य के बालावबोध रचना के समसामयिक ही यह बालावबोध रचा गया होगा। इस बालावबोध की प्रति का अन्तिम उल्लेख नीचे दिया जाता है। भाषा की दृष्टि से यह उतनी परिष्कृत नहीं मालूम देती, जितनी तरुणप्रभाचार्य की रचना में दृष्टिगोचर होती है। इस दृष्टि से ही तरुणप्रभाचार्य की रचना को हमने श्रेष्ठ समझा है। तथापि भिन्न-भिन्न लेखक विद्वानों की विभिन्न शैली की दृष्टि से ऐसे सभी ग्रन्थों का संशोधन संपादन कार्य होने से भाषा के विकास विस्तार एवं प्रचार का सम्यक्ज्ञान प्राप्त हो सकता है। ऐसे ग्रन्थों के अध्ययन से शब्दोच्चार और शब्दाक्षर संयोजना के विविध रूपों का विश्लेषणात्मक अध्ययन बहुत जरूरी है।

"एहा पच्चक्खाणनइ विषइ। विशेषिइ। धन उदम धर करवा। जेह भणी सूधा धर्मनउ उदम जीव हुइ। मोक्ष फलनउं उपाइ।॥८॥

प्रत्याख्यान बालावबोध ॥ ■ ॥ चउथउ-अधिकार संपूर्ण हुउ ॥ छ ॥ श्री आवश्यक—षडावश्यक बालावबोधः। एहमाहि च्यारि अधिकार ॥ छ ॥ पहिलइ अधिकारि देव वंदन १। बीजइ गुरु वंदन २। त्रीजइ पडिक्रमणउ ३। चउथइ पच्चक्खाण। ४। समाप्तं ॥ संवत् १४५५ वर्षे भाद्रवामासे शुक्लपक्षे १२ गुरुवासरे। लिखित कायस्थ...... ॥

ग्रन्थगत विषय का किंचित परिचय

तरुणप्रभाचार्य ने इस ग्रन्थ के आवश्यक सूत्र में आनेवाले विषयों का बहुत विस्तार से विवेचन किया है। उन्होंने न केवल आवश्यक सूत्र के अन्तर्गत सूत्र पाठों का ही अर्थोद्घाटन करने का प्रयत्न किया है। अपितु प्रसंगान्तर्गत अनेक अन्यान्य शास्त्रीय उल्लेख और प्रमाण उद्धृत करके उनका भी अर्थोद्घाटन किया है। इसलिये इसमें मूलसूत्र पाठ के सिवाय सैकड़ों प्राचीन गाथाएँ तथा प्रकरण आदि से बहुत से श्लोक भी उद्धृत किये गये हैं और उनका भी स्पष्टीकरण सूचक अर्थ लिखा गया है। कहीं-कहीं किसी विषय से सम्बन्ध रखनेवाले लम्बे प्रकरण भी उद्धृत कर दिये हैं।

उदाहरण के तौर पर खान पान के विषय में जैन धर्मानुयायियों को किस प्रकार संयम रखना चाहिए और किन किन वस्तुओं का उपयोग नहीं करना चाहिए इस विषय में जो अनेक नियम उपनियम बतलाये गये हैं, उनमें मद्यपान, मांसभक्षण, रात्रिभोजन, आदि का निषेध भी बताया गया है। मद्यपान के कारण मनुष्य को किन-किन दोषों का भागी होना पड़ता है और मनुष्य का जीवन किस तरह दुःखमय और दुर्गुणमय बनता है, इसके लिये प्रमाण स्वरूप हिन्दूशास्त्रों में से अनेक श्लोक उद्धृत किये हैं। इसी तरह मांस भक्षण के लिये भी हिन्दूग्रन्थों में से निषेधात्मक कई श्लोक उद्धृत किये हैं। रात्रि भोजन से होनेवाले शारीरिक और मानसिक दोषों का निरूपण करनेवाले कई ग्रन्थों के श्लोक उद्धृत किये हैं। इस विषय में आयुर्वेद शास्त्र के भी कुछ प्रमाण लिखे हैं (देखें प्रस्तुत ग्रन्थ के पृष्ठ १३१ से १३६ तक दिये गये संस्कृत श्लोक)।

इसी तरह जैन धर्मानुयायियों को व्यापार आदि में भी किस प्रकार का संयम रखना चाहिए और किन-किन प्रकार के व्यापारिक कर्म भी नहीं करने चाहिए। इसका भी बहुत मार्मिक विचार धार्मिक दृष्टि से किया गया है और उसके लिए जैन ग्रन्थों में से अनेक शास्त्रीय प्रमाण उद्धृत किये गये हैं। (देखें पृ १३८ से १८० तक)।

प्रसंगानुसार जैन गृहस्थों को अपने भोग उपभोग की सामग्री के व्यवहार में किस प्रकार का संयमभाव रखना चाहिये और उससे किस प्रकार मनुष्य को लाभ अलाभ आदि फलकी प्राप्ति होती है। जिसके लिये उदाहरणस्वरूप एक पुरानी धर्म-कथा भी लिखी गई है। इसी तरह अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह आदि व्रतों के पालन के विषय में भी गुण-दोष सूचक अनेक शास्त्र प्रमाण दिये गये हैं। तथा विवेचनीय विषयों को स्पष्ट करने के लिये तद् तद् विषयक उदाहरण भूत पुरानी कथाएँ भी लिखी गई हैं। ये सब कथाएँ हमने अपनी उक्त प्राचीन गुजराती गद्य सन्दर्भ नामक पुस्तिके में भी प्रकाशित कर दी थीं। जिनकी संख्या २३ है। कहीं कहीं ग्रन्थकार ने अपनी स्वरचित रचनाएँ भी प्रसंगानुसार कर दी हैं जैसे कि पृ २१६ से २१९ पर स्वरचित "श्रेयांस शासन जिन [illegible] प्रसाद स्तवन" नामक भारतीय मुक्तों का एक गुरु स्तोत्र ही उद्धृत कर दिया है। इसी तरह पृष्ठ २२६ पर "[illegible] जिन स्तवन [illegible]" नाम से आठ पद्यों का एक और स्वरचित स्तवन उद्धृत किया है।

इस प्रकार प्रस्तुत ग्रन्थ में आवश्यक सूत्रों को जैन धर्म विषयक आवश्यक विचारों और सिद्धान्तों का परिज्ञान कराने का सफल प्रयत्न किया गया है और इसीलिये यह यथार्थ बालावबोधक ग्रन्थ बन गया है।

ग्रन्थ का मूल नाम 'षडावश्यक बालावबोध' ऐसा है। परन्तु यह मूल वृत्ति प्राचीन प्रथानुसार

इन्होंने विचरण किया। सं. १२२२ में तीर्थयात्रा करते हुए अपने भक्त-धनिक श्रावकों के साथ इनका आगमन दिल्ली नगर में हुआ (दिल्ली का नाम उस समय योगिनीपुर भी प्रसिद्ध था)। दिल्ली में उस समय तोमरवंशीय राजा मदनपाल का राज्यशासन चल रहा था। दिल्ली में उस समय राजमान्य और जन सम्मान्य अनेक जैन श्रावकों का खूब प्रभुत्व था। मंत्री दलवंशीय के नाम से प्रसिद्ध प्राप्त श्रावकों के कई धनिक कुटुम्ब वहाँ बसते थे। इन श्रावकों ने विद्या सिद्ध और बुद्धि निधान आचार्य जिनचन्द्र सूरि का बहुत बड़े ठाठ के साथ प्रवेशोत्सव किया। जिसे जान सुन कर महाराज मदनपाल भी बड़ा प्रभावित हुआ और उसने बहुमानपूर्वक जैन आचार्य को अपने चरण कमल से राज प्रासाद को पवित्र करने के लिये आमन्त्रित किया। राजा ने बहुत भक्तिपूर्वक इनका सत्कार किया और अत्यन्त विनय भाव से धर्मोपदेश श्रवण किया। दैवगति से इनका उसी वर्ष दिल्ली में ही स्वर्गवास हो गया।

इस तरह केवल २५, २६ वर्ष जितनी अल्पायु में ही ये दैवगति को प्राप्त हुए, परन्तु इनकी इस प्रकार की अल्पायु में ही बड़ी प्रसिद्धि और प्रतिष्ठा हुई। इनकी योग विद्या सिद्ध अनेक चमत्कारिक घटनाएँ खरतर गच्छ की पट्टावलियों में उल्लिखित मिलती हैं। दिल्ली के पास महरोली नामक स्थान में जहाँ इनके विभूतिपूर्ण शरीर का अग्निसंस्कार हुआ था वहाँ पर सुप्रसिद्ध दादावाड़ी नामक एक पूजनीय स्थान बना हुआ है, जहाँ पर आज भी सैकड़ों भक्तजन उस भूमि के दर्शन वन्दन करने आते रहते हैं।

इन्हीं प्रथम जिनचन्द्र सूरि की पट्ट परंपरा में द्वितीय जिनचन्द्रसूरि हुए जो प्रस्तुत ग्रन्थकर्ता के दीक्षागुरु थे। ये जिनचन्द्र सूरि भी प्रथम जिनचन्द्र सूरि के समान ही बहुत प्रभावशाली और सम्मान प्राप्त आचार्य हुए। इनकी आचार्य पदस्थापना संवत १३४१ में इनके गुरु आचार्य जिनप्रबोध सूरि ने स्वयं की और संवत १३७६ में इनका स्वर्गवास हुआ। इस प्रकार प्रायः ३५ वर्ष जितने इनके आचार्य काल में खरतरगच्छ की मुख्य परंपरा के अनुयायी समुदाय में इनके द्वारा अनेक धार्मिक महोत्सव सम्पन्न हुए। इन्होंने अपने आचार्यकाल में सौराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान, सपादलक्ष एवं सिंध प्रदेश में कई बार परिभ्रमण किया और वहाँ के निवासी अपने भक्तजनों में धर्मोपदेश द्वारा धार्मिक संस्कारों की खूब वृद्धि की अनेक तीर्थयात्राएँ की गई। इसके लिये बड़े बड़े संघ निकाले गये अनेक स्थानों में नये जिन मंदिर बनाये गये और उनमें सैकड़ों जिन मूर्तियाँ स्थापित की गई। इसी तरह अनेक श्रावक श्राविकाओं ने आत्म कल्याण का व्रत ग्रहण किये तथा तपस्या आदि के उद्यापन, मालारोपण आदि विविध प्रकार के धार्मिक कार्य सम्पन्न हुए।

इन जिनचन्द्र सूरि के समय में गुजरात, सौराष्ट्र, मारवाड़, दिल्ली, हरियाणा और सिन्ध के प्रदेशों में भयंकर राजनैतिक उथल-पुथल हुई। यह समय भारत के राजकीय इतिहास में बहुत ही दु:खदायक एवं प्रलयकारी परिस्थिति का द्योतक रहा था। इन्हीं वर्षों में गुजरात के समृद्धिशाली अणहिलपुर, पाटण का विध्वंस हुआ। उसकी अपार समृद्धि का विनाश हुआ। सौराष्ट्र में शत्रुंजय, गिरनार, सोमनाथ तथा द्वारका जैसे भारत विख्यात तीर्थस्थान नष्ट भ्रष्ट हुए। जालोर चित्तौड़ और रणथम्भोर जैसे हिन्दुजाति के महान् संरक्षक गिने जानेवाले दुर्ग ध्वस्त हुए। गुजरात का सोलंकी राजवंश, मालवे का परमार राजवंश, मेवाड़ का गुहिलौत राजवंश तथा जालोर और रणथम्भोर का चौहान जैसा महान् पराक्रमी राजवंश स्थानभ्रष्ट और सत्ताहीन बनें। इसके कारण सारा भारत भयाक्रान्त हो रहा था। सर्वत्र विधर्मी-लुटेरों द्वारा भयंकर लूटमार मची हुई थी। जनता का सर्वस्व खोसा जाता था। हिन्दू देवी-देवताओं के भव्य मंदिर खंडहर बन रहे थे। देवमूर्तियाँ तोड़ी फोड़ी जाकर मस्जिद और मकबरों की दीवालों में चुनी जा रही थी। हजारों स्त्री-पुरुष पकड़ पकड़ कर बंदी बनाये जा रहे थे और हजारों ही तलवार की धार से कत्ल किये जा रहे थे। एक प्रकार से भारत के मध्यकालीन इतिहास का सबसे बड़ा संकट मय और विपत्तिजनक वह समय था।

जिनचन्द्र सूरि उस समय के प्रत्यक्षदर्शी एवं अनुभवी आचार्य थे। खरतर गच्छ बृहद् गुर्वावली

सूरि की वृद्धावस्था का प्रभाव बढ़ रहा था। उनकी शारीरिक स्थिति क्षीण हो चली थी तब वे अपना अन्तिम समय नजदीक जानकर से सं. १३८८ में देवराजपुर आ गये। वहाँ के श्रावक जनों ने उनका बड़ा प्रवेशोत्सव किया। उस समय उनकी सेवा में जो यति, मुनि आदि विद्यमान थे उनमें मुख्य थी तरुणप्रभ गणि और लब्धिनिधान गणि थे। उस वर्ष के मार्गशीर्ष शुक्ल दशमी के दिन एक बड़ा महोत्सव मनाया गया और उस महोत्सव में पं. तरुणकीर्ति गणि को आचार्य पद प्रदान किया गया और तरुणप्रभाचार्य ऐसा नाम उद्घोषित किया। पं. लब्धिनिधान गणिको महोपाध्याय के पद पर अभिषिक्त किया। उसी प्रसंग पर दो क्षुल्लक और दो क्षुल्लिकाओं का भी दीक्षोत्सव हुआ। उन क्षुल्लकों के नाम जयप्रिय मुनि और पुण्यप्रिय मुनि रखे गये। क्षुल्लिकाओं के नाम जयश्री और धर्मश्री थे। उस प्रसंग पर दस श्राविकाओं ने धर्ममालाएँ धारण की तथा अनेक श्रावक, श्राविकाओं ने कई प्रकार के व्रत ग्रहण किये। बृहद् गुर्वावली में इस प्रसंग का उल्लेख करते हुए तरुणकीर्ति गणि के लिये निम्नलिखित गुणवर्णनात्मक पंक्ति लिखी गई है :–

'तस्मिन् महोत्सवे गाम्भीर्यौदार्य, धैर्य स्थैर्यार्जव विद्वत्व वक्तृत्व, वाग्मित्व, सत्य, सौभाग्य ज्ञान दर्शन चारित्र विशद पट् त्रिंशत्सूरि गुण गण मणि विपणि सा. पं. तरुणकीर्ति गणिनाम्।'– इस परिमित उल्लेख से तरुणप्रभाचार्य की विशिष्ट गुणवत्ता का आभास मिलता है।

उसके बाद आनेवाला चातुर्मास जिनकुशल सूरि ने उसी देवराजपुर में व्यतीत किया और श्री तरुणप्रभाचार्य तथा लब्धिनिधान उपाध्याय को सम्मति तर्क और स्याद्वाद रत्नाकर जैसे महान् जैन तर्क शास्त्रों का गंभीर अध्ययन कराया, फिर माघ मास में गाढ़ ज्वर और श्वास आदि व्याधि प्रकोप बढ़ जाने पर तरुणप्रभाचार्य और लब्धिनिधान उपाध्याय को आपने आदेश दिया कि मेरी मृत्यु के बाद मेरे पट्ट पर पद्ममूर्ति नामक १५ वर्षीय बाल मुनि की पद स्थापना की जाय।

यह पद्ममूर्ति मुनि आचार्य श्री जिनकुशल सूरि के स्वहस्त दीक्षित शिष्य थे। ये पद्ममूर्ति लक्ष्मीधर सेठ के पुत्र साधुराज आम्बा के पुत्ररत्न थे। इनकी माता का नाम कीका था। इनकी दीक्षा सं. १३८४ में इसी देवराजपुर में हुई। इनके पिता साधुराज सा. आम्बा बड़े धनिक व्यक्ति थे। उस साल के माघ सुदी पंचमी के दिन बड़ा भारी प्रतिष्ठा महोत्सव हुआ, जिसमें सिंध के कई स्थानों में मूर्तियाँ विराजमान करने की दृष्टि से अनेक प्रतिमाएँ वहाँ लाई गई और जिनकुशल सूरि के कर कमलों द्वारा वह सारा प्रतिष्ठा कार्य सुसम्पन्न हुआ।

उसी महोत्सव पर साधुराज आम्बा के पुत्र-रत्न को भी दीक्षा दी गई और उसका नाम पद्ममूर्ति रखा गया। उनके साथ आठ अन्य क्षुल्लकों को भी दीक्षित किया गया। इन क्षुल्लकों के नाम इस प्रकार हैं :–भावमूर्ति, मोदमूर्ति, उदयमूर्ति, विजयमूर्ति, हेममूर्ति, भद्रमूर्ति, मेघमूर्ति और हर्षमूर्ति। इनके साथ कुलधर्मा, विनयधर्मा, शीलधर्मा नामक तीन क्षुल्लिकाएँ भी दीक्षित हुई।

श्री जिनकुशल सूरि के हाथों से सिंध में यह सब से बड़ा महोत्सव सम्पन्न हुआ। संभव है पद्ममूर्ति बालसाधु जो उस समय श्री जिनकुशल सूरि की सेवा में विद्यमान थे। एक तो वे बहुत धनिक गृहस्थ के पुत्र थे और सौभाग्यादि गुणों से भी भाग्यशाली दिखाई देते थे। इसलिये सूरिजीने उनको अपना गादीधर गच्छ नायक बनाना योग्य समझा और अपनी यह इच्छा उन्होंने तरुणप्रभाचार्य जैसे गच्छ के बहुत बड़े मुनि के सम्मुख प्रकट की।

इस के बाद संवत १३९० के फाल्गुन मास की कृष्ण पंचमी की रात्रि को जिनकुशल सूरि का स्वर्गवास हुआ। दूसरे दिन बहुत विस्तार के साथ उनका अग्निसंस्कार किया गया। इस प्रसंग का विस्तृत वर्णन बृहद्गुर्वावली में दिया गया है।

इस के बाद संवत् १३९० के जेठ महीने की शुक्ल छठ सोमवार के दिन श्री तरुणप्रभाचार्य ने जयधर्म-महोपाध्याय तथा लब्धिनिधान-महोपाध्याय आदि तीस मुनि तथा अनेक साध्वी मंडल के साथ श्री जिनकुशल सूरि की अन्तिम शिक्षा के अनुसार उनके पट्टपर पद्ममूर्ति क्षुल्लक की पदस्थापना कर जिनपद्म सूरि के नाम से उद्घोषित किया।

[illegible] होकर यहाँ की जनता अत्यन्त त्रस्त और भयभीत हो रही थी, तब वहाँ जाकर जिनचन्द्र सूरि ने अपने [illegible] और विशिष्ट वाक्‌चातुरी द्वारा लोगों को शांति प्रदान करने का [illegible] किया। यहाँ पर [illegible] धर्म कार्य करते हुए शारीरिक अवस्था क्षीण हो जाने के कारण श्री जिनचन्द्र सूरि ने अपने विद्वान् शिष्य श्री राजचन्द्र पंडित को अपने पास बुलाने के लिये दो [illegible] को [illegible] भेजे। जहाँ पंडित राजचन्द्र महोपाध्याय [illegible] रह रहे थे। इससे ज्ञात होता है कि राजेन्द्रचन्द्र, श्री जिनचन्द्र सूरि के एक [illegible] शिष्यों में से थे। इसलिये इनको अपने अन्तिम समय में पास में बुलाया और वहीं पर इनको आचार्य पद प्रदान कर राजेन्द्रचन्द्राचार्य नाम से प्रतिष्ठित किया। खरतर [illegible] के इनके विषय में बहुत से उल्लेख आते हैं। श्री जिनचन्द्र सूरि का स्वर्गवास हो जाने पर इनके [illegible] आचार्य जिनकुशल सूरि को प्रतिष्ठित करने में इनका [illegible] है।

[illegible] थे। इन्हीं से [illegible] ने कुछ कुछ विशेष [illegible] इनसे [illegible]

[illegible] में जिनचन्द्र सूरि का स्वर्गवास हो गया। उनके पश्चात् उन्हीं की इच्छा एवं [illegible] पाटण में जिनकुशल सूरि का सम्वत् १३७७ के [illegible] हुआ।

[illegible] मारवाड़ के समियाणा नामक गाँव में हुआ था [illegible] में इनको दीक्षा दी गई थी। ये जिनचन्द्र सूरि के [illegible] सम्बन्ध भी था। इनको उस समय [illegible] नामक साधुओं की दीक्षा हुई [illegible] दीक्षा हुई। उस समय [illegible] उस समय वहीं पर [illegible] (पञ्जाब) [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

सूरि की वृद्धावस्था का प्रभाव बढ़ रहा था। उनकी शारीरिक स्थिति क्षीण हो चली थी तब वे अपना अन्तिम समय नजदीक जानकर से सं. १३८८ में देवराजपुर आ गये। वहाँ के श्रावक जनों ने उनका बड़ा प्रवेशोत्सव किया। उस समय उनकी सेवा में जो यति, मुनि आदि विद्यमान थे उनमें मुख्य श्री तरुणप्रभ गणि और लब्धिनिधान गणि थे। उस वर्ष के मार्गशीर्ष शुक्ल दसवीं के दिन एक बड़ा महोत्सव मनाया गया और उस महोत्सव में पं. तरुणकीर्ति गणि को आचार्य पद प्रदान किया गया और तरुणप्रभाचार्य ऐसा नाम उद्घोषित किया। प. लब्धिनिदान गणिको महोपाध्याय के पद पर अभिषिक्त किया। उसी प्रसंग पर दो क्षुल्लक और दो क्षुल्लिकाओं का भी दीक्षोत्सव हुआ। उन क्षुल्लकों के नाम जयप्रिय मुनि और पुण्यप्रिय मुनि रखे गये। क्षुल्लिकाओं के नाम जयश्री और धर्मश्री थे। उस प्रसंग पर दस श्राविकाओं ने धर्ममालाएँ धारण की तथा अनेक श्रावक, श्राविकाओं ने कई प्रकार के व्रत ग्रहण किये। बृहद् गुर्वावली में इस प्रसंग का उल्लेख करते हुए तरुणकीर्ति गणि के लिये निम्नलिखित गुणवर्णनात्मक पंक्ति लिखी गई है :–

'तस्मिन् महोत्सवे गाम्भीर्यौदार्य, धैर्य स्थैर्यार्जव विद्वत्व कवित्व, वाग्मित्व, सत्त्व, सौविहित्य ज्ञान दर्शन चारित्र विशद षट् त्रिंशत्सूरि गुण गण मणि विपणि नां. पं. तरुणकीर्ति गणिनाम्।'– इस पंक्तिगत उल्लेख से तरुणप्रभाचार्य की विशिष्ट गुणवत्ता का आभास मिलता है।

उसके बाद आनेवाला चातुर्मास जिनकुशल सूरि ने उसी देवराजपुर में व्यतीत किया और श्री तरुणप्रभाचार्य तथा लब्धिनिदान उपाध्याय को सम्मति तर्क और स्याद्वाद रत्नाकर जैसे महान् जैन तर्क शास्त्रों का गंभीर अध्ययन कराया, फिर माघ शुक्ल में गाढ़ ज्वर और श्वास आदि व्याधि प्रकोप बढ़ जाने पर तरुणप्रभाचार्य और लब्धिनिदान उपाध्याय को आपने आदेश दिया कि मेरी मृत्यु के बाद मेरे पट्ट पर पद्ममूर्ति नामक १५ वर्षीय बाल मुनि की पद स्थापना की जाय।

यह पद्ममूर्ति मुनि आचार्य श्री जिनकुशल सूरि के स्वहस्त दीक्षित शिष्य थे। ये पद्ममूर्ति लक्ष्मीधर सेठ के पुत्र साधुराज आम्बा के पुत्ररत्न थे। इनकी माता का नाम कीका था। इनकी दीक्षा सं. १३८४ में इसी देवराजपुर में हुई। इनके पिता साधुराज सा. आम्बा बड़े धनिक व्यक्ति थे। उस साल के माघ सुदी पंचमी के दिन बड़ा भारी प्रतिष्ठा महोत्सव हुआ, जिसमें सिंध के कई स्थानों में मूर्तियाँ विराजमान करने की दृष्टि से अनेक प्रतिमाएँ वहाँ लाई गई और जिनकुशल सूरि के कर कमलों द्वारा वह सारा प्रतिष्ठा कार्य सुसम्पन्न हुआ।

उसी महोत्सव पर साधुराज आम्बा के पुत्र-रत्न को भी दीक्षा दी गई और उसका नाम पद्ममूर्ति रखा गया। उनके साथ आठ अन्य क्षुल्लकों को भी दीक्षित किया गया। इन क्षुल्लकों के नाम इस प्रकार है :–भावमूर्ति, मोदमूर्ति, उदयमूर्ति, विजयमूर्ति, हेममूर्ति, भद्रमूर्ति, मेघमूर्ति और हर्षमूर्ति। इनके साथ कुलधर्मा, विनयधर्मा, शीलधर्मा नामक तीन क्षुल्लिकाएँ भी दीक्षित हुई।

श्री जिनकुशल सूरि के हाथों से सिंध में यह सब से बड़ा महोत्सव सम्पन्न हुआ। संभव है पद्ममूर्ति बालसाधु जो उस समय श्री जिनकुशल सूरि की सेवा में विद्यमान थे। एक तो वे बहुत धनिक गृहस्थ के पुत्र थे और सौभाग्यादि गुणों से भी भाग्यशाली दिखाई देते थे। इसलिये सूरिजीने उनको अपना गादीधर गच्छ नायक बनाना योग्य समझा और अपनी यह इच्छा उन्होंने तरुणप्रभाचार्य जैसे गच्छ के बहुत बड़े मुनि के सम्मुख प्रकट की।

इस के बाद संवत १३९० के फाल्गुन मास की कृष्ण पंचमी की रात्रि को जिनकुशल सूरि का स्वर्गवास हुआ। दूसरे दिन बहुत विस्तार के साथ उनका अग्निसंस्कार किया गया। इस प्रसंग का विस्तृत वर्णन बृहद्गुर्वावली में दिया गया है।

इस के बाद संवत् १३९० के जेठ महीने की शुक्ल छठ सोमवार के दिन श्री तरुणप्रभाचार्य ने जयधर्म-महोपाध्याय तथा लब्धिनिधान-महोपाध्याय आदि तीस मुनि तथा अनेक साध्वी मंडल के साथ श्री जिनकुशल सूरि की अन्तिम शिक्षा के अनुसार उनके पट्टपर पद्ममूर्ति क्षुल्लक की पदस्थापना कर जिनपद्म सूरि के नाम से उद्घोषित किया।

उस समय नूतन गच्छ नायक जिनपद्मसूरि की अवस्था पन्द्रह वर्ष की थी। अतः गच्छानुयायी संघ का सारा भार श्री तरुणप्रभाचार्य संभालते थे। दुर्भाग्य से जिनपद्मसूरि का स्वर्गवास (दस, ग्यारह वर्ष बाद) संवत् १४०० में हो गया। फिर उनके पट्ट पर तरुणप्रभसूरिने अपने महाध्यायी उपाध्याय पद धारक लब्धिनिधानगणि को सूरि मंत्र की विद्या देकर जिनपद्मसूरि के आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया और जिनलब्धि सूरि नाम से उद्घोषित किया। परन्तु १४०६ में जिनलब्धि सूरि का भी नागोर में स्वर्गवास हो गया।

फिर उनके पट्ट पर जैसलमेर में जिनचन्द्र सूरि (तृतीय) की पद स्थापना की। परन्तु उनका भी संवत् १४१५ में स्वर्गवास हो गया। तब उनके पट्ट पर खम्भात में श्री जिनकुशल सूरि के ही अन्यतम शिष्य श्री सोमप्रभ को आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया और जिनोदय सूरि के नाम से उद्घोषित किया।

इन सोमप्रभ को संवत् १३८२ में भीमपल्ली (भीलडी गाँव में) श्रीकुशल सूरि ने दीक्षा दी थी। इनके साथ विनयप्रभ, मतिप्रभ और हरिप्रभ नामक बालसाधुओं को दीक्षित किया। इसी तरह कमलश्री ललितश्री नामसे दो बालिकाओं को भी दीक्षा दी।

इस प्रकार श्री जिनकुशल सूरि के स्वर्गवास के बाद उस गच्छ की परंपरा में जिनोदय सूरि प्रभावशाली आचार्य हुए। बीच में जो उक्त प्रकार के पच्चीस वर्ष के अन्तरमें तीन आचार्य गद्दी पर बैठे, परन्तु थोड़े-थोड़े वर्षों के बाद उनका स्वर्गवास हो जाने से और एक दो आचार्य तो अल्पकालीन जीवन ही पा सके थे। इसलिये उन २५ वर्षों की पाव शताब्दि उक्त परंपरा के लिये प्रभावशून्य सी व्यतीत हुई। इन २५ वर्षों में तरुणप्रभाचार्य ही इस परंपरा के एक सर्वाधिक प्रभावशाली और गच्छ के विशिष्ट नायक रूप में विद्यमान रहे।

तरुणप्रभाचार्य बहुत अधिक शास्त्र ज्ञाता थे। यह तो उनकी प्रस्तुत 'षडावश्यक बालावबोध वृत्ति' के अवलोकन से ज्ञात होता है। उन्होंने अनेक जैन ग्रन्थों का गहन अध्ययन किया था। पट्टावली के उल्लेखानुसार स्वयं श्री जिनकुशल सूरि के पास स्याद्वाद रत्नाकर आदि महान तर्क ग्रन्थों का अध्ययन किया था। जिनकुशल सूरि ने 'चैत्यवन्दन कुलक' नामक एक प्राकृत प्रकरण ग्रन्थ पर बहुत विस्तृत संस्कृत व्याख्या लिखी थी। जिसके संशोधन में तरुणप्रभ सूरि (उस समय इनका मूल दीक्षित नाम तरुणकीर्ति था) ने अपना सहयोग दिया था। इसलिये श्रीकुशल सूरि ने उसमें विद्वता की प्रशंसा करते हुए इनको 'विद्वज्जन चूडामणि' के सम्मान वाचक शब्द से उल्लिखित किया है। इनकी ऐसी विशिष्ट विद्वता और प्रभावशीलता के गुण को लक्ष्य कर श्री जिनकुशल सूरि ने अपनी अंतिम अवस्था में इनको उपर्युक्त लेखानुसार आचार्य पद प्रदान किया था और इसी गुण के कारण वे श्रीकुशल सूरि के बाद २५-३० वर्ष तक इनकी गच्छ परंपरा में विशेष रूप से प्रभावशाली बन रहे थे।

तरुणप्रभाचार्य ने प्रस्तुत 'षडावश्यक बालावबोध वृत्ति' के अतिरिक्त अन्य भी किसी ग्रन्थ की रचना की होगी ऐसा ज्ञात नहीं होता। क्योंकि वैसी कोई ग्रन्थ रचना की होती तो वह बीकानेर, जैसलमेर, पाटन आदि के भण्डारों में अवश्य उपलब्ध होती। हाँ, उनकी कुछ छोटी-छोटी स्तुति, स्तोत्र, स्तवन आदि रचनाएँ उपलब्ध होती हैं-जिनका उल्लेख श्री अगरचन्दजी नाहटाने अपने 'आचार्य प्रवर तरुणप्रभ सूरि' नामक संशोधनात्मक लेख में किया है। (देखें शोध पत्रिका भाग ६ अंक में)

तरुणप्रभ सूरि का अधिकतर विचरण गुजरात, सौराष्ट्र और राजस्थान तथा सिन्ध प्रदेश में हुआ ज्ञात होता है। जिनकुशल सूरि की तरह उन्होंने विविध देशों में भ्रमण किया हो ऐसा ज्ञात नहीं होता। इन्होंने छोटी छोटी स्तुति, स्तोत्रादिक जो रचनाएँ की हैं। उनमें 'स्तम्भन पार्श्वनाथ स्तवन, अर्बुदाचल आदिनाथ स्तोत्र,' देवगृहमण्डन आदि जिन स्तवन', 'जैसलमेर पार्श्वनाथ स्तवन', 'लौद्रवपुर पार्श्वनाथ विज्ञप्ति', 'विमलाचल आदिदेव स्तवन',

'पट पत्तनालंकार आदि जिनस्तवन', 'भीमपल्ली वीर जिनस्तवन', 'तारंगलंकार अजित जिनस्तवन', आदि रचनाओं से ज्ञात होता है कि इन्ही तीर्थस्थानवाले प्रदेश में इनका भ्रमण रहा होगा।

इनका स्वर्गवास किस वर्ष में हुआ, इसका कोई उल्लेख हमारे देखने में नही आया। श्री अगरचन्दजी नाहटा का अनुमान है कि सं. १४२० के आपसास इनका स्वर्गवास हुआ होगा।

श्री तरुणप्रभ सूरि की शिष्य परपरा आदि के बारे में भी कोई विशेष उल्लेख हमारे देखने में नही आया।

श्री जिनोदय सूरि की पट्ट स्थापना इन्हीं के द्वारा हुई थी और इसलिये जिनोदय सूरि के सम्बन्ध मे जो 'विवाहला तथा पट्टाभिषेक रास' नामक तत्कालीन प्राचीन भाषा रचना प्राप्त होती है। उसमें इनके विषय में लिखा है कि "तरुणप्रभ सूरिने श्री जिनचन्द्र सूरि (तृतीय) के पट्ट पर सोमप्रभ नायक विद्वान गणि की स्थापना कर उन्हें जिनोदय सूरि के नाम से उदघोषित किया।'

जिनोदय सूरि श्री जिनकुशल सूरि के बाद चौथे पट्टधर आचार्य हुए। यों वे उन्ही के दीक्षित शिष्य थे। ये बहुत प्रभावशाली आचार्य थे। इनका रचा हुआ "विज्ञप्तिमहालेख" हमें मिला है। जिसको हमने, सिंघी जैन ग्रंथमाला के ग्रथाक ५१ के रूप में, अन्यान्य अनेक विज्ञप्ति लेखों के साथ, प्रकाशित किया है। यह 'विज्ञप्ति महालेख' इस प्रकार के विज्ञप्ति लेखों में एक विशिष्ट एवं उत्कृष्ट रचना है। यह लेख विक्रम संवत १४३१ में रचा गया है। उस समय जिनोदय सूरि गुजरात के प्रसिद्ध पाटण शहर में चातुर्मास रहे हुए थे। वहां पर अयोध्या नगर में रहनेवाले लोकहिताचार्य द्वारा भेजा हुआ एक विशिष्ट प्रकार का विज्ञप्ति लेख श्री जिनोदय सूरि को मिला तो उसके प्रत्युत्तर रूप में जिनोदय सूरि ने भी वैसाही एक विशिष्ट लेख तैयार कर श्री लोकहिताचार्य को अयोध्या भेजा। यही उक्त 'विज्ञप्ति महालेख' है।

जिनोदय सूरि ने उस समय से पहले तीन चार वर्षों में जो तीर्थ यात्राएँ तथा प्रतिष्ठा महोत्सव आदि जहां जहां किये,उनका विशिष्ट प्रकार की अलंकारिक भाषामें वर्णन किया है। लेख बहुत ही प्रौढ शब्दावली से अलंकृत संस्कृत भाषामें लिखा गया है। इस विज्ञप्ति महालेख में उन्होंने उल्लेख किया है कि; "सौराष्ट्र देश की यात्रा करते हुए हम सुप्रसिद्ध नवलखी बन्दरनामक स्थान पर भी गये और वहां के जैन मंदिर में स्थित श्री जिनरत्न सूरि, श्री जिनकुशल सूरि तथा श्री तरुणप्रभ सूरि के पाद-पद्मों को वंदन नमन किया।" इससे ज्ञात होता है कि संवत् १४३१ के पूर्व ही श्री तरुणप्रभ सूरि का स्वर्गवास हो गया था।

उस समय श्री तरुणप्रभ सूरि के स्थान पर गच्छ एवं संघकी व्यवस्था का कार्यभार श्री विनयप्रभ उपाध्याय संभाल रहे थे, ऐसा जिनोदय सूरिके विज्ञप्ति महालेख से ज्ञात होता है। उन्होंने लिखा है कि—"हम यात्रा करते हुए जब घोघा नामक बन्दर में पहुंचे तो वहां पर नवखंड पार्श्वनाथ भगवान के दर्शन किये और वहीं पर गच्छका समग्र कार्यभार वहन करने वाले हमारे सहायक एवं विद्या के समुद्र समान श्री विनयप्रभ महोपाध्याय का अत्यन्त आह्लादजनक संगम हुआ।" इस उल्लेख से ज्ञात होता है कि श्री जिनकुशल सूरि के स्वर्गवास के अनन्तर गच्छ समुदाय का जो कार्यभार श्री तरुणप्रभसूरि वहन करते थे। उनके अभाव में वही कार्यभार उस समय श्री विनयप्रभ महोपाध्याय वहन कर रहे थे।

ये विनयप्रभ श्री जिनकुशल सूरि के ही दीक्षित शिष्य थे। जिनोदय सूरि के साथ ही इन्होंने संवत् १३८२ में दीक्षा ली थी। जिनोदय सूरि का दीक्षा नाम सोम-प्रभ था। जिनको तरुण-प्रभाचार्य ने संवत् १४१५ में आचार्यपद प्रदान कर गच्छनायक के रूप में प्रतिष्ठित किया था।

ये विनयप्रभ उपाध्याय भी तरुणप्रभाचार्य के समान ही अच्छे विद्वान् थे। इनकी 'श्री गौतम स्वामीरास' नामक एक प्राचीन भाषा-रचना सुप्रसिद्ध है। जो प्रायः दीपावली के दूसरे दिन अनेक यति-मुनि तथा श्रावक आदि के द्वारा एक मांगलिक स्तुति पाठ के रूपमें पढ़ी-सुनी जाती है। यह भी एक संयोग की बात है कि जिस दीपावली के दिन तरुणप्रभाचार्य ने अपने प्रस्तुत बालावबोध ग्रन्थकी

रचना पूर्ण की उसी दीपावली के दूसरे दिन श्री विनयप्रभ उपाध्याय ने उक्त गौतम रास की रचना की अर्थात् संवत १४११ के दीपावली के दिन तरुणप्रभाचार्य की रचना पूर्ण हुई। और सं. १४१२ के प्रथम दिन अर्थात् कार्तिक सुदी १ के दिन (जो गौतम गणधर का कैवल्य ज्ञान प्राप्ति का दिन माना जाता है) उस दिन उक्त रासकी रचना हुई थी। तरुणप्रभाचार्य उस समय पाट्टण में थे और विनयप्रभ उपाध्याय खंभात में थे।

जिस प्रकार तरुणप्रभाचार्य कृत प्रस्तुत बालावबोध प्राचीन गुजरानी की एक उत्तम कृति है, इसी प्रकार विनयप्रभ उपाध्याय रचित 'गौतम रास' भी प्राचीन गुजराती भाषा की एक विशिष्ट पद्य रचना है।

बहुत वर्षों पहले गुजराती भाषा के प्राचीन इतिहास की दृष्टि से विद्वानों में वादविवाद चला था और उसमें बहुतसे विद्वान गुजराती पद्य रचना के आदि कवि नृसिंह मेहता को मानते थे। उस वादविवाद के प्रसंग पर स्व. श्री मनसुखलाल किरतचन्द मेहता ने अपने एक निबंध में यह स्थापित करने का प्रयत्न किया था कि गौतम रास गुजराती भाषा की सबसे प्राचीन तथा उत्तम कोटि की पद्य रचना है। इत्यादि—

परन्तु इसके बाद तो हमने नेमीनाथ चतुष्पदिका नामक एक सुन्दर प्राचीन गुजराती पद्य रचना प्रकट की थी जो विनयचन्द्र सूरि की बनाई हुई है, और वह गौतमरास के पूर्व साठ सत्तर वर्ष पहले रची गई थी।

प्रस्तुत बालावबोध एक प्रकार से प्राचीन गुजराती गद्य रचना की एक विशिष्ट कृति मानी जाने योग्य है। परन्तु हमारे अवलोकन में इससे भी पूर्व की कुछ ऐसी बालावबोधात्मक गद्य रचनाएँ देखने में आयी हैं। कल्प सूत्र के बालावबोध के कुछ त्रुटित प्राचीन लिखित पत्र हमारे देखने में आये हैं जो संवत १३६० के आस पास के लिखे हुए थे। इससे पूर्व की एक बालावबोधात्मक रचना हमें जेसलमेर के एक भंडार में मिली थी जो प्रायः संवत १२८० और ९० के बीच में लिखी हुई ज्ञात होती है। यह रचना जिन दत्त सूरि रचित कुछ कुलकात्मक प्रकरणों पर है। इसकी भाषा शैली प्रस्तुत बालावबोध के समान है। और जो थोड़े से पत्रे इस रचनाके हमें मिले हैं उनकी लेखनशैली भी भाषाकीय दृष्टि से प्रायः व्याकरणसंगत है। हमारा विचार था कि राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला में उसको यथावस्थित रूपमें प्रकट कर दी जाय; परन्तु समयाभाव के कारण हम जबतक उस ग्रन्थमाला के संचालक रहे तबतक वैसा न कर सके।

हमारे खयाल से यह प्राचीन राजस्थानी और गुजराती भाषा के प्राचीनतम गद्यात्मक कृति के रूप में माने जाने योग्य हैं।

इस ग्रंथ का सर्व प्रथम आलेखन करानेवाले धनिक श्रावक बलिराज के वंश का कुछ परिचय

तरुणप्रभ सूरि के प्रस्तुत बालावबोध नामक ग्रंथ का सर्वप्रथम आलेखन कराने वाले धनिक धर्मश्रद्धालु श्रावक ठक्कुर बलिराज के गुण और यश का वर्णन करने वाली जो प्रशस्ति ग्रन्थकार ने ग्रन्थान्त में लिखी है उससे ज्ञात होता है कि ठक्कुर बलिराज अपने समय में बहुत बड़ा धनवान तथा राजमान्य और जनसम्मान्य गृहस्थ था। इसके कई पूर्वजों के तथा वंश के अनेक गृहस्थों के उल्लेख पट्टावली आदि में मिलते हैं। दिल्ली एवं राजस्थान के कई स्थानों में भी इस वंश के अनेक धनी गृहस्थ रहते थे। जो समय-समय पर तीर्थयात्राएँ, प्रतिष्ठाएँ, आचार्यपद स्थापनाएँ आदि

धार्मिक उत्सवों में बहुत धन व्यय किया करते थे। इस वंश वालोंके नामों के पहले ठक्कुर शब्द का व्यवहार– हुआ है। इससे जाना जाता है कि इनके पूर्वजों में से किसी ने किसी राजसत्ता द्वारा बड़ी जागीर प्राप्त की थी और धार्मिक कार्यों में बहुत कुछ द्रव्य व्यय करने के कारण या व्यापारादि के कारण बहुत सम्पत्तिशाली होना चाहिये। यह वंश खरतर गच्छ का परम अनुरागी था। इसलिए खरतरगच्छ के प्रसिद्ध पूर्वाचार्य जैसे कि जिनकुशल सूरि, जिनचन्द्र सूरि आदि प्रभावशाली आचार्यों के उपदेशों से इस वंश वाले श्रावकों ने अनेक तीर्थस्थान और नगरों में जैन मंदिर बनवाये तथा उन उन आचार्यों द्वारा प्रतिष्ठादि महोत्सव कार्य सम्पन्न करवाये। खरतरगच्छ बृहद् गुर्वावली नामक महत्त्व के ऐतिहासिक ग्रन्थ में (जो हमने सिंघी जैन ग्रन्थमाला के अन्तर्गत ग्रन्थांक ४२ के रूप में प्रकट किया है।) इस वंश के अनेक कुटुम्बो के परिचायक उल्लेख मिलते हैं। तरुणप्रभ सूरि के प्रस्तुत बालावबोध ग्रन्थ के आलेखन और प्रचार में जिस ठ. बलिराज का वर्णन है वह इसी मंत्रीदलवंशीय एक कुटुम्ब का प्रसिद्ध पुरुष था। वह बहुत धर्मानुरागी और दानशील था। उसी की विशेष अभ्यर्थना के कारण तरुणप्रभ सूरि ने प्रस्तुत बालावबोध की रचना की और उसीने सर्वप्रथम इस ग्रन्थ की अनेक प्रतिलिपियाँ लिखवाई थी।

श्री तरुणप्रभ सूरि ने जैन ग्रंथकारों की प्राचीन परंपरा का अनुसरण करते हुए ग्रन्थ के अन्त में जो प्रशस्ति लिखी है, उसकी पद्यसंख्या ३३ है। इसमें से १२ पद्य तो उन्होंने अपने पूर्वाचार्य तथा निजके परिचयस्वरूप लिखे हैं, शेष २० पद्यों में ग्रन्थ का आलेखन कराने वाले ठ बलिराज के पूर्वजों आदिके परिचयस्वरूप लिखे हैं। इसके पूर्वजों में मन्त्रीदल के वंश में पहले एक ठ. दुर्लभ नामका मुख्य पुरुष हुआ उसका पुत्र ठ. दामर हुआ। उसका पुत्र ठ. भूपाल हुआ। उस भूपाल के ठ. देवपाल, ठ. तेजपाल, ठ. राजपाल, जयपाल, सहणपाल, ठ. नयपाल नामक ६ पुत्र हुए।

इनमें से देवपाल के हरिराज और हेमराज नामक दो पुत्र हुए। ठ. हरिराज की रासलदे नामक पत्नी थी। जिसके ठ. चाहड़ और ठ. धान्धक नामके दो पुत्र हुए। इनमें से ठ. चाहड़ बड़ा बुद्धिमान, लक्ष्मीवान, गुणवान और राजा का प्रसादपात्र था। उसने तीर्थों की उन्नति के लिये तथा गुरुओं की भक्ति के लिये और सार्धर्मिक भाईयों की सेवा के लिये बहुत सा धन व्यय किया। वह षडावश्यक कर्म करनेवाला श्रद्धावान पुरुष था। इस ठ. चाहड़ की पत्नी सहजलदे थी जो सुकृत कार्य– करने में उसके समान चित्त वाली थी। इनके नयनसिंह विजयसिंह, जवणसिंह और कर्णसिंह नामके चार पुत्र हुए।

इनमें विजयसिंह बड़ा दानी और धर्मप्रिय पुरुष था। उसने अनेक तीर्थयात्राएँ की और सातों क्षेत्रों में खूब धन व्यय किया। वह श्री जिनकुशल सूरि का अत्यन्त भक्त था। उनकी पदस्थापना का बड़ा महोत्सव जब पाटण में हुआ, तब वह दिल्ली से बड़े समुदाय के साथ वहाँ आया और बड़ी भक्तिपूर्वक आचार्य पद की स्थापना करवाई। इस विजयसिंह की वीरमदे नामक धर्म पत्नी थी जो सुप्रसिद्ध मदनपाल की पुत्री थी, उसकी पूर्णिनी नाम की द्वितीय पत्नी थी जो धर्मदेव की पुत्री थी उसी तरह भीरू नामक एक अन्य स्त्री थी।

वीरमदे नामक पत्नी से विजयसिंह को बलिराज और गिरिराज नामके दो पुत्ररत्न हुए। ये दोनों बड़े तेजस्वी, ऋद्धिमान और राज्यमान्य थे। इन दोनों भाइयों का परस्पर अत्यन्त गाढ़ स्नेहसम्बन्ध था। विजयसिंह की दूसरी स्त्री पूर्णिनी के उदयराज, कमलराज, अश्वराज और साधारण नामके चार पुत्र थे। बलिराज की शील, शालिन्य, कौलिन्य आदि गुणों को धारण करनेवाली कोल्हाई नामकी बुद्धिशालिनी पत्नी थी वह जिनधर्म में बड़ी आस्था रखनेवाली गुरुभक्ता थी, उसको क्षेमसिंह नामका पुत्र हुआ जिसकी होरू नामक स्त्री थी। उनका लखराज नामक पुत्र हुआ जो बहुत ही भाग्यशाली होकर बड़ा धर्मानुरागी था। इस प्रकार पुत्र पौत्रादि परिवारयुक्त बलिराज धार्मिक जनों के लिये कलिकाल में कल्पद्रुम के समान शोभायमान हो रहा था।

तरुणप्रभाचार्य ने अन्त में लिखा है कि वलिराज ने मेरे पास बैठ कर श्रद्धापूर्वक इस षडावश्यक भाषा वृत्ति का श्रवण किया और फिर इसने अपने और अन्य जनों के हितार्थ पुस्तकरूपमें इसको लिखवाया।

इस प्रशस्तिगत उल्लेखानुसार वलिराजने जो इस प्रस्तुत ग्रन्थ की पुस्तक के रूपमें प्रतिलिपियाँ करवाई। उन्हीमें की, कुछ प्रतियाँ बीकानेर, पूना, पाटण आदि के ग्रन्थभंडारों में आज तक विद्यमान है। उन्हीमें की ३, ४ प्रामाणिक प्रतियो के आधार पर भाषाशास्त्रविद् डॉ. प्रबोध पंडित ने इस ग्रन्थ का प्रस्तुत सुसंपादन किया है।

विद्वान संपादक ने अपने सम्पादन-विषयक कार्यपद्धति का जो परिचय दिया है, उसमें उपयोग में ली गई प्राचीन प्रतियो का यथेष्ठ वर्णन दे दिया है।

प्रस्तुत ग्रंथ के प्रकाशन में विलंब के कुछ कारण

जैसा कि ऊपर सूचित किया है, इस ग्रन्थ का मुद्रणकार्य आज से कोई १६, १७ वर्ष पहले चालू कराया था। परन्तु उपर्युक्त अनेक कारणो से इस ग्रन्थ का मुद्रणकार्य पूर्ण होने में काफी विलब होता गया, चूंकि सिंघी जैन ग्रन्थमाला के सचालन एवं प्रकाशन की व्यवस्था का सम्पूर्ण भार हमारे ही ऊपर निर्भर था। सन १९५० से हमारी साहित्यिक कार्यप्रवृत्ति बम्बई और राजस्थान के जयपुर-जोधपुर के बीच विस्तृत होकर कुछ विभक्त सी हो गई। हम बम्बई मे जिस तरह स्वस्थापित तथा स्वसंचालित सिंघी जैन ग्रन्थमाला का कार्यभार सम्भालते थे, उसी तरह राजस्थान में हमारे द्वारा संस्थापित तथा सरकार द्वारा सचालित प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान के तत्त्वावधान में हमारे ही द्वारा प्रारंभित एव संपादित राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला का सम्पूर्ण कार्यभार भी हमारे ही ऊपर निर्भर था। इसलिये इन दोनो ग्रन्थमालाओ के कार्य में समान रूपसे व्यस्त रहने के कारण बम्बई की ग्रन्थमाला के कुछ ग्रन्थो के प्रकाशन में अत्यधिक विलब होता रहा।

डॉ. श्री. प्रबोध पंडित द्वारा ग्रन्थ का सम्पादन व मुद्रणकार्य कोई ८-१० वर्ष पूर्व ही पूर्ण हो चुका था; परन्तु पिछले कई वर्षो से हमारी शारीरिक अस्वस्थता के कारण हमारा बम्बई जाना न हो सका और इसलिये इस ग्रन्थ को समय पर प्रकाशित करने की योग्य व्यवस्था हम न कर सके। ग्रन्थ छपकर आठ-दस वर्षो से बम्बई के भारतीय विद्या भवन के गोदाम में पड़ा हुआ है और हम अपनी दुर्बलता के कारण सिंघी जैन ग्रन्थमाला का यह एक विशिष्ट ग्रन्थ रत्न आजतक विद्वानों के करकमल में उपस्थित करने में असमर्थ से रहे।

डॉ. प्रबोध पंडित कुछ समय से दिल्ली युनिवर्सिटी में है। वहाँ से ये कभी कभी पत्र लिखकर मुझे सूचित करते रहे कि प्रस्तुत ग्रन्थका जो मुख्य सम्पादकीय वक्तव्य मुझे लिखना है उसे मैं लिखकर भारतीय विद्या भवन को भेज दू और उसको सूचित कर दू कि ग्रन्थ को प्रकाशित कर देने की समुचित व्यवस्था कर दी जाय। परन्तु पिछले कई वर्षों से मैं यहाँ जिस चंदेरिया नामक ग्राम (चित्तौड़गढ़ के पास) में निवास कर रहा हूँ। मेरे पास साहित्यिक विषय की कोई विशेष सामग्री उपलब्ध न होने से और मेरी आँखों की ज्योति भी प्रायः क्षीण हो जाने के कारण स्वयं लिखने-पढ़ने में असमर्थ हो जाने से एवं सहायक लेखक आदि का भी कोई प्रबन्ध न होने से मैं अपना संचालकीय वक्तव्य लिखने में भी असमर्थसा ही रहा। परन्तु पिछले २, ३ महीने पहले डॉ. श्री प्रबोध पंडित ने अहमदाबाद में मेरे चिरसाथी एव परमादरणीय मित्रवर पंडित प्रवर डॉ. श्री सुखलालजी संघवी से इस विषय में कुछ निवेदन किया तो श्री पंडितजी ने मुझे सादर आग्रह एवं कुछ मीठे उपालंभ के साथ लिखा कि मुझे किसी तरह प्रस्तुत ग्रन्थ का प्रधान संपादकीय वक्तव्य लिख देना चाहिये और ग्रंथ को प्रकाशित कर देने की व्यवस्था कर देनी चाहिये इत्यादि। श्रीमान पंडितजी का आदेश

पाकर मैंने किसी तरह अब यह संचालकीय वक्तव्य लिखकर ग्रन्थ के प्रकाशन की व्यवस्था का प्रयत्न किया है।

प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रकाशन में इस प्रकार अत्यधिक विलंब होने के कारण में हम विधि के किसी अज्ञात संकेत ही को निमित्त समझते हैं। ऊपर दिये गये पूर्व इतिहास से ज्ञात होगा कि सन् १९१८-१९ में हमें इस ग्रन्थ का सर्वप्रथम परिचय हुआ और तभी से हमको इसको प्रकाशित कर देने का मनोरथ उत्पन्न हुआ। हमारे जीवन की साहित्योपासना का वह प्रारंभ काल था, उसी समय हमको उद्योतन सूरिकी प्राकृत भाषा की महाकथा 'कुवलयमाला' का प्रकाशन करने की भी अभिलाषा उत्पन्न हुई। इन दोनों अभिलाषाओं को साथ लेकर हम अहमदाबाद के गुजरात विद्यापीठ में आये और वहाँ पर पुरातत्त्व मंदिर के द्वारा इन दोनों ग्रन्थों के प्रकाशन का आयोजन करते रहे तथा प्रेस में छपने के योग्य प्रेस-कॉपियाँ भी तैयार करवाईं। इनमें से 'कुवलयमाला' का तो सिंघी जैन ग्रन्थमाला के ४५-४६ ग्रंथांक के रूप में भारत के सुप्रसिद्ध प्राच्यविद्या विशारद और हमारे एक परम मित्र डा. ए. एन. उपाध्ये द्वारा सुसंपादित करवा कर हमने इतः पूर्व प्रकाशित कर दी। इसके प्रथम भाग के प्रारंभ में हमने किंचित् प्रास्ताविक वक्तव्य के रूपमें कुवलयमाला कथा के प्रकाशन का पूर्व इतिहास नाम का जो निबन्ध लिखा है उसमें उक्त कथा के प्रकाशन सम्बन्धी हमारे मनोरथ की सारी बातें लिख दी हैं। उक्त कथा के प्रकाशन की कहानी भी ठीक प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रकाशन की कहानी जैसी ही है। 'कुवलयमाला' का मुद्रणकार्य सन् १९५० में प्रारंभ हुआ और उसका प्रथम भाग मूल ग्रन्थरूप सन् १९५९ में तथा दूसरा भाग, सन् १९६९ में मुद्रित होकर प्रकाशित हुआ।

गुजरात पुरातत्त्व मंदिर (अहमदाबाद) में ही बैठकर हमने 'प्रबन्ध चिन्तामणि' ग्रन्थका सम्पादन व मुद्रण चालू कर दिया था और तभी उसके साथ प्रस्तुत बालावबोध को भी प्रेस में दे देना चाहा था परन्तु उपर्युक्त कथनानुसार विदेश में चले जाने के कारण वह काम रुक गया। 'प्रबन्ध चिन्तामणि' के कोई ४०-५० पृष्ठ छप चुके थे; पर उसका भी काम उसी कारण से आगे न चल सका। पर फिर जब शांति निकेतन में आकर सिंघी जैन ग्रन्थ माला का सन् १९३१ में कार्यारंभ किया तो उसके सर्वप्रथम मणि के रूप में हमने उस 'प्रबन्ध चिन्तामणि' को पुनः निर्णयसागर प्रेस में सुन्दर रूप से छपवाने को दे दिया और १९३३ में वह ग्रन्थमाला का प्रथम ग्रन्थ स्वरूप प्रकाशित हो गया। उस ग्रन्थ की भूमिका में हमने उसकी भी कुछ प्रकाशनकथा लिखी है। इस प्रकार जिस गुजरात पुरातत्त्व मंदिर के माध्यम से हमने इन ग्रन्थों का प्रकाशनकार्य सोचा था, उसमें से 'प्रबन्ध चिन्तामणि' सिंघी जैन माला में सर्व प्रथम स्थान प्राप्त कर यथाशक्य शीघ्र ही प्रकाश में आ गया और उसके पश्चात् ग्रन्थमाला में अन्यान्य कई छोटे-बड़े ग्रन्थ प्रकाशित होते रहे। सन् १९५० तक के २० वर्षों में कोई ४०-४५ जितने ग्रन्थ प्रकाश में आ गये, परन्तु वह कुवलयमाला महाकथा ग्रन्थ जिसको प्रकाश में लाने के लिये हम सन् १९१८ से ही अत्यधिक लालायित थे सन् १९५० में प्रेस में दिया जा सका और कोई बीस वर्ष बाद सन् १९७० में पूर्ण होकर प्रसिद्धि पा सका।

उसीका साथी यह षडावश्यक बालावबोध जिसका मुद्रणकार्य हमने सन् १९५६ में चालू कराया था अब कोई १६-१७ वर्षों के बाद प्रकाश में आनेका अवसर प्राप्त कर रहा है। हमें यह अनुभव कर संतोष हो रहा है कि जिस एक मनोरथ को जीवन के कोई ५५ वर्ष जितने दीर्घकाल तक हम अपने मन में लपेटे फिरते रहे और न जाने कहाँ कहाँ हम जिसको अपने अनेक विद्वानों के सम्मुख प्रकट करते रहे, वह अर्द्धमूर्च्छित मनोरथ आज इस प्रकार सफल होने का दिन देख रहा है।

सिंघी जैन ग्रंथमाला के जीवन का संक्षिप्त सिंहावलोकन

इस ग्रंथमाला का शुभारंभ हमने सन् १९३१ में गुरुदेव कवीन्द्र श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर के चिर-कल्याणकारी सान्निध्य में शांति निकेतन स्थित विश्वविख्यात विश्वभारती-विद्यापीठ में बैठ कर

किया। गुरुदेव की महती इच्छा को लक्ष्यकर स्व. बाबू श्री बहादुरसिंहजी ने वहाँ पर हमारी प्रेरणा से सिंघी जैन ज्ञानपीठ नाम से जैन शास्त्रों के अध्ययन-अध्यापन हेतु शिक्षापीठ (जैन चेयर) स्थापित किया। उसीके अन्तर्गत जैन ग्रन्थों के प्रकाशन निमित्त प्रस्तुत सिंघी जैन ग्रन्थमाला का प्रकाशन-कार्य भी हमने शुरू किया। बम्बई के प्रख्यात निर्णयसागर प्रेस में ग्रन्थों के मुद्रण की व्यवस्था की। एक साथ अनेकानेक ग्रन्थों का संशोधन, सम्पादन एवं मुद्रणकार्य चालू किया गया। अहमदाबाद में गुजरात पुरातत्त्व मंदिर द्वारा प्रकाशित करने के लिये जिन ग्रन्थों को हमने प्राथमिकता दे रखी थी, उन्ही ग्रन्थों में से कुछ को हमने सर्वप्रथम छपवाना शुरू किया। ग्रन्थमाला का पहला ग्रन्थ 'प्रबन्ध चिन्तामणि' प्रसिद्ध हुआ। बाद के 'प्रबन्ध कोष', 'विविध तीर्थ कल्प' आदि ३–४ ग्रन्थ भी उसी स्थान के नाम से प्रकाशित हुए। इन ग्रन्थों का प्रकाशन देखकर गुरुदेव भी बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने अपना शुभाशीर्वाद भी, स्वहस्ताक्षरों से अंकित, हमें प्रदान किया।

कोई ३ वर्ष बाद स्वास्थ्य एवं कार्य की सुविधा की दृष्टि से ग्रन्थमाला का कार्यालय अहमदाबाद लाया गया और वहाँ पर 'अनेकान्त विहार' नामक अपना निजीस्थान बनाकर वहीं से हमने 'भानुचन्द्र चरित्र', 'ज्ञानबिन्दु प्रकरणादि' ग्रन्थों का सम्पादन एवं प्रकाशन कार्य किया। सन् १९४० में स्वर्गीय श्री कन्हैयालाल माणिक्यलाल मुंशी के सद्प्रयत्न से बम्बई में भारतीय विद्या भवन की स्थापना हुई और उनका स्नेह एवं सौहार्दभरा आमन्त्रण पाकर मैंने उनकी प्रवृत्ति में अपना यथायोग्य सहयोग देना स्वीकार किया। बाद में सिंघी जैन ग्रन्थमाला के प्रकाशन सम्बन्धी व्यवस्था का प्रबन्ध भी भारतीय विद्या भवन के अधीन कर देना मैंने निश्चित किया। इस निश्चय में ग्रंथमाला के संस्थापक एवं सर्वथा संरक्षक स्व. श्रीमान बाबू बहादुरसिंहजी सिंघी तथा मित्रप्रवर श्रीमान डॉ. पंडित श्री सुखलालजी संघवी की पूर्ण सहमति प्राप्त हुई। पंडित श्री सुखलालजी इस ग्रन्थमाला के जन्मकाल से ही अन्तरंग सहायक और सत्परामर्शदायक बने हुए हैं तथा कई ग्रन्थरत्नों का इन्होंने स्वयं भी सम्पादनकार्य किया है।

स्व. बाबू श्री बहादुरसिंहजी का ग्रन्थमाला के विषय में अत्यन्त अनुराग एवं उत्साह था। उनकी इच्छा थी कि इस ग्रन्थमाला के कम से कम १०८ ग्रन्थ प्रकाशित होने चाहिये और इसके लिये जितना धन खर्च किया जाय वह करने को वे उत्सुक थे। उनकी ऐसी उत्कट ज्ञानप्रकाशन की भावना को लक्ष कर मैंने भी यथाशक्य एक साथ अनेकानेक ग्रन्थों के सम्पादन एवं प्रकाशन की व्यवस्था करने का प्रयत्न किया, परन्तु दुर्भाग्य से सन् १९४४ में उनका स्वर्गवास हो गया और उसके कारण मेरा मानसिक उत्साह भी कुछ शिथिल बन गया; परन्तु श्री सिंघीजी के सत् पुत्र स्व. बाबू राजेन्द्रसिंह सिंघी तथा स्व. बाबू श्री नरेन्द्रसिंहजी सिंघी ने अपने पूजनीय पिता की भावना को पूर्ण करने की इच्छा से हमसे ग्रन्थमाला के सम्पादन एवं प्रकाशन कार्य को यथावत् चालू रखने के लिये सद्भावपूर्ण सहयोग देने की अपनी मनोकामना प्रकट की। हमने उनकी इच्छानुसार ग्रन्थमाला का कार्य उसी तरह चालू रखा, जिस तरह स्व. बाबू बहादुरसिंहजी की प्रेरणा से कर रहे थे। सिंघीजी की मृत्यु के बाद भी प्रायः २० वर्ष तक ग्रन्थमाला का कार्य हम उसी तरह करते रहे और उसके कारण अनेकानेक महत्त्व के ग्रन्थ प्रकाश में आये।

दैवकी दुर्विपाकता के कारण पिछले ५, ६ वर्षों में बाबू श्री बहादुरसिंहजी के उक्त दोनों सत्-पुत्रों का भी देहावसान हो गया।

जैसा कि ऊपर सूचित किया है, इस ग्रन्थ माला का प्रारंभ सन् १९३१ में हुआ। ४२, ४३ वर्ष के इसके जीवनकाल के दर्मियान इसके द्वारा छोटे-बड़े कोई साठ से अधिक ग्रन्थ प्रकाश में आये। इसके लिये स्व. सिंघीजी ने और उनके बाद उनके सत्पुत्र बाबू श्री राजेन्द्रसिंहजी और श्री नरेन्द्र-सिंहजी ने हजारों रुपये खर्च कर ग्रन्थमाला का सर्व प्रकार मनोरम किया। हमारे निमित्त भारतीय विद्या भवन को भी हजारों रुपये की आर्थिक सहायता प्रदान की। लाखों की कीमत की बड़ी मूल्यवान

हजारों पुस्तकें भवन को प्रदान कर उसकी लाइब्रेरी को सुसमृद्ध बनाया। ग्रन्थमाला का प्रकाशन सम्बन्धी प्रबन्ध भवन को सौंप कर उसकी साहित्यिक जगत में विशिष्ट प्रतिष्ठा बढ़ाई।

सिंघी जैन ग्रन्थमाला में जितने ग्रन्थ प्रकाशित हुए, वे भारतीय साहित्य भंडार के अनमोल रत्न जैसे हैं। देश और विदेश के सभी प्राच्य विद्या-अभिज्ञ विद्वानों ने मुक्त-कंठसे इनकी प्रशंसा की। भारत सरकार द्वारा नियुक्त संस्कृत भाषा आयोग ने इस ग्रन्थमाला को भारत की एक सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थमाला के रूप में प्रमाणित किया। इसी ग्रन्थमाला की गुणवत्ता को लक्ष्य कर जर्मन ओरिएंटल सोसायटी जैसी विश्व के प्राच्यविदों की श्रेष्ठतम संस्थाने हमको अपनी आनरेरी सदस्यता प्रदान कर हम जैसे एक अतिसामान्य विद्याभ्यासी को भी वह गौरव प्रदान किया जो आज तक भारत के किसी भी अन्य विद्वान को (केवल स्व. सर रामकृष्ण भांडारकर को छोड़कर) नहीं किया गया। यह गौरव हम अपना नहीं मानते अपितु सिंघी जैन ग्रन्थमाला का गौरव समझते हैं। हमको केवल इस बात से आत्मसंतोष होता है कि हम अपने क्षुद्र जीवन में इस प्रकार ग्रन्थमालास्वरूप छोटीसी नौका का आधार पाकर दुस्तर भवनदी को पार करने में प्रवृत्त हुए हैं।

ग्रन्थमाला के मूल संस्थापक और उनके पितृभक्त पुत्र भी चले गये। इसलिये ग्रन्थमाला अब एक प्रकार से निराधार दशाका अनुभव कर रही है। इसी तरह ग्रन्थमाला के एक हितैषी भारतीय विद्या भवन के कुलपति और हमारे प्रिय मित्र श्री कन्हैयालालजी मुंशी भी अपनी सारी स्थूल समृद्धि और लीला-लक्ष्मी को छोड़कर वैकुंठ में वास करने चले गये। श्री मुंशीजी के विशेष आग्रह से ही हमने ग्रन्थमाला का कार्यप्रबन्ध भारतीय विद्या भवन को सौंपा है।

अब हमारा शरीर भी क्षीण हो चुका है और हम भी अब उसी मार्ग की ओर झांक रहे हैं जिस पर से ये अपने अन्यान्य साथी चले गये हैं।

ग्रन्थमाला के भविष्य में क्या लिखा है, यह हमें ज्ञात नहीं; पर हमारे द्वारा सम्पादित कुछ ग्रन्थ अभी अधूरे पड़े है। हम इनका उद्धार कर सकेंगे या नहीं, यह तो वही विधाता जाने जिसने प्रस्तुत ग्रन्थ को प्रकाश में लाने के लिये हमें यह अवसर दिया है। यदि वैसा थोड़ा सा भी और अवसर हमें मिल गया तो हम उन ग्रन्थों को भी यथातथा प्रकाश में रखने का प्रयत्न करना चाहते हैं।

ग्रन्थ के सम्पादक विद्वान के प्रति आभार प्रदर्शन

भाषाशास्त्र के अभिज्ञ विद्वान् डा. श्री प्रबोध पंडित ने कई प्राचीन हस्तलिखित प्रतियों के आधार पर बहुत परिश्रमपूर्वक ग्रन्थ का शुद्ध वाचन तैयार करने का जो प्रयत्न किया है और उसके साथ भाषा-विश्लेषणात्मक प्रौढ निबन्ध संकलित कर एवं विशिष्ट शब्दों का व्युत्पत्ति-दर्शक शब्द-कोष तैयार कर ग्रन्थ की उपयोगिता प्रदर्शित करने का जो श्रम उठाया है, उसके लिये मैं इनका हार्दिक अभिनंदन करता हूँ।

डॉ. प्रबोध मेरे एक अनन्य विद्वानमित्र पंडित श्री बेचरदासजी के सुपुत्र हैं। पंडित श्री बेचरदासजी का साहित्यिक सम्बन्ध मेरे साथ बहुत पुराना है। उतना ही पुराना जितना प्रस्तुत प्रकाश्यमान ग्रन्थ के साथ रहा है। सन् १९१९ में जब मैंने पूना में जैन साहित्य संशोधक नामक समिति की स्थापना की और उसके द्वारा 'जैन साहित्य संशोधक' नामक शोध-विषयक त्रैमासिक पत्र का प्रकाशन करना निश्चित किया तब उस कार्य में सहायक के रूप में श्री पंडित बेचरदासजी को मैंने अपने पास बुलाया था। तभी से उनका और हमारा पारस्परिक घनिष्ठ स्नेह सम्बन्ध चला आ रहा है। मैं जब पूना से अहमदाबाद में गुजरात पुरातत्त्व मंदिर का संचालन करने के लिये गया तो बाद में पंडितजी श्री बेचरदासजी को भी उस ज्ञान मंदिर में एक सुयोग्य अध्यापक तथा विद्वान्

[illegible] के रूप में प्रकाशित किया। पंडितजी श्री बेचरदासजी प्राकृत भाषा एवं जैन शास्त्रों के बड़े [illegible] विद्वान हैं। इन्होंने कई महत्त्व के ग्रन्थों का संशोधन, संपादन एवं आलेखन आदि का कार्य किया है। सिंघी जैन ग्रन्थमाला में भी इनके सम्पादित एक-दो ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं। भारत सरकार ने इनकी विद्वत्ता को [illegible] कर इनको सम्मानित किया है। इस प्रकार सिंघी जैन ग्रन्थ-माला में इन दोनों [illegible] विद्वानों द्वारा ग्रथित ग्रन्थ रूपी पुष्पों का समावेश होने से, ग्रन्थमाला की [illegible] हुई है। इनके इस प्रकार के [illegible] सहयोग के लिये मैं इनके प्रति अपनी [illegible] प्रकट करना चाहता हूँ।

[illegible] को प्राप्त कर प्रमुदित होंगे।

[illegible]

मुनि जिनविजय

PREFACE

A study of the Gujarati Language in the 14th century was undertaken by me in 1947 when I began my studies in Indo-Aryan at the University of London. A study of the language based on the narratives and illustrative stories from the text, together with a critical edition of the narrative materials and an etymological index of the text was submitted to the University of London in 1949 as partial fulfilment for the degree of Doctor of Philosophy. Later on, I edited the complete text and prepared a complete etymological index; the section on grammar required additions and alterations in light of the complete text, instead of rewriting that section, I have tried to present an overall picture of phonological and grammatical changes in Gujarati, using mainly the data from the text, in a section on the historical phonology of Gujarati vowels. The etymological index will make up for the items which are missed in the grammar section. The continuity of the grammar section is not maintained, there are also some terminological discrepancies. for this, I crave indulgence of the learned readers. The press copy was submitted to the Singhi Series in 1956, various delays, including the change of the printing press-from Nirnayasagar of Bombay to Aryabhushan of Poona- held up the publication. The findings of the study, presented after a delay of about two decades, may, however, be of some use in reconstructing the history of Gujarati language.

After the press copy was ready, a number of manuscripts of Taruṇaprabha's ṣaḍāvaśyaka vṛtti were noticed in various Bhaṇḍāras; apparently this was quite a popular text. Further collations may bring out useful data for a study of dialects of old Gujarati, and provide a fruitful exercise in textual criticism.

Here I take the opportunity of expressing my deep gratitude to Professor Sir Ralph Turner and Dr. A. Master, for valuable suggestions and guidance in the preparation of this study. My father, Pandit Bechardas Doshi cleared many points in the interpretation of the Prakrit portion and Muni Punyavijayji explained many theological terms of the text; I am indebted to them for their help. Thanks are due to Muni Jinavijayji, general editor of the Singhi Jain Series and the authorities of the Bharatiya Vidya Bhavan for including this study for publication in their esteemed series. I acknowledge my thanks to the authorities of the Bikaner, Bhandarkar Oriental Research Institute, Limbdi and Patan collections for lending me the mss.

University of Delhi
Delhi.

P. B. Pandit

A Study of the Gujarati Language in the 14th Century

1. The text and its significance

The wealth of documentary evidence for the history of the Gujarati Language is made well known by Sir George Grierson's remark in the Linguistic Survey of India. 'We have thus a complete chain of evidence as to the growth of the Gujarati language from the earliest times...... No single step is wanting. The line is complete for nearly four thousand years' (Vol. ix. part ii, p. 327). But at the same time the paucity of critical editions of early Gujarati is also remarkable. Much material still lies in Gujarati mss. and marginal glosses of Pk. mss. The earliest specimens of the Gujarati language date from 1330 V. S. There are four fragmentary prose pieces (in all, less than 200 lines) from 1330 to 1369 V. S., while this work is a detailed document containing popular narratives, written in 1411 V. S. This work is, not only the earliest detailed document of Gujarati, but one of the earliest in the New Indo-Aryan languages.

Ṣaḍāvaśyaka vrtti was composed at Aṇahilla pattana, now Patan, then the seat of *Gujarati learning and the capital of the famous Solamki dynasty. It is a Gujarati* commentary on Ṣaḍāvaśyaka, composed by Taruṇaprabha, pupil of Jinacamdrasūri of the kharatara gaccha. The praśasti at the end of the work says that it was composed under *the rule of Emperor Pirojasāha (Firoz Tughalaq).*

There are four mss. available, of which one from the Bikaner collection is written in 1412 V. S.; the other three are from the Bhandarkar Oriental Research Institute (not dated), the Limbdi (1419 V. S.) and the Patan (1503 V. S) collections.

Ṣadāvaśyaka is an important Jain text, both for monks and for laymen. It includes important feature of the Āvaśyaka literature in its stock of stories which are narrated to illustrate the power of various vows to be observed by Jains. The stories were told from generation to generation in Jain temples and houses. Dry descriptions of virtues and vices were made palatable by introducing stories in a popular medium. These thirty-one popular stories, are therefore, the nearest approximation to the spoken Gujarati of the period under examination.

It is an important phenomenon that our best ms. is written just one year after the composition of the text. At the same time, the other two, the BORI and the Limbdi mss. are written between 1411-1419 V. S., thus, of the four mss. available, three are written during the first ten years succeeding the composition of the text, evidence which cannot be disregarded in the restoration of the text. So I have edited the text eclectically By presenting the internal evidence I have been able to show the probable course of text-transmission, which has helped me judge the authenticity of various readings, and to fix the date of the BORI ms.

2. Description of the Mss.

The following Mss. have been used in preparing the text .—

(i) B. A paper ms. from Bikaner, Māhimā-Bhakti Bhaṇḍār. This is a well-preserved ms. in good handwriting. It has 308 folios, measuring 9" × 3", margin of half inch on right and left, a little less on top and bottom; ten lines to a page till folios 199, and 9 lines thereafter. The marginal space does not vary, and the whole ms. is by one hand. It has 40 letters to a line, except lines 3, 4, 5, 6, which have an average of 35 letters due to the space left in the middle.

The colophons (see appendix) clearly say that the work was composed by Taruṇaprabha on Saturday, Dīpotsava day 1411 V. S. at Aṇahilla-pattana, and the present ms. was written by Paṇḍita Mahīpāka on Friday, 9th day of the bright half of Caitra, 1412 V. S. The elaborate praśasti stanzas at the end give the genealogies of the teachers of the author and the patron.

The margins of the text are indicated by thick red lines on both sides, and two big red dots on the two sides, and a third red dot in the middle of the page in a 1" sq. The middle dot is perforated, and the edges of the hole are worn, indicating that the paper mss. were also preserved by binding with string. The red dots and the lines together with the size of the paper indicate a palm-leaf origin (cp. Vaidya MP Vol 1 p. xi. Hertel HOS Vol 12 p. 33).

The ms. is written on a thin paper and ink is well preserved. The corrections in the ms. are indicated by a kākapada in the line and the same in the margin together with the no. of the line. When some words are to be deleted from the body of the text, a yellow pigment is rubbed over the unrequired words, or marks like "", or a wavy line is placed over those words. Usual punctuation signs i. e. of daṇḍa and ardha-daṇḍa, are used. Vertical strokes over the words are used as a device for the punctuations. Usually padimātrā is used.

The ms. begins with —Arham. shrī Gautamasvāmine namaḥ. Surāsurādhīśamahīśanamyam praṇamya samyag nrirājaviram, subodham artham dinakṛtyasatkam likhāmy abuddhiprabodhanaya and ends with . śivam astu. Bhadram bhavatu. Samasta sādhu samudāyasya Ācandrārkkam nandatu.

The text presented by our ms. is as good as an autograph copy, but at the same time an autopsy and a comparison with other mss. shows that the haplographies and other eye-mistakes cannot be explained without the existence of a lost autograph.

Of all available mss. this is the oldest and best.

(ii) Ph. A paper ms. from Bhandarkar Oriental Research Institute, Poona No 797 of 1895-1902.

Though worm-eaten at many places this ms. is preserved in a good condition, and is written in clear bold hand-writing. It has 342 folios, measuring 9½"×4", margin of 1" to right and left, a little less on top and bottom, ten lines to a page, 36 letters to a line, except lines 4, 5, 6, 7 which have an average of 27 due to the space kept in the middle.

The colophons give the same date and place of composition. The last page giving the date of copying is lost and instead, a new paragraph is added at the end, in later hand, which gives the name of the person, who, at the suggestion of his master, presented the ms. to the Bhāṇḍāgāra. The loss of the last page can be easily explained. As the person who presented the ms. wanted to preserve his name, and not the name of the scribe, threw away the last page, which did not contain anything by way of text, but which contained the name of the scribe and the date of copying and then inserted his name and his master's name.

The praśasti in this and the remaining two mss. is short. Stanzas 14-32, which give the genealogy of the patron in B are not given. Evidently, the patron of the B. was not the patron of the writers of the other mss.

The margins are indicated by thick red lines on both sides, and two large red dots on the two sides, and a third red dot in the middle of the page in a 1½" sq. (this measurement is [illegible] preserved) kept in the centre. The central dot is perforated by [illegible] it appears that the hole was never used for tying the ms. with a string, hence the edges of the hole are not worn. The red dots and the decorative lines indicate a palm-leaf origin (see above).

The ms. is written on a thick, nice glazed paper, and the ink is well preserved. Folios are numbered twice in the margin in different hands till pp. 134, and then till end in one hand only.

There are marginal corrections and punctuations by a later hand, the corrections are indicated in the same way as B. There are a few intralinear corrections, here and there. there are a few marginal gloss, which explain and give equivalent old Gujarati words for Sk. or Pk. words. This is the only ms. which gives marginal gloss.

Usually padimātrā is used.

The ms. beings with: Arham. Srī Gāutamasvāmine namah. Surāsurādhisamahisanimyam......etc. and ends in the first hand by . Śrī camdragacchālamkara Śrī Sri kharataragachhādhipati Śrī Jinacamdrasūriśisyaleśa Śrī Tarunaprabhasūribhih Srī mamtri—, and the rest is lost.

This ms. with its clear hand-writing, careful marks of punctuation, and intralinear dissolution of sandhi, with marginal gloss and careful corrections in the margin, on the whole leaves an impression of a very carefully copied ms., and though the date of copying is lost, it is an important aid in restoring the text.

(iii) L. A paper ms. from Limbdi Bhandār.

Written in slovenly handwriting, this ms. has 154 folios, measuring 11" × 4½ , margin of about half inch on both sides, a little less on top and bottom it has 15 lines to a page, 50 letters to a line, except lines 6, 7, 8, 9, 10, due to the space kept in the middle

The colophons (see appendix) give the same date and place of composition, the date of copying is given [illegible] the 5th day of the bright half of Pāusa, 1419 V S. i. e eight years after the composition of the text. This ms. is also copied at Patan The praśasti stanzas 14–32 are dropped.

The margins are indicated by ordinary double black lines on both sides, and there is a space of about 1" in the shape of a parabola in the middle. The centre is perforated but it seems that it has never been used for binding the ms. as the edges are not worn.

There are no punctuation marks above the lines, and every word is separated in writing. The ms. is full of blunders like dharmma-ksau for karmma-ksau, laddhenam for tutthenam, and frequent ommissions and lacunae show that it is carelessly copied There are very few marginal corrections, (in spite of innumerable mistakes) and whatever there are, are in very inferior hand. Corrections are mainly done by deleting the wrong words in ordinary ink, or rubbing yellow pigment over the wrong word The ms is written on such an inferior paper that the scribe has sometimes to leave some space for fear of spreading ink.

Use of padimātrā is less frequent. The ms begins with —namah sarvajnaya Namah Śrutadevatayāi. Sri Gāutamasvāmine namah. Surāsurādhisamahisanamyam etc and ends with:—śubham bhavatu śubham astu.

This ms., as it will be seen later, has its exemplar in Bh , and hence it is not usefu as apparatus criticus, though the orthography of the ms. helps in studying scribal habits

(iv) P. A paper ms. from Patan, śrī sangh no jain jñān bhandār, no. 6[illegible]1

Closely written on an ordinary paper, it contains 1[illegible]6 folios, a margin of 1" on the right and left, a little less on top and bottom, twelve lines to a page, 51 words to a line except lines 5, 6, 7, 8, due to the space left in the middle.

The colophons give the same date of composition, and the date of copying as 11th day of the dark half of Jeth, Tuesday, 1538 V.S., at Saraswati Pattana, i e Anahill Pattana. The praśasti stanzas 14–32 are, as in two other mss., omitted.

The margins are marked by ordinary black lines on both sides. There is a space of 1¼" sq. left in the middle The ms. is written on a thick but inferior paper. There are few marginal corrections, probably by a later hand, and no punctuation marks above the line Use of padimātrā is very rare

The ms. begins with — Arham Sri Gautamasvāmine namah Surāsurādhiśamahīśanamyam.... ..etc., and ends with ..ubham bhavatu śubham astu. lekhakavācaka suśrāvakavargasya. anustubhām sahastrām sapta tvaksarasamkhyayā, jñeyāni vrttāv atra sādhikām manīṣibhih 1

The last line remains unfinished, and a later hand has added other lines (see appendix), the name of the gaccha to which the scribe belonged is cleverly erased by a later hand, and re-written as 'Kharatara gacchiya' Perhaps the last line contained the name of the scribe.

The ms., though inferior as regards its descent is concerned, is carefully copied, and has preserved some good readings, though in many cases we find the text modified by dialectal influence — in space and time — and therein lies the importance of the ms.

3. Orthography

3.1 These mss are written in a popular spoken language about a popular topic. Four mss., three of which are written during first eight years of the composition of the text, the fourth, a hundred years later, all at the same place, create a problem of their own. Varying scribal habits, dialectal differences and the influence of a standard language are the principal factors influencing the orthography of our text

3.2. There are two main sources of variants Many of them are, no doubt, the result of orthographic errors-mistakes of the scribes—. But when we find certain cases repeated again and again in a consistent way, we cannot impute those errors to the scribes only, they must have their basis in the existing conditions of the language. More so when we are dealing with a text which is written in a popular current language. (for a similar case regarding Pk mss see Leumann Āv introduction.)

Of our mss P provides a good example of scribal peculiarities. It is copied in 1500 v s and therefore, later than the other three, though copied at the same town. Its peculiarities are

It writes tau post pos. for itau[1], thakau, thakā post pos. for thu-, and generally it has hatu, hai, for huyau, huyā Add to this, stray variants like jesi for jisi[2], thāharā for tāharā, which would, on the whole, suggest that the scribe of the P hails from a different dialectal area Dialectal differences already appear in the literature of the Pre-Gujarati period, i.e. in the Ap works, (as reflections of dialectal differences in the deśabhāsa, see Jacobi BH p. 18), and in the OWR texts also, dialectal differences are evident (Turner GP p. 333).

Pk once reads thiharau for tāharau, which is again an important indication of early development of this form, though foreign to the language of the text.

L has often a y glide in forms like isau isyau, karisu karisyai, and it also writes cyāri for ciyāri

3.3 In these cases, dialectal differences can be ascribed to particular scribes, because of the relative frequency of particular readings. But there is another group of variants which is not peculiar to any scribe or ms but occurs intermittently in all the

---

1 P [illegible] as in 3.3 it alters a correct reading karai tau to kara-tau; also [illegible]

2 There [illegible] that it is not a verbal error E omits it. BH has [illegible] What is certain is that a conjunctive particle was needed [illegible]

	B	Bh	L	P
	tlhāṁ	—	tlṁha	—
	saiṁ		—	sai
	pāraṇai	—	—	-iṁ
§ 109.	mekhalāṁ	—	—	-lā
	"	"	"	"
	saiṁ	—	—	sai
	"	"	"	"
	mekhalāṁ	—	-lā	-lā
	tlṁhaṁ	—	tiham	tlham
	tihāṁ	tihā	—	—
§ 110.	rahaiṁ	—	—	-ai
	lṁhāṁ	—	—	lhāṁ
	nahlṁ	nahī	—	nahl
	isauṁ	—	—	-au
	tlṁhaṁ	—	tlha	tlha
	tāpasahaṁ	—	-ha	tāpasa
	hūṁtā	-āṁ	—	—
	tlhaṁ	tiṁha	tiṁha	—
	nai	—	—	naiṁ
	ūpanau	—	-nu	-auṁ
	māhi	—	—	-iṁ
	-sauṁ	—	—	sau
§ 111.	taṇau	—	—	-uṁ
	māhi	—	—	-iṁ
	saiṁ	—	—	sai
§ 112.	samai	—	—	-iṁ
	māhi	—	—	-iṁ
	tehe	—	—	-eṁ
	māgiuṁ	—	—	-iu
	kāiṁ	kāṁlm	—	—
	māgiyaiṁ	—	—	māṁ-
	isauṁ	—	—	-au
	māgiuṁ	—	—	-iu
	taṇai	—	—	-iṁ
	āpaṇai	—	—	-iṁ
	hūṁtauṁ	—	—	-au
	teha	—	—	-aṁ
	taṇai	—	—	-iṁ
	āpaṇapauṁ	—	—	-au
	tilāṁ	—	—	-lā
	etalīṁ	—	-lī	-lī
	rahaiṁ	—	—	rai
	nīpajaiṁ	—	—	-ai
	nahlṁ	nahī	—	—
	taṇau	—	—	-aum
	isauṁ	—	isyau	-au
	taṇai	—	—	-iṁ
	āpaṇau	—	—	-auṁ
	ṭhālauṁ	—	—	-au
	thāi	—	—	-iṁ
	nahlṁ	nahī	nahī	—
	tlṁhaṁ	—	tlhaṁ	tlhaṁ

	H	Bh	L	P
	citavai	ciṁ-	cim-	—
	māhi	—	—	-iṁ
	anerai loc. sg.	—	-aiṁ	—
	kini huṁ	—	kuna haiṁ	—
	isaum	—	—	au
	dhyāyatai loc. sg.	—	-iṁ	dhyātai
§ 74	hoi	—	-iṁ	—
	chanau	—	- nauṁ	chaṁ nauṁ
	anai	—	—	-iṁ
	jisāṁ	jisā	-sā	-sā
	tīmham	tīhaṁ	tīṁha	tīhaṁ
	tīham	tīṁha	tīha	tīhaṁ
	tīham	tīhaṁ	tīha	tīhaṁ
	tīham	tīṁham	tīṁha	tīhaṁ
	tīmhaṁ	—	tīṁha	tīhaṁ
	solasaim	—	—	-ai
	tīhaṁ	tīmham	tīṁha	—
	solasaim	—	—	-ai
	ciyārisaim	—	—	-ai
	ekavīsāṁ	—	—	-sā
	pāṁcasaim	—	—	-ai
	chatrisām	—	—	-sā
	etalām	—	—	-lā
	isaum	—	—	-au
	kahiuṁ	—	—	-iu
	namatai	—	aiṁ	—
	huyauṁ	—	—	-au
	maiṁ	—	—	mai
	lādhaum	—	-au	-au
	teha	—	—	-aṁ
	sariuṁ	—	-iu	-iu
	isaum	—	isyauṁ	-sau
	āpanapaum	—	—	-pau
	jītaum	—	—	-au
	taum	—	—	-tau
	juri	—	-iṁ	—
	taiṁ	—	omits	tai
	humtai	—	-iṁ	—
§ 103	gāgaü	—	—	giṁ-
	"	"	"	"
	tanau	—	—	-uṁ
	gāgaü	—	—	gāṁ-
	āvatau	—	—	āṁva-
	pāṁca [illegible]	—	-hī	—
	rahai	-iṁ	-iṁ	-iṁ
	pāhaum	—	—	-au
	bhanai	—	—	-iṁ
	[illegible]	—	—	-uṁ
	bhanai	—	-iṁ	-iṁ
	jetalai	—	-iṁ	—
	[illegible]	—	—	sai
	[illegible]	-yā	-yā	—

ṣ is written for kh. Here also B does not confuse it. It carefully writes kh. In fact, it is so careful that it writes kh even when it is not attested historically, e. g. mūkhaka for mūṣaka (this word is found in B folios 143 recto). Also note a peculiar confusion of reading at § 526 mukhya, where P reads manuṣya. But this does not mean that B writes kh for ṣ, instances are available where it also writes ṣ; e. g. sarisau, maruśiṣari, ṣaṁḍa. *But, generally B does not interchange them to a great extent.* Bh follows generally the same practice. L and P write s for kh to a much greater extent. The following are some instances where B and Bh have kh while L and P have ṣ : pāṣai, deṣai, deṣī, lāṁṣai, pāṣatiyāṁ, pāṣāna, diśālī, olaśiyā, raṣe, olaṣī, murṣu, harṣiyā. It may be noted here that Dave's statement that "roughly Sk loanwords are written with kh and OG words are written as s" (GL p. 2), does not hold good in our text.

3·7. Thus far scribal habits But there is another factor in the structure of the text. Jain narrative literature in general, and our text in particular, derive their inspiration from the popular Pk tale The author has Pk narrative before him, as found in Āvassaya literature, and he writes them in bhāṣā for the comprehension of the ordinary *householders who do not understand Pk. Thus, Pk words and idioms find their way into our* OG text. It may not be out of place to mention here that as Sk in the Hindu families, Pk in the Jain families is alive even to-day. An imperative sg. with -ha ending, words like puttu, mittu, for putru, mitru, (sometimes unable to decide orthographically) are evidently Pk influences. What is more interesting is, that our author has forgotten at some places whether he is writing Pk or bhāṣā, and thus in § 142-49 Pk and bhāṣā combine in a peculiar mixture. It is difficult to say when Pk ends and OG begins, and this unique piece of prose explains how much popular Pk had influenced early Gujarati prose style.

3·8. Consideration of Orthography in Critical Apparatus.

The text as a whole is preserved faithfully in these mss. Our earliest ms. is only one year later than the composition of the text, the other mss. are not much later. They all generally agree except on the point of spelling or in some cases of dialectal variation. It is unlikely that scribes would copy minor differences in spelling from their ādarśa, they would rather follow their own habits, as we saw in the nasal signs or the dir. sg. of a-stems, especially in the bhāṣā texts where spelling was not considered so seriously as in the classical texts such as Sk or Pk It was, therefore, futile to speculate about the exact spelling of the 'archetype' i. e. Codex Tarunaprabha, and I have not attempted it. What I have attempted is to present the text which appears to be nearest to the archetype, with its roughness of spelling. I have not tried to normalise the text with a uniform system of spelling as, I think, this would have given a wrong picture of the orthography of the text.

To note each variation of spelling would have burdened the text with unnecessary details, so I have followed the following scheme :—

(*a*) For the paragraphs 38, 73, 85, 86, 94, 108–113, 142–149, 365 and 386, complete collations of all mss. are given in all details in order to give an idea of the orthography. Thereafter :—

(*b*) L is completely omitted because it is a direct copy of Bh (3·12).

(*c*) B is followed with respect to nasal signs, deviations from which are not recorded.

(*d*) Occasional spelling mistakes e. g. final i/ī, u/ū of the mss. other than B are not recorded.

(*e*) B *is followed with respect to s, kh and v/b variations, deviations from which* are not recorded.

(*f*) As P consistently writes -tau for -itau and thakā, thakau, for thikā, thikau, its deviations on these readings are not recorded.

It will be evident from a glance at the text that this scheme has effectively lightened the text without depriving it of critical material.

	B	Bh	L	P
	trihum	—	—	-hu
	tīmhaṁ	—	—	tehāṁ
§ 113.	karatā	—	—	-āṁ
	tīmhaṁ	—	—	tīhāṁ
	jeha	—	—	-aṁ
	taṇau	—	—	-uṁ
	parim	-ri	ri	-ri
	karatā	—	—	-ām
	tīmhaṁ	—	—	tīhaṁ
	pāchaum	—	—	-au
	bhaṇai	—	—	-aiṁ

The instances given above are taken from a few pages only, but they d contradict the general impression given by the rest of the mss. It is evident from above that B and Bh, our best mss., do not differ much, nor do the scribes write nasal signs capriciously. Apart from slips, they followed a definite scheme of marking nasal signs, rather than copy their ādarśa (exemplar) :—

A few words are not spelt consistently . nahiṁ, kāmiṁ, saiṁ, -auṁ (past part.), tiṁhaṁ. (These words nahiṁ, kāmiṁ etc. are not spelt consistently in modern Gujarati also)

Loc/inst. sg. termination varies in nasal sign in some cases. L. generally nasalises the termination. It also writes nahi for nahiṁ. (In modern Gujarati, dialectally nasalisation in pronouncing loc/inst sg. varies.)

P. largely varies from the other mss., but it has its own scheme. It does not nasalise isau, and past part. ending -iu; it nasalises māhi, taṇau, taṇai, and frequently, 3rd sg. -ai.

3·5. The variation of -a/-u ending in dir. sg. of unextended a-stems is noted i these mss. The same word in one ms. occurs often in the same page with or without th -u ending, a fact which cannot be explained except as an orthographic variation.

Already in later Ap. texts, mss. vary between the bare stem and the -u termin tion in dir. sg. (Jacobi SC p. xxviii, Shahidulla CM p 38, Master JRAS 1940 p. 68, Mu and Bhayani SR § 52). In these late vernacular-coloured Ap. the increasing occurrence the bare stem (esp. in SR) appears to be a reflection of the then current dialects. Th In dealing with termination of the a-stem in dir. sg. we should consider that the bare st was already in use, but -u ending was retained in orthography as a scribal habit. Ap from dir. sg. of the a-stems, scribes make a general mistake about writing -u where th is -a, on the other hand, writing -o where there is -u, latter may be due to grap similarity of the two letters -u and -o in mss., and also due to Pk influence; e. g. JASB x no x 1914 p 406-7 Pāla Inscription of Kalhaṇadeva of Naḍḍula written in Sk. in 1241 V. where Guṇadhara stands for Gaṇa-; also see Barnett BSOS vol iii p 671 Inscription of Sthiratattva at Kharjuri, where celu and celo vary, examples can be multiplied.

Ap influence, in this case, mainly Western Ap influence, on the scribes appears to be chiefly responsible for bringing in many -u endings The influence of Ap scribal habits prevailed upon our scribes to such an extent that sometimes -u is appended to a Sk word in a Sk couplet !

3 6. Other general scribal tendencies may be noted here : A consonant following a medial -r- is doubled, e. g. karmma, vargga, dharmma, etc.

-v- is written for -b-. Usually B and Bh do not confuse the two, while the other two mss. write -v- frequently.

ṣ is written for kh Here also B does not confuse it. It carefully writes kh In fact, it is so careful that it writes kh even when it is not attested historically, e g. mūkhaka for mūṣaka (this word is found in B folios 143 recto) Also note a peculiar confusion of reading at § 526 mukhya, where P reads manuṣya But this does not mean that B writes kh for ṣ, instances are available where it also writes ṣ, e g. sariṣau, maruliṣari, ṣaṁḍa. But, *generally B does not interchange them to a great extent.* Bh follows generally the same practice. L and P write ṣ for kh to a much greater extent The following are some instances where B and Bh have kh while L and P have ṣ pāṣai, deṣai, deṣī, lāṁṣai, pāṣatiyāṁ, pāṣāṇa, diṣāḍi, olaṣyā, raṣe, olaṣi, murṣu, bharṣyā It may be noted here that Dave's statement that "roughly Sk loanwords are written with kh and OG words are written as ṣ" (GL p 2), does not hold good in our text.

3·7. Thus far scribal habits But there is another factor in the structure of the text. Jain narrative literature in general, and our text in particular, derive their inspiration from the popular Pk tale The author has Pk narrative before him, as found in Āvassaya literature, and he writes them in bhāṣā for the comprehension of the ordinary *householders who do not understand Pk Thus, Pk words and idioms find their way into our* OG text. It may not be out of place to mention here that as Sk in the Hindu families, Pk in the Jain families is alive even to day An imperative sg with -hi ending, words like puttu, mittu, for putru, mitru, (sometimes unable to decide orthographically) are evidently Pk influences. What is more interesting is, that our author has forgotten at some places whether he is writing Pk or bhāṣā, and thus in § 142 49 Pk and bhāṣā combine in a peculiar mixture. It is difficult to say when Pk ends and OG begins, and this unique piece of prose *explains how much popular Pk had influenced early Gujarati prose style*

3 8. Consideration of Orthography in Critical Apparatus

The text as a whole is preserved faithfully in these mss. Our earliest ms is only one year later than the composition of the text, the other mss are not much later They all generally agree except on the point of spelling or in some cases of dialectal variation. It is unlikely that scribes would copy minor differences in spelling from their ādarśa, they would rather follow their own habits, as we saw in the nasal signs or the dir. sg. of a-stems, especially in the bhāṣā texts where spelling was not considered so seriously as in the classical texts such as Sk or Pk It was, therefore, futile to speculate about the exact spelling of the 'archetype' i e Codex Taruṇaprabha, and I have not attempted it What I have attempted is to present the text which appears to be nearest to the archetype, with its roughness of spelling I have not tried to normalise the text with a uniform system of spelling as, I think, this would have given a wrong picture of the orthography of the text.

To note each variation of spelling would have burdened the text with unnecessary details, so I have followed the following scheme —

(a) For the paragraphs 38, 73, 85, [illegible], 94, [illegible] 113, 142 149 [illegible] and [illegible], complete *collations of all mss are given in all details in order to give an idea of the* orthography. Thereafter —

(b) L is completely omitted because it is a direct copy of P (3 12)

(c) B is followed with respect to nasal signs deviations from which are not recorded.

(d) Occasional spelling mistakes e g final i, u [illegible] of the mss other than P are not recorded

(e) B is followed with respect to kh and ṣ [illegible] variations deviations from which are not recorded

(f) As P consistently writes -[illegible] for [illegible] and [illegible], [illegible] for [illegible], [illegible] deviations on these readings are not recorded

It will be evident from a glance at the text that this scheme has effectively lightened the text without depriving it of critical material

3·9. Relations of the Mss.

As seen above, the text largely deals with popular narrative; thus the scribes could have taken more liberty with the text without altering its structure; but this is not done. The text is preserved in one coherent version. all the mss. agree generally, apart from scribal idiosyncracies. These slips of the scribes, minor omissions and agreements provide a clue to the relations of the mss I have classified below agreements and omissions indicating the relations of the mss.

3·10. Peculiar agreements —

paragraph number	B	Bh	L	P
38	bhaṇivā	bharivā	(same as:) Bh	Bh
38	gamanāgamanaum	-gamanu	Bh	Bh
38	jiva rahaiṁ	jīvaham-	Bh	Bh
73	sāṁmu	samuhau	Bh	sāmahau
74	-kaṇi	-taṇi	Bh	B
74	hūṁti	hūṁtai	Bh	Bh
85	rājādi	rājādika	Bh	Bh
86	rājādika loka	-ke -loke	Bh	B
86	kiṁ vā	B	yadi vā	B
86	iṁhiku	ihikū	iha hū	iha loki
94	baisāli	baisārī	Bh	B
94	pūrvabaddhu	pūrvabhava- -baddhu (marginal)	Bh	B
109	ūpahirā	ūpaharā	Bh	Bh
110	sagala	sagalū	Bh	-lā
144	aṁta samai āpaṇai pāṭi	āpanai pāṭi aṁta samai (marginal)	Bh	B
145	bhaṇai	pabhanai	Bh	Bh
146	virayacariyaṁ ca kulaṁ nisāmeha	virayassa-	Bh	virayacariyaṁ kulaṁ ca-
146	pajjaliyaṁ	pajjaṇiyaṁ	Bh	pajjanniyaṁ
149	tayā	taiyā	Bh	B

3·11. And a surer test is from omissions. Following are the instances of the omissions :—

Para No.	B	Bh	L	P
38	bāhiri	(same as:) B	omits	B
38	karī	B	"	B
73	isai	omits	"	B
73	tihāṁ	"	"	"
73	āpaṇī	B	"	"
74	eka	B	"	"
74	pāṁca	omits	"	"
74	eki	B	"	"
74	dekhī	omits	"	"
74	isī pari	B	"	"
85	-guṇa	omits	"	"
85	ityāha	omits	"	"
85	jai	omits	"	"
94	citta	omits	"	"
109	omits	muktinimitta	Bh	"
113	isau	omits	omits	"

Para No.	B	Bh	L	P
113	karī	omits	"	"
113	tāpasa	B	"	"
142	karī	omits	"	"
147	bhayavam	B	"	"

Instances noted above are based on partial collations, but the general impression of the mss. does not go against the conclusions drawn from these collations.

3·12. The relation between Bh and L is obvious Agreements are many, and the omissions a surer test of genetic relationship. They have common faulty readings, e. g pajjaṇiyaṁ (for pajjaliyam), and common innovations like pabhaṇai (for bhaṇai), pūrvabhavabaddhu (for pūrvabaddhu) etc; what is more important is that L has many more omissions than Bh. These can be explained only if L is inferior to Bh in transmission. Moreover, marginal corrections in Bh (which may have been made by someone who revised the text) are included in the text in L. All this indicates that L is a copy, most probably a direct copy, of Bh. because L is an early ms. and there is little chance of another exemplar intervening between it and the archetype. Bh, thus, should be placed between 1411 V. S. and 1419 V. S.

Bh is a very neatly and carefully written ms, while L is carelessly written, sometimes has blunders which any sensible scribe would avoid, e. g dharmmaksau for karmmaksau, luddhenaṁ for tuṭṭhenam, and has a number of haplographies e. g. 94, 110-111, 113., etc., which are not found in other mss.

Evidence from L, therefore, is neglected in giving the critical apparatus.

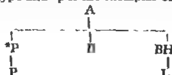
It is difficult to decide the position of P. It agrees sometimes with Bh, sometimes with B, though its affinities are more with B - as the omissions given above indicate-, and its minor agreements with Bh are general rather than peculiar to itself.

What is peculiar to P is its tendency to correct a wrong reading (which is a general tendency of late mss.) and sometimes the correction is very suitable, as in the case jina-pradhāna-haṁ (for jima-pradhānahaṁ). But frequently its corrections are unnecessary and unwarranted P is nearer to B rather than to Bh, though not a direct descendent of either. Its exemplar may be a ms. nearer to B.

B, on the other hand, stands by itself: according to the long praśasti at the end, its date of copying, 1412 V. S., is very near to the date of composition, 1411 V S, and its careful writing make it the most authentic ms. of the text. B is perhaps as nearer to the archetype as Bh, but it is more reliable.

3·13. Existence of a written archetype cannot be doubted Haplographies and dittographies in B and Bh, and various marginal corrections and additions cannot be explained unless they are copied from some original source. Moreover, some evident eye-mistakes in Bh, or a common blunder like jima pradhānaham for jina pradhānaham in B and Bh, together with their general uniformity indicate a common source.

3·14. The relations of the manuscripts can thus be explained by the following diagram where A is the archetype and *p is the exemplar of P.:—



I have followed B generally, and preferred it to Bh or Bh and L. When P and Bh were against B the case is dealt with individually. I have not preferred Bh to the joint evidence of B and P.

4. Morphology

Nominal-stem Formation

4·15. Affixes:

Stem-forming suffixes :—

-paṇauṁ, forms abstract nouns. e. g. balavaṁtapaṇauṁ

-hāra, forms agentive nouns e. g. paisana-hāra, dekhana-hāru, dena-hāru.

-guṇauṁ, goes with numerals to show multiplicity. e. g. bi-guṇauṁ, tri-guṇauṁ.

-lau/-lu, supplies the sense of 'belonging to', e. g. samilu, duhelauṁ, eka-lau; it also forms adverbial adjectives showing place or time. e. g. chehi-lau, āgi-lau,.

Other stem-forming suffixes are continued from Sk. e. g. -vaṁta, -maṁta, -maya (Pk. -mau).

Stem-enlarging suffixes :—

-au, this is the enlarged noun-stem in a-stem, 'svārthe kaḥ' (Hc ii 164). e. g. melāvau, vāṇiyau, vācharau.

-ḍau, sometimes indicates diminution. e. g. bhīgaḍau, ḍhūkaḍauṁ.

Feminine substantives end in ā, i or ī, and adjectives in ī.

Prefixes :—

a-and aṇa- indicate the negative sense; both are used before nominal as well as verbal forms. e. g. see index.

sa- indicates the sense of 'together with'; used only once, probably a lw. e. g. sanethāhu.

4·16 Gender.

Gender distinctions of OIA are continued in OG through Pk. and Ap, but the tendency of normalising the inflections to masc. a-stems in MIA, and which is carried further in Ap, gives rise to differences of grammatical gender in NIA. Even in OIA, neuter merged in masc. except in direct cases (nom. and acc.) and this was carried further in MIA. In Ap, distinction is much more blurred; according to Hc (iv 331) nom. sg. of masc. a-stem should end in -o or -u, neuter in -u or in extended stems -aũ, nom. and acc. masc. pl. in -aĩ or āĩ, (iv 344, 353), but this distinction is not observed in hitherto available texts. Jacobi notes that in Ap, nom/acc n. termination is shared by masc. and nom/acc masc. pl. by n. (BH 4 22).

In OG we arrive at a stage of fairly established normalisation of m. and n. stems to -u in dir. sg. It is furthermore helped by sentence rhythm arising out of the participial construction, where the verb-participle also ends in -au > -taka. As a result, grammatical distinction between m. and n vanishes in a large number of cases. But, on the other hand, it appears that the idea of n. was strong enough to manifest itself in a distinct morphological form, and we find some cases in our text where n. dir. is distinguished from m. dir. e. g. thukaum, ghaṇaum, (v. l. ghaṇum), duhelauṁ, trepaṇauṁ, pāraṇauṁ, tāraṇauṁ, visāhaṇauṁ; this -aum termination goes back to Pk -kam, and Ap -aũ. There is no necessity, therefore, to suspect a substratum i. e. Dravidian, influence on the formation of neuter (see however, Chatterji BL § 483, Bloch LM § 180). At least, we find, that in Guj. it has a continued existence. Neuter is absent in Ḍingaḷ (Ojha NPS p. 140) and Rājasthānī (LSI vol ix part I. p. 5). Ap texts give an interesting history. SR, a later vernacular coloured Ap text, has no -aũ n. forms (SR § 47). It is found in BH and SC (SC § 13, 16). It is quite prominent in HP (HP § 42). This signifies an early dialectal treatment from Ap period.

In stray variae lectiones in our text we get the contraction -ũ < -auṁ (*ghanum*), which in MG develops as a regular termination for n. At the same time, we get a stray v. l. -o < —au (lādho), which later develops as a regular termination for m. Thus the process of morphological distinction is already at work in our text. Of the other NIA languages, Bhadarwāhi n. is strikingly similar to Gujarati n. (Varma, Indian Linguistics vol I part ii 'Neuter gender in Bhadarwāhi'): while Koṅkaṇī and Marāṭhī n differ in terminations.

Case

4·17· *Nominal flexion* has disintegrated and given place to periphrastic declension and postpositions. Merging of one case into another from early MIA period has hastened this process. In Ap stage, a confusion in case terminations is already prominent. Thus, nom. and acc. sg. have -a, -u; inst. and loc. sg. have -i,-ihi; the vagaries of marking the nasal in Ap orthography further confuse inst. sg. -i with pl. -iṁ.

This condition necessitates the use of postpositions to indicate the kārakas In OG we find increased use of postpositions, but at the same time, orthographic tradition of Ap is strongly maintained by parallel use of case terminations Often we get both at the same time, which indicates that postpositions, in many cases, were meaningless appendages. ā-stems and i-stems as well as a-stems have lost flexion in majority of cases. Following are the instances, mainly of the a-stems where the bare stem is used·—

Direct :—

hātha de karī, § 38.
Mahāvīra sāṁmau sāta āṭha paga jāī, § 73.
atisāra alaṁkāra pahirī, § 73.
bāraha varasa āṁbila cittasamādhipūrvaka, § 94
kevalī āśātanā ma karī, § 108.
ravikirana avalaṁbī karī, § 110
Gautamaguṇa anumodatāṁ, § 112.
sava i tāpasa kevalīsabhā ūpari, § 113.
dhanada jima dhanapati vidyāpati, § 480.
ravibimba jima tumhārai mukhi, § 480.
samasta lakṣmī ... vecai, § 481.
jinabimba karaṁḍikā upāḍi karī pāṁca parameṭṭi samaranā karatau, § 483
devagṛha karāvai, § 483.
biji vāta jāṇai nahiṁ, § 483.
jima nidāgha samai jalāsaya susai tima yadākāli sāmānyajana dānadharmma khisaiṁ, tadīkāli pravara nī dānadharmma ghaneraum ullasaiṁ, § 516
meha varasāviyā, § 517.

Inst :—

sarva samṛddhi sahitu, § 73.
jñāna vijñāna hīnatā karī, § 94.
māya bāpa sahiti Gāgali Gautama kanhai dīksā līdhī, § 108.
tapolabdhi karī, § 109.
tāpasa sahitu, § 109.
āṁtra bhūkha karī dādhī chaiṁ, § 112.
isauṁ bhāryā sauṁ ālocī, § 482.
sa rājaputrikā rūpaśobhā karī, § 488.

Bhīma sarasau Siṁhu calāvai, § 488
jibha karī pāpu bāṁdhai, § 52?.
sāra parivāra sahitu, § 528
Loc :—
jana māhi, § 109
isauṁ mana māhi citavatau, § 25
māharai pāḍi mahiṁ, § 526
rāti rāti su coru, § 526.
bi putra lesāla paḍhaiṁ, § 432.
Gen :—
saṁdhyā samai devagṛha bahiri, § 110.
mahimā mahātmā taṇau chai, § 112.
dhana taṇauṁ adānu, § 481.
jāgiu huṁtau bhārya āgai, § 482.
saûdha upari āvatau, § 483.
mū rahaiṁ rājya māhi kāryu § 48·
jina dharma nai ekātapatri. § 483.
parigraha parimāṇakaraṇa viṣai, § 48·.

Declension

4·18. Direct :

sg. a-stems :
bare stems e g. dhana, saṁjama, putra, āṁtra, locana, bhūkha, hātha, paga
-u ending. e. g. nimittu, viveku, dānu, āju, kālu, bilu, rājyu.
-au enlarged stems. e g. māulau, melāvau, varasālau, vācharau vāṇiyau, pāraṇauṁ n., visāhaṇauṁ n.

(i) For -a/-u variation in a-stems see 3·5.
(ii) Other vowel stems i. e. ā, i, ī, u and ū have no special terminations.
(iii) In enlarged -au endings neuter is marked by nasalisation.
(iv) Dave (GL) dose not record any case of -u ending in unenlarged a-stems (GL p. 7,34). It is also absent in Ḍiṅgaḷ (NPS p. 146).

pl. unenlarged. Bare stem is used e. g. āhira, oḍa, ūtara, kapāṭa, kāpaḍa khānaka, varasa, bhāṇeja, pahara.
enlarged stems. e. g. ūbhā, kusā, kūḍā.

(i) Other vowel stems have no special plural terminations.
(ii) Once we get balākā-iṁ which is an archaism ; only enlarged a-stems have a distinct pl. form [which is the same as the oblique termination.]
(iii) Of the Ap texts, SR (§ 51) gives -aha for nom. pl., which is not found in other Ap texts. BK (§ 26, Gune and Dalal) gives some instances of -ī ending of m. pl. which occur "in passages of mixed language and changed metre".
(iv) Ḍiṅgaḷ (NPS p. 146) has ā̃ for both—enlarged and unenlarged—stems.

4·19. Oblique.

sg. unenlarged a-stems : The bare stem is used. e. g. 4·17.
enlarged a-stems : -ā. e. g. bhāḷā, lahuḍā, vaḍā, kusā, sagalā, hiyā, gāḷā, galā, aṁkaṭā.

pl. unenlarged a-stems :
(1) The bare stem is used. e. g. 4 17.
(2) -haṁ. e. g. khanakahaṁ, janahaṁ, netrahaṁ, pāyakahaṁ, supātrahaṁ, tāpasahaṁ, āhirahaṁ, varttamānahaṁ.
enlarged a-stems : -āṁ. e g. kauḍāṁ

(i) In the case of other vowel stems, the bare stem is used in sg. and pl.
(ii) In the oblique, the sense is conveyed by the postpositions.
(iii) Dingaḷ (NPS p. 147) gives -ha for oblique sg.

4.20. Instrumental.

sg. a-stems : (1) The bare stem, followed by postposition is used. e. g. 4 17.
(2) -i, -iṁ . (a) followed by postposition : e. g. tapi kari, nāmi kari, abhāvi kari.
(b) not followed by postpositions. e. g. kāraṇi, mohi, nāmi, abhinavi, jinadatti.
(c) other vowel stems . e. g. khaḍgaghāi, pattimātrāi, śreṣṭiiṁ, mauläi (enlarged a-stem).
(3) -e. (a) a-stem. e. g. gure, kalase, sūpakāre, ācārye, pulimde.
(b) other vowel stems. e, g. mākhie.

pl. (1) -e. e. g. paumtāre, bhile, tehe, bāre, varase, upavāse, khanake, śrāvake.
(2) -haṁ. (a) followed by postposition. e. g.
dākṣinyādikahaṁ guṇahaṁ karī, § 425.
nāmahaṁ karī, § 426.
komāsahaṁ karī, § 85.
jamgamanidhāna jinapradhānahaṁ prāsukeṣaṇiyahaṁ pānānnahaṁ karī, § 85.
vikārādikahaṁ lakṣaṇahaṁ karī, § 554.
pagahaṁ karī, § 545.
(b) not followed by postposition. e. g.
pāṭhakaśiṣyahaṁ tathā sūtrārthavāṁchakahaṁ, § 94.
milita subhaṭahaṁ vana māhi, § 446.
teha taṇāṁ bāṁdhavahaṁ bhillahaṁ māriu, § 448.
putrahaṁ puchatāiṁ kusī, § 386.
isauṁ bhaṇatāṁ bhaṭṭahaṁ parivṛtu ghara [illegible]
rājamaṁdira ūpari cāliu jetalai, tetalai daiva [illegible]
ekahaṁ subhaṭahaṁ nikṣiptāsidaṁḍaha [illegible]

(i) All stems are treated alike, i. e. normalised to a-stem [illegible]
(ii) -e in sg. and pl. is rarer than -i and -haṁ respectively.
(iii) As the illustrations given above indicate, inst. pl. [illegible] or not followed by a postposition irrespective [illegible] function (see however, Tessitori § 60). This [illegible]
(iv) haṁ as an oblique termination is followed [illegible] here I am inclined to consider it as term[illegible] of its frequent use with the inst., and [illegible] help of any postposition. Moreover, [illegible] p. 146) which appears to be a deve[illegible]
(v) Dingal has -i or -ii for inst. sg [illegible]

4.21. Locative.

sg. (1) The bare stem is used. e. g. 4.17
(2) a : -i, unenlarged a-stem e. g. eki, mukhi, gachhi.
b : enlarged a-stem e. g. varasālai, vāhalai, māthai, keḍai, pāraṇai, pahilai
(3) -e. e. g. ghare, loke, pākhe.
(4) -ihiṁ. e. g. pūrvihiṁ kadākālihiṁ, tinihiṁ.

pl. (1) The bare stem is used. e. g. 4.17.
(2) -e. e. g. pāe.

(i) As in the inst. termination, here also the tendency is to normalise the paradigm to a-stem.

(ii) Though -ihiṁ is included above as a loc. sg. termination, I am inclined to consider it as an emphatic particle, owing to its function (see 4.33).

(iii) Ḍingal (NPS p. 148) has -i and -e (-e especially in pl.) for locative terminations.--ihiṁ is absent in Ḍingaḷ.

4.22. Vocative.

The following are the instances from the text: -

sg. rāṁkau, gujjhagā, koliyā.
pl. vacchau.

(i) The two instances of sg., cited above-gujjhagā and koliyā-are lw. from Pk.

Pronouns

4.23 Personal Pronouns First Person. .—

	sg.	pl.
nom.	haum, hum,	amhe.
obl.	mūm, mū,	amha.
inst.	maim, mai,	— .

The genetive is an adjective agreeing with the noun in gender and case, and it is declined as follows.—

gen.	māharaum,	amhāraum.
obl	māharā,	amhārā.
inst. loc.	māharai,	amhārai.

(i) Ap. haum is found in our text together with the younger form hūm, which also occurs with a short -u-, which is due to its frequent use as a pronominal form.

(ii) Ḍingal (NPS p. 153) has only hūm (attested in Western Hindi).

4.24 Second person :—

	sg.	pl.
nom	taum, tum, tūm,	tumhe
obl	tū,	tumha
inst.	taim,	—

The paradigm of the genetive, like that of the first person, is as follow :—

gen	tāharau,	tumhārau, tamhārau
obl	tāharā,	tumhārā
inst loc.	tāharai,	tumhārai

(i) In stray v. l. in inst loc. we get thiharii, and in obl. thāharā (attested in Marwari).

(ii) Dingal (NPS p. 158) has tumhā̃ sū̃ (< *tumhahā̃ saum̐) for inst. sg.

4·25 Third person —

nom	sa, su, te,	ti, te, si.
obl	tiha, teha.	timha, timhā/-hām.
inst loc	tini,	tehe.

(i) The third person is also used as the remote demonstrative pronoun and as a correlative.

(ii) The third person has lost the distinction of gender: sa is used both for f. and m. Dingal (NPS p. 159) has si for f.

(iii) ti and te are generally used for pl. but sometimes for sg. also. ti is usually followed by a qualifying adverb savva or saghali. te is rarely used.

(iv) tihī is sometimes used as oblique, which is tiha-ī emphatic.

4·26. Demonstrative Pronoun e —

	sg.	pl.
nom	e, eha,	e, eha.
obl.	imham, eha,	imham, eha.
inst loc	ini, ihī,	ehe.

(i) iu is used to indicate proximity; once iya is used.

(ii) Once imha-ku is used, where ku may be due to midland influence (mss. are reluctant to accept this reading, see index).

(iii) ihī is used for loc. sg.

(iv) nom. pl. (honorific) is ā in Dingal (NPS p. 158). ehe is not found in Dingal.

4·27 Relative pronoun ju —

nom.	ju, ji, je.	ji.
obl.	jeha.	jeha.
inst/loc	jini,	jehe

(i) ji and je are sometimes used for nom. sg., usually ju is used.

(ii) In pl. ji is sometimes followed by a qualifying adverb or pl. of the indef. pro. ke.

4·28. Interrogative and Indefinite Pronouns

Inter. pro. :—

nom.	kauṇu, kauna.	
obl.	kuṇa.	
inst.	kauṇi.	

Indef. pro. :—

nom.	ko, kā f.	ke.
obl.	kahī.	
inst.	kiṇi.	

(i) kuṇahī is used as inter. obl., koī as indef. nom., and kiṇihim as indef. inst. where -hī, -ī, and -him respectively convey an emphatic sense.

(ii) Inter. and indef. have no special pl. forms, except kī ke in indef. nom. pl., which is an archaic form.

(iii) There is no distinction of gender, except kā in indef. nom. sg., which is, again, an archaism

(iv) Dave (GL p. 34) mentions distinct forms for n

(v) obl. pl of indef is generally followed by eka.

4·29. Reflexive Pronoun āpanau, āpanı paum It is declined as a noun.

4·30. Compound Pronouns. ji ke, koi eka, ketalā eka

4·31. Pronominal forms The following are the pronominal adjectives formed from the pronouns :

showing manner : isau/isaum, kisau kisaum,
jisau, tisau

showing quantity : jetalaum, tetalaum.
etalaum, ketalu.

These are declined as nouns, and the latter, showing quantity, are followed by eka to indicate indefinite sense.

The following are the stereotyped pronominal forms, used adverbially :

showing place : jihām, tihām, jahim, kahim, ihām, kihām (sometimes kahām).

showing time : jetlvāra, tetlvāra,

showing condition : jām, tām.

showing manner : ima, kima; jima, tima.

4·32. Postpositions. The following postpositions are used in the text :

-tau -itau, vaśāitau, kanhā, karī, vaḍai, taṇau, nau, thikau/thakau, māhi, saum, rahaim.

(i) taṇau, nau and thikau are declinables.

(ii) -itau occurs alone or as vaśaitau.

4·33. Emphatic Particles.

i/ī . to ī āviyām, § 94.
te i, § 142.
sagalā i karau, § 433.
pāche ī bhāvisiim, § 433.

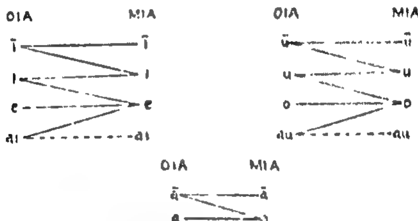
coupled with ji : parimita i ji, § 74
havaḍā i ji āvisii, § 142.
tihām i ji, § 427, 448.

ji : anarthadāyaka ji iya rājyarddhi, § 74

him : sava him jiva rahaim, dir. pl. § 38.
pāmca him rahaim, dir. pl. § 108.
śresti him taṇaum, dir. pl. § 386,
putra him kanhā, dir. sg. § 446.
kiṇi him, inst. sg. § 73, 94, 112.
bhāvi him ji, inst. sg. § 430.
kiṇi him marai, inst. sg. § 446.
lābhi him atṛptu, inst. sg. § 447.
tini him ji citraki, inst. sg. § 448
teti him ji vāra, loc. sg. § 86.
pūrvi him, loc. sg. § 428.

turn, been followed by [illegible] with more reliable [illegible] Language [illegible] about changes in the consonants [illegible] few, and they do not play [illegible] changes in the grammatical system. Where the changes in consonant and [illegible] statements about consonant changes have been made

5·47 Transition from OIA to MIA [illegible] Pischel, Bloch, Chatterji and others. The [illegible] changes are merging of OIA [illegible] to MIA a, i or u [illegible] reduction of OIA [illegible] to MIA e and o [illegible] shortening of vowels under certain conditions. These changes [illegible] can be presented as follows



Dotted line indicates a later MIA stage.

There are some cases where OIA i and u in closed syllables > MIA e and o in closed syllables. They merge with the e and o phonemes of MIA. These e and o have been regarded as short, but since vowel quantity is conditioned by syllable structure, no contrast between short and long e and o is visible anywhere. Hence it is not necessary to set up long ē and ō as separate phonemes

5·48. Apparently, the changes from OIA to MIA are very few. Some long vowels have become short vowels, diphthongs have become monophthongs and some i and u of OIA have merged with e and o of MIA. But, the distribution of vowels in MIA is significantly different from OIA. Vowel length in OIA is distinctive, while in MIA it depends largely on syllable structure. Vowels in closed syllables are always short. Final vowels are mainly short. Thus we get a system where quantity of vowels is mainly conditioned by the syllable structure, while in OIA the quantity of vowels is contrastive irrespective of the nature of the syllable. A simple stop consonant did not occur intervocalically in MIA; it could occur only as a homorganic geminate. Thus, in non-final position the contrast of length is reduced to cases of vowels occuring before m n, s l, ḍ r, y and v.[1]

[1] It is possible to interpret length of the stop consonants [illegible] allophonic in MIA, i.e. initially they occur as single and intervocalically they occur geminated. For the suggestion see N. S. Troubetzkoy, Principes des Phonologie (French Translation 1949), Pp 305. If this suggestion is followed then the consonant length would be phonemic only in cases of those nasals and spirants which can occur single or geminated intervocalically: m, n, s, l and v, r and y do not occur geminated, n and ṇ do not contrast, since the former occurs initially and latter intervocalically, but nn and ṇṇ both occur intervocalically and hence contrast. Length will be significant in the case of the retroflex voiced stop ḍ, since it occurs initially as single but intervocalically it can occur single and geminated

(Continued on page 25)

Loss of intervocalic stops in classical Prakrit creates new vowel sequences, many of which are contracted to unit vowels in the New Indo Aryan languages. This change plays a significant role in the development of the NIA languages. This also makes possible, for the MIA dialects, to borrow words from Sanskrit with the diphthongs ai and au, *for which the grammarians have made a separate class (viz. daityādi gaṇa) of words* which retain OIA diphthongs. Skt. diphthongs ai and au which became monophthongs in Pkt., as e and o, are retained in Modern Guj., while those which were borrowed later, and *those which were formed in Pkt. by loss of intervening consonants develop to ɛ and ɔ in* certain positions in modern Gujarati.

5·49. In the later MIA (mainly Apabhraṁsa) the dependence of vowel quantity on the syllable and the word becomes more manifest. All word-final long vowels are shortened, and final -e and -o change to -i and -u respectively.

In some of the early documents of MIA also, this tendency is manifest though it is worked out fully in later MIA. Shortening of some final vowels is already noticeable in Asokan Inscriptions and Pali (e. g. -ā > -a, -ī > -i). In Dutreuil de Rhins documents there are instances of final -e of loc. sg. > -i, and -o of nom. sg. > -u.[2] Moreover, the *distinction of active and middle in Sanskrit is mainly dependent on distinction between -e* and -i, i.e. act. 3rd sg. -ati, 3rd pl. -anti; mid 3rd sg. -ate, 3rd pl. -ante; only the active survives in MIA which may suggest an earlier merger of -e with -i.

5·50. Development of final vowels with nasalisation is the same as that of simple vowels, i. e. they lose their nasalisation and are shortened. There is one exception. In the case of final -aṁ (ṁ = the anusvāra) there are two developments, either the nasal is lost or -aṁ develops to -u, the second being more predominent in late MIA. This isogloss divides Midland languages from the Western languages. Gujarati falls within the Western group, (i. e. -am > -u in old Gujarati.)

5·51. *In OIA, the quantity of vowel is distinctive in all positions.* Moreover, the morphophonemic alternations of guṇavṛddhi present a significant relationship between i : e : ai, u : o : au and a : ā, these relationships are lost in MIA (just as the change of IIr. *ai and *au to OIA e and o, IIr. *āi and *āu to OIA ai and au considerably blurred the morphophonemic relationships between the vowels in OIA).

MIA vowel system consisting of a set of short vowels and a set of long vowels[3]

$$\left.\begin{matrix} i & u, & \bar{i} & \bar{u} \\ & a & & \bar{a} \\ & & e & o \end{matrix}\right]$$

, therefore, is a significantly different vowel system, where the quantity of the vowel is mainly dependent on the structure of the syllable and the word.

5·52. The oldest Gujarati documents (i.e. dated mss. of 13th-14th century) *presuppose certain developments after the MIA vowel system described above. To explain these changes we have to assume a stage, in which the vowel clusters of MIA*

(Continued from page 21)

If MIA consonant system is reinterpreted by the reconstruction of NIA languages, it may be possible to refine the above interpretation. Then, possibly, intervocalic [ḷ], [ḍ] may be assigned to different phonemes /ḷ/, /ṛ/, while intervocalic geminates [ḷḷ], [ḍḍ] may be considered allophones of /ḷ/ and /ḍ/. Initial [n] and intervocalic [nn] and [ṇṇ] may be assigned to the same phoneme /n/. Similar reinterpretation may be possible about m and n also, so that intervocalic -m-, -ṇ-, -ḍ-, -l- and -v- would be assigned respectively to /ṽ/, /n/, /ṛ/, /ḷ/, /h/ while initial m, n, ḍ, l and v, or intervocalic geminates mm, ṇṇ, ḍḍ, ll and vv would be assigned to /m/, /n/, /ḍ/, /l/ and /v/. This interpretation is only very tentative and could only be profitably discussed if various stages of the split of Indo-Aryan dialects are specified.

2. Jules Bloch "L'Indo-Aryen du Veda aux temps modernes" pp. 41 (1934).

3. For assigning MIA e o to the set of long vowels see Ghatage A. M. "Phonetics and Phonemics in Linguistics" Indian Linguistics, Turner Jubilee Vol. pp. 1?? (195?).

(result of loss of intervocalic stops) have (i) contracted and (ii) resulted as diphthongs. These changes are conditioned by the position of vowels in the word. Thus some vowel clusters which contract to a single long vowel in final position do not contract in the non-final position. The general direction of change can be summarized as follows :

(A) Sequences of the type ai, ãi and au, ãu remain uncontracted in all positions, final as well as non-final.

(B) In the final position, the following sequences contract to a long vowel :

ĭa, ĭu, ĭi > — ī
ea, eu, [illegible] > — e
ŭa, ŭu, > — ū
oa, ou, oi > — o
ãa, > — ã

Final vowels - ī, - ū and - ã are shortened in MIA. Though in a few of the OG words MIA - ã is retained, we have assumed that the change has worked out in late MIA, and so all final - ã, - iã are interpreted as final - a, - ia.

In these sequences the final vowel behaves as a length allophone and the sequence results in a long vowel.

In the non-final position some of the above sequences do not contract to a long vowel but remain as sequences. They are iã, uã, oi, ie.

§ 53. A few examples of each type are given below :

(A) Uncontracted ai, ãi and au, ãu in final and non-final positions :

(i) ai > - ai : 3rd pers. sg. of the present indicative such as karai ' acts ', jāṇai ' knows ';
loc. sg. of extended nouns such as (Sk. mastake) matthae > māthai ' on the head '.

(ii) - aĩ > - aĩ : 3rd pers pl. of the present indicative such as karaĩ ' (they) act ', jāṇaĩ ' (they) know '.
Development of 2nd pers. sg. of the imperative is not regular : karahi kari ' (you) act '.

(iii) - ai - > - ai - : paisai ' enters ', *maillaũ > mailaũ ' dirty '.

(iv) - āi > - āi : 3rd pers sg. of the present indicative of - ā stems such as khāi ' eats ', jāi ' goes '.
3rd pers sg. of the passive base : bharāi ' is filled ' jaṇāi ' is known '.

(v) - āĩ > - āĩ 3rd pers. pl. of the - ā stems, khāĩ, jāĩ. The treatment of - āĩ > - ā̃ in the nom and acc. pl. of neuter nouns gharāṇi > gharāĩ > gharā̃ ' houses ' is different, either due to a different sequence - āĩ, or due to a dialect difference. This pl. is preserved in the dialects of Northern Gujarat.[4]

4 [illegible] in some terminational elements. Thus, -ṃ- and -m > -[illegible] MIA [illegible] > late MIA [illegible]
MIA [illegible] > late MIA [illegible] > (O) [illegible]
MIA present [illegible] 1st pers [illegible] and pl [illegible] > late MIA [illegible] > (O) [illegible] (dialectal) [illegible]

(Continued on page [illegible])

In one case, however, - ia - > - ı - These are the occurrences of the past participles in OG. In OG, past participles of the type - iu m. and - iũ n. are common, they have developed from the late MIA - iau and - iaũ.

Historically, there is no explanation for - iau, - iaũ; it can only be explained as Sk. - itah m., - itam n., Pk. - ia m. and - iu n. further extended in late MIA period with - u and - ũ to conform to the ending of m. and n. nouns, with which these participles agree in gender, number and case. Proto-Gujarati participles - iau and - iaũ are, therefore, analogically formed.

- ĭi > ī : (Sk. kānicit, Pa. kānici) kāĩ ' some ',
(Sk. aśīti) asī ' eighty '.

- ĭī - > - ī - : (Sk. vicinoti)* viiṇai > vīṇai > ' gathers '.
(Sk. dvitīyakah) biījau > bījau ' second '.

(ii) ea, eu, ei > - e

- ea > - e : (* du - veda -) duvea > duve ' one who belongs to the group of the two vedas, a surname '.
(Sk. esā, Pk. esā) ea > e. ' that - f. '

- ea - > - e - : (Sk. vedanā) veaṇa > veṇa ' pain '.
(Sk. devara -) * dearu > * deru.

- eu > - e : Loc. pl. of nouns, such as (Sk. deveṣu, Pk. devehu) deveu > deve. (Sk. bhāreya -) bhāreu > bhāre ' heavy '. (Sk. dve khalu, Pk. be kkhu, behu) beu > be ' two '. (Sk. meghah, Pk. meho) meu > me ' rain '.

- ei > - e : (Sk. * devebhiḥ, Pk. devehi)
* devei > deve; inst. pl. suffix is - e.

(iii) -ŭa > -ū : (Sk. yūkā, Pk. juā) jūa > jū ' louse ',
(Sk. kaṭuka-) kaḍua > kaḍū.

-ŭa- > -ū- : (Sk. śukaḥ-) suaḍau > sūḍau ' parrot '.
(Sk. rūpam-) rūaḍaũ > rūḍaũ ' proper '.

ŭu - > -ū- : (Sk. udumbaraḥ) uumbara- > ũbara-' Ficus glomerata '

(iv) -oa > -o : (Sk. jalaukā) jaloa > jaḷo ' leech '.

-oa- > -o- : (Sk. stokam-) thoaḍaũ > thoḍaũ ' little '.

-ou > -o : (Sk. anudyogah)* aṇujjou > aṇojo ' day of rest '.

-oi > -o : (Sk. kocit) koi > ko ' some one '.

(v) - ăa > - ā : (Sk. mātā) * māa > mā ' mother '.

- āa - > - ā - : (Sk. bhājanam -) * bhāaṇaũ > *bhāṇaũ ' receptacle '.

- āā - > ā - : (Sk. bhāṇḍāgāra -) *bhaṇḍāāra - > bhaṇḍāra ' store '.

Non-final groups of the type - iā - and - uī - are not contracted in OG : hathiāru ' weapon ', suārī ' having caused to sleep '. Similarly - oi - is not contracted : joisī ' astrologer '. Groups such as - ie - which are permissible only non-finally, remain uncontracted in OG, naḷiera ' coconut '. Of these, - oi - is contracted to - u - in the later period, while others remain uncontracted till present-day Gujarati.

(Sk. vilagyate) viḷaggai > *vilagai (NG valge) intrans. ' attaches '.

(Sk. vinaśyate) vinassai > *viṇasai (NG vaṇse) intrans ' corrupts '.
taḍapphaḍai > taḍaphaḍai (NG taḍaphḍe)
intrans. ' trembles (in agony) '

The expected ā- in the second syllable has been replaced by -a-, on the model of other intransitives.

(E) Vowels in closed syllable with nasals show two types of development :

(i) (c) v̆Ncv̄c — — > (c) v̆cv̄c — —

(Sk. manjūsā) manjūsa > majūsa ' box '.
This treatment is similar to B (i) above: here the nasal behaves like any other consonant. Elsewhere, the nasal remains and the vowel remains, both unaltered .

(ii) (c) v̆NCv̄c — — > (c) v̆Ncv̄c — —

(Sk. samstāra-) santhārau > santhārau ' bed

(Sk. samsāraḥ) sansāru > sansāru ' world '. It should be noted that in all the examples of this type the syllabic in the first syllable is - a - .

These alternations may also be due to dialect mixture, since in present Gujarati dialects similar treatment of nasals is noticeable.

In one example, which is of high frequency, the nasal is lost without any lengthening of the preceding vowel; all the present participles :

(Sk. karanta -) karantau > karatau.

This change belongs to an early stage: the isogloss of - nt - > $\frac{\sim t}{\sim d}$

(nasal + unvoiced stop > nasal + voiced stop) separates Assamese, Bengali, Hindi, Gujarati, Oriya, Marathi and Singhalese from Kashmiri, Panjabi, Sindhi and Nepali (see Turner, Nepali Dictionary p xiii). Loss of nasalisation is peculiar to this participial form, but it is also shared by other Indo-Aryan languages of the - t - group.

5·56. The vowel system of this Proto-Gujarati period, though similar [illegible] MIA vowel system, has significantly different distributional features .

i u ī ū
a
e ā [illegible]

Short and long vowels now contrast in all positions; in the final position there are two types of diphthongs ai, āi and au, āu. In non-final positions, other vowel sequences are eu, iu; oi, ui; iā, uā. Words do not end in consonants.

5·57. Some significant grammatical changes resulting from the above phonological changes may be noted here.

5·58. In the nominal declension the m. sg. termination is - u, (apart from the few exceptional cases where the MIA termination was not - o) and the pl. termination is - a. The inst. and loc. terminations fall together as sg. - i and pl. - e. A noun like devu (SK. devaḥ) would thus be declined as :

	sg.	pl.
nom/acc.	devu	deva
inst. loc.	devi	deve

- itavya > MIA -iavva, -ivva > OG -iva; e. g. OG karivaũ (NG karvũ). This is used as infinitive of purpose. The short -i- in the OG potential participle -iva cannot be explained. That it was short in OG is supported by its later development viz. change to -a- in MG and to zero in NG : OG. karivaũ > MG. karavũ > NG karvũ. But -ivva-, iavva- > -īva- is the expected form, while we get -iva in OG. In the Western Hindi Group, Braj bhasha and Kanauji show -ib-; in the Magadhan group, Eastern Magadhan (Bengali, Assamese, Oriya) shows -iba- and Western Magadhan (Maithili, Bhojpuri) shows -ab-. (see Chatterji §. 697). īva ~ iva alternation, therefore, may belong to an early period.

5.62. Language of the Old Gujarati texts (about 12-15 centuries) has passed through this stage of Proto Gujarati. Proto Gujarati is invented to show that Old Gujarati texts can be explained properly if it is assumed that certain changes worked out prior to the changes noticed in the Old Gujarati texts. That prior stage is Proto Gujarati.

5.63. Some instances of this type have been noticed above (see 5.54) :

MIA		Pro. Guj.		OG.
- ii	>	-ī	>	-ī
		-i + ĩ	>	iĩ [8]
		iai	>	īi

A few other significant changes in Old Gujarati warrant the assumption of an intervening stage.

5.64. With the -o > -u as a general m. noun termination, in OG m. and n. -u and -ũ are analogically extended to nouns where it is not a historical development of -o> -u. Thus there are OG nouns such as[9]:

hāthiu (Sk. hastin MIA hastiko > hāthiu, OG hāthī)
vāṇīu (Sk. vāṇijaḥ MIA vāṇijo > vāṇiu, OG vāṇī)
kaḍūu (Sk. kaṭu MIA kaṭuko > kaḍuu, OG kaḍū)
pānīu (Sk. pāniyam MIA pāṇia > pāṇiu, OG pāṇī)

Sk. loanwords in OG are also extended with this -u; e. g. prasiddha -u 'famous'

Thus :

-ĩu	>	-ī		
		-ī + u	>	īu
		-ī + ũ	>	īũ
-ũu	>	-ū		
		-ū + u	>	ūu.
		-ū + ũ	>	ūũ

Thus, final vowel sequences such as īi, -īu, ūu which had contracted to unit vowels -ī and -ū in Proto Gujarati are readmitted in Old Gujarati by analogical extension.

8 This refers to the instrumental ending -ĩ which is sometimes suffixed to nouns already having an instrumental suffix -i. ' + ' indicates analogical extension.

9. Now, these -īu, -īũ become common noun forming suffixes, and they are suffixed to nouns which do not have historical -ī also. (See Dave—A study of the Gujarati Language p. 6. 1935;) e.g. marapīu 'ready to die' patańgīũ 'butterfly', etc. In a later stage, when -au > -o and thus -o becomes a predominant m. sg. termination, this -u is replaced by -o and the m. noun forming suffix is -io (in this subsequent periods, vowel length is not distinctive). In New Gujarati all the neuter nouns ending in -io are results of this analogical change. Sk. iwas, such as Sk. sukhin, sukhī, borrowed in OG as sukhīu, sukhiu develop in the same pattern, i.e. as MG -io : sukhio. Even if the OG graphic form varies about the vowel length, i. e. -īu, -iu, the vowel should be interpreted as long OG short -iu would develop as -yu (see 5.67) in MG.

5·69. Thus, the vowel system of this period is :

		u
		o
■		
	a	
ɛ	ā	ɔ

Some significant features of distribution may be mentioned. The non-final sequence -oi- > -o- : OG joisī > jošī 'fortuneteller'. Some i and u in immediate nasal environment are allophones of long i, u, and are retained, instead of merging with a : dhuṇai>dhune 'is in a trance'. Nasalised [ɛ̃] and [ɔ̃] (khẽcai, phẽkai) of the preceding period were lowered allophones of e' and /o' respectively (lowering being conditioned by nasalisation), now they become allophones of ɛ and ɔ, these ɛ̃ and ɔ̃ can occur in the non-initial syllable.

We have noted above that the e-ɛ and o-ɔ contrast is localised only in the initial syllable and in monosyllabic words. In New Gujarati also, the contrast is localised in the initial syllable, and in monosyllabic words. In final position the contrast is neutralised. phonetically, the range of variation in tongue height covers the regions of e-ɛ and o-ɔ respectively. We have, however, transcribed the finals as -e and -o.

5·70. In the dialects of Western and North-Western Saurashtra, however, ai and au > e and o in all positions, and these dialects have a six vowel system :

i	a	u
e	ā	o.

5·71. Consequential changes in the grammatical system are far reaching. With final -i and -u > -a, contrast between nom. acc. sg. and inst. loc. sg. is lost in the case of unextended nouns, while sg. pl. contrast of inst. and loc. of the extended nouns is lost (In the nom. acc. of the unextended nouns there is no sg. pl. contrast, while there is contrast between nom. acc. sg. and pl. of the extended nouns). All this imbalance results in only two distinctions in the noun declension. dir and obl.; e. g. dir. : deva, ghoḍ... obl. deva, ghoḍā, -e ■ the general inst sg. pl. suffix; -o as the general pl. suffix; both occur after oblique; -e dialectally occurs after the noun stem ghoḍ -e, which is the reflex of ol... instrumental form ghoḍai; -e after oblique i e. ghoḍā-e is analogical. All these chang... are worked out in the New Gujarati period. (See below). Thus, the declensions are :

	sg	pl.
unextended nouns :		
nom. acc.	deva	deva
inst. loc.	deva	deve
extended nouns		
nom. acc.	ghoḍo	ghoḍā
inst. loc.	ghoḍe	ghoḍe

Inst. sg. of unextended noun is not marked; but frequently, by analogical extens... it has also been marked with -e: probably analogical extension may have been from b... the sides : inst. pl. -e and inst. sg. -e of the extended nouns; though it is more likely to... influenced by inst. pl. -e because the contraction of final -ehi > -e is much earlier t... the contraction of final -ai > -e.

Other nouns ending in -ā, -i, or -u also have the same analogically extende... for inst. sg. pl.

In New Gujarati, however, -e of the extended nouns survives only dialectally... the standard - of the mainland -, -e comes after the oblique of the extended nouns: (... all other postpositions).

5·72. The change of -i, -u > -a obliterates the gender-number distinction i... paradigms of the relative and the demonstrative pronouns (already in the earlier pe...

Sk. [illegible] pl. changing through MIA have fallen together in OG. Other Old Gujarati [illegible] pronouns are [illegible] sg., [illegible] sg., [illegible] pl. [illegible] and [illegible] pl.

All these pronouns are re-formed on the analogy of e, and gender number contrast is lost. The three pronouns are, now, e, je and te.

573 Similarly, the numeral bi > be, which is preserved in formations like [illegible] > [illegible], while Middle Gujarati be is the result of contraction of MIA behu, ben (Sk. [illegible]). be > be alternation in New Gujarati may be dialectal.

OG [illegible] (Sk. [illegible]), MIA [illegible] > jo and to in New Gujarati. Differential treatment of [illegible] may have been probably a result of the emphasis on the conditional meaning 'if - then'.

574 With the change of -aï > -e, -aü > -o and -ãũ > -ũ, the inflection of verb in the present indicative changes as follows:

		sg	pl
[illegible]	1st pers.	karũ	karĩ
	2nd pers.	kare	karo
	3rd pers.	kare	kare

The above -e of the 2nd sg. and 3rd sg. pl. is analogically extended to 2nd sg. (and 3rd sg. pl.) of the future and to the 3rd sg. pl. of the passive. The above -o of the 2nd pl. is analogically extended to 2nd pl. of the future and the polite imperative. Thus, the paradigms of the older stage are mainly altered analogically in the present stage:

(The replaced forms are underlined)

		Old Guj sg	Old Guj pl	Middle Guj sg	Middle Guj pl
Fut.	1st pers.	karisu	karisũ	karīś[12]	karaśũ
	2nd pers.	karisu	karisu	karīśe	karaśo
	3rd pers.	karisi	karisĩ	karaśe	karaśe
Passive	3rd pers.	karĩ	karī	—	karīe
Polite Imp.	2nd pers.	—	karīju	—	karajo

The passive karīe replaces active 1st pl. karũ (passive construction aiding the process: e. g. OG amhe (MIA amhehĩ) karĩ 'by us, it is done', MG. amhe karīe 'we do it'.), thus the present indicative paradigm is

	sg	pl
1st pers.	karũ	karīe
2nd pers.	kare	karo
3rd pers.	kare	kare

575 *In some dialects of Gujarati (West and North-West Saurashtra) the old passive, without the analogical influence of -e, is used as 1st pl of present indicative:* karĩ; In some dialects of North-West Gujarat the old active 1st pl -ã̄ (MIA -āmo) is used: karã̄, in some dialects of central Gujarat fut. 1st pl. is karã̄ (which is an evolute of *karaśã̄, with present indicative 1st pers. pl -ã̄ extended to fut. 1st pers. pl.) is used, this indicates that the territory of the older -ã̄ (MIA -āmo) could have been central and northern Gujarat.

11. OG jaü is analogical. Sanskrit yadi and tadā > Late MIA jaï, taï. In OG there is a considerable variation between the pairs jaï-taï and jaü-taü ('jaü' on the analogy of taü), and a few examples of later jo to are also noticeable. But, in OG jaü-taü dominated the rest, and develop to jo-to. For different developments in other NIA languages, see Turner R. L., Nepali Dictionary under jo, to; Turner's derivation: Sk. [illegible], [illegible] or [illegible] cannot be accepted in light of the above evidence from OG.

12 Retention of OG -ī- in open syllable cannot be explained. For some special changes in the terminations of the future, see Turner R. L., 'Future stem in Aśokan' BSOS VI 2, 1931.

Another passive (which is already recorded in OG) with -ā- (probably derived from old causal) becomes more current in Middle and New Gujarati : karāi, ganāi > karāy, ganāy.

5·76. Extended nouns which ended with -au or -iu now end with -o or -io: -au > -o is regular, while -iu > -io is due to the replacement of -o for -u; this is due to -o being generalised as a masculine marker. Thus, chokarau > chokaro; vāṇīu > vaṇio (it has been mentioned before that -iu > -io has become a formative suffix and numerous Gujarati nouns are formed with this suffix).

5·77. The New Gujarati inherits this vowel system. The vowel phonemes are the same, but there is a significant change in the distribution : if the final vowel is other than -a in a word, then the penultimate -a- > zero. if the final vowel is -a, then the final -a > zero. This change bring about considerable change of morphemic shapes. Words can now end in consonants. Thus:

aṭake > aṭke ' stops ', rāta > rāt ' night ',
bhaṭake > bhaṭke ' wanders ', āvata > āvat ' if he came ',
chokaro > chokro ' boy ', calāvata > calāvat ' if caused to work ',
calāvato > calavto ' causing to work, sarasa > saras ' excellent ',
karatā > kartā > ' doing '.
But -a-is retained (if it is pre-penultimate) ·
aṭakīe > aṭakie, bhaṭakīe > bhaṭakie.
baladīu > baḷadio ' bull ', vādalīu > vādalio ' cloudy '.

5·78. The final -iu of the m. past part. > yu, is now replaced by -yo, as -o has already been generalised as a m. marker. Thus cāliu > cālyu > cālyo, āpiu> āpyu > apyo. Now -y- is generalised as a past marker, and is also extended analogically to such verbs as nipjyo ' came forth ' upjyo ' produced ' (while the older forms were ūpanau, nīpanau Sk. utpannaḥ, niṣpannaḥ).

5·79. A new plural suffix -o appears in this period; it is uniformly suffixed to all nouns m. f. n., and also to those nouns which were already inflected as pl. in the previous stage. The Middle Gujarati noun-declension could be outlined as follows :

unextended m. n. nouns, and extended or unextended f. nouns (since they do not show any difference in the declensions) such as the following are marked by the following suffixes :

				sg.	pl.
hātha	m.	' hand '	dir.	—	—
ghara	n.	' house '	inst. loc.	-e	-e
kanyā	f.	' girl ',	obl.	—	
tāḷī	f.	' clap '			

Extended m. n. nouns such as ghoḍo m. ' horse '

	sg.	pl
dir.	ghoḍo	ghoḍā
inst. loc.	ghoḍe	ghoḍe
obl.	ghoḍā	

and māthũ n. ' head

dir.	māthũ	māthā̃
inst. loc.	māthe	māthe
obl.	māthā	

The new pl. -o is suffixed to these sets. All the pl. forms of the above sets could be followed by this pl. suffix, in New Gujarati. m. pl. forms such as ghoḍā-ō, (and also the general feature of all post-positions that they could occur after the obl. form or the pl. form) led to the extension of oblique -ā- to inst. loc. also, and the inst. loc. sg. pl. altered to ghoḍā-e.

It should be noted that the usage of double plural like ghoḍā-ō, māthā̃-o is more literary and has not spread much: pl. -o is a newly spreading innovation and is limited to parts of Northern and Central Gujarat; here also it alternates freely with its absence. Similarly, the extension of oblique -ā- to inst. loc. is also restricted to the above class and region; here also, it alternates freely with its absence.

This new pl. -o is replacing the -ā̃ pl. from Northern Gujarat (originally a n. pl. -āni > -ā̃ but extended to m. pl. also) and -ũ pl. from the dialects of Saurashtra (the source of this pl. is doubtful; it may be an original f. pl., extended later to other genders, cf. Pk. f. nouns ending -ā with pl. inflection would be -āo > āu; but the nasal in New Guj. cannot be explained; -ũ pl. is also shared, along with the dialects of Saurashtra, by Kacchi-Sindhi and Panjabi).

5·80. The entry of pl. -o can be well settled by internal evidence from New Gujarati. In new Gujarati, the alternation of a~zero is morphologically conditioned (This -a- which was penultimate -a- in the earlier stage has now become -a- in the final closed syllable). The alternation is:

-a- > zero if it is followed by a vowel

-a- > -a- if the following vowel is the pl. morpheme -o.

Thus magan 'proper noun', magno 'derogatory form of that proper noun'. magano pl. of magan.

nāṭak 'drama' nāṭki 'dramatic', but nāṭako 'dramas', bāḷak '(male) child', bāḷki 'female child' but bāḷako 'children'.

Moreover, prepenultimate -a- in the earlier stages is retained, thus, in the verb paradigm aṭke, aṭakie the alternation aṭk~aṭak is phonologically systematic. But now, there are pl. forms such as garbi f. sg. garbio (OG *garabau > garabo > garbo m. 'a ceremonial dance'), vāṭki f. sg. vāṭkio (OG *vāṭakau > vāṭako > vāṭko m. 'cup'). In some cases of pl. there is an alternation between -a- ~ zero: chokro m., chokri f. but chokrio ~ chokario; vā̃dro m, vā̃dri f. *but vā̃drio ~ vā̃dario. This alternation suggests* the analogical influence of nouns with -io suffixes which belong to the earlier stage; in these instances of nouns with -io, -a- is regularly retained because it is pre-penultimate: sā̆mal- 'darkish', sā̆malio 'one who is dark i. e. lord Kṛṣṇa', murat 'auspicious hour' muratio 'bridegroom'.

This evidence indicates that the pl -o is introduced after the penultimate -a-> zero has worked out. Moreover, literary evidence also shows the usage of -o pl after 18th century.[13]

---

13. The source of this -o is not clear. It could have been an extension of a late MIA voc pl. -aho, -ao which would develop in Proto Guj. to -au *It is used as a voc. pl. in Old Guj. in the following* sentence: aho herakau! bhujāgarvi garvitū chai bhūpati 'o sples! the king is proud due to the strength of his arms'. In New Guj voc. pl. (though rarely used) is -o; thus -o may have extended to other case suffixes. This extension, then, must take place *after the penultimate -a- > zero* has worked out. (cf. Tessitori L. P. '*Notes on Old Western Rajasthani*' Indian Antiquary §6⁶-67).

5·81. *It may be noticed that the major analogical changes during the last three centuries (during and afte· the Middle Gujarati period) start from the* Central and *Northern* Gujarat, i. *e. mainly* the region between Ahemdabad and Pāṭaṇ, and spread to Saurashtra and Southern Gujarat. NW and Western Saurashtra dialects may have separated earlier (with a six vowel system $\begin{matrix} i & a & u \\ e & \bar{a} & o' \end{matrix}$ and present *indicative 1st* pl. *as* -ĩ); *forms* with pl. -o are still more restricted to the northern mainland. This suggests that modern standard Gujarati is based on the dialect of this region. This is also supported by the political history of Gujarat, that, during the last five hundred years this region has dominated *over the rest of the* Gujarati speaking area.



श्रीतरुणप्रभाचार्यकृत

षडावश्यकबालावबोधवृत्ति

॥ अर्हं श्रीगौतमस्वामिने नमः ॥

सुरासुराधीशमहीशनम्यं प्रणम्य सम्यग् जिनराजवीरम् ।
सुबोधमर्थं दिनकृत्यसत्कं लिखाम्यबुद्धिप्रतिबोधनाय ॥ १ ॥

*

§1) पढमं नाणं तओ दया एवं चिट्ठइ सव्वसंजए ।
अन्नाणी किं काही किं वा नाही छेय-पावयं ॥ [१]

[दशवैकालिक सू० अ. ४ गा. १०]

पहिलउं ज्ञानु 'तउ' पाछइ 'दया', जीव विषइ कृपा । 'एवं' इणि क्रमि । 'चिट्ठइ' किसउ अर्थु ? रहइ, कउण रहइ ? गुणश्रेणि इसउं आपहे जाणिवउं । कउण माहि ? 'सव्वसंजए' सर्व ही संजत माहि[1] । 'संजओ दुविहो–सव्वसंजओ साहू, देससंजओ सावओ ।' सर्वसंजत ही माहि । देससंजत ही माहि । 'अन्नाणी किं काही किं वा नाही छेयपावयं ति' अज्ञानु 'किं करिष्यति' किसउं करिसिइ । 'किं वा ज्ञास्यति' अथवा किसउं जाणिसिइ । 'छेउ' पुण्यु । 'पावयं' पापु इति ।

§2) सु पुणि ज्ञानु योग्य रहइं दीजइ । अयोग्य रहइं न दीजइ । योग्यु सुश्रावकु जेह माहि एकवीस गुण हुयइं ।

धम्मरयणस्स जुग्गो अक्खुद्दो १ रूववं २ पगइसोमो ३ ।
लोगप्पिओ ४ अक्कूरो ५ भीरू ६ असढो ७ सदक्खिन्नू ८ ॥ [२]
लज्जालुओ ९ दयालू १० मज्झत्थो ११ सोमदिट्ठि १२ गुणरागी १३ ।
सक्कहु सपक्खजुत्तो १४ सुदीहदंसी १५ विसेसन्नू १६ ॥ [३]
वुड्ढाणुओ १७ विणीओ १८ कयन्नुओ १९ परहियत्थकारी य २० ।
तह चेव लद्धलक्खो २१, इगवीसगुणो हवइ सड्ढो ॥ [४]

§3) धर्म्मु जु रत्नु समस्त समीहित दानइतउ चिंतामणि धर्म्मरत्नु तेह रहइं योग्यु अधिकारी 'हवइ सड्ढो' इसउं छेहलउं पदु इहां जोडियइ । 'सड्ढु' श्रावकु हुयइ । किसउ ? 'इगवीसगुणो'[1] एकवीसगुणजुक्तु । किसा ति एकवीस गुण ? इत्याह–अन्याइ करी परद्रव्यापहारकु क्षुद्रु इसउ न होइ । किंतु न्यायोपार्जितवित्तसंतोषी सु होइ सु 'अक्खुद्दु' अक्षुद्रु १ । 'रूववं' रूपवंतु । अक्षतपंचेंद्रिउ नीरोगु रूपवान् २ । स्वभाविहिं स्वस्थचित्तु प्रकृतिसौम्यु ३ । सामान्यजनवल्लभु अथवा राजादिलोकसंमतु लोकप्रिउ ४ । परवंचनाबुद्धिरहितु अक्रूरु ५ । भयरहितु अभीरु । किसउ अर्थु–धर्म्मु करतउ धर्म्म मर्म्म विषइ अजाण जि पितृमातृप्रमुख लोक तीहं हूंतउ बीहइ नहीं । यदुक्तं–

---

§1) 1 B. omits. §3) 1 B. एगवीस गुणो ।

होइ समत्थो धम्मं कुणमाणो जो न बीहइ परेसिं ।
मायपियसामिगुरुमाइयाण धम्माणभिन्नाणं ॥ [५]

अथवा संसारदुक्खत्रस्तु, भीरु इसी परि पुणि ६ । मायारहितु अशठु ७ । दाक्षिण्यवंतु 'सद-क्खिन्नु' थोडइसइ आपणपा रहइं छेदकभाविहिं यद्युत परोपकारकरणस्वभावु 'सदक्खिन्नु' ८ । लोक-
5 लोकोत्तर मार्ग विरुद्ध चोरिका परदारगमनादिक पापकार्य तीहं तणा करण नइ विषइ लज्जाजुगु 'लज्जालु' ९ । थावर जंगम जीवरक्षाकारकु दयालु १० । अति प्रबल रागद्वेषरहितु मध्यस्थु ११ । यदुक्तं—

रत्तो दुट्ठो मूढो पुव्विं वुग्गाहिओ य चत्तारि ।
एए धम्माणरिहा अरिहो पुण होइ मज्झत्थो ॥ [६]

दर्शनमात्रिहिं जि सकलजनमनोनयनरंजकु सौम्यदृष्टि १२ । गुण-पक्षपात-कारकु ज्ञान-दर्शन-चारित्र-
10 पात्र-सुगुरुवचनकारकु न पुणि निर्गुण-कुलक्रमायात-गुरु-कदाग्रह-ग्रस्तु जु सु गुणरागी १३ । संतप्रधान कथा कीर्ति जेह रहइं हुयइ सु सत्कथु । अथवा संत शोभन कथा सिद्धांत रहइं अविरुद्ध धर्मदेशना जु करइ सु सत्कथु । समग्राऽन्यगुणजुगुतु हीनजातिकुलु धर्मदेशनायोग्यु न हुयइं इणि कारणि पितृमातृलक्षणो-भय वंशविशुद्धु 'सुपक्खु' ईंही जि माहि गणिउ १४ । कार्यारंभि भविष्यत्काल प्रलोकनशीलु, न पुणि अविमर्शितकारी जु सु सुदीहदंशी १५ ।

15 यदुक्तं—

सुगुणमपगुणं वा कुर्वता कार्यजातं परिणतिरवधार्या यत्नतः पंडितेन ।
अतिरभसकृतानां कर्मणामाविपत्तेर्भवति हृदयदाही शल्यतुल्यो विपाकः ॥ [७]

§4) गुणागुणविभागदक्षु 'विसेसन्नु'[1] १६ । धर्मज्ञ वृद्धलोकमति उपजीवकु वृद्धानुगु १७ । उक्तं च—

यदि सत्संगरतो भविष्यसि भविष्यसि । उतासज्जनगोष्ठीषु पतिष्यसि पतिष्यसि ॥ [८]

20 पितृमातृगुरुप्रमुख पूज्यजन विषइ अभ्युत्थानासनदानादि विनयकारकु 'विणीउ' १८ । जिणि कारिणि विणयमूलु जु जिणसासणु । यथा—

विणओ सासणे मूलं विणीओ संजओ भवे ।
विणयाउ विप्पमुक्कस्स कओ धम्मो कओ तवो ॥ [९]
विणओ आवहइ सिरिं लहइ विणीओ जसं च कित्तिं च ।
न कयावि दुव्विणीओ सकज्जसिद्धिं समाणेइ ॥ [१०]
मूलं धर्मद्रुमस्य द्युपतिनरपतिश्रीलताकल्पकंदः
सौन्दर्याह्वानविद्या निखिलसुखनिधेर्वश्यतायोगचूर्णम् ।
सिद्धाज्ञामस्तत्वाधिगममणिमहारोहणाद्रिः समस्ता-
नर्थप्रत्यर्थितत्वं त्रिजगति विनयः किं न किं साधु धत्ते ॥ [११]

30 इत्यादिकु केतलउं एकु विनय तणउं फलु लिखियइ । अन्यकृतोपकार अविस्मारकु न पुणु कृतघ्नु जु सु कृतज्ञु १९ । आत्मव्यतिरिक्तजन रहइं अभीष्टार्थसंपादकु अथवा राजचौरादि भयरक्षकु, अथवा धर्मोपदेश दानि करी संसारसागर समुत्तारकु 'परहियत्थकारी' २० । राजादिसभा माहि सकल दर्शन विचारदक्षु 'लद्धलक्खु'[2] २१ । इति एकविंशति गुण विवरणु संक्षेपिहिं जाणिवउं । विस्तरइतउ कथापुस्तक-इतउ जाणिवउं ।[3]

§3) 2 note the short-u in सदक्खिन्नु । In the second line Bh. has a long ū.
§4) 1 Bh. विसेसन्नू । 2 Bh. omits. 3 Bh. omits.

§5) अथ प्रस्तुत कहियइ छु कहियइ ।

> साहूण सत्त वारा होइ अहोरत्तमज्झयारंमि ।
> गिहिणो पुण चिइवंदणु तिय पंच व सत्त वा वारा ॥ [१२]

इसा परमानंद यथ सात वार साधु अहोरात्र माहि सात चैत्यवंदना करइ, गृही पुणि त्रिन्हि अथवा पंच अथवा सात चैत्यवंदना करइ यथाशक्ति । अत्र प्रस्तावागत पहिलउं पुणत्रिक[1] विचारु लिखियइ ।

> तिन्नि निसीही १ तिन्नि पयाहिणा २ तिन्नि चेव य पणामाई ३ ।
> तिविहा पूया ४ य तहा अवत्थ तिय भावणं ५ चेव ॥ [१३]
> तिदिसि निरिक्खणविरइ ६ तिविहं भूमिपमज्जणं चेव ७ ।
> वन्नाइ तियं ८ मुद्दा तियं ९ च तिविहं च पणिहाणं १० ॥ [१४]
> इय दहतियसंजुत्तं वंदणयं जो जिणाण तिसंझं ।
> कुणइ नरो उवउत्तो सो पावइ सासयं ठाणं ॥ [१५]

जिनभवनादि प्रवेशि, आदि पहिलउ चैत्यशाला प्रवेशि, मन-वचन-कायकृत सावद्यव्यापार निषेध विषइ[2] त्रिन्हि निसीही कीजइं । मन-वचन-कायमादि जिनु छइ तिणि कारणि त्रिन्हि प्रदक्षिणा दीजइं यदु छु अर्थु भणिउ ।—

> जिणभवणाइपवेसे निसेहविसया निसीहिया तिन्नि ।
> मण-वय-तणूण संमं जिणु त्ति ति पयक्खिणा तेण ॥ [१६]

मन-वचन-कायभेदि करी त्रिन्हि प्रणाम जिनबिंबदर्शनि मस्तकि हाथ चडावी करी जय जय जयेति भणतां कीजइं पुष्पपूजा नैवेद्यपूजा स्तुतिपूजेति त्रिविधा पूजा । पुष्पपूजा सर्वसुरभिद्रव्यपूजा तणइं उपलक्षण । नैवेद्यपूजा सर्व खाद्यद्रव्यपूजोपलक्षण । स्तुतिपूजा सर्व भावपूजा तणइं उपलक्षण । तदुक्तं—

> तिण्णामकरणमेयं तु मण-वयण-कायभेएणं ।
> पुप्फामिसथुइभेया तिविहा पूया इमा होइ ॥ [१७]

§6) छद्मस्थावस्था, समवसरणावस्था, मोक्षावस्था इसी त्रिन्हि अवस्था । यथ—

> लोष्टे लोष्टे वा सारे सुरभिसुमनसां संस्तरे प्रस्तरे वा
> स्वर्णे पर्णे च जीर्णे गुरुचितु पशुषु स्त्रीषु शत्रौषु वा पि ।
> अन्यौ धन्यौ च साम्यप्रगुणहृदयतो योगयोगात्मपूर्णे-
> रर्हन्नर्हन्नमग्नो इति हृदि मनुनो मे यदा यान्त्यहानि ॥ [१८]

'लोष्टे' स्तुतिप्रारंभ मणकननिमित्तु[1] । 'सारे लोष्टे' सारसंयुक्त लोष्टु पिराणउ तेह विषइ । 'साम्यप्रगुणहृदयतो' इसउं पदु सगळी परइं सरसउं जोडियइ । साम्यु[2] रागद्वेषपरिहीनता । तिणि करी प्रगुण सहित जेह तणां मननयन हूयइं तु साम्यप्रगुणहृदयतः कहियइ तिसा हूंता । तथा 'सुरभि-सुमनसां प्रस्तरे प्रस्तरे वं' ति । सुरभि कुसुमशय्या विषइ । अथवा प्रस्तरे खरशिला कठिन पाषाण-शय्या विषइ । तथा 'स्वर्णे' सुवर्णराशि विषइ । 'पर्णे च जीर्णे' पुरातन पर्णसमूह विषइ । तथा 'गुरुचितु पशुषु स्त्रीषु शत्रीषु वा पि ।' चंपककलिकादीसदेहकांति बहु मगल छइं स्त्री तीहं नइ विषइ । हासी नवोपेक्षित दुःखी तीहं नइ विषइ । तथा 'अन्यौ' पूज नइ विषइ । 'धन्यौ' अभीष्टजन विषइ । 'साम्यप्रगुण-

§5) 1 Bh. omits. 2 B. विषय । §6) 1. Bh. लोष्टु भणियइ पाषाणखण्डु । 2. Bh. समता ।

हृदयदर्शो' समचित्तलोचन तू रहइं । 'अर्हन्' इसउं भूलिगउं जिनेन्द्र पदु । तेह गमइं योगोगतु हे अर्हन् अर्हन् । 'योगधौतात्ममूर्तेः' योगु भणियइं समाधि तिणि करी धौत पवित्रीकृत आत्ममूर्ति जेह तणी हुयइ सु योगधौतात्ममूर्त्ति, तेह तू रहइं नमस्कारु हुयउ । इसउं 'इति' तिसा माहि 'भवतो' भवता हूंता 'कदा' केतीवार मू रहइं दिन आइं । इसी चिंता सम्यग्दृष्टिनी चिंता[3] कहियइ ।

5 §7) तथा–

सर्वज्ञः सर्वदर्शी समवसृतिगतः प्रातिहार्यैरहार्यै
रोचिष्णु, श्रीभविष्णुर्भुवनजननमोहर्तुमत्युत्सहिष्णुः ।
वर्धिष्णुर्द्वादशानामुपरि परिषदां तत्त्वसिद्धौ प्रमाणं
स्याद्वादं सप्तभङ्ग्याऽभिदधदिह मुदे मेऽस्तु देवाधिदेवः ॥ [१९]

10 सर्वज्ञु सूक्ष्मु जीवपुद्गलनिगोदादिकु वस्तु कालत्रयवर्तितु देशान्तरवर्तितु विशेषरूपि करी जाणइ इणि कारणि सर्वज्ञु । सर्वदर्शी समस्तु पूर्वभणितु वस्तु सामान्यरूपि करी देखइ इति सर्वदर्शी । सामान्य-विशेषात्मक वस्तु विषइ विशेषात्मकु बोधु ज्ञानु । सामान्य-विशेषात्मक वस्तु विषइ सामान्यात्मकु बोधु दर्शनु । इसा ज्ञान दर्शन व्याख्यानइतउ । तथा च भणितं–

संभिन्नं पासंतो लोगमलोगं च सव्वओ सव्वं ।
15 तं नत्थि जं न पासइ भूयं भव्वं भविस्सं च ॥ [२०]

'संभिन्नं' संपूर्णु लोकु चतुर्दशरज्जु प्रमाणु पंचास्तिकायमउ । अलोकु केवलाकाशरूपु अनंतानंतु । 'सव्वओ' सविहुं दिसि । 'सव्वु'[1] मध्यामध्यविभागलक्षणु पासतउ देखतउ । दर्शन रहइं ज्ञानोपलक्षणत्वइतउ जाणतउ हूंतउ सर्वज्ञु सर्वदर्शी । सु नथी भूतु अतीतु, भव्यु वर्तमानु, भविष्यु आगामिकालभाविउं वस्तु, जु न पासइं न जाणइं इति गाथार्थः ।

20 'समवसृतिगतः' समवसरणु रूप्य–सुवर्ण–रत्नमय वलयत्रयरूपु देवविनिर्मितु तिहां गतु वर्तमानु । प्रातिहार्य देवविनिर्म्मित अशोक वृक्षादिक अष्टसंख्य । तथा हि–

अशोकवृक्षः सुरपुष्पवृष्टिर्दिव्यो ध्वनिश्चामरमासनं च ।
भामण्डलं दुन्दुभिरातपत्रं सत्प्रातिहार्याणि जिनेश्वराणाम् ॥ [२१]

सुवर्ण-रत्न-विनिर्म्मितु योजनविस्तारि अनभ्रच्छायु अशोक वृक्षु चैत्यद्रुमापरनामप्रसिद्धु केवलज्ञानो-
25 त्पत्तिसमयानंतरु जिनमस्तकि देव नीपाइं ।

तिन्नेव गाउयाइं चेयरुक्खो[2] जिणस्स पढमस्स ।
सेसाण बारसगुणो वीरे बत्तीसय धणूणि ॥ [२२]

शिष्यु भणइ–'भगवन् ! आवश्यकचूर्णि माहि श्रीवीरशरीरहितउं पुणि बारसगुणु अशोकु भणिउ । यथा–

30 असोकवरपायवं जिणउच्चत्ताओ बारसगुणं सक्को विउव्वइ ।

वीरसमोसरणप्रस्तावि ए चूर्णि । तउ बत्तीस धणुह किम घटइं ?' । गुरु भणइ, केवलउ अशोकु श्रीवीरही रहइं बारस गुणउ धणुह २१ छइ । तेह उपरि बीजउ धणुह ११ साल वृक्षु छइ । बिहुं तणइ प्रमाणि मेलिइ धणुह ३२ हुयइं । प्रवचनसारोद्धारसिद्धांत माहि ए पृच्छा अनइ ऊतरु सविस्तरु छइ ।'

आजानुमान अधोवृंत बहलपरिमल पंचवर्णपारिजातकुसुमवृष्टि समवसरणभूमितलि देव करइं । २ ।

(§6) 3 Bh. omits. §7) 1 Bh. adds सगलु । 2 Bh. चेईय । 3 B. हितउ ।

मालवकैशिकी रागगर्भितु सर्वभाषानुकारी सर्वसंशयापहारी योजनविस्तारी सकलक्लेशापहारी अमृतरसावतारी दिव्यु ध्वनि देशनानादु समाविर्हिं केवलज्ञानोत्पत्तिसमयानंतरु जिनमुखहुंतउ विस्तरउ। तथा च भणितं–

वासोदगस्स व जहा वण्णाई हुंति भायणविसेसा।
सव्वेसिं पि सभासा जिणभासा परिणमइ एवं ॥ [२३]

देवा दैवीं नरा नारीं शबराश्चापि शाबरीम् ।
तिर्यञ्चोऽपि हि तैरश्चीं मेनिरे भगवद्गिरम् ॥ [२४]

रत्नांगतरंग चंग चामर अमर बिहुं गमे वीजइं । ४ ।

सुवर्णरत्नमय सत्पादपीठ चउहुं दिसि चत्तारि सिंहपीठ देव थापइं । ५ ।

केवलज्ञानानंतरसमयइ जिम सूर्यबिंबरश्मि करी जनलोचन रहइं प्रतिघात हुयइ तिम जिनेंद्रतनु-कांति करी पुणि हुयइ तिणि कारणि देहकांति संपिंडित करी सूर्यमंडल परिमंडलु भामंडलु पृष्ठिप्रदेसि देव करइं । ६ ।

आकाशसंस्थित देव देवदुंदुभिनिनादु जिननादपुष्टिकारकु करइं । ७ ।

त्रैलोक्याधिपत्यसंसूचिका श्वेतातपत्रत्रयी जिनमस्तकि देव धरइं । ८ ।

'महातिशयानि जिनेश्वरस्य संति' जिसउ अर्थु त्रिभुवनातिशायियां । प्रातिहार्य पूजाप्रकार जिनेश्वरहं तणा ति पुणि किस्या ? अहार्य अनेरां देवहं हरिया आपिया शक्य नहीं, तीहं करी ।

§8) 'रोचिष्णु श्रीभविष्णु' त्रिभुवनजनकाम्यलक्ष्मीसमिद्धु भवनशीलु । तथा च भणितं–

पडिवन्नचरमतणुणो अइसइ लेसं पि जस्स दट्ठूणं ।
भव-च्छुत्त-मणा जायंति जोगिणो तं जिणं नमह ॥ [२५]

'भुवनजननमो हर्तुमत्युत्सहिष्णु' भुवनजन रहइं तम अज्ञान हरिया कारणि अति उत्साहकरण-शीलु । 'वर्तिष्णुर्द्वादशानामुपरि परिषदां' आग्नेयदिसि गणधरेंद्र, वैमानिकदेवी, साध्वी लक्षण त्रिन्हि सभा । नैऋति दिसि ज्योतिर्-व्यन्तर-भवनपति देवी सभा त्रिन्हि । वायव्य दिसि तीहंना देवहं तणी सभा त्रिन्हि । ईशानदिसि वैमानिक देव, नर नारी सभा त्रिन्हि । इसि परि चउहुं विदिसि जि छइं बारह सभा तीहं माहि सात हाथ ऊंची मणिपीठिका तेह ऊपरि कटीप्रमाण सिंहासनु तिहां समुपवेश-मायइतउ 'उपरिवर्तिष्णु' उपरि वर्तमानु । 'तत्त्वसिद्धै' जीवाजीवादि नवतत्त्व सिद्धिनिमित्तु प्रमाणु स्याद्वादाभिधानु सप्तभंगीप्रमाणमार्गप्रसिद्ध, तिणि करी अभिदधतउ उपदिशतउ हूंतउ, 'शुद्धे'-परमानंदनि-मित्तु, 'मे' मू रहइं 'अस्तु' हुउ । देवाधिदेवप्रस्तावइतउ श्रीमहावीरु । इसी चिंता समवसरणावस्थाचिंता ।

§9) अथ मोक्षावस्था लिखियइ–

संठाण-वन्न-रस-गंध-फास-वेयंग-संग-अणिरहियं ।
[1]इगतीसगुणसमिद्धं सिद्धं बुद्धं जिणं नमिमो ॥ [२६]

दीर्घ, वृत्त, त्रिकोण, चतुष्कोण, परिमंडल नामक पांच संस्थान । कृष्ण, नील, लोहित, हालिद्र, सुकिल नामक पांच वर्ण । तिक्त, कटुक, कषाय, आम्ल, मधुर नामक पांच रस । सुरभि, दुरभि नामक बि गंध । गुरु, लघु, मृदु, कठिन, स्निग्ध, रूक्ष, उष्ण, शीत नामक आठ फरस । पुरुषवेद, स्त्रीवेद,

§8) 1 B. omits.

नपुंसकवेद रूप त्रिन्हि वेद । अंगु कायु, संगु रागु, जनि जन्मु, ईहं एकत्रीशहीं तणा अभाव एकत्रीशगुण । तीहं करी समिद्धु संजुक्तु । अथवा पंचविधु ज्ञानावरणु । नवविधु दंसणावरणु । दंसणमोह, चारित्रमोह रूप बि मोहनीय भेद । पांच अंतराय भेद । चत्तारि आयु भेद । शुभाशुभरूप बि नाम-कर्म भेद । उच्चनीच लक्षण बि गोत्रकर्म्म भेद । सात-असातरूप बि वेदनीयकर्म्म भेद । सर्वइ मिलिया एकत्रीस, ईहं सवहीं तणा अभाव एकत्रीस गुण । तींहं करी 'समिद्धु' सहितु । 'सिद्धु' किसउ अर्थु ? पंचेतालीस लक्षयोजन प्रमाण जिसउ ऊत्ताणउं छत्रु हुयइ इसइ आकारि स्फटिक रत्नमय छइ सिद्धिशिला, तेह ऊपरि एकु जोयणु आकाशदेसु तेह नइ उपेलइ चउवीसमइ भागि[1] त्रिन्हिसइं तत्रिहा त्रेत्रीसा[2] धनुह प्रमाणि आकाशदेसि चरमदेह त्रिभागन्यून अमूर्त्तजीव ज्योतिःस्वरूप संप्राप्तु नित्यु जिहां एक सिद्धज्योति तिहां अन्योन्य समयगाढ परस्पर प्रविष्ट अनंत सिद्धज्योति छइं । तथा च भणितं–

जत्थ य एगो सिद्धो, तत्थ अणंता भवक्खयविमुक्का ।
अन्नुन्नसमोगाढा, चिट्ठंति तहिं सयाकालं ॥ [२७]

बुद्धु ज्ञाततत्त्वु । 'जिनं नमिमो' अम्हे एवं गुणविशिष्टु जिनु नमउं नमस्करउं । इसी चिंता मुक्तावस्था चिंता ।

§10) नरक गति तिर्यंच गति अकर्म्मभूमि गति वर्जननिमित्तु ऊर्ध्व, अधो, वाम, दक्षिण, पृष्टि लक्षण तिर्यग्लक्षण । त्रिन्हि दिसि तिहां, निरीक्षणविरति जोइवा तणउ निषेधु । तथा च भणितं–

छउमत्थ समोसरणत्थ तह य मुक्खत्थ तिन्नि वत्थाओ ।
तिदिसि निरिक्खणविरई, तिरि निरया कम्मभूमीसु ॥ [२८]

मन-वचन-कायलक्षण त्रिन्हि जोग तींहं नइ विषइ भेदि करी जिहां ऊभां रहियइ तिहां वस्त्रांचलि करी त्रिन्हि वार प्रमार्जनु कीजइ । एउ त्रिविधु भूमिप्रमार्जनु कहियइ ।

जिणपडिमाणमवग्गहु, निद्दिट्ठो होइ पुव्वसूरीहिं ।
उक्कोस सट्ठिहत्थो जहन्नं नव सेसु मज्झिमओ ॥ [२९]

जिनप्रतिमा हूंता उत्कृष्ट पदि साठि हाथे थिकां देव वांदियइं । जघन्य पदि नवे हाथे थिकां देव वांदियइं । अनेरउ नव हाथ ऊपहरउ, साठि हाथ माहि सगलु जघन्यु अवग्रहु कहियइ । संकीर्ण थानकि पुणि अति ढूकडां जिनबिंब कन्हइ थाइं चैत्यवंदना न कीजइं । अक्षर अर्थ प्रतिमा त्रिहुं तणउं करणु विधिवत् सूचवेयउं । यथा–अक्षरमात्रा बिंदुसंयुक्तादि भेद[1] शुद्ध ऊचरिवा । अर्थु गुरूपदेशानुसारि मन माहि चिंतवेयउ । प्रतिमा–जिनबिंबु तिहां दृष्टि करेवी । जिनमुद्रा, योगमुद्रा, मुक्ताशुक्तिकमुद्रा लक्षणु मुद्रा-त्रिकु[2] चैत्यवंदनासूत्र-व्याख्यान माहि कहीसिइ । कायनिरोध, मनोनिरोध, वचननिरोध लक्षणु प्रणिधान-त्रिकु । अप्रतिलेखिति, दुःप्रतिलेखिति, अप्रमार्जिति, दुःप्रमार्जिति थानकि कायव्यापारनिवारणु । विधिपूर्व क्षमाश्रमण-प्रदान प्रमार्जनादि विषइ कायव्यापारप्रयोजनु । आर्त्त-रौद्रध्यान विषइ मनोव्यापारनिषेधनु चैत्यवंदनार्थचिंतन विषइ मनोव्यापारप्रयोजनु । राजकथादि विषइ वचनव्यापारनिषेधनु । मधुरस्वराद्यक्षरोच्चारण संदर्भात्मक विषइ वचनव्यापारप्रवर्त्तनु । प्रणिधानत्रिकु[2] कहियइ । तथा च भणितं–

अक्खर अत्थो पडिमा, भणियं वन्नाइ तियमेयं ।
जिणमुद्द-जोगमुद्दा मुत्तासुत्तीय तिन्नि मुद्दाओ ॥ [३०]
कायमणोवयणनिरोहणं च पणिहाण तियमेयं ।

§9) 1 Bh. त्रिन्हि । 2 Bh. त्रिहत्तरी त्रेत्रीसा । §10) 1 Bh. संयुक्तासंयुक्तादि भेद । 2 B. त्रिक ।

■ दश त्रिक सूचवतउ हूंतउ सावधानचित्तु जु चैत्यवंदना करइ ■ पुण्यात्मा शाश्वतस्थानु परमानंदपदु लहइ। इसां दश त्रिक मन माहिं धारवां। चैत्यवंदनावसरि सूचवेवां।

§11) अथ परिहार्ययोग्यता करी चउरासी आशातना लिखियइं।

खेलं केलिं कलिं कला कुललयं तंबोलं मुग्गालयं
गाली कंगुलियां सरीरधुवणं केसे नहे लोहियं।
भत्तोसं तयं पित्तं वंतं दसणे विस्सामणं दामणं
दंतं-च्छी-नहं-गंड-नासियं-सिरो-सुत्तं-च्छवीणं मलं॥ [३१]
मंतं मीलणं लिक्खियं विभज्जणं भंडारं दुट्ठासणं
छाणी कप्पंड दाली पप्पंड वडी विस्सारणं नासणं।
अक्कंदं विकहं सरत्थघडणं तेरिच्छसंठावणं
अग्गीसेवणं रंधणं परिक्खणं निस्सीहियां भंजणं॥ [३२]
छत्तोवाणह सत्थं चामरं मणोणेगत्तं मब्भंगणं
सचित्ताणमचाय चायमजिए दिट्ठिइ नो अंजली।
साडेगुत्तरसंगभंग मउडं मोलिं सिरो सेहरं
हुड्डा जिंडुह गिड्डियाइरमणं जोहारं भंडकियं॥ [३३]
रिंकारं धरणं रणं विवरणं वालाण पल्हत्थियं
पाऊं पायपसारणं पुंडपुडी पंकं रओ मेहुणं।
जूंया जेमणं गुज्झं विज्जं वणिजं सिज्जं जलुम्मज्जणं
एमाईमणवज्जकज्जमुज्जुओ वज्जे जिणिंदालए॥ [३४]

§12) 'खेलु' श्लेष्मा। 'केलि' क्रीडा हास्यादिकै। 'कलि' कलहु। 'कला' धनुर्वेदादिकै। 'कुललयं' मुखशुद्धिनिमित्तु गंडूषकरणु। 'तंबोल' प्रसिद्धु। 'उग्गालयं' तंबोलसंबंधिउ मुखस्थितु जु छइ अवयवु तेह नउं चर्वणु अथवा त्यजनुं। 'गाली' मकार चकारादिकै। 'कंगुलिया' लघुनीति। 'सरीरधुवणं' हस्तपादादि प्रक्षालनुं। 'केसे' केसलंखनुं। 'नहे' नखलंखनुं। 'लोहियं' रुधिरलंखनुं। 'भत्तोसं' भक्तु धान्यु चणकादि तेह तणउं चर्वणुं। 'तय' व्रणादि चर्म्मु। 'पित्तु' नीलउं मुखनिर्गतु जलुं। 'वंतु' वर्द्धोष्ट्रि। 'दसण' दंत तींहं तणउं त्यजनुं। 'विस्सामणं' सरीरमर्दनादि। 'दामणं' गोवृषभादि बंधनुं। 'दंत' दंतमलुं। 'अच्छी' आंखिमलुं। 'नह' नखमलुं। 'गंड' गालमलुं। 'नासिय' नाकमलुं। 'सिरो' मस्तकमलुं। 'सुत्त' कर्णमलुं। 'छवि' चर्म्ममलुं। 'मंत्रु' भूतनिग्रहादि निमित्तु अथवा राजादि कार्यालोचनुं। 'मीलणु' झगडादि भंजननिमित्तु वृद्धलोकमेलनुं। 'लिक्खियं' गृहलेखक[2] करणुं। 'विभज्जणं' गोत्रियहं रहइं गृहसार विभाग करणुं। 'भंडारं' वस्तुगोपनुं। 'दुट्ठासणं' पादोपरि पादचांटनादिकुं। 'छाणी' छगणक[3] सूकवणुं। कप्पड दाली पप्पड वडी तींहं नउं विस्सारणु सूकवणु। 'नासणं' गर्भ्भगृहादि प्रवेशनुं। 'अक्कंदं' शोकरोदनुं। 'विकह' राजादिकथा करणुं। 'सरत्थघडणं' शस्त्राकघटनुं। 'तेरिच्छ संठावणं' गवादिस्थापनुं। 'अग्गीसेवणु' शीतादौ अग्निवापनुं। 'रंधणं' धान्यपाककरणुं। 'परिक्खणं' नाणकपरीक्षणुं। 'निस्सीहिया भंजणं' निस्सीही नउं अकरणुं। 'छत्तोवाणह' छत्तु आतपवारणु तेह नउं धारणुं। उपानह खासडां तींहं तणउं परिधानुं। 'सत्थ' खड्गादिधरणुं। 'चामर' तींहं नउं वीजावणुं। 'मणोणेगत्तु' नानाविध पापविकल्पना[4]

§11) 1 Bh. वाहन। §12) 1 B. omits. 2 Bh. omits क। 3 Bh. छागणक। 4 Bh. omits विकल्पना।

करवुं । 'धच्छंगाणं' सरीर धोयउंणुं । 'सचित्ताणमचाय' सचित्त पुप्फ तांबूलादिकं तींहं तणउं धरावुं । 'चायमजिए' अजीव–सुवर्ण रत्न मुद्रादिक तींहं तणउं त्यागु मेहिवउं । तींहं नइ त्यागि अहो भिक्षाचरहं तणउ धर्म्मु इसा अवर्णवाद वसइवउ आशातना । 'दिट्ठीइ नो अंजली' जिनदर्शनानंतरु हस्त जोडी मस्तकि अकरणुं । 'साडेगुत्तरसंगभंग' एकलवट-५वस्त्र उत्तरासंग अकरणुं । 'मउडं' मुकुट परिधानुं । 'मोलिं' वस्त्रि करी मस्तक वेष्टवुं । 'सिरो सेहरं' कुसुममय मस्तकसिहर करणुं । 'हुड्डा' होडपातवुं । 'जिंदुह' दडक रमणुं । 'गिड्डियाइ रमणं' गेडी रमति । 'जोहारकरणं' देव जुहारिया इति भणनपूर्वक अपूर्वपुरुष प्रति प्रणमवुं । 'भंड-क्रियं' भंड चेष्टा । 'रेकारं' 'रे आवि' 'रे' जो' इत्यादि भाषणुं । 'धरणं' लभ्यधननिमित्तु पर तणउं ओडवणुं । 'रणं' शत्रि करी युद्धकरणुं । 'विचरणं वालाण' मस्तक ओछावणुं । 'पल्हत्थियं' पालठीकरणुं । 10 'पाउ' काष्टपावडी परिधानुं । 'पायपसारणं' पादप्रसारणुं । 'पुडपुडी' ढीकटी प्रदावुं । 'पंकं' कादम करवुं । 'रओ' धूलिक्षेपणुं । 'मेहुणं' मैथुनसेववुं । 'जूया' द्यूतक्रीडा । 'जेमनं' भोजनकरणुं । 'गुज्झं' गुह्यलिंग प्रकाशवुं । 'विज्ज' वैद्यकरणुं । 'वणिज्जं' व्यवसायकरणुं । 'सिज्जं' शय्याकरणुं । 'जलुम्मज्जणं' जलभृत कुंडिका माहि जलकेलिकरणु झीलणुं । ए चउरासी आशातना । 'एमाईमणवज्जकज्जमुज्जुओ वज्जे जिणिंदालये' एवमादिक आशातना अनवद्यकार्ये धर्म्मकार्य तींहं नइ विषइ 'उज्जुओ' उद्यतु उद्यमवंतु 15 भव्यु जीवु जिणिंदालय माहि देवगृह माहि 'वज्जे' वर्जिजिउ परिहरिजिउ ।

§13) चउरासी आशातना परिहार पूर्वकु देवगृहि देव आगइ चैत्यवंदना करेवी । पोसाल माहि पुनि स्थापनाचार्य आगइ चैत्यवंदना करेवी । गुरु आगइ चैत्यवंदना न करेवियइ । गुरु आगइ चैत्यवंदना करिवा तणा अधिकार तणा अभावइतउ इसउ अर्थु चैत्यवंदनार्थ हूंतउ पुणि जाणियइ । गुरु परंपराम्नाय हूंतउ पुनि जाणियइ । स्थापनाचार्य माहि पंचपरमेष्टि स्थापना कीजइ । तिणि कारणि अर्हंत उद्दिसी तिहां 20 चैत्यवंदना कीजइ । तथा वंदनकु गुणवंतगुरुप्रतिपत्तिनिमित्तु भवसिंधुकूलि गुरुपादमूलि उभयकालिहिं दीजइ । तथा सर्वातिचार विशुद्धिनिमित्तु उभयकालि हिं साधु जिम श्रावक हीं प्रतिक्रमणु करेवउं । तथा च भणितं–

> समणेण सावएण वि, अवस्स कायव्वयं हवइ जम्हा ।
> अंतो अहोनिसिस्स, तम्हा आवस्सयं नाम ॥ [३५]

25 सु चैत्यवंदनादिकु ईर्यापथिकी पडिकम्यां पाखइ सूझइ नहीं । जिहां साक्षात्कारि गुरु हुयइ तिहां गुरु आगइ ईर्यापथी पडिकमियइ । जिहां गुरु न हुयइ तिहां स्थापनाचार्य स्थापना करी तेह आगइ पडिकमियइ । यतः–

जिनशासनसाम्राज्यधुरंधर-श्रीजिनभद्रसूरि-क्षमाश्रमणशिरोमणिः ।

> गुरुविरहंमि य ठवणा गुरूवएसो य दंसणत्थं च ।
> 30 जिणविरहंमि य जिणबिंब ठावणा वंदणं सहलं ॥ [३६]
> रन्नो वि परुक्खस्स वि जहा सेवा मंत देवयाए वा ।
> तह चेव परुक्खस्स वि गुरुणो सेवा विणयहेउं ॥ [३७]
> [illegible] वा कट्ठे पुत्थे य चित्तकम्मे य ।
> [illegible] ठवणाकप्पं वियाणाहि ॥

इत्यागमवचनानुसारि करी अक्ष कपर्दक काष्ठादिमयं वस्तु विषइ स्थापनाचार्य स्थापना कीजइ। पंच परमेष्टि स्थापनानिमित्तु स्थापनाचार्य आगइ मन-वचन-काय रहइं सावधाननानिमित्तु त्रिन्हि पंच परमेष्टि नमस्कार कहियइं। अथवा जिनशासने जि के कार्य कीजइं ति सर्वे त्रिन्हि नमस्कार मन्त्रपूर्वक कीजइ। इणि कारणि पुणि त्रिन्हि नमस्कार भणियइं।

§14) सकलजिनशासनसारु चतुर्दशपूर्वसमुद्धारु त्रिदिवशिव श्रीवशीकारु श्री पंच परमेष्टि-नमस्कारु। तिणि कारणि मांगलिक्यनिमित्तु पहिलुं तेह तउ अर्थु संक्षेपिहिं लिखियइ।

(१) नमो अरहंताणं। नमो सिद्धाणं। नमो आयरियाणं। नमो उवज्झायाणं। नमो लोए सव्वसाहूणं। एसो पंच नमुक्कारो। सव्वपावप्पणासणो। मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं हवइ मंगलं॥

'नमो' नमस्कारु हुयउ, कीहं रहइं? 'अरहंताणं' अरहंत रहइं। किसा कारण लगी अरहंत? देव-देवेंद्र कृतवंदन नमस्करण सत्कारपूजा अरहइं लहइं, अथवा सिद्धिगमनु अरहइं तिणि कारणि अरहंत।

तदुक्तं–

अरहंति वंदणनमंसणाइं, अरहंति पूयसक्कारं।
सिद्धिगमणं च अरहा, अरहंता तेण वुच्चंति॥ [३९]

'नमो सिद्धाणं।' सिद्धहं रहइं 'नमो' नमस्कारु हुयउ। किसा कारण लगी सिद्ध कहियइं? अष्ट प्रकारु कर्म्मु प्रभूतकालबद्धु सितु कहियइ। सु कर्म्मु शुक्लध्यानाग्नि करी जेहे ध्मातु दाधउं ति सिद्ध निरुक्ति वसइतउ कहियइं। तथा च भणितं–

दीहकालरयं जं तु कम्मं से सियमट्ठहा।
सियं धंतं ति सिद्धस्स, सिद्धत्तमुवजायए॥ [४०]

'नमो आयरियाणं।' आचार्य रहइं नमो, नमस्कारु हुयउ। किसा कारन लगी आचार्य कहियइं? आपणपइं पंचविधु आचारु पालइं अनेराइं रहइं उपदिसइं इति आचार्य कहियइं। यथा–

नाणंमि दंसणंमि य, चरणंमि तवंमि तह य विरियंमि।
आयरणं आयारो, इय एसो पंचहा भणिओ॥ [४१]
पंचविहं आयारं, आयरमाणा तहा पयासिंता।
आयारं दंसिंता, आयरिया तेण वुच्चंति॥ [४२]

'नमो उवज्झायाणं।' उपाध्यायहं रहइं नमो, नमस्कारु हुयउ। उपाध्याय किसा कारण लगी कहियइं? जीहं कन्हइ आवी द्वादशांगु शिष्यइं पढियइ ति उपाध्याय कहियइं। यथा–

बारसंगो जिणक्खाओ, सज्झाओ कहिओ बुहे।
तं उवइसंति जम्हा, उवज्झाया तेण वुच्चंति॥ [४३]

'नमो लोए सव्वसाहूणं।' नमो, नमस्कारु हुयउ। कीहं रहइं? 'लोए सव्वसाहूणं।' लोकु मनुष्यलोकु, तेह माहि जि के सर्वविरतनिवासि भेदि' भिन्न सर्व साधु हुंति तहं ति ज्ञान-दर्शन-चारित्ररूप मोक्षमार्ग साधनरतउ साधु कहियइं। अथवा सर्व प्राणिहं हितु करइ ति सार्व ति साधु कहियइं, तीहं रहइं।

तथा च भणितं–

§13) 2 B.., ––। §14) 1 B.. ––। 2 ––। 3 B.. ––।

निव्वाणसाहए जोए, जम्हा साहंति साहुणो ।
समा य सव्वभूएसु, तम्हा ते सव्वसाहुणो ॥ [४४]

ईहं पांचहीं रहइं नमस्कारु कीजतउ किमउ हुयइ इत्याह—'एसो पंच नमुक्कारो'—एउ पंच नमस्कारु 'सव्व पावप्पणासणो'—सवहीं पापहं रहइं प्रणासकु फेडणहारु । 'मंगलाणं च सव्वेसिं'—सवहीं मांगलिक्यहं माहि । 'पढमं हवइ मंगलं'—पहिलउं मांगलिक्यु हुयइ ।

§15) एह माहि जिनशासनप्रवर्त्तनादिकहं कारणहं करी अर्हंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्वसाधुलक्षण पांच नमस्कार करणाहं । यथा—

मग्गे अविप्पणासो आयारे विणयया सहायत्तं ।
पंचन्ह नमुक्कारं करेमि एएहिं हेऊहिं ॥ [४५]

10 ज्ञान-दर्शन-चारित्ररूपु मोक्षमार्ग्गु, तेह तणउं प्रवर्त्तनु अर्हंतहं तणउ धर्म्मु । 'अविप्पणासो' विनाश तणउ अभावु, सु सिद्धहं तणउ धर्म्मु । आचारु ज्ञानाचारादिकु सु आचार्यहं तणउ धर्म्मु । 'विणयया' विनयभावु, द्वादशांगपाठशिक्षा सु उपाध्यायं तणउ धर्म्मु । 'सहायत्तं' धर्म्मि सांनिध्यकरणु, सु साधु तणउ धर्म्मु । ए पांच हेतु कारण, तींहं करी पांचहीं अरहंतादिकहं रहइं नमस्कारु प्रणामु 'करेमि' करउं

§16) नमस्कारपाठ विषइ इहलोक परलोक फलसूचक दृष्टांत लिखियइं ।

15 इहलोयंमि तिदंडी सादिव्वं माउलिंगवणमेव ।
परलोय चंडपिंगल हुंडियजक्खो य दिट्ठंता ॥ [४६]

त्रिदंडी परिव्राजकु तेह संबंधिउ शिवनामु श्रावकपुत्रु त्रिदंडी । 'सादिव्वं' श्रावकपुत्रिका रहइं देवता सांनिध्यघसि सर्पस्थानि पुष्पमालाभवनु सादिव्यु । मातुलिंगवनु बीजउरा नउं आरामु तिहां गयउ श्रावकु सु मातुलिंगवनि करी सूचविउ । ए त्रिन्हि इहलोकफल विषइ नमस्कार तणा दृष्टांत
20 चंडपिंगलु चौरु हुंडिकु यक्षु ए वि परलोकफल विषइ नमस्कार तणा दृष्टांत । पुलिंदयुगल कथानकइतउ ईहं नउं विशेषु सरूपु जाणिवउं ।

§17) स्थापनाचार्य स्थापनानंतरु चैत्यवंदना कीजइ । स पुणि चैत्यवंदना त्रिविध हुयइ । 'जघन्य मध्यमा उत्कृष्टा च ।' तथा च भणितं—

नवकारेण जहन्ना दंडगथुइ जुगल मज्झिमा नेया ।
25 संपुन्ना उक्कोसा, विहिणा खलु वंदणा तिविहा ॥ [४७]

हाथ जोडी माथइं चडावी शिरोवनाममात्रु । अथवा पंचांगप्रणामु जु वीतराग रहइं कीजइ जघन्य चैत्यवंदना । 'दंडगथुइजुगल त्ति'—'अरहंत चेइयाणं' इत्यादि दंडकु कही काउस्सग्गु, स्तुति 'जयवीयराये'त्यादिस्वरूपु दंडगथुतिजुगलु कहियइ । एतलइ मध्यम चैत्यवंदना कहियइ । शक्रस्तव स्तव 'जयवीयराये'त्यादि कहियइ स पुणि मध्यम चैत्यवंदना । 'संपुन्ना उक्कोसित्ति'—पंच शक्रस्तव चैत्यवंदना
30 अथवा द्विशक्रस्तव चैत्यवंदना उत्कृष्टा चैत्यवंदना कहियइ ।

वंदंतो सम्मं चेइयाइं सुहझाणपगरिसं लहइ ।
तत्तो य कम्मनासं, पणट्ठकम्मो य निव्वाणं ॥ [४८]

15) 1. Bh. उपाध्यायहं ।

मिच्छद्दंसणमहणं सम्मद्दंसणविसोहीकरणं च ।
चियवंदणाइ विहिणा पन्नत्तं वीयराएहिं ॥ [४९]
वंदणअत्थमनाऊण जइवि तं कुणइ तहवि न वि सम्मं ।
सम्मं करणाभावे न होइ कम्माण निज्जरणं ॥ [५०]
सम्मद्दिट्ठिस्साऽऽसंसवज्जिणो सुत्तभणियविहिणाओ ।　5
उवउत्तस्स य घणियं सम्मं करणं न सेसाणं ॥ [५१]
पयं पएणं परिसंठवंतो पयत्थमत्थमणुस्सरंतो ।
संवेयनिव्वेयरसं फुसंतो चियवंदणं इय विहिणा करिज्जा ॥ [५२]

§18) ईहां दिनकृत्यविवरणु लिखीसिइ । इसइ अर्थि प्रतिज्ञा सिद्धिं हूंतइ 'पर्इ इरियावहियाए अपडिक्कंताए न कप्पइ किंचि चेइयवंदण-सज्झायाई ।' इसा आगमवचनइतउ पहिलउं इरियावही पडिक्कमि-10 यइ । यथा 'इच्छामी'त्यादि भणी, 'खमासमणु'[1] एकु देई[2] 'इच्छाकारेण संदिसह भगवन् इरियावहियं पडिक्कमामि ।' पाछइ गुरि 'पडिक्कमह' इसइ कहियइ हूंतइ, 'इच्छं' इसउं, भणी करी, 'इच्छामि पडिक्कमिउं' इत्यादि पढियइ ।

§19) तिणि कारणि पहिलउं इरियावही सूत्र तणउ अर्थु लिखियइ ।

(२) इच्छामि पडिक्कमिउं १ । इरियावहीयाए २ । विराहणाए ३ ।　15

पहिली संपदा । ईर्यापथु भणियइ मार्गु, तिहां ज हुयइ स ईर्यापथिकी विराधना जीवघाधा । अथवा ईर्यापथु साधु तणउ आचारु । तथा च भणितं–

ईर्यापथो ध्यानमौनादिकं साधुव्रतं ।

तिहां अतीचारकरणरूप विराधना । तेह हूंतउ पडिक्कमिवा निवर्त्तिवा 'इच्छामि' वांछउं । किसइ हूंतइ विराधना हुयइ ? इत्याह–　20

(३) गमणागमणे ४ ।

बीजी संपदा । गमनु अनइ आगमनु गमनागमनु तिणि हूंतइ । गमनागमनि किसी परि विराधना ? इत्याह–

(४) पाणक्कमणे ५ । बीयक्कमणे ६ । हरियक्कमणे ७ ।

एतलइ त्रीजी संपदा । प्राण भणियइं–बे इंद्रिय त्रे इंद्रिय चउरिंद्रिय जीव, तींहं नइ आक्रमणि 25 संपट्टनि हूंतइ । तथा बीज नइ आक्रमणि हरिय नइ आक्रमणि ईहं बिहुं आलापकहं करी बीजहं रहइं हरियहं रहइं सजीवपणउं कहिउं ।

(५) ओसा उत्तिंग पणग दग मट्टी मक्कडा संताणा संकमणे ८ ।

चउथी संपदा । 'ओसाउ' मेहु एह नउं मढणु सूक्ष्म ही अप्काय रहइं रखाई, 'उत्तिंग' भूमि माहि मंडलाकार विवरकारक गर्दभाकार जीव, अथवा कीटिकानगरं[1] । पनक पंचवर्णफूलि, 'दगमृत्तिका 30 अव्यापारभूमि चीखिलु कहियइ अथवा दगु अपकाउ, मृत्तिका पृथिवीकाउ । मर्कटसंतान कोलिका जालक । तउ पाछइ ओसादिकहं सवहीं तणइ संक्रमणि हूंतइ । किसउं घणउं कहियइ ।

(६) जे मे जीवा विराहिया ९ ।

एतलइ पांचमी संपदा ।

§18) 1 Bh. खमासणु । 2 B. omits ई । Bh. has added it later. §19) 1 Bh. नगरो ।

§24) अत्र प्रस्तावइतउ मिथ्यादुष्कृतपदसंख्या लिखियइ।

देवा अडनउयसयं १९८, चउद्दस नेरइय १४, तिरिय अडयाला ४८।
तिन्निसयाइं तिउत्तर मेया पुण सव्व मणुयाणं ३०३ ॥ [५५]

परमाहम्मिय पनरस १५, तिन्नि य किब्बिसिय ३, जंभिया १० य दस।
लोगंतिया य नवहा ९, दस भवणा १०, सोल वंतरिया १६ ॥ [५६]

चरथिर जोइसिया दस १०, बारस कप्पा १२, अणुत्तरा पंच ५।
नव गेविज्जा ९, एए अपज्जत्त-पज्जत्तओ दुविहा ॥ [५७]

इय सत्त वि नेरइया ७, विगला ३, एगिंदिया २१, जलथलया।
खय-उर-भूय-परिसप्पा गमय संमुच्छ अडयाला ४८ ॥ [५८]

छप्पन्नंतरदीवा ५६, अकम्मभू तीस ३०, इयर पनरस १५।
गब्भय दुहा वि मुच्छिय इगनुयमय १०१, ति जुय तिन्निसया ३०३ ॥ [५९]

अभिहयावत्तिय-लेसियपमुहेहिं एएहिं ते गुणिज्जंति।
छप्पन्नतया तीसा मिच्छादुक्कडपया[1] हुंति ॥ [६०]

§25) देवजातिभेद १९८। यथा 'परमाहम्मिय पनरसे' ति—परमाधार्मिक देवहं तणा पनर भेद, यथा—अंबे १ अंबरीखी २, श्याम ३, शबल ४, रौद्र ५, उपरौद्र ६, काल ७, महाकाल ८, असिपत्र ९, धणु १०, कुंभ ११, वालुक १२, वैतरणी १३, खरस्वर १४, महाघोर १५। तत्र जु परमाधार्मिकु देवु नारकहं रहइं निहणइ पाडइ बांधइ अंबरतलि ले मेल्हइ सु अंबु इसी परि कहियइ। जु निहतहं नारकहं रहइं खंडखंड करी अंबरीखु भाठु तिणि पचइ पचनायोग्य करइ सु अंबरीखी कहियइ २। जु रज्जुहस्तप्रहारादिकहं करी शातन-पातनादिक कर्म्म नारकहं रहइं करइ वर्णि करी श्यामु सु श्यामु ३। जु अंत्र-वसा-हृदय-कालेयकादिक अवयव नारकहं तणा शरीर हूंता ऊपाडइ वर्णि करी शबलु कावरउ तिणि कारणि सु शबलु कहियइ ४। जु शक्ति-कुंतादिकहं नारकी पोयइ[1] सु रौद्रध्यानता करी रौद्रु कहियइ ५। जु तींहीं जि तनां आंग भांजइ[2] सु अतिरौद्रध्यानता करी उपरौद्रु कहियइ ६। जु कुंडी कूंभी माहि घाती नारकी पचइ वर्णि करी कालउ सु कालु कहियइ ७। जु नारकी तणा नान्हा मांसखंड करी खाइ वर्णि करी महाकालउ सु महाकालु कहियइ ८। असि खड्गु तेह तणइ आकारि पत्र तींहं करी सहितु वनु जु विकुर्व्वी करी तेह हेठइ नारकी घाती पवनवातादि वसि पाडी करी नारकी खंडखंड [illegible] करइ सु असिपत्रु कहियइ ९। धणुह हूंता मेल्हियां छइं जि अर्द्धचंद्रादिक बाण तींहं करी नारकी तणां कर्णादिकहं अवयवहं रहइं जु छेदन-भेदनादिक भाव करइ सु धनु कहियइ १०। जु कुंभादिकहं माहि घाती नारकी रहइं पचइ सु कुंभु कहियइ ११। जु कदंब कुसुमाकार अथवा वज्राकार वैक्रिय वालुकातप्त विकुर्व्वी करी चणकहं जिम तडफडतां हूंता नारकी रहइं तेह माहि भूंजइ सु वालुक कहियइ १२। जिसउं गालिउं त्रिपउं[3] तिसी पिरू, जिसउं गालिउं त्रांबउं तिसउं लोही तींहं तणी नदी विकुर्व्वी करी जु तेह माहि नारकी कलकलता हूंता वरूई परि तारइ तिणि कारणि सु वैतरणी कहियइ १३। अथवा वरुयउं तरणु जेह तणउं स वैतरणी नदी तेह रहइं जु करइ सु वैतरणी १३। जु वज्रकंटकाकुल शाल्मलीवृक्षु विकुर्व्वी करी तेह ऊपरि नारकी सूआरी करी खरस्वर आराटि करतां चाकइंद सु खरस्वरु

§24) 1 B. Bh. मिच्छाउक्कड-। §25) 1 Bh. पेयइ। 2 B. repeats भांजइ। 3 Bh. has originally the same reading or त्रिपउं, but corrected as तरउं।

कहियइ १४ । जु भयभीत नारक पलायमान हूंता पशु जिम वाडइ घाती महाघोषु करतउ हूंतउ निरुंधइ सु महाघोषु कहियइ । इति पनरह परमाधार्मिक भेद यमलोकपाल तणा जिसा पुत्र हुयइं तिसा छइं एकु पल्योपमु आयूपउं ईहं रहइं छइ । समवायांगवृत्ति हूंतउ एउ अर्थु लिखियउ[4] ।

§ 26) 'तिन्नि किब्बिसिया' किल्बिषिक नीचप्राय देव ति पुणि तीर्थंकर गणधरहं त्रिहुं थानकहं[1] 5 भणिया । यथा–

> तिन्नि पलियातिसारा तेरससारा य किब्बिसा भणिया ।
> सोहम्मीसाण सणंकुमार-लंतस्स दिट्ठाओ ॥ [६१]

तत्र सौधर्मेशान देवलोकहं हेठइ जि किल्बिषिक ति त्रिपल्योपमायुष्क, जि सनत्कुमार हेठइ ति त्रिसागरोपमायुष्क, जि लंतक हेठइ ति तेरह सागरोपमायुष्क, इति त्रिविध किल्बिषिकदेव ।

10 § 27) जि सौधर्मेंद्रादेशि जिनजन्मादि महोत्सवसमइ पुष्पवृष्टि सुवर्ण-रत्नादिवृष्टि महिमा करइं ति धनद-सेवक-जृंभक[1]-देवभेद दश ।

§ 28) दीक्षासमइ जिन रहइं जि संबोधइं ति लोकांतिक देव, ति पुणि नवविध । यथा–

> सारस्सय १ माइच्चा २ विन्ही ३ वरुणा ४ य अग्गितोया ५ य ।
> तुसिया ६ अव्वाबाहा ७ अग्गिच्चा ८ चेव रिट्ठा य ९ ॥ [६२]

15 सारस्वत १, आदित्य २, वृष्णि ३, वरुण ४, अग्नितोय ५, तुषित ६, अव्याबाध ७, आग्नेय ८, रिष्टा ९, इति नवधा लोकांतिक देव ।

> पढमजुयलंमि सत्तउ सयाणि बियंमि चउदस सहस्सा ।
> तइए सत्त सहस्सा नव चेव सयाणि सेसेसु ॥ [६३]

सारस्वत-आदित्य रूपि प्रथमयुगलि सातसइं लोकांतिक देव विमान छइं । वृष्णि-वरुणरूपि बीजइं 20 युगलि चऊदससहस्स विमान छइं । त्रीजइ अग्नितोय-तुषितरूपि युगलि सातसहस्स विमान छइं । अव्याबाध आग्नेय-रिष्टरूपहं सेसहं निकायहं नवसइं छइं ।

§ 29) तथा 'दसभवणे' ति–भवनपति दसे भेदे यथा–

> असुरा नागा विज्जु सुवन्न अग्गी य वाय थणिया य ।
> उदही दीव दिसा वि य दस भेया भवणवासीणं ॥ [६४]

25 असुरकुमार १, नागकुमार २, विद्युत्कुमार ३, सुवर्णकुमार ४, अग्निकुमार ५, वातकुमार ६, स्तनितकुमार ७, उदधिकुमार ८, द्वीपकुमार ९, दिक्कुमार १०, इति दसविध भवनपति नामानि ।

§ 30) 'सोलवंतरिये' ति–सोल व्यंतरभेद यथा–

> पिसाय १ भूया २ जक्खा ३ य रक्खसा ४ किंनरा ५ य किंपुरिसा ६ ।
> महोरगा ७ य गंधव्वा ८ अट्ठविहा वाणमंतरिया ॥ [६५]
> 30 अणपन्निय १ पणपन्निय २ इसिवाइय ३ भूयवाइए ४ चेव ।
> कंदिय ५ तह महकंदिय ६ कोहंडी ७ चेव पणगे य ८ ॥ [६६]

इति सोल व्यंतर भेद[1] ।

---

§24) 4 Bh. लिखिउ । §26) 1 Bh. थानकि । §27) 1 Bh. has a later addition तिर्यक before जृंभक । §30) 1 B. omits the sentence.

§ 31) 'चरथिर जोइसिया दसे'ति । चंद्र-सूर्य-ग्रह-नक्षत्र-तारकलक्षण पांच जोइसी देव तणा भेद। मनुष्यलोक माहि चर मनुष्यलोक बाहिरि थिर पांच भेद । सवइ मिलिया दस जोइसी देव तणा भेद ।

§ 32) 'बारस कप्पे' ति-बारह देवलोक तणा बारह देवभेद । 'अणुत्तरा पंचे' ति विजय, वेजयंत, जयंत, अपराजित, सर्वार्थसिद्धलक्षण पांच अनुत्तर विमान देव । 'नव गेविज्जे' ति-ग्रैवेयक नव, यथा-हिट्ठिम-हिट्ठिम पहिला ग्रैवेयक रहइं सुदर्शनु नामु १ । हिट्ठिम-मज्झिम बीजा ग्रैवेयक रहइं सुप्रबुद्धु नामु २ । हिट्ठिम-उवरिम त्रीजा ग्रैवेयक रहइं मणोरमु नामु ३ । मज्झिम-हिट्ठिम चउथा ग्रैवेयक रहइं सर्वतोभद्रु नामु ४ । मज्झिम-मज्झिम पांचमा ग्रैवेयक रहइं सुविसालु नामु ५ । मज्झिम-उवरिम छट्ठा ग्रैवेयक रहइं सुमनसु नामु ६ । उवरिम-हिट्ठिम सातमा ग्रैवेयक रहइं सौमनसु नामु ७। उवरिम-मज्झिम आठमा ग्रैवेयक रहइं प्रीतिकरु नामु ८ । उवरिम-उवरिम नवमा ग्रैवेयक रहइं आदित्यु नामु ९ । तिहां जि देव ति नव ग्रैवेयक देव । धुर लगी सवइ मिलिया नव नवति देव तणा भेद हुयइं । 10

§ 33) तथा जीवहं रहइं छ पर्याप्ति हुयइं यथा – आहारपज्जत्ती १, सरीरपज्जत्ती २, इंदियपज्जत्ती ३, आणपाणपज्जत्ती ४, भासापज्जत्ती ५, मणपज्जत्ती ६ । तत्र आहारग्रहणशक्ति आहारपर्याप्ति १ । सरीररूपि करी आहारपरिणामन शक्ति सरीरपर्याप्ति २ । इंद्रियरूपे सरीरपरिणामनशक्ति इंद्रियपर्याप्ति ३ । आनपानवर्गणा पुद्गलग्रहण आनपान भणियइं । ऊसास नीसास तीहं नइ रूपि आनपानवर्गणा पुद्गलपरिणामन व्युत्सृजन लक्षण आनपानपर्याप्ति ४ । भाषावर्गणा पुद्गलग्रहण भाषारूपि परिणामन व्युत्सृजनलक्षण[1] 15 भाषापर्याप्ति ५ । मनोवर्गणा पुद्गलग्रहण मनोरूपि परिणामन व्युत्सृजनलक्षण मनःपर्याप्ति ६ । तीहं माह च्यारि पर्याप्ति पहिली एकेंद्रियजीवहं रहइं हुयइं । विकलेंद्रिय अनइ असन्नी रहइं पांच पर्याप्ति हुयइं। सन्नी रहइं छ पर्याप्ति हुयइं । तथा च भणितं–

आहारसरीरिंदिय पज्जत्ती आणपाण भास मणे ।
चत्तारि पंच छप्पि य एगिंदिय विगलसन्नीणं ॥ [६७] 20

इणि कारणि जि जीव पर्याप्ति पूरी करइं ति पर्याप्त कहियइं । जि पर्याप्ति पूरी करइं नहीं अथवा करिसिइं ति अपर्याप्त कहियइं । इणि कारणि भणिउं ति पर्याप्तापर्याप्तभेदद्वय करी गणिया हूंता अढनऊय सउ अट्ठाणऊ सउ देवभेद हुयइं ।

§ 34) चऊद नेरइय सात नरक । यथा – घर्मा, वंसा, शेला, अंजना, रिट्ठा, मघा, माघवती नामक तीहं तणा सातइ नारकी पर्याप्तापर्याप्त भेदद्वय करी चऊद नारकीभेद । 25

§ 35) 'तिरिय अडयाला' इति – तिर्यंच अड्ढेतालीस भेद । यथा विकलेंद्रिय – बेइंद्रिय १ त्रेइंद्रिय २ चउरिंद्रिय ३ भेदइतउ त्रिविध । पृथिवीकाय ४, अप्काउ ५, तेवकाउ ६, वाउकाउ ७, अनंतवनस्पतिकाउ ८, सूक्ष्मबादर भेदद्वय करी १३, प्रत्येक वनस्पतिकाउ १४, जलचर १५, थलचर १६, खचर १७, उरपरिसर्प १८, भुजपरिसर्प १९, गर्भज-संमूर्च्छिम भेदद्वय करी जलचरादिक पांचइ दसभेद हुयइं इति चउवीसभेद २४, ति सवइ पर्याप्तापर्याप्त भेदद्वय करी तिर्यंच अड्ढेतालीस भेद ४८ । 30

§ 36) 'तिन्निसया य तिउत्तरभेया पुण सव्वमणुयाणमिं'ति मनुष्यभेद ३०३ । यथा – अंतरद्वीप-मनुष्य छप्पन्न भेद, यथा–क्षुल्लहिमवंत पर्वत नी दाढ पूर्वसमुद्र माहि अनइ पश्चिमसमुद्र माहि कोणे विसरी छइं । तिहां सात सात अंतरद्वीप छइं । एवंकारइ अट्ठावीस अंतरद्वीप[1] क्षुल्लहिमवंति छइं । इसी

§33) 1 B. has dropped the line between ......व्युत्सृजनलक्षण...... । §36) 1 Bh. omits अंतर ।

हिं जि परि अट्ठावीस अंतरद्वीप सिखरी पर्वति पुणि छइं। ति सवइ मिलिया हूंता ५६ अंतरद्वीप हुयइं। तिहां युगलिया मनुष्यभेद ५६ हूया। अकर्मभूमि त्रीस, यथा–जंबूद्वीप माहि छ, धातुकी खंड माहि बारह, पुष्करवरद्वीपार्द्ध माहि बारह, एवंकारइ त्रीस अकर्मभूमि। तिहां युगलियां मनुष्यभेद त्रीस। कर्मभूमि १५, यथा–पांच भरत, पांच ऐरवत, पांच महाविदेह तिहां पनर मनुष्यभेद। ५६, ३०, १५ सवइ मिलिया १०१ ति पर्याप्तापर्याप्त संमूर्च्छिम भेदत्रय करी गणिया हूंता त्रिन्हिसइं त्रिडोत्तर मनुष्यभेद हुयइं।

§ 37) तउ पाछइ अट्ठाणऊसउ देव भेद। चऊद नारकी भेद, अट्ठेतालीस तिर्यंच भेद, त्रिन्हिसइं त्रिडोत्तर मनुष्यभेद। सवइ मिलिया पांचसइं त्रिसट्ठ ति सगलाइं जीवभेद। संसार माहि फिरतइ जीवि अभिघातादिकइं करी विराधिया संभवइं। इणि कारणि भणिउं अभिघातादिकइं दसइं पदइं करी गुणिया हूंता त्रिगोत्तर मिथ्यादुष्कृतपद हुयइं।

§ 38) इसी परि जु मिथ्या दुष्कृतपद सूचवतउ इरियावही पडिक्कमइ तु तेतींही जि वार केवलज्ञानु ऊपजइ। यथा–

[illegible] एकि गामु क्षुल्लकु एकु वरसालइ बाहिरि पालकइं माहि पाहलइ त्रेपणउं पेट हेठइ दे [illegible] भरिया [illegible]। महात्मा आविया, चेला वरता देखी करी विढइं। तेतलइं गुर आविया। गुरे कहिउं–'महात्माउ' चेलउ क्षुल्लकु मोटउ भागउ म पडवडावउ' तेतीवार चेलउ परहंसिउ। गुरे भणिउं–'म वच्छ! उगउ रहि पो काइं नहीं कहइ'। तउ चेलउ घणेरउं परहंसिउ। गलसरण भरिया [illegible]। गुरे माथइ हाथ दे करी आलगा आगइ कीधउ। वसति आविया। गुरे इरियावही थिर [illegible] आसरि आसरि अर्थु चीनवतां हूंता पडिक्कमी। गमणागमणउं आलोइउं। तउ पाछइ वसति पुणि आलोइउं। चेला आगइ गुरे कहिउं–'वच्छ! इरियावही पडिक्कमतां छप्पंनसइं–त्रीसां मिथ्या दुष्कृत पद जाणी करी सवही जीव रहइं मिच्छामि दुक्कडु दीजइ।' तउ पाछइ चेलउ गुरुवचन तणइ अनुसारि इरियावही नउ अर्थु चीतवतउ सवही जीवहं रहइं मिच्छामि दुक्कडु देयतउ इरियावही पडिक्कमइ [illegible] केवलज्ञानु ऊपाडी अनेक भविक लोक प्रतिबोधी करी सिद्धि गयउ।

§ 39) तथा [illegible] पुणि इरियावही मात्र प्रतिक्रमणि मिथ्यादुष्कृत प्रदानि हुवा इसउं [illegible]। तथा [illegible] माहि पुणि भणिउं–

> [illegible] दोस निययं सम्मं च पायवडियाए।
> [illegible] उप्पन्नं केवलं नाणं ॥ [६८]

तथा [illegible] भणिउं–

> [illegible] गुरुनीयाए [illegible] पनमंती।
> [illegible] केवलं पत्ता ॥ [६९]

§ 40) इसी परि [illegible] करी शुद्धचित्तु हुयइ हूंतउ पुनरपि [illegible] पायच्छित्ति [illegible] इसउं कहइ–

[illegible] 3 L. [illegible] P. [illegible] 4 L. [illegible] 5 Bh. [illegible] 6 L. [illegible] L. [illegible] P. [illegible] 7 B. [illegible] 8 Bh. [illegible] 9 P. [illegible] 10 L. [illegible] P. [illegible] 11 L. [illegible] 12 Bh. L. P. [illegible] 13 L. [illegible]

(९) तस्सुत्तरीकरणेणं २६, पायच्छित्तकरणेणं २७, विसोहीकरणेणं २८, विसल्लीकरणेणं २९, पावाणं कम्माणं ३०, निग्घायणट्ठाए ३१, ठामि काउस्सग्गं ३२।

एतलइ आठमी संपदा । तेह आलोचित प्रतिक्रमित अतिचार रहइं उत्तरीकरणादि हेतु काउस्सग्गु 'ठामि' करउं इसी परि क्रियासंबंधु करेवउ ।

§41) अनुत्तरु अप्रधानु, उत्तरु प्रधानु, पाछइ अनुत्तरु हूंतउ उत्तरु कीजइ, उत्तरीकरणु 5 कहियइ । पुनरपि संस्कार पमइतउ शुद्धतरकरणु जेह अतिचार तणउं पूर्विहिं आलोचनादिकु कीधउं, तीहीं जि रहइं भली शुद्धिविसेस करणनिमित्तु काउस्सग्गकरणु । सु पुनि उत्तरीकरणु पायच्छित्तकरणि करी हुयइ इत्यादि — 'पायच्छित्तकरणेणं' प्राइहिं बाहुल्लि करी चित्तु जीवु अथवा मनु सोधइ इणि कारणि प्रायश्चित्तु; अथवा पापु छेदइ इणि कारणि पायच्छित्तु । तेह करणि हेतु करी सु पुनि प्रायश्चित्तु । विशुद्धि करी हुयइ इत्यादि — 'विसोहीकरणेणं' विसोधनु विशुद्धि, अतिचारनिराकरणि करी आत्मा रहइं 10 निर्मलता । तिणि हेतु करी तेऊ विसोधिकरणु विसल्लताकरणि हूंतइ हुयइ इणि कारणि भणइ 'विसल्ली-करणेणं' मायाशल्य, निदानशल्य, मिथ्यादर्शनशल्यरूप त्रिन्हि शल्य तीहं करी रहित आत्मा तणउं करणु विसल्ली करणु तिणि हेतु करी । किसइ कारणि ? 'पावाणं कम्माणं निग्घायणट्ठाए' सउ रहइं हेतु छउं पापकर्म, तीहं रहइं निर्घातननिमित्तु समुच्छेदनिमित्तु काउस्सग्गु कायव्यापारपरित्याग 'ठामि' करउं ।

*(१०) अन्नत्थ ऊससिएणं नीससिएणं खासिएणं छीएणं जंभाइएणं उड्डुएणं, 15 **वाय-निसग्गेणं, भमलीए पित्तमुच्छाए, सुहुमेहिं अंग-संचालेहिं, सुहुमेहिं खेल-संचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठि-संचालेहिं, एवमाइएहिं आगारेहिं, अभग्गो अविराहिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो । जाव अरिहंताणं भगवंताणं नमुक्कारेणं न पारेमि, ताव कायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसरामि ।**

§42) किसउं सर्वथा ? नेत्याह — 'अन्नत्थूससिएणं इत्यादि' ऊससिउ सासग्रहणु, नीससिउ सास-20 मोचणु, कासिउ खांसकरणु, क्षुतु[1] छीककरणु, जृंभितु बगाईकरणु, उड्डुयितु उडकारकरणु, वातनिसर्गु अधोवातनिस्सरणु । ईहं हूंतइ अनेरइ व्यापारि करेवइ काउस्सग्गु । उच्छ्वासादिक अनवच्छिन्नाश्वास करी मोकला संपातिम जीवरक्षा कारणि कासितादिक मुखि मुखवस्त्रिका दृष्टव्यवधानादिक जतन करी करेवा । अत्र 'आकारभमलिए पित्तमुच्छाए इत्यादि' असंभावितु देहचलणु भमलि । पित्तमूर्च्छा पित्त थोभणउ थोडी मूर्च्छा तीहं नइ संभवि हूंतइ बइसिवउं । सहसा पाणि हूंतइ संयम जनइ शरीर विहुं रहइं 25 विराधना हुयइ । 'सुहुमेहिं इत्यादि' । सूक्ष्म अंगसंचार रोमांचादिक, सूक्ष्मश्लेष्मसंचार मूत्रनिःसरणादिक,[2] सूक्ष्मदृष्टिसंचार निमेषादिक । ईहं सउ अनेरइ व्यापारि करेवउ काउस्सग्गु । [illegible] ।[3] 'एवमाइएहिं' ति । एवमादिकइं आगारइं अन्याइं करी । [illegible] अग्नि बीज [illegible] अन्य स्थानक हूंतइ, मार्जारमूषक पादघूंटी हूंतईं, पंचेंद्रियजीवि आगइ ऊतरता हूंता, चोर चौराधि[4], भावइ भगनि हूंतइ, चोरसंभ्रमि आपणा रहइं, अथवा अनेरा रहइं सर्पदंश हुयइ हूंतइ, संयमरि[5] 30 उच्छ्वास पारइ अपूरणिहिं, नमस्कार तणइ उच्चारणिहिं[6], काउस्सग्गु पारतां भंगु न हुयइं । इसइ भाउं आगिवउ । अभग्गु सर्वथा अखंडितु । अविराधितु, थोडेइ[7] अविनष्टु 'मे' माहरइ काउस्सग्गु 'हुज्ज' हुउ ।

§41) * Mss. have omitted this portion of the sūtra here, but they have cited it in § 75. §42) 1 Bh omits. 2. Bh [illegible] 3 Bh adds [illegible] 4 B [illegible], retaining only -ए । 5 B has (probably) [illegible] and Bh [illegible] 6 Bh [illegible]

केतलउ 'कालु' ? 'जावे' त्यादि । जेतलइ 'नमो अरहंताणं नमुक्कारेणं न पारेमि' जां 'नमो अरहंताणं' इसउं भणी 'न पारेमि' पारिजाउं नहीं। ताव किं इत्याह—तेतलउ कालु 'कायं' काउ देहु, 'ठाणेणं', ऊर्ध्वस्थानादि करी, 'मोणेणं' वचननिरोधि करी, 'झाणेणं' मनःसुप्रणिधानि करी, 'अप्पाणं' आपणउ, 'वोसिरामि' वोसिरउं परिहरउं ।

5 §43) अथ इरियावही संपदापदादि[1] अवयव लिखियइं—

> इच्छ १ गम २ पाण ३ ओसा ४ जे मे ५ एगिंदि ६ अभिहया ७ तस्स ।
> अडसंपय बत्तीसं पयाइं वन्नाण सङ्कसयं ॥ [७०]

'वन्नाण य सङ्कसयं' दउढसउ आखर इरियावही इणि मति 'तस्सुत्तरी' त्यादि पाखइ आठ संपदा । बत्रीस पद जिम हुयइं तिम कहियइं—

10

> चउ १ रेग २ तिन्नि ३ पंचि ४ ग ५ पण ६ दस ७ तिन्नि ८ त्थ हुंति आलावा ।
> इरियाए नायव्वा तस्सुत्तर एवमाइ विणा ॥ [७१]

संपदाक्षर प्रमाणु लिखियइ—

> वीसं १ छ २ सोल ३ बावीस ४ अड्ड ५ इगवीस ६ इगुणवन्न ७ छ ८ ।
> अडसंपय पयवन्ना इरियाए दिवढसयमाणे ॥ [७२]

15 अथ मूलमतु लिखियइ—मूलमतिहिं संपदापदादि अवयव पूर्वोक्त इ जि जाणिवा ।

अथ अंतपद लिखियइं ।

> पढमा विराहणाए गमणागमणंमि तह भवे बीया ।
> हरियक्कमणे तइया, संकमणे तह चउत्थीया ॥ [७३]
> जीवा विराहिया पंचमी य पंचिंदिया भवे छट्ठी ।
> 20 मिच्छामि दुक्कडं सत्त, अट्ठमी ठामि उस्सग्गं ॥ [७४]

इणि मति 'ओसा' इत्यादि एकु पदु । 'तस्स मिच्छा मि दुक्कडं' ए त्रिन्हि पद सातमी संपदा माहि गणियइं । 'तस्सुत्तरीकरणेणं' इत्यादि 'ठामि काउस्सग्गं' एती सीम आठमी संपदा[2] । इणि मति आठही[3] संपदा तणां पद कहियइं—

> चउ १ रेग २ तिन्नि ३ इग ४ पण ६ तेरस ७ दसग ८ हुंति आलावा ।
> 25 अट्ठत्तीस पमाणा अडनउयसयं च वन्नाणं ॥ [७५]

अथ संपदाक्षरप्रमाणु लिखियइ—

> वीसं १ छ २ सोल ३ बावीस ४ अड्ड ५ इगवीस ६ सत्त वन्ना ७ य ।
> अट्ठेतालीस ८ तहा अडनीसामाण अक्खरया ॥ [७६]

§44) अथ जाणाविया कारणि प्रस्तावइतउ काउसग्ग तणा दोष लिखियइं । यथा—

> 30 घोडय १ लया २ य थंभे कुड्डे ३ माले ४ य सबरि ५ वहू ६ नियले ७ ।
> लंबुत्तर ८ थण ९ उद्धी १० संजय ११ खलणे १२ य वायस १३ कविट्ठे १४ ॥ [७७]

§43) 1 B. omits पद । 2 B. omits between सातमी संपदा - आठमी संपदा (inclusive) 3 Bh. [illegible]

सीसोकंपिय १५ मूई १६ अंगुलिभमुहा १७ य वारुणी १८ पेहा १९ ।
एगूणवीस दोसा काउस्सग्गस्स वज्जिज्जा ॥　　[७८]

घोटक जिम विषमपरणा घोटकु १, वातचालित लता जिम कंपमानकायता लता २, थांभइ भीति ओठंभी करी रहणु थंभकुड्डु ३, ऊपरि माथउं लगाडी करी स्थानु माल ४, शबरी पुलिंदी तेह जिम गुह्य देसि हाथ दे करी स्थानु सबरी ५, वधू जिम माथउं नीचउं करी रहणु वधू ६, निगडित जिम पाद बे मेली करी अथवा मोकला करी रहणु निगडु ७, नाभि ऊपरि गोडा हेठइ प्रलंबमानु चोलपट्टउ करी स्थानु लंबुत्तरु ८, दंसादिरक्षार्थु[1] अथवा अज्ञानवसि हियउं आच्छादी करी स्थानु थणु ९, शकट ऊधि जिम अंगूठा अथवा पान्ही मेली करी स्थानु सगडुद्धी १०, साध्वी जिम प्रावरी करी स्थानु संजता ११, खलणि कडियाली तेह जिम रजोहरणु आगइ करी रहणु खलणि १२, वायस जिम चक्षुगोलउं[2] चलावतउ हूंतउ रहइ वायसु १३, कविट्ठु फउडु तेह जिम परियानु पिंडु करी स्थानु कविट्ठु १४, भूताधिष्ठित जिम माथउं कंपावतउ रहइ सीसोकंपितु १५, मूक जिम हू हू शब्दु करतउ रहइ मूकु १६, आलापक गणिवा-निमित्तु आंगुलि अथवा भांपणि चलावतउ रहइ अंगुलिभमुहा १७, वारुणी सुरा तेह जिम बुडबुडा रवु करइ वारुणी १८ वानर जिम लोगस्सुज्जोयगरे चीतवतउ होठपुट चलावइ पेहा १९, ए ओगुणीस दोस काउसग्ग तणा जाणिवा । जाणी करी वर्जिवा ।

§45) काउसग्ग माहि 'चंदेसुनिम्मलयरा' सीम 'लोगस्सुज्जोयगरे' चीतवेवी, पारिइ हूंतइ समस्तइ 'लोगस्सुज्जोयगरे' भणेवी । इसी परि इरियावही पडिकमी करी गोडिहिलियां थाई महांत संवेग निर्वेद रस संभूतउ नमस्कार कही । तउ पाछइ

अन्नुन्नंतर अंगुलि कोसागारेहिं दोहिं हत्थेहिं ।
पिट्टोवरि कुप्परसंठिएहिं तह जोगमुद्द त्ति ॥　　[७९]

§46) इसी जोगमुद्रा वर्त्तमानु प्रणिपातदंडकु पढइ । सु पुणि एहु-

(११) नमोत्थुणं, अरहंताणं, भगवंताणं । सं० १ ।

नमस्कारु हुउ, 'णं' वाक्यालंकारि अर्थि, यथा-

नम इति एस पणामो अत्थु चिय मे भवउ नमुक्कारो ।
बिंदुसहिओ णयारो वयणस्स विभूसणे भणिओ ॥　　[८०]

कीहं रहइं नमस्कारु ? 'अरहंताणं', 'अरिहंताणं', 'अरुहंताणं' इति त्रिहुं परि पाठु ।

अरिहंति वंदण नमंसणाइं अरहंति पूयसक्कारं ।
सिद्धिगमणं च अरहा अरहंता तेण वुच्चंति ॥　　[८१]

इसा वचनइतउ देवदेवेंद्रकृत वंदण नमस्करण सत्कारपूजे[1] अरहइं अथवा सिद्धिगमनु अरहइं तिणि कारणि अर्हंत कहियइं ।

अट्ठविहं चिय कम्मं अरिभूयं होइ सव्व जीवाणं ।
तकम्म अरिहंता अरिहंता तेण वुच्चंति ॥　　[८२]

इसा वचनइतउ अष्टप्रकारु ज्ञानावरणादिकु कर्म्मु भावरिपु समानु हणइ तिणि कारणि अरिहंत कहियइं ।

§44) 1 Bh. दंसादि- । 2 Bh. glosses it with डोलउ । §46) 1 Bh.-पूजा ।

केतलउ 'कालु' ? 'जावे' त्यादि । जेतलइ 'नमो अरहंताणं नमुक्कारेणं न पारेमि' जां 'नमो अरहंताणं' इसउं भणी 'न पारेमि' पारिजाउं नहीं । तात्र किं इत्याह--तेतलउ कालु 'कायं' काउ देहु, 'ठाणेणं', ऊर्ध्वस्थानादि करी, 'मोणेणं' वचननिरोधि करी, 'झाणेणं' मनःसुप्रणिधानि करी, 'अप्पाणं' आपणउ, 'वोसिरामि' वोसिरउं परिहरउं ।

§43) अथ इरियावही संपदापदादि[1] अवयव लिखियइं–

इच्छ १ गम २ पाण ३ ओसा ४ जे मे ५ एगिंदि ६ अभिहया ७ तस्स ।
अडसंपय बत्तीसं पयाइं वन्नाण सहुसयं ॥ [७०]

'वन्नाण य सहुसयं' दउढसउ आखर इरियावही इणि मति 'तस्सुत्तरी' त्यादि पाखइ आठ संपदा । बत्रीस पद जिम हुयइं तिम कहियइं–

चउ १ रेग २ तिन्नि ३ पंचि ४ ग ५ पण ६ दस ७ तिन्नि ८ त्थ हुंति आलावा ।
इरियाए नायव्वा तस्सुत्तर एवमाइ विणा ॥ [७१]

संपदाक्षर प्रमाणु लिखियइ–

बीसं १ छ २ सोल ३ बावीस ४ अट्ठ ५ इगवीस ६ इगुणवन्न ७ छ ८ ।
अडसंपय पयवन्ना इरियाए दिवडसयमाणे ॥ [७२]

अथ मूलमतु लिखियइ – मूलमतिहिं संपदापदादि अवयव पूर्वोक्त इ जि जाणिवा ।

अथ अंतपद लिखियइं ।

पढमा विराहणाए गमणागमणंमि तह भवे बीया ।
हरियक्कमणे तइया, संकमणे तह चउत्थीया ॥ [७३]
जीवा विराहिया पंचमी य पंचिंदिया भवे छट्ठी ।
मिच्छामि दुक्कडं सत्त, अट्ठमी ठामि उस्सग्गं ॥ [७४]

इणि मति 'ओसा' इत्यादि एकु पदु । 'तस्स मिच्छा मि दुक्कडं' ए त्रिन्हि पद सातमी संपदा मांहि गणियइं । 'तस्सुत्तरीकरणेणं' इत्यादि 'ठामि काउस्सग्गं' पती सीम आठमी संपदा[2] । इणि मति आठमी[3] संपदा तणां पद कहियइं–

चउ १ रेग २ तिन्नि ३ इग ४ पण ६ तेरस ७ दसग ८ हुंति आलावा ।
अट्ठत्तीस पमाणा अडनउयसयं च वन्नाणं ॥ [७५]

अथ संपदाक्षरप्रमाणु लिखियइ–

बीसं १ छ २ सोल ३ बावीस ४ अट्ठ ५ इगवीस ६ सत्त वन्ना ७ य ।
अडयालीस ८ तहा अडनउयसयमाण अक्खरया ॥ [७६]

§44) अथ आगारविना काउस्सग्ग प्रत्याख्यानउ काउसग्ग तणा दोष लिखियइं । यथा–

घोडय १ लया २ य खंभे कुड्डे ३ माले ४ य सबरि ५ वहू ६ निगले ७ ।
लंबुत्तर ८ थन ९ उद्धी १० संजय ११ खलिणे १२ य वायस १३ कविट्ठे १४ ॥ [७७]

---

§43) 1 B. omits सं॰ 2 B. omits between सातमी संपदा - आठमी संपदा (inclusive)
3 Bh. आठमी ।

'चक्खुदय'। ज्ञानदर्शन चारित्ररूपु मार्ग्गु दियइं तिणि कारणि 'मग्गदय'। रोगादि भयभीत प्राणि त्राणदायकत्वइतउ 'सरणदय'। सम्यक्त्वदायकत्वइतउ बोधिदय। तीहं निमित्तु नमस्कारु।

(१६) धम्मदयाणं धम्मदेसयाणं धम्मनायगाणं धम्मसारहीणं धम्मवर-चाउरंतचक्कवट्टीणं। सं० ६।

§51) यथोचित गृहिधर्म्मदायक इति 'धम्मदय'। धर्म्मदायकत्वु धर्म्मदेशना करी हुयइ इनि 5 धर्म्मदेसग धर्मकथक। धर्मकरणइतउ, धर्मफलोपभोगइतउ, धर्मवर्द्धनइतउ, नायक ठाकुर इनि 'धम्म नायग'। धर्मरथ भव्यरथ रहइं सम्यग् दर्शन प्रवर्त्तन पालन जोगइतउ सारथि 'धम्मसारही' तीहं सरीखा इति 'धम्म सारहिणो'। तथा च भगवंति श्री महावीरि श्रेणिकधारिणीपुत्रु मेघकुमारु साधुचरण-संघट्टबाधितु प्रभाति संजमु मूकी घरि जाइसु इसइ अभिप्राइ वांदिया आविउ, पूर्व्वभव सुमेरुप्रभ हस्ति नाम कथनि संबोधी करी संजममार्गि थिरु कीधउ। धम्मसारथि भाव विषइ संक्षेपिहिं मेघकुमार कथा। 10

.धम्म् जु वरु प्रधानु चउगति अंतकरणइतउ चाउरंतु जिमउं चक्रु हुयइ तिसउं चक्रु[1] तिणि वर्त्तइं 'धम्मवर चाउरंत चक्कवट्टिणो,' तीहं रहइं नमस्कारु।

(१७) अप्पडिहय वरनाणदंसणधराणं वियट्टछउमाणं। सं० ७।

§52) अप्रतिहतु अस्खलितु वरु प्रधानु विशेषबोधरूपु ज्ञानु सामान्यबोधरूपु दर्शनु धरइं इति अप्रतिहतवरज्ञानदर्शनधर। व्यावृत्तु निवर्त्तिउं छद्मु ज्ञानावरणीयादिकु कर्म्मु जीहं रहइं ति 'वियट्टछम्म', 15 तीहं निमित्तु नमस्कारु।

(१८) जिणाणं जावयाणं तिन्नाणं तारयाणं बुद्धाणं बोहयाणं मुत्ताणं मोयगाणं। सं० ८।

§53) रागादि जयकारिया जिण। अनेराइं रहइं रागादि जय करावणहार जावग। भवसमुद्र पारगत तीर्ण 'तिन्न'। अनेराइं रहइं भवसिंधु पारदायक तारक 'तारय'। ज्ञाततत्व 'बुद्ध'। तत्वावबोधक 20 बोधक[1]। कर्म्ममुक्त 'मुत्त'। कर्म्ममोचापक 'मोयग' तीहं रहइं नमस्कारु।

(१९) सव्वन्नूणं सव्वदरिसीणं सिवमयलमरूयमणंतमक्खयमव्वाबाहम-पुणराविति सिद्धिगइ नामधेयं ठाणं संपत्ताणं नमो जिणाणं जियभयाणं। सं० ९।

§54) सर्व्ववस्तु सामान्य विशेषात्मकु हूंतउ केवलज्ञान प्रथमसमइ विशेषरूपता करी जाणइं तिणि कारणि 25 तिणि कारणि सर्वज्ञ कहियइं। तउ पाछइ बीजइ समइ सर्ववस्तु सामान्यात्मकता करी देखइं तिणि कारणि सर्वदर्शी कहियइं।

§55) अथ जइ किमइ को कहइ—एक समइ जाणइ बीजइ समइ देखइ—तउ ज्ञानसमइ देखइ नहीं, दर्शनसमइ जाणइ नहीं इसउ दोषु सर्वज्ञ रहइं आवइ, इसउं न कहिवूं। ज्ञानदर्शनलब्धि सदा संभवइतउ सर्वज्ञु सर्वदर्शी च सदा कहियइ। जीव तणउ इसु जु स्वभावु छइ। जु ज्ञानोपयोगु अनइ दर्शनोपयोगु क्रमिहिं जि करी हुयइ। जिम लोक माहि पाचकादिकु विनाणी केतीही वार पाचकादिकु 30 कर्म्मु करइ, पुणि पाचकादि-लब्धि-सद्भावइतउ सदा पाचकु पाचकु इत्यादि प्रकारि बोलाविउ तिम अनइ सर्वदर्शी सदा कहियइ। अथवा इनि करी जाणतू देखतू हूंतउ, सदा लब्धिसद्भावइतउ सर्वज्ञु अनइ सर्वदर्शी सदा कहियइ। अथवा लेतीवार समस्त वस्तु सामान्यधर्म्मु उपसर्जनु गौणु प्रतिभासइ तथा समस्त वस्तु विशेषधर्म्मु मुख्यु

§51) 1 Bh. adds धम्मवरचाउरंतचकु। §53) 1 B. omits. §54) 1 शिवम्-अचलम्-अरुजम्-अनंतम्-अक्षयम्-अव्याबाधम्-अपुनरावृत्ति।

दग्धे बीजे यथाऽत्यन्तं न रोहति यवांकुरः ।
कर्म्मबीजे तथा दग्धे न रोहति भवांकुरः ॥ [८३]

इसा भणनइतउ वली संसारि नहीं रहइं नहीं ऊपजइं तिणि कारणि अरहंत कहियइं । तींहं निमित्तु नमस्कारु ति पुणि किसा छइं ? भगवंत भगु छए भेदे । तथा हि–

ऐश्वर्यस्य समग्रस्य रूपस्य यशसः श्रियः ।
धर्मस्याथ प्रयत्नस्य षण्णां भग इतीङ्गना ॥ [८४]

सु समग्र ऐश्वर्यादिलक्षणु भगु जींहं रहइं हुयइ ति भगवंत ।

(१२) आइगराणं, तित्थगराणं, सयंसंबुद्धाणं । सं० २ ।

§47) आपणइ २ तीर्थि सर्वनीति हेतु श्रुतधर्म तणउ आदि करइं तिणि कारणि आइकर । तीर्थु
10 चतुर्विधु संघु अथवा प्रथमु गणधरु करइं तिणि कारणि तीर्थंकर । स्वयं आपहि परोपदेस पाखइ संबुद्ध ज्ञाततत्त्व तिणि कारणि स्वयंसंबुद्ध । तींहं निमित्तु नमस्कारु ।

(१३) पुरुसोत्तमाणं पुरुससीहाणं। पुरुसवरपुंडरीयाणं। पुरुसवरगंधहत्थीणं। सं० ३ ।

§48) पुरुष विशिष्टसत्त्व तींहं माहि तथा स्वभावता लगी असाधारण गांभीर्यादिगुण जोगइतउ
15 उत्तम पुरुषोत्तम । कर्मशत्रु प्रति सूरता करी सिंह सरीखा इति पुरुषसिंह । पुरुषवर पुंडरीक सरीखा । जिम पुंडरीक पंक माहि ऊपजइ, जल माहि वाधइं, पंकु जलु बे मेल्ही करी ऊपरि रहइं, तिम अरहंत पुणि कर्म्मपंकि ऊपना, भोगजलि वाधिया, बेऊ मेल्ही करी ऊपरि रहइं इति पुरुषवर पुंडरीक कहियइं । पुरुषवर गंधहस्ति सरीखा, जिम गंधहस्ति नइ गंधि क्षुद्र गज भाजइं ऊभा न रहइं तिम तीर्थंकर-विहार-वातगंधि करी ईति[1] दुर्भिक्षादिक उपद्रव गज भाजइं इति पुरुषवरगंधहस्ति कहियइं । तींहं निमित्तु नमस्कारु ।

20 (१४) लोगुत्तमाणं लोगनाहाणं लोगहियाणं लोगपईवाणं लोगपज्जोयगराणं। सं० ४ ।

§49) ईहां लोकु भव्यसत्वु कहियइं । तेह माहि सकलकल्याणता करी जु छइ तथा भव्यसत्व-भावु तिणि करी उत्तम लोकोत्तम । लोग विशिष्ट भव्यसत्व तींहं रहइं सम्यक्त्वबीजदानि करी रागादि घोर उपद्रव रक्षणि करी, अलब्धलाभ लक्षणु योगु 'लब्धपरिपालन लक्षणु क्षेमु करइं इति लोकनाथ ।
25 लोकु सकलु एकेंद्रियादि प्राणिवर्गु, तेह रहइं रक्षणादि करी हित इणि कारणि लोकहित । लोकु विशिष्ट-संज्ञि प्राणिसमूहु, तेह रहइं उपदेस किरणइं करी मिथ्यात्व तिमिर निवारण भावि करी लोकदीप । लोकु गणधरादिकु, तेह रहइं प्रद्योतु तत्वप्रकासु करइं इति लोकप्रद्योतकर । तींहं रहइं नमस्कारु ।

(१५) अभयदयाणं चक्खुदयाणं मग्गदयाणं सरणदयाणं बोहिदयाणं। सं० ५।

§50) 'इहपरलोयादाणमकम्हा आजीवमरणमसिलोए' इति सप्तविधु भउ कहियइ । तथा हि–
30 स्वजाति तणउ भउ इहलोक भउ १, परजाति तणउ भउ परलोक भउ २, चोरराजादिकहं तणउ रिद्धिहरण तणउ भउ आदानभउ ३, वीजपतनादि वसइतउ अचीतवीउ भउ अकस्माद्भउ ४, दारिद्रिउ हुउं किम जीविसु इसउ भउ आजीविकाभउ ५, मरिवा तणउ भउ ६; अपकीर्त्ति तणउ भउ अश्लोक भउ ७, इति सप्तविधु भउ । तेह नउ अभावु दियइं इति 'अभयदय' । तत्वावबोधरूप ज्ञानदृष्टि दियइं इणि कारणि

§48) 1 ईति is a type of उपद्रव। There are six types of ईति।

'चक्खुदय'। ज्ञानदर्शन चारित्ररूपु मार्गु दियइं तिणि कारणि 'मग्गदय'। रोगादि भयभीत प्राणि त्राणदायकत्वइतउ 'सरणदय'। सम्यक्त्वदायकत्वइतउ बोधिदय। तींहं निमित्तु नमस्कारु।

(१६) धम्मदयाणं धम्मदेसयाणं धम्मनायगाणं धम्मसारहीणं धम्मवर-चाउरंतचक्कवट्टीणं। सं० ६।

§51) यथोचित गृहिधर्म्मदायक इति 'धम्मदय'। धर्म्मदायकत्वु धर्म्मदेशना करी हुयइ इति 'धम्म देसग' धर्मकथक। धर्मकरणइतउ, धर्मफलोपभोगइतउ, धर्मवर्द्धनइतउ, नायक ठाकुर इति 'धम्म नायग'। धर्मरथ भवरथ रहइं सम्यग् दर्शन प्रवर्त्तन पालन जोगइतउ सारथि 'धम्मसारही' तींहं धम्मसारहिणो'। तथा च भगवंति श्री महावीरि श्रेणिकधारिणीपुत्रु मेघकुमारु साधुचरण-संघट्टनाधितु प्रभाति संजमु मूकी घरि जाइसु इसइ अभिप्राइ वांदिवा आविउ, पूर्व्वभव सुमेरुप्रभ हस्ति नाम कथनि संबोधी करी संजममार्गि थिरु कीधउ। धम्मसारथि भाव विषइ संक्षेपिहिं मेघकुमार कथा।

धम्मु जु परु प्रधानु चउगति अंतकरणइतउ चाउरंतु जिसउं चक्कु हुयइ तिसउं चक्कु[1] तिणि वर्त्तइं 'धम्मवर चाउरंत चक्कवट्टिणो,' तींहं रहइं नमस्कारु।

(१७) अप्पडिहय वरनाणदंसणधराणं वियट्टछउमाणं। सं० ७।

§52) अप्रतिहतु अस्खलितु वरु प्रधानु विशेषबोधरूपु ज्ञानु सामान्यबोधरूपु दर्शनु धरइं इति अप्रतिहतवरज्ञानदर्शनधर। व्यावृत्तु निवर्त्तिउं छद्मु ज्ञानावरणीयादिकु कर्म्मु जींहं रहइं ति 'वियट्टछम्म', तींहं निमित्तु नमस्कारु।

(१८) जिणाणं जावयाणं तिन्नाणं तारयाणं बुद्धाणं बोहगाणं मुत्ताणं मोयगाणं। सं० ८।

§53) रागादि जयकारिया जिण। अनेराइं रहइं रागादि जय करावणहार जावग। भवसमुद्र पारगत तीर्ण 'तिन्न'। अनेराइं रहइं भवसिंधु पारदायक तारक 'तारय'। ज्ञाततत्व 'बुद्ध'। तत्वावबोधक बोधक[1]। कर्म्ममुक्त 'मुत्त'। कर्म्ममोचापक 'मोयग' तींहं रहइं नमस्कारु।

(१९) सव्वन्नूणं सव्वदरिसीणं सिवमयलमरूयमणंतमक्खयमव्वाबाहम-पुणरावित्ति सिद्धिगइ नामधेयं ठाणं संपत्ताणं नमो जिणाणं जियभयाणं। सं० ९।

§54) सर्व्ववस्तु सामान्य विशेषात्मकु हूंतउ केवलज्ञान प्रथमसमइ विशेषरूपता करी जाणइं तिणि कारणि सर्वज्ञ कहियइं। तउ पाछइ बीजइ समइ सर्ववस्तु सामान्यात्मकता करी देखइं तिणि कारणि सर्वदर्शी कहियइं।

§55) अथ जइ किमइ को कहइ—एक समइ जाणइ बीजइ समइ देखइ—तउ ज्ञानसमइ देखइ नहीं, दर्शनसमइ जाणइ नहीं इसउ दोषु सर्वज्ञ रहइं आवइ, इसउं न कहियूं। ज्ञानदर्शनलब्धि तणा सदा संभवइतउ सर्वज्ञु सर्वदर्शी च सदा कहियइ। जीव तणउ इसू जु स्वभावु छइ। जु ज्ञानोपयोगु अनइ दर्शनोपयोगु क्रमिहिं जि करी हुयइ। जिम लोक माहि पाचकादिकु विनाणी केतीही वार पाकादिकु कर्म्मु करइ, पुणि पाचकादि-लब्धि-सद्भावइतउ सदा पाचकु पाचकु इत्यादि प्रकारि बोलावियइ तिम क्रमि करी जाणतू देखतू हूंतउ, सदा लब्धिसद्भावइतउ सर्वज्ञु अनइ सर्वदर्शी सदा कहियइ। अथवा जेतीवार समस्त वस्तु सामान्यधर्म्मु उपसर्जनु गौणु प्रतिभासइ तथा समस्त वस्तु विशेषधर्म्मु मुख्यु

§51) 1 Bh. adds धम्मवरचाउरंतचक्कु। §53) 1 B. omits. §54) 1 सिवम्-अयलम्-अरुयम्-अणंतम्-अक्खयम्-अव्वाबाहम्-अपुणरावित्ति।

[illegible] [illegible] मांनु कहियइ । जेनीसार विशेषधर्मु गौणु प्रतिभासइ सामान्यधर्मु मुख्यु [illegible] [illegible] मांदर्शी कहियइ । दोषु को न होयइं । ईहां यहु कहिवउं छइ । पुणि तिम्हरहां [illegible] [illegible] नही । जु को तिम्ह जोयइ तिसि नंदिसूत्रि हूंतउ जाणिवउ । ईहां मुग्धजन तर्कवादु [illegible] नही [illegible] [illegible] पुण लिखिउ नही । 'सिवु' निरुपद्रवु । अचलु चलनक्रियारहितु । अरुजु [illegible] । [illegible] [illegible] ज्ञानमजोनइतउ । अक्षउ क्षयहेतु तणा अभावइतउ । अव्याबाधु [illegible] ।

§56) [illegible] आइनिउं कर्म तणा अभावइतउ । जइ तिम्हइ संसारहेतु कर्म तणइ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] संसारी अवतार कहियइ तउ दोषु थोड रहइं कहियइ सु जिन रहइं [illegible] । [illegible]

[illegible] [illegible] संसार कहिय, तउ सदा संसारु जीव रहइं हुयइ । मोक्षु कदाचित् न हुयइ । [illegible] [illegible] हुय रहइं सदा भावइतउ । अथवा सदा संसाराभावु मोक्षु जु जीव [illegible] [illegible] [illegible] । [illegible] जि वस्तु रहइं कारणसंभवि भावु, कारण तणइ असंभवि [illegible] हुयइ । [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible] ।
[illegible] हि [illegible] [illegible] ॥ [८५]

[illegible] [illegible] । [illegible] [illegible] हूंतउ अपुनरावृत्ति मानना [illegible] ।

[illegible] [illegible] । '[illegible]' इसउं नामधेय नामु जेह स्थान रहइं सु सिद्धिगति- [illegible] [illegible] । [illegible] [illegible] [illegible] जिन राग-द्वेष मोह जयकारक । 'जिअभय' पूर्वोक्त [illegible] । [illegible] [illegible] नमस्कार ।

[illegible] [illegible] [illegible] नमस्कारादण्डकु लिखितु कीयइं । [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] हुयइं । [illegible] । यत उक्तं –

[illegible] उत्तम [illegible] ।
[illegible] न हुंति [illegible] ॥ [८६]

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] कहियइ [illegible] [illegible] [illegible] । [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ।

§57 [illegible] [illegible] [illegible] कहियइं ।

[illegible] १ [illegible] २ [illegible] ३ [illegible] ४ [illegible] ५ [illegible] ६ [illegible] ७ [illegible] ८ [illegible] ९ ।
[illegible] [illegible] ॥ [८७]
[illegible] [illegible] [illegible] ।
[illegible] [illegible] ॥ [८८]

[illegible]

बोहिदयाणं पगमा नवसट्ठीज तह भवे छट्ठी ।
सत्तमिया छउमाणं अट्ठमिया मुक्कमोयाणं ॥ [८९]

जिणभयाणं चरमा तिन्नि य पूया पया य निद्दिट्ठा ।
जे अईया सिद्धाई संवरणे होइमा गाहा ॥ [९०]

अथ नवसंपदा पद सवई प्रमाणु कहियइ–

दो १ तिन्नि २ चउर ३ पंच ४ य तह पंच५ य पंच ६ दुन्नि ७ चउ८ तिन्नि९ ।
सक्कथए नवसंपय आलावा हुंति तित्तीसं ॥ [९१]

अथ नवसंपदा वर्णप्रमाणु कहियइ–

चउदस १ सोल २ बत्तीसे ३ गुणतीसं ४ सत्तवीस ५ छत्तीस ६ ।
बावीस ७ ऽट्ठावीसं ८ अडवन ९ नवसंपया वन्ना ॥ [९२]

अथ सर्व वर्णप्रमाणु कहियइ–

सव्वेसिं संकलणे तह वन्ना हुंति दुसय बासट्ठा ।
भावजिणत्थय रूवे अहिगारे इत्थ पढमंमि ॥ [९३]

§58) अथानंतरु त्रिकालवर्ति जिनवंदनानिमित्तु पूर्वसूरिविरचित ए गाह कहइ–

जे अईया सिद्धा जे भविस्संति अणागए काले ।
संपइ य वट्टमाणा सव्वे तिविहेण वंदामि ॥ सुगमा । [९४]

न वरं भावि जिन अनइ अतीत जिन द्रव्यजिन कहियइं । वर्त्तमान जिन भावजिन जाणिवा ।
अथ अतीत सिद्धजिन कहियइं । यथा– केवलज्ञानी १, निर्वाणी २, सागरु ३, महायश ४, विमलु ५,
सर्वानुभूति ६, सुतेजा इसउं बीजउं नामु केई एकि कहइं, श्रीधर ७, दत्तु ८, दामोदरु ९,
सुतेजा १०, स्वामी ११, मुनिसुव्रतु १२, अनेरा शिवासी इसउं नामु कहइं[1], सुमति १३,
शिवगति १४, अस्तागु १५, निमीश्वरु १६, अनिलु १७, यशोधरु १८, कृतार्थु १९, जिनेश्वरु २०,
धर्मीश्वरु इसउं बीजउं नामु, शुद्धमति २१, शिवकरु २२, स्यंदनु २३, संप्रति २४, इति अतीत
चउवीस जिन 'जे अईया सिद्धा' इणि पदि करी जाणिवा ।

§59) 'जे भविस्संति' जि भविष्य चउवीस जिन यथा– पद्मनाभु १, सूरदेवु २, सुपार्श्व ३,
स्वयंप्रभु ४, सर्वानुभूति ५, देवश्रुतु ६, उदउ ७, पेढालु ८, पोट्टिलु ९, शतकीर्ति १०, सुव्रतु ११,
अममु १२, निष्कषायु १३, निष्पुलाकु १४, निर्ममु १५, चित्रगुप्तु १६, समाधि १७, संवरु १८,
यशोधरु १९, विजउ २०, मल्लु २१, देवु २२, अनंतवीर्यु २३, भद्रकृत २४ । इति भविष्य चउवीस
जिन नाम । समवायांग मांहि भावि जिन इसी परि दीसइं यथा– महापउमु १, सुरादेवु २,
सुपार्श्वु ३, स्वयंप्रभु ४, सर्वानुभूति ५, देवगुप्तु ६, उदउ ७, पेढालपुत्तु ८, पुट्टिल ९,
सयदु १०, मुनिसुव्रतु ११, अममु, १२, निष्कषायु १३, निष्पुलाकु १४, निर्ममु १५,
चित्रगुप्तु १६, समाधि १७, संवरु १८, अनिवृत्ति १९, विवादु २०, विमलु २१, देवोपपातु २२,
अनंतु २३, विजउ २४ । तथा च भणितं–

महापउमे १ सुरादेवे २ सुपासे ३ य सयंपभे ४ ।
सव्वाणुभूइ अरिहा ५ देवगुत्ते य हुक्खइ ६ ॥ [९५]

§58) 1 B. कहियइ ।

उदये ७ पेढालपुत्ते ८ य पुट्टिले ९ भयए १० इय ।
मुणिसुव्वए ११ य अरिहा सव्वभावविउ जिणे ॥ [९६]
अममे १२ निष्कसाये १३ य निप्पुलाए १४ य निम्ममे १५ ।
चित्तगुत्ते १६ समाहि १७ य आगमिस्सेण हुक्खइ ॥ [९७]
5 संवरे १८ अनियट्टि १९ य विवाए २० विमले इय २१ ।
देवोववाए २२ अरिहा अणंत २३ विजए २४ इय आगमिस्सेण हुक्खइ ॥ [९८]

इति आगामियइ कालि 'हुक्खइ' होइसइ इसउ अर्थु ।

§60) 'संपइ य वट्टमाणा' ऋषभादिक चउवीस जिन लोगस्सुज्जोयगरे माहि कहिया छइं । 'संपइ य वट्टमाणा' जाणिवा ।

10 §61) अथवा जघन्य पद वर्त्तमान जिन यथा—

सीमंधरो जुगंधरु बाहु सुबाहू महाविदेहंमि ।
सुज्जाय सयंपहो य रिसहाणण णंतविरिओ य ॥ [९९]
सुरप्पहो विसालो वज्जहर चंदाणणा जिणा ।
अवरे तह चंदबाहु भुयगा ईसर नेमिप्पहा य जिणा ॥ [१००]
15 सिरि वीससेण महभद्द देव-जसरिद्धि तित्थयरा ।
पढमाणुओगदिट्ठे वीसं वंदामि तित्थयरे ॥ [१०१]

प्रथमानुयोग नामि सिद्धांतु तेह माहि जघन्य पद वर्त्तमान वीस जिन नाम इसी प[रि] सांभलियइं । यथा श्रीसीमंधरस्वामि १, श्रीयुगंधरस्वामि २, श्रीबाहुस्वामि ३, श्रीसुबाहुस्वामि ४ श्रीसुजातस्वामि ५, श्रीस्वयंप्रभुस्वामि ६, श्रीऋषभाननस्वामि ७, श्रीअनंतवीर्यस्वामि ८, श्रीसू- 20 प्रभस्वामि ९, श्रीविशालस्वामि १०, श्रीवज्रधरस्वामि ११, श्रीचंद्राननस्वामि १२, श्रीचंद्रबाहु- स्वामि १३, श्रीभुजगस्वामि १४, श्रीईश्वरस्वामि १५, श्रीनेमिप्रभस्वामि १६, श्रीविश्वसेनस्वामि १७ श्रीमहाभद्रस्वामि १८, श्रीदेवस्वामि १९, श्रीयशऋद्धिस्वामि २० ।

§62) अथ प्रस्तावइतउ जिसी परि वीस जिन विहरमाण छइं तिसी परी लिखियइ । जंबूद्वी[प] माहि पूर्व विदेह तणइ उत्तरार्द्धि पूर्व लवणसमुद्र समीपि आठमउ पुष्कलावती नामि विजउ । ति[हां] 25 पुंडरीकिणी नामि नगरी । तिहां श्री सीमंधरस्वामि इसइ नामि तीर्थंकरु विहरइ ।१। तथा अपरविदे[ह] माहि उत्तरार्द्धि पश्चिम लवणसमुद्र समीपि पंचवीसमउ वप्रु इसइ नामि विजउ तिहां विजया नामि नग[री] तिहां श्री युगंधरस्वामि इसइ नामि तीर्थंकरु विहरइ । २ । पूर्वविदेह माहि दक्षिणार्द्धि पूर्व लवणसमु[द्र] समीपि नवमउ वत्सु इसइ नामि विजउ तिहां सुसीमा नामि नगरी तिहां श्री बाहुस्वामि इसइ ना[मि] तीर्थंकरु विहरइ । ३ । अपरविदेह माहि दक्षिणार्द्धि पश्चिम लवणसमुद्र समीपि चउवीसमउ नलिणाव[ती] 30 नामि विजउ तिहां अयोध्या नामि नगरी तिहां श्री सुबाहुस्वामि इसइ नामि तीर्थंकरु विहरइ । ४ । त[था] धातुकी खंड द्वीप माहि बि महाविदेह छइं । एकु पूर्व दिसि एकु पश्चिम दिसि । तउ पूर्व महाविदे[ह] तणइ पूर्व विदेहि उत्तरार्द्धि कालोद समुद्र समीपि आठमउ पुष्कलावती नामि विजउ तिहां पुंडरीकिणी नामि नगरी तिहां श्री सुजात इसइ नामि तीर्थंकरु विहरइ । ५ । तथा अपरविदेह तणइ उत्तरार्द्धि लवण- समुद्र पश्चिम समीपि पंचवीसमउ वप्रु इसइ नामि विजउ तिहां विजया इसइ नामि नगरी तिहां

[illegible]स्वामि इसइ नामि तीर्थंकरु विहरइ। ६। तथा पूर्वविदेह तणइ दक्षिणार्द्धि कालोदसमुद्र समीपि [illegible] इसइ नामि विजउ तिहां सुसीमा इसइ नामि नगरी तिहां श्री [illegible]स्वामि इसइ नामि [illegible]कर विहरइ। ७। अपरविदेह तणइ दक्षिणार्द्धि लवणसमुद्र परतार समीपि [illegible] नामि विजउ तिहां अयोध्या नामि नगरी तिहां श्री अनंतवीर्यस्वामि इसइ नामि तीर्थंकर विहरइ। ८। तथा पश्चिम महाविदेह तणइ पूर्वविदेहि उत्तरार्द्धि लवणसमुद्र परतार समीपि आठमउ पुष्कलावती नामि विजउ तिहां पुंडरीकिणी नामि नगरि तिहां श्री सूरप्रभस्वामि इसइ नामि तीर्थंकर विहरइ। ९। तथा अपरविदेह तणइ उत्तरार्द्धि कालोदसमुद्र समीपि पंचवीसमउ वप्रु इसइ नामि विजउ तिहां विजया नामि नगरी तिहां श्री विशालस्वामि इसइ नामि तीर्थंकरु विहरइ। १०।

§63) तथा पूर्वविदेह तणइ दक्षिणार्द्धि लवणसमुद्र परतार समीपि नवमउ वत्सु इसइ नामि विजउ तिहां सुसीमा नामि नगरी तिहां श्री वज्रधरस्वामि इसइ नामि तीर्थंकर विहरइ।११। तथा अपरविदेह तणइ दक्षिणार्द्धि कालोदसमुद्र समीपि पंचवीसमउ नलिनावती नामि विजउ तिहां अयोध्या नामि नगरी तिहां श्री चंद्राननस्वामी इसइ नामि तीर्थंकर विहरइ। १२। तथा पुष्करवर द्वीपार्द्ध माहि बि महाविदेह छइं। एकु पूर्वदिसि एकु पश्चिम दिसि। तत्र पूर्वमहाविदेह तणइ उत्तरार्द्धि मानुषोत्तर पर्वत समीपि आठमउ पुष्कलावती नामि विजउ तिहां पुंडरीकिणी नामि नगरी तिहां श्री चंद्रबाहुस्वामि इसइ नामि तीर्थंकर विहरइ। १३। तथा अपरविदेह तणइ उत्तरार्द्धि कालोदसमुद्र परतार समीपि पंचवीसमउ वप्रु इसइ नामि विजउ तिहां विजया नामि नगरी तिहां श्री भुजंगस्वामि इसइ नामि तीर्थंकर विहरइ। १४। तथा पूर्वविदेह तणइ दक्षिणार्द्धि मानुषोत्तर पर्वतसमीपि नवमउ वत्सु इसइ नामि विजउ तिहां सुसीमा नामि नगरी तिहां श्री ईश्वरस्वामि इसइ नामि तीर्थंकर विहरइ। १५। तथा अपरविदेह तणइ दक्षिणार्द्धि कालोदसमुद्र परतार समीपि पंचवीसमउ नलिनावती नामि विजउ तिहां अयोध्या नामि नगरी तिहां श्री नेमिप्रभस्वामि इसइ नामि तीर्थंकर विहरइ। १६। तथा पश्चिम महाविदेह तणइ पूर्वविदेहि उत्तरार्द्धि कालोदसमुद्र परतार समीपि आठमउ पुष्कलावती नामि विजउ तिहां पुंडरीकिणी नामि नगरी तिहां श्री वीरषेणस्वामी इसइ नामि तीर्थंकर विहरइ। १७। तथा अपर विदेह तणइ उत्तरार्द्धि मानुषोत्तर पर्वत समीपि पंचवीसमउ वप्रु इसइ नामि विजउ तिहां विजया नामि नगरी तिहां श्री महाभद्रस्वामि इसइ नामि तीर्थंकर विहरइ। १८। तथा पूर्वविदेह तणइ दक्षिणार्द्धि कालोदसमुद्र परतार समीपि नवमउ वत्सु इसइ नामि विजउ तिहां सुसीमा नामि नगरी तिहां श्री देवयशस्वामि इसइ नामि तीर्थंकर विहरइ। १९। केई एकि देवयशस्वामि [illegible] इसउं नामु कहइं। तथा अपर विदेह तणइ दक्षिणार्द्धि मानुषोत्तर पर्वत समीपि पंचवीसमउ नलिनावती नामि विजउ तिहां अयोध्या नामि नगरी तिहां श्री अजितवीर्यस्वामि इसइ नामि तीर्थंकर विहरइ। २०। केई एकि अमितवीर्यस्वामि इसइ नामि कहइं।

§64) वीसहिं जिन तणउं सुवानु आयुप्रमानु वर्ण्ड लांछन श्री [illegible] सरीखउं [illegible] छइं। [illegible] विजयनायक श्री [illegible], श्री महाबाहु प्रमुख [illegible] जिन छइं।

§65) तथा पूर्वविदेहोत्पन्नह अपरविदेहोत्पन्नह पूर्वविदेह दक्षिणार्द्धि अपरविदेह दक्षिणार्द्धि [illegible] संस्थित छइं आठ आठ विजय विदेह तीहं माहि उत्पन्नतर [illegible]। [illegible] एक तीर्थंकर रहइं परिवारता करी वांदियइं। [illegible] तीहं तणइ परिवारि वांदियइं। साधु-श्रावक-[illegible]

समयानुसारि जाणिवउं । जि नगरी कही ति मूलभूत भणी कही छइं । अन्यत्रहिं योग्यि देसि वीसइ जिन विहरइं इसउं पुणि जाणिवउं । ति पुणि वीसइ जिन 'संपइय वट्टमाणा' इसि करी जाणिवा ।

§66) 'सव्वे तिविहेण वंदामि' ति अतीत अनागत वर्त्तमान सगलाई जिन 'तिविहेण' मनि वचनि कायि करी 'वंदामि' वांदउं । अथ द्रव्यार्हत अतीत-अनागत, भावार्हतइ जिम किसउं वंदनयोग्य ? अतिशय करी वंदनयोग्य सर्वत्र नाम-स्थापना-द्रव्यार्हत भावार्हत नी अवस्था चित्ति धरी करी नमस्करणीय ।

§67) भरतचक्रवर्ति तिसींही जि परि नमस्करिया । तथा हि-

'एकदा श्रीऋषभदेवः श्रीअयोध्यानगरीपरिसरे समवसृतः । भरतो वंदितुं समागतः । वंदित्वा अवसरे पृष्टवान्-भगवन् ! किं कोऽपि परिषदि जीवोऽस्ति योऽस्यामवसर्पिण्यां जिनो भविष्यति ? । भगवानाह-तव पुत्रः परिव्राजकमतप्रवर्त्तको मरीचि नामा भरते भावी त्रिपृष्ठाभिधः प्रथमो वासुदेवः । विदेहेषु मुकापुर्यां प्रियमित्रनामा चक्री । भरते अत्र श्रीवीरश्चतुर्विंशो जिनः । इति श्रुत्वा भरतचक्री मरीचिं ववंदे । आह च-न ते पारिव्राज्यं वंदे, न चक्रित्वं वंदे, आर्हन्त्यं त्रिजगद्वंद्यं यत्ते भविष्यति तदधुनाप्यहं वंदे । ततः प्रदक्षिणात्रयं दत्त्वा भक्तिनिर्भरो भरतचक्री तं वंदित्वा गृहं गतः । एवमन्यजनैरपि भावार्हतपदवीं मनसि धृत्वा नामार्हतो द्रव्यार्हतः स्थापनार्हतश्च वंदनीयाः' ।

§68) इसी परि द्रव्यार्हतइ रहइं नमस्करणीयत्वइतउ पूर्वसूरि आचीर्णता भावइतउ 'जे अईया' गाहा जुगत हुई । द्रव्यार्हतवंदनारूपु बीजउ अधिकारु । इति प्रथम दंडकु संपूर्णु ।।

§69) तउ पाछइ ऊठी करी-

> चत्तारि अंगुलाइं पुरओ, ऊणाइ जत्थ पच्छिमओ ।
> पायाणं उस्सग्गो एसा पुण होइ जिणमुद्दा ।। [१०२]

एवंरूप जिनमुद्रावर्त्तमानु चैत्यस्तवदंडकु पढइ ।

(२०) अरहंत चेइयाणं करेमि काउस्सग्गं सं० १ ।

अरहंत भावार्हत तीहं ना चैत्य चित्तसमाधिजनक प्रतिमालक्षण अरहंत चैत्य तीहं रहइं वंदनादिक प्रत्यउ काउसग्गु करउं इति क्रियासंबंधु करिवउ । काय नु उत्सर्गु स्थान मौन ध्यान क्रिया पाखइ अपर क्रियांतर परिहारि करी त्यागु काउसग्गु कहियइ । सु करउं किसइ कारणि ?

(२१) वंदणवत्तियाए पूयणवत्तियाए सक्कारवत्तियाए सम्माणवत्तियाए बोहिलाभवत्तियाए निरुवसग्गवत्तियाए । सं० २ ।

§70) वंदनु प्रशस्त मनोवाक्कायप्रवृत्ति लक्षणु । 'तत्प्रत्ययं' तेह नइ कारणि । जिसउं पुण्यु वंदनि कीधइ हुयइ तिसउं पुण्यु काउस्सग्गि करी हुउ इसा अर्थ नइ कारणि । पूजनु गंधमाल्यादिकइं करी, तत्प्रत्ययं पूर्ववत् । 'सक्कारवत्तियाए' सत्कारु वस्त्राभरणादि दानु तत्प्रत्ययं पूर्ववत् । पूजासत्कार द्रव्यस्तवत्वइतउ ।

> छजीवकायसंजमो दव्वथए सो विरुज्झइ कसिणो ।
> तो कसिणसंजमविऊ पुप्फाइयं न इच्छंति ।। [१०३]

षड्विध जीव निकाय संजमो दया परिणामो, 'द्रव्यस्तवे' द्रव्यस्तव विषइ सु दयापरिणामु 'कसिणो' सगळु 'विरुध्यते' विरुद्धउ हुयइ, तिणि कारणि 'कसिणसंजमविऊ' समस्त संजमपंडित

पुष्पादिकु हाथेईं लेवा न वांछइं इति गाथार्थः। 'इत्यादि' वचनहतउ साधु रहइं द्रव्यस्तवु किसी परि[1] उचितु हुयइ। तथा श्रावकि पुणि साक्षात्कारि पूजासत्कार कीधाइं जि छइं इणि कारणि श्रावकहीं रहइं किसी परि उचितु हुयइ। इसउं जेतीवार को भणइ तेतीवार कहियइ। साधु रहइं द्रव्यस्तव निषेधु करणरूपता करी छइं। कारणु अनइ अनुमति मोकलिय जि साधु रहइं छइं।

अकसिणपवत्तगाणं विरयाविरयाण एस खलु जुत्तो। 5
संसारपयणुकरणे दव्वत्थए कूवदिट्ठंतो॥ [१०४]

'अकसिण पवत्तग' देसविरत, 'विरयाविरय' काइं विरत काइं अविरत विरताविरत, श्रावक श्रमणोपासक तींहं रहइं एउ द्रव्यस्तवु खलु निश्चइं जुगतु करिवा समुचितु। 'संसारपयणुकरणे' संसारलघुकरणे द्रव्यस्तवे 'कूव दिट्ठंतो' द्रव्यस्तव विषइ कूपु दृष्टांतु। अथ भावार्थः— जिम कूपि खणीतइ सहू धूलि भरियइ जलि नीसरियइ हूंतइ सगलउ मलु जलपखालि करी जाइ तिम द्रव्यस्तवि कीजतइ 10 जइपि हिं जीवविनासु संभवइ तथापि हिं द्रव्यस्तवि कीधइ कीजतइ अनेकहं जीवहं रहइं संबोधु ऊपजइ। तउ पाछइ जि संबुज्झइं ति सगलाई जीव जां जीवइं तां अथवा जां संसारु तां हिंसा न करइं। तथा च भणितं—

पुढवाईयाण जई वि हु होइ विणासो जिणालयाहिंतो।
तव्विसया वि सदिट्ठिस्स नियमओ अत्थि अणुकंपा॥ [१०५] 15
एयाहिंतो बुद्धा विरया रक्खंति जेण पुढवाई।
इत्तो निव्वाणगया अबाहया आभवमिमाणं॥ [१०६]

इत्यादि उपदेस दानि करी करावणु जइ रहइं संभवइ। भगवंत तणइ विशिष्टपूजा दर्शनि प्रमोदानुभवादिकइं करी अनुमति पुणि संभवइ। इणि कारणि 'पूयणवत्तियाए' 'सक्कारवत्तियाए' इसउं साधु रहइं भणिवा जुगतउं। 20

§71) तथा हि—

सुव्वइ य वयररिसिणा कारवणं पि य अणुट्ठियमिमस्स[1]।
वायगगंथेसु तहा एयगया देसणा चेव॥ [१०७]

'श्रूयते वज्रस्वामिना' सांभलियइ जु वयरस्वामि रिषि 'इमस्स' एह द्रव्यस्तव तणउं कारवणु 'अणुट्ठिउं' कीधउं। यथा— माहेश्वरी नामि नगरी, तिहां श्री वज्रस्वामि पर्युषणा पर्वि संघ नइ उपरोधि 25 ज्वलनप्रभ नाम व्यंतरदेव कन्हा अनइ श्रीदेवी कन्हा पुष्पलक्ष अनइ सहस्रपत्र कमलु आणी करी देवपूजा करावी प्रभावना गरुई कीधी बौद्ध नी मानग्लानि रची। तथा चोक्तं—

जलणगिहाओ माहेसरीइ कुसुमाणि जेणमाणित्ता।
तच्चन्नियाण माणो मलीओ संघुन्नई विहिया॥ [१०८]

'तच्चन्निया' बौद्ध तींहं नउ मानु अहंकारु मलिउ ऊतारिउ। शेषं स्पष्टम्। वायगगंथेसु उमा- 30 स्वातिवाचकविरचित प्रशमरत्यादि प्रकरणइं माहि 'एयगया देसणा।' द्रव्यस्तव करावण विषइ नी देसना उपदेस पद्धति छइं। जउ इसी परि साधु रहइं द्रव्यस्तव विषइ करावणु अनइ अनुमति छइं तउ जिनि श्रावकि पूजासत्कार कीधा हुयइं तेह रहइं भावपूजारूपता करी भक्ति अतिसयसंपत्ति निमित्तु पूजासत्कार प्रार्थनालक्षण एह नउं भणनु अधिकपुण्यनिबंधनु भणीऊ जु हुयइ।

§70) 1 Bh. किम for किसी परि। §71) 1 B. Bh. वंदेतु।

§72) किं च भगवंत तीर्थंकर अति आदरि वांदीता ई पूजीता ई हूंता पुणि तो ई सर्वथा वांदिया पूजिया न हुयइं । अनंतगुण भगवंत, पूजा पुणि परिमित इ जि । तिणि कारणि एह अर्थ विषइ कांइएकु कहियइ–

§73) दशार्णपुरु इसइं[1] नामि नगरु, तिहां[2] दशार्णभद्रु नामि[3] राजा, तिहां दशार्णु नामि 5 गिरि । अनेरइ दिनि श्री महावीरु तिहां समोसरिउ । उद्यानपालकि श्री महावीरसमागमनि करी दशार्णभद्रु राउ वधाविउ । अतिहर्षप्रकर्षं वसइतउ राउ सिंहासन हूंतउ ऊठिउ, श्री महावीर सांमउ[4] सात आठ पग जाइ उत्तरासंगु करी तिहां ई[5] जि थिकउ विधिसउं[6] वांदइ । सिंहासनि बइसी उद्यानपालक रहइं पारितोषिकु दानु दे[7] करी चित्त माहि चीतवइ । प्रभाति तिम किमइ श्री महावीरु वांदिसु जिम अनेरइ किणिहिं[8] न वांदिउ । इसउं ध्यायतइ[9] हूंतइ नगरसोभा करावी प्रभातसमइ स्फारु शृंगारु करी अतिसार 10 अलंकार पहिरी सर्वसमृद्धि सहितु सामंत मंत्रिमंडलेश्वर[10] परिवरिउं सांतःपुरु हस्तिस्कंधममारूढु चतुरंग कटकसमेतु आपणइ[12] लक्ष्मीमदि करी त्रिभुवनु तृण[13] जिम मनतउ[14] हूंतउ श्री महावीरदेव वांदिवा चालिउ । पदि २ गीत नृत्य नाटक कौतुक करावतउ कनकदान रुप्पदान वस्त्रादिदान[15] दियतउ हूंतउ दशार्णभूधर कन्हइ आविउ । गंधसिंधुर हूंतउ ऊतरी करी समवसरण माहि त्रिन्हि प्रदक्षिणा दे करी श्री महावीरु प्रणमी करी यथास्थानि बइठउ ।

15 §74) एतलइ प्रस्तावि सौधर्मेंद्रु अवधिज्ञानि[1] करी तेहं[2] तणउं चित्तु जाणी करी चीतविवा[3] लागउ । अहो ! दशार्णभद्र रहइं विश्वपूज्य पूजन विषइ केयडउ रागु ! । अहह ! परं सु रागु ऋद्धिमददूषण कणि[4] करी कलुषितु । सर्व सुरासुरनरनायक जइ आपणी[5] सर्वसमृद्धि विस्तारी करी तीर्थंकर रहइं समकालु पूजइं तथापि हिं सर्वप्रकर्षि करी पूजितु न होइ । अमानगुणु भगवंतु, पूजा सर्वप्रकर्षकृतइ परिमित इ जि । इणि कारणि एह नउं मानु ऊतारउं । आपणी शक्ति अनइ भक्ति दिखालउं । तउं पाछइ 20 आभिओगिक परावणि देव कन्हा जिसां जंगमपर्वत हुयइं[11] तिसा चउसट्ठिसहस्स हाथिया कराविया । एकै एक हाथिया रहइं पांचसइं[13] पारोत्तर मुख तींहं तणी संख्या त्रिन्हि[14] कोडि सत्तावीसलाख अठसट्ठिसहस्स ३,२७,६८००० । एकि एकि[15] मुखि आठ आठ दांत तीहं तणी संख्या छव्वीस कोडि एकवीसलाख चउतालीससहस्स २६,२१,४४०००[16] । दांति दांति आठ आठ वावि तीहं तणी संख्या बीसइं नवोत्तरकोडि एकहुत्तरिलाख बावनसहस्स २०९,७१,५२००० । वावि वावि आठ आठं कमल 25 तीहं तणी संख्या सोलसइं सतहुत्तरकोडि बहुत्तरिलाख सोलसहस्स १६७७,७२,१६००० । कमलि कमलि एकु एकु लखु पत्र तीहं तणी संख्या सोलै कोडाकोडी सतहुत्तरि[19] कोडिलाख बहुत्तरिकोडिसहस्सै एकुसउसाठु कोडि १६७७,७२,१६०,००००००० [22] । पत्रि पत्रि बत्रीसबद्धु नाटकु । कमलि कमलि

§73) 1 Bh. L. omit. 2 Bh. L. omit. P. तिह । 3 Bh. L. P. इसइ नामि । 4 Bh. L. सामुहउ । P. सामहउ । 5 L. तिहांई । 6 L. विधिसिउं । 7 L. देई । P. omits. 8 Bh. किणिहि । L. कुणहइं । 9 L. ध्यायतई । P. ध्यातइ । 10 L. मंडलेश्वर । P. मंडलेश्वरि । 11 L. परिवारिउ । 12 L. आपन P. आपणपई । 13 P. त्रिण । 14 P. मानतउ । 15 Bh. L. वस्त्रादिकदान ।
§74) 1 Bh. अवधिज्ञानि । 2 P. तेहं । 3 Bh. L. चीतवीवा । P. चितविवा । 4 Bh. L. दूषण तणि । 5 L. omits. 6 Bh. L. पूजइं । 7 L. सर्व प्रकृत । 8 L. नउं । P. एहं नउं । 9 P. तां । 10 Bh. P. ऐरावण । 11 B. हुंतइ । 12 B. एका । L. omits. 13 B. P. पांच पांच सइं । 14 P. त्रिणि । 15 L. omits. 16 P. २४,०००, which is a correction over original ४४,००० । 17 L. अठ अठ । 18 P. सोलह । 19 L. सतहुत्तरि- । P. सत्तहत्तरि । 20 P. बहुत्तरि- । 21 L. साउ । 22 L. १६०० ।

एक कर्णिका तीहं तणी संख्या सोलसइं सवहुत्तरकोडि बहुत्तरिलाखं सोलसहस्स १६७७,७२,
००० । कर्णिका कर्णिका ऊपरि एकु एकु प्रासादु तीहं तणी संख्या सोलसइं सवहुत्तरकोडि बहुत्तरि[23]
३ सोलसहस्स १६७७,७२,१६००० । प्रासादि प्रासादि आठ आठ अग्रमहिषी सहितु श्री सौधर्मेंद्रु
उ इंद्ररूपसंख्या सोलसइं सतहुत्तरकोडि[26] बहुत्तरिलाखं सोलसहस्स १६७७,७२,१६००० । इंद्राणी-
संख्या तेरह कोडिसहस्स चियारिसइं एकवीसां कोडि सतहुत्तरिलाखं अट्ठावीस सहस्स १३,४२१,
,२८००० । नाटकसंख्या पांचसइं छत्रीसां कोडाकोडी सत्तासीलाख कोडि[29] नव कोडिसहस्स एकु सउ
सउं कोडि ५३६,८७०,९,१२०,००००००० । एतलां नाटक जोयतउ हूंतउ एतले रूपे श्री सौधर्म्मेंद्र
ली ऋद्धि विस्तारी करी दशार्ण्णपुर नगर समीपि दशार्ण्णपर्वति आविउ । इसउं कथनु दशार्ण्णभद्र
गइ देवे कहिउं । त्रिन्हि[30] प्रदक्षिणा दे करी गजाधिरूढि श्री सौधर्म्मेंद्रि नमतइ हूंति[31] गज तणा अग्रपाद
म भूमि माहि खूपइं तिम पाषाण माहि खूता । तिणि कारणि गजाग्रपदु इसइ नामि तेउ तीर्थु उत्तमु 10
ककविख्यातु हूयउं । दशार्ण्णभद्र राजा इंद्र तणी ऋद्धि देखी करी ऋद्धिमद रहितु हूंतउ चित्ति चीतवइ ।
हो रूपं ! अहो रूपं ! अहो लक्ष्मीः ! अहो लक्ष्मीः ! अहो अंतःपुरं ! अहो अंतःपुरं ! अहो भक्तिः !
हो भक्तिः[32] ! अहो शक्तिः[33] ! अहो शक्तिः[34] ! कूपमंडूक जिम मइं आपणी ऋद्धि देखी[35] करी
गपवु लाधउं, तिणि कारणि मू रहइं अनर्थदायक ज इय राज्यऋद्धि[36] तेह पाखे मू रहइं सरिउं !
सउं[37] ध्याई करी पंचमुष्टिकु लोचु करी श्री महावीर समीपि दीक्षा लीधी । तउ इंद्रु आपणपउं जीतउं 15
मानतउ हूंतउ दशार्ण्णभद्र राजऋषि ने पाए पडिउ । धन्यु धन्यु तउं जिणि तइं[38] दुःपूर प्रतिज्ञा पूरी
कीधी । जिणि मोहि हउं जीतउ, तेउ[39] मोहु पंचमुष्टिकु लोचु करतइ हूंतइ तइं पंचावत्थु करी लूसिउ[40] ।
पुनरपि पुनरपि इसी परि[41] इंद्रु दशार्ण्णभद्र रहइं संस्तवी संस्तवी देवलोकि पहुतउ । दशार्ण्णभद्र राजऋषि
केवलज्ञानु ऊपाडी सकल कर्म्मक्षउ[42] करी मोक्षि गयउ ।

इसी परि पूजासत्कार भावस्तवरूपत्वइतउ भणनीय जि । 'सम्माणवत्तियाए' सन्मानु स्तवनादिकहं 20
करी गुणोत्कीर्त्तनु 'तत्प्रत्ययं' पूर्ववत् । ए वंदनादिक आशंसा किसइ कारणि इत्याह–'बोहिलाभवत्तियाए'
बोधिलाभु भवांतरि जिनधर्म्म नी प्राप्ति, 'तत्प्रत्ययं' बोधिलाभप्राप्ति पुणि किसइ कारणि इत्याह–'निरु-
वसग्गवत्तियाए' निरुपसर्गु जन्मादिकहं उपद्रवहं रहितु मोक्षु 'तत्प्रत्ययं' । एउ काउसग्गु श्रद्धादिकहं
पाखइ बहुफलु न हुयइ इत्याह–

(२२) सद्धाए मेहाए धीए धारणाए अणुप्पेहाए वड्ढमाणीए ठामि काउसग्गं । 25
सं० । ३ ।

§75) 'श्रद्धया' वासना करी आपणइ भावि न पुणि बलाभियोगि । 'मेधया' हेयोपादेयरूप
बुद्धिभावि करी न पुणि जडभावि करी, अथवा 'मर्यादया' मेराभावि न पुणि असमंजसभावि करी ।
'धृत्या' मनः सुस्थताभावि न पुणि रागादिदोष कलुषित भावि करी । 'धारणया' अर्हंतगुण अविस्मरणरूप
मनिःस्थिरता तिणि करी, न पुणि शून्य भावि करी । 'अनुप्रेक्षया' अर्हंत ना जि गुण तींहीं जि नउं पुनरपि 30
पुनरपि चिंतनु तिणि करी, न पुणि तेह नइ अभावि करी । 'वर्द्धमानया' श्रद्धादिकहं सत्तहीं पदहं
'वर्द्धमानया' इसउं पदु संबंधियइ । वर्द्धमान श्रद्धा करी, वर्द्धमान मेधा करी इत्यादि । एवमादिकहं
हेतुहं करी 'ठामि काउसग्गं' ।

23 P. वत्तरि । 24 L. सोलसइं सत्तहुत्तरि बहुत्तरि कोडि । P. सोलसइ सत्तहत्तरि कोडि बहत्तरि । 25 Bh. P.
इंदरुपु–। L. इंदरुपि । 26 L. सतहुत्तरि । P. सतहत्तर । 27 P. बहत्तरि । 28 Bh. L. सत्तहुत्तरि । P. सतहत्तरि ।
29 P. सताछी–। 30 P. त्रिणि । 31 Bh. L. P. हूंतइ । 32 P. omits. 33 P. सक्तिः । 34 P.
omits. 35 Bh. L. omit. 36 L. राज्ये ऋद्धि । 37 L. इसउं । P. इसउ । 38 L. omits. P.
तइ । 39 P. तउ । 40 P. omits. 41. L. omits. 42 L. धर्म्मक्षउ ।

वसुदेव तीहं रहइं पूज्यु इति वसुपूज्यु, वसुपूज्यु जु वासुपूज्यु १२ । निरुक्तिवसइतउ नीपजइ इति सामान्य अर्थु । वसुपूज्यराय नउ दीकिरउ वासुपूज्यु इति विशेषनामु । १२ ।

विमलज्ञानादिक गुण एह रहइं अथवा विमलु निर्मलु एउ इति विमलु १३ । इणि गर्भि स्थिति हूंतइ माता नी मति मलरहित हुई, तनु पुणि विमल हुई इति विमलु । १३ ।

5 अनंतकर्म्म ना अंश जीता इणि इति अनंतजित् । अथवा अनंतज्ञानादिक गुण एह रहइं हूया इति अनंतु १४ । इणि गर्भि वर्त्तमानि अनंतु रत्नदामु माता स्वप्नि दीठउ इति अनंतु वि० १४ ।

दुर्गति पडता जंतुसंघात रहइं धरइ इति धर्म्मु १५ । गर्भस्थिति स्वामी हूंतइ माता दानादि धर्म्मपर हुई इति धर्म्मु । १५ ।

शांतिक्षमातन्मयत्वइतउ शांति १६ । गर्भस्थिति इणि पूर्वजात अशिव नी शांति हुई इति 10 शांति । १६ ।

§82) कु पृथिवी तेह माहि थिउ रहिउ इति निरुक्तिवसइतउ कुंथु १७ । इणि गर्भि स्थिति हूंतइ मातां रत्नविचित्रु[1] कुंथु जीवु दीठउ । अथवा अरि कुंथु सरीखा पिवा रहइं हूया इति कुंथु । १७ ।

भव्य जीवहं रहइं संसारपातकारि रागादि मति न राति न दियइं इति अरु १८ । गर्भि थिकइ इणि सर्वरत्नमउ अरउ चक्रावयवु मातां स्वप्नि दीठउ इति अरु । १८ ।

15 परीषहादि मल्लजयकरणइतउ मल्लि १९ । आर्षत्वइतउ इकारु । इणि गर्भि स्थिति हूंतइ माता रहइं सर्वऋतु कुसुममालाशयनीय दोहलउ देवता पूरिउ इति मल्लि । १९ ।

जग रहइं त्रिकालावस्थानु मनइ इति मुनि शोभनव्रत एह नां इति सुव्रतु । जु मुनि पुणि सुव्रतु पुणि हुयइ सु मुनिसुव्रतु २० । इणि गर्भि वर्त्तमानि माता मुनि जिम सुव्रत हुयई इति मुनिसुव्रतु । २० ।

परीषहादि नामनु करइ इति नमि २१ । गर्भस्थिति हूंतइ इणि प्रत्यंतराय नगरविरोधक भगवंत 20 मातृदर्शनवसइतउ उपशमिया नमिया इति नमि । २१ ।

अरिष्टु दुरितु तेह विषइ नेमि चक्रधारा जिसी हुयइ तिसउ इति अरिष्टनेमि । २२ । गर्भस्थिति हूंतइ परमेश्वरि माता रिष्टरत्नमय नेमि स्वप्न माहि दीठउ इति रिष्टनेमि २२ । एह हूंतउ अनेरउ रिष्टनेमि नहीं इति अरिष्टनेमि । २२ ।

सर्वभाव देखइ इति निरुक्तिवसइतउ पार्श्वु २३ । इणि गर्भि स्थिति हूंतइ रात्रि समइ अंधकारि[2] 25 थालदारणु सर्पु रायहस्त पार्श्वि जायतउ मातां दीठउ इति पार्श्वु । २३ ।

उत्पत्ति लगी ज्ञानादि गुणइं करी वाधइ इति वर्द्धमानु २४ । इणि[3] गर्भि स्थिति हूंतइ ज्ञातकुलु धनधान्यादि भावि वाधिउं इति वर्द्धमानु २४ । तथा महावीरु इसउं बीजउं नामु प्रसिद्धउं । जिम महांतु वीरु सुभटु आपणा वइरी एकलउ थिकउ जिणइ तिम अंतरंग वयरी आठकर्म्म जीतां तिणि कारणि महावीरु २४ । जन्मस्नान समइ इंद्रसंसय फेडिवा कारणि महांतु अवि पर्वतु मेरु जिणि 30 वामपादांगुलि चांपी करी ईरिउ कंपाविउ सु महावीरु । २४ ।

§83) इसी परि कीर्त्ता करी चित्तशुद्धिनिमित्तु प्रणिधानु कहइ । 'एवं मए' इत्यादि । 'एवं' पूर्वोक्तप्रकारि 'मए' मइं 'अभिथुया' अभिथुता नामे करी कीर्त्तिया कहिया । जि किसा 'विहूयरयमला' जु बांधियइ रउ, कर्म्मु सु रजु, पूर्वइ जु बाधउं सु मलु । अथवा जु बद्धु सु रजु निकाचितु जु सु मलु ।

§82) 1 Bh. °चित्रु । 2 Bh. °अंधकारि । 3 Bh. places इणि after गर्भस्थिति हूंतइ ।

अथवा ईर्यापथकर्म्मु रजु संपराय कषाय तीहं करी जु कीधउं सु मलु कर्म्मु । ति बे रजु अनइ मलु
जीहं विधूत विनष्ट कीधां ति विधूत रजोमल । इणिहिं जि कारणि 'पहीणजरमरणा' जरामरण रहित
चतुर्विंशतिरपि जिनवरा । उपशांत मोहादि जिन हूंता वरजिणवर, तीर्थंकरा 'पसीयंतु' मू रहइं प्रसादपर
हुयउं । जइ वीतराग तउ प्रसन्न किम हुयइं ? जिम चिंतामणि कामधेनु कल्पद्रुमादिक पदार्थ अज्ञानइ
हूंता रागु अनइ द्वेषु कही ऊपरि न करइं । तथापि हिं आराधक रहइं वांछितकारक हुयइं । इसी परि 5
तीर्थंकर पुणि आराधिता हूंता प्रसादपर वांछितपूरक हुयइं । चित्तशुद्धि करी पुण्यबंधु हुयइ । पुण्य-
वशइतउ सर्वसमीहितसिद्धि हुयइ । तेह रहइं कारण तीर्थंकर परंपरा करी इति प्रसादपरा भवंति ।

§84) तथा 'कित्तिए'त्यादि । कीर्त्तिया[1] नामही जि करी भणिया वंदिया काय-चित्त-वचनहं करी
स्तविया, महिया पुष्पादि सुरभिद्रव्यहं करी पूजिया 'जि ए' ऋषभादिक 'लोगस्स उत्तमा,' लोकु प्राणिवर्गु
तेह माहि कर्म्ममलाभावि करी उत्तम 'लोगस्स उत्तमा'। 'सिद्धा' निष्ठितार्थ कृतकृत्य सांसारिक[2] कार्य तणा 10
अभावइतउ । अरोगु नीरोगु तेह नउ भावु आरोग्यु मोक्षु तेह निमित्तु बोधिलाभु जिनधर्म्म नी प्राप्ति सु
दियउं । बोधिलाभाशंसनु निदानु न हुयइं । उत्तरकालि मोक्षपरिणामइतउ बोधिलाभनिमित्तु कहइ ।
'समाहिवरं' वरसमाधि सुस्थतारूपभाव समाधि । सु समाधिगुणुं बहु बहुतर बहुतमादिकहं भेदहं करी
अनेकप्रकारु हुयइ इत्याह 'उत्तमं' सर्वोत्कृष्टु ।

§85) भावसमाधिगुण प्रकटीकारकु जिनदत्त श्रेष्ठि कथानकु लिखियइ । इत्याह[1]– 15

वैशालि नामि नगरी । तिहां छद्मस्थु श्री महावीरु एकवार उद्यानवनि वर्षाकालि देवकुल माहि
काउस्सग्गि रहिउ । तिणि नगरी परमश्रावकु जिनदत्तु नामि हूंतउ श्रेष्ठिपद भ्रष्ट हूंतउ जीर्णश्रेष्ठि इसइ नामि
सुविख्यातु हूयउ । भिक्षाभ्रमण तणइ अभावि करी श्री वीरु उपोषितु जाणी करी वांदी करी घरि आविउ ।
इसी परि नितु नितु करतइ वरसालउ तिणि लांघिउ । आपणा मन माहि चीतवेवा लागउ । 'जइ किमइ
आजु माहरइ घरि श्री महावीरु पारणउं करइं तउ हउं तारिउ हुयउं'। इसउं ध्यायतउ हूंतउ विशुद्धभावि 20
हर्षितचित्तु घरबारि रही करी चीतवइ । 'जइं ईहां श्री महावीरु आवइ जंगम कल्पद्रुम जिम, तउ हउं
मस्तकि बद्धांजलि हूंतउ भगवंत रहइं संमुखु जाउं । त्रिन्हि प्रदक्षिणा दे करी सपरिवारु थिकउं वांदउं ।
तउ पाछइ घर माहि पाउ धारावउं[9] । जंगम निधान त्रिन-प्रधानहं[10] प्रासुकेषणीयहं पानाशनहं करी
भक्तिवसइतउ भवसिंधु तारणउं पारणउं करावउं । पुनरपि नमस्करी करी केतलाई एकि पग भगवंत रहइं
अनुगमनु करउं । पाछइ आपणपउं[11] धन्यु मनतउ हूंतउ आपणपइं शेषु ऊगरीउं[12] धान्यु हर्षितु 25
थिकउ जीमिसु' ।

इसी परि मनोरथमाला जिनदत्त रहइं मन माहि करता हूंता, अभिनवश्रेष्ठि नइ घरि भिक्षा-
निमित्तु श्री महावीरु आविउ । अभिनवश्रेष्ठि चेडी[13] हस्तगत कोमासहं करी पाराविउ । सुपात्रदान प्रभावि
पंच दिव्य तिहां हूयां, तिहां राजादिलोक[14] मिलिया । अभिनवु श्रेष्ठि प्रशंसिउ[15] । भगवंतु श्री महावीरु
पारणउं करी अनेरइ थानकि विहरिउ । जिनदत्तु देवदुंदुभि निनादु सांभली करी चीतविवा[16] लागउ, 30
'धिग् मू रहइं । अधन्यु हउं जु माहरइ घरि भगवंतु न आविउ' । इसी परि महाविषादु करतउ जिनदत्तु
लोकि जाणिउ । किं बहुना ? राजेंद्रि पुणि जाणिउ धन्यु जिनदत्तु जु[17] इसी परि भावना भावइ ।

§84) 1 B. omits. 2 Bh. संसारिक । 3 Bh. omits गुणु । §85) 1 Bh. L. omits भाव–।
2 Bh. L. omit. 3 L. चींतवेवा । P. चींतविवा । 4 P. कर । 5 L. P. चींतवइ । Bh. चेंतवइ ।
6 Bh. L. omit. 7 P. त्रिणि । 8 Bh. थकउ । P. omits. 9 P. धारउं । 10 B. Bh. L. त्रिम
प्रधानहं । 11 P. omits पुनरपि......आपणपउं । 12 P. ऊगरिउ । 13 L. तेदी । 14 Bh. L. P.
राजादिक लोक । 15 L. प्रशंसउ । 16 Bh. L. P. चींतविवा । 17 ... omits.

§86) तदा तिणि नगरी केवली आविउ । राजादिक[1] लोक[2] वांदी पूछिउ, 'भगवन्! जिनदत्तु पुण्यवंतु किं[3] या अभिनवु पुण्यवंतु?' केवली कहइ, 'जिनदत्तु पुण्यवंतु'। लोकु कहइ, 'भगवन्! भगवंतु अभिनवि पाराविउ जिनदत्ति न पाराविउ।' केवली तेह नी भावना मूल लगी कही करी कहइ, 'भावइतउ जिनदत्ति पाराविउ। द्रव्यइतउ[4] पुणि अभिनवि। अच्युतदेवलोकयोग्यु पुण्यु ऊपार्जिउं,
5 अइ देवदुंदुभिनिनादु सांभलत[5] नहीं तउ तेतींहीं जि वार केवलज्ञानु ऊपाडत[6]। भावरहिति अभिनवि[7] पुणि सुपात्रदान प्रभावि सुवर्णवृष्ट्यादिकु फलु लाधउं। समाधिरहितु जीवु इंहिकूं[8] जु फलु लहई[9], समाधिसहितु पुणि स्वर्गमोक्षादिकु फलु लहईं[10]'। तउ पाछइ जिनदत्त नी प्रशंसा करी राजादिक लोक घरे गया। समाधिविषइ जिनदत्त कथा।

तथा च भणितं—'चउवीसत्थएणं भंते किं जणइ।
10 गोयमा, चउवीसत्थएणं दंसणविसोहीं जणइ'।

§87) तथा 'चंदेसु[1] निम्मलयरा' कर्म्ममलकलंक तणा अपगमइतउ चंद्रहीं हूंता निर्म्मलतर विसुद्धतर। केवलालोकि करी लोकालोकप्रकाशकारकत्वइतउ[2]। आदित्यहीं तउ[3] अधिकप्रकाशकर। तथाहि—

चंदाइच्चगहाणं पहा पयासइ परिमियं खित्तं।
केवलियनाणलंभो लोयालोयं पयासेइ॥ [११४]

15 'सागरवरु' स्वयंभूरमणु समुद्र, तेह जिम 'गंभीर', परीषहादि क्षोभ अभावइतउ। 'सिद्ध' क्षीण अशेष कर्मसिद्धि परमपदप्राप्ति[1] मू रहइं 'दिसंतु' दियउं।

§88) अडवीसपयपमाणा इह संपयवन्न दुसयछप्पन्ना।
नाम जिणत्थयरूवो चउत्थओ एस अहिगारो॥ त्रीजउ दंडकु। [११५]

एवं चतुर्विंशतिस्तवु भणी करी सर्वलोक अर्हंत चैत्यवंदननिमित्तु काउस्सग्गु करिवा कारणि इसउं
20 पढइ। 'सव्वलोए अरहंत चेइयाणं' इत्यादि 'वोसिरामी'ति यावत्। अर्थु पूर्व जिम।

§89) न वरं 'सव्वलोए' अधोलोक तिर्यग् लोक ऊर्ध्वलोकरूपि सर्वलोकि, तउ अधोलोकि चमरादिभवनहं माहि सातकोडि बहुत्तरि[1] लाख संख्यहं, तिर्यग्लोकि असंख्यातहं व्यंतरनगरहं माहि, नंदीश्वरादिद्वीपहं माहि बावननंदीसरि, च्यारि मानुषोत्तरि च्यारि कुंडलि च्यारि रुचकि[2] तथा वर्षधरादिपु तथा अष्टापदसंमेतशिखरि श्री उज्जयंतगिरि श्री शत्रुंजय धर्म्मचक्र गजाग्रपद प्रमुख
25 चैत्यहं तथा असंख्यात ज्योतिष्कविमानहं माहि ऊर्ध्वलोकि सौधर्म्मादि देवलोकि विमान माहि चउरासीलाख सत्ताणवइसहस्स तेवीस[3] संख्यहं चैत्यहं वंदनादि प्रत्यउ काउस्सग्गु करउं। इणि हिं जि कारणि स्तुति सर्वजिनसाधारण कहियइं। एउ सर्वलोकस्थापनार्हत्स्तव नामु पांचमउ अधिकारु।

§90) सांप्रतु जिणि करी अर्हंत जाणियइं, जीवाजीवादिकतत्व पुणि जाणियइं, तेउ श्रुतु स्तवणहारु हूंतउ पहिलउं तेह श्रुत रहइं कारक तीर्थंकर स्तवइ। 'पुक्खरवरे' त्यादि। पुष्करवरु द्वीपु त्रीजउ
30 द्वीपु। तेह नइ अर्द्धि मानुषोत्तरु पर्वतु तेह हूंतउं उलिउं अर्द्धपुष्करवरद्वीपार्द्धु। तिणि अनइ धातुकी खंडि बीजइ द्वीपि अनइ जंबूद्वीपि प्रथमद्वीपि जि भरत ऐरवत महाविदेह, एकवचनु प्राकृतवसइतउ। तउ पाछइ

§86) 1 Bh. L. राजादिके। 2 Bh. L. लोके। 3 L. यदि। 4 Bh. द्रव्यतउ। and puts पुणि after अभिनवि। 5 P. सांभलतां। 6 P. उपार्जत। 7 L. omits. 8 Bh. इंहिकु। L. इंह हू। P. इह लोके। 9 L. हुवइ। 10 हुवइ। §87) 1 Bh. —त्वात्कत्व—. 2 Bh. हंतउ। 3 B. adds मन। §88) 1 Bh. —वंदन—. 2 B. Bh. अरहंत। §89) 1 B. Bh. बहत्तरि। 2 B. रुचकि।

पांच भरत, पांच ऐरवत, पांच महाविदेहरूप पंचदशसंख्यहं क्षेत्रहं माहि । धर्म्मु श्रुतधर्मु तेह रहइं आदिकर, धर्म्मादिकर तीर्थंकर ति 'नमंसामि' नमस्करउं स्तवउं । एउ पनरह कर्म्मभूमिगत भावार्हत-स्तवाभिधानु छट्ठउ अधिकारु ।

§91) अथ श्रुतधर्म्मु स्तवइ । 'तमतिमिरे' त्यादि । तमु दर्शनमोहनीयकर्म्मोदयरूपु[1] अज्ञानु तेऊ जु तिमिरु अंधकारु तेह नउं पडलु वृंदु तेह रहइं 'विध्वसइ' विनाशइ इति तमतिमिरपटल विध्वं-सणु । तेह रहइं वांदउं । सु पुणि किसउं छइ इत्याह–'सुरगणे' त्यादि सुरगणनरेंद्रमहितु । तथा 'सीमाधरे'ति सीमा धर्ममर्यादा तिणि जीव रहइं धरइ इति सीमाधरु । तेह[2] रहइं[3] 'वंदे' वांदउं स्तवउं । अथवा तेह नउं जु माहात्म्यु सु 'वंदे' वांदउं स्तवउं । तेऊ जु कहइ–'पप्फोडिये' त्यादि । प्रकर्षि करी फोडिउं विनासिउं मोहजालु चारित्रमोहनीयकर्म्मोदयलक्षणु अज्ञानपटलु सहज बोधवंतहं जीवहं रहइं जिणि सु पुप्फोडिय मोहजालु तेह रहइं वांदउं ।

§ 92) अनी किसउं छइ ? 'जाइजरे' त्यादि । जाति जन्मु जरा वडपणु मरण परलोकीभवनु शोकु विषादु इहं सवहीं जात्यादिकहं रहइं 'पणासइ' विनासइ इति जाइजरामरण सोगपणासणु तेह रहइं नमस्करउं । अनी किसउं छइ ? 'कल्लाणे'ति । कल्यु आरोग्यु तेह रहइं 'अणइ' बोलइ अथवा 'आणइ' पमाडइ इति कल्लाणु । पुक्खलु संपूर्णु । तेऊ अल्पु नहीं किंतु विशालु विस्तीर्णु इसउं विशेषणत्रयसहितु सुखु निरुपमानंद रूपु 'आवहइ' करइ इति कल्लाणपुक्खलविसालसुहावहु, तेह रहइं वंदे । अनी किसउं छइ ? 'देवे' त्यादि । देवदानवनरेंद्र गणहं करी अर्चितु पूजितु । तेह रहइं वंदे । पूर्विहिं सुरगणनरेंद्रमहितु इसइ भणिइ को जाणिसिइ ऊर्ध्वलोक तिर्यग्लोकहीं जि माहि पूजितु त्रैलोक्य माहि पूजितु नहीं इणि कारणि कहिउं 'देवदाणवनरेंदगणच्चियस्स' । ईहां दानवपदि करी त्रैलोक्यपूज्यता कही । अथवा एवं विशेषण सहित धर्म्म श्रुतधर्म्म तणउं सारु सामर्थ्यु उपलभी[1] जाणी करी 'करे पमायं' प्रमादु कउणु करइ अपि तु को न करइं ।

§93) एह अर्थ विषइ संप्रदायः—

एकि[1] गच्छि गंगातटि धास्तव्य बि भाई संयमधर हुंता विहरइं । तीहं माहा[2] एकु बहुश्रुतु हुंतउ सूरि हूयउ । पाठकशिष्यहं तथा सूत्रार्थवांछकहं सदा सेव्यमानु हुंतउ विश्रामु कदाचितु लहइ नहीं । रात्रि समइ पुणि सूत्रार्थ-चिंतन-प्रछनादिकहं करी विश्रामु न लहइं । तेह नऊ बीजउ भाई मूर्खु सदा सुखि रहइ । आचार्यु तेह नउं सुखु देखी दुर्बुद्धिबाधितु हुंतउ चित्ति चीतवइ, 'अहो माहरउ भाई सुखिउ । ज्ञानविज्ञानहीनता करी किणिहिं ऊदेगियइ नहिं । हउं पुणि[3] पलासकुसुम जिम[4] निष्फलि ज्ञानि करी दुक्खिउ हूयउ । तथा च किणिहिं तेह सरीषइ पंडिति पढिउं—

> भूर्खत्वं हि सखे ममापि रुचिरं तस्मिन् यदष्टौ गुणाः
> निश्चिंतो १ बहुभोजनो २ ऽत्रपमना ३ नक्तं दिवा शायकः ४।
> कार्याकार्यविचारणेऽन्धबधिरो ५ मानापमाने समः ६
> प्रायेणामयवर्जितो ७ दृढवपु ८ र्मूर्खः सुखं जीवति ॥　　[११६]

इसउं पुणि न चीतवइं—

> नानाशास्त्रसुभाषितामृतरसैः श्रोत्रोत्सवं कुर्वतां
> येषां यांति दिनानि पंडितजनव्यायामखिन्नात्मनाम् ।

§90) 1 Bh. त्रैवीस । §91) 1. Bh. कर्मेन्दु । 2 Bh. omits. 3 Bh.omits. §92) 1 Bh.-लम्भ ।

तेषां जन्म च जीवितं च सफलं तैरेव भूर्भूषिता
शेषैः किं पशुवद्विवेकविकलैः भूभारभूतैर्नरैः ॥ [११७]

इसी परि ज्ञानप्रद्वेषवसइतउ तिणि ज्ञानावरणीउ कर्म्मु निबडु प्रमाद लगी बाधउं[6] । सु ज्ञानातिचारु अणआलोई चारित्रु पाली मुयउ[7] । चारित्र प्रभावि देवलोकि देवु हुयउ । चवी करी भरतक्षेत्रि[8] किणिहिं आहीरकुलि पुत्रु हुयउ । अनुरूप कन्या परिणिउ । तेह नइ दीकिरी[9] जाई । सुरूप तरुणपुरुषलोचन मनोहरिउं जूवनु[10] संप्राप्त हुई । गाडा नइ धुरि[11] सु दीकिरि[12] बइसाली[13] तेह नउ पिता नगरि चालिउ । आहीरहं सरसउं[14] घी विक्रय करिवा कारणि । तेह नउं रूपु देखतां हूंता अनेरां आहीरहं[15] तणां मनहं जिम गाडां पुणि अपमार्गि जायतां भागां । घी रेडायां[16] । तउ विलक्ष थिका[17] आहीर तेह ना पिता आगइ कहइं । 'अशकटा शकटा-पिता' । इसउं उपहासवचनु वली २ कहइं । एह नउ किसउ[18] अर्थु ?
10 जेह नइ शकटु न हुयइं स अशकटा, अथवा ए कन्या नामि करी शकटा नहीं इति अशकटा । तथा अशकटापिता अशकटा नउ पिता जनकु अशकटापिता । अथवा शकटापित शकटप्रापित हूंता अम्हे इणि अशकटापित शकटरहित कीधा । इसउ अर्थु सांभली करी लघुकर्मता लगी वैराग्यप्राप्तउ हूंतउ दीकिरी[19] कही सउं[20] परिणावी करी धनु तेह रहइं दे करी व्रतसंप्राप्तु हुयउ । कहिं[21] आचार्य कन्हइ योग वहता हूंता आदरपरायण पढता हूंता जहिंवार उत्तराध्ययनसिद्धांत नउं चउथउं अध्ययनु 'असंखउं'
15 इसइ[22] नामि पढिवा आरंभिउं तेतीवार पूर्वबद्धु[23] ज्ञानावरणु कर्म्मु उदइ आविउं । बि दीह आंबिल करी पढतउ थाकउ तेह रहइं[24] वृत्त तो ई आवियां नहीं । किं बहुना ? एकू पदु आविउं नहीं । बीजइ दिनि अनुज्ञा समइ गुरु कहइ, 'किसा भी अनुज्ञा तू रहइं दीजइ ?' सु कहइ, 'भगवन् । किसउ तपु एह नउ ?' गुरु भणइ, 'जां आवइ नहीं[25] तां आंविलु तपु' । तउ सु भणइ 'भगवन् मू रहइं अनेरइ तपि करी सरिउं[26], सिद्धांति पुणि अनेरइ सरिउं । जां एउ नहीं आवइ तां आंबिल इ जि करिसु ।' तउ
20 पाछइ निश्चल चित्ति हूंतइ बारह वरस[27] आंबिल चित्तसमाधिपूर्वक[28] कीधां । तउ तेह कर्म्म नउ क्षउ हूयउ[29] । सुखिहिं सगलूं श्रुतु पढिउं । श्रुतभक्ति करी इहलोकि सुखभाजनु हूयउ । जिणि कारणि श्रुतभक्ति इसी इत्यादि ।

§94) 'सिद्धे भो पयओ' इति । सिद्धु किसउ अर्थु ? अर्थवृत्ति करी नित्तु अथवा अविसंवाद-इतउ प्रसिद्धु प्रमाणप्राप्तु । तेह सिद्ध जिनमतनिमित्तु प्रयतु सावधानु हउं । 'भो' इसउं अतिशय ज्ञानवंतहं
25 रहइं आमंत्रण । अतिशयज्ञानवंत जाणउं हउं सिद्ध जिनमत निमित्तु प्रयतु सावधानु थिकउ 'नमो' इति नमस्कारु करउं । सिद्ध जिन प्रवचन नमस्कारि कीधइ हूंतइ मू रहइं 'सया' सदा संयम चारित्रु तेह

§93) 1 P. एक । 2 L. माहि । P. माहिं । 3 P. पुण । 4 P. omits. 5 L. इषिरे । 6 L. प्रमाद लगी निबिडु बाधउं । Bh. निबडु प्रमादु लगी बाधउं । P. निबडु प्रमाद लगी बाधउ । 7 L. मूओ । 8 L. भरति-। 9 P. दिकरी । 10 L. यौवनु । P. यौवन । 11 L. धरि । 12 Bh. L. दीकिरी । P. दिकरी । 13 Bh. L. बइसारी । 14 Bh. सरिसउ । L. सरसउ । 15 L. आहिरे । P. अहिरहं । 16 P. घरे गया । 17 Bh. P. थका । 18 L. किस्यउ । 19 P. दीकरी । 20 Bh. इसउं । L. सिउं । P. सउ । 21 All the mss. have कहीं which has no meaning here, and which may be a result of कही in the preceding line. 22 L. इस्यइ । Bh. इसइं । 23 Bh. (in the margin); L. पूर्वभवबद्धु । 24 B. Bh. तेरह । L. तेरहं । 25 L. omits. 26 P. सरिसउ । and adds a sentence; सिद्धांतु पुणि अनेरहं तपि करी न्हिसउं । which is, evidently, a false repetition. 27 Bh. P. वरिस । 28 Bh. L. omit चित्त । P. -पूर्वं च । 29 L. reads तउ तेह नउ कर्म्मक्षय हूयउ and omits सुखिहिं……हूयउ । This second line is added in the margin of B.

न तिम जेसी वृद्धि हुया इसउं आवइ जाणिवउं । 'पढमं नाणं तओ दया' इत्यागमवचनहंतउ श्रुतज्ञान ते हि ज चारित्रवृद्धिकारण हुयइ । इसी श्रुत श्रुतधर्म हूंतउ चारित्रधर्म वृद्धि थाइंसनु । मु [illegible] किसउं छइ ? 'देवेत्यादि' । देव वैमानिक नागपातालादिक सुवर्णज्योतिष्कुमार किंनर- [illegible] हीं सउ मनुइं मनुष्यादि करी मनमाहि करी अर्चितु पूजितु सु 'देवं नागसुवन्न- [illegible] वंदिवउ । तेह निमित्तु नमस्कारु । 'देवं' ईहां अनुस्वार, 'समवृत्त' ईहां वि 5
[illegible] [illegible] । अथवा [illegible] । पुनरपि सु सिद्धांतिवद्ध विशिष्टउं कीजइ । 'लोगो जत्थे'ति । [illegible] करी इसी लोकु सानु सु लोकु सानु जेह माहि प्रतिष्ठिउं, जेह वशि आपणा [illegible] करी वर्त्तं, इसउ अर्थु । यथा '[illegible]' । जगु त्रैलोक्यु ऊर्ध्व अध तिर्यग्लोकलक्षणु 'इदं' इउ, [illegible] करी [illegible] करी प्रतिष्ठिउं, जिहीं तिसउं सु छइ । 'मच्चासुरं' मनुष्यदेवरूपु 'धायेउ' [illegible] करी [illegible] । 'मच्चासुरं' [illegible] नारकतिर्यग्रूपु पुणि 10
[illegible] त्रैलोक्य माहि छइ सु 'मच्चासुरं' [illegible] । 'मच्चासुरं' [illegible] अर्थवृत्ति करी निगु, 'विजयओ' [illegible] । [illegible] पनुं श्रुतधर्मु वृद्धि जाउ । [illegible] अर्थवृत्ति करी निगु, 'विजयओ' [illegible] । [illegible] चारित्रधर्म प्रधानु जिम हुयइ तिम श्रुतधर्मु 'वड्ढउ' वाधउ ।
[illegible] । 'धम्मुत्तरं' चारित्रधर्म प्रधानु जिम हुयइ तिम श्रुतधर्मु 'वड्ढउ' वाधउ । [illegible] 'धम्मो वड्ढउ सासओ' ईहां वृद्धि । बीजीवार 'धम्मुत्तरं वड्ढउ' ईहां वृद्धि

§95) [illegible] 'धम्मो वड्ढउ सासओ' ईहां वृद्धि । बीजीवार 'धम्मुत्तरं वड्ढउ' ईहां वृद्धि [illegible] बीजी [illegible] ज्ञानवृद्धि करेवी इसा अर्थ नइ कारणइ [illegible] करीया निमित्तु पढइ, 'सुयस्स भगवओ 15
'सुयस्स भगवओ' श्रुतभगवंत रहइं वंदनादि [illegible] काउस्सग्गु करीया निमित्तु पढइ, 'सुयस्स भगवओ [illegible] । अर्थु पूर्व तिम । न वरं सुनु सामायकादि चतुर्दशपूर्वपर्यंतु [illegible] इति कारणि परंपरपर्यंतु तेह रहइं काउस्सग्गु [illegible] करउं, इसउ [illegible] करिवउ । इसी पुणि ईहां सुत गती करेवी ।

§96) सुयनाणस्स [illegible] अहिगारो एस सत्तमओ ।
इह दसमंतस्स गोत्तस्स तदुणगाहस्स दुतियगा ॥　　　　[११८]　　20

[illegible] ।
§97) अथानंतर सर्वानुष्ठानफलभूत सिद्ध नमस्करीया निमित्तु इसउं पढइ 'सिद्धाणं बुद्धाणं- [illegible]' । सिद्ध निष्ठितार्थ किसउ अर्थु ? इसु कर्मि नि पुणि लोक माहि-
कम्मे १ सिप्पे २ य विज्जाए ३ मंते ४ जोगे ५ य आगमे ६ ।
अत्थ ७ जत्ता ८ अभिप्पाए ९ तवे १० कम्मक्खए ११ इय ॥　　　　[११९]　　25
इसा सन्नाइंतर अनेकविध । यथा-कर्मसिद्ध १, शिल्पसिद्ध २, विद्यासिद्ध ३, मंत्रसिद्ध ४, [illegible] अभिप्राय-
योगसिद्ध ५, आगमसिद्ध ६, अर्थसिद्ध ७, यात्रासिद्ध ८, अभिप्राउ बुद्धि तिणि करी सिद्ध अभिप्राय-
सिद्ध ९, तपःसिद्ध १०, कर्मक्षयसिद्ध ११, इति । इणि कारणि भणइ बुद्ध ज्ञाततत्त्व, पारगत [illegible], अथवा गर्भसंसारपारगत । परंपरागत चतुर्दशगुणस्थानाधिरोहलक्षण परंपरा, अथवा [illegible] गया तेह संप्राप्त हुंता किसा हुया इत्याह- 30
[illegible] ।
'लोगग्गमुवगया' सिद्धिक्षेत्रि संप्राप्त हुया । [illegible] पंचदशभेद भिन्न ते ईं जि लिखियइं-

§98) इसा विशेषणइं करी विशिष्ट जि सर्वसिद्ध तीर्थसिद्धादि पंचदशभेद भिन्न ते ईं जि लिखियइं-
जिण १ अजिण २ तित्थ ३ अतित्थ ४ गिहि ५ अन्न ६ सलिंग ७ थी ८ नर ९ नपुंसा १० ।
पत्तेय ११ सयंबुद्धा १२ बुद्धबोहि १३ क्क १४ णिक्का १५ य ॥　　　　[१२०]

§94) 1-2 Bh. omits. 3 Bh. [illegible] । 4 Bh. -[illegible] । §97) 1 Bh. कर्मशयो- ।
§98) 1 Bh. [illegible] । 2 B. omits.

ईहां सिद्धशब्दु सवहीं पदहं संबंधियइ। यथा ऋषभादिकहं जिम जि तीर्थंकर हूंता सिद्धि गया ति तीर्थंकरसिद्ध १। गौतमादिकहं जिम सामान्य केवलज्ञानिया थिका जि सिद्धि गया ति अतीर्थंकर-सिद्ध २। तीर्थु चतुर्विधु, चतुर्विधु संघु तिणि प्रवर्त्तमानि हूंतइ जि मुक्ति गया जंबूस्वामीप्रमुखहं जिम ति तीर्थसिद्ध ३। तीर्थि अप्रवृत्ति हूंतइ मरुदेवीस्वामिनी जिम जि मुक्ति गया ति अतीर्थसिद्ध ४।
5 गृहलिंगि वर्त्तमान हूंता मरुदेवी जिम जि मोक्षि[1] गया ति गृहलिंगसिद्ध ५। सम्यक्त्व परिणामइतउ स्वलिंगसंप्राप्त हूंता आयुःक्षयि हूंतइ जि मुक्ति गया ति अन्यलिंगसिद्ध ६। रजोहरण मुखवस्त्रिकारूपु द्रव्यलिंगु। ज्ञानदर्शनचारित्रप्रकर्षपरिणामरूपु भावलिंगु द्विविधू स्वलिंगु कहियइ। तिणि हूंतइ जि मुक्ति गया ति स्वलिंगसिद्ध ७। मरुदेवी जिम जि[1] स्त्री थिका मुक्ति गया ति स्त्रीसिद्ध ८। नर थिका जि मुक्ति गया ति नरसिद्ध ९। नपुंसक बिहुं भेदे। जातिनपुंसक, कर्मनपुंसक भेदइतउ। तत्र जातिनपुंसक
10 चारित्रपरिणाम तणा अभावइतउ मुक्ति न जाइं, कर्म्मनपुंसक पुणि चारित्रपरिणाम सद्भावइतउ मुक्ति जाइं, तिणि कारणि जि नपुंसक थिका मुक्ति गया ति नपुंसकसिद्ध १०। करकंडु द्विमुख नमि नग्गति प्रमुखहं जिम वृषभ आम्रद्रुम एकवलय महेंद्रध्वजादि एकैकवस्तु सारासारता विचारइतउ जातिस्मरणइतउ प्रतिबोधु लही चारित्रु प्रतिपाली केवलज्ञानु ऊपाडी जि मुक्ति गया ति प्रत्येकबुद्ध सिद्ध ११। सर्वतीर्थंकर सिद्ध १२। गुरु कन्हा प्रतिबोधु लही करी जि मुक्ति गया ति बुद्धबोधित सिद्ध १३। श्री महावीर
15 जिम जि एकला सिद्धि गया ति एकसिद्ध १४। श्री ऋषभ जिम अनेकहं सउं एक समइ जि सिद्धि गया ति अनेकसिद्ध १५। तथा च भणितं–

> उसहो उसहस्स सुया भरहेण विवज्जिया य नवनवई।
> भरहस्स य अट्ठसुया सिद्धा एगंमि समयंमि ॥ [१२१]

तींहं निमित्तु माहरउ सदा नमस्कारु हुउ। एउ सिद्धस्वरूपु आठमउ अधिकारु।

20 §99) अथानंतरु आसन्नोपकारिता लगी श्री वीरस्तुति भणइ। 'जो देवाण वि देवो' इत्यादि। जु देवभवनपत्यादिक तींहं नउ पूज्यत्वइतउ देवु 'यं देवाः प्रांजलयो नमस्यंति'। जेह रहइं हाथे जोडे देव नमस्कारु करइं सु देव देवमहितु शक्रमहितु[1]। 'शिरसा' मस्तकि करी महावीरु चरमतीर्थंकरु हउं 'वंदे' वांदउं।

§100) नमस्कार फलदर्शननिमित्तु भणइ। 'इक्कोवी' त्यादि। एकू नमस्कारु घणा नमस्कार ▯
25 परहउं छउ। के हि नउ एकु नमस्कारु 'जिणवरवसहस्स वद्धमाणस्स' जिन उपशांत मोहादिक तींहं माहि वर केवलज्ञानी तींहं माहि तीर्थंकर नाम कर्मोदयवसइतउ वृषभु प्रधानु जिनवरवृषभु[1]। तेह नउ नमस्कारु। सु कउणु वद्धमाणु? तेह नउ किसउं करइ? इत्याह–'संसारे' त्यादि। संसारसागरु भवसमुद्र तेह नउ तारइ ऊतारइ। कहि रहइं? 'नरं वा नारिं वा'-नरु पुरुषु नारी स्त्री तींहं बिहुं रहइं धर्म्म रहइं पुरुषोत्तमत्व भणिवा कारणि नरग्रहणु। स्त्री रहइं तिणि हिं जि भवि मुक्तिसंभव
30 निमित्तु नारीग्रहणु कीधउं, न पुणि किहां ईं स्त्री रहइं मुक्तिगमनु निषिद्धु छइ। मुक्तिगमनकारणु ज्ञानदर्शनचारित्रप्रकर्षु सु जिम पुरुष रहइं छइ तिम स्त्री रहइं पुणि छइ इति संपूर्णकारणभावइतउ पुरुष जिम स्त्री रहइं पुणि मुक्ति।

§101) 'छट्ठिं च इत्थियाओ' इसा वचनइतउ उत्कर्षहीतउ स्त्री रहइं छट्ठी नरक पृथिवी सीम गति छइ। न सप्तम नरकभूमिगमनु। तिम ऊपरि मुक्ति गति पुणि नहीं हुयइ इसउं न कहिवूं,

§ 99) 1 Bh. शक्रपूजितु। §100) 1 Bh. adds प्रधानु।

नहि इसउं कांई छइ । जेह रहइं हेठइ थोडी गति तेह रहइं ऊपरि पुणि थोडी गति हुयइ । भुजि करी परिसर्पइं हिंडइं इति भुजपरिसर्प गोह नकुलादिक जीव, ति हेठइ बीजी नरकभूमि सीम उत्कर्षइतउ जाइं । पंखिया गृध्रादिक उत्कर्षइतउ त्रीजी सीम । सिंह चउथी सीम । उरि हियइ करी हिंडइं इति उरग साप, पांचमी सीम जाइं, 'न छट्ठिं, न सत्तमिं वा' जाइं, तथाविध कर्म्मबंध तणा अभावइतउ । ऊपरि पुणि सगलाई भुजपरिसर्पादिक जीव सहस्रारु आठमउ देवलोकु तेह सीम जाइं । तिम स्त्री 5 पुणि हेठइ छट्ठी सीम जाइं ऊपरि पुणि मुक्तिइं जाइं तिसइ गति विषमता भावि हूंतइ स्त्री पुरुष कर्म-न्पुंसकरूप सर्वजीवहं रहइं मुक्तिगमनु सीधउं ।

§102) एउ श्री सिद्धार्थस्तवरूपु नवमउ अधिकारु ।

ए त्रिन्हि स्तुति गणधरेंद्रहं कीधी तिणि कारणि निश्चइसउं पढियइं[1] । 'आवश्यकचूर्णि माहि 10 कहिउं-'सेसो जहिच्छाए' त्ति ।

§103) उज्जिंतसेलसिहरे दिक्खानाणं निसीहिया जस्स ।
तं धम्मचक्कवट्टिं अरिट्ठनेमिं नमंसामि ॥ [१२२]

उज्जयंत शैल शिखरि दीक्षाज्ञान नैषेधकी मुक्ति तलक्षणे त्रिन्हि कल्याणिक जेह रहइं हूयां, सु धर्म्मचक्रवर्ति अरिष्टनेमि 'नमंसामि' नमस्करोमि नमस्करउं । एउ नेमिस्तवरूपु दसमउ अधिकारु ।

§104) अत्राम्नायवचनु कांई एकु लिखियइ । पूर्विहिं श्री उज्जयंत महातीर्थु दिगंबरे अधिष्ठिउं 15 हूंतउं संघ पन्हा उदालिया आरंभिउं । संघ काउस्सग्गानुभावि आकंपिता श्री शासनदेवता राजसभा माहि दूराकृष्ट कन्यामुखि 'उज्जिंतसेलसिहरे' इत्यादि गाथा चैत्यवंदन सूत्रमध्यगत करी आपी । तेह दिवस लगी संघि पढियइ । इणि कारणि ए गाह पुणि आगमरूप हुई ।

§105) तथा 'चत्तारि' इत्यादि, 'परमट्ठ निट्ठियट्ठा' इति परमार्थि करी तत्वग्रुत्ति करी, न पुणि कल्पना करी निष्ठित संपूर्ण अर्थ, संसारप्रयोजन जींहं रहइं हूयां ति परमार्थनिष्ठितार्थ कहियइं । 20 वीजउं सुगमु । एउ इग्यारमउं[1] अधिकारु ।

§106) ईहां आम्नायगतु कांईएकु लिखियइ-

चत्तारि अट्ठ दस दो वंदिया जिणवरा चउव्वीसं ।
नवगं चउवीसीणं विवरणमिह किंचि निसुणेह ॥ [१२३]

चउ अट्ठ गुणा वत्तीस हुंति दस दुगुण हुंति वीसा य । 25
एवं जीणवावन्नं वंदे नंदीसरे दीवे ॥ [१२४]

चत्ताअरिओ जेहिं चत्तारि पयस्स होइ अत्थोयं ।
अट्ठ दस दो य मिलिया जहन्नपय वीस वंदामि ॥ [१२५]

चत्तारि जहापुव्विं दस अट्ठगुणा असी हवइ एवं ।
पुण वि असी दोगुणिया सट्ठिसयं नमह विजएसु ॥ [१२६] 30

चउ अट्ठ भवे वारस दसगुणा सयं वीसं ।
सो दोहि गुणिजंतो दुन्नि सया हुंति चालीसा ॥ [१२७]

भरह-एरवएसु जिणा दस चउवीसी य वद्धमाणाओ ।
मण-वय-काएण तिहा तेसिं वंदामि भत्तीए ॥ [१२८]

---

§102) 1 Bh. पढिइं । §103) 1 B. has dropped -स- । §105) 1 Bh. इग्यार- ।

चउवीसं पडिमाणं अट्ठावयमेहलासु वंदामि ।
चत्तारि १ अट्ठ २ दस दो ३ उवरिम-मज्झेसु हिट्ठेसु ॥ [१२९]
चउ उड्ढलोयपडिमाऽणुत्तर १ गेविज्ज २ कप्प ३ जोइसिए ।
अट्ठेव वंतरेसुं दस पडिमा भवणवासीसु ॥ [१३०]
5 धरणियलम्मि य दुन्नि य सासयरूवा असासया ते उ ।
इय चउवीसं पडिमा वंदे तियलोयमज्झम्मि ॥ [१३१]
अट्ठ दस दो वि अढरस ते अढरस चउगुणा बहुत्तरियं ।
भूय-भविस्सा संपय तिय चउवीसीण वंदामि ॥ [१३२]
चउ चउगुणिया सोलस अट्ठ अट्ठगुणा य हुंति चउसट्ठी ।
10 दस दसगुणिया य सयं एवं हुयइ इगुसउ असीओ ॥ [१३३]
पुण एउ दुहा सउ सत्तरी[1] य पन्नरस कम्मभूमीसु ।
भरह-एरवए दस जिण समकालुप्पन्न वंदामि ॥ [१३४]

इति नवचउवीसीकुलकं समाप्तम् ॥

§107) तथा चंपा विहारु करतइ श्री महावीरि साल महासाल राजऋषिइं सरसउ[1] श्री गौत-
15 स्वामिगणधरेंद्रु पृष्ठचंपां मोकलिउ । तिहां गागलि राजा । पिठरु गागलि तणउ पिता । यशोमती माता । नि-
मातुल साल[2] महासाल[3] । अनइ श्री गौतम वांदिवा आविउ । वांदी धर्म्मु सांभली पुत्तु राजि बइसारि-
मायबाप सहिति गागलि श्री गौतम कन्हइ दीक्षा लीधी । श्री महावीर वांदिवा चंपा आवतां भाव-
भावतां मार्गि पांचहीं रहइं केवलज्ञानु ऊपनउं । समवसरणि श्री गौतमस्वामि त्रिन्हि प्रदक्षिणा दे व-
पाछउं जोयइ, तउ पांचइ केवलिसभा ऊपरि जायता देखइ, तउ भणइ,-'ओरहा आवउ श्री महावी-
20 वांदउ' । भगवंतु भणइ, 'गौतम ! केवलि आशातना म करि' । तउ गौतमि खमाविया ।

§108) अथ श्री गौतमस्वामि जन माहि भगवंत श्री महावीर तणउं वचनु सांभलिउं-
उसहस्स भरहपिउणो तियलुक्कपयासनिग्गयजसस्स ।
जो आरुहुं वंदइ चरमसरीरो य सो साहू ॥ [१३५]

जु तपोलब्धि[1] करी अष्टापदि चडी श्री ऋषभ जिन रहइं वांदइ सु चरमसरीरी तिणिहिं
25 भवि मुक्तिगामी हुयइ । तउ जेतलइ अष्टापदयात्रा मनोरथु गौतमस्वामि मन माहि करइ तेत-
भगवंति यात्रा विषइ आदेसु दीधउ । तउ गौतमु अष्टापदि चालिउ । जिनवचनु पूर्वभणितु सांभ-
करी अनेराइं कौंडिन्य दिन्न सेवालि नाम पांच पांच सइं तापस[2] तिहां चालियां । तीहं माहि कौंडि-
कुलपति पांचसइं तापस सहितु एकोपवासकारी[3] पारणइ आर्द्र मूल फलाहारी पहिली मेखलां[4] गय-
दिन्नु कुलपति पांचसइं तापस सहितु बिहुं[5] उपवासकारी[6] पारणइ शुष्क[7] मूलफलाहारी बीजी मेख-
30 चडिउ । सेवाली कुलपति पांचसइं तापस सहितु त्रिहुं[8] उपवासकारी[9] पारणइ[10] शुष्क[10] सेवाला-
त्रीजी मेखलां[11] गयउ[12] । त्रिन्हइ[13] कुलपति ऊपहिरा[14] चडिवा असमर्थ हूंता पूर्विहिं तिहांई जि र-
हइं । तीहं रहइं तिहां रहियां हूंतां श्री गौतमस्वामि मूर्तिमंतु जिसउ पुण्यरासि हुयइ[15] ति-
उरचितसर्वदेहावयवु कायकांति करी दीपित दसदिसावकासु आविउ ।

§106) 1 B. Bh. गच्छे । §107) 1 L. सरिसउ 2 P. सालि 3 P. omits अनइ । 4 L. बम
§108) 1 L. तपलब्धि । 2 Bh. L. add मुक्तिनिमित्तु । 3 L. करी । 4 P. मेखला । 5 Bh. L. बि
P. बिहुउ । 6 L. करी । 7 P. शुष्क पारणइ । 8 L. P. त्रिहु । 9 L. उपवासि करी । 10 P. om
11 L. P. मेखल । 12 L. चडिउ । 13 P. त्रिन्हइ । 14 Bh. L. P. ऊपहरा । 15 P. हुउ ।

§109) [illegible] तपस्या [illegible] गौतम [illegible] देखी करी चिंति[illegible] चीतवइं', 'अम्हे [illegible] करी [illegible] [illegible] ईतीं [illegible] [illegible] [illegible]. [illegible] इसइ [illegible]' [illegible] करी यथाकालमोजी' [illegible] किसी परि [illegible]?' इसउं [illegible] [illegible] [illegible] तहां धीवरा' हूंतो श्री गौतमु [illegible] [illegible] अयलंबी करी [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]' [illegible]। [illegible] [illegible] मन माहि चीतवइं 'इह [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] माहि [illegible] [illegible] अम्हे एह ना शिष्य होइसिइं''।

§110) श्री [illegible] [illegible] संभव [illegible] सुमति पद्मप्रभ नाम च्यारि जिन [illegible]। [illegible] [illegible] सुपार्श्व चंद्रप्रभ सुविधि शीतल श्रेयांस वासुपूज्य विमल अनंत नाम आठ जिन [illegible]। [illegible] [illegible] धर्म शांति कुंथु अर मल्लि मुनिसुव्रत नमि नेमि पार्श्व वीर नाम [illegible] जिन [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] नाम बि जिन [illegible]। [illegible] जिन [illegible] निज [illegible]-[illegible]-[illegible] [illegible]-[illegible]' [illegible] [illegible] [illegible]' [illegible] विशिष्ट भावना [illegible] [illegible]' [illegible]' [illegible] [illegible] [illegible] नाम [illegible] माहि [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible]' [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] करी [illegible] करइ।

§111) [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] श्री गौतमस्वामि देखी करी [illegible]' [illegible]' [illegible] [illegible]'। श्री गौतमस्वामि [illegible] [illegible]' [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] करी [illegible] [illegible]। [illegible] [illegible] माहि [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] करी [illegible]' श्री [illegible] हुयउ'।

§112) [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] जिन [illegible] करी श्री गौतमस्वामि [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible] [illegible] करी [illegible], 'भगवन्! [illegible] करी [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]'। [illegible] [illegible] [illegible] करी [illegible] [illegible]। [illegible] पूछिया, 'भगवन्! [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]?' [illegible] [illegible], 'अम्हारी [illegible] [illegible] करी [illegible] [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] न [illegible]'। इसउं [illegible]' करी परमान्न [illegible] [illegible]। श्री गौतमस्वामि [illegible] [illegible] [illegible] करी [illegible] [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]' [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] परि श्री गौतमस्वामि आविउ। [illegible] [illegible]' [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] करी श्री गौतमु परमान्नु [illegible]' [illegible]। '[illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]' [illegible] नहीं। अथवा अचिंतनीय महिमा महात्मा [illegible] [illegible]'। इसउं' [illegible]' करी [illegible] [illegible] [illegible] अनुमान हूंता [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] नहीं [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] नहीं, तिणि कारणि

§109) 1 L. [illegible] । P. [illegible] । 2 Bh. [illegible] । 3 Bh. L. [illegible] । 4 P. [illegible] । 5 L. [illegible] । 6 L. P. [illegible] । 7 L. [illegible] । 8 P. [illegible] । §110) 1 Bh. instead of नाम [illegible], it has [illegible] नाम । 2 L. changes the order as [illegible] [illegible] । 3 P. [illegible] । 4 P. [illegible] । 5 Bh. L. [illegible] । P. [illegible] । 6 Bh. [illegible] । 7 P. [illegible] । §111) 1 P. [illegible] । 2 P. omits. 3 L. [illegible] । 4 L. [illegible] । P. [illegible] [illegible] । The confusion of -[illegible]- and -[illegible]- is obvious. 5 Bh. omits [illegible] । 6 P. [illegible] । §112) 1 P. [illegible] । 2 L. P. [illegible] । 3 L. [illegible] । P. [illegible] । 4 L. [illegible] । P. [illegible] । 5 L. [illegible] । P. [illegible] । 6 P. [illegible] । 7 P. adds [illegible] । 8 P. [illegible] । 9 L. [illegible] । 10 L. P. [illegible]

भगवंतु गौतमु तींहं रहइं परीसइ । तउ पाछइ जि त्रिहुं उपवासे[11] करी पारणउं करता सेवाली तापस तींहं रहइं पारणउं करतां गौतमगुण अनुमोदतां शुक्लध्यानधारा वर्त्तमानहं हूंता केवलज्ञानु ऊपनउं ।

§113) जि बिहुं उपवासे पारणउं करता दिन्न तापस तींहं रहइं मार्गि आवतां 'जेह तणउ गौतमु इसउ[1] शिष्यु इसउ लब्धिपात्रु छइ सु गौतम तणउ गुरु किसउ छइ' इसी परि[2] चींतवतां[3] शुक्लध्यान धाराधिरोहइतउ केवलज्ञानु ऊपनउं । जि एकि उपवासि पारणउं करता कौंडिन्य तापस तींहं रहइं समवसरणु देखी श्री महावीरदेशनाध्वनि सांभली करी शुक्लध्यान लाभइतउ केवलज्ञानु ऊपनउं[4] । श्री गौतमस्वामि श्री महावीरु वांदी करी पाछउं जोयइ[5] तउ[6] सवइ तापस[7] केवलिसभा ऊपरि जायता देखी भणइ[8], 'वच्छउ ! आवउ, श्री महावीरु वांदउ' भगवंतु भणइ 'गौतम, केवलि आशातना म करि' । तउ गौतमस्वामि खमावी करी[9] यथास्थानि पहुतउ । श्री महावीरि मुक्ति पहुतइ हूंतइ गौतमस्वामि छिन्नगुरुस्नेहबंधनु हूंतउ केवलज्ञानु ऊपाडी बारे[10] वरसे[11] पाछइ मुक्ति पहुतउ ॥

चत्तारि १ अट्ठ २ दस ३ दो ४ य वंदिया जिणवरा चउव्वीसं । एह विषइ श्री गौतमकथा ।

§114) एवं अनेरेई[1] चउवीस जिनवंदना इणि गाह करी करेवी । तथा नव चउवीसी जिनवंदना पुणि करेवी । तथा चैत्यवंदना करतां बारस पूजापद जाणिवां । यथा–

अईयाइ तिन्नि सक्कत्थयम्मि चेईण वंदणं बीए ।
15 इह खित्तसंभवाणं उसभाइजिणाण तईयम्मि ॥ [१३६]

सत्तरिसयं जिणाणं सुयधम्मो तह चरित्तधम्मो य ।
हुंति नमंसणजोगा तिन्नि वि एए चउत्थम्मि ॥ [१३७]

सिद्धा सिद्धत्थसुओ सुरट्ठवरविसयभूसणो नेमि ।
नवगं चउवीसीणं पंचमए दंडए चउरो ॥ [१३८]

20 अतीत-अनागत-वर्तमान जिनलक्षण त्रिन्हि पूजापद शक्रस्तवि प्रथमि दंडकि कहियइं । स्थापनाअर्हंतलक्षणु एकु पूजापदु 'अरहंतचेईयाणं' बीजइ दंडकि कहियइ । इह क्षेत्रसंभव भरतक्षेत्रजात ऋषभादिजिन चउवीसीलक्षणु एकु पूजापदु 'लोगस्सुज्जोयगरे' त्रीजइ दंडकि कहियइ । सत्तरिसउं जिन श्रुतधर्म-चरित्रधर्मलक्षण त्रिन्हि पूजापद 'पुक्खरवरदीवड्ढे' चउथइ दंडकि कहियइं । सिद्ध सिद्धार्थसुत नेमि नव चउवीसीलक्षण चत्तारि पूजापद 'सिद्धाणं बुद्धाणं' पांचमइ दंडकि कहियइं ।

25 संपय-पयप्पमाणा इह बीस छहुत्तरं च बक्सयं ।
पणिवायदंडगाइसु पंचमओ दंडओ य इमो ॥ [१३९]

§115) इसी परि पंचमु दंडकु पढी करी उपचितपुण्यसंभारु हूंतउ भव्यु जीवु चैत्यवंदनानंतरु उचित विषइ वचिनप्रवृत्तिनिमित्तु इसउं पढइ 'वेयावच्चगराणं' इत्यादि । वैयावृत्यकर गोमुख यक्ष चक्रेश्वरी यक्षिणी प्रमुख चउवीस यक्ष यक्षिणी लक्षण श्री वीरशासन प्रतिकूल जि मिथ्यादृष्टि तींहं रहइं निवारक 30 शांतिकर-अशिवनिषेधक, सम्यक्त्व धारक लोक रहइं समाधिकर आर्त्त-रौद्रध्यानरक्षक तींहं संबंधिउं अथवा तींहं नइ विषइ काउस्सग्गु 'करेमि' करउं । इहां 'वंदणवत्तियाए' इत्यादि न पढियइं । वैया-

---

§112) 11 P. उस्वामि । §113) 1 Bh. L. omit. 2 B. परि । 3 Bh. चीत- । 4 L. omits the whole sentence. 5 B. जोयबइ तउ । P. had the same but a later correction makes it जोयइ तउ । L. जोयइं । 6 L. omits. 7 P. सवी । 8 Bh. L. omit. 9 -स्थानकि । 10 P. बारे । 11 P. वरिसे । §114) 1 Bh. omits. 2 Bh. छहसय ।

वृत्तिकर[1] अविरतसम्यग्दृष्टिनामकि चउथइ गुणठाणइ वर्त्तइं । श्री संघु पुणि साधु साध्वी तणी अपेक्षा करी अप्रमत्तनामकि सातमइ, प्रमत्तनामकि छट्ठइ गुणठाणइ वर्त्तइ । श्रावक श्राविका नी अपेक्षा करी विरताविरतनामकि पांचमइ गुणठाणइ वर्त्तइ । तिणि कारणि वैयावृत्यकरहं कन्हा साधु-साध्वी-श्रावक-श्राविकालक्षणु संघु गुणे करी अधिकु । तिणि कारणि तींहं रहइं सम्यग्दृष्टिता करी साधर्म्मिक भावइतउ तथा महर्द्धिकत्वइतउ काउस्सग्गु मात्रु कीजइ गीतार्थाचीर्णभावइतउ । 'अन्नत्थूससिएणं' इत्यादि पूर्ववत् । एउ वेयावच्चगर काउस्सग्गरूपु बारमउ अधिकारु ।

तथा च अधिकारआदिपदावयवसूचा–

नमु १ जे २ अरहं ३ लोगो ४
स ५ पुक्ख ६ तम ७ सिद्ध ८ जो ९ उ १० चत्ता ११ चे १२ ।
पढमा पइक्कदेसा अहिगाराणं मुणेयव्वा ॥　　[१४०]　10
दुन्ने १ गं २ दुन्नि ३ दुगं ४ पंचेव ५ कमेण हुंति अहिगारा ।
सक्कत्थयाइसु इहं थोयव्वविसेसविसयाओ ॥　　[१४१]
पढमम्मि य अहिगारे भावऽरिहंताण वंदणा भणिया ।
दव्वऽरिहाणं बीए तइए ठवणाऽरिहाणं तु ॥　　[१४२]
नामऽरिहाण चउत्थे ठवणऽरिहाणं च पंचमे तह य ।
भावऽरिहाणं छट्ठे सत्तमए बारसंगस्स ॥　　[१४३]
अट्ठमए सिद्धाणं नवमम्मि य वद्धमाणसामिस्स ।
दसमम्मि य तित्थाणं चउवीसजिणाणमिगदसमे ॥　　[१४४]
वेयावच्चगराण य उस्सग्गो बारसम्मि अहिगारे ।
अरिह १ सुय २ सिद्ध वेयावच्चगरा संथुया एवं ॥　　[१४५]　20
इह नव अहिगारेहिं चउविह जिण संथुया सुभत्तीए ।
सुय सत्तम सिद्धऽट्ठम वेयावच्चा य बारसमे ॥　　[१४६]
उज्जोयाइसु तिसु दंडएसु पयसंपयाउ तुल्लाओ ।
छंदाणुसारओ चिय नायव्वा बुद्धिमंतेहिं ॥　　[१४७]

§116) अथ पंचपरमेष्ठि नमस्कार ईर्यापथिकी सूत्र तथा चैत्यवंदन सूत्र तणी जि पूर्विहिं संपदा कही ति सगलीय इ एकगाथा माहि कहइ–　25

अट्ठऽट्ठ नवऽट्ठ य अट्ठवीस सोलस य वीस वीसामा ।
मंगल इरियावहिया सक्कत्थयपमुहदंडेसु ॥　　[१४८]
अट्ठेव संपयाओ मंगलगे नव पयाण तह पढमं ।
पयतुल्ल सत्त संपय दुपयछा होइ अट्ठमिया ॥　　[१४९]　30
अरहंत सत्त अक्खर पंच य सिद्धाण सूरिणो ।
सत्त उवज्झाय सत्त अक्खर नव अक्खर संजुया साहू ॥　　[१५०]

§115) 1 Bh. वैयावृत्य ।

अंतिम चूलाण तियं सोलस अट्ठ नव अक्खरजुयं च।
इय अट्ठसट्ठि अक्खर परिमाणो होइ नवकारो ॥ [१५१]

§117) उपधान विधान पाखइ पंच परमेष्ठि नमस्कार ईर्यापथिकी चैत्यवंदनसूत्र विधिवत् समाराधित न हुयइं, तिणि कारणि प्रस्तावइतउ उपधान तपोविधान विधि पुणि लिखिगइ।

5 पंचमंगल महाश्रुतस्कंधि पांच वीसामा पांच अध्ययन कहियइं। बीजा त्रिन्हि वीसामा त्रिन्हि चूलिका कहियइं। तत्रापि बिहुं वीसामे एक चूलिका, एक वीसामइ बि चूलिका हुयइं। शक्ति हूंती एकनिरंतरे पांचे उपवासे कीधे पहिली वाइणि पांच अध्ययन लाभइं। तथा एकनिरंतरे आठे आंबिले त्रिहुं उपवासे कीधे बीजी वाइणि त्रिन्हि चूलिका लाभइं। शक्ति असंभवि एकांतरे पांचे उपवासे वाइणि पहिली। एकांतरे साते उपवासे बीजी वाइणि। एवंकारइ पहिलइ पंचमंगल महाश्रुतस्कंध तणइ उपधानि 10 उपवास १२ कीजइं।

§118) बीजइ ईर्यापथिकी श्रुतस्कंधि आठ वीसामा आठ अध्ययन कहियइं। तत्र शक्तिसंभवि एकनिरंतरे उपवासे पांचे कीधे, शक्तिअसंभवि एकांतरिते पांचे उपवासे कीधे पहिली वाइणि पांच अध्ययन–

(२४) इच्छापि पडिक्कमिउं इरियावहीयाए विराहणाए १। गमणागमणे २। 15 पाणक्कमणे बीयक्कमणे हरियक्कमणे ३। उसा उत्तिंग पणग दग मट्टी मक्कडा संताणा संकमणे ४। जे मे जीवा विराहिया ५।

एयंरूप लाभइं। तथा शक्तिसंभवि एकनिरंतरे आठे आंबिले त्रिहुं उपवासे कीधे हूंते, शक्ति-असंभवि एकांतरि साते उपवासे कीधे हूंते–

(२५) एगिंदिया बेइंदिया तेइंदिया चउरिंदिया पंचिंदिया ६। अभिहया 20 वत्तिया लेसिया संघाया संघट्टिया परियाविया किलामिया उद्दविया ठाणाओ ठाणं संकामिया जीवियाओ ववरोविया तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ७। तस्सुत्तरीकरणेणं पायच्छित्तकरणेणं विसोहीकरणेणं विसल्लीकरणेणं पावाणं कम्माणं निग्घायणट्ठाए ठामि काउस्सग्गं ८।

ए त्रिन्हि अध्ययन बीजी वाइणि लाभइं। एवंकारइ बीजइ ईर्यापथिकी श्रुतस्कंध तणइ उपधानि 25 उपवास १२ कीजइं। तथा त्रीजइ भावार्हंतस्तव श्रुतस्कंधि नव वीसामा नव अध्ययन कहियइं। शक्तिसंभवि एकनिरंतरे त्रिहुं उपवासे कीधे हूंते, शक्तिअसंभवि एकांतरिते त्रिहुं उपवासे कीधे हूंते–

(२६) नमोऽत्थुणं अरहंताणं भगवंताणं १। आइगराणं तित्थगराणं सयं-संबुद्धाणं २। पुरिसुत्तमाणं पुरिससीहाणं पुरिसवरपुंडरीयाणं पुरिसवरगंधहत्थीणं ३।

ए त्रिन्हि अध्ययन पहिली वाइणि लाभइं। तथा शक्तिसंभवि एकनिरंतरे सोले आंबिले कीधे 30 हूंते, शक्तिअसंभवि एकांतरिते आठे उपवासे कीधे हूंते–

(२७) लोगुत्तमाणं लोगनाहाणं लोगहियाणं लोगपईवाणं लोगपज्जोयगराणं ४। अभयदयाणं चक्खुदयाणं मग्गदयाणं सरणदयाणं बोहिदयाणं ५। धम्मदयाणं धम्मदेसयाणं धम्मनायगाणं धम्मसारहीणं धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टीणं ६।

ए त्रिन्हि अध्ययन बीजी वाइणि लाभइं। तथा शक्तिसंभवि एकनिरंतरे सोले आंबिले कीधे 35 हूंते, शक्तिअसंभवि एकांतरिते आठे उपवासे कीधे हूंते–

(२८) अप्पडिहयवरनाणदंसणधराणं वियट्टछउमाणं ७। जिणाणं जावयाणं तिन्नाणं तारयाणं बुद्धाणं बोहयाणं मुत्ताणं मोयगाणं ८। सव्वन्नूणं सव्वदरिसीणं सिवमयलमरुयमणंतमक्खयमव्वाबाहमपुणरावित्ति सिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपत्ताणं नमो जिणाणं जियभयाणं ९।

ए त्रिन्हि अध्ययन त्रीजी वाइणि लाभइं । 5

§119) 'जे अईया' गाहा पुणि गीतार्थाऽऽचीर्णता करी त्रीजी वाइणि दीजइ । एवंकारइ त्रीजइ भावाऽर्हत्स्तव श्रुतस्कंध तणइ उपधानि उपवास १९ कीजइं । चउथइ स्थापनाऽर्हत्स्तव श्रुतस्कंधि आठ वीसामा आठ अध्ययन कहियइं । उपवासु १ आंबिल त्रिन्हि कीजइं । एकहीं जि वाइणि–

(२९) अरहंतचेइयाणं करेमि काउस्सग्गं १। वंदणवत्तियाए पूयणवत्तियाए सक्कारवत्तियाए सम्माणवत्तियाए बोहिलाभवत्तियाए निरुवसग्गवत्तियाए २। 10 सद्धाए मेहाए धीए धारणाए अणुप्पेहाए वड्ढमाणीए ठामि काउस्सग्गं ३। अन्नत्थूससिएणं नीससिएणं खासिएणं छीएणं जंभाइएणं[1] उड्डुएणं[2] दिट्ठिसंचालेहिं एवमाइएहिं आगारेहिं अभग्गो अविराहिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो ६। जाव अरहंताणं भगवंताणं नमुक्कारेणं न पारेमि ७। ताव कायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि ८। 15

ए आठ अध्ययन लाभइं ।

§120) एवंकारइ चउथइ स्थापनाऽर्हत्स्तव श्रुतस्कंध तणइ उपधानि उपवास २ [1]कीजइं । पांचमइ नामाऽर्हत्स्तव श्रुतस्कंधि अट्ठावीस वीसामा अट्ठावीस अध्ययन कहियइं शक्तिसंभवि एकनिरंतरे त्रिहुं उपवासे कीधे हूंते, शक्तिअसंभवि एकांतरिते त्रिहुं उपवासे कीधे हूंते पहिली वाइणि 'लोगस्सुज्जोयगरे' गाहा । चत्तारि अध्ययन लाभइं । तथा शक्तिसंभवि एकनिरंतरे तेरहे आंबिले कीधे हूंते, शक्ति असंभवि 20 एकांतरिते छए उपवासे अनइ एकि आंबिलि कीधइ हूंतइ 'उसभ' इत्यादि गाहा । त्रिन्हि अध्ययन बारह बीजी वाइणि लाभइं । तथा शक्तिसंभवि एकनिरंतरे बारहे आंबिले कीधे हूंते, शक्तिअसंभवि एकांतरिते छए उपवासे कीधे हूंते 'एवं मए अभित्थुया' इत्यादि गाहा त्रिन्हि अध्ययन बारह त्रीजी वाइणि लाभइं । एवंकारइ पांचमइ नामाऽर्हत्स्तव श्रुतस्कंध तणइ उपधानि उपवास पनरह आंबिलु एकु कीजइं । तथा छट्ठइ श्रुतस्तव श्रुतस्कंधि सोल वीसामा सोल अध्ययन कहियइं । एकु उपवासु 25 आंबिल पांच कीजइं ।

§121) 'पुक्खरवरदीवड्ढे' इत्यादि गाहा । वृत्त चत्तारि अध्ययन सोल एकहीं जि वाइणि लाभइं । एवंकारइ छट्ठइ श्रुतस्तव श्रुतस्कंध तणइ उपधानि उपवास त्रिन्हि आंबिलु एकु कीजइं ।

§122) सातमइ सिद्धस्तव श्रुतस्कंधि वीस वीसामा वीस अध्ययन कहियइं । जिणि दिवसि मालारोहणु कीजइ तिणि दिवसि एकु उपवासु कीजइ । 'सिद्धाणं बुद्धाणं' इत्यादि गाहा पांच अध्ययन 30 वीस एकहीं जि वाइणि लाभइं । सातमइ सिद्धस्तव श्रुतस्कंध तणइ उपधानि उपवासु एकु कीजइ । एवलइ अट्ठट्ठ नवट्ठ य' इति गाहा तणा अर्थ तणइ प्रसंगि उपधानतपश्चरणविचारु पुणि लिखिउ । सवहीं उपधानहं तणउ तपु मेलिउ हूंतउ उपवास पंचवीस आंबिल ८१ हुयइं । सर्व संख्या दिन १०६ सवही उपधानहं लागइं ।

---

§119) 1 Bh. जंभाईणं । 2 Bh. उड्डुएणं । §120) 1 Bh. adds आंबिल १ ।

§123) अथ प्रस्तावइतउ वाइणि देवा तणी रीति लिखियइ । एक खमासमणि वाइणि 'मुहुपत्तियं पडिलेहेमि' कहावियइ । बीजउं खमासमणु दिवारी मुहुंती पडिलेहावियइ वांनणां[1] त्रि दिवारियइं । पाछइ एक खमासमणि 'पंचमंगल महाश्रुतस्कंध वाइणि पडिगाहणत्थं काउस्सग्गं करावेह[2]' कहावियइ । बीय खमासमणि 'पंचमंगल महासुयक्खंध वाइणि पडिगाहणत्थं काउस्सग्गं करेमि' कहा-
5 वियइ । तइय खमासमणदाणपूर्वकु 'अन्नत्थूससिएणं' इत्यादि कहावी काउस्सग्गु करावियइ । काउस्सग्ग माहि 'सागरवरगंभीरा' सीम, सत्तावीस ऊसास 'लोगस्सुज्जोयगरे' चीतवावियइ । पारियइ हूंतइ 'लोगस्सुज्जोयगरे' संपूर्ण भणावियइ । पाछइ एक खमासमणि 'पंचमंगल महासुयक्खंध वाइणि पडिगाहणत्थं चेइयाइं वंदावेह' भणावियइ । बीय खमासमणि 'पंचमंगल महासुयक्खंध वाइणि पडिगाहणत्थं वासक्खेवं करावेह' भणावियइ ।

10 §124) तइय खमासमणु दिवारी वासक्षेपु कीजइ । शक्रस्तवु भणावी एक खमासमणि 'पंचमंगल-महासुयक्खंध वाइणि संदिसावेमि' कहावी बीय खमासमणि 'पंचमंगलमहासुयक्खंध वाइणि पडिगाहेमि' कहावी पहिलउं त्रिन्हि नमस्कार कहावियइ, पाछइ पूर्व भणित[1] वाइणिक्रमि वाइणि दीजइ ।

§125) अथ प्रस्तुतु कहियइ । काउस्सग्गि पारियइ वैयावृत्यकरस्तुति[1] कही करी पूर्व जिम गोडिहिलियां होई करी शक्रस्तवु कहीयइ । 'जावंति चेइयाइं' इत्यादि गाह पढइ । जावंति जेतलां,
15 चैत्य ऊर्ध्वलोकि अधोलोकि तिर्यग्लोकि छइं, 'सव्वाइं' सगलाइं, 'ताइं' ति वांदउं 'इह संतो' ईहां थिकउ 'तत्थ संताइं' तिहां थिकी । तउ पाछइ ऊठी करी क्षमाश्रमणु विधिवत् दे करी 'जावंति के वि साहू' इत्यादि गाह पढइ । 'जावंति के वि' जेतलां केई, 'भरह-एरवय-महाविदेहे य' पांच भरत पांच एरवत पांच महाविदेहरूप पनरह कर्म्मभूमि माहि, साधु ज्ञान-दर्शन-चरित्ररूप रत्नत्रय साधक छइं, 'सव्वेसु तेसु पणओ' सघहीं तींहं विषइ प्रणतु हुउं छउं । ति पुणि किसा छइं ? 'तिविहेण' मनि
20 वचनि कायि[1] करी, 'तिदंडविरयाणं' जीवघात करण-कारण-अनुमतिरूप त्रिन्हि दंड तींहं हूंता विरत निवर्त्तिया, तींहं रहइं हुउं प्रणतु छउं ।

§126) पाछइ 'नमोऽर्हत्-सिद्धा-'इत्यादि पंच परमेष्ठि नमस्कारु पढइ । तउ पाछइ उद्दामगंभीरस्वरि हर्षरोमांचकंचुकितगात्रु हर्षाश्रुबिंदुवृष्टिवृष्टि[1] हूंती करतउ हूंतउ सद्भूतगुणगर्भितु श्रीवीतरागस्तवु कहइ ।

25 §127) तउ पाछइ

मुत्तासुत्तिपमुद्दासमा जहिं दो वि गब्भिया हत्था ।
ते पुण निलाडदेसे लग्गा अन्ने अलग्ग त्ति ॥ [१५२]

एवंरूप मुक्ताशुक्तिकमुद्रायसंभातु हूंतउ प्रणिधानु पढइ-'जय वीयराय' इत्यादि । 'जय' किसउ अर्थु ? सघही देव दानव मानव माहि उत्कर्षि करी वर्त्ति, हे वीतराग ! रागरहित, 'जगगुरु' जगद्गुरो !
30 त्रिभुवनजनबोधदायक परमेश्वर श्री वीतराग रहइं बुद्धिसंनिधानविधाननिमित्तु आमंत्रणु संबोधनु, 'भयवं' भगवन् ! माहरा प्रभावइतउ, 'मम' मू रहइं, 'भवनिव्वेओ' भवनिर्वेदु संसारविरागु 'होउ' हुउ, 'भयवं' ! इसउं वली संबोधनु भक्ति अतिशय आसन्निया निमित्तु कीधउं ।

§123) 1 Bh. वन्दणां । 2 Bh. करावेह । §124) 1 Bh. भणित । §125) 1 Bh. omits कर । 2 Bh. काय । §126) 1 Bh. वृष्टि ।

§128) तथा 'मग्गाणुसारया' मार्गानुसारिता कदाग्रह परिहारि करी तत्त्वप्रतिपत्तिलक्षणु मुक्तिमार्गं अनुसरणु हुउ । इसी परि सवहीं पदहं सउं 'हुउ' इसउं पदु संबंधियउं । तथा 'इट्ठफलसिद्धी' इहलोकफलप्राप्ति जिणि हूंती जीव रहइं समाधानु हुयइ ।

§129) 'लोगविरुद्धचाओ' सर्वजनगर्हितवस्तु तणउ त्यागु परिहारु । तथा चाह–

सव्वस्स चेव निंदा विसेसओ तह य गुणसमिद्धाणं ।
उज्जुधम्मकरणहसणं रीढा जणपूयणिज्जाणं ॥ [१५३]
बहुजणविरुद्धसंगो देससमाचारलंघणं चेव ।
उब्बणलोगो य तहा दाणाइ वि पयडं अन्ने उ॑ ॥ [१५४]
साहुवसणम्मि तोसो सयसामत्थम्मि अपडियारो य ।
एमाइयाइं इत्थं लोगविरुद्धाइं नेयाइं ॥ [१५५] 10

'सव्वस्स' इति । सामान्यहिं सर्वजननिंदा लोकविरुद्ध । 'विसेसओ तह य गुणसमिद्धाणं' तथा गुण ज्ञान दर्शन चारित्रलक्षण तीहं करी जि समृद्ध महर्द्धिक तीहं तणी निंदा विशेषि करी लोकविरुद्ध । 'उज्जुधम्म' धर्म्म नइ विषइ सरलचित्त जि हुयइं तीहं तणउं हसणु उपहासकरणु लोकविरुद्धु । 'रीढा जणपूयणिज्जाणं' ति सामान्यजनपूजनीय जि हुयइं पात्रदेवता-गोत्रदेवतादिक अथवा हरि-हर-ब्रह्मा-आदित्यादिक देव तीहं॑ तणी रीढा निंदा लोकविरुद्ध । 'बहुजणविरुद्धसंगो' इति बहु प्रभूत जण साधुलोक तीहं रहइं विरुद्ध 15 अछोपादि भावि करी विवर्जित छइं, चंडाल खाटकी सुरापालादिक तीहं सरसउ संगु परिचउ लोकविरुद्धु । 'देससमाचारलंघणं' ति जिणि देसि जु अर्थु अतिनिषिद्धउ हुयइ अनइ धर्म्मविरुद्धउ हुयइ तहीं॑ तिणि देसि तेह तणउं करणु देससमाचारलंघणु लोकविरुद्धु । 'उब्बणलोगो' इति उद्भटु भणु जेह रहइं सु उब्भणु सच्छिद्रु लोकु तेह तणउ लोकु दर्शनु, उब्भणलोकु । जिम निद्रादिप्रमादपरु मृगादिकु जंतुवर्गु देखी करी छलपरायणु नाहरादिकु जीववधकु लोकविरुद्धु तिम परच्छिद्रु चोरकादिकु॑ देखी करी जु राजनिग्रहादिकि 20 अनर्थि घातिया॑ विषइ समुद्यतु हुयइ सु लोकविरुद्धु अथवा तेह तणउं कर्म्मु लोकविरुद्धु । 'दाणाइ वि' राजदेउ भागु दाणु तेह तणउं अदानु दाणचोरिकादिकु लोकविरुद्धु । 'पयडु' प्रकटु सकललोक विख्यातु कहियइ॑ । 'अन्ने उ' अनेरा पुणि । 'साहुवसणम्मि' इति । साधुलोक रहइं व्यसनि राजनिग्रहादिकि ऊपनइ हूंतइ जु तेह व्यसन तणइ विषइ तोसु हर्षु कीजइ सु लोकविरुद्धु इसउ कहइं तथा व्यसन फेडिया विषइ सामर्थ्यभावि शक्तिभावि हूंतइ 'अपडियारो य' इति । अप्रतीकारु व्यसन तणउं अफेडणु 25 लोकविरुद्धु इसउं कहइं । एवमादिक लोकविरुद्ध 'नेयाइं' जाणिवां । इति गाथात्रय तणउ अर्थु ।

§130) तथा गुरुजनपूजा जननीजनकादिजनु गुरुजनु तेह नी पूजा गुरुजनपूजा पितर सन्मानना । परार्थकरणु परु साधुलोकु तेह रहइं हितकरणु वांछितार्थसंपादनु जीवितव्य तणउं सारु परमु पुरुषार्थु, पुणि परहितार्थकरणु जु जिणि कारणि कहियइ । तथा च भणितम्–

दानं वित्ताद्, ऋतं वाचः, कीर्ति-पुण्ये तथाऽऽयुषः । 30
परोपकरणं कायाद् असारात् सारमुद्धरेत् ॥ [१५६]

§131) 'सुभगुरुजोगो' इति । विशिष्टश्रुतचारित्र सहित आचार्य तणी प्राप्ति सुभगुरुजोगु । 'तव्वयणसेवणा' इति तेह नउ उपदेसु सद्वचनु तेह तणी सेवना गुरुसमादिष्ट धर्म्मानुष्ठानकरणु । शुभगुरु

§129) 1 B. Bh. अन्ने ओ । 2 Bh. तहीं 3 Bh. नहीं । 4 Bh. अधर्म्म चोरिकादिकु । 5 Bh. घातवा । 6 Bh. कहइं ।

कदाकालिहिं अहितु उपदिसइ नहीं इणि कारणि आभवु संसार सीम तेह गुरु तणी आण मू रहइं अखंड अविराधित हुउ। एउ प्रणिधानु नियाणउं नहीं, जिणि कारणि प्राइहिं निरसंगाभिलापू जु कीधउं छइ।

§132) जु पुणि गुरुजणपूया ससंगाभिलाषु को कहिसिइ सु न कहिवो, जिणि कारणि जननी-जनकमानना श्री महावीरदेवि[1] आपणपइं कीधी छइ। तथा च भणितम्–

5 अह सत्तमम्मि मासे गब्भत्थो चेव उग्गहं गिन्हे।
नाऽहं समणो होहं अम्मापियरेहिं जीवंतो ॥ [१५७]

कृतकृत्यता पुणि तोई जि हुयइ जउ मावीत्र मानियइं। तथा हि–

पित्रोः आनृण्यभाग् नाऽहं भवाम्येकेन जन्मना।
यकाभ्यां सोढकष्टाभ्यां पृतरः कुंजरीकृतः ॥ [१५८]

10 ॥ इति बालावबोधचैत्यवंदनासूत्रवृत्ति संपूर्ण हुई ॥

॥ शुभं भवतु ॥

*

§133) अथ वंदनक तणउ अर्थु लिखियइ ॥

मुहणंतय २५ देहा २५ ऽऽवस्सएसु २५ पणवीस हुंति पत्तेयं।
छट्ठाणा ६ छचगुणा ६ छचेव ६ हवंति गुरुवयणा ६ ॥ [१५९]
15 अहिगारिणो य पंच ५ य इयरे पंचेव ५ पंच ५ पडिसेहा।
एगोवग्गहु १ पंचाभिहाण ५ पंचेव ५ आहरणा ॥ [१६०].
आसायण तित्तीसं ३३ दोसा बत्तीस ३२ कारणा अट्ठ।
बाणउयसयं ठाणाण वंदणए होइ नायव्वं ॥ [१६१]

'मुहणंतयं' मुहुंती कहियइ, तेह नी पंचवीस पडिलेहण। देहु सरीरु तेह तणी पंचवीस पडिलेहण। 20 आवश्यक अवश्यकरणीय व्यापारविशेष ति पुणि पंचवीस 'पणवीस हुंति पत्तेयं' एह नउ अर्थु हुयउ। एवंकारइ थानक पंचहुत्तरि हुयां।

§134) तथा हि–

दिट्ठिपडिलेहे एगा पप्फोडा तिन्नि तिन्नि अंतरिया ७।
अक्खोडा पक्खोडा नव नव २५ इय पुत्ति पणवीसा ॥ [१६२]
25 पायाहिणेण तिय तिय बाहुसु सीसे मुहे य हियए य १०।
पिट्ठीइ हुंति चउरो ४ छप्पाए ६ देह पणवीसा ॥ [१६३]

आवश्यक पंचवीस यथा–[2]

दोणयं २ अहाजायं १ किइकम्मं बारसावयं १२।
चउसिरं ४ तिगुत्तं ३ दुपवेसं २ एगनिक्खमणं १ ॥ [१६४]

30 §135) बि अवनाम जिणि हुयइं सु 'दोणयं' कहियइ। तथा हि–'इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहियाए' इसउं भणी गुरुच्छंद अणुजाणाविवा कारणि एकु अवनामु, एवं बीजी वार बीजउ अवनामु २। यथाजातु जिम जातु जन्मु हुयइ तिम थिका वांदणउं दीजइ तिणि करणि यथाजातु

§132) 1 Bh. महावीरि-। §134) 1 Bh. देहि। 2 Bh. तिगुत्ति।

कहियइ, विहुं जन्म नी अपेक्षा करी यथाजातु हाथे जोडिए जामइ इणि कारणि हाथे जोडिए वांदणउं दीजइ, तथा ओघइ मुहुंती लीधी यति हुयइ इणि कारणि ओघइ मुहुंती लीधी वांदणउं दियइ, इसउ 'जहाजायं' एह नउ अर्थु । 'किइकम्मं' कृतिकर्म इसउं वांदणा रहइं नामु 'बारसावयं' बारह आवर्त्त करोल्लासरूप हुयइं इणि वांदणइ इणि कारणि 'बारसावयं' कहियइ १२ । तीहं नउं स्वरूपु जेतीवार 'अहोकायं काय' इत्यादि आलापक तणउ अर्थु लिखीसिइ तेतीवार कहीसिइ । चत्तारि शिर जिणि हुयइं सु 'चउसिरं' कहियइ । यथा–'खामेमि खमासमणो' एह आलापक तणइ भणनसमइ एकु अवनमतउं शिष्य तणउं सिरु, बीजउं अवनमतउं गुरु नउं शिरु, एवं बीजइ वांनगइ[1] पुणि वि शिर एवं शिर ४ । अथवा 'कायसंफासं' एह आलापक भणतां एकु अवनमतउं शिरु । 'खामेमि खमासमणो' एह आलाया भणतां बीजउं शिरु । एवं बीजइ वांनणइ पुणि बि शिर । एवं चत्तारि शिर शिष्यही जि संबंधियां हुयइं[2] ४ । 'तिगुत्तं' मनोगुप्तु वचनगुप्तु कायगुप्तु ३ । 'दुपवेसं' बि प्रवेश जिणि हुयइं सु दुपवेसु कहियइ । अवग्रह माहि एकु प्रवेसु एक वांनणइ, बीजउ प्रवेशु बीजइ वांनणइ २ । 'एगनिक्खमणं' एकु निःक्रमु जिणि हुयइ सु एगनिक्खमणु कहियइ । पहिलइ वांनणइ अवग्रह हूंतां नीसरियइ बीजइ वांनणइ न नीसरियइं इणि कारणि एगनिक्खमणु कहियइ १ । एवंकारइ पंचवीस आवश्यक हुयइं । छ स्थान ६, छ गुरुवचन ६, अवग्रहु एकु १ । आशातना[3] त्रेत्रीस ए छइतालीस थानक सूत्र सरसाइं जि वखाणीसिइं । एवंकारइ एकवीसउं सउ थानक कहियां ।

§136) अथ शेष[1]थानक कहियइं–

विणओवयारु १ माणस्स भंजणा २ पूयणा गुरुजणस्स ३ ।
तित्थयराण य आणा ४ सुयधम्माराहणा ५ ऽकिरिया ६ ॥ [१६५]

विनउ अभ्युत्थाना-ऽऽसनदानादिकु तऊ जु उपचारु वशीकरणु विणओवयारु १ । 'माणस्स भंजणा' मानु अहंकारु तेह तणी भंजना खंडना २ । 'गुरुजणस्स पूयणा' गुरुजनु ज्ञानदानकारकु लोकु तेह तणी पूयणा पूजा ३ । 'तित्थयराण य आणा' तीर्थंकर तणी आज्ञा ४ । 'सुयधम्माराहणा' श्रुतधर्म्म तणी आराधना ५ । अकिरिया मोक्षु ६ । ए छ वांनणा तणा गुण । वंदनदानयोग्य पांच अधिकारिया । यथा–

आयरिय १ उवज्झाए २ पवत्त ३ थेरे ४ तहेव राइणिए ५ ।
एएसिं किइकम्मं कायव्वं निज्जरट्ठाए ॥ [१६६]

आयरिय उवज्झाया पूर्विहिं जिम नमस्कार माहि कहिया तिम जाणिवा । प्रवर्तक तणउं स्वरूपु कहियइ–

तव-संजमजोएसु जो जुग्गो तत्थ तं पवत्तेइ ।
असहं च नियत्तेई गणतत्तिल्लो पवत्तीए ॥ [१६७]

अथ स्थविरस्वरूपु कहियइ–

थिरकरणा पुण थेरो पवत्तवावारिएसु अत्थेसु ।
जो जत्थ सीयइ जइ संतबलो तं थिरं कुणइ ॥ [१६८]

§135) 1 Bh. छा (बा) नजि । 2 Bh. हुई । 3 Bh. तेत्रीस । §136) 1 B. शेष । ...

अथ रत्नाधिकस्वरूपु कहियइ–रत्नाधिक रहइं गणावच्छेदकु इसउं बीजउं नामु–

उद्धावणा-पहावण-खित्तोवहिमग्गणासु अविसाई ।
सुत्तत्थ-तदुभयविऊ गणावच्छेओ एरिसो[3] होइ ॥ [१६९]

उद्धावणा उद्यतविहारु, पहावणा तीर्थोन्नतिकरणु, खित्तु क्षेत्रु वसति, उपधि साधूपकरणपरंपरा
5 तींहं नी मार्गणा दोषरहितगवेषणा तींहं नइ विषइ अविसाई आलस्यरहितु, एकु सूत्रु धरइ अर्थु न धरइं, एकु अर्थु धरइ सूत्रु न धरइ, जु बे धरइ सु सूत्रार्थ तदुभयविऊ कहियइ इसउ जु हुयइ सु गीतार्थु रत्नाधिकु कहियइ । 'गणावच्छेओ एरिसो[4] होइ' सु इसउ गणावच्छेदकु कहियइ–रत्नाधिकु कहियइ । चूर्णि माहि कहिउं यथा "अन्ने भणंति-अन्नो वि जो तहाविहो राइणिओ सो वंदियव्वो" । "राइणिओ सो जो नाण-दंसण-चरणसाहणेसु अइउज्जुओ" अतिउत्साहवंतु ।

10 §137) अथ कारण तणइ अभावि जि वांदिवा योग्य न हुयइं पांच अनधिकारिया ति कहियइं–

पासत्थो १ ओसन्नो २ होइ कुसीलो ३ तहेव संसत्तो ४ ।
अहच्छंदो ५ वि य एए अवंदणिज्जा जिणमयम्मि ॥ [१७०]

ज्ञानादिकहं तणइ पार्श्वि समीपि तिष्ठइ रहइ इणि कारणि पार्श्वस्थु कहियइ ।

15 सो पासत्थो दुविहो सव्वे देसे य होइ नायव्वो ।
सव्वम्मि नाण-दंसण-चरणाणं जो उ पासम्मि ॥ [१७१]

देसम्मि य पासत्थो सिज्जायरऽभिहडु रायपिंडं च ।
नीयं च अग्गपिंडं भुंजइ निक्कारणे चेव ॥ [१७२]

सिज्जायरु वसतिसामी[1] तेह तणइ घरि जु विहरइ असनादिकु सु सिज्जायरभिहडु[2] । जु राजपिंडु
20 भोगवइ । तथा 'नीयं च' नीच अच्छोपकुल रजकादिक तींहं संबंधिउं पिंडु नीचपिंडु कहियइ सु नीचपिंडु जु भोगवइ । तथा अग्रपिंडु अग्रबलि शिखाधान्यु नैवेद्यु कहियइ, जु अग्रपिंडु भोगवइ सु एवंविधु साधु देशपार्श्वस्थु कहियइ ।

कुलनिस्साए विहरइ ठवणकुलाणि य अकारणे विसइ ।
संखडिपलोयणाए गच्छइ तह संथवं कुणइ ॥ [१७३]

25 ए माहरा कुल इसी परि जु कुलनिश्रा करी विहरइ, आचार्यादिकहं निमित्ति स्थापित जि छइं कुल तेहे कुले कारण पाखइ जु 'विसइ' भिक्षानिमित्ति पइसइ[3] । 'संखडिपलोयणाए' संखडि विशेषभक्त व्यापारगृहु तेह तेणी अवलोकना करी जु विहरइ तथा गृहस्थसंस्तवु जु करइ गृहस्थ सउं मैत्री जु करइ सगलू देशपार्श्वस्थु कहियइ ।

§138) क्रिया नइ विषइ थाकइ इति अवपन्नु[1] किसउ अर्थु ? शिथिलता करी मोक्षमार्ग
30 थांतु अवपन्नु । यथा–

ओसन्नो वि य दुविहो सव्वे देसे य तत्थ सव्वम्मि ।
उव्वद्धपीठफलगो ठवियगभोई य नायव्वो ॥ [१७४]

---

§136) 3 B. Bh. omit ए-। 4 B. omits-य-। §137) 1 Bh. स्वामी। 2 Bh.-भिहुडु। 3 B. पइसइ। §138) 1 Bh. अवपिन्नु।

आवस्सय-सज्झाए पडिलेहण-झाण-भिक्खभत्तट्ठे ।
आगमणे निग्गमणे ठाणे य निसीयणे तुयट्टे ॥　　[१७५]

आवस्सयाइं न करे अहवा वि करेइ हीणमहीयाइं ।
गुरुवयणं च विराहइ भणिओ एसो य ओसन्नो ॥　　[१७६]

§139) कुत्सितु ज्ञानादिविराधकु शीलु स्वभावु जेह रहइं हुयइ सु कुशीलु कहियइ । यथा–　　5

कालविणयाइरहिओ नाणकुसीलो य दंसणे इणमो ।
निस्संकियाइविजुओ चरणकुसीलो इमो होइ ॥　　[१७७]

कोउय-भूईकम्मे पसिणापसिणे निमित्तमाजीवी[1] ।
कक्कुरुयाइलक्खण उवजीवइ विज्जमंताई ॥　　[१७८]

§140) असंविग्नसंगइतउ जु तद्भावु जाइ सु संसक्तु कहियइ । यथा–　　10

पासत्थाईएसुं संविग्गेसुं च जत्थ मिलिओ उ ।
तहिं तारिसउ होई पियधम्मो अहव इयरो य ॥　　[१७९]

§141) 'गुरु-आगमनिरविक्खो' जु गुरुनिरपेक्षु[1] आगमनिरपेक्षु[2] थिकउ सर्वकार्य विषइ आपणी इच्छा तणइ अनुसारि प्रवर्तइ सु यथाच्छंदु कहियइ । यथा–

उस्सुत्तमणुवइट्ठं सच्छंदविगप्पियं अणुणवाई ।
परतत्तिपवत्ते तंतिणे य इणमो अहाच्छंदे[3] ॥　　[१८०]　　15

पासत्थाई वंदमाणस्स नेव कित्ती[4] न निज्जरा होइ ।
कायकिलेसं एमेव कुणइ तह कम्मबंधं च ॥　　[१८१]

दृष्टांत पांच यथा–

दव्वे भावे वंदण १ रयहरणे २ वत्त ३ नमण ४ विणएहिं ।　　20
सीयल १ खुड्डुय २ कन्हे ३ सवय ४ पालय ५ उयाहरणा ॥　　[१८२]

§142) द्रव्यभाववंदन विषइ शीतलाचार्य दृष्टांतु ।

एक राय नउ पुत्रु सीतलु इसइ नामि हूंतउ । सु पुणि कामभोगइं हूंतउ[1] नवीनउ एकि[2] आचार्य समीपि दीक्षा प्रपन्नु हूयउ । तेह नी एक बहिन अनेरइ राइ एकि[3] परिणी । तेह ना चियारि[4] पुत्र हूया[5] । तींहं आगइ तींह नी माता कथांतरालि कहइ 'तुम्हारइ[6] माउलइ दीक्षा लीधी छइ' । इसी परि कहती[7] तेह रहइ घणउ कालु गयउ । तेहे अनेरइ दिवसि गुरुपादमूलि दीक्षा लेई गीतार्थ हूया[8] । चत्तार वि बहुस्सुया जाया । आचार्य पूछी करी मातुल वांदिवा गया । एकि[9] नगरि माउलउ सांभलिउ तिहां गया । विकालो जाउ त्ति काउं नगरबाहिरि रहिया । श्रावकु एकु नगरि जायतउ तेहे भणिउ, 'सीतलाचार्य[10] आगइ कहेहि, तुम्हारा भाणेज तुम्ह वांदिवा आवइं छइं, विकाल भणी राति न आवियाइं, प्रभाति आविसिइं[11]' । आचार्य तींहं नी आगमन वात सांभली करी हरषिया[12] । तींह चउहूं[13] रहइं राति समइ शुभ-ध्यानवमहवउ केवलज्ञानु ऊपनउं । प्रभाति आचार्य दिसावलोकनु करइं । हवडाई[14] जि मुहूर्ति एकि　　25　　30

§139) 1 Bh.–आजीवा । §141) 1 B. drops –र । 2 B. Bh. क्खुत्तु– । 3 Bh.–च्छंदे । 4 B. Bh. कीत्ती । §142) 1 Bh. हूयउ । L. हूतउ । 2 P. एकि । 3 P. omits. 4 L. च्यारि । 5 P. हूआ । 6 Bh. तम्हारइ । 7 Bh. कहिति । 8 L. हुया । P. हूआ । 9 Bh. एक । 10 L. शीतला– । 11 L. आविस्यइं । 12 P. हर्षिया । 13 Bh. चिहुं । 14 Bh. L. हवडां । Bh.–ई ।

जाओ। तस्स पुव्वं लोगेणं दव्वओ वंदणं कयं पच्छा भावओ वंदणं कयं अथवा तस्स पुव्वं दव्वसंजमो आसि पच्छा भावसंजमो। जाओ बीजउ दृष्टांतु।

§145) आवर्त्तादिकृतकर्म्मविषइ कृष्णु दृष्टांतु। तथा हि-

बारवईए नयरीए वासारत्ते सामी नेमिनाहो समोसढो। कन्हेण पुट्ठो, 'भयवं! वासारत्ते साहू कीस न विहरंति?' सामी भणइ[1], वासासु बहुजीवा पहुवी हवइ तेण न चरंति साहुणो'। तओ कन्हो[2] अंतेउरमज्झगओ वासारत्तं गमेइ[3]। वीरो नाम कुविंदो हरिभत्तो तत्थ वट्टइ। सो अंतेउरे पवेसं अलहंतो दारं पूइए वयइ हरिदंसणं विणा न जिमइ। वित्ते वासारत्ते रायाणो वीरओ य संपत्ता। हरिणा वीरओ पुट्ठो, 'किं वीरय! अईव दुब्बलो दीससि?[4]' दारवालेहिं जहावित्ते कहिए अक्खलियपवेसं वीरयं काउं सामिणो नेमिनाहस्स सपरियणो वंदणत्थं पत्तो कन्हो[5]। वंदिऊण सामिपायमूले उवविट्ठो। जइधम्मं सोऊण[6] हरी एवं विन्नवेइ, 'भयवं[7]! जइधम्मं काउं न खमो म्हि, तह वि जे अन्ने वयं गिण्हिस्संति[8] तेसिं अणुमोयणं[9] करिस्सामि, दिक्खामहूसवं च करिस्सामि, नियपुत्तस्स वि पुत्तियाए वा वयगहणनिसेहणं न[10] करिस्सामि'। इय[11] नियमं गहिऊण गिहे आगओ। अन्नया विवाहजुग्गाओ कन्नयाओ पायवडियाओ एवं भणइ, 'वच्छा[12]! सामिणीओ अहवा दासीओ हविस्सह?' ताओ भणंति 'अम्हे सामिणीओ भविस्सामो'। कन्हो भणइ, 'तो नेमिपासे दिक्खं[13] गिन्हह[14]'। आमं ति ताहिं भणिए निक्खमणमहामहिमं काउं पव्वावेइ।

§146) एगाए देवीए हरिपासे पेसिया निया कन्ना सिक्खविऊण, तओ सा कहइ, 'अहं दासी भविस्सामि'। इमं सोऊण कन्हो चिंतेइ, 'अन्ना[1] वि मा कुणउ एवं, ता[2] तेणं सन्निओ वीरओ नियं चरियं कहेइ कन्हस्स अग्गे। तक्कहियं सोऊण बीयदिणे हरी अत्थाणगओ कहइ 'भो भो सव्वे सामंता![3] वीरय-चरियं[4] कुलं च निसामेह।

> जेण रत्तप्फणो नागो वसंतो बदरीवणे[5]।
> आहओ पुहविसत्थेण वेमई नाम खत्तिओ[6] ॥ [१८३]
> जेण चक्खुग्गमा गंगा वहंती कलुसोदगं।
> धारिया वामपाएण वेमई नाम खत्तिओ[6] ॥ [१८४]
> जेण घोसवई सेणा वसंती कलसीपुरे।
> निरुद्धा वामहत्थेण वेमई नाम खत्तिओ[6] ॥ [१८५]

ता केउमंजरीए इमाए धूयाए एस उचिओ[7] वरु त्ति।' इसउं भणी करी अणिच्छमाणस्स वि वीरयस्स[8] दिन्ना हरिणा सा[9] कन्ना। वीरो वि कन्हभीओ तं कन्नं[10] परिणीय नियगिहं गओ। तं नेऊण तीए[11] देवय व्व सपरियणो वीरो सुस्सूसं कुणइ पइदिवसं। अन्नदिणे हरिणा वीरओ पुट्ठो 'किं तुह आणं करेइ मह धूया!' वीरओ भणइ, 'अहं तुह धूयाए आणं करेमि'। तओ रुट्ठो हरी तं भणइ, 'जइ सकम्माइं[12] न करावेसि[13] ता तुह नत्थि ठाणं'। वीरो हरिसियचित्तो गिहं पत्तो तं भणइ, 'लहुं पज्जलियं[14] कुणतुं। सा

---

§145) 1 Bh. L. P. पभणइ। 2 P. कण्हो। 3 P. गामेइ। 4 L. दीसइं। 5 P. कण्हो। 6 L. सोऊ। 7 L. भइवं। 8 P. गिण्हि-। 9 L. अणुमोयाणं। 10 P. omits. 11 P. ईय। 12 P. वच्छ। 13 L. दिक्ख गिण्ह। P. गिण्हं। §146) 1 P. अन्नो। 2 Bh. P. तो। 3 B. सामंत तो। 4 Bh. वीरयस्स। L. वीरियस्स। 5 L.बदिरी। 6 L. खित्तओ। 7 L. Sandhi: एसुचिओ। P. धूयाए स ओचिओ। 8. Bh. P. वरीयस्स। 9. P. स। 10. P. कन्नं। 11. L. तए 12. Bh. omits स। P. सकम्मा। 13 Bh. करवेसि। P. had the same, but it is corrected later. 14 Bh. L. पज्जलिय। P. पज्जलियं।

पडिभणइ, 'कोलिया! अप्पं न मुणसि'[15] वीरएणं रज्जुएणं बाढं ताडिया। तओ[16] सा रुयमाणी गिहे गंतुं कन्हस्स सव्वं साहइ। कन्हो भणइ, 'तए सामित्तं मुत्तुं दासत्तं मग्गियं'। सा भणइ, 'ताय[17]! इण्हिं पि मज्झ सामित्तं कुणसु'। हरी भणइ, 'जइ वीरओ मन्निस्सइ एवं'। तओ तीए बाढं अब्भत्थिओ कन्हो वीराओ मोइऊण तं पव्वावेउं पहुत्ता, निक्खमणमहूसवं[18] वंछइ।

§147) अन्नया सामी समोसरिओ। राया निग्गओ। अट्ठारस वि समणसाहस्सीओ वासुदेवो वंदिउकामो भट्टारयं पुच्छइ, 'अहं साहू कयरेणं वंदणेणं वंदामि'? 'केण पुच्छसि'? 'दव्ववंदणेणं भाववंदणेणं वा? जेणं तुब्भे वंदिया होह[1] तेणं वंदणेणं वंदिउं वंछामि'। सामी पभणइ, 'भाववंदणेणं'। ताहे सव्वे साहुणो बारसावत्तवंदणेणं वंदइ। कन्हो परसेओ जाओ। अन्नरायाणो जहा जहा परिस्संता तहा तहा अंतराले बेस ठिया। वीरओ वासुदेवाणुवित्तीए सव्वे वंदेइ। भट्टारयं पुच्छइ कन्हो, 'भयवं! मए त्रिणि सइं[2] साठ संग्राम कीधा, पुणि इसउ[3] थाकउ नहीं जिसउ हयडा[4] वांदणउं देयतउ थाकउ'। सामी पभणइ, 'तुमए खाइयं सम्मत्तं अज्जियं, एयाए सद्धाए तित्थयरनामकम्मं निव्वत्तियं, सत्तमीए[5] पुढवीए बद्धं आउकम्मं[6] निंदण-गरिहणाए उव्वेढंतेण[7] तइयपुढवीए[8] पाडणं कयं[10]'। तओ भणइ, 'बीयवारमवि वंदामि जेणं तइयनरयाओ छुट्टामि'। सामी भणइ, 'अओ परं दव्ववंदणं भवइ'।

भाववंदणे कन्हो दिट्ठंतो। दव्ववंदणे वीरओ दिट्ठंतो।

§148) शिरोवनामपूजायां सेवओ दिट्ठंतो। यथा-

एगस्स[1] रन्नो[2] दो सेवगा। तेसिं आसन्ना गामा। सीमानिमित्तं संगामो जाओ। ताहे रायसमीवं नगरे गया। गच्छंतेहिं तेहिं मग्गे साहू समागच्छंतो दिट्ठो। एक्केगो भणइ, 'साधुदर्शने ध्रुवा सिद्धिः'। निरयाहिणं काऊण वंदित्ता गओ। बीओ[3] साहू उप्पहसं करेइ, सो वि उवहासेणं वंदइ। गया रायसमीवे। ववहारो जाओ। पढमेणं जियं, बीएणं पराजियं। पढमसेवगस्स भाववंदणं। बीयसेवगस्स दव्ववंदणं। सेवककथा।

§149) विनयकर्मविषइ शांब-पालक कथा। यथा भयवं नेमिनाहो बारवईए[1] पुणो समोसढो। पच्चूसे पाहुडे[2] वरतुरंगमो आगओ। तया[3] हरिणा नियपुत्ता शांब-पालगा भणिया, 'जो पढमं सामिं पणमिस्सइ तस्स इमं तुरंगं दाहामि'। तओ संबो पभायसमए सिज्जाओ उट्ठिउं गिहे संठिओ चेव धुइ थुय-मंगलाईहिं[4] भावओ सामिं पणमेइ। लोभाभिभूयचित्तो पालओ राईए चउत्थपहरे उट्ठिऊण अमरसिट्ठीओ समवसरणे गंतुं मणेणं उक्कोसेइ, बाहिरविनीए[5] सामिं वंदइ, जंपइ, 'हरिस्स पुच्छंतयस्स पहु भणिस्सओ[6] तुब्भ[7]' इय भणिऊण नियत्तो, निविट्ठो मग्गंमि केसवस्स, तओ भणइ, 'मह[8] देसु आसं सामी मए वंदिओ पुव्वं'। राया जंपइ, 'को इत्थ सक्खिओ?' सो भणइ, 'नेमितिणो सक्खिओ'। ता एत्थ अंतरंमि, पहु[9] वंदिऊण उवविट्ठो। हरिणा पुट्ठो सामी, 'तुम्हे पढमं केण वंदिया?' सामी भणइ, "दव्वेणं[10] पालएण वंदिया, भावेणं पुण संबेण वंदिया अम्हे।' तओ तुट्ठेणं[11] हरिणा संबस्स दिन्नो वरतुरंगमो, अभवस्स अणंतिं[illegible] तस्स मज्झं। 'बारवईसु' ति काउं पालओ[12] निद्धाडिओ[13]।

§146) 15 L. मुणेसि। 16 B. [illegible] L. [illegible] 17 L. [illegible] 18 P. adds [illegible]। §147) 1 P. [illegible] 2 L. omits 3 P. [illegible] 4 B. omits. 5 P. [illegible] 6 L. [illegible] 7 P. [illegible] 8 P. [illegible] 9 B. [illegible] 10 P. L. [illegible]। §148) 1 L. [illegible] 2 P. [illegible] 3 L. [illegible]। §149) 1 P. [illegible] 2 L. [illegible] 3 B. L. [illegible] 4 B. [illegible] 5 L. [illegible] 6 L. [illegible] 7 Bh. [illegible] 8 B. [illegible] P. [illegible] 9 P. [illegible] 10 B. [illegible] 11 L. [illegible] 12 P. L. [illegible] 13 P. [illegible]

भाव-द्रव्यवंदणदिट्ठंता सव्वे संपुन्ना ॥

वंदनकनामानि पंच । यथा–

वंदण १ चिइ-२किइकम्मं ३ पूयाकम्मं ४ च विणयकम्मं च ५ ।
वंदणगस्स य एए नामाइं हवंति पंचेव ॥ [१८६]

§ 150) वंदनकस्य पंच निषेधा यथा– 5

वक्खित्त १ पराउत्ते २ पमत्ते ३ मा कयाइ वंदिज्जा ।
आहारं च करेंतो[1] ४ नीहारं वा जइ करेइ ॥ ५

व्याक्षिप्तु व्याख्यान–प्रतिलेखनादिकई करी । 'पराउत्ते' पराङ्मुखु । प्रमत्तु निद्रा-शिष्यशिक्षादा-नकोपरक्ता करी । शेषं स्पष्टम् ।

§ 151) दोष बत्रीस यथा– 10

अणाढियं १ च थद्धं २ च पविद्धं ३ परिपिंडियं ।
टोलगइ ५ अंकुसं ६ चेव तहा कच्छवरिंगियं ७ ॥ [१८७]
मच्छुव्वत्तं ८ मणसा पउट्ठं ९ तह य वेइयाबद्धं १० ।
भयसा चेव ११ भजंतं१२ मित्ती १३ गारव १४ कारणा १५ ॥ [१८८]
तेणियं १६ पडिणियं १७ चेव रुट्ठं १८ तज्जियं १९ एव य । 15
सढं २० च हीलियं २१ चेव तहा विप्पलिउंचियं २२ ॥ [१८९]
दिट्ठमदिट्ठं २३ च तहा सिंगं २४ च कर २५ मोयणं २६ ।
आलिद्धमणालिद्धं २७ ऊणं२८ उत्तरचूलियं २९ ॥ [१९०]
मूयं ३० च ढड्ढरं ३१ चेव चुडलियं ३२ च अपच्छिमं ।
बत्तीसदोसपरिसुद्धं किइकम्मं पउंजए ॥ [१९१] 20

अणाढियमिति । जु आदर पाखइ वांदणउं ॥ अनाहतु 'अणाढियं' कहियइ १ । 'थद्धं' देहि मनि विनयरहिति जु वांदणउं ॥ स्तब्धु २ । पविद्धमिति । ओरहां परहां जायतां हूंतां जु वांदणउं ॥ पविद्धु ३ । परिपिंडियमिति । घणा जि हुयइं वंदनीय तीहं सवहीं रहइं समकालु जु वांदणउं सु परिपिंडितु अथवा संपिंडित कर चरण हूंतउ वांदइ अथवा अव्यक्त वर्णसमुच्चारणु करतउ जु वांदइ सु 'परिपिंडिय' कहियइ ४ । 'टोलगइ' इति । टोलु तीडु तेह जिम ऊछली ऊछली जु वांदइ सु 'टोलगइ' ५ 25 हाथि साही गुरु चइगाली वांदता हूंतां अंकुसु ६ । साधु नी अपेक्षा रजोहरणु अंकुस जिम आगइ करी वांदता अंकुसु ६ । काछयो जिम आगइ पाछइ चालतां वांदतां 'कच्छवरिंगियं' कहियइ ७ । मत्स्य जिम उद्वेल्लनु करतां वांदतां हूंतां परावर्तनु करी अथवा अनेरउ वांदतां मत्स्योद्वृत्तु ८ ।

§ 152) मनसा प्रद्विष्टं जु गुरु ऊपरि द्वेषु वहतां मन माहि वांदणउं दीजइ ॥ मनसा पउट्ठु कहियइ ९ । वेदिकाबद्धु पांच भेदे यथा–गोडा ऊपरि बाहु निवेसी करी वांदतां १, अधोनि- 30 वेसी २, उत्संगि कुहणी निवेसी ३, एकु जानु बिहुं बाहु माहि करी वांदतां ४, बि जानु बाहु माहि करी वांदतां ५ वेदिकाबद्धु १० । भयसा चेव संघ-कुल-गच्छबहिर्निष्कासनभय करी वांदतां भयवंदनु ११ ।

§150) 1 Bh. करेंतो । §151) 1 Bh. चाड्या ।

भजंतं भजमानं 'मू रहइं भजइ सेवइ इउ' इति वांदइ सु भजंतु १२। 'मित्रु मू रहइं आचार्यु' इणि कारणि वांदइ अथवा 'मू रहइं एह सरसी मैत्री हुयउ' इसी बुद्धि करी वांदतां मैत्रीदोषु १३। 'मू रहइं समाचारीचतुरु जाणउं" इसी परि गर्वपूर्वकु जु वांदणउं सु गौरवदोषि दुष्टु गौरवु १४। कारणु वस्त्र-पात्रलाभादिकु तेह निमित्तु वांदतां कारणदोषु १५। लाघवभय वसइतउ प्रच्छन्न होई वांदतां तैनिकु १६।

§ 153) आहारादि करतां गुरु वांदतां प्रत्यनीकु १७। क्रुद्धु गुरु वांदतां रुष्टु अथवा सकोपि मनि वांदतां रुष्टु १८। 'न कोपु करिसि न पसाउ करिसि तइं वांदिइ किसउ छइ' इसउं कहतां वांदतां तर्जितु १९। जडे विश्रामकारणि मायापूर्वकु वांदतां शठु २० अथवा ग्लानता मिसि करी असम्यगु वांदतां शठु २०। 'हीलयं' इति। आचार्य प्रवर्तक रत्नाधिक इत्यादि उपहासवचनपूर्वकु वांदतां हीलितु २१। विपरिकुंचितु देशादिकथा करतां वांदतां विपरिकुंचितु २२। दृष्टादृष्टु अंधकारि आवर्त्तादि जिणि वांदणइ 10न करइं प्रकाशि करइ सु दृष्टादृष्टु कहियइ २३। आवर्त्त समइ वामदक्षिण शिरःशृंग फरसतां हूंतां शृंगु २४।

§ 154) कर राजभागु भागु तेह दीधा पाखइ छूटियइ नहीं, वांदणउं पुणि करबुद्धि करी देयतां हूंतां करु २५। मोचनु 'वांदणा दीधा पाखइ हउं मेल्हिउं नहीं' इति मोचन निमित्तु वांदतां मोचनु २६। आश्लिष्टानाश्लिष्टु चउं प्रकारहं हुयइ-केती हीं वार गुरुपादहं अथवा मुहुंती हाथ 15लगाडइ ललाटि न लगाडइं १ ललाटि लगाडइ गुरुचरणहं न लगाडइं २, केती हीं वार बिहुं न लगाडइं ३ बिहुं लगाडइं ४ वि भांगा आश्लिष्टानाश्लिष्ट बीजउ अनाश्लिष्टु चउथउ रूडउ २७। व्यंजन अक्षर आवश्यक चूर्णिहिं भणियां तीहं करी परिपूर्णु जु न हुयइ सु न्यूनु २८। द्वादशावर्त्तु वांदणउं दे करी अनइ घणी समाचारमणु दे करी जउ वांदइ तउ उत्तरचूलियं कहियइ २९। मूयं चेति। मूक जिम अव्यक्त वर्ण ऊचरतां जु वांदणउं दीजइ सु मूकु ३०। मोटइ कठोरस्वरि जु वांदणउं दीजइ सु ढड्डरु 20३१। चुडलियं चेति। चुडुली ऊंबाडु तेह जिम रजोहरण धरतां वांदतां चुडुलिउ अथवा हाथ ऊंपाड जिम भमाडी नमइ वांदउं इसउं भणतां चुडुलिउ अपश्चिमं-बत्रीसमउ दोषु कहियइ ३२। इति बत्रीस कृतिकर्मदोषरहितु कृतिकर्मु वांदणउं 'पउंजए' किसउ अर्थु? प्रयुंक्ते दियइ इसउ अर्थु।

किइकम्मं पि कुणंतो न होइ किइकम्मनिज्जराभागी।
बत्तीसामन्नयरं साहू ठाणं विराहिंतो ॥ [१९२]

25 बत्तीसदोसरहियं किइकम्मं जो पउंजइ गुरूणं।
सो पावइ निव्वाणं अचिरेण विमाणवासं वा ॥ [१९३]

§ 155) कारण आठ, यथा—

पडिक्कमणे १ सज्झाए २ काउस्सग्गा ३ वराह ४ पाहुणए ५।
आलोयण ६ संवरणे ७ उत्तमट्ठे य वंदणयं ॥ [१९४]

30 कालइं अनुष्ठानु कार्इ साधु उरिमी करिउं, श्रावक रहइं पुणि जु योग्यु हुयइ सु जाणिवउं। तथाहि-प्रतिक्रमणइ चार्इ वांदणां देवउं। "चत्तारि पडिक्कमणे किइकम्मा" इसा आगमवचनहतउ। 'सज्झाए' त्रिहुं स्वाध्याय अथवा साधु सम्बन्धी योग वहतां सज्झाउ अनुष्ठानविशेषु करइ तिहां वांदणउं साधु

§153) 1 Bh. हुइ। 2 Bh. वहुल। 3 नमइ। §154) 1 Bh. drops till next चुडुलिउ। 2 Bh. व। §155) 1. Bh. कायइ।

साध्वी रहइं संभवइ, श्रावक श्राविका रहइं न संभवइं। 'काउसग्ग' इति। विगइनियमग्रहणादिनिमित्तु छइ काउसग्गु तेह कारणि वांदणउं साधु रहइं संभवइ, श्रावक रहइं पुणि यथासंभवु जाणिवउं। अपराधक्षामणा श्रावकही रहइं संभवइ इति तिहां वांदणउं श्रावकहीं रहइं संभवइ। प्राघूर्णकवंदनु आलोचना वंदनु श्रावकही रहइं घटइ। भक्तार्थी हूंतउ किणिहिं कारणि अभक्तार्थु प्रत्याख्यातु करइ सु संवरणु अथवा दिवसचरमु संवरणु तेह निमित्तु वांदणउं श्रावकहीं रहइं संभवइ। उत्तमार्थु अंतसंलेखना भवस्स चरमरूप 5 तेह निमित्तु वांदणउं श्रावकहीं रहइं घटइ।

§156) दोष छ यथा–

माणो १ अविणय २ खिंसा ३ नीयागोयं ४ अबोही ५ भववुड्ढी।
अनमंतस्स छ दोसा एवं अडनउयसयमहियं ॥ [१९५]

§157) विनयादिक छ गुण वांदणा तणा पूर्विहिं भणिया। अनेरउं पुणि वांदणा नउं फलु 10 उत्तराध्ययनसिद्धांत माहि सांभलियइ। तथा हि–

(प्र-) वंदणएणं भंते ! किं जणइ ?

(उ-) गोयमा ! वंदणएणं नीयागोयं कम्मं खवेइ। उच्चागोयं कम्मं बंधइ। सोहग्गं च णं अप्पडिहयं आणाफलं निव्वत्तेइ। दाहिणभावं जणइ।

§158) अथ अनंतरु वंदनकसूत्रु वखाणियइ। 15

आयप्पमाणमित्तो चउदिसिं होइ उग्गहो गुरुणो।
अणणुन्नायस्स सया न कप्पए तत्थ पवेसिउं ॥ [१९६]

इसा वचनहूतउ आत्मप्रमाणभूमि माहि गुरु तणी आज्ञा पाखइ पइसिवा कल्पइ नहीं, तिणि कारणि गुरु हूंतउ अहूठे हाथे वेगलउ आगइ ऊभउ होई 'इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निस्सीहियाए मत्थएण वंदामि' इसउं भणी 'भगवन्। मुहपत्तियं पडिलेहेमि' इसउं कही पुनरपि 20 खमासमणु दे करी विधिवत् मुहुंती पडिलेहइ। तउ पाछइ ऊभउ अवनतोर्द्धगात्रु होई करी हाथि ओघउ मुहुंती मुह आगइ धरी करी भणइ 'इच्छामि' इत्यादि। 'इच्छामि' ईछउं-अभिलखउं-वांछउं। 'खमासमण' क्षमाश्रमण-क्षमाप्रधान श्रमण दशविध श्रमणधर्मसहित ! इसउं वंदनीक गुरु तणउं संबोधनु, हे क्षमाश्रमणसद्गुरो !। 'वंदिउं' वांदिवा। किसइ करी ? 'जावणिज्जाए' जपियइ कालु खपियइ इणि करी इति यापनीया उत्थान। उपवेसनकरणसमर्था। स कउण ? 'निस्सीहियाए' निषेधु पापव्यापारपरिहारू प्रयोजनु 25 जेह रहइं ॥ नैषधकी तनु तिणि करी। एतलइ 'इच्छ' इसउं प्रथमु स्थानु। यथा–

इच्छा य १ अणुन्नवणा २ अव्वाबाहं ३ च जत्त ४ जवणा य ५
अवराहखामणा ६ वि य छ ट्ठाणा हुंति वंदणए ॥ [१९७]

शिष्यि एतलइ भणिइ हूंतइ जइ गुरु व्याक्षिप्तु हुयइ तउ भणइ संखेपिहिं वांदि। आवश्यकचूर्णि अनइ वृत्ति माहि पुणि 'त्रिविधेन मनवचनकायहं करी संक्षेपिहिं वांदि' इसउं भणिउं। तउ शिष्यु 30 संक्षेपिहिं वांदइ।

§159) अव्याक्षिप्तु पुणि 'छंदेण' इसउं भणइ इति पहिलउं गुरुवचनु। यथा–

§155) 2 Bh. drops ग्रहण।

छंदेण १ अणुजाणामि २ तहत्ति ३ तुब्भं पि वट्टए ४ एवं ५ ।
अहमवि खामेमि तुम्हे ६ वयणाइं वंदणरिहस्स ॥ [१९८]

'छंदेण' नउ अर्थु मूं रहइं निराबाधु एउ अर्थु ।

§ 160) तउ शिष्यु बोलइ 'अणुजाणह' 'मे' 'मिउग्गहं'¹ इति बीजउं थानु । मूं रहइं अवग्रह नी
5 अनुज्ञा दियउ । अवग्रह तणउ अर्थु पूर्विहिं भणिउ छइ । ईहां गुरुवचनु । 'अणुजाणामि' इति गुरु भणइ । अवग्रह तणी अनुज्ञा हउं दिउं छउं । तउ पाछइ शिष्यु अवग्रह माहि पइसी विधिवत् भूमि संडासा पडिलेही करी² बइसी करी गुरुपाद आपणउं ललाटु करइं करी फरसतउ हूंतउ 'अहो कायं काय-' इसउं पढइ । अवश्य जाणिवा आवर्त्त इति आवर्त्तविधि कहियइ । मंदस्वरि 'अ' उच्चारणु करतां गुरुचरण करइं करी फरिसवा कर आवर्त्तावी गुरुस्वरि 'हो' उच्चारणु करतां ललाटु फरसिवउं । इसी
10 परि 'कायं काय-' ए पुणि वि वि आखर उचरेवा आवर्त्त करिवा । एवं आवर्त्त त्रिन्हि । तथा 'ज' मंदस्वरिं 'त्ता' मध्यस्वरि ऊचरतां कर आवर्त्तावी 'भे' उच्चैःस्वरि ऊचरतां ललाटु फरसियउं । एवं 'जवणिज्जं च भे' ए पुणि त्रिन्हि त्रिन्हि अक्षर ऊचरतां आवर्त्त करिवा, एवं आवर्त्त छ बीजइ थानणइ । पुणि इसी परि आवर्त्त छ । एवं आवर्त्त बारह ।

§ 161) अधःकायु गुरुचरण तेह प्रति कायसंफासु माहरउ कायु हस्त ललाट लक्षणु तिणि करी
15 संस्पर्शु तेह नी पुणि अनुज्ञा दियउ । इसी परि 'अणुजाणह' पद नी योजना ईहां पुणि करेवी । तउ मस्तकि अंजलि करी गुरुमुखि दत्तदृष्टि हूंतउ भणइ 'खमणिज्जो भे किलामो अप्पकिलंताणं बहु सुभेण भे दिवसो वइक्कंतो' । 'खमणिज्जो' खमेवउ-सहेवउ । 'भे' तुम्हे । क्लमु माहरां हाथ ललाट लागतां हूंतां जु तुम्ह रहइं कष्टु हुयइ सु सहियउ । तथा अपक्लांतहं निराबाधहं 'बहु सुभेण' घणइ शुभि करी 'भे' तुम्ह रहइं दिवसु व्यतिक्रमिउ-गयउ । दिनग्रहणु रात्र्यादिकालोपलक्षणु इति त्रीजउं स्थानु । अत्र
20 गुरुवचनु 'तहत्ति,–'जिम तउं पूछइ तिम छइ' इसउ 'तहत्ति' नउ अर्थु ।

§ 162) त्रीजउं गुरुवचनु शिष्यु देहवार्ता पूछी करी संजमवार्ता पूछइ । 'जत्ता भे' यात्रा संयम सज्झायरूप 'भे' तुम्ह रहइं समुत्सर्पइ-हुयइ इति चउथउं स्थानु । अत्र गुरुवचनु 'तुब्भं पि वट्टइ'¹ इति । मू रहइं तां संयमयात्रा वर्त्तइ-हुयइ-छइ तुम्ह रहइं पुणि वर्त्तइ इसउ अर्थु 'तुब्भं पि वट्टए' एह तणउ । पुनरपि शिष्यु भणइ 'जवणिज्जं च भे' जापनीउ भणियइ शरीरु सु पुणि 'भे' तुम्ह तणउं इंद्रिय
25 स्पर्शनेंद्रियादिक नोइंद्रिउ मनु तींहं करी निराबाधु वर्त्तइ इति पांचमउं थानु । अत्र गुरुवचनु 'एवं' जिम तउं पूछइ तिम इसउ अर्थु 'एवं' एह नउ । पुनरपि शिष्यु बोलइ-'खामेमि खमासमणो देवसियं वइक्कमं', हे क्षमाश्रमण गुरो ! दैवसिकु दिवस संजातु व्यतिक्रमु-अपराधु खमावउं इति छट्ठउं स्थानु । अत्र गुरुवचनु 'अहं अवि खामेमि तुम्हे',हउं पुणि अविधि² शिक्षाप्रदानादि दैवसिकु व्यतिक्रमु अपराधु खमावउं । अत्र गुरु आपणपा आगइ एकवचनु शिष्य आगइ बहुवचनु भणतउ हूंतउ गर्वु परिहरइ ।

30 § 163) तउ विनेउ ऊठी करी 'आवस्सियाए' इत्यादिकि आलोयणायोग्य 'तस्स खमासमणो पडिक्कमामि' इत्यादिकि प्रतिक्रमणयोग्य पायच्छित्ति करी आपणपउं सोधणहारु हूंतउ अवग्रहइवउ नीसरी करी इसउं पढइ 'आवस्सियाए' इत्यादि अवश्य कार्य चरणकरणसत्तरीरूप तिहां ज हुयइं स आवश्यकी क्रिया तिणि करी आसेवनाद्वारि जु असाधु कीधउं तेह हूंतउ पडिकमउं निवर्त्तउं इसी परि सामान्यहीं भणी

§160) 1 Bh. मग्गहं । 2 Bh. omits । §162) 1 Bh वट्टइ । 2 Bh. अवधि ।

करी विशेषि करी भणइ, 'खमासमणाणं' क्षमाश्रमण महामुनि भणियइं, तींहं संबंधिनी ज दैवसिकी आशातना तिणि करी। स पुणि किसी ? इत्याह 'तित्तीसन्नयराए' त्रेत्रीस आशातना माहइतउ अन्यतर एक अनामनिर्दिष्ट तिणि करी।

§164) ति पुणि त्रेत्रीस आशातना ए कहियइं–

पुरओ पक्खासन्ने गंता ३ चिट्ठण ३ निसीयणा ३ ऽऽयमणे १०।
आलोयणऽ ११ पडिसुणणे १२ पुव्वालवणे १३ य आलोए १४ ॥　　[१९९]
तह उवदंस १५ निमंतण १६ खद्धा १७ ययणे १८ तहा अपडिसुणणे १९।
खद्ध २० त्ति य तत्थगए २१ किं २२ तुम २३ तज्जाय २४ नो सुमणे २५ ॥ [२००]
नो सरसि २६ कहं छित्ता २७ परिसं भित्ता २८ अणुट्ठियाइ कहे २९।
संथारपायघट्टण ३० चिट्ठ ३१ च ३२ समासणे ३३ आवि ॥　　[२०१]

गुरु आगइ पिहुं पार्श्वइं पूठि आसन्नगमनि त्रिन्हि आशातना ३, स्थानि ६, निषीदनि,वइसिवइ ९, बाहिरि गया गुरुनउ पहिलउं आचमनि १०, पहिलउं गमनागमनालोचनि ११, राति समइ कउणु सूतइ जागइ या इसइ गुरि पूछिइ हूंतइ जागताइं शिष्य रहइं गुरुवचन तणइ अपडिसुणणि १२, साधु श्रावकादि समागमनि गुरुनउ पहिलउं आलपनि-आभाषणि १३, अनेरा आगइ पहिलउं भिक्षा आलोईं पाछइ गुरु आगइ भिक्षा आलोचनि १४, इसी परि उपदर्शनि १५, निमंत्रणि १६, गुरु अणपूछी आपणी रुचि साधु रहइं 'खद्धु त्ति' मधुर देयतां १७, गुरु रहइं अरसविरसु दे करी आपणपइं स्निग्धमधुरादिभोगइतउ अदनु १८, राति जिम पीजे ई कालि अप्रतिश्रवणि-गुरुवचन तणइ अप्रतिश्रवणि[1] १९, 'खद्ध' त्ति गुरु प्रति निष्ठुर भणनि २०, जिहां [illegible] तिहां ई जि थिकउ गुरु रहइं प्रतिवचनु देयतां 'तत्थगए' २१, गुरु प्रति 'किं' इति वचनि भणियइं 'मत्थएण वंदे' २२, गुरु आगइ 'तउं' कथनि 'तुम्हे' इमउं कहियउं २३, 'अमुक ग्लान तणउं वैयावृत्त्यादि कार्यु करि' इसइ कथनि गुरि कहिइं[2] हूंतइ 'तुम्हे काइं न करो' इसउं भणनु तज्जायवचनु २४, गुरि तत्त्वु कहतइ हूंतइ शून्य चित्तकरणु 'नो सुमणु' तिणि करी २५, 'न सम्यक् समरइ तउं' 'एउ अर्थु समर्थु नही' इसा वचन तणइ भणनि २६, आपणइ कथा कथनि करी गुरुकथाच्छेदनि २७, इयडां भिक्षावेला हुई इति सभाभेदनि २८, सभा अणऊठी हूंती आपणरा रहइं वचनपाटव जाणाविवा कारणि सविशेष व्याख्यान कथनि २९, गुरुशय्यादि रहइं पादादिघट्टनि चरणादि लगाडणि ३०, 'चिट्ठ' त्ति-गुरुशय्यादि उपवेशनि ३१, एवं उच्चासनि ३२, समासनि ३३, ए त्रेत्रीस आशातना भणिना।

§165) इयडांइ जि आशातना माहि काई एकु विशेषि करी भणइ 'जं किंचि मिच्छाए' इत्यादि आलंबनु 'यत् किंचित्' कहियइ। तद्यादि–

'आलंबणाणि' दुहा भवंति। पडियाऽऽलंबणाणि, चडियाऽऽलंबणाणि य।

जि मिथ्यात्वबहुलजीव हुयइं ति पडियालंबण आश्रइं। जि सम्यग्दृष्टि जीव हुयइं ति चडियालंबण आश्रइं। यथा च भणितं–

जाणिज्ज मिच्छदिट्ठी जे पडियालंबणाणि गिन्हंति।
जे पुण सम्मदिट्ठि तेसिं मणो चडणपइडीए ॥　　[२०२]

§164) 1. Bh आपति। 2 Bh. has, instead, अनंगीकरणि। 3 Bh. कहियइ। [illegible]

, यत् किंचिन् आलंबनु आश्रई मिथ्याभावु जिणि क्रियां हुयइ स मिथ्याक्रिया-शरीरि वैयावृत्यादि क्रियाकरणसामर्थिहिं हूंतइ असमर्थनादि व्यपदेशि करी इत्यर्थः । तउ पाछइ अधादिलिइतउ मिथ्या ईहां छइ इणि अर्थि 'अ' प्रत्यइ कीधइ हूंतइ 'मिच्छाए' एह नउ अर्थु 'मिथ्यायुक्तया' इसउ हुयइ।

§ 166) 'मणदुक्कडाए' इत्यादि। मनोदुष्कृतु द्वेषकरणादिकु[1] जेह माहि हुयइ स मणदुक्कडा 5 तिणि करी। असभ्यु कठिनु वचनु वाग्दुष्कृतु जेह माहि हुयइ स वाग्दुक्कडा[2] तिणि करी। आसन्न-गमन-स्थानादिकु कायदुष्कृतु जेह माहि हुयइ स कायदुक्कडा तिणि करी। क्रोधु जेह माहि हुयइ स क्रोधा तिणि करी। मानु जेह माहि हुयइ स माना तिणि करी। माया जेह क्रिया माहि हुयइ स माया तिणि करी। लोभु जेह क्रिया माहि हुयइ स लोभा क्रिया तिणि करी। 'सव्वकालियाए' अतीता-ऽनागत वर्तमान लक्षणि सर्वकालि ज कीधी आशातना स सर्वकालिकी। भविष्यि कालि किसी परि आशातना 10 संभवइ ? 'आवतइ दीहि एह गुरु रहइं इसउं इसउं अनिष्टु करिसु' इति चिंताकरणइतउ भविष्यि कालि आशातना संभवइ। तिणि करी। 'सव्वमिच्छोवयाराए' सर्वइ मिथ्या उपचार विनयकरणादिक भाव जेह क्रिया माहि हुयइं स सर्व मिथ्योपचारा तिणि करी। 'सव्वधम्माइक्कमणाए' स सर्व धर्म्म अष्ट प्रवचनमातर अथवा करणीय व्यापार तीहं नउं अतिक्रमणु लंघनु जिणि क्रियां हुयइ सर्व धर्म्मातिक्रमणा तिणि करी जे[3] आशातना तिणि करी जु मइं अतिचारु अपराधु कीधउ तेह अतिचार हूंतउ हे 15 क्षमाश्रमण ! ताहरी साखि पडिकमउं निवर्त्तउं अपुणकरणि करी वली नहीं करउं इसउ अर्थु। ईहां 'समाप्ति निमित्तु 'आशातना' ग्रहणु, तिणि कारणि पुनरुक्तदोषु नहीं। तथा दुष्कर्मकारकु आपणपउं निंदउं भयविरक्त चित्तभावि करी। तथा गर्हउं तुम्हारी साखि। 'अप्पाणं वोसरामि' आशातनाकारकु आपणपउं वोसिरिउं मेल्हउं।

§ 167) बीजउं वांदणउं[1] इसीहीं जि परि दीजइ। पुणि 'आवसियाए' न कहियइं। अवग्रह 20 हूंतउं निःक्रमणु पुणि न कीजइं इसी परि वंदनकु दे करी शिष्यु कांई एकु ऊर्ध्वकाउ नमावी करी अवग्रहमध्यमाणि वर्त्तमानु हूंतउ आलोयणउं करणहार हूंतउ गुरु प्रति इसउं कहइ, 'इच्छाकारेण संदिसह' इत्यादि। इच्छाकारि आपणी वासना करी न पुणि बलात्कारि। 'संदिसह' आदेसु दियउ। 'देवसियं' दिवसकृतु अतिचारु। इसउं.आपदे गमियइ रात्रिकृतु पुणि जाणिवउ। 'आलोचयामि' 'आ' मर्यादा करी अथवा सामस्त्यभावि करी लोचउं-प्रकटु[2] करउं। अत्रांतरे 'आलोचय' इसउं गुरुवचनु[3] 25 सांभली करी शिष्यु कहइ, 'इच्छामि' तुम्हारउं वचनु अंगीकरउं। 'आलोचयामि' इणि करी अंगीकृतु अर्थु क्रिया करी दिखालउं।

§ 168) आलोयणा ई जि साक्षात्कारि भणइ। 'जो मे देवसिओ' जु मइं दैवसिकु दिवस माहिं अतिचारु कीधउ सु पुणि अनेकप्रकारु हुयइ इत्याह 'काइओ' काय करी कीधउ। 'वाइओ' वचनि करी[1] कीधउ। 'माणसिओ' मनि करी कीधउ। काइकु अनइ वाइकु[2] दिखालइ-'उस्सुत्तो' 'उम्मग्गो'। 30 उत्सूत्रु-सिद्धांतविरुद्धु अकालक्रियाकरणादिकु। उन्मार्गु-क्षयोपशमिकभावरूपु मार्गु लांघी करी चारित्रावारक कर्म्मोदय भावि करी कीधउ उन्मार्गु। 'अकप्पो'-अकल्पनीउ। 'अकरणिज्जो'-करिवा उचितु नहीं। जिणिहिं जि कारणि उत्सूत्रु तिणिहिं जि कारणि उन्मार्गु, जिणिहिं जि कारणि उन्मार्गु, तिणिहिं जि

§166) 1 Bh. द्वेष-। 2 Bh.-दुष्कृत। 3 Bh. ज। §167) 1 Bh. frequently writes the initial syllable in this word as वां-। 2 Bh. प्रकटउं। 3 Bh. गुरु नउं वचनु। §168) 1 B. omits. 2 Bh. वायइ।

कारणि 'अकप्पो' जिणिहिं जि कारणि अकप्पु तिणिहिं जि कारणि 'अकरणिज्जो'। इसी परि पाछिलिउं[2] पाछिलिउं[2] हेतु कारणु, आगिलउं आगिलउं हेतुमंतु कार्यु। काइकु अनइ वाइकु भणियां।

§169) इव मानसिकु कहइ-'दुज्झाओ'-एकाग्रचित्तता करी आर्त्त-रौद्रलक्षणु दुर्ध्यानु अशुभु चलचित्तता करी चीतविउ जु दुर्विचिंतिउं। "जं थिरं अज्झवसाणं तं झाणं, जं चलं तयं चित्तं" इति वचनात्। जिणिहिं जि कारणि इसउं तिणिहिं जि कारणि 'अणायारो' अनाचारु। जिणिहिं जि कारणि अनाचारु तिणिहिं जि कारणि 'अणिच्छियव्वो' अनेष्टव्यु-वांछिवउ नहीं। जिणिहिं जि कारणि 'अणिच्छियव्वो' तिणिहिं जि कारणि 'असावगपाउग्गो' श्रावक रहइं योग्यु नहीं। किसा विषइ? इत्याह-'नाणे' ज्ञानु मतिज्ञानादिकु तेह नइ विषइ अश्रद्धानादि करी। 'दंसणे' दर्शनु सम्यक्त्वु तेह तणइ विषइ शंकादिकरण भावि करी। 'चरित्ताचरित्ते' चरिताचरितु देशविरतिश्रावकधर्म्मु तेह तणइ विषइ। ज्ञानादिकइ जि कहइ-'सुए' श्रुतु सिद्धांतु तेह नइ विषइ अकालस्वाध्यायादिकि करी। 'सामाइए' 'सम्यक्त्वसामाइकु' 'सामाइक' शब्दि करी ईहां कहियइ तेह नइ विषइ संशयकरणादि भावि करी। 10

§170) चरिताचरितातिचारु भेदि करी कहइ-'तिन्हं गुत्तीणं, चउन्हं कसायाणं, पंचन्हं अणुव्वयाणं, तिन्हं गुणव्वयाणं, चउन्हं सिक्खावयाणं'। त्रिउं[1] गुप्ति माहि, चउं कसाय माहि, पांच अणुव्रत माहि, त्रिउं गुणव्रत माहि, चउं शिक्षाव्रत माहि सविहुं व्रत तणइ मीलनि 'बारसविहस्स सावगधम्मस्स' द्वादशविध श्रावकधर्म्म माहि जु कांई खंडिउं थोडउं सउं भागउं, जु विराधिउं घणउं भागउं सर्वथा वा भागउं 'तस्स मिच्छा मि दुक्कडं' तेह संबंधिउं, 'मे' माहरउं दुष्कृतु, मिथ्या निष्फलु हुउ-इसउं आपहे गमियइ। 15

§171) पुनरपि विनेउ विनतकाउ वर्द्धमानसंवेगु मायादिदोषरहितु आपणपा रहइं सर्वशुद्धिनिमित्तु इसउं पढइ 'सव्वस्स वि देवसिय' इत्यादि। सर्वही दैवसिकइ दुर्विचिंतितइ दुर्भाषितइ दुश्चेष्टितइ मनवचनकायव्यापारइ 'इच्छाकारेण संदिसह भगवन्!' तुम्हे आपणी इच्छा आदेसु दियउ। अत्र गुरुवचनु 'पडिक्कमह तस्स' पूर्वभणितव्यापारइ संबंधिउं 'मे' माहरउं दुष्कृतु मिथ्या निष्फलु हुउ। 20

§172) तउ पाछइ अवग्रह हूंतउ नीसरी करी पुनरपि वंदनु दे करी अपराधक्षामणा विषइ समुद्यतु हूंतउ इसउं कहइ-'इच्छाका० संदिसह अब्भुट्ठिओऽहं अब्भिंतरदेवसियं खामेमि' इच्छाकारेण आपणी इच्छा करी, 'संदिसह' आदेसु दियउ, अभ्युत्थितु हउं अभिंतर 'देवसिओ' दिवसमध्यसंभूतु अतिचारु खमाविवा निमित्तु उद्यमपरायणु वर्त्तउं। तउ पाछइ 'खामह' इसउं गुरुवचनु सांभली करी पुनरपि शिष्यु भणइ-'इच्छं' ईच्छउं भगवंत नी आण, खमावउं दैवसिकु आपणउ अपराधु। तउ पाछइ विधिपूर्वक पंचांगसंस्पृष्टभूतलु मुखवस्त्रिका मुखदेसि दे करी इसउं भणइ-'जं किंचि अपत्तियं' जु कांई सामान्यहिं अप्रीतिकु अप्रीतिमात्रु, 'परपत्तियं' पराऽप्रीतिकु गाढउं अप्रीतिकु, किसा विषइ? 'भत्ते', 'पाणे' भक्त तणइ विषइ, पानक तणइ विषइ। 'विणए' विनउ अभ्युत्थानादिकु तेह नइ विषइ। 'वेयावच्चे' वैयावृत्त्यु ऊषधपथ्यावष्टंभदानादिरूपु तेह नइ विषइ। 'आलावे' एकवार भाषण विषइ। 'संलावे' पुनः पुनर्भाषणकथारूप विषइ। 'उच्चासणे' गुरुआसनतउ ऊंचा आसन विषइ। 'समासणे' गुरुआसनतुल्य आसन विषइ। 'अंतरभासाए'[1] गुरु बोलतां हूंतां विचालभाषणरूप अंतरभाषा[1] तेह नइ विषइ। 'उवरिभासाए' गुरुभाषा अनंतरु विशेषवचनपाटव जाणाविवा निमित्तु उपरिभाषा तेह नइ विषइ। ईहं भक्तादिकइं नइ विषइ अप्रीति पराऽप्रीति भावि करी जु कांईं मू रहइं विनयपरिहीनु अभक्तियुक्तु हुयउं सूक्ष्मु अल्पु आलोचनादिकु प्रायश्चित्तु तिणि करी जु सूझइ सु सूक्ष्मु। बादरु षष्ठाऽष्टमादिकु गुरुप्रायश्चित्तु तिणि 25 30

§168) 2 Bh. पाछिलउं। §170) 1 Bh. त्रिहुं। §172) 1 Bh. अंतरा-।

करी जु सूझइ सु पादरु। 'तुब्भे जाणह' तुम्हे अतिशयसहित ज्ञानभावइतउ जाणउं। 'अहं न जाणामि' मूर्खभावता करी हउं न जाणूं। 'तस्स मिच्छा मि दुक्कडं' तेह अप्रीतिकादि विषइ अतिचार तणउं दुष्कृतु 'मे' माहरउं मिथ्या निष्फलु हुउ ॥ छ ॥

§173) पुनरपि त्रि वांनणां दे करी यथाशक्ति प्रत्याख्यानु करइ। अत्र सात अर्थाधिकार। यथा–प्रत्याख्यान १, प्रत्याख्यानभंग २, प्रत्याख्यानाकार ३, प्रत्याख्यानसूत्र ४, प्रत्याख्यानसूत्रार्थ ५, प्रत्याख्यानशुद्धि ६, प्रत्याख्यानफल ७। एवं नाम तत्र प्रत्याख्यानु बिहुं भेदे यथा-मूलगुणप्रत्याख्यानु १, उत्तरगुणप्रत्याख्यानु २। तत्र मूलगुणप्रत्याख्यानु पुणि बिहुं भेदे। यथा-सर्वमूलगुणप्रत्याख्यानु साधु तणां पांच महाव्रत १, देसमूलगुणप्रत्याख्यानु श्रावक तणां पांच अणुव्रत २। उत्तरगुणप्रत्याख्यानु पुणि बिहुं भेदे-सर्वोत्तरगुणप्रत्याख्यानु। साधु तणा उत्तरगुण वर्णवइ संख्या यथा–

पिंडस्स जा विसोही ४७, समिईओ ५ भावणा १२ तवो दुविहो २।
पडिमा १२ अभिग्गहा चिय ४ उत्तर गुणमो वियाणाहि ॥ [२०३]

तत्र उद्गमैषणा १६, उत्पादनैषणा १६, ग्रहणैषणा १०, ग्रासैषणा ५ भेद। सव्वइ मिलिया ४७। यथा-आधाकर्मु १, औद्देशिकु २, पूतिकर्मु ३, मिश्रजातु ४, स्थापना ५, प्राभृतिका ६, प्रादुष्करणु ७, क्रीतु ८, प्रामृत्यु ९, परिवर्तितु १०, अभ्याहृतु ११, उद्भिन्नु १२, मालाभ्याहृतु १३, आच्छेद्यु १४, अनिसृष्टु १५, अध्यवपूरकु १६, ए सोल उद्गमदोष नाम[1] कहियइं।

§174) तत्र आधाकर्मु कहियइ–

आहाइ विपप्पेणं जईण कम्मं असणाइ करणं जं।
छक्कायारंभेणं तं आहाकम्मं आहिंसु ॥ [२०४]

मादरइ घरि साधु विहरिवा आविसिइं इसइ संकल्पि करी इसी मन तणी चिंता करी षट्काय पृथिवीकायादि[1] जीवनिकाय तीहं तणइ आरंभि विनासि करी कर्मु असन-पान-खादिम-स्वादिमरूप चतुर्विध सिद्ध तणउं रंधन प्रासुककरणलक्षणु जु गृहस्थु करइ सु आधाकर्मु कहियइ १।

§175) तथा–

उद्देसियं अह विभागओ य ओहे मए जं आरंभे।
भिक्खाउ कइ वि कप्पइ जो एही तस्स दाणट्ठा ॥ [२०५]

औद्देशिकदोषु बिहुं भेदे-ओघोद्देशिकु १, विभागोद्देशिकु २। तत्र ओघोद्देशिकु यथा-आपणपा निमित्ति आरंभि कीधइ हूंतइ पाछइ जु को भिक्षाचरु मादरइ घरि आविसिइ तेह निमित्तु भिक्षा तणा बेई एकि मान करइ। किसउ अर्थु? आपणां घरमानुसइं तणइ अनुसारि धानि ओरियइ हूंतइ पाछइ कणी लेई कि हांडी माहि भिक्षाचर निमित्तु अधिकेरउं धानु जु ओरियइ सु ओघोद्देशिकु कहियइ। विभागोद्देशिकु बारह भेदे तिम होइ तिम कहियइ–

संखडिभत्तुव्वरियं घडन्हं उद्दिसइ जं तमुद्दिट्ठं।
वंजणमीसाइ कडं, तं अग्गितवियाइ पुण कम्मं ॥ [२०६]

संखडि विवाहादिकु महतु कहियइ। तिणि ऊगरियं मोदकचूरादिक अन्नु, जु हुयइ सु पछइ [illegible] निमित्तु जु परिकल्पइ सु उद्दिष्टु कहियइ। तथा व्यंजन कहियइं दधि-

§173) 1 Bh. [illegible] §174) 1 Bh. -रिइ।

§198) लब्धिप्रशंसागर्वितु[1] हूंतउ जु यति गृहस्थ रहइं अभिमानु ऊपजावी आहारु लियइ सु मानपिंडु ८।

§199) मायावसइतउ आहारकारणि रूपांतरु करी यति जु लहइ आहारु सु मायापिंडु ९।

§200) स्निग्ध-मधुरादिक आहार तणी तृष्णा लगी जु घणउं फिरी लहइ सु लोभपिंडु १०। तथा च भणितम्– 5

कोहे घेउरखवगो १, माणे सेवई य खुड्डगो नायं २।
माया आसाढभूई ३, लोभे केसरयसाहु ४ त्ति॥ [२०९]

§201) दायक रहइं दान पहिलउं स्तुति करी जु दानु लियइ सु पूर्वसंस्तवु अथवा पाछइं स्तुति करी जु लहइ सु पश्चात्संस्तवु। जननीजनकादि संबंधु करी जु लियइ सु पूर्वसंस्तवु, सासू-ससुरादिसंबंधु करी जु लियइ सु पश्चात्संस्तवु ११ एउ सगलउ संस्तवु पिंडु। 10

§202) विद्याप्रयोगि दायक रहइं जु[1] रंजवी करी दानु लियइ सु विद्यापिंडु १२।

§203) मंत्रप्रयोगि रंजवी करी जु दानु लियइ सु मंत्रपिंडु १३।

§204) अदृश्यीकरणादिकु चूर्णु तेह तणइ प्रयोगि जु दानु लियइ सु चूर्णपिंडु १४।

§205) सौभाग्य-दौर्भाग्यकर पादलेपादिक योग तेहे करी जु[1] दानु लियइ सु योगपिंडु १५।

§206) मंगल मूलिकास्नानादि गर्भ्भ विवाहकरणादि हेतु करी करावी जु दानु लियइ सु मूलकर्म्म-15 दोषदुष्टु पिंडु कहियइ १६। ए सोल उत्पादनादोष साधुकीधा ऊपजइं इणि कारणि उत्पादनादोष कहियइं।

§207) अथ दश एषणादोष लिखियइं–संकितु १, म्रक्षितु २, निक्षिप्तु ३, पिहितु ४, संहृतु ५, दायकु ६, उन्मिश्रु ७, अपरिणतु ८, लिप्तु ९, छर्दितु १०।

§208) तत्र आधाकर्म्मादि दोषशंका करी अथवा संभावना हूंती जु आहारु लियइ सु संकितु दोषु १। जेह दोष नी शंका हूंती जु आहारु करइ तेह दोष तणउं फलु लहइ इणि कारणि 20 निःशंकितु आहारु करी तउ करिवउ।

§209) सचित्त पृथिवीकायादिक तीहं करी एकु म्रक्षितु, अचित्त अयोग्य मधुमद्यादिक तीहं करी एकु म्रक्षितु इसी परि बिहुं भेदे म्रक्षितु २ अथवा पूर्वभणित वस्तु खरंटिति करि अथवा मात्रि कुडुछी-डोइली-करोटी करोटकादिकि जु वस्तु लियइ सु म्रक्षितु दोषु २।

§210) सचित्त पृथिवीकायादिक तीहं माहि निक्षिप्तु शुद्धु ओदनादिकु लियइ तउ निक्षिप्तु 25 दोषु ३। सु पुणि अनंतरु परंपरु परिहरिवउ।

§211) जु सचित्ताचित्त पिहितु हुयइ सु पिहितु। यथा–हेठलि देउ वस्तु हुयइ, ऊपरि ढांकणउं मोटउं हुयइ, पाछइ ऊपाडतां कदाचित् भाजइ, तउ पाछइ आत्म-संजमविघातादिक दोष हुयइं तिणि कारणि पिहितु दोषु ४।

§212) अयोग्यु वस्तु ऊतारी करी तिणि मात्रि योग्यु वस्तु दियइ गृही, यति जु लियइ तउ 30 संहृतु दोषु ५।

§213) अतिवृद्धु हाथे धूजते जु हुयइ, तथा मंदलोचनबलु जु हुयइ सु थेरु कहियइ, अशनादि धणी सु न हुयइ, सु अप्रभु कहियइ, कुष्टरोगी पंडु कहियइ, सकंपु देहु जेह तणउं हुयइ सु वेविरु

§198) 1 Bh. लब्धि प्रशंसा गर्वि करी गर्वितु। §202) 1 Bh. puts it before दानु। §205) 1 Bh. कु।

§184) गृहस्थि आपणा अथवा अनेरा गाम हूंतउं आणी करी साधु रहइं जु दीजइ सु अभ्याहृतु कहियइ ११।

§185) घडउ अथवा कूडी जोगिणी माटी छाणि करी लीपी मेल्ही हुयइ[1], यति तणइं कारणि ऊघाडी करी जु दीजइ सु उद्भिन्नु कहियइ १२।

5 §186) ऊपरि छींकइ, हेठि भूमिहरि उभय बिहुं हेठि ऊपरि यथा मोटेरी गुडही हुयइ तेह माहि वस्तु हुयइ सु वस्तु ऊपहरां होई हेठां हुईयइ सउ आपडियइ इणि कारणि उभउ कहियइ। तिर्यग् तिरिछउं हाथ हूंतउं वेगलउं वस्तु हुयइ करग्रहण अशक्यु जु ले करी विहरावइ सु मालाभ्याहृतु कहियइ १३।

§187) स्वामी अथवा चोरु पर कन्हा ओदाली करी साधु रहइं जु दियइ सु आच्छेद्यु कहियइ १४।

10 §188) अनेकहं रहइं भक्तु[1] कीधउं हुयइ तीहं माहि एकु दियइ सु अनिसृष्टु कहियइ १५।

§189) मूलारंभि आपणइ कारणि कीधइ हूंतइ पाछइ जावंतिक-यति-पाखंडिकहं निमित्तु तंदुलादिकु जु ओयरइ सु अध्यवपूरकु कहियइ १६।

इसी परि संक्षेपिहिं सोल उद्गमदोष गृहस्थकृत कहिया॥

§190) अथ उत्पादनादोष[1] सोल लिखियइं-धात्री १, दूति २, निमित्त ३, आजीविका ४,

15 वनीपक ५, चिकित्सा ६, क्रोध ७, मान ८, माया ९, लोभ १०, पूर्वपश्चात्संस्तव ११, विद्या १२, मंत्र १३, चुन्न १४, योग १५, मूलकर्म्म १६, ए सोल उत्पादनादोष नाम।

बालस्स खीर-मज्जण-मंडण-किलावणंकधाइत्तं।
करिय कराविय वा जं लहइ जई धाइपिंडो सो॥ [२०८]

§191) क्षीरधात्री १ मज्जनधात्री २ मंडनधात्री ३ क्रीडापनधात्री ४ अंकधात्री ५, बालक 20 रहइं पंचधात्री हुयइं तीहं नउं कर्म्मु करी अथवा करावी यति जु अशनादिकु लहइ सु धात्रीपिंडु कहियइ १।

§192) प्रकटु अथवा छानउ संदेसउ कही करी यति जु पिंडु अशनादिकु लहइ सु दूतिपिंडु कहियइ २।

§193) निमित्त शुभाशुभ लाभालाभादिक कही करी यति जु पिंडु लहइ सु निमित्तपिंडु कहियइ ३।

25 §194) जात्याविधनहं रहइं आपणपउं सजातीयादि जाणावी करी जु पिंडु यति लहइ सु आजीविकापिंडु ४।

§195) ब्राह्मणादि भक्त जि हुयइं तीहं रहइं ब्राह्मणादि भक्तु आपणपउं दिखाली करी तीहं कन्हां[1] यति जु लहइ सु वनीपकपिंडु ५।

§196) औषध-वैद्यापुपदेशदानादि चिकित्सा आहारादिकारणि करी गृहस्थ कन्हां जु पिंडु 30 यति लहइ सु चिकित्सापिंडु ६।

§197) विद्यातपःप्रभावु नृपादिपूजा शापादिकु क्रोधफलु देखी करी यति हूंतउ बीहतउ गृहस्थु जु पिंडु दियइ सु क्रोधपिंडु ७।

§185) 1 Bh. मेल्हीयइ। §188) 1 Bh. भक्तु। §190) 1 B. -उत्पतना-। §195) 1 Bh. कन्हइ।

§198) लब्धिप्रशंसागर्वितु' हूंतउ जु यति गृहस्थ रहइं अभिमानु ऊपजावी आहारु लियइ सु मानपिंडु ८।

§199) मायाप्रधानउ आहारकारणि रूपांतरु करी यति जु लहइ आहारु सु मायापिंडु ९।

§200) स्निग्ध-मधुरादिक आहार तणी तृष्णा लगी जु घणउं फिरी लहइ सु लोभपिंडु १०। यथा च भणितम्–

> कोहे घेउरखमगो १, माणे सेवइ य खुड्डगो नायं २।
> माया आसाढभूई ३, लोभे केसरयसाहु ४ त्ति ॥ [२०९]

§201) दायक रहइं दान पहिलउं स्तुति करी जु दानु लियइ सु पूर्वसंस्तवु अथवा पाछइ स्तुति करी जु लहइ सु पश्चात्संस्तवु। जननीजनकादि संबंधु करी जु लियइ सु पूर्वसंस्तवु, सासू-ससुरादिसंबंधु करी जु लियइ सु पश्चात्संस्तवु ११ एउ सगलु संस्तवु पिंडु।

§202) विद्याप्रयोगि दायक रहइं जु' रंजवी करी दानु लियइ सु विद्यापिंडु १२।

§203) मंत्रप्रयोगि रंजवी करी जु दानु लियइ सु मंत्रपिंडु १३।

§204) अदृश्यीकरणादिकु चूर्णु तेह तणइ प्रयोगि जु दानु लियइ सु चूर्णपिंडु १४।

§205) सौभाग्य-दौर्भाग्यकर पादलेपादिक योग तेहे करी जु' दानु लियइ सु योगपिंडु १५।

§206) मंगल मूलिकास्नानादि गर्भ विवाहकरणादि हेतु करी करावी जु दानु लियइ सु मूलकर्म्म-दोषदुष्टु पिंडु कहियइ १६। ए सोल उत्पादनादोष साधुथीआ ऊपजइं इणि कारणि उत्पादनादोष कहियइं।

§207) अथ दस एषणादोष लिखियइं–शंकितु १, म्रक्षितु २, निक्षिप्तु ३, पिहितु ४, संहृतु ५, दायकु ६, उन्मिश्रु ७, अपरिणतु ८, लिप्तु ९, छर्दितु १०।

§208) तत्र आधाकर्मादि दोषशंका करी अथवा संभावना हूंती जु आहारु लियइ सु शंकितु दोषु १। जेह दोष नी शंका हूंती जु आहारु करइ तेह दोष तणउं फलु लहइ इणि कारणि निःशंकितु आहारु करी तउ करियउ।

§209) सचित्त पृथिवीकायादिक तींहं करी एकु म्रक्षितु, अचित्त अयोग्य मधुमद्यादिक तींहं करी एकु म्रक्षितु इसी परि बिहुं भेदे म्रक्षितु २ अथवा पूर्वभणित वस्तु खरंटिवि करि अथवा मात्रि कडुछी-डोहली-करोटी करोटकादिकि जु वस्तु लियइ सु म्रक्षितु दोषु २।

§210) सचित्त पृथिवीकायादिक तींहं माहि निक्षिप्तु मुक्तु ओदनादिकु लियइ तउ निक्षिप्तु दोषु ३। सु पुणि अनंतरु परंपरु परिहरियउ।

§211) जु सचित्ताचित्त पिहितु हुयइ सु पिहितु। यथा–हेठलि देउ वस्तु हुयइ, ऊपरि ढांकणउं मोटउं हुयइ, पाछइ ऊघाडतां कदाचित् भाजइ, तउ पाछइ आत्म-संजमविघातादिक दोष हुयइं तिणि कारणि पिहितु दोषु ४।

§212) अयोग्यु वस्तु ऊतारी करी तिणि मात्रि योग्यु वस्तु दियइ गृही, यति जु लियइ तउ संहृतु दोषु ५।

§213) अतिवृद्धु हाथे धूजते जु हुयइ, तथा मंदलोचनबलु जु हुयइ सु थेरु कहियइ, अशनादि धणी जु न हुयइ, सु अप्रभु कहियइ, कुष्टरोगी पंडु कहियइ, सकंपु देहु जेह तणउं हुयइ सु वेविरु

§198) 1 Bb. लब्धि प्रशंसा गर्वि करी गर्वितु। §202) 1 Bb. puts it before दानु। §205) 1 Bh. कु।

§184) गृहस्थि आपणा अथवा अनेरा गाम हूंतउं आणी करी साधु रहइं जु दीजइ सु अभ्याहृतु कहियइ ११।

§185) घडव्र अथवा कूडी जोगिणी माटी छाणि करी लीपी मेल्ही हुयइ[1], यति तणइं कारणि ऊघाडी करी जु दीजइ सु उद्भिन्नु कहियइ १२।

5 §186) ऊपरि छींकइ, हेठि भूमिहरि उभय बिहुं हेठि ऊपरि यथा मोटेरी गुडही हुयइ तेह माहि वस्तु हुयइ सु वस्तु ऊपहरां होई हेठां दुईयइ तउ आपडियइ इणि कारणि उभउ कहियइ। तिर्यग् तिरिछउं हाथ हूंतउं वेगलउं वस्तु हुयइ करग्रहण अशक्यु जु ले करी विहरावइ सु मालाभ्याहृतु कहियइ १३।

§187) स्वामी अथवा चोरु पर कन्हा ओदाली करी साधु रहइं जु दियइ सु आच्छेद्यु कहियइ १४।

10 §188) अनेकहं रहइं भक्तु[1] कीधउं हुयइ तींहं माहि एकु दियइ सु अनिसृष्टु कहियइ १५।

§189) मूलारंभि आपणइ कारणि कीधइ हूंतइ पाछइ जावंतिक-यति-पाखंडिकहं निमित्तु तंदुलादिकु जु ओयरइ सु अध्यवपूरकु कहियइ १६।

इसी परि संक्षेपिहिं सोल उद्गमदोष गृहस्थकृत कहिया॥

§190) अथ उत्पादनादोष[1] सोल लिखियइं-धात्री १, दूति २, निमित्त ३, आजीविका ४, 15 वनीपक ५, चिकित्सा ६, क्रोध ७, मान ८, माया ९, लोभ १०, पूर्वपश्चात्संस्तव ११, विद्या १२, मंत्र १३, चुन्न १४, योग १५, मूलकर्म्म १६, ए सोल उत्पादनादोष नाम।

बालस्स खीर-मज्जण-मंडण-किलावणंकधाइत्तं।
करिय कराविय वा जं लहइ जई धाइपिंडो सो॥ [२०८]

§191) क्षीरधात्री १ मज्जनधात्री २ मंडनधात्री ३ क्रीडापनधात्री ४ अंकधात्री ५, बालक 20 रहइं पंचधात्री हुयइं तींहं नउं कर्म्मु करी अथवा करावी यति जु अशनादिकु लहइ सु धात्रीपिंडु कहियइ १।

§192) प्रकटु अथवा छानउ संदेसउ कही करी यति जु पिंडु अशनादिकु लहइ सु दूतिपिंडु कहियइ २।

§193) निमित्त शुभाशुभ लाभालाभादिक कही करी यति जु पिंडु लहइ सु निमित्तपिंडु कहियइ ३।

25 §194) जात्यादिधनहं रहइं आपणपउं तज्जातीयादि जाणावी करी जु पिंडु यति लहइ सु आजीविकापिंडु ४।

§195) ब्राह्मणादि भक्त जि हुयइं तींहं रहइं ब्राह्मणादि भक्त आपणपउं दिखाली करी तं कन्हां[1] यति जु लहइ सु वनीपकपिंडु ५।

§196) औषध-वैद्यायुपदेशदानादि चिकित्सा आहारादिकारणि करी गृहस्थ कन्हां जु पि 30 यति लहइ सु चिकित्सापिंडु ६।

§197) विद्यातपःप्रभावु नृपादिपूजा शापादिकु क्रोधफलु देखी करी यति हूंतउ बीहतउ गृह जु पिंडु दियइ सु क्रोधपिंडु ७।

§185) 1 Bh. मेल्हियइ। §188) 1 Bh. भक्तु। §190) 1 B. -उत्पातना-। §195) 1 Bh. कन्हे

§198) लब्धिप्रशंसागर्वितु[1] हूंतउ जु यति गृहस्थ रहइं अभिमानु ऊपजावी आहारु लियइ सु मानपिंडु ८।

§199) मायावसइतउ आहारकारणि रूपांतरु करी यति जु लहइ आहारु सु मायापिंडु ९।

§200) स्निग्ध-मधुरादिक आहार तणी तृष्णा लगी जु घणउं फिरी लहइ सु लोभपिंडु १०। तथा च भणितम्–

कोहे घेउरखवगो १, माणे सेवई य खुड्डगो नायं २।
माया आसाढभूई ३, लोभे केसरयसाहु ४ त्ति ॥　　[२०९]

§201) दायक रहइं दान पहिलउं स्तुति करी जु दानु लियइ सु पूर्वसंस्तवु अथवा पाछइ स्तुति करी जु लहइ सु पश्चात्संस्तवु। जननीजनकादि संबंधु करी जु लियइ सु पूर्वसंस्तवु, सासू-ससुरादिसंबंधु करी जु लियइ सु पश्चात्संस्तवु ११ एउ सगलु संस्तवु पिंडु।

§202) विद्याप्रयोगि दायक रहइं जु[1] रंजवी करी दानु लियइ सु विद्यापिंडु १२।

§203) मंत्रप्रयोगि रंजवी करी जु दानु लियइ सु मंत्रपिंडु १३।

§204) अदृश्यीकरणादिकु चूर्णु तेह तणइ प्रयोगि जु दानु लियइ सु चूर्णपिंडु १४।

§205) सौभाग्य-दौर्भाग्यकर पादलेपादिक योग तेहे करी जु[1] दानु लियइ सु योगपिंडु १५।

§206) मंगल मूलिकास्नानादि गर्भ विवाहकरणादि हेतु करी करावी जु दानु लियइ सु मूलकर्म्म-दोषदुष्टु पिंडु कहियइ १६। ए सोल उत्पादनादोष साधुकीधा ऊपजइं इणि कारणि उत्पादनादोष कहियइं।

§207) अथ दस एषणादोष लिखियइं–संकितु १, म्रक्षितु २, निक्षिप्तु ३, पिहितु ४, संहृतु ५, दायकु ६, उन्मिश्रु ७, अपरिणतु ८, लिप्तु ९, छर्दितु १०।

§208) तत्र आधाकर्म्मादि दोषशंका करी अथवा संभावना हूंती जु आहारु लियइ सु संकितु दोषु १। जेह दोष नी शंका हूंती जु आहारु करइ तेह दोष तणउं फलु लहइ इणि कारणि निःशंकितु आहारु करी तउ करियउ।

§209) सचित्त पृथिवीकायादिक तीहं करी एकु म्रक्षितु, अचित्त अयोग्य मधुमद्यादिक तीहं करी एकु म्रक्षितु इसी परि बिहुं भेदे म्रक्षितु २ अथवा पूर्वभणित वस्तु खरंटिति करि अथवा मात्रि कुडुछी-दोहली-करोटी करोटकादिकि जु वस्तु लियइ सु म्रक्षितु दोषु २।

§210) सचित्त पृथिवीकायादिक तीहं माहि निक्षिप्तु सुद्धु ओदनादिकु लियइ तउ निक्षिप्तु दोषु ३। सु पुणि अनंतरु परंपरु परिहरिवउ।

§211) जु सचित्ताचित्त पिहितु हुयइ सु पिहितु। यथा–हेठलि देउ वस्तु हुयइ, ऊपरि ढांकणउं मोटउं हुयइ, पाछइ ऊपाडतां कदाचित् भाजइ, तउ पाछइ आत्म-संजमविघातादिक दोष हुयइं तिणि कारणि पिहितु दोषु ४।

§212) अयोग्यु वस्तु ऊतारी करी तिणि मात्रि योग्यु वस्तु दियइ गृही, यति जु लियइ तउ संहृतु दोषु ५।

§213) अतिवृद्धु हाथे धूजते जु हुयइ, तथा मंदलोचनबलु जु हुयइ सु थेरु कहियइ, अशनादि धणी जु न हुयइ, सु अप्रभु कहियइ, कुष्टरोगी पंडु कहियइ, सकंपु देहु जेह तणउं हुयइ सु वेविरु

---

§198) 1 Bh. लब्धि प्रशंसा गर्वि करी गर्वितु। §202) 1 Bh. puts it before दानु। §205) 1 Bh. कु।

§184) गृहस्थि आपणा अथवा अनेरा गाम हूंतउं आणी करी साधु रहइं जु दीजइ सु अभ्याहृतु कहियइ ११ ।

§185) घडउ अथवा कूडी जोगिणी माटी छाणि करी लीपीं मेल्ही हुयइं, यति तणइं कारणि ऊघाडी करी जु दीजइ सु उद्भिन्नु कहियइ १२ ।

5 §186) ऊपरि छीकइ, हेठि भूमिहरि उभय बिहुं हेठि ऊपरि यथा मोटेरी गुडही हुयइ तेह माहि वस्तु हुयइ सु वस्तु ऊपहरां होई देठां हुईयइ तउ आपडियइ इणि कारणि उभउ कहियइ । तिर्यग् तिरिछउं हाथ हूंतउं वेगळउं वस्तु हुयइ करमहण अशक्यु जु ले करी विहरावइ सु मालाभ्याहृतु कहियइ १३ ।

§187) स्वामी अथवा चोरु पर कन्हा ओदाली करी साधु रहइं जु दियइ सु आच्छेद्यु कहियइ १४ ।

10 §188) अनेकइं रहइं भत्तु[1] कीधउं हुयइ तींहं माहि एकु दियइ सु अनिसृष्टु कहियइ १५ ।

§189) मूलारंभि आपणइ कारणि कीधइ हूंतइ पाछइ जावंतिक-यति-पाखंडिकइं निमित्तु तंदुलादिकु जु ओरइ सु अध्यवपूरकु कहियइ १६ ।

इसी परि संक्षेपिहिं सोळ उद्गमदोष गृहस्थकृत कहिया ॥

§190) अथ उत्पादनादोष[1] सोळ लिखियइं-धात्री १, दूति २, निमित्त ३, आजीविका ४,
15 वनीपक ५, चिकित्सा ६, क्रोध ७, मान ८, माया ९, लोभ १०, पूर्वपश्चात्संस्तव ११, विद्या १२, मंत्र १३, चुन्न १४, योग १५, मूळकर्म १६, ए सोळ उत्पादनादोष नाम ।

बालस्स खीर-मज्जण-मंडण-किलावणंकधाइत्तं ।
करिय कराविय वा जं लहइ जई धाइपिंडो सो ॥ [२०८]

§191) क्षीरधात्री १ मज्जनधात्री २ मंडनधात्री ३ क्रीडापनधात्री ४ अंकधात्री ५, बालक
20 रहइं पंचधात्री हुयइं तींहं नउं कर्मु करी अथवा करावी यति जु अशनादिकु लहइ सु धात्रीपिंडु कहियइ १ ।

§192) मकडु अथवा छानउ संदेसउ कही करी यति जु पिंडु अशनादिकु लहइ सु दूतिपिंडु कहियइ २ ।

§193) निमित्त शुभाशुभ लाभालाभादिक कही करी यति जु पिंडु लहइ सु निमित्तपिंडु कहियइ ३ ।

25 §194) आजीविकइं रहइं आपणउं तज्जातीयादि जणावी करी जु पिंडु यति लहइ सु आजीविकापिंडु ४ ।

§195) ब्राह्मणादि भक्त जि हुयइं तींहं रहइं ब्राह्मणादि भक्तु आपणउं दिखाली करी तींहं कन्हां[1] यति जु लहइ सु वनीपकपिंडु ५ ।

§196) औषध-वैद्यसूचकत्वनादि चिकित्सा आहारादिकारणि करी गृहस्थ कन्हां जु पिंडु
30 यति लहइ सु चिकित्सापिंडु ६ ।

§197) विद्यातपःप्रभावु [illegible] क्रोधफलु देखी करी यति [illegible] जु पिंडु दियइ सु क्रोधपिंडु ७ ।

§184) 1 B.— [illegible] । §188) 1 B.— [illegible] । §190) 1 B.— [illegible] । §195) 1 B.— [illegible] ।

§198) लब्धिप्रशंसागर्वितु¹ हूंतउ जु यति गृहस्थ रहइं अभिमानु ऊपजावी आहारु लियइ सु मानपिंडु ८।

§199) मायावसहतउ आहारकारणि रूपांतरु करी यति जु लहइ आहारु सु मायापिंडु ९।

§200) स्निग्ध-मधुरादिक आहार तणी तृष्णा लगी जु घणउं फिरी लहइ सु लोभपिंडु १०। यथा च कथितम्— 5

कोहे घेउरखवगो १, माणे सेवई य खुड्डगो नायं २।
माया आसाढभूई ३, लोभे केसरयसाहु ४ त्ति॥ [२०९]

§201) दायक रहइं दान पहिलउं स्तुति करी जु दानु लियइ सु पूर्वसंस्तवु अथवा पाछइ स्तुति करी जु लहइ सु पश्चात्संस्तवु। जननीजनकादि संबंधु करी जु लियइ सु पूर्वसंस्तवु, सासू-ससुरादिसंबंधु करी जु लियइ सु पश्चात्संस्तवु ११ एउ सगलउ संस्तवु पिंडु। 10

§202) विद्याप्रयोगि दायक रहइं जु¹ रंजवी करी दानु लियइ सु विद्यापिंडु १२।

§203) मंत्रप्रयोगि रंजवी करी जु दानु लियइ सु मंत्रपिंडु १३।

§204) अदृश्यीकरणादिकु चूर्णु तेह तणइ प्रयोगि जु दानु लियइ सु चूर्णपिंडु १४।

§205) सौभाग्य-दौर्भाग्यकर पादलेपादिक योग तेहे करी जु¹ दानु लियइ सु योगपिंडु १५।

§206) मंगल मूलिकादानादि गर्भ विवाहकरणादि हेतु करी कराथी जु दानु लियइ सु मूलकर्म- 15
दोषदुष्टु पिंडु कहियइ १६। ए सोल उत्पादनादोष साधुकीधा ऊपजइं इणि कारणि उत्पादनादोष कहियइं।

§207) अथ दस एषणादोष लिखियइं—शंकितु १, म्रक्षितु २, निक्षिप्तु ३, पिहितु ४, संहृतु ५, दायकु ६, उन्मिश्रु ७, अपरिणतु ८, लिप्तु ९, छर्दितु १०।

§208) तत्र आधाकर्मादि दोषशंका करी अथवा संभावना हूंती जु आहारु लियइ सु शंकितु दोषु १। जेह दोष नी शंका हूंती जु आहारु करइ तेह दोष तणउं फलु लहइ इणि कारणि 20
निःशंकितु आहारु करी तउ करिवउ।

§209) सचित्त पृथिवीकायादिक तीहं करी एकु म्रक्षितु, अचित्त अयोग्य मधुमद्यादिक तीहं करी एकु म्रक्षितु इसी परि बिहुं भेदे म्रक्षितु २ अथवा पूर्वभणित वस्तु खरंटिति करि अथवा मात्रि कडुछी-डोयली-करोटी करोटकादिकि जु वस्तु लियइ सु म्रक्षितु दोषु २।

§210) सचित्त पृथिवीकायादिक तीहं माहि निक्षिप्तु शुद्धु ओदनादिकु लियइ तउ निक्षिप्तु 25
दोषु ३। सु पुणि अनंतर परंपर परिहरिवउ।

§211) जु सचित्ताचित्त पिहितु हुयइ सु पिहितु। यथा—हेठलि देउ वस्तु हुयइ, ऊपरि ढांकणउं मोटउं हुयइ, पाछइ ऊघाडतां कदाचित् भाजइ, तउ पाछइ आत्म-संजमविघातादिक दोष हुयइं तिणि कारणि पिहितु दोषु ४।

§212) अयोग्यु वस्तु ऊतारी करी तिणि मात्रि योग्यु वस्तु दियइ गृही, यति जु लियइ तउ 30
संहृतु दोषु ५।

§213) अतिवृद्धु हाथे धूजते जु हुयइ, यथा मंदलोचनबलु जु हुयइ सु थेरु कहियइ, अशनादि धणी जु न हुयइ, सु अप्रभु कहियइ, कुष्ठरोगी पंडु कहियइ, सकंपु देहु जेह तणउं हुयइ सु वेविरु

§198) 1 Bh. लब्धि प्रशंसा गर्वि करी गर्वितु। §202) 1 Bh. puts it before दानु। §205) 1 Bh. जु।

कहियइ, ज्वररोगी ज्वरी कहियइ, चक्षुर्विहीनु अंधु कहियइ, बालकु लहुडउ भोलउ अव्यक्तु कहियइ, छाकिउ मत्तु कहियइ, भूताधिष्ठितु उन्मत्तु कहियइ, कर-चरणरहितु कर-चरणछिन्नु कहियइ, गलितदेहु गलित कहियइ,[1] अठील घातिउ निगडितु कहियइ, हाथे हथूंडू[2] जेह रहइं हुयइ सु अंडुउ[3] कहियइ, पालखी जेह ने पगे हुयइं सु पाऊयारूढु कहियइ, जु खांडतउ हुयइ, जु पीसतउ हुयइ, जु विलोयतउ ५ हुयइ, जु भूंजतउ हुयइ, जु कातउ हुयइ, जु लोढतउ हुयइ, जु चीरि[4] वणतउ हुयइ, जु पींजतउ हुयइ, जु दलतउ हुयइ, जु जीमतउ हुयइ, ज गुर्विणी आसन्नप्रसव हुयइ, मास २-३ प्रमाण बाल ज स्त्री स बालवत्स कहियइ, बालकु मेल्ही नइ विहरावइ, तथा जु छज्जीवकाय फरसतउ विणासतउ छांरतउ साधारणु चोरानीतु वस्तु वियतउ हुयइ, एवमादि दायक नइ हाथि मुनि जउ दानु लियइ तउ दायकदोषु ६ ।

१० §214) योग्यु घृतादिकु अयोग्यु मधुप्रभृतिकु, योग्यायोग्य बे मेली करी दियइ तउ उन्मिश्रु, तत्र सचित्तमिश्रु कदाकालिहिं उत्सर्गपदि न कप्पइं, अचित्तमिश्रि विभाषा ७ ।

§215) जु द्रव्यु जलादिकु प्रासुकु हूयउं न हुयइं कांइं प्रासुकु कांइं अप्रासुकु हुयइ सु अपरिणतु द्रव्यु अथवा अनेकहं दायकहं माहि एक दायक तणउ भावु दानपरिणतु हुयइ बीजा दायक तणउ भावु दानपरिणतु न हुयइं सु भावाऽपरिणतु अथवा यति एक नइ मनि प्रासुकु द्रव्यु परिणमिउं १५ बीजा नइ मनि प्रासुकु न परिणमिउं सु पुणि भावापरिणतु, सु वस्तु जउ[1] यति लियइ तउ अपरिणतु दोषु ८ ।

§216) जिणि वस्तु करंबादिकि दधिप्रभृतिवस्तु तणउ लेपु दायक तणइ हाथि अथवा मात्रकि (पात्रकि?) लागइ सु वस्तु जउ यति लियइ तउ लितु दोषु, तिणि पश्चात्कर्मादिक दोषु हुयइं- सचित्तजलादि करी हस्तादिप्रक्षालनादि दोष हुयइं इसउ अर्थु ९ ।

§217) जिणि आहारि दीजतइ परिसाडि भुइं देहणउं संभवइ भवइ वा सु आहारु यति जउ २० परिसाडि देरतउ लियइ तउ छर्दितु दोषु १० । एउ पुणि मधुबिंदुउदाहरणइतउ अतिदुष्टु कहियइ । ए दस एषणादोष गृहस्थ अनइ यति बिहुं मिलियां कीजइं ।

§218) अथ भोजन तणा पांच दोष कहियइं-संयोजना दोषु १, अप्रमाणु दोषु २, अंगार दोषु ३, धूम दोषु ४ । अकारणु दोषु ५ । तत्र स्वाद तणइ कारणि द्रव्यसंयोगु करइ तउ संयोजना १ । प्रमाणाधिकु आहारु करइ तउ अप्रमाणु २ । तथा च भणितं-

२५ धिइ-बल-संजम-जोगा जेण न हायंति संपइ पए वा ।
तं आहारपमाणं जइस्स सेसं किलेसफलं ॥ [२१०]

तथा-

बत्तीसं किर कवला आहारो कुच्छिपूरओ भणिओ ।
पुरिसस्स महिलयाए अट्ठावीसं भवे कवला ॥ [२११]
३० जेण वहइ अइबहुमो अप्पमाणेण भोयणं भुत्तं ।
हादिज्ज व वामिज्ज व मारिज्ज व तं अजीरंतं ॥ [२१२]

स्निग्धमधुरादि वस्तु सराणु विकउ भोगवइ जउ तउ अंगारु दोषु ३ । कटुककषायादि वस्तु जउ मद्देषु थिकउ जीमइ तउ धूमु दोषु ४ ।

---

§213) 1 Bh. गरउ । 2 B. हथूंड । 3 Bh. अंडुउ । 4 B. Bh. चीरे । §215) 1 Bh. जउ ।

छुहवियणा १ वेयावच्च २ संजम ३ सज्झाण ४ पाणरक्खट्ठा ५ ।
इरियं च वि सोहेउं ६ भुंजइ न हु रूव-रसहेउं ॥   [२१३]

भूखवेदना निवर्त्ताविवा कारणि भोजनु, वैयावृत्त्य कृत्य करिवा कारणि तथा संजम कारणि तथा स्वाध्याय अथवा शुभध्यान कारणि, प्राणरक्षाकारणि,[1] ईर्यापथ सोधिवा कारणि भोजनु करिवउं; जउ रूप-रसस्वादहेतु भोजनु करइ तउ अकारणु दोषु ५ ॥ पांच भोजन तणा दोष, सव्वइ मिलिया ४७ । ■ 'पिंडस्स जा विसोही' एतलउं वखाणिउं ।

§219) 'समिईओ' इति । ईर्यासमिति १, भाषासमिति २, एषणासमिति ३, आदान-भांडमात्रनिक्षेपणासमिति ४, उच्चार-प्रश्रवण-खेल-जल्ल-सिंघाणपरिष्ठापनिका समिति ५ । ए पांच समिति नाम । ईहं नउं अर्थु पडिक्कमणासूत्रवखाण माहि लिखीसिइ ।

§220) भावणा १२, यथा–   10

पढमं अणिच्चं १ असरणं २ संसारो ३ एगया ४ य अन्नत्तं ५ ।
असुइत्तं ६ आसव ७ संवरो ८ य तह निज्जरा नवमी ९ ॥   [२१४]
लोयसहावो १० बोही ११ दुलहा धम्मसहावो अरिहा १२ ।
एयाओ गय बारस जहक्कमं भावणीयाओ ॥   [२१५]

प्रथमा अनित्यभावना १, अशरणभावना २, संसारभावना ३, एकत्वभावना ४, अन्यत्व-   15 भावना ५, अशुचित्वभावना ६, आश्रवभावना ७, संवरभावना ८, निर्जराभावना ९, लोकसद्भाव-भावना १०, दुर्लभबोधिभावना ११, दुर्लभधर्म-साधु-अरिहभावना १२ । एवं नाम बारह भावना-विस्तरु ईहं नउ अर्थु भावनास्वरूप प्रतिपादक योगशास्त्र श्लोक हूंतउ जाणिवउ ।

§221) 'तवो दुविहो' इति । छए भेदे बाह्यु तपु, छए भेदे अंतरंगु तपु । यथा–

अणसणं १ ऊणोयरिया २ वित्तीसंखेवणं ३ रसच्चाओ ४ ।   20
कायकिलेसो ५ संलीणया ६ य बज्झो तवो भणिओ[1] ॥   [२१६]

तत्र अशनत्यागु देशइतउ सर्वइतउ जु कीजइ सु अनशनु १ ।

§222) ऊनोदरता बिहुं भेदे-द्रव्यऊनोदरता, भावऊनोदरता[1] । तत्र द्रव्यतो भक्त-पान-उपकरण विषइ । तत्र उपकरणविषया ऊनोदरता जिनकल्पिकादिकहं रहइं जाणेवी, न पुणि अनेरां रहइं । तींहं रहइं उपधिअभावि समस्त संजमपालना तणा अभावइतउ तथा अनेरांई रहइं अधिक उपकरणग्रहणाभाव-   25 इतउ उपकरणोनोदरता हुयइ छइं । यत उक्तं–

जं वट्टइ उवगारे उवगरणं तं च होइ उवगरणं ।
अइरित्तं अहिगरणं अजओ अजयं परिहरंतो ॥   [२१७]

'परिहरंतो' त्ति आसेवतउ हूंतउ 'परिहारो परिभोगो' इसा वचनइतउ । ततः अयतश्च अजयं यतना पाल्इ यत् परिभुञ्जानो भवति इत्यर्थः । भक्त-पानोनोदरिका तु आपणा आपणा आहार परिहारइतउ   30 जाणेवी । आहारप्रमाणु पुणि 'बत्तीसं किर कवला' इत्यादि । अविकृति मुखि जु समाइ ■ कवलु प्रमाणोपेतु जाणिवउ । स पुणि 'अप्पाहार'-आदि भेदइतउ पांचे भेदे । यथा–

§218) 1 B. Bh have प्राणि– । §221) 1 Bh. होइ । 2 Bh. अनशन– । §222) 1 Bh. भावन– । ■ B. drops –२– ।

अप्पाहार १ अवड्डा २ दुभाग ३ पत्ता ४ तहेव किंचूणा ५।
अट्ठ दुवालस सोलस चउवीस तहिक्कतीसा य ॥ [२१८]

तत्र एक कवल हूंती आरंभी आठमा कवल सीम जघन्य-मध्यम-उत्कृष्टभेदभिन्न त्रिविध अप्पहारोनोदरिका कहियई १। तत्र एककवला जघन्या, द्व्यादिकवला सप्तम[3] कवल सीम मध्यमा, अष्टम[4] 5 कवला उत्कृष्टा। एवं नवम[1] कवल हूंती आरंभी करी बारसम कवल सीम त्रिविध अपार्द्धाहारोनोदरिका २। तत्रापि नवकवला जघन्या दशादिकवल एकादशम कवल सीम मध्यमा, द्वादशकवला उत्कृष्टा। एवं तेरमा कवल आरंभी करी सोलमा कवल सीम द्विभागोनोदरिका ३। तत्रापि त्रयोदशकवला जघन्या, चतुर्दशकवल पंचदशम कवलांता मध्यमा, सोल कवला उत्कृष्टा ३। एवं सतरमा कवल आरंभी करी चउवीसमा कवल सीम प्राप्तोनोदरिका ४। तत्रापि सतरकवला जघन्या, अष्टादशादिकवल त्रेवीसमा 10 कवल सीम मध्यमा, चउवीसकवला उत्कृष्टा। एवं पंचवीसमा कवल आरंभी करी एकत्रीसमा कवल सीम किंचूणोनोदरिका ५। तत्रापि पंचवीसकवला जघन्या, छव्वीसादिकवला त्रीसमा कवल सीम मध्यमा, एकत्रीसकवला उत्कृष्टा। भावत ऊनोदरिका कषायादित्यागु। तथा च भणितं-

कोहाईणं अणुदिणं चाओ जिणवयणभावणाओ य।
भावेणोणोयरिया पन्नत्ता वीयरागेहिं ॥ [२१९]

15 §223) वृत्ति भिक्षाभ्रमणु तेह नउं संक्षेपणु संकोचनु वृत्तिसंक्षेपु कहियइ। सु पुणि गोचराभिग्रहरूपु। ति पुणि गोचराभिग्रह अनेके भेदे। यथा-'दव्वओ खित्तओ कालओ भावओ'। यथा मइं भिक्षा गयइ हूंतइ कुंतामादियत्तंमातु मंडकादिकू जु लेवउं इति द्रव्यतोऽभिग्रहु। खित्तओ, यथा बिउं त्रिहुं गृहमध्यि जु लाभइ तऊ जु लेवउं इति। कालओ, यथा बिहुं पहरहं टलियां सकल भिक्षाचर निवर्त्तनवेलां हूंती लेवउं। भावओ, यथा जइ हसतउ अथवा गायतउ रोयतउ वा अथवा निगडितु बद्धु वा देसिइ 20 तउ लेसु। तदुक्तं-

लेवडं अलेवडं वा अमुगं दव्वं च अज्ज घिच्छामि।
अमुगेण य दव्वेणं अह दव्वाभिग्गहो नाम ॥ [२२०]

'अमुगेण य' इति 'चाटू-करोटिकादि[1] करी' इसउ अर्थु।

अट्ठउ गोयरभूमी एलुग-विक्खंभ-मत्तगहणं च।
25 सग्गाम-परग्गामे एवईय घराउ खित्तम्मि ॥ [२२१]

आठ गोचरभूमि, यथा- ऋजुगतिका १, प्रत्यागतिका २, गोमूत्रिका ३, पतंगविधि ४, पेटा ५, अर्द्धपेटा ६, अभ्यंतरसंबुका ७, बहिःसंबुका ८। तथा चोक्तं-

उज्जुगगंतु १ पच्चागईया २ गोमुत्तिया ३ पयंगविही ४।
पेडा ५ य अद्धपेडा ६ अब्भितर ७ बाहिसंबुक्का ८ ॥ [२२२]

30 तत्र वसति हूंतां संलग्न जि के घर हुयइं तेहे सविहुं विहरतां छेहि जाईयइ, पाछइ अणविहरतां वसति आवियइ जिणि वृत्तिइं स ऋजुगतिका १। छेहला घरहूंतां विहरतां जिणि वसति आवियइ स प्रत्यागतिका २। उभयश्रेणिगतहं घरहं माहि वामदक्षिण क्रमि करी जिणि विहरियइ स गोमूत्रिका ३। जिणि पतंग जिम विचि विचि केई घर मेल्ही विहरियइ स पतंगविधि ४। समचतुरस्रश्रेणिस्थितइं घरइं

§222) 3 Bh. drops -इ। 4 Bh. drops -म। §223) 1 Bh. दिक।

... बिहरिवइ ग पेटाइसि ५। अर्द्धगलचतुरस्र श्रेणिस्थितदं घरइं जिणि विहरियइ स अर्द्धपेटापृत्ति जिणि मार्ग हूंतो बाहिरि विहरी आविइ स अभ्यंतरसंबुका ७। जिणि बाहिर हूंतां मांहि विहरी बेइ स बहिःसंबुका ८। 'क्षेत्रनिस्तंभमत्यागदं च' इति। एतलुं सूंपडउं [illegible] विकसंभी करी। लउं। जो मु आगलइ भारि घणुउ हुवइ सो तिहां रही मात्रमदणु करइ। 'सगामि परगामे' ... । एतले घरे विहरिसु, आगलेइं गामि अनइ पनेरेहं' गामि, एवमादि क्षेत्राभिग्रहु।

काले अभिग्गहो पुण आई मज्झे तहेव अवसाणे।
अप्पत्ते सइ काले आई बिइ मज्झ तइयं ॥ [२२३]

जिणि वेलां जे भिक्षावेला प्रसिद्ध हुवइ तिणि वेलां तेह भिक्षावेलातउ आदिहिं मध्यि अवसानि ... लेसु भिक्षाभिग्रहु। तथा हि– भिक्षाकालि अप्राप्ति हूंतइ भिक्षा भमतां हूतां पहिलउ अभिग्रहु, मध्यि भिक्षा भमइ भमइ हिं ति भिक्षा भमतां हूतां बीजउ अभिग्रहु, अंति भिक्षाकालावसानि भिक्षा 10 भमतां हूतां त्रीजउ अभिग्रहु। एवमादि कालाभिग्रहु।

उक्खित्तमाइ चरगा भावजुया खलु अभिग्गहा हुंति।
गायंतो य रुयंतो जं देइ निसन्नमाई वा ॥ [२२४]

'उक्खित्तमाइ चरगा' ति। भाजन हूंतइ तिहि उभिलि उपाडियइ हूंतइ घरइं जि भिक्षा भमइं ति 15 उत्क्षिप्तचरक कहियइं। तथा भोजनादि भाजनि निक्षिपियइ तिहि हूंतइ जि घरइं भिक्षा भमइं ति निक्षिप्तचर कहियइं। तथा 'गायंतो' इत्यादि। गातु करतउ, रोदनु करतउ अथवा 'निसन्नमाई वा' निपण्णु ... पिंडु 'आदि'शब्दग्रहणउ सूतउ हूंतउ वा एवमादिकु दायकु जु देउ दातव्यु वस्तु दियइ [illegible] लियइ एवमादि भावाभिग्रहु।

§224) एम द्रव्यादि विगइ तीहि नउ त्यागु पञ्चेनु रसत्यागु कहियइ।

§225) काय क्लेश हेतु आसन अविरोधिं करी बाधवु नानाप्रकार कायक्लेशु। 20 तथा च भणितं–

वीरासणउक्कुडगासणाइ लोयाईओ [illegible] विन्नेओ।
कायकिलेसो संसारवासनिव्वेयहेउ त्ति ॥ [२२५]

वीरासणाइसु गुणा कायनिरोहो दया य जीवेसु।
परलोगमई य तहा बहुमाणो चेव अन्नेसिं ॥ [२२६] 25

निस्संगया य पच्छा-पुरकम्मविवज्जणं च लोयगुणा।
दुक्खसहत्तं नरगाइभावणाए य निव्वेओ ॥ [२२७]

§226) अथ संलीनता लिखियइ– संलीनता गुप्तता, स पुणि इंद्रिय-कसाय-योगविषया विविक्त-शयनाऽऽसनता च इति चउ भेदे। तदुक्तं– 30

इंदिय-कसाय-जोए पडुच्च संलीणया मुणेयव्वा।
तह य विवित्तचरिया पन्नत्ता वीयरागेहिं ॥ [२२८]

§227) तत्र श्रवणेंद्रियि करी मधुराऽमधुरादि शब्दहं विषइ रागद्वेष तणउं अकरणु श्रवणेंद्रिय-संलीनता। यदाह–

§223) [illegible] Bh. [illegible] । [illegible] B. omits the verse. §225) 1 Bh. [illegible]

सद्देसु य भद्दय-पावएसु सोयं विसयमुवगएसु ।
तुट्ठेण व रुट्ठेण व समणेण सया न होयव्वं ॥   [२२९][1]

रमणीयाऽरमणीयहं रूपहं विपइ रागद्वेषकरण तणउ अभावु चक्षुरिंद्रियसंलीनता । यदाह–

रूवेसु य भद्दय-पावएसु चक्खुविसयमुवगएसु[1] ।
तुट्ठेण व रुट्ठेण व समणेण सया न होयव्वं ॥   [२३०]

सुरभि-दुरभिगंधहं विपइ रागद्वेष तणउ अभावु घ्राणेंद्रियसंलीनता । यदाह–

गंधेसु य भद्दय-पावएसु घाणं विसयमुवगएसु[1] ।
तुट्ठेण व रुट्ठेण व समणेण सया न होयव्वं ॥   [२३१]

स्निग्ध मधुर कटुक कपाय अम्ल लवण रसहं विपइ रागद्वेष तणउ अभावु रसणिंदियसंलीनता । तथा चाह–

भुत्तेसु य भद्दय-पावएसु जिब्भं विसयमुवगएसु ।
तुट्ठेण व रुट्ठेण व समणेण सया न होयव्वं ॥   [२३२]

तथा मृदुलाऽमृदुलादिफरसहं विपइ रागद्वेषकरण तणउ अभावु फरसणिंदियसंलीणता । यदाह–[1]

फरसेसु य भद्दय-पावगेसु फरसं विसयमुवगएसु ।
तुट्ठेण व रुट्ठेण व समणेण सया न होयव्वं ॥   [२३३][1]

§228) अथ कषायसंलीनता लिखियइ–

उदयस्सेव निरोहो उदयं पत्ताण वाऽफलीकरणं ।
जं इत्थ कसायाणं कसायसंलीणया एसा ॥   [२३४]

अणथोवं[1] वणथोवं[2] अग्गीथोवं कसायथोवं च ।
नहि मे वेससियव्वं थोवं पि हु तं बहुं होइ ॥   [२३५]

इसा वचनइतउ कसाय पहिलउं उदइ आवता राखिवा, उदइ आविया हूंता उपसमनादिकइं करी फलरहित करिवा । यदाह–

उवसमेण हणे कोहं माणं मद्दवया जिणे ।
मायं चऽज्जवभावेणं लोभं संतोसओ जिणे ॥   [२३६]

इसी परि कसायउदयागमनरक्षणु अथवा विफलीकरणु कसायसंलीनता कहियइ ।

§229) अथ जोगसंलीनता लिखियइ–

अपसत्थाण निरोहो जोगाणमुदीरणं च कुसलाणं ।
कज्जम्मि य विहिगमणं जोगे संलीणया भणिया ॥   [२३७]

अप्रशस्तमनवचनकायहं तणउं निरोधनु-निरोधु-निवारणा, प्रशस्तहं तीहीं जि तणउं उदीरणु करणु कार्यि ऊपनइ समितिसहितु गमनु जोगसंलीनता ।

आराम-उज्जाणाइसु थी-पसु-पंडुगविवज्जिए ठाणे ।
फलगाईण य गहणं तह भणियं एसणिज्जाणं ॥   [२३८]

§227) 1 Bh.-रागएसु । §228) 1 B. Bh. अणु । 2 B. Bh. वणु ।

ए विविक्तसंलीनता ॥

§230) अंतरंगतप तणा छ भेद लिखियइं–

पायच्छित्तं विणओ वेयावच्चं तहेव सज्झाओ ।
झाणं उस्सग्गो वि य अब्भिंतरओ तवो होइ ॥ [२३९]

तत्र प्रायश्चित्तु कहियइ–चित्तु जीवु अथवा मनु कहियइ तेउं सोधइ तिणि कारणि प्रायश्चित्तु कहियइ । सु पुणि आलोचनादिकइं दसइं भेदइं करी कहियइ । यथा–

आलोयण १ पडिक्कमणे २ मीस ३ विवेग ४ तहा विउसग्गे ५ ।
तव ६ च्छेय ७ मूल ८ अणवट्ठिए ९ य पारंचिए १० चेव ॥ [२४०]

गुरु आगइ वचनि करी अतिचार तणउं प्रकटीकरणु आलोयणा १–जु आलोयणामात्रि करी प्रायश्चित्तु सूझइ सु प्रायश्चित्तु पुणि उपचारइतउ आलोयण १ ।

§231) तथा प्रतिक्रमणु–दोष हूंतउ निवर्त्तनु–पुनरपि करण तणा अभावइतउ मिथ्यादुष्कृत-प्रदानु प्रतिक्रमणु कहियइ, तेह योग्यु प्रायश्चित्तु मिथ्यादुष्कृतमात्रिहिं जि करी सूझइ न पुणि गुरु आगइ आलोईयइ, यथा सहसाकारि अजाणभावि श्लेष्मादिकु प्रक्षिपतां ऊपनउं प्रायश्चित्तु । तथा हि–सहसा अनुपयुक्तेन यदि श्लेष्मादि प्रक्षिप्तं भवति, न च हिंसादिकं दोषमापन्नः तर्हि गुरुसमक्षमालोचनामन्तरेणापि मिथ्यादुष्कृतमात्रेण शुद्ध्यति ततः प्रतिक्रमणार्हत्वात् प्रतिक्रमणु २ ।

§232) जिणि पुणि प्रायश्चित्ति प्रतिसेवियइ जइ गुरुसमीपि आलोईयइं आलोई करी गुरुसमादेशइतउ पडिकमियइ, पाछइ 'मिथ्यादुष्कृतु' इसउं कहियइ, तउ पाछइ सु आलोचना-प्रतिक्रमण-लक्षण उभययोग्यता करी मिश्र ३ ।

§233) तथा विवेकु परित्यागु, जु प्रायश्चित्तु विवेकिहिं जि कीधइ सूझइ प्रकारि न सूझइं, यथा अज्ञानभावि आधाकर्म्मि लीधइ ज्ञानभावि तेह नइ त्यागि कीधइ पाछिलउ आहारु शुद्धउ हुयइ ॥ विवेकयोग्यता करी विवेकु ४ ।

§234) व्युत्सर्गु कायचेष्टानिरोधु, जु व्युत्सर्गमात्रिहिं जि दुःस्वप्न-निद्रास्खलितादिकु सूझइ सु व्युत्सर्गयोग्यताकरी व्युत्सर्गु ५ ।

§235) जिणि प्रतिसेवितिं निर्विकृतिकादिकु छम्मासावसानु तपु दीजइ सु तपयोग्यता करी प्रायश्चित्तु तपु ६ ।

§236) जिम सर्पदष्ट देहावयव नउ छेदु अपरशरीररक्षानिमित्तु कीजइ तिम जिणि प्रायश्चित्ति प्रतिसेवितिं दूषित पूर्वपर्यायछेदु अदूषित पर्याय रक्षानिमित्तु कीजइ सु छेदयोग्यता करी प्रायश्चित्तु छेदु ७ ।

§237) जिणि प्रायश्चित्ति प्रतिसेवितिं सकल पूर्वपर्यायछेदु करी-वली बीजीवार महाव्रतारोपणु कीजइ सु मूलयोग्यता करी मूलु ८ ।

§238) जिणि प्रतिसेवितिं हूंतइ पुणरवि पंचमहाव्रतारोपण रहइं योग्यु न हुयइं जां विशिष्टउं कांइं एकु तपु कीधउं न हुयइं । विशिष्टि तपि कीधइ पाछइ तेह दोष नी निवृत्ति हुई हूंती व्रतइं विषइ थापियइ सु अनवस्थानयोग्यता करी अनवस्थितु ९ ।

---

§230) 1 B. त । §232) 1 B. omits.

§239) जिणि प्रतिसेविति लिंग-क्षेत्र-काल-तप सविहुं नइ पारि अंचइ जाइ सु परांचितु अर्हइ सु प्रायश्चितु तेऊ परांचितु १० । इसी परि व्यवहारसिद्धांत माहि दसविधु प्रायश्चितु भणिउं, सु अंतरंगतप नउ पहिलउ भेदु ।

§240) विनउ पुणि दसविधु । यथा–

5 अरिहंत १ सिद्ध २ चेईय ३ सुए य ४ धम्मे य ५ साहुवग्गे य ६ ।
आयरिय ७ उवज्झाए ८ पवयणे ९ दंसणे १० विणओ ॥ [२४१]
अरहंता विहरंता सिद्धा कम्मक्खए सिवं पत्ता ।
पडिमाउ चेइयाइं सुयं ति सामाइयाईयं ॥ [२४२]
धम्मो चरित्तधम्मो आहारो तस्स साहुवग्ग त्ति ।
10 आयरिय उवज्झाया विसेसगुणसंगया तत्थ ॥ [२४३]
पवयणं असेससंघो दंसणमिच्छंति इत्थ सम्मत्तं ।
विणओ दसन्हमेसिं कायव्वो होइ एवं तु ॥ [२४४]
भत्ती बहुमाणो वन्नजण नासणं अवन्नवायस्स ।
आसायणपरिहरणं उचियाण सेवणाई य ॥ [२४५]
15 दसमेय विणयमेयं कुणमाणो माणवो महियमाणो ।
सद्दहइ विणयमूलं धम्मं पि विसोहए सम्मं ॥ [२४६]

इसउ दसविधु विनउ बीजउ अंतरंगतप तणउ भेदु ।

§241) वेयावचु पुणि दसविधु । यथा–

आयरिय १ उवज्झाया २ थेर ३ तवस्सी ४ गिलाण ५ सेहाणं ६ ।
20 साहम्मिय ७ कुल ८ गण ९ संघ १० संगयं तं इह कायव्वं ॥ [२४७]

आचार्य, उपाध्याय, स्थविर-वृद्ध, तपसी- उत्कृष्ट तपश्चरणकारकु, गिलाणु-मंदु, सेह-नवदीक्षित, साधर्मिक-एकधर्म, कुलु-एकाचार्यसंतानु, गणु- त्रिहुं आचार्यहं नउं संतानु, संघु साधुसाध्वीश्रावकश्राविकारूपु चतुर्विधु । ईहं दसहीं नइ विषइ वैयावृत्यु दसविधु हुयइ । एउ त्रीजउ अंतरंगतप नउ भेदु ।

§242) वायणा १ पुच्छणा २ परियट्टणा ३ अणुपेहा ४ धम्मकहा ५ सज्झाउ पंचविधु ।
25 तथा च भणितं–

वायणा[1] १ पुच्छणा[1] २ परियट्टणाउ ३ अणुपेह ४ धम्मकह ५ विसओ ।
सज्झाओ पंचविहो भणिओ भवभीरुमुणिकेहिं ॥ [२४८]

अनुप्रेक्षा मनि परिवर्त्तइ, वचनि न ऊचरइं । बीजउं सुगमु । एउ चउथउ अंतरंगतप तणउ भेदु ।

§243) आर्त्तध्यानु १ रौद्रध्यानु २ धर्मध्यानु ३ शुक्लध्यानु ४ इति चतुर्धा ध्यानु । तद्वाहि–

30 कामाणुरंजियं अट्टं रुद्दं हिंसाणुरंजियं ।
धम्माणुरंजियं धम्मं सुक्कज्झाणं निरंजणं ॥ [२४९]

विषयचिंतालक्षणु आर्त्तु, हिंसा-द्रोहाध्यवसायलक्षणु रौद्रु, धर्माध्यवसायलक्षणु धर्म्मु, विषयादि विकल्पकल्पनारहितु निरंजनु रागरोषरहितु शुक्लु एह चतुर्विध ध्यान माहे[1] आर्त्त रौद्र परिहरिवां, धर्म्म शुक्ल करिवां । एउ पंचमु अंतरंगतप[2] तणउ भेदु ।

§242) 1 Bh.-ण । §243) 1 Bh. has a later alteration माहि । 2 B. omits तप ।

§244) [illegible] कार्यनिकंतमिविसु, सु [illegible] ओहलिय [illegible] [illegible] [illegible] इति वारिति [illegible] जया जीण दर्द [illegible] [illegible] [illegible] अथवा [illegible] 5

[illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible] ।

§245) [illegible] [illegible] — [२५०]

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] मगाई ता ।

[illegible] [illegible] निरगुणविलास वालगो ॥

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] जणुपति [illegible] आलिगई¹ । [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] संगुलु १ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] पाठ [illegible] हुयइ 10 [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] हुयई । [illegible] [illegible] [illegible] आवरि [illegible] [illegible] हुयइ, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] हुयइ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] । [illegible] [illegible] [illegible]—

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] मुणेयव्वा । [२५१]

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ॥

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] हुयइ सु [illegible] । [illegible] [illegible] हुयइ सु [illegible] । 15

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] हुयइ सु [illegible] । [illegible]—

[illegible] १ [illegible] २ गुणेन ३ [illegible] [illegible] य । [२५२]

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] पडिवज्जओ ॥

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] नहीं, ए [illegible] १ ।

§246) [illegible] [illegible]—

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] । [२५३]

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ॥

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]¹ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] हुयई । [illegible] [illegible] [illegible]² [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] हुयई । [illegible] [illegible] [illegible] १ । [illegible] २ । [illegible] [illegible] । [illegible]³ [illegible] । [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] । [illegible]⁴ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ।

§247) [illegible] [illegible]— [[illegible]]

[illegible] गुणाइं [illegible] [illegible] य [illegible] ।

[illegible] [illegible] य [illegible] अहोरत्ते ॥

§245) 1 Bh. [illegible] । §246) 1 Bh. [illegible] । 2 B. [illegible] । 3 Bh. [illegible] । 4 [illegible]

सु जिनकल्पाधिकारियउ साधु सगलाइं घऊद पूर्वसूत्र 'उक्कमवक्कमाइं' किसउ अर्थु ? छेहला आंतर हूंतउ क्रमि क्रमि घुरिलइ आखरि आवइ, घुरिला आखर हूंतउ क्रमि क्रमि छेहलइ आखरि जाइ। तथा एकांतर आलापक ग्रहणि करी मूल हूंतउं सूत्रु तां परावर्तइ जां छेहु। तउ आलापक हूंतउं एकांतर ग्रहणि करी घुरि आवइ। इसी परि आचारनामकु नवमउं पूर्वु तेह माहि त्रीजउं वस्तु तेह माहि 5 जु प्रकारु कहिउ छइ तिणि प्रकारि करी तिम सूत्रु परावर्तइ जिम ऊसासप्रमाणु यथोक्तु जाणइ तउ मुहूर्त पौरुषी दिवस अहोरात्र काल विषइ परिमाणु जाणइ ए कालतुलना ३।

§248) एकत्वतुलना कहियइ–

> अन्नो देहाउ अहं नाणत्तं जस्स एवं उवलद्धं।
> सो किंचि आहरिंपं न कुणइ देहस्स भंगे वि॥ [२५५]

10 हउं देह हूंतउ अनेरउ इसी परि नाणत्तं नानात्वम्-भेदु जेह रहइं उपलद्धु जाणिउं हुयइ सु देहभंगिहिं आहरिपु उत्रासु मउ न करइं इति एकत्वतुलना ४।

§249) बलतुलना कहियइ–

> एमेव बलं मुणिणो अभिक्खआसेवणाइ तं होइ।
> लंखग-मल्ले उवमा आसकिसोरे य जुग्गविए॥ [२५६]

15 एवं इसी परि बलभावना करी देहु तिम सहावियउं जिम अवश्यकरणीयविषइ बलहानि शरीरि न हुयइं। ननु तपु करतां देहबलु जाइ तउ किसी परि बलतुलना ? इसउं न भणियूं[1], देहबलु धृतिबल-सूचानिमित्तु[2], बलभावना करी तिम यतना करेवी जिम देहअपचयभाविहिं धृति समुत्साहवंत हुयइ जिम परीषहोपसर्ग हेलाइं जिणइ, तथा सर्वइ भावना धृतिबलपूर्व तिणि कारणि विशेषि करी धृतिबल-भावना भावेवी जिम अतिसबल उपसर्गि संभविहिं आपणउं कार्यु साधइ, न पुणि धृति रहइं कांइं 20 असाध्यु छइ, सु पुणि तपोबलादिकु निरंतरं तपसंसेवनादि करी हुयइं।

§250) अत्र दृष्टांतु लंखकु अनइ मल्लु अनइ अश्वकिसोरु 'जुग्गविओ'[1] इसउं त्रिहुं नउं विशेषणु। तथा हि-लंखकु नट्टु जुग्गविओ[1] अभ्यास प्राप्तु अभ्यासप्रकर्षइतउ रांहु ऊपरि पुणि नाचइ। मल्लु पुणि दुक्खि करी करणअभ्यसतउ अभ्यासप्रकर्षवशइतउ पाछइ सुखिहिं प्रतिमल्लु जिणइ। अश्वकिसोरु पुणि हस्तिप्रभृतिकहं हूंतउ बीहतउ दुक्खि करी हस्तिप्रमुखहं समीपि राहवियइ पाछइ 25 अभ्यासवशइतउ संग्राम माहि तेह समीपिहिं भाजइ नहीं।

§251) एवं दृष्टांतभावना दार्ष्टांतिकि मूलिगइ अर्थि जोडियइ। एवं इसी परि निरंतर तपसे-वनि करी तपि न जीपइं, सत्त्वावष्टंभु बलावलंबु तिणि करी देवादिकही हूंतउ बीहइ नहीं। सूत्रार्थचिंतन-प्रमाणि कालु दिनरात्रि गतागतरूपु[1] जाणइ। एकत्वभावना हूंतउ यथोक्तु निरसंगु हुयइ, धृतिअवष्टंभि करी प्राणत्यागिहिं आपणपउं मेल्हइ नहीं। इसी परि जिम जिनकल्पी पहिलउं तुलना करइ तिम प्रतिमा 30 अंगीकरणहारु पुणि पहिलउं गच्छ माहि थिकउ तुलना करइ, तथा[2] उत्कर्षइतउ किंचूण दसपूर्व जघन्य-इतउ नवपूर्व त्रीजउं वस्तु तेह सीम सूत्रार्थधारकु जउ हुयइ उपसर्गसहु एषणाभिग्रहधरु–अलेपकृत-वल्ल–चणकादिभिक्षाग्राहकु। किसउ अर्थु ?–

---

§249) 1 Bh. भणियव्वं। 2 Bh. शूला-'। §250) 1 B.-विउं। §251) 1 Bh. गतरूपु। 2 B. omits.

संसट्ठ असंसट्ठे उद्धड तह अप्पलेवडा चेव ।
उग्गहिया पग्गहिया उज्झियधम्माओ सत्तमिया ॥　　[२५७]

एह गाह माहि भणी छई सात भिक्षा तींह माहि पहिली बि भिक्षा वर्जी करी बीजी पांच भिक्षा तींहं रहइं ग्राह्कु । भिक्षापंचकहीं माहि दिनि दिनि कृताभिग्रहु हूंतउ एकदत्ति भक्त नी एक पानक नी लियइ । इसी परि एकु मासु गच्छ माहि परिकर्म्मणा करइ पाछइ गच्छ बाहिरि नीसरी करी एकु मासु 5 गच्छ माहि थिकइ कीधउं ॥ करइ । रात्रि समइ मसाणादिकि थानकि वृक्षमूलि एकपुद्गलन्यस्तदृष्टि, किसउ अर्थु ? एक पुद्गल पूर्वापरपर्यायपर्यालोचनु करतउ कावोत्सर्गि रहइ जिहां सूर्यु अस्ति जाइ तेह थाहर हूंतउ सिंह-व्याघ्र-चित्रक-हस्तिप्रभृति महाभयहिं पगु मात्रू चालइ नहीं, प्रासुकजलादिकिहिं हस्तादिप्रक्षालनु करइ नहीं । इसी परि मासु बाहिरि रही करी प्रतिमा पूरी करइ, प्रतिमा समाप्ति हूंती राजादिलोक संमुख समानयनपूर्वकु चतुर्विधि श्रीसंघि पंचशब्दादिवादनादि महाप्रवेशक महोत्सवि 10 करावीतइ नगर माहि आवइ । इसी परि बिउं मासे पहिली प्रतिमा संपूर्ण नीपजइ ।

§252) इसीहीं जि परि तिणिहिं जि वरसि बीजी प्रतिमा आरंभियइ । बि मास गच्छ माहि परिकर्म्मणा कीजइ, तउ पाछइ बाहिरि पूर्वरीतिहिं जि बि मास प्रतिमा कीजइ सउं पाछइ गच्छ माहि पूर्वरीति करी आणियइ । इसी परि चउं मासे बीजी प्रतिमा संपूर्ण हुयइ ।

§253) विशेषु पुणि एतलउ बीजी प्रतिमा बि दाति भक्त नी बि दाति पानक नी हुयइं । इसी परि सातमी प्रतिमा सीम एक एक दाति भक्त पानक विषइ वाधती हुयइ । एवं पहिलइ वरसि बि प्रतिमा संपूर्ण हुयइं ।

§254) त्रीजी प्रतिमा त्रिन्हि मास गच्छ माहि परिकर्म्मणा त्रिन्हि मास बाहिरि प्रतिमा कीजइ । इसी परि छए मासे बीजइ वरसि त्रीजी प्रतिमा पूजइ ।

§255) मास ४ गच्छ माहि मास ४ बाहिरि एवं मासे ८ त्रीजइ वरसि चउथी प्रतिमा पूजइ । 20

§256) मास ५ गच्छ माहि चउथइ वरसि परिकर्म्मणा ई जि हुयइ । पांचमइ वरसि मास ५ बाहिरि प्रतिमा हुयइ । इसी परि बिहुं वरसे पांचमी प्रतिमा पूजइ ।

§257) मास ६ गच्छ माहि परिकर्म्मणा छट्ठइ वरसि हुयइ सातमइ वरसि मास ६ बाहिरि छट्ठी प्रतिमा पूजइ ।

§258) मास ७ गच्छ माहि परिकर्म्मणा आठमइ वरसि हुयइ, मास ७ बाहिरि नवमइ 25 वरसि सातमी प्रतिमा पूजइ ।

§259) इसी परि नवे वरसे छप्पन्ने मासे सात प्रतिमा संपूर्ण कीजइं । तथा च भणितम्–

'मासाई सत्तंता' इति । 'पढमा' इति प्रथमा । आठमी प्रतिमा साते दिवसे 'चउं' चतुर्थ त्रिउं आंबिले एकांतरिते करी पूजइ, चतुर्थि कीधइ पानक परिहारु करिवउ, गच्छ माहि थिकां कीजइ रात्रि सीम उत्तानक पार्श्ववर्त्ति स्थानि सूते रहिवउं । 'बिइया' नवमी प्रतिमा पुणि इसी परि 'चउं' चतुर्थ 30 त्रिउं आंबिले एकांतरिते करी पूजइ । नवमी गच्छ बाहिरि कीजइ तथा उत्कटकासनसंस्थितइं रहियइं अथवा लगंडु वांकउं लाकडु जिम हुइ तिम सूईयइ अथवा आयतदंड वृद्धदंड जिम पाधरां होई मायउं अनइ पग भुइं लगाडियइं नहीं समस्तराति इसी परि सूते रहियइ । एवं 'तइया' दसमी प्रतिमा पुणि

§251) 3 B. om ts-पर्या-१ 4 B. drops -मा । 5 B. [illegible] बिहुं । 7 Bh. adds परी ।

जिम नवमी प्रतिमा कीजइ तिम दसमी प्रतिमा पुणि कीजइ। इसी परि ए त्रिन्हि प्रतिमा एकवीसे दिवसे संपूर्ण कीजइं। इग्यारमी प्रतिमा अहोरात्रिकी नामि करी कहियइ। आंबिलु करी सकलु अहोरात्रु ग्राम बाहिरि रही प्रलंबित भुज करी काउसग्गु कीजइ, पाछइ चतुर्थ[1] पि कीजइं। इसी परि त्रिउं दिवसे इग्यारमी प्रतिमा पूजइ। तथा दिवसि आंबिलु कीजइ रात्रि ग्राम बाहिरि ईषत्प्राग्भाराभिधान सिद्धशिला तेह नइ विषइ निर्निमेषदृष्टि विन्यासि कीधइ बे पग मेली करी भुज लंबमान करी सकल रात्रि जिनमुद्रा वर्तमानु काउसग्गि रहइ। पाछइ पानकाहाररहित त्रिन्हि उपवास करइ। इसी परि चइं दिवसे बारमी प्रतिमा पूजइ। आठमी प्रतिमा हूंती बारमी प्रतिमा सीम दाति न हुयइं। जेतिवार सर्वइ प्रतिमा संपूर्ण हुयइं तेतीवार महात्मा रहइं अनेकि लब्धि ऊपजइं इति साधुप्रतिमाविचारु सिद्धांत ग्रन्थ अनुसारि मइं लिखिउ छइ। अनेरोई जु[2] को विशेषु हुयइ सु पुणि गीतार्थहं महांतु अनुग्रहु करी लिखियउ।

§260) 'अभिग्गह' इति। द्रव्य-क्षेत्र-कालभाव भेदइतउ अभिग्रहु चउं भेदे हुयइ। यथा द्रव्यइतउ जे किमइ खलचंडादिकु द्रव्यु लहिसु तउ लेसु। क्षेत्रइतउ जइ धनवंतादि घरि लहिसु तउ लेसु। कालइतउ जउ भिक्षाकालु अतिक्रमिउ होइसिइ तउ लेसु। भावइतउ जउ[1] दायकु हसनादि क्रिया करतउ देखिसु तउ लेसु। इसी परि चतुर्विध अभिग्रह जाणिवा। अथवा पूर्विहिं विस्तरि करी अभिग्रह चतुर्विधा भणिया छइं तिम जाणिवा। ए पूर्वभणित पिंडविसोही प्रमुख सगलाई जउ मेलियइं तउ साधु तणा मई[2] उत्तरगुण वर्णवइ संख्यात। 'सो वियाणाहि' किसउ अर्थु? शिष्य आगइ गुरु कहइ-हे शिष्य। तउं 'वियाणाहि' जाणि। 'सो' इहां पादपूरणनिमित्तु छइ। अथवा-

पायाला अट्ठेव य पणुवीसा बार बार सय चेव।
दव्वाइ चउरभिग्गह भेया खलु उत्तरगुणाणं॥ [२५८]

इति व्यवहार-सिद्धांतानुसारि करी पिंडविसुद्धि तणा भेद बइतालीस। यथा-उद्गमदोष सोल, उत्पादनादोष सोल, एषणादोष दस, इहं बइतालीसहीं तणा परिहार। बइतालीस पिंडविसुद्धिभेद, समिति पांच गुप्ति त्रिन्हि[1], एवंरूप आठ समिति, भावना पंचवीस-एक एक महाव्रत प्रति पांच पांच भावना भावइवउ।

§261) यथा-

भावनाभिर्भावितानि पञ्चभिः पञ्चभिः क्रमात्।
महाव्रतानि नो कस्य साधयन्त्यव्ययं पदम्॥ [२५९]

यथा-

मनोगुप्त्येषणाऽऽदानेर्याभिः समितिभिः सदा।
दृष्टान्नपानग्रहणेनाहिंसां भावयेत् सुधीः॥ [२६०]

मनोगुप्ति १ एषणासमिति २ आदानभांडमात्रनिक्षेपणासमिति ३ ईर्यासमिति ४ दृष्टान्नपानग्रहण ५ पांच भावना प्रथम महाव्रत तणी जाणिवी।

§262) हास्य-लोभ-भय-क्रोधप्रत्याख्यानैर्निरन्तरम्।
आलोच्य भाषणेनापि भावयेत् सूनृतव्रतम्॥ [२६१]

---

§259) 1 Bh. चरम। 2 Bh. [illegible]। §260) 1 Bh. [illegible]। 2 Bh. changes order [illegible]।

हास लोभ भय क्रोध इहं चउहुं तणा प्रत्याख्यान निवारण च्यारि भावना, पांचमी भावना आलोची करी बोलियइं; ए पांच भावना बीजा महाव्रत तणी जाणेवी।

§263) आलोच्यावग्रहयाच्ञाऽभीक्ष्णावग्रहयाचनम् ।
एतावन्मात्रमेवैतदित्यवग्रहधारणम् ॥ [२६२]
समानधार्मिकेभ्यश्च तथाऽवग्रहयाचनम् ।
अनुज्ञापितपानान्नाशनमस्तेयभावना ॥ [२६३]

आलोचनापूर्वं देवेंद्र-राज-गृहपतिप्रभृति अवग्रहयाचनु १, जिहां बहु क्षणु रहियइ तिहां तत्क्षेत्रा-धिपतिनि अनुज्ञापूर्वकु रहियइ इति अभीक्ष्णावग्रहयाचनु २, एतलूं ज एउ क्षेत्रादिकु मू रहइं परिग्रह-धारणि मोकलउं बीजउं नही इत्यवग्रहधारणु ३, साधर्मिकावग्रहयाचनु ४, अनुज्ञापितपानान्नभोजनु ५, इत्येवंरूप पांच भावना त्रीजा महाव्रत तणी जाणेवी।

§264) स्त्री-षण्ढ-पशुमद्वेश्माऽऽसन-कुड्यान्तरोज्झनात् ।
सरागस्त्रीकथात्यागात् प्राग्रतस्मृतिवर्जनात् ॥ [२६४]
स्त्रीरम्याङ्गेक्षण-स्वाङ्गसंस्कारपरिवर्जनात् ।
प्रणीतात्यशनत्यागाद् ब्रह्मचर्यं च भावयेत् ॥ [२६५]

स्त्री नारी षंढ नपुंसक पशु छाली गाइ महिषि घोडी रासभी प्रभृति जिहां हुयइं तिहां न रहियइं; स्त्रीआसनि न बइसियइं,[1] कुड्य भणियइं भीति तीहं तणा अंतराल जालां तीहं करी स्त्रीशरीरावयव विलोकनु न कीजइं इति एक भावना। सरागस्त्रीकथा न कीजइं इति बीजी भावना। पूर्वानुभूत मैथुन तणउं समरणु न कीजइं इति त्रीजी भावना। स्त्री तणा रम्य मुखवक्षोजादिक अंग न जोईइं,[2] स्व आपणा अंग रहइं संस्कारु दंत-नख-केश मज्जनादिकु न कीजइं इति चउथी भावना। प्रणीतु स्निग्ध दधि-मोदक-घृतपूर-खरनथी मधुरु आहारु तेह तणउं अतिअशनु अतिभक्षणु न कीजइं इति पांचमी भावना चउथा महाव्रत तणी जाणेवी।

§265) स्पर्शे रसे च गन्धे च रूपे शब्दे च हारिणि ।
पञ्चस्वपि-इन्द्रियार्थेषु गाढं गार्ध्यस्य वर्जनम् ॥ [२६६]
एतेष्वेवाऽमनोज्ञेषु सर्वथा द्वेषवर्जनम् ।
आकिञ्चन्यव्रतस्यैवं भावनाः पञ्च कीर्तिताः ॥ [२६७]

स्पर्श रस गंध रूप शब्द लक्षण छइं पांच मनोवांछित विषय तीहं विषइ अतिरागवर्जनु अथवा एहं जि छइं अमनोवांछित पांच विषय तीहं माहे विषइ सर्वथा द्वेषवर्जनु जु कीजइ ए पांच, पांच महाव्रत तणी भावना[1] जाणेवी।

§266) बार तप तणा भेद, बार प्रतिमा, च्यारि अभिग्रह सर्वइ मिलिया एकु सउ त्रिहुं करी अधिकु उत्तरगुण साधुसंबंधिया जाणेवा।

§267) अथ श्रावक तणउं देशोत्तरगुणप्रत्याख्यानु इगुणनवइ भेदे करी लिखियइ। यथा जिणि परि ति इगुणनवइ भेद हुयइं स परिकहियइ–

§264) 1 Bh. बइसीयइं। 2 B. जोइइं। §265) 1 Bh. omits.

पच्चक्खाणं १०, अभिग्गह ४, सिक्खा ७, तव १२, पडिम ११,
भावणा १२, खित्तं ९ ।
धम्मो ४ पूया १७ य तहा गिहिउत्तरगुण इगुणनउई ॥ [२६८]

तत्र पच्चक्खाणु नवकार पोरिसी ए इत्यादिकु दसविधु आगइ कहीसिइ । अभिग्रह साधु तणा
5 जिम अभिग्रह भणिया तिणि अनुसारि श्रावकहीं रहई जाणिवा । त्रिन्हि गुणव्रत चत्तारि शिक्षाव्रत रूप
सात शिक्षा जाणिवी । तपु बारहे भेदे जिम पूर्विहिं भणिउं तिमहिं ज[1] जाणिवउं ।

§268) प्रतिमा इग्यार । यथा–

दंसण १ वय २ सामाइयइ ३ पोसह ४ पडिमा ५ अबंभ ६ अचित्ते ७ ।
आरंभ ८ पेस ९ उद्दिट्ठवज्जए १० समणभूए य ११ ॥ [२६९]

10 यत्र–

शङ्का १ काङ्क्षा २ विचिकित्सा ३ मिथ्यादृष्टिप्रशंसनम् ४ ।
तत्संस्तवश्च पञ्चापि सम्यक्त्वं दूषयन्त्यमी ॥ [२७०]

ईहां शंकादिकइं पांचहीं अतीचारहं तणउं स्वरूपु पडिकमणा सूत्र माहि "संकाकंखविगिंछा"–
पद गाह नइ वखाणि कहीसिइ । शंकादि अतीचारपंचकरहितु सुद्धु सम्यक्त्वु मासदिवस सीम पालियइ
15 सु स प्रथम दर्शनप्रतिमा १ कहियइ ।

§269) पांच अणुव्रत त्रिन्हि गुणव्रत चत्तारि शिक्षाव्रत लक्षण बारह व्रत कहियइं, ति
सगटाइं अतीचारपंचकरहित पूर्वदर्शनप्रतिमासमाचारु[1] समाचरतां हूंता बि मास सीम जु पालियइ स
बीजी व्रतप्रतिमा कहियइ । तथा त्रिकाल देवपूजा उभयकालु प्रतिक्रमणु गुरुपादमूलि वंदनादि क्रियाक·
लाप कीजइ विधियत् गुप्तिसमिति यतना[2] करतां वर्त्तियइ इत्यादिकु समाचारु बीजी प्रतिमा माहि
20 जाणिवउ २ ।

§270) त्रिन्हि मास प्रथम द्वितीय प्रतिमासमाचारु समाचरतां हूंतां

तिविहे दुप्पणिहाणे अणवट्ठाणे तहाऽऽसयविहूणे ।
सामाइए वितहकए पढमे सिक्खावए निंदे ॥ [२७१]

इणा सामायिक तणा पांच अतीचार परिहरता हूंतां 'जाहे खणिओ ताहे सामाइयं कुज्जा' इति
25 वचनात् सामायिकिहिं जि वर्त्तमानु जु रहइ स त्रीजी सामाइकप्रतिमा ३ ।

§271) अष्टमी चतुर्दशी पूर्णिमा अमावास्या लक्षण चतुःपर्वी दिवसहं कृतचतुर्विधाहार
पौषधोपवास चत्तारि मास पूर्वप्रतिमात्रय समाचारु प्रतिपालतां जु रहियइ स चतुर्थी[1] पौषधप्रतिमा ४ ।

§272) पौषध नी रात्रि एक रात्रिकादिक प्रतिमा विकउ रहइ, मास ५ अस्नानु प्रासुक
भोजनु दिवाब्रह्मचारी रात्रिकृतपरिमाणु पौषधकालि रात्रिहिं ब्रह्मचारी पूर्वप्रतिमाचतुष्टयसमाचारु प्रतिपालतां
30 जु रहियइ स पांचमी प्रतिमा नाम ५ ।

§273) प्रतिमा ५ माम ६ पूर्वप्रतिमापंचक समाचारु प्रतिपालतां हूंतां सदा ब्रह्मचारी
हुंइयइ स छट्ठी अब्रह्म नाम प्रतिमा ६ ।

---

§268) 1 Bh. जि । §269) 1 Bh. पूर्वदर्शन 2 Bh. यतन । §271) 1 Bh. चउथी ।

§274) पूर्वप्रतिमाषट्कसमाचारु प्रतिपालनापरु मास ७ सीम सचित्ताहारवर्जकु हुयइ जिणि स सप्तमी अचित्तनाम प्रतिमा ७।

§275) पूर्वप्रतिमासप्तकसमाचारप्रवर्त्तकु मास ८ स्वयं आरंभवर्जकु हुयइ जिणि स अनारंभनाम अष्टमी प्रतिमा ८।

§276) प्रेष्यही कन्हा आरंभु न करावइं पूर्वसमाचारु मास ९ जिणि करइ स प्रेष्यारंभ- 5 वर्जिका नाम नवमी प्रतिमा ९।

§277) उद्दिष्टकृताहारवर्जकु। किसउ अर्थु? आत्मनिमित्तकृत भोजनवर्जकु जु काइं घरि सर्व साधारणु भोजनु तेह रहइं कारकु पूर्व समाचारधारकु मास दस उद्दिष्ट भोज्यवर्जिका नाम दसमी प्रतिमा १०।

§278) क्षुरमुंड अथवा लुंचितु रजोहरण-पात्रपरिग्रही श्रमणभूतु यतिसमाचारकारी[1] निर्ममत्वु 10 स्वज्ञातिकुलहं विहरइ, भिक्षाभोजी ति 'श्रमणभूता' इति नामिका एकादस मासिका एकादसी प्रतिमा ११। इति संक्षेपि[2] करी श्रावकप्रतिमा विचारु।

§279) केई एकि संप्रति प्रतिमा श्रावकहं रहइं करावइं। केई एकि पुणि चित्तचलाचलादि भावि करी प्रतिमासमाचार रहइं निरतीचारता करी दुष्करत्वइतउ तथाविध धृतिबलसंहननादिकहं तणा अभावइतउ पुणि न करावइं। तथा निषेधवचनु पुणि तीर्थोद्गालि नाम प्रकीर्णक माहि दीसइ। यथा- 15

साहूणग्गोयरओ वुच्छिन्नो दूसमाणुभावाओ।
अज्जाणं पणवीसं, सावयधम्मो य वुच्छिन्नो ॥ [२७२]

अत्र साधुमहात्मा पूर्विहिं अप्रमादप्रवृत्तिनिमित्तु 'अग्गोयरओ' धरता, किसउ अर्थु? वाम कुहणी चांपी करी चोलपट्टकु राहवतां सु सु 'अग्गोयरओ' कहियइ, इसउ आम्नाउ छइ। सु अग्गोयरउ दुस्समानुभावइतउ वुच्छिन्नउ विच्छेदि गयउ प्रमादबहुल कालभावि करी साधु चोलपट्टकु दवरादिकहं 20 तणइ आधारि धारिवा[1] लागा। 'अज्जाणं पणवीसं' ति आर्यिका साध्वी ति पंचवीस उपकरण पहिरती,[2] ति पुणि विच्छेदि गयां। 'सावयधम्मो य वुच्छिन्नो' इति एकादस प्रतिमारूपु श्रावकधर्मु विच्छेदि गयउ, इसा व्याख्यानइतउ एकादश प्रतिमा श्रावक तणी विच्छेदि गई इति। गतं प्रसङ्गागतम्। भावना १२ पूर्विहिं भणी जिम तिमहीं जि जाणिवी।

25

§280) खित्तं ९ यथा-

जिणभवण १ बिंब २ पुत्थय ३ चउविहसंघो य ७ सत्त खित्ताइं।
जिन्नुद्धरो ईं[1] ८ पोसहसाला ९ साहारणं च दस ॥ [२७३]

जिन्नुद्धार रहइं जिनभवनग्रहणि करी ग्रहणइतउ एकु जिनभवनु १, बीजउं जिनबिंबु २, त्रीजउं पुस्तक ३, साधु चउथउं ४, साध्वी पांचमउ ५, श्रावक छट्ठउं ६, श्राविका सातमउं ७, पौषधशाला आठमउं ८, साधारण संबलकु नवमउं ९ क्षेत्रु। ईंह नव[2] क्षेत्रहं श्रावकि आपणउं वित्तबीजु 30 वाविवउं[3]। यदाहु-

§ 278) 1 Bh. समाचारी। 2 Bh. adds हिं। §279) 1 Bh. धरवा। 2 Bh. पहिरती।
§ 280) 1 Bh. जिन्नुद्धारो, omits ईं। 2 Bh. नवहं। 3 Bh. वाविउं।

इच्छतोऽनिच्छतो वाऽपि मामकं द्रविणं सदा ।
चैत्य-साधूपयोगाय भूयात् जन्मनि जन्मनि ॥ [२७४]
सो अत्थो तं च सामत्थं तं विन्नाणमणुत्तमं[4] ।
साहम्मियाण कज्जम्मि जं विचंति[5] गुणायरा ॥ [२७५]

5 तथा दान-शील-तपो-भावनारूपु चतुर्विधु धर्मु। देव-गुरु-धर्मविषयभेदइतउ त्रिविध चिंता। यथा–

देव-गुरु-धम्म विसया तिविहा चिंता हवंति कायव्वा ।
सड्ढेहिं महड्ढेहिं अप्पड्ढेहिं न सत्तीए ॥ [२७६]
विहिपूया विहिवंदण विहिचेइय दव्ववुड्ढिरक्खा य ।
वट्टइ अहव न वट्टइ इय चिंता देवविसयम्मि ॥ [२७७]
10 गुरुणं कहं समाही कह तेसिं सासणं निरावाहं ।
सीयंति न सीयंति व इय चिंता होइ गुरुविसए ॥ [२७८]
धम्मो कहं पवट्टइ निरविग्घो तह कहं भवइ एसो ।
साहम्मियवच्छल्लं धम्मि पुणो एस खलु चिंता ॥ [२७९]

इति त्रिविधचिंता । अथवा अतीत-अनागत-वर्तमानकालभेदि करी धर्मचिंता त्रिविधा । यथा–

15 पुव्वभवे सद्दहिओ जिणधम्मो मइं तओ इहं लद्धो ।
सद्दहणाऽऽयरणाओ कह लब्भे हं भविस्से वि ॥ [२८०]

इति त्रिविधचिंता गता ।

§ 281) सतरभेद पूजा यथा–

न्हवणु १ विलेवणु २ अंगम्मि वत्थजुयलं ३ च वासपूया य ४ ।
20 पुप्फारुहणं ५ मल्लारुहणं ६ तह वन्नयारुहणं ७ ॥ [२८१]
चुन्नारुहणं ८ वत्थारुहणं ९ आहारणरोहणं १० चेव ।
पुप्फगिह ११ पुप्फपगरो १२ मंगलगा १३ धूवउक्खेवो १४ ॥
नट्टं १५ गीयं १६ वज्जं १७ पूयाभेया इमे सतर ॥ [२८२]

गंधकषायवस्त्रसत्क अंगलूहणउं १, दिव्यवस्त्रपरिधापनिका २ इति वस्त्रयुगलु तत्पूजा वस्त्रयुगल-
25 पूजा, माल्यं माला स पुणि विशेषरूप जाणिवी । यथा–इंद्रमालाद्यारोपणु । सामान्यमाला 'पुप्फारुहणं
पुष्पपूजा' कहियइ तिणिहिं जि करी जिणि कारणि लाभइं तिसइ कारणि 'मल्लारुहणं' इसउं वली भणियइ।
वत्थारुहणं महाध्वजारोपु तत्पूजा वत्थारुहणपूजा । वन्नयारुहणं शोभानिमित्तु वर्ण्णककरणु तत्पूजा
वन्नयारुहणं । चुन्नारुहणं कर्पूरचूर्णादिपूजनु । मंगलगा अष्टमांगलिक्यपूरणु–दप्पण १ भद्दासण २
नंद्यावर्त्त ३ पूर्णकलस ४ मत्स्य ५ श्रीवत्स ६ वर्द्धमानु शरावसंपुटु ७ स्वस्तिक ८ लक्षण मांगलिक्य
30 जाणिवां । वज्जं वाद्यपूजा । पुष्पगृहु फूलहरउं पुष्पप्रकर जिम समवसरण माहि देव करइं तिम पुष्पप्रकर-
पूजा[1] । बीजां पद सुगम । इति सतरह भेद पूजा तणा ज्ञाताधर्मकथांग माहि अनइ जीवाभिगम माहि
कहिया छइं । इति श्रावक तणा देसत उत्तरगुण इगुणनवइ संख्यात संक्षेपिहिं भणिया[2] ।

§280) 4 Bh. विन्नाणु। 5 Bh. वयंति। §281) 1 Bh. has altered original आहरण-to अहोरण; B. may be interpreted as अहोरण-। 2 B. omits the sentence.

§ 282) अथ साधु श्रावक चिहुं वर्णउं सर्व्वोत्तर गुण प्रत्याख्यानु लिखियइ यथायोग्यु अनागतादिकु दसविधु । यथा–

अणागयं १ अइक्कंतं २ कोडीसहियं ३ नियंटियं ४ चेव ।
सागारं ५ अणागारं ६ परिमाणकडं ७ निरवसेसं ८ ॥　　[२८३]
संकेयं ९ चेव अद्धाए १० पच्चक्खाणं च दसविहं होइ ।　　5
सयं एवऽणुपालणियं दाणुवएसे जह समाही ॥　　[२८४]

पर्युषणापर्वादिकि पर्वि आवणहारि हुंतइ ग्लानतावैयावृत्यादिकारणि पर्व पहिलउं जु अष्टमादिकु प्रत्याख्यानु कीजइ सु अनागतु १ । पर्वि गयइ हुंतइ जु कीजइ सु अतिक्रांतु २ । पूर्वतप नइ समाप्ति समइ बीजा तप नइ प्रत्याख्यानि लागते जि कीधइ चिहुं तप नी कोटि मिलइं तिणि कारणि कोडीसहितु ३ । मासि मासि उनकि दिवसि साजइ माठइ थिकइ मइं जु अष्टमादिकु अवश्यु करिवउं हुयइ 10 सु नियंत्रितु ४ । एउ पुणि प्रत्याख्यानु चतुर्दश पूर्वधर जिनकल्प सरसउं विच्छिन्नउं । महत्तरादिकहं आकारहं सहितु साकारु ५ । महत्तरादिकहं आकारहं रहितु निराकारु ६ । दत्ति-कवलादिपरिमाणसहितु परिमाणकृतु ७ । सर्व अशनपानरहितु निरवशेषु ८ । अङ्गुष्ठ-मुष्ट्यादिकि चिह्नि करी उपलक्षितु संकेतु ९ । 'अद्धा' कालु तिणि करी उपलक्षितु अद्धाप्रत्याख्यानु १० । सु पुणि दसविधु । तथा–

नवकार १ पोरिसीए २ पुरिमड्ढ ३ कासणे ४ गठाणे ५ य ।　　15
आंबिल ६ अभत्तट्ठे ७ चरिमे ८ अभिग्गहो ९ विगई १० ॥　　[२८५]

प्रत्याख्यानद्वारु हुयउं ।

§283) अथ प्रत्याख्यानभंग लिखियइं । ति पुणि सर्व संख्या करी १४७ हुयइं । ति पुणि इसी परि हुयइं ।

तिन्नि तिया तिन्नि दुया तिन्निक्किका य हुंति जोगेसु ।　　20
ति दु इक्कं ति दु इक्कं ति दु इक्कं चेव करणाइं ॥　　[२८६]

मन वचन काय योग तीहं नइ विषइ त्रिन्हि त्रिका, त्रिन्हि द्विका, त्रिन्हि एकका करण कारण अनुमतिलक्षण करण; ति पुणि योगहं हेठइ त्रि द्वि एक इसी परि लिखियइं । आगल फलु क्रमि करी इसउं हुयइ–एकु एककु, त्रिन्हि त्रिका, वि नवक, एकु त्रिकउ, वि नवक इति । स्थापना इसी परि कीजइ–

३ ३ ३ २ २ २ १ १ १　　25
३ २ १ ३ २ १ ३ २ १
१ ३ ३ ३ ९ ९ ३ ९ ९

तथा च भणितम्–

तिविहं तिविहेणिक्को एगयरतिगेण भंगया तिन्नि ।
तिगरहियए नव भंगा सव्वे पुण अउणपन्नासं ॥　　[२८७]　　30
पढमे इक्को विइए तइयचउत्थेसु भंगया तिन्नि ।
पंचमि छट्ठे नव नव सत्तमि तिन्हिइ नवमि नव ॥　　[२८८]

ईहं तणी भावना इसी परि कीजइ–जीवहिंसा न करइ, न करावइ, अनेरा करता अनुमनइ नहीं मनि करी वचनि करी कायि करी । एउ तिविहं तिविहेणिक्को, इणि परि भणिउ एकु भांगउ ।

§284) अत्र शिष्यु भणइ-भगवन्! देशविरत रहइं एउ भेदु किम संभवइ; तेह रहइं अनुमतिनिषेध तणा अभावइतउ, इसउं न कहिवूं। आपणा विषयबाहिरि श्रावकहीं रहइं अनुमतिनिषेधु संभवइ, नहि स्वयंभूरमणमत्स्यादिघातविषइ अनुमति संभवइ। तदुक्तम्–

'न करे' इच्चाइतिगं गिहिणो कह होइ देसविरयस्स।
5 भन्नइ विसयस्स बहिं पडिसेहो अणुमईए वि॥ [२८९]

इंही जि विषइ भाष्यकारु पृच्छा अनइ ऊतरु कहइ–

केई भणंति गिहिणो तिविहं तिविहेण नत्थि संवरणं।
तं न, जओ निद्दिट्ठं पन्नत्तीए[1] विसेसेणं॥ [२९०]

तो कह निज्जुत्तीएऽणुमइनिसेहु त्ति सेसविसयम्मि।
10 सामत्थेणं नत्थउ तिविहं तिविहेण को दोसो?॥ [२९१]

निर्युक्ति माहि आपणाई विषय माहि सामर्थ्यभावि करी अनुमतिदान तणा अभावइतउ अनुमतिनिषेधु भणिउ, अनेरइ थानकि स्वयंभूरमणादिकि तिविहं तिविहेण निषेधि किसउ देसु। तथा पुत्रादिसंततिनिमित्तु जिणि सावद्यव्यापारु दीधउ हुयइ तेह एकादसी प्रतिमा प्रतिपन्न रहइं 'तिविहं तिविहेण' परिहारु संभवइ। तदुक्तम्–

15 पुत्ताइसंतइनिमित्तु मुत्तुं इकादसिं पवन्नस्स।
जंपंति केइ गिहिणो दिक्खाभिमुहस्स तिविहं पि॥ [२९२]

पुनरपि शिष्यु भणइ–किसी परि मनि करी करण कारण अनुमति हुयइं। आह–

कह पुण मणसा करणं कारावणु अणुमई य[2]।
जह वय-तणुजोगेहिं करणाइं तह भवे मणसा॥ [२९३]

20 जेतीवार काय नउ वचन नउ व्यापारु रहिउ हुयइ सर्वथा तेतीवार केवलु मनव्यापारु जु हुयइ।

तयहीणत्ता वयतणुकरणाईण अहव उ[3] मणकरणं।
सावज्जजोगमणं पन्नत्तं वीयरागेहिं॥ [२९४]
कारवणं पुण मणसा चिंतेइ करेउ एस सावज्जं।
चिंतेती उ कए पुण सुट्ठु कयं अणुमई होइ॥ [२९५]

25 एतलइ पहिलउ भंगु हुयउ।

§285) न करइ ■ करावइ अनेरा करता हूंता अनुमनइ नहीं। मनि करी वचनि करी एकु। मनि करी कायि करी बीजउ। वचनि करी कायि करी त्रीजउ ३। एउ बीजउ मूलभेदु हुयउ। अथ अनंतरु त्रीजउ मूलभेदु कहियइ–न करइ न करावइ अनेरा करता हूंता अनुमनइ नहीं। मणेणं एकु, वायाए बीजउ, काएणं त्रीजउ। एउ त्रीजउ मूलभेदु। अथ चउथउ कहियइ–न करइ न करावइ मणेणं
30 वायाए काएणं एकु। न करइ अनेरा करता हूंता अनुमनइ नहीं बीजउ। न करावइ अनेरा करता हूंता अनुमनइ नहीं त्रीजउ ३। एउ चउथउ मूलभेदु। इयाणिं पांचमउ कहियइ–न करइ न करावइ मणेणं वायाए एकु। करइ नहीं अनेरा करता हूंता अनुमनइ नहीं बीजउ। न करावइ अनेरा हूंता अनुमनइ

§284) 1 B. gloss व्याख्याप्रज्ञप्ति माहि। 2 B. Bh. add तहा। ■ B. Bh. do not have उ।

नहीं भीजउ ३ । ए त्रिन्हि भांगा[1] मणेणं वायाए लद्धा । तथा इम्हीं जि परि मणेणं काएण य त्रिन्हि भांगा लाभइं । तथा अपर पुणि त्रिन्हि भांगा[1] वायाए काएण य लाभइं । एवं नव भांगा । पांचमउ मूलभेदु हूयउ । अथ छट्ठउ कहियइ—न करइ न करावइ मणेणं एकु । न करइ अनेरा करता अनुमनइ नहीं मणेणं बीजउ । न करावइ अनेरा करता अनुमनइ नहीं मणेणं त्रीजउ । एवं वायाए तिन्नि । काएण वि तिन्नि लब्भंति । एवं नव भांगा । छट्ठउ मूलभेदु भणिउ । इसांनि सातमउ कहियइ—न करइ मणेणं वायाए काएण य एकु । न करावइ मनसा वाचा कायेन बीजउ । अनेरा करता हूंता अनुमनइ नहीं मनसा ... त्रीजउ । सातमउ मूलभेदु भणिउ । अथ आठमउ भणियइ—न[2] करइ मणेणं वायाए एकु । तथा मणेणं काएण य बीजउ । वायाए काएण य त्रीजउ । एवं न करावइ इत्य वि तिन्नि भंगा । एवं नव भंगा आठमउ मूलभेदु भणिउ । अथ नवमउ मूलभेदु भणियइ[3]—न करइ मणेणं एकु, न करावइ[4] मणेणं बीजउ, अनेरा करता हूंता अनुमनइ नहीं मणेणं त्रीजउ । एवं वायाए तिन्नि । काएण य तिन्नि । एवं भंगा नव । नवमउ मूलभेदु भणिउ । ईहां पहिलइ भांगइ एकु भांगउ, बीजइ त्रिन्हि भंगा ३, त्रीजइ भांगइ त्रिन्हि भांगा । चउथइ भांगइ त्रिन्हि भांगा ३, पांचमइ भांगइ नव भांगा ९, छट्ठइ भांगइ नव भांगा ९, सातमइ भांगइ त्रिन्हि भांगा ३, आठमइ भांगइ नव भांगा ९, नवमइ भांगइ नव भांगा ९, सर्वं संख्या ४९ । तत्र अतीत सावद्य तणउं प्रतिक्रमणु, प्रत्युत्पन्न वर्तमान सावद्य तणउं संवरणु, अनागत सावद्य तणउं प्रत्याख्यानु । इसी परि कालत्रयि करी गुणिउ हूंतउ एगुणपंचास भांगा एकु सउ सइंतालु हुया । तथा चाह—

> लद्धफलमाणमेयं भंगा उ हवंति अउणपन्नासं ।
> तीया-ऽणागय-संपयगुणियं कालेण होइ इमं ॥ [२९६]
> सीयालं भंगसयं कह कालतिएण होइ गुणणाओ ।
> तीयस्स य पडिक्कमणं पच्चुप्पन्नस्स संवरणं ॥ [२९७]
> पच्चक्खाणस्स तहा होइ य एस्सस्स एस गुणणाओ ।
> कालतिएणं भणियं जिण-गणहर-वायगेहिं ॥ [२९८]
> सीयालं भंगसयं जस्स सुपढीइ होइ उवलद्धं ।
> सो खलु पच्चक्खाणे कुसलो सेसा सव्वे अकुसला उ ॥ [२९९]

तथा एकु पच्चक्खाणु करइ, एकु करावइ, तिहां च्यारि भंगी । तत्र जाणतउ जाणता कन्हइ करइ शुद्धु १ । जाणतउ अजाणता कन्हइ गुरु वर अजाणी गुरुबहुमानबुद्धि करी गुरु तणउं निर्देश... तीह तणइ समीपि करइ तउ शुद्धु २ । अजाणु जाणता समीपि ... करी करइ तउ शुद्ध ३ । अजाणु अजाण समीपि करइ सर्वथा अशुद्धु ४ । ...

§286) अथ साधु सरिसी 'तिविहं तिविहेणं' इसी ... हिंसादि पंचकु साधु करइ नहीं करावइ नहीं अनेरा करता हूंता अनुमनइ नहीं । ... सामाइयं" इसी करी लोक ... "सावज्जं जोगं ... पच्चक्खामि" इसी करी ... स्नेहहीं । ... त्रिविधं त्रिविधेन एकु, आठ प्रवचनमातृ ८, ... करी गुणिउ ... इत्याख्यानभंगाष्टक हूवउं ।

§285) 1 B drops lines between 1-2. 2 B ... 3 B ... (a alteration over final-ड) । 4 B ...

§284) अत्र शिष्यु भणइ–भगवन्! देशविरत रहइं एउ भेदु किम संभवइ; तेह रहइं अनुमतिनिषेध तणा अभावइतउ, इसउं न कहिवूं। आपणा विषयबाहिरि श्रावकहीं रहइं अनुमतिनिषेधु संभवइ, नहि स्वयंभूरमणमत्स्यादिघातविषइ अनुमति संभवइ। तदुक्तम्–

'न करे' इच्चाइतिगं गिहिणो कह होइ देसविरयस्स।
5 भन्नइ विसयस्स बहिं पडिसेहो अणुमईए वि ॥ [२८९]

ईंही जि विषइ भाष्यकारु पृच्छा अनइ ऊतरु कहइ–

केई भणंति गिहिणो तिविहं तिविहेण नत्थि संवरणं।
तं न, जओ निद्दिट्ठं पन्नत्तीए[1] विसेसेणं ॥ [२९०]
तो कह निज्जुत्तीएऽणुमइनिसेहु त्ति सेसविसयम्मि।
10 सामत्थेणं नत्थउ तिविहं तिविहेण को दोसो ? ॥ [२९१]

निर्युक्ति माहि आपणाई विषय माहि सामर्थ्यभावि करी अनुमतिदान तणा अभावइतउ अनुमतिनिषेधु भणिउ, अनेरइ थानकि स्वयंभूरमणादिकि तिविहं तिविहेण निषेधि किसउ देसु। तथा पुत्रादिसंततिनिमित्तु जिणि सावद्यव्यापारु दीधउ हुयइ तेह एकादसी प्रतिमा प्रतिपन्न रहइं 'तिविहं तिविहेण' परिहारु संभवइ। तदुक्तम्–

15 पुत्ताइसंतइनिमित्तु मुत्तुं इक्कादसिं पवन्नस्स।
जंपंति केइ गिहिणो दिक्खाभिमुहस्स तिविहं पि ॥ [२९२]

पुनरपि शिष्यु भणइ–किसी परि मनि करी करण कारण अनुमति हुयइं। आह–

कह पुण मणसा करणं कारावणु अणुमई य[2]।
जह वय-तणुजोगेहिं करणाइ तह भवे मणसा ॥ [२९३]

20 जेतीवार काय नउ वचन नउ व्यापारु रहिउ हुयइ सर्वथा तेतीवार केवलु मनव्यापारु ज[3] हुयइ।

तयहीणत्ता वयतणुकरणाईण अहव उं मणकरणं।
सावज्जजोगमणणं पन्नत्तं वीयरागेहिं ॥ [२९४]
कारवणं पुण मणसा चिंतेइ करेउ एस सावज्जं।
चिंतेती उ कए पुण सुट्ठु कयं अणुमई होइ ॥ [२९५]

25 एतलइ पहिलउ भंगु हुयउ।

§285) न करइ न करावइ अनेरा करता हूंता अनुमनइ नहीं। मनि करी वचनि करी एकु। मनि करी कायि करी बीजउ। वचनि करी कायि करी त्रीजउ ३। एउ बीजउ मूलभेदु हुयउ। अथ अनंतरु त्रीजउ मूलभेदु कहियइ–न करइ न करावइ अनेरा करता हूंता अनुमनइ नहीं। मणेणं एकु, वायाए बीजउ, काएणं त्रीजउ। एउ त्रीजउ मूलभेदु। अथ चउथउ कहियइ–न करइ न करावइ मणेणं
30 वायाए काएणं एकु। न करइ अनेरा करता हूंता अनुमनइ नहीं बीजउ। न करावइ अनेरा करता हूंता अनुमनइ नहीं त्रीजउ ३। एउ चउथउ मूलभेदु। इयाणिं पांचमउ कहियइ–न करइ न करावइ मणेणं वायाए एकु। करइ नहीं अनेरा करता हूंता अनुमनइ नहीं बीजउ। न करावइ अनेरा हूंता अनुमनइ

§284) 1 B. gloss धावश्यप्रज्ञप्ति माहि। 2 B. Bh. add तहा। 3 B. Bh. do not have ज।

नहीं श्रीजउ ३ । ए त्रिन्हि भांगा मनेनं वाचाए लद्धा । तथा इसीही जि परी [illegible] त्रिन्हि भांगा लाभइं । तथा अपर पुणि त्रिन्हि भांगा वाचाए काएन य लाभइं । एवं नव भांगा । पांचमउ मूलभेदु हुयउ । अथ छट्ठउ कहियइ—न करइ न करावइ मनेनं एकु । न करइ अनेरा करता अनुमनइ नहीं मनेनं बीजउ । न करावइ अनेरा करता अनुमनइ नहीं मनेनं त्रीजउ । एवं वाचाए त्रिन्हि । काएन वि तिन्नि लब्भंति । एवं नव भांगा । छट्ठउ मूलभेदु भणिउ । [illegible] वाचाए काएण य एकु । न करावइ मनसा [illegible] बीजउ । अनेरा करता हूंता अनुमनइ नहीं [illegible] त्रीजउ । सातमउ मूलभेदु भणिउ । अथ आठमउ भणियइ—न करइ मनेनं वाचाए एकु । तथा [illegible] काएण य बीजउ । वाचाए काएन य त्रीजउ । एवं न करावइ [illegible] वि त्रिन्हि [illegible] । एवं नव भांगा आठमउ मूलभेदु भणिउ । अथ नवमउ मूलभेदु भणियइ—न करइ मनेनं एकु, न करावइ मनेनं बीजउ, अनेरा करता हूंता अनुमनइ नहीं मनेनं त्रीजउ । एवं वाचाए त्रिन्हि । काएन य त्रिन्हि । एवं भांगा नव ।[1] नवमउ मूलभेदु भणिउ । इहां पहिलइ भांगइ एकु भांगउ, बीजइ त्रिन्हि भांगा ३, त्रीजइ भांगइ त्रिन्हि भांगा । चउथइ भांगइ त्रिन्हि भांगा ३, पांचमइ भांगइ नव भांगा ९, छट्ठइ भांगइ नव भांगा ९, सातमइ भांगइ त्रिन्हि भांगा ३, आठमइ भांगइ नव भांगा ९, नवमइ भांगइ नव भांगा ९, सर्वे भांगा ४९ । तत्र अतीत सावद्य तणउं प्रतिक्रमणु, प्रत्युत्पन्नवर्तमान सावद्य तणउं संवरणु [illegible] तणउं प्रत्याख्यानु । इसी परि कालत्रयि करी गुणिया हूंता [illegible] भांगा एकु सउ [illegible] हुयइ ।[2]

तथा चाह—

लद्धफलमाणमेयं भंगा उ हवंति अउणपन्नासं ।　　　[२९६]
तीया-ऽणागय-संपयगुणियं कालेण होइ इमं ॥

सीयालं भंगसयं कह कालतिएण होइ गुणणाओ ।　　　[२९७]
तीयस्स य पडिकमणं पच्चुप्पन्नस्स संवरणं ॥

पच्चक्खाणस्स तहा होइ य एसस्स एव गुणणाओ ।　　　[२९८]
कालतिएणं भणियं जिण-गणहर-वायगेहिं ॥

सीयालं भंगसयं जस्स विसुद्धीइ होइ उवलद्धं ।　　　[२९९]
सो खलु पच्चक्खाणे कुसलो सेसा सव्वे अकुसला उ ॥

तथा एकु पच्चक्खाणु करइ, [illegible] करावइ, [illegible] करी [illegible] । [illegible] गुरु १ । जाणतउ अजाणता [illegible] गुरु [illegible] करइ गुरु [illegible] अजाणु जाणता [illegible] करी [illegible] तीह नइ समीपि करइ गउ गुरु ३ । अजाणु अजाण समीपि करइ सर्वथा अशुद्धु ४ । [illegible]

§286) अथ साधु [illegible] इत्यादि [illegible] हिंसादि पंचकु साधु करइ नहीं करावइ नहीं अनेरा करता हूंता अनुमनइ नहीं । [illegible] पांच समिति [illegible] अजीवरक्षादि [illegible] समिति [illegible] [illegible] आठ प्रवचनमातर ८, [illegible] प्रत्याख्यानभंगद्वार हुयउं ।

§285) 1 B [illegible] between [illegible] alteration over final-[illegible] 4 B. [illegible]

§284) अत्र शिष्यु भणइ-भगवन् ! देशविरत रहइं एउ भेदु किम संभवइ; तेह रहइं अनुमतिनिषेध तणा अभावइतउ, इसउं न कहियूं । आपणा विषयबाहिरि श्रावकहीं रहइं अनुमतिनिषेधु संभवइ, नहि स्वयंभूरमणमत्स्यादिघातविषइ अनुमति संभवइ । तदुक्तम्--

'न करे' इच्चाइतिगं गिहिणो कह होइ देसविरयस्स ।
5 भन्नइ विसयस्स बहिं पडिसेहो अणुमईए वि ॥ [२८९]

ईंही जि विषइ भाष्यकारु पृच्छा अनइ उत्तरु कहइ-

केई भणंति गिहिणो तिविहं तिविहेण नत्थि संवरणं ।
तं न, जओ निद्दिट्ठं पन्नत्तीए विसेसेणं ॥ [२९०]
तो कह निज्जुत्तीएऽणुमइनिसेहु त्ति सेसविसयम्मि ।
10 सामत्थेणं नत्थउ तिविहं तिविहेण को दोसो ? ॥ [२९१]

निर्युक्ति माहि आपणाई विषय माहि सामर्थ्यभावि करी अनुमतिदान तणा अभावइतउ अनुमतिनिषेधु भणिउ, अनेरइ थानकि स्वयंभूरमणादिकि तिविहं तिविहेण निषेधि किसउ देसु । तथा पुत्रादिसंततिनिमित्तु जिणि सावद्यव्यापारु दीधउ हुयइ तेह एकादसी प्रतिमा प्रतिपन्न रहइं 'तिविहं तिविहेण' परिहारु संभवइ । तदुक्तम्--

15 पुत्ताइसंतइनिमित्तु मुत्तुं इक्कादसिं पवन्नस्स ।
जंपंति केइ गिहिणो दिक्खाभिमुहस्स तिविहं पि ॥ [२९२]

पुनरपि शिष्यु भणइ-किसी परि मनि करी करण कारण अनुमति हुयइं । आह-

कह पुण मणसा करणं कारावणु अणुमई य[2] ।
जह वय-तणुजोगेहिं करणाइं तह भवे मणसा ॥ [२९३]

20 जेतीवार काय नउ वचन नउ व्यापारु रहिउ हुयइ सर्वथा तेतीवार केवलु मनव्यापारु जु हुयइ ।

तयहीणत्ता वयतणुकरणाईण अहव उ[3] मणकरणं ।
सावज्जजोगमणं पन्नत्तं वीयरागेहिं ॥ [२९४]
कारवणं पुण मणसा चिंतेइ करेउ एस सावज्जं ।
चिंतेती उ कए पुण सुट्ठु कयं अणुमई होइ ॥ [२९५]

25 एतलइ पहिलउ भंगु हुयउ ।

§285) न करइ न करावइ अनेरा करता हूंता अनुमनइ नहीं । मनि करी वचनि करी एकु । मनि करी कायि करी बीजउ । वचनि करी कायि करी त्रीजउ ३ । एउ बीजउ मूलभेदु हुयउ । अथ अनंतरु त्रीजउ मूलभेदु कहियइ-न करइ न करावइ अनेरा करता हूंता अनुमनइ नहीं । मणेणं एकु, वायाए बीजउ, काएणं त्रीजउ । एउ त्रीजउ मूलभेदु । अथ चउथउ कहियइ-न करइ न करावइ मणेणं
30 वायाए काएणं एकु । न करइ अनेरा करता हूंता अनुमनइ नहीं बीजउ । न करावइ अनेरा करता हूंता अनुमनइ नहीं त्रीजउ ३ । एउ चउथउ मूलभेदु । इयाणिं पांचमउ कहियइ-न करइ न करावइ मणेणं वायाए एकु । करइ नहीं अनेरा करता हूंता अनुमनइ नहीं बीजउ । न करावइ अनेरा हूंता अनुमनइ

§284) 1 B. gloss श्रावकप्रज्ञप्ति माहि । 2 B. Bh. add तहा । 3 B. Bh. do not have उ ।

नहीं त्रीजउ ३ । ए त्रिन्हि भांगा[1] मणेणं वायाए लद्धा । तथा इसीहीं जि परि मणेणं काएण य त्रिन्हि भांगा लाभइं । तथा अपर पुणि त्रिन्हि भांगा[1] वायाए काएण य लाभइं । एवं नव भांगा । पांचमउ मूलभेदु हुयउ । अथ छट्ठउ कहियइ–न करइ न करावइ मणेणं एकु । न करइ अनेरा करता अनुमनइ नहीं मणेणं बीजउ । न करावइ अनेरा करता अनुमनइ नहीं मणेणं त्रीजउ । एवं वायाए तिन्नि । काएण वि तिन्नि लब्भंति । एवं नव भांगा । छट्ठउ मूलभेदु भणिउ । इयाणिं सातमउ कहियइ–न करइ मणेणं वायाए काएण य एकु । न कारवइ मणसा ईंहि बीजउ । अनेरा करता हुंता अनुमनइ नहीं मणसा ईंहि त्रीजउ । सातमउ मूलभेदु भणिउ । अथ आठमउ भणियइ–न[2] करइ मणेणं वायाए एकु । तथा मणेणं काएण य बीजउ । वायाए काएण य त्रीजउ । एवं न करावइ इत्य वि तिन्नि भंगा । एवं नव भंगा आठमउ मूलभेदु भणिउ। अथ नवमउ मूलभेदु भणियइ[3]–न करइ मणेणं एकु, न करावइ[4] मणेणं बीजउ, अनेरा करता हुंता अनुमनइ नहीं मणेणं त्रीजउ । एवं वायाए तिन्नि । काएण य तिन्नि । एवं भंगा नव । 10 नवमउ मूलभेदु भणिउ । ईंहां पहिलइ भांगइ एकु भांगउ, बीजइ त्रिन्हि भंगा ३, त्रीजइ भांगइ त्रिन्हि भांगा । चउथइ भांगइ त्रिन्हि भांगा ३, पांचमइ भांगइ नव भांगा ९, छट्ठइ भांगइ नव भांगा ९, सातमइ भांगइ त्रिन्हि भांगा ३, आठमइ भांगइ नव भांगा ९, नवमइ भांगइ नव भांगा ९ सर्व संख्या ४९ । तत्र अतीत सावद्य तणउं प्रतिक्रमणु, प्रत्युत्पन्नवर्त्तमान सावद्य तणउं संवरणु, अनागतसावद्य तणउं प्रत्याख्यानु । इसी परि कालत्रयि करी गुणित हुंता इगुणपंचास भांगा एकु सउ सतेतालु हुयइ । 15 तथा चाह–

> लद्धफलमाणमेयं भंगा उ हवंति अउणपन्नासं ।
> तीया-ऽणागय-संपयगुणियं कालेण होइ इमं ॥ [२९६]
> सीयालं भंगसयं कह कालतिएण होइ गुणणाओ ।
> तीयस्स य पडिक्कमणं पचुप्पन्नस्स संवरणं ॥ [२९७] 20
> पचक्खाणस्स तहा होइ य एसस्स एव गुणणाओ ।
> कालतिएणं भणियं जिण-गणहर-वायगाईहिं ॥ [२९८]
> सीयालं भंगसयं जस्स सुबुद्धीइ होइ उवलद्धं ।
> सो खलु पचक्खाणे कुसलो सेसा सव्वे अकुसला उ ॥ [२९९]

तथा एकु पचक्खाणु करइ, एकु करावइ, बिहुं पदे करी चउभंगी । तत्र जाणतउ जाणता कन्हइ 25 करइ शुद्धु १ । जाणतउ अजाणता कन्हइ गुरु नइ अभावि गुरुबहुमानबुद्धि करी गुरु छइं पितृपितृव्यादिक तींह नइ समीपि करइ तउ शुद्धु २ । अजाणु जाणता समीपि संक्षेपिहिं जाणी करी करइ तउ शुद्धु ३ अजाणु अजाण समीपि करइ सर्वथा अशुद्धु ४ । गृहस्थप्रत्याख्यानभंगविचारु ।

§286) अथ साधु उद्दिसी 'तिविहं तिविहेण' इति सत्तावीस भेद प्रत्याख्यान तणा भणियइं– तत्र "करेमि भंते ! 30 सामाइयं" इणि करी पांच समिति संग्रही "सव्वं सावज्जं जोगं पचक्खामि" इणि करी त्रिन्हि गुप्ति संग्रही । जीवरक्षादिप्रवृत्तिविषइ समिति प्रवर्त्तइं, जीवहिंसादिनिग्रहविषइ गुप्ति प्रवर्त्तइं । तउ पाछइ 'तिविहं तिविहेण' एकु, आठ प्रवचनमातर ९, कालत्रय करी गुणित सत्तावीस साधुप्रत्याख्यानभंगा हवंति । हिंसादि पंचकु साधु करइ नहीं करावइ नहीं अनेरा करता हुंता अनुमनइ नहीं । प्रत्याख्यानभंगद्वारु हूयउं ।

§285) 1 B. drops lines between 1…1. 2 Bh. omits 3 Bh. भणिइ (an alteration over final-उ) । 4 Bh. कारवइ ।

§287) प्रत्याख्यानभंगि गरुयउ दोसु । यथा–

> वयभंगे गुरुदोसो थोवस्स वि पालणा गुणकरी य ।
> गुरुलाघवं च नेयं धम्मम्मि अओ य आगारा ॥ [३००]
> दो चेव नमुक्कारे आगारा छ छ पोरिसीए उ ।
> सत्तेव य पुरिमड्ढे इक्कासणगम्मि अट्ठेव ॥ [३०१]
> सत्तेगट्ठाणस्स उ अट्ठेव य आयंबिलम्मि आगारा ।
> पंचेव अभत्तट्ठे छ प्पाणे चरिम चत्तारि ॥ [३०२]
> पंच चउरो अभिग्गहे निव्वीए अट्ठ नव य आगारा ।
> अप्पावरणे पंच य हवंति सेसेसु चत्तारि ॥ [३०३]

निव्वीए अट्ठ वा नव वा आगारा कहं हवंति ? इत्याह–

> नवणीओगाहिमए अद्दवदहि पिसियघय गुले चेव ।
> नव आगारा एसिं सेसदवाणं तु अट्ठेव ॥ [३०४]

अप्रावरणे चोलपट्टकाकारः । आकारद्वारु हुयउं ।

§288) अथ सूत्रार्थद्वारु भणियइ–

(३०) उग्गए सूरे नवकारसहियं पच्चक्खामि चउव्विहं पि आहारं असणं पाणं खाइमं साइमं अन्नत्थऽणाभोगेणं सहसागारेणं वोसिरामि ।

'उग्गए सूरे' उद्गति–ऊगिइ[1], सूरि–सूर्यि, नवकारसहितु 'पचक्खाइ' इसउं गुरु कहइ । शिष्यु 'पचक्खामि' इसउं कहइ । इसी परि अनेरई[2] पचक्खाणे जाणिवउं । एउ मुहूर्तु कालमानु रात्रिभोजनप्रत्याख्यानतीरणरूपता करी एह रहइं मुहूर्त्त ऊपरि जेतलइ नमस्कारु कही पारउं नहीं तां किसउं ? 'चउव्विहं पि आहारं' चतुर्विधु आहारु अशनु पानु खाद्यु स्वाद्यु । तत्र असनु ओदनु राधा चोखा सातू मूंग राब खंडखाद्यादिपक्वान्नभेद दुग्ध दधि सूरण मंडकादिकु जाणिवउ । तथा च भणितम्–

> असणं ओयण सत्तुग मुग्ग जगाराइ खज्जगविही य ।
> खीराइ सूरणाई मंडगपभिई य विन्नेयं ॥ [३०५]

§289) आछणु जवोदकु तुषोदकु तंदुलोदकु उष्णोदकु शुद्ध विकटु अप्काउ समस्तु पानकु जाणिवउं । तद्यथा–

> पाणं सोवीर-जवोदगाइ चित्तं सुराईयं चेव ।
> आउक्काओ सव्वो कक्कडग जलाईयं च तहा ॥ [३०६]

अत्र 'चित्तं सुराइयं' इति । चित्तु नानाप्रकारु काष्ठपिष्टजातिभेदभिन्नु[1] सुरा मद्यु, आदिशब्दइतउ द्राक्षा-शर्करापानकादिकु अप्काउ सगलू कर्कटी-चिर्भटी तेह नउं जलु तथा कालिंग जलादिकु सगलू जाणिवउं ।

§290) नालिकेर खर्जूर द्राक्षा भ्रष्टधान्यादिकु आम्रफल रंभाफल कर्कटी फणसादिकु फलु पुणि सगलू खादिमु जाणिवउं । तथा च भणितम्–

§288) 1 Bh. उगइ । 2 Bh. अनेरे ई । §289) 1 Bh. -जाति- ।

मणोगो दंसणं मज्जे नालिदेर [illegible] ।
[illegible] [illegible] [illegible] मागं नेयं ॥ [३०७]

[201) [illegible] दोसी विनीक दुलभी मधुर [illegible]
[illegible] । [illegible] –

दंसणे नाणे [illegible] [illegible] ।
[illegible] [illegible] [illegible] मागं नेयं ॥ [३०८]

[202) '[illegible]' [illegible] । [illegible] [illegible] [illegible] अनेरउ [illegible] । [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] पुणि अनेरउ [illegible] । 'वोसिरामि'
[illegible] ।

[203) (११) पोरिसिं पच्चक्खामि उग्गए सूरे चउव्विहं तिविहं पि आहारं असणं पाणं खाइमं साइमं अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पच्छन्नकालेणं, दिसामोहेणं, साहुवयणेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरामि।
[illegible] ।

[204) [illegible] । [illegible] प्रमाणु हुयइ ॥ पोरुसी छाया । दक्षिणायन
[illegible] [illegible] [illegible] छाया वि पग प्रमाण
[illegible] । यतः–
[illegible] ४ पोरुसी ।

आसाढे मासे दुपया पोसे मासे चउप्पया ।
चित्तासोएसु मासेसु तिपया हवइ पोरिसी ॥ [३०९]

[illegible] । [illegible] –

अंगुलं सत्तरत्तेणं पक्खेणं तु दुअंगुलं ।
वड्ढए हायए वावि मासेणं चउरंगुलं ॥ [३१०]

'[illegible]' [illegible] पोरुसी छाया ऊपरि इसउ मध्येपु
[illegible] [illegible] आसाढमासि [illegible] पहर प्रमाण ऊपरि छ छ आंगुल
[illegible] । [illegible] आठ आठ आंगुल वाधइं । मागसिर पोस
[illegible] । [illegible] आठ आठ आंगुल वाधइं । फागुण चैत्र वइसाह [illegible] त्रिहि आठ
[illegible] दस दस आंगुल वाधइं ।
[illegible] आंगुल वाधइं ।

निव्वाघाए आसाढमासे छहिं अंगुलेहिं पडिलेहा ।
अट्ठहिं बीयतियंमी, तइए दस, अट्ठहिं चउत्थे ॥ [३११]

[illegible] पोरिसी पुणि [illegible] ।

ठाणे मज्झण्हाए नवहिं पएहिं तु पोरिसी सड्ढा ।
[illegible] [illegible] [illegible] पया तिन्नि ॥ [३१२]

"[illegible]" । [illegible] पहर प्रमाणु ॥

[201) 1 B. omits. [202) 1 Bh. [illegible] 2 Bh. [illegible] [204) [illegible] 2 Bh. [illegible]

अह पेया १ दुद्धट्टी २ दुद्धवलेही ३ य दुद्धसाडी ४ य।
पंच य विगइगयाइं दुद्धंमि य खीरिसहियाइं ॥ [३१८]
अंबिलजुयंमि दुद्धे दुद्धट्टी दक्खमीस रद्धंमि।
पयसाडी तह तंदुलचुन्नंमि सिद्धंमि अवलेही ॥ [३१९]

5 द्राखी सहितु दूधु दुद्धट्टी। किसउ अर्थु ? फेदुरि दुद्धट्टी कहियइ। द्राख माहि घाती दूधि रांधियइं तउ दुद्धसाडी कहियइ, पयसाडी पुणि कहियइं। तंदुलचूर्णु चोखा नउ लोटु तिणि दूध माहि रांधइं अवलेही दुद्धवलेही। पेया कणिक नी राब दूधि राधी। खीरि प्रसिद्ध। ए पांच दूध विगइ नां[4] विगइगत जु पुणि केई वलही विगइ न गणइं किंतु विगइगतु गणइं तींह नउ अभिप्रायु सम्यग् न जाणियइं। नाममाला माहि श्री[5] हेमसूरिमिश्रइं भणिउं—"उभे क्षीरस्य विकृती किलाटी कूर्चिकाऽपि
10 च" ।[6] अत्र किलाटी, वलही, कूर्चिका–विगडउं दूधु संभावियइ। कूर्चु दुग्धमस्तु दधिकूचा[6] जेह माहि हुयइ स कूर्चिका इसा व्याख्यानकरणइतउ।

§312) दहिए विगइगयाइं घोलवडा १ घोल २ सिहरिणि ३ करंबो ४।
लवणकण दहियमहियं ५ संगरियाइम्मि अप्पडिए ॥ [३२०]

सिहरिणी गुड-मिश्रित दधि-विकाररूपा। दधिओलिउ करंबउ। लवणकणमिश्रु दधिमथितु
15 विलोहितु कहियइ। "मथितं वारिवर्जितम्" इति वचनात्। दहि जु मथिउं लूणसहितु लवणकणदहियमहिउ कहियइ। सु पुणि संगरिकादिकि व्यंजनि अणपडिहिं जि, पडिइ पुणि विशेषि करी हुयइ। ए पांच दधिविगइ नां विगइगत।

§313) पक्कघयं १ घयकिट्टी २ पक्कोसहि उवरतरियं सप्पि च ३।
निब्भंजण ४ वीसंदणमाइ य घयविगइ[1] विगयगया ॥ [३२१]

20 ओषधपाकि करी गतस्वादु घृतु पक्वघृतु। घयकिट्टी घृत नउं कीटउं २। घृतपक्व ओषध ऊपरि तरिकाभूतु स्वादु घृतु पक्कोसहि उवरितरियसप्पि ३। नीमझणु चतुर्थ घाणयोग्यु घृतु दहि नी तरि माहि पचिउं। गोधूमचूर्णु गुडखंडसहितु भक्ष्यविशेषु वीसंदणु। पांच घृतविगइ नां विगइगत।

§314) अद्धकड्डिउ इक्खुरसो[1] १ गुलवाणीयं च २ सक्करा ३ खंडं ४।
पायगुलं ५ गुलविगई विगइगयाइं च पंचेव ॥ [३२२]

25 अर्द्धकड्डिउ इक्खुरसु काकबउ १, गुल नउं पाणीउ गुलवाणी २, साकर ३, खंड प्रसिद्ध ४, सूंठी मरिचादिद्रव्यसहितु तिलमिश्रु पाकउ गुलु पायगुलु ५,। लाठी[2] रेवडी इसां नामहं करी प्रसिद्धु भक्ष्यविशेष्यु पायगुडु कहियइ। ए पांच गुलविगइ नां विगइगत।

§315) तिलमली १, तिलकुट्टी २ दड्ढं तिलं ३ तहोसहुव्वरियं ४।
लक्खाइदव्वपक्कं तिलं ५ तिल्लंमि पंचेव ॥ [३२३]

30 तेल नउ टाढउ तिलमली १, तिलवटि २, तिलपूयणु सेलीप्रभृति तिलकुट्टी २, दाधउं तेलु ३, तथा ओषधपाकइतउ ऊगरिउं तेलु ४, लाक्षादिद्रव्यपचिउं तेलु ५। ए पांच तेलविगइ नां विगइगत।

---

§311) 4 B. omits. 5 Bh. प्रभुश्री। 6 B. omits. §313) 1 Bh. omits विगइ।
§314) 1 B. Bh. omit इ-। 2 Bh. लाठी।

एगं एगस्सुवरिं तिन्नोवरि बीयगं च जं पक्कं ।
तुप्पेणं तेणं चिय तइयं गुलहाणिया पमिई ॥ [३२४]

चउत्थं जलेण सिद्धा लप्पसिया पंचमं च पूयलिया ।
चुप्पडिय ताविया(ए) परिपकाईसु मिलिएसु ॥ [३२५]

घृततैलसहित तापिका ऊपरि एक ऊपरि बीजउ जु घृतपूरादिकु तिणिहिं जि तुप्पि चोपडी पचिउ सु एकु । तिन्नोवरि कडाहइ नवइ घृति अणघातिइ चतुर्थादिवार जु तलिउं सु बीजउं । गुलधानादिकु त्रीजउं । जलसिक्त लापसी लिहगटउं चउथउं । चपलक-मुद्गादि पूयडा घारडां प्रभृति चोपडी ऊभल्ली तावी ऊपरि[1] जु पचियइ ॥ पांचमउं । ए पांच ओगाहिम विगइगत । एवंकारइ सर्वसंख्या करी त्रीस विगइगत ।

§316) अथ अभक्ष्यविगइ कहियइं । मधु त्रिहुं भेदे–मक्षिका नउं १, कुत्ति नउं २, भ्रमरी नउं ३ । मद्य बिहुं भेदे–काष्ठ नउं, पिष्ट नउं । मांसु त्रिहुं भेदे–जल-स्थल-खचर जंतुसंभव भावइतउ । अथवा चर्म्म-रुधिर-मांस भेदइतउ । मांखणु चउं भेदे–पूर्विहिं जि भणिउं । एकादि विकृतिप्रत्याख्यानु विकृतिप्रत्याख्यानु । निर्विकृतिप्रत्याख्यानु विकृतिप्रत्याख्यानिहिं जि संग्रहिउं । अत्र 'गिहत्थसंसट्ठेणं' ति । गृहस्थि आपणइ कारणि दूध माहि ओदनु कूरु संसृष्टु घातिउ । तेह ऊपरि जु चत्तारि आंगुलप्रमाणु दूधु सु गृहस्थसंसृष्टु सु दूधु विगइ न हुयइं । पंचमादि अंगुलप्रमाणु विगइ जि हुयइ । इसी परि अनेराइं गृहस्थसंसृष्ट जाणिवां ।

§317) 'पडुच्चमक्खिएणं'ति । सर्वथा रूक्षु मंडकपोलिकादिकु थोडउं कोमलता-संपादननिमित्तु अथवा रक्षागंध उत्तारणनिमित्तु आंगुली नइ भांति घृतादि ले करी चोपडिउं जु सु प्रतीत्यम्रक्षितु । तत्र जे विम्हइ आंगुली ले म्रक्षितु तउ कल्पइ, धारा करी म्रक्षितु पुणि न कल्पइं ।

§318) अत्र सार्द्ध पौरुषी अपार्द्ध पौरुषी व्यासनकादिक प्रत्याख्यान आकारसंख्या करी सूत्र माहि अणभणियां ई आम्नायवसइतउ आविया । अनइ जुत्तिजुत्त तिणि कारणि पौरुषी पूर्वार्द्ध एकासनक जिम जाणियां । सूत्रार्थद्वार चतुर्थ पंचम संपूर्ण हुआं ।

§319) अथ शुद्धि कहियइ । शुद्धि छए भेदे । यथा–

सा पुण सद्दहणा १ जाणणा २ य विणय ३ अणुभासणा ४ चेव ।
अणुपालणा ५ विसोही भावविसोही भवे ६ छट्ठा ॥ [३२६]

पच्चक्खाणं ॥ सव्वन्नुदेसियं जं जहिं जया काले ।
तं जो सद्दहइ नरो तं जाणसु सद्दहणसुद्धं ॥ [३२७]

पच्चक्खाणं जाणइ कप्पे जं जंमि होइ कायव्वं ।
मूलगुण उत्तरगुणे तं जाणसु जाणणासुद्धं ॥ [३२८]

किइकम्मस्स विसुद्धिं पउंजई जो अहीणमइरित्तं ।
मणवयणकायगुत्तो तं जाणसु विणयओ सुद्धं ॥ [३२९]

अणुभासइ गुरुवयणं अक्खर-पय-वंजणेहिं परिसुद्धं ।
पंजलिउडो अभिमुहो तं जाणसु भासणासुद्धं ॥ [३३०]

315) 1 B. ऊपरी ।

कंतारे दुब्भिक्खे आयंके वा महा समुप्पन्ने।
जं पालियं न भग्गं तं जाणसु पालणासुद्धं॥ [३३१]

रागेण व दोसेण व परिणामेण व न दूसियं जं तु।
तं खलु पच्चक्खाणं भावविसुद्धं मुणेयव्वं॥ [३३२]

5 अथवा—

फासियं १ पालियं २ चेव सोहियं ३ तीरियं ४ तहा।
किट्टिय ५ माराहियं ६ चेव एरिसयम्मि य पजइयव्वं॥ [३३३]

उचिए काले विहिणा पत्तं जं फासियं तं भणियं।
तह पालियं च असइं सम्मं उवओगपडियरियं॥ [३३४]

10 गुरुदत्तसेसभोयणसेवणाए य सोहियं जाण।
पुन्ने वि थेवकालावत्थाणा तीरियं होइ॥ [३३५]

भोयणकाले अमुगं पच्चक्खायं ति सरइ किट्टियं।
आराहियं पयारेहिं सम्ममेएहिं पडियरियं॥ [३३६]

सुविहाय छट्ठं हुयइं।

15 §320) अथ फलु कहियइ। सु पुणि सामान्य-विशेषरूपतां करी बिहुं भेदे। तत्र सामान्यफलु इहलोकि धम्मिल्ल प्रहइं। परलोकि दामन्नगादिकहं प्रहइं। यथा—

पच्चक्खाणस्स फलं इह परलोए य होइ दुविहं तु।
इह लोइ धम्मिल्लाई दामन्नगमाइ परलोए॥ [३३७]

तत्र धम्मिल्ल कथानकु अतिविस्तारता करी इहां न लिखिउं, वसुदेवहिंडिसिद्धांत हूंतउ जाणिवउं। दामन्नककथानकु पुणि सविस्तर संस्कृतवृत्ति हूंतउ जाणिवउं। विशेष फलु यथा—

पच्चक्खाणंमि कए आसवदाराइं हुंति पिहियाइं।
आसववुच्छेएण य तण्हावुच्छेयणं होइ॥ [३३८]

तण्हावुच्छेएणं अउलोवसमो भवे मणुस्साणं।
अउलोवसमेण पुणो पच्चक्खाणं हवइ सुद्धं॥ [३३९]

20 तत्तो चरित्तधम्मो कम्मविवेगो अपुव्वकरणं तु।
तत्तो केवलनाणं तओ मुक्खो सयासुक्खो॥ [३४०]

तथा उत्तराध्ययनसिद्धांत एकोनत्रिंशाध्ययन माहि कहिउं—"पच्चक्खाणेणं भंते! जीवे किं जणेइ? गोयमा! पच्चक्खाणेणं आसवदाराइं निरुंभेइ" इत्यादि। समाप्तं फलद्वारं समाप्तं। पंचमकथितद्वारं संपूर्णं।

§321) अथ प्रतिक्रमणविधि लिखियइ।

25 पडिक्कमणं देवसियं राइयमित्तरियमावकहियं च।
पक्खिय चाउम्मासिय संवच्छर उत्तमट्ठे य॥ [३४१]

काले पुण पंचविहे दिवस-निसा-पक्ख-वास-चउमासे।
आवस्सियनिच्चमाई पडिक्कमणं देसियं भणियं॥ [३४२]

सूर्योदयपहरे आ गइयमावस्सयं च चुणीए ।
ववहारेणं गंथेण पुरिमड्ढं जाव भणियं च ॥ [३४३]

पडिक्कमणउं त्रिहुं भेदे । एकु दइवसिकु पाक्षिकु । सु पुनि देवसिउ अनइ राइउ पडिक्कमणउं पाउ-
ज्जालिय सोच्छालिय कहियइ । अथवा प्रच्छादुं अनागतु । तेह मनइ कारणि जु पडिक्कमणउं कीजइ सु
अनागतुं पडिक्कमणउं पुनि दइवसिकु कहियइ । अनागतिकालाइसु पडिक्कमणउं पाक्षिकु कहियइ ।
तिहि पडिक्कमणह मध्य अतीतकाल माहि जि के अतीचार कीधा हुयइ तीहं तणा पडिक्कमणकरणइतउ ।
न सामन्नहि–

मज्झेण मागएण य अकम्म शायम्मयं हवइ जम्हा ।
जेणो अहो निगिम्मा तम्हा आरम्भयं नाम ॥ [३४४]

अनागतकालतणइ आवश्यकु पडिक्कमणउं कहियइ । यथा च भणितं–

सपडिक्कमणो धम्मो पुरिमस्स य पच्छिमस्स य जिणस्स ।
मज्झिमगाण जिणाणं कारणजाए य पडिक्कमणं ॥ [३४५]

पय देवसिउ–भद्र दिवसु तेह नइ अति, किसउ अर्थु ? जिणइ पडिक्कमणसूत्रगुणनकालि सूर्य
मनां अर्धबिंबु हुयइ तिणइ मनइ कीजइ । राइउ पुनि–

छउमत्थि चोल्लपट्टय कप्पतिगं दुन्नि निसिज्ज रयहरणं ।
संथारुत्तरपट्टो दस पेहा उग्गए सूरे ॥ [३४६]

इणा भणनहार जिणइ मुहपत्ती १, रयहरणु २, चोल्लपट्टु ३, संथारउ ४, उत्तरपट्टु ५, त्रिन्हि
कल्पति कप्पोलडी ८, एकु ओघउ ८ दुन्नि निसिज्ज एक ऊर्णामय एक सूत्रमय नी निसेज ९ एकु प्रमाण
चोल्लपट्टु १०[1] एवं दस वस्तु उग्गमन पडिलेहण कीधी हुउं ऊगइ इणइ मनइ राइउ पडिक्कमणउं
कीजइ । व्यवहारपरि जेतीवार काउस्सग्गना करी न सकियइं तेतीवार 'आरपणि पडिक्कमइ' इसा
भणनहार रात्रि रहिया पहरतीस देवसिउ पडिक्कमणउं कीजइ । इसउं भणिउं सूर्योदय आरंभी करी
रहिया पहर दिवस लगि राइउ पडिक्कमणउं पूर्णिमकथन मनइ अनुसारि करी कीजइ । व्यवहारसिद्धांत
मनइ अनुसारि पुरिमड्ढ जाव भणियं च । पूर्वाह्न लगि त्रिहुं पहरहं लगि राइउ पडिक्कमणउं कीजइ । इसी
परि गुरुआदेशवार आणी करी देवसई ति पडिक्कमणउं करेवउं न पुनि जेतीवार परिवारिउं तेतीही
वार पडिक्कमणउं करेवउं ।

§322) अथ सामाइक पाखइ पडिक्कमणउं कीजइ नहीं, इणि कारणि पहिलउं सामाइककरण
विधि लिखियइ । पाछिलइ पहरि दिवस मनइ बसति मुहुंती पाटला पडिलेहण कीधी हुंती मुहुंती
सहित ले करी धर्माचार्य आगइ, अथवा[1] स्थापनाचार्य आगइ आवी पादभूमि मुहुंती सउं त्रिन्हिवार
डिलासनपूर्व पडिलेही करी मुहुंती मुहपत्ति दे करी हाथ जोडी करी त्रिन्हिवार पडिलेहिय भूमि पाटलउ
प्रमार्जी मुंडी करी, इच्छाकारेणि भणी एकु खमासमणु दे 'सामाइक मुहपत्तियं पडिलेहेमि' इसउं कही
खमासमणु दे करी' ऊभा होई 'इच्छामि खमासमणो' भणी खमासमणु दे करी ऊभइं थिकउ वेदिका
दे बाहु करी मुहुंती पडिलेही एक खमासमणि 'सामाइयं संदिसावेमि' इसउं भणी बीय खमासमणि
'सामाइयं ठाएमि' इसउं भणी तइउ खमासमणु दे अर्धावनतगात्रु हुंतउ त्रिन्हि नमस्कार कही त्रिन्हिवार

§321) 1 B. omits between ९–१०. 3 Bh. ऊगइ ।
§322) 1 Bh. omits. 2 Bh. omits खमासमणु

(३९) करेमि भंते सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि। जाव नियमं पज्जु-वासेमि। दुविहं तिविहेणं मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि तस्स भंते! पडिक्कमामि, निंदामि गरिहामि, अप्पाणं वोसिरामि।

इसउं सामाइकसूत्रु त्रिन्हि वार कहइ गुरुवचन तणी अनुभाषणा करतउ हूंतउ सामाइकाऽऽरोपविधि 5 प्रस्तावि नंदि सिद्धांत माहि त्रिन्हि नमस्कारभणनपूर्वकु सामाइकदंडक रहइं भणनभणनइतउ पाछइ इरियावही पडिकमियइ। आवश्यकचूर्णिवृत्ति माहि इम भणिउं छइ। यथा 'करेमि भंते सामाइयं *सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जाव नियमं दुविहं तिविहेणं मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि तस्स* भंते! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि'। जाव साहू वा पज्जुवासेमि त्ति काऊण पच्छा इरियावहियं पडिक्कमइ। तउ पाछइ विस्तरइतउ द्वादशावर्त्तु वंदनकु दे करी प्रत्याख्यानु कीजइ। संक्षेपिहिं 10 तउ क्षमाश्रमणवंदनापूर्वकु प्रत्याख्यानु कीजइ। तउ पाछइ एक खमासमणि 'सज्झायं संदिसावेमि' कही बीय खमासमणि 'सज्झायं करेमि' कही तइय खमासमणदानपूर्वक आठ नमस्कार कही पाछइ एक खमासमणि 'कटासणं संदिसावेमि' कही बीय खमासमणि 'कटासणं पडिगाहेमि' कही तइय खमासमणि 'पांगुरणउं संदिसावेमि' कही चउत्थ खमासमणि 'पांगुरणउं पडिगाहेमि' कही करी बइसइ। एतलइ संध्यासामाइककरणविधि हूयउ।

15 §323) संथारइ पुणि इरियावही पडिकमी पाछइ पहिलउं 'कटासणं संदिसावेमि' कहियइ। 'कटासणउं पडिगाहेमि' कहियइ। पाछइ 'सज्झायं संदिसावेमि' कहियइ। 'सज्झायं पडिगाहेमि' कहियइ। आठ नमस्कार कही पाछइ 'पांगुरणं संदिसावेमि' कहियइ। 'पांगुरणं पडिगाहेमि' कहियइ। पाछइ शक्रस्तवु कहियइ। नींद्र माहि भोजनकरण स्त्रीसमालिंगनादिक हूयां, हुयइं, जि कुस्वप्न; तथा अरिनगरभंगकरण मारणादिक जि हूयां, हुयइं, दुस्वप्न तीहं रहइं विशुद्धिनिमित्तु काउस्सग्गु कीजइ। लोगस्सुज्जोयगरे चत्तारि 20 काउसग्गि चींतवियइं। पारियइ हूंतइ 'लोगस्सुज्जोयगरे' भणियइ; इसउं न भणिवूं। पडिक्कमणउं प्रायश्चित्त-विसुद्धिकारणिहिं कीजिसिइ पाछइ वली काउस्सग्गु किसइ कारणि कीजइ? जिम दिवस पडिक्कमणइ कीधेइं[1] छेहि प्रायश्चित्तविसुद्धिनिमित्तु काउस्सग्गु विसुद्धिविशेषकारणि कीजइ, तिम प्रभातिहिं दोषु को नहीं।

§324) अथ सामाइकफलसंसूचकु सिद्धांतालापकु लिखियइं।

'सामाइएणं भंते! किं जणइ?'

25 **'गोयमा! सामाइएणं सावज्जजोगविरइं जणइ।'**

§325) अथ[1] प्रस्तावइतउ पोसहविधि लिखियइ। पोषधं पर्वानुष्ठानमेवेति पूर्वश्रुतधरवचनानु-सारि करी अष्टमी चतुर्दशी पूर्णिमाऽमावास्यापर्युषणादि पर्वदिवसही जि पोसहु सामाइकसहितु करेवउं। तथा च सूयगडांगवृत्ति माहि कहिउं–

चाउद्दसट्ठमुद्दिट्ठ पुन्निमासिणीसु पडिपुन्नं।
30 पोसहं सम्मं अणुपालेमाणो विहरिस्सामि॥ [३४७]

त्ति सूत्रं। तेह नी वृत्ति पुणि–चतुर्दश्यष्टम्यादिषु तिथिषु, उद्दिष्टासु महाकल्याणिकसंबंधि[तया पुण्य]-विख्यातासु, तथा पूर्णमासीषु चतसृष्वपि, चतुर्मासक पर्युषणातिथिष्वित्यर्थः। तथा आवश्यकवृत्ति म[ाहि] पुणि कहिउं–इह पोषधशब्दो रूढ्या पर्वसु वर्त्तते। पर्वाणि चाष्टम्यादितिथयः। तथा प्रतिदिवसानु[ष्ठेये] सामाइय-देशावकाशिक। पौषधोपवासाऽतिथिसंविभागौ तु न प्रतिनियतदिवसानुष्ठेयौ–न प्रतिदिव[स...]

§323 1 B. कीधेइं। §325) 1 Bb. omits.

बहुवेलं संदिसावेमि' भणी बीय खमासमणि 'भगवन् ! बहुवेलं करेमि' इसउं भणइ, तइय खमासमणि 'इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! सज्झायं संदिसावेमि' भणी चउत्थ खमासमणि 'इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! 'सज्झायं करेमि' इसउं भणी पंचम खमासमणि 'इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! वइसणउं संदिसावेमि' भणी छट्ठ खमासमणि 'इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! वइसणउं ठाएमि' इसउं भणइ। तउ 5 पाछइ उपधानतप तणउं द्वादशावर्त्त वांदणउं दे करी वइसी करी मुहुंती मुखि दे करी मधुरस्वरि स्वाध्यायु करइ, मनु अर्थि धरइ। पउण पहर पडिलेहणाइ अणुठाणु सगलूं साधु जिम करइं जां पोसहु तां सीम। इति संक्षेपिहिं पोसहविधि लिखिउ। विस्तरइतउ श्रीजिनवल्लभसूरि विरचित पोसहविहिप्रकरणइतउ पोसहरीति जाणिवी। भणियं पसंगागयं।

§326) अह अहिगयमेव लिहिज्जइ–

10 जिण मुणिवंदण अइयारुस्सग्गो पुत्ति वंदणा लोए।
सुत्तं वंदण खामण वंदण तिन्नि य उस्सग्गा ॥ [३४८]
चरणे दंसणनाणे उज्जोया दुन्नि इक्कइक्को य।
सुय देवया दुसग्गा पुत्ती वंदण ति थुइथुत्तं ॥ [३४९]

सामाइक करणानंतरु[1] 'जय तिहुयण' नमस्कार कही पाछइ–

15 जय महायस जय महाभाग जय चिंतियसुहफलय।
जय समत्थपरमत्थजाणय जय जय गुरु गरिमगुरु ॥ [३५०]
जय दुहत्थसत्ताण ताणय थंभणयट्ठिय पासजिण।
भवियहं भीमभवुत्थुभउ अवणितहऽणंतगुण।
तुज्झ तिसंझु नमुत्थु ॥ [३५१]

20 जयजयवंतु था हे महायश-महांतु त्रिभुवनव्यापकु यसु पराक्रमसंभूतगुणोत्कीर्त्तनारूपु पौरुषु जेह रहइं हुयइ सु महायशा, तेह रहइं संबोधनु हे महायस। पुनरपि संबोधनु हे महाभाग-महांतु त्रिजगज्जंतुप्रधानु भागु पुण्यु जेह रहइं हुयइ सु महाभागु, तेह संबोधनु हे महाभाग, जयजयवंतु था। पुनरपि संबोधनु चिंतियसुहफलयमनोवांछित फलदायक जयजयवंतु था। पुनरपि संबोधनु समत्थपरमत्थजाणय सर्वपरमार्थज्ञापक सर्वविश्वजीवाजीवादितत्त्वबोधक जयजयवंतु था। पुनरपि संबोधनु जय जयगुरु जगद्गुरो, हे जगत्तत्त्वो- 25 पदेशक जगज्जनक या गरिमगुरु महिममहांत जयजयवंतु था। पुनरपि संबोधनु दुहत्थसत्ताण ताणय-दुहत्थ कष्टि वर्त्तमान छइं सत्त्वा प्राणिया जीव तीहं रहइं हे ताणय त्राणद शरणदायक जयजयवंतु था। सु कउणु जेह सगां पूर्वभणित जयमहायसादिक संबोधन इत्याह। हे थंभणयट्ठियपासजिण स्तंभनकस्थित पार्श्वजिन त्रयोविंशतितम तीर्थनाथ। तउं पुणि किसउ छइ भीमु रौद्रु सांभलीतू हूंतउ महोत्रासभावकारकु छइ भवु संसारु तेह हूंतउं ऊठिउ सु भीमभवुत्थु कहियइ सु कउणु भउ त्रासु तेह रहइं तउं अपनेतां 30 फेडणहारु भउ 'अवणिताऽणंतगुणइ' इति पाठे एउ अर्थु। अवणितह इति पाठे अपनेतुः स्फेटकस्य तुज्झ तव इसउ संबंधु करिवउ। कउणहं रहइं भवियहं भविकहं रहइं। पुनरपि संबोधनु हे अणंतगुण-अनंतज्ञानदर्शनसम्यक्त्ववीर्यानंदरूप गुण जेह रहइं छइं [illegible] अनंतगुणु तेह रहइं संबोधनु हे अनंतगुण। तुझ द रहइं तिसंझु तिहुं-संध्या प्रभाति मध्याह्नि संध्या समइ नमुत्थु नमोऽस्तु नमस्कारु हुउ[2]। इसउ अर्थु मन माहि चीतवतां जयमहायस पढी पाछइ शक्रस्तवु कही संपूर्ण देववंदना कीजइ। तउ पाछइ जि के मुनि 35 पडिकमावता हुयइं ति सव्वे वांदियइं। अनुक्रमि श्रावक पुणि वांदियइं। तउ पाछइ एक खमासमणि

§326) 1 B. drops–क–। Bh. सामाइकरणा–। 2 Bh. हुयउ।

आचार्यमिश्र वांदियइं। बीय खमासमणि उपाध्यायमिश्र वांदियइं। तइय[3] खमासमणि भगवंत वर्त्तमानगुरु वांदियइं। चउत्थ खमासमणि सर्वसाधु वांदियइं। इसी परि चतुरादि खमासमण दे करी गोडिहिलियां होई माथउं भुइं लगाडी मुहुंती मुहि दीधी हूंती हाथे जोडिए 'सव्वस्स वि देवसिय' इत्यादि कहियइ। छेहि 'इच्छाकारेण संदिसह' इसउं पदु न कहियइं। तस्स मिच्छामि दुक्कडं कही करी ऊभां थाई 'करेमि भंते' इत्यादि आलोयणउं 'तस्सुत्तरी' इत्यादि कही काउस्सग्गु कीजइ। काउस्सग्ग माहि आजूणां चउं पहर 5 दिवस माहि जि के जीव विराधिया। एकेंद्रिय बेइंद्रिय त्रेइंद्रिय चउरिंद्रिय पंचेंद्रिय पृथिवीकाय अप्काय तेउकाय वाउकाय वनस्पतिकाय त्रसकाय। ज्ञानदर्शनचारित्र प्रति आशातना कीधी। क्रोधु मानु माया लोभु रागु द्वेषु मदु मत्सरु अहंकारु कीधउ। प्राणातिपातविरति मृषावादविरति अदत्तादानविरति मैथुनविरति परिग्रहपरिमाण रात्रिभोजनविरतिव्रत अतीचारु अणाविउ हुयइ। पनरह कर्म्मादान आसेवना कीधी हुयइ। अप्पथुई परनिंदा करी जु कांई कर्म्मु बाधउं, अनेरुं जु कांई पापु कीधउं कराविउं अनुमनिउं सांभरइ न सांभरइ 10 तेऊ सगलउं आलोयणा माहि आलोइसु इत्यादिकु दिवसकृतु रात्रिकृतु वा अतीचारु चीतवियइ। नमुक्कारि करी काउस्सग्गु पारी करी 'लोगस्सुज्जोयगरे' कही संडासा पडिलेही बइसी ऊभडु[4] थिकां मुहुंती पडिलेही सरीरु पडिलेही वि वानणां दीजइं। आलोयणउं करी 'सव्वस्स वि देवसिय' इत्यादि 'ठाणे कमणे चंकमणे आउत्ते अणाउत्ते हरियकायसंघट्टे बीयकायसंघट्टे थावरकायसंघट्टे छप्पइयासंघट्टे ठाणाओ ठाणं संकामिया' इति वा बोलइ पडिकमणइ कही करी पाछइ 'सव्वस्स वि' इत्यादि कही, गुरुसउं पडिकमतां हूंता गुरि 'पडिक्कमह' 15 इसइ कथनि कहिइ हूंतइ स्थापनाचार्य आगइ पडिकमतां गुरु 'पडिक्कमह' इसउं कथनु कहइ छइ। इसउं मन माहि चिंतवी इच्छं 'तस्स मिच्छामि दुक्कडं' भणी संडासा पडिलेही पाउंछणउं पाटलउ भुइं पडिलेही बइसी करी मुहवारि मुहुंती दे करी हाथे जोडिए सावधानु चित्तु करी पडिकमणा सूत्र तणउ अर्थु मन माहि चिंतवतां मधुरस्वरि सूत्रु गुणियइ। पाछइ भुइं पडिलेही ऊभां होई हाथ जोडी 'अब्भुट्ठिओमि आराहणाए' इत्यादि पढी वि वानणां दे खामणउं कीजइ। पाछइ अछिया- 20 वण निमित्तु किसउ अर्थु आपणपउं गुरु परतंत्रु करिवा निमित्तु वि वानणां दे करी 'सड्ढो गाहा तिगं पढइ' इसा प्रतिक्रमणसामाचारी वचनइतउ। श्रावकश्राविका

आयरिय उवज्झाए सीसे साहम्मिए कुलगणे य।
जे मे केइ कसाया सव्वे तिविहेण खामेमि ॥ [३५२]
सव्वस्स समणसंघस्स भगवओ अंजलिं करिय सीसे। 25
सव्व खमावइत्ता खमामि सव्वस्स अहयं[5] पि ॥ [३५३]
सव्वस्स जीवरासिस्स भावओ धम्मनिहियनियचित्तो।
सव्वं खमावइत्ता खमामि सव्वस्सं अहयं[6] पि[6] ॥ [३५४]

ए त्रिन्हि गाह पढइं। प्रस्तावइतउ ईहं नउ अर्थु पुणि लिखियइ। ज्ञानाचार दर्शनाचार चारित्राचार तपआचार वीर्याचाररूप पांच आचार जि पालइं ति आचार्य। द्वादशांगपाठक उपाध्याय। 30 जिणि जि धर्म्मु सीखविया[7] ति तेह तणा शिष्य। सम्यक्त्वमूलद्वादशव्रत प्रतिपालक समधर्म्म सार्धर्म्मिक एक गणधर तणउ शिष्यसमुदाउ परस्पर सापेक्षु सांभोगिकु कुलु। त्रिहुं गणधर तणउ शिष्यसमुदाउ परस्पर-सापेक्षु सांभोगिकु गणु। तउ पाछइ आचार्यविषइ उपाध्यायविषइ शिष्यविषइ सार्धर्म्मिकविषइ कुलविषइ

§326) 3 Bh. has instead तउ पाछइ एक। 4 B. Bh. ऊगडु। cf. 322.3 5 Bh. अहियं। 6 Bh. omits this verse. 7 B. सिखविया।

गणविषइ जि के मूं रहइं कसाय क्रोध मान माया लोभ रूप दिवस माहि अथवा राति माहि एकत्र-वाससंबंधादिकहं कारणहं करी हूया ति कसाय सव्वे सगलाई तिविहेण मनि वचनि काइ करी खामेमि खमावउं। किसउ अर्थु? जीहं सउं मूं रहइं कसाय हूया तीहं रहइं जउ मूं सउं कसाय हूया हुयइं तउ हउं तींहं रहइं खमावउं आपणपा ऊपरि कसाय तींहं तणा उपसमावउं[1] हउं। पुणि तींहं विषइया कसाय आपणपा मन माहि हूंता उपसमावउं इसउ अर्थु खामेमि तणउ परमार्थवृत्ति करी जाणिवउ। विशेषइतउ सर्वही सउं खामणउं करी न सकियइं। विशेषहं रहइं अनंतत्वइतउ। इणि कारणि सर्वसंग्रहनिमित्तु सामान्यहिं खामणउं करइ।

§327) सव्वस्स समणसंघस्सेति। सगलांइं पनरह कर्म्मभूमिगत भगवंत श्रमणसंघ रहइं जु कांई मइं अवहेलादि भावि करी अपराधस्थानु कीधउं सु सगलुं 'अंजलि करिय'[1] सीसे माथइ हाथ चढावी अंजलि करी 'खमावइत्ता' खमावी करी हउं पुणि खमउं।

§328) तथा सव्वस्स जीवरासिस्सेति। जि पूर्विहिं इरियावही प्रस्तावि भणिया ति सगलाई जीव तींहं तणउ राशि समूहु। तेह रहइं भावइतउ आपणा श्रद्धानइतउ धम्मनिहियचित्तो इति दयामूल-धर्म्मविषइ निक्षिप्त निजमनु हूंतउ सगलुं अपराधस्थानु खमावी करी हउं पुणि खमउं। ति जीव मूं ऊपरि[1] खमउं कसाय म करउं। हउं पुणि तींहं ऊपरि खमउं कसाय म करउं हउं पुणि तींहं ऊपरि खमउं कसाय नही करउं इसउ अर्थु।

§329) इसउं गाथार्थु मनि चीतवतो गाथा पढी करी करेमि भंते आलोयणउं तस्सुत्तरीत्यादि भणि चारित्रातिचार दर्शनातिचार ज्ञानातिचार विशुद्धिनिमित्तु काउस्सग्ग त्रिन्हि कीजइं। पहिलइ काउस्सग्गि वि लोगस्सुज्जोयगरे, बीजइ एक, त्रीजइ एक लोगस्सुज्जोयगरे चीतवियइं। पहिलइ काउस्सग्गि पारियइ लोगस्सुज्जोयगरे, बीजइ पुक्खरवरदीवड्ढे, त्रीजइ सिद्धाणं बुद्धाणं कहियइ। छेहि सुयदेवयाए आराधनार्थं करेमि काउस्सग्गं इत्यादि भणी काउस्सग्गु कीजइ। नमस्कारु चीतवियइ[1]। श्रुतदेवता स्तुति कही पारियइ। पाछइ क्षेत्रदेवतानिमित्तं करेमि काउस्सग्गं इत्यादि भणी काउस्सग्गु कीजइ। नमस्कारु चीतवियइ। क्षेत्रदेवतास्तुति कही पारियइ। पंचपरमेष्ठि नमस्कारु एकु कही बइसी मुहुंती पडिलेही मंगलादिकारनि वि वानगां दीजइं। 'इच्छामो अणुसट्ठिं' इसउं कहियइ। एह नव किसउ अर्थु? अनुषष्टि शिक्षा इच्छामो किसउ अर्थु वांछउं। गोडिहिलियां होइ नमोऽर्हत् सिद्धेत्यादि कही एक थुई 'जउ गुरे' कही हुइं[2]। पाखीदिनि जु[3] त्रिन्हि थुई कही हुइं तउ पाछइ संसारदावेत्यादि[4] स्तुति त्रिन्हि। नमोऽस्तु वर्द्धमानायेत्यादि त्रिन्हि स्तुति[5] वर्द्धमानच्छंदोविरचित स्वरस्वरि उच्चैः स्वरि करी कहियइं। पाछइ एकु खमासमणु दे करी कहइ। इच्छाकारेण संदिसह भगवन् स्तोत्रु भणउं। बीजा खमासमणु दे करी भणइं इच्छाकारेण संदिसह भगवन् स्तोत्रु सांभलह, गुरि 'भणउ' 'सांभलउ' इसइ भणिइ हूंतइ पाछइ एकु श्रावकु भारगारु मधुरस्वरि सद्भूतगुणगर्भितु वीतराग स्तवनु महांतु कहइ। बीजा गोडिहिलियां थिका हाथ जोडीए सावधान थिका सांभलइं। स्तोत्रानंतरु एकु खमासमणु दे आचार्यमिश्र वांदियइं। बीजउं खमासमणु दे करी उपाध्यायमिश्र वांदियइं। तइउ खमासमणु दे करी सर्वसाधु वांदियइं एतलइ देवसिउ पडिक्कमणु संपूर्णुं हूयउं।

---

§326) 8 Bh. खमावउं। §327) 1 B. अंजलि करी। §328) 1 B. उपरि। §329) 1 Bh. चीतवीइ। 2 Bh. थुई। 3 Bh. जउ। 4 B. adds वा। 5 B. स्तुति त्रिन्हि।

§ 330) आरंभि देव वांदतां आंतरणी न हुयइं । "सव्वस वि" कथनांतरु जां 'इच्छामो अणुसट्ठिं' न कहियइं तां आंतरणी हुइं[1] । पाछइ न हुइं[2] । कुणइ "पच्छित्तउस्सग्गं" इति श्री जिनवल्लभसूरि विरचित प्रतिक्रमणसमाचारी प्रकरणवचनात् । खमासमणदाणपूर्वकु 'इच्छाकारेण संदिसह भगवन् । देवसिय पायच्छित्तविसुद्धिनिमित्तं करेमि काउस्सग्गं' इसउं भणियइ । गुरि 'करउ' इसइ भणियइ हूंतइ 'इच्छं अन्नत्थूससिएणं' इत्यादि भणी काउस्सग्गु कीजइ । लोगस्सुज्जोयगरे चत्तारि चीतवियइं । पारियइ 5 हूंतइ लोगस्सुज्जोयगरे भणियइ ।

§ 331) अत्र सिद्धांतालापको यथा--

फाउस्सग्गेणं भंते ! जीवे किं जणइ ?

गोयमा ! काउस्सग्गेणं तीयपडिप्पुन्न पायच्छित्ते विसोहेइ, विसुद्धपायच्छित्ते जीवे निव्वुयहियए ओहरियभरुव्व भारवहे पसत्थझाणोवगए सुहं सुहेणं विहरइ । 10

इति उत्तराध्ययनसिद्धांत तृतीयाध्ययनभणनइतउ पुणि काउस्सग्गु कीजइ ।

§ 332) तथा गीतार्थाचीर्णता करी क्षुद्रोपद्रव ओहडावणत्थु काउस्सग्गु पुणि कीजइ । एक खमासमणि 'इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! क्षुद्रोपद्रव ओहडावणत्थं करेमि काउस्सग्गं' इसउं भणी, गुरि 'करउ' इसइ कहिइं हूंतइ 'इच्छं अन्नत्थूससिएणं' इत्यादि भणी काउस्सग्गु कीजइ । लोगस्सुज्जोयगरे चत्तारि चीतवियइं । पारियइ हूंतइ लोगस्सुज्जोयगरे भणियइ पाछइ गोडिहिलियां होइ त्रिन्हि पंचपरमेष्ठि 15 नमस्कार कही श्रीस्तंभनक श्रीपार्श्वनाथ देव नमस्कार कही शक्रस्तवु भणी जावंति चेइयाइं इत्यादि कही खमासमणु दे,[1] जावंति केइ[2] साहू इत्यादि कही नमोऽर्हत्सिद्धेत्यादि कथनपूर्वकु श्रीपार्श्वनाथ लघुस्तवु भणी जयवीयरायेत्यादि कहियइ । पाछइ माथउं भुइं लगाडी मुहि मुहुंती दे करी--

सिरिथंभणयट्ठिय पाससामिणो सेसतित्थसामीणं ।
तित्थसमुन्नइ कारण सुरासुराणं च सव्वेसिं ॥ [३५५] 20
एसिमहं सरणत्थं काउस्सग्गं करेमि सत्तीए ।
भत्तीए गुणसुट्ठिय संघस्स समुन्नइ निमित्तं ॥ [३५६]

एउ गाथाजुगलु कहियइ ।

§ 333) ईहं गाथा नउ अर्थु यथा--श्रीस्तंभनक श्रीपार्श्वस्वामी[1] रहइं स्मरणा आराधना तेह निमित्तु । 'तथा' 'सेसतित्थसामीणं' ति । 'शेष' थाकतां जि केई श्रीअष्टापद श्रीसंमेतशिखरि श्रीशत्रुंजय श्रीउज्जयंतगिरि 25 प्रमुख महातीर्थ ति सेसतित्थ कहियइं । तींहं तणां स्वामी तीर्थंकर श्रीऋषभनाथादिक श्रीवर्द्धमानावसान चतुर्विंशति जिनवरेंद्र, तथा श्रीऋषभ श्रीमहावीर श्रीवासुपूज्य श्रीनेमिनाथवर्जित श्रीअजितस्वामी मुख्य श्रीपार्श्वनाथावसान विंशति जिननायक, श्रीआदिनाथ श्रीनेमिनाथ प्रमुख तीर्थनाथ तींहं सवहीं स्मरणार्थु आराधनार्थु, तथा श्रीमहावीर देवाधिदेव तणउ संघु तीर्थु कहियइ । तेह रहइं समुन्नति अभ्युदउ तेह रहइं कारण निमित्त जि सुरसौधर्मेंद्रादिक असुरधरणेंद्रादिक तीहं सगलाईं स्मरणार्थु स्मृतिगोचरि आणिवा 30 निमित्तु तथा गुण ज्ञान-दर्शन-चारित्रादिक तींहं करी सुस्थितु समाधानि वर्त्तमानु जु संघु तेह रहइं समुन्नतिनिमित्तु अभ्युदय तणइ कारणि । करेमि काउस्सग्गं सत्तीए भत्तीए-शक्ति तणइ अनुसारि भक्ति करी[2] न पुणि बलात्कारि, काउस्सग्गु करउं । इति गाथाजुगलार्थः ।

---

§330) 1 Bh. हुयइं । 2 Bh. हुयइं । §332) 1 Bh. कहियइ 2 Bh. देइं । 3 Bh. केवि ।
§333) 1 Bh.-सामि । 2 Bh. has, instead, तणइ अनुसारि ।.

§334) 'वंदणवत्तियाए पूयणवत्तियाए' इत्यादि भणी करी काउस्सग्गु कीजइ। लोगस्सुज्जोयगरे चत्तारि चीतवियइं। पारियइ हूंतइ लोगस्सुज्जोयगरे भणियइ। इति श्रीअभयदेवसूरि प्रकाशित श्रीस्तंभनकपार्श्वनाथ नमस्कार शक्रस्तव कायोत्सर्गकरण समाचारी श्रीअभयदेवसूरिगच्छाप्राययसइतउ प्रवर्त्तइ। जय तिहुयण नमस्कार भणनपूर्व प्रतिक्रमण प्रारंभण समाचारी च। तथा उत्तरापथि श्रीजिनदत्तसूरि समाराधननिमित्तु काउस्सग्गु पुणि खरतरगच्छ[1] समाचारीतउ कीजइ। इति दिवसप्रतिक्रमण-समाचारी संपूर्णा।

§335) अथ रात्रिप्रतिक्रमणविधि लिखियइ--

एवं ता देसियं राइयमवि एवमेव नवरि तहिं।
पढमं दाउं मिच्छामि दुक्कडं पढइ सक्कथयं॥ [३५७]

उट्ठिय करेइ विहिणा उस्सग्गं चिंतए य उज्जोयं।
बीयं दंसणसुद्धीइ चिंतए तत्थवि तमेव॥ [३५८]

तइए निसाअइयारं जहक्कमं चिंतिऊण पारेइ।
सिद्धत्थयं पढित्ता पमज्जसंडासमुवविसइ॥ [३५९]

पुव्वं व पुत्ति पहेणवंदणमालोय सुत्तपढणं च।
वंदणखामण वंदणगाहा तिगपढण उस्सग्गो॥ [३६०]

तत्थ य चिंतइ संजमजोगाण न जेण होइ मे हाणी।
तं पडिवज्जामि तवं छम्मासं ता न काउ मलं॥ [३६१]

एगाइ इगुणतीसूणयं पि न सहो न पंचमासमवि।
एवं चउ तिदुमासे न समत्थो एगमासं पि॥ [३६२]

जातं पि तेरसूणं चउतीसइ माइ तो दुहाणीए।
जाव चउत्थं तो आयंबिलाइ जा पोरिसि नमो वा॥ [३६३]

जं सक्कइ तं हियए धरित्तु पारित्तु पेहए पुत्तिं।
दाउं वंदणमसढो तं चिय पच्चक्खए विहिणा॥ [३६४]

इच्छामो अणुसट्ठित्ति भणिय उवविसिय पढइ तिन्नि थुई।
मिउसद्देणं सक्कत्थयाइ तो चेइए वंदे॥ [३६५]

एवं ता देवसियमिति।

इसी परि पूर्वभणित परि देवसिउ पडिकमणउं कहिउं। राइयमवि एवमेवेति। राइउ पडिकमणउं[1] एयमेव-इसीही जि परि जाणिवउं।

§336) 'न वरि तहिं' ति नवरं केवलं तिणि राइइ पडिकमणइ जु विशेषु सु कहियइ।

तप्तलोहगोलकसमान असंजत जन तथा जीवहिंसाकारक गिलोईप्रमुख जीव जिम जागइं नहीं तिणि कारणि मिउसद्देणं ति मृदुशब्दि करी जिम आपणपा हूंतउ बीजउ को सांभलइ नहीं तिमइ स्वरि करी देववंदना सीम। किमउ अर्थु? ह्वेद सीम पडिकमणउं करेवउं। तत्र पूर्वभणित सामाइकशक्रस्तवदुस्वप्नादि प्रायश्चित्तविशुद्धिनिमित्त कायोत्सर्गकरणानंतरु पडिकमणा[1] ठाइवा समइ हूयइ हूंतइ त्रि वेई

§334) 1 Bh.-गच्छि। §335) 1 Bh. adds पुनि। §336) 1 Bh.-णइ।

पदस्थमुनि साधर्मिक हुयइं ति मर्वइ वांदी करी एक खमासमणि आचार्यमिश्र वांदियइं । बीजइ खमास-मणि उपाध्यायमिश्र वांदियइं । तइय खमासमणि[1] भगवंत वर्तमानधर्मगुरु वांदियइं । चउथइ खमासमणि सर्वसाधु वांदियइं । पाछइ गोडिहिलियां होईं मुहुंती मुहयारि दे करी माथउं भुइं लगाडी करी 'सव्वस्स वि राइय' इत्यादि कहियइ । ऐहि 'इच्छाकारेण संदिसह' इमउं पदु न कहियइ[2] । तस्स मिच्छामि दुक्कडं । 5
करेमि भंते आलोयणउं तथा तस्सुत्तरीयादि कही करी चारित्रातिचार विशुद्धिनिमित्तु काउस्सग्गु कीजइ । लोगस्सुज्जोयगरे एक चीतवियइ । चंदेसु निम्मलयरा सीम इसी परि अनेरे काउस्सग्गि लोगस्सु-ज्जोयगरे पंचवीस ऊसास पतीही जि पच्चीतवेवी पारियइ हूंतइ लोगस्सुज्जोयगरे संपूर्ण भणियइ ।

§ 337) पाछइ सव्वलोए अरहंत-चेइयाणं इत्यादि कही दर्शनातिचार विशुद्धिनिमित्तु बीजउ काउस्सग्गु कीजइ । लोगस्स उज्जोयगरे चीतवीयइ । पारियइ हूंतइ पुक्खरवरदीवड्ढे कहियइ[1] सुयस्स भगवओ करेमि काउस्सग्गं वंदणवत्तियाए इत्यादि करी ज्ञानातिचारविशुद्धिनिमित्तु[2] त्रीजउ काउस्सग्गु 10
कीजइ । रात्रिगतु अतिचारु चीतवियइ । इहां शिष्यु पृच्छा करइ, दिवस सगइ पडिकमणइ जिम पहिलउं काउस्सग्ग माहि अतीचारु चीतवियइ, तिम रात्रि पडिकमणइ पुणि किसइ कारणि पहिलउं अतीचारु न चीतवियइं ? गुरु भणइ, निद्रापूर्णिमादिकु चित्तसमाधानु तथा सरीरालस्यभावु जिम न होइ तिणि कारणि त्रीजइ काउस्सग्गि अतीचारु चीतवियइ । पाछइ सिद्धाणं बुद्धाणं कही करी संडासा पडिलेहण करी बइसी ऊभइ[3] थिकां मुहुंती पडिलेही सरीरु पडिलेही द्वादशावर्त्त वांदणउं दे करी आलोयणउं कीजइ । 15
पोसहि कीधइ संथारा उव्वट्टण किंइं, परियट्टण किंइं, आउंटण किंइं, प्रसारण किंइं, छप्पइया संघट्टन किंइं, अचक्खुविसइ काइं किंइं, इमउं कहियइ ।

§ 338) एह नउ अर्थु संसारकोद्वर्त्तना हूता । किमउ अर्थु ? वाम पार्श्वइतउ दक्षिणपार्श्वि फिरिउं अथवा दक्षिणपार्श्वइतउ वामपार्श्वि फिरिउं, तथ त्रि के जीव मत्कुण गुल्हड्लादिक विराधिया हुयइं तींहं नइं कारणि संथारा उद्वर्त्तनादिक आलोइयइं । एवं परियट्टन किंइं परिवर्तना[1] वारवार 20
उभयपार्श्वइं फिरणु किधउं । आउंटण किंइं आकुंचना हूता निद्रा माहि पसारिया अंग तणी संकोचना कीधी । पसारण किंइं प्रसारणा हूता संकोचित अंग तणी निद्रा माहि पसारणा कीधी । छप्पइया संघट्टन किंइं षट्पदिका संघट्टना हूता, जू तणी परिमर्दना कीधी । अचक्खुविसइ काइं किंइं दृष्टिदर्शन तणइ अभावि पाइया लहुडी वडी नीति कीधी । पाछइ 'सव्वस्स वि' कही, वइसी सूधाउं मनि चीतवतां हूंतां मधुरस्वरि निजकर्णगोचर धारणा करिवा पडिकमणासूत्रु गुणियइ । 'तस्स धम्मस्स केवलिपन्नत्तस्स' 25
इसउं पदु भारकप्रतिक्रमणभांति आम्नाय तथा अभावइतउ केई एकि पढइं नहीं । केइ एकि पुणि पढइं । तथापि 'अब्भुट्ठिओमि आराहणाए विरओमि विराहणाए' एउ पदु जुगउ तीही ति संबंधिउं छइ, तिणि कारणि मनि वर्त्तमानु जाणियउं । अब्भुट्ठिओमि भणतां वि वांदणउं दे करी खामणउं कीजइ । खामणानं-तरु अहियावयननिमित्तु आयरणा रहइं गुरु परतंत्रतावचननिमित्तु वि वांदणउं दीजइ । पाछइ 'आयरिय उवज्झाए' इत्यादि त्रिण्हि गाथा 'करेमि भंते आलोयणउं तस्सुत्तरीत्यादि' कही काउस्सग्गु कीजइ । 30

§ 339) छम्मासिउ चीतवियइ यथा–'भगवंत श्रीमहावीरदेव तणइ तीर्थि छम्मास उपवासु तपु करइ । रे जीव ! करी सकइ ?' 'अत न सकूं' । 'एक दिवसि करी ऊणा करी सकइ ?' 'न सकूं' ।

§336) 1 B. drops words from भगवंत...। 2 Bh. adds एतइ भणेतु खेमित । इति । 3 B. Bh. इतरीवर । §337) 1 B. drops words from पुक्ख...। 2 Bh. करीतरवर- । 3 D. Bh. ऊभइ । cf. 322. 3, 326. 4 §338) 1 B. omits.

एवं बिउं ऊणां त्रिउं ऊणा इसी परि एकि ऊणां तां पूछियइं जा इगुणत्रीसे दिवसे ऊणा छ मास हुयइं। पाछइ[1] पांच मास करी सकइ, इसी परि जीव कन्हा पूछियइ। अत न सकूं। पुनरपि एकि एकि दिवसि ऊणा पांच मास तां पूछियइं जां इगुणत्रीसे दिवसे ऊणा पांच मास हुयइं। पाछइ चियारि मास करी सकइ इसी परि पूछियइ पूर्ववत् जां इगुणत्रीसे दिवसे ऊणा चियारि मास हुयइं। पाछइ त्रिन्हि मास करी सकइ इसी परि पूछियइ[2] पूर्ववत् जां इगुणत्रीसे दिवसे[3] ऊणा त्रिन्हि मास हुयइं। पाछइ बि मास करी सकइ इसी परि पूछियइ एकि एकि दिवसि ऊणा तां जां इगुणत्रीसे दिवसे ऊणा त्रि मास हुयइं। पाछइ एकु मासु करी सकइ इसी परि पूछियइ तां एकि एकि दिवसि घटावीतइ पूछियइ जां तेरहे दिवसे ऊणउ एकु मासु हुयइ। पाछइ एक दिवसि हाणि कीधी हूंती शेष सोल दिवस हुयइं तींहं तणउ तपु चउत्रीसमु हुयइ। तउ पाछइ चउत्रीसमु करी सकइ इसउं पूछियइ। अत न सकूं। तउ पाछइ बि बि घटावतां बत्रीसम त्रीसम अट्ठावीसम छव्वीसम चउवीसम बावीसम वीसम अष्टादशम षोडशम चतुर्दशम द्वादशम अष्टम षष्ठसीम तां पूछियइ जां चतुर्थु। तउ पाछइ आंबिलु एकासणउं पुरिम निव्विय पोरिसि सीम तां पूछियइ जां नवकारसहितु। पाछइ जु सकइ सु प्रत्याख्यानु मन माहि चीतवी करी 'नमो अरहंताणं' कही काउसग्गु पारइ[4]।

§340) पारियइ हूंतइ 'लोगस्सुज्जोयगरे' भणी बइसी मुहुंती सरीरु पडिलेही बि वानणां दे अगदु मायारहितु हूंतउ चिंतितु प्रत्याख्यानु करइ।

'इच्छामो अणुसट्ठिं' इसउं भणी गोडिहिलियां होईं संसारदावा अथवा परसमयतिमिरतरणिं इत्यादि[1] स्तुति त्रिन्हि वर्द्धमान छंदोविरचित मंदस्वरि करी कहियइं। पाछइ 'नमोत्थुणं' कही ऊभां होईं देव वांदियइं। गोडिहिलियां होईं 'नमोत्थुणं' कही एक खमासमणि आचार्यमिश्र वांदियइं। बीय खमासमणि उपाध्यायमिश्र वांदियइं। तइय खमासमणि सर्वसाधु वांदियइं। एतलइ रात्रि प्रतिक्रमणु संपूर्ण हुयउं। तउ पाछइ कम्मभूमिहिं पढमसंघयणि इत्यादि नमस्कार श्रीऋषभवर्द्धमानक इत्यादिक स्तवन भक्तिनिस्सनातुल्यकादिक 'कुलं अट्ठावयंमि उसहो' इत्यादि प्रभातमांगलिक्यभावनाभावुक सज्झाउ करी मुहुंती पट्टक पोमाल पडिलेहण प्रकासि हूयइ हूंतइ कीजइ। इति रात्रिय[2] प्रतिक्रमणविधि।

§341) अथ पाक्षिक चातुर्मासिक सांवत्सरिक प्रतिक्रमण विधि लिखियइ।

> मुहपुत्तीवंदणयं संबुद्धाखामणं तहा लोए।
> वंदणपत्तेयं खामणाणि वंदणय सुत्तं च ॥ [३६६]
>
> सुत्तं अब्भुट्ठाणं उस्सग्गो पुत्तिवंदणं तह य।
> पज्जंते खामणयं तह चउरो थोभवंदणया ॥ [३६७]
>
> पक्खिय तिन्नि सयाइं उस्सासा पणसया उ चउमासे।
> अट्ठसहस्सं वरिसे निज्जरणट्ठाए तहुस्सग्गो ॥ इति। [३६८]

देवसियप्रतिक्रमणु जउ 'वंदामि जिणे चउव्वीसं' कहिउं[1] हुयइ। तउ पाछइ एक खमासमणि 'इच्छाकारेण संदिसह भगवन पक्खिय मुहपुत्तियं पडिलेहेमि' 'चउमासइ चउमासिय मुहपुत्तियं पडिलेहेमि संवत्सरि संवत्सरिय मुहपुत्तियं पडिलेहेमि' इसउं कहियइ। बीजउं खमासमणु दे मुहुंतीसरीर पडिलेही

§339) 1 Bh. omits. 2 Bh. repeats. 3 Bh. दिवसि। 4 B. पारियइ। §340) 1 Bh. omits. 2 Bh. रात्रि। §341) 1 Bh. कहिउं।

वि वानणां दीजइं। 'पाछइ संबुद्धाखामणेणं अब्भुट्ठिओहं अब्भिंतरपक्खियं खामेमि' 'चउमासइ चउमासियं खामेमि संवत्सरि संवत्सरियं खामेमि' इसउं कथनु ऊभां थिकां माथइ हाथ चडावतां भणी करी गोडिहिलियां थाई माथउं मुहं लगाडी मुहुंती मुद्दचारि देई 'पनरसन्हं दिवसाणं पनरसन्हं राईणं' इसउं कही, 'चउमासइ चउन्हं मासाणं अट्ठन्हं पक्खाणं विसोत्तरु सउ राइंदियाणं' इसउं कही, 'संवत्सरि दुवालसन्हं मासाणं चउवीसन्हं पक्खाणं त्रिन्हिसइं साठ राइंदियाणं' इसउं कही, 'इच्छं जं किं चि अप्पित्तियं' 5 इत्यादि कही जउ वि साधु ऊगरता हुयइं तउ पक्खियदिवसि त्रिन्हि खामणां, चउमासइ पांच खामणां, संवत्सरि सात खामणां कीजइं। पाछइ ऊठी वि वानणां दे करी देवसियं आलोइयं पडिकंता प्रत्येकखामणेणं 'अब्भुट्ठिओहं अब्भिंतरपक्खियं खामेमि, चउमासइ चउमासियं खामेमि संवत्सरि संवत्सरियं खामेमि' इसउं कही प्रत्येक खामणां कीजइं। तदनंतरु बि वांनणां दे 'देवसियं आलोइयं पडिकंतं पक्खियं पडिकमावहे' इसउं कही करी चउमासइ 'चउमासियं पडिकमावेह' इसउं कही संवत्सरि 'संवत्सरियं 10 पडिक्कमावेह' इसउं कही करी 'करेमि भंते' इत्यादि 'इच्छामि ठामि काउस्सग्गं जो मे पक्खिओ अइयारो' इत्यादि चउमासइ 'चउमासिओ अइयारो कओ' इत्यादि संवत्सरि 'संवत्सरिओ अइयारो कओ' इत्यादि कही करी 'तस्सुत्तरीकरणेणं' कही शक्तिसंभवि सव्वहीं काउस्सगु कीजइ।

§342) एकु श्रावकु आचार्यमिश्रहं[1] आगइ आवी एकु खमासमणु दे करी भणइ 'इच्छाकारेण 15 संदिसह भगवन्! सूत्रु संदिसावउं,' गुरि[2] 'संदिसावहु' इसइ भणिइ हूंतइ बीजउं खमासमणु दे करी 'भगवन् सूत्रु काढउं' इसउं भणइ। गुरि 'भणउ' इसइ कहिइ हूंतइ 'इच्छं' इसउं भणी करी, ऊभउ थिकउ हाथे जोडिए मुहि मुहुंती दीधी त्रिन्हि नमस्कार कही मधुरस्वरि व्यक्ताक्षरु सावधानचित्तु सूत्रार्थु मनि चीतवतउ हूंतउ पडिकमणा सूत्रु भणइ। बीजा काउस्सग्गि वर्त्तमान सावधान थिका सांभलइं। साधु सरसां पडिकमतां हूंतां त्रिन्हिसइं साठ पक्खियसूत्रु सांभलइं। शक्तिअसंभावि बइठा थिका सांभलइं, सूत्रप्रांति सव्वे काउस्सगु करइं। संपूर्णि सूत्रि भणिइ[3] हूंतइ नमुक्कारेण पारित्ता ऊभां थिका त्रिन्हि 20 नमस्कार कही पाछइ बइसी करी पूर्ववत् पडिकमणासूत्रु गुणियइ। 'पडिकमे देवसियं सव्वं' एह नइ थानकि 'पक्खियं सव्वं चउमासइ चउमासियं सव्वं, संवत्सरि संवत्सरियं सव्वं' इसउं कहियइ। सूत्रगुणनानंतरु 'अब्भुट्ठिओमि आराहणाए' कही एकु खमासमणु दे करी कहियइ 'इच्छाकारेण संदिसह भगवन् मूलगुण उत्तरगुण अतिचारविसुद्धिनिमित्तु काउस्सग्गु करहं' इसउं भणियइ। गुरि 'करउ' इसइ कहिइ[4] हूंतइ 'इच्छं' इसउं भणी करी 'अन्नत्थूससिएणं' इत्यादि भणी काउस्सग्गु कीजइ। पक्खिए 25 त्रिन्हिसइं ऊसास बारह लोगस्सुज्जोयगरे, चउमासइ पांचसइं ऊसास वीस लोगस्सुज्जोयगरे, संवत्सरि अट्ठोत्तरसहस्सु ऊसास चियालीस लोगस्सुज्जोयगरे एकु नमस्कारु चीतवियइं। नमुक्कारेण पारित्ता लोगस्सुज्जोयगरे संपूर्ण कहियइ। पाछइ बइसी मुहुंती सरीरु पडिलेही वि वानणां दे पर्यंतखामणउं कीजइ। चत्तारि वार खमासमणु दे दे त्रिन्हि त्रिन्हि नमस्कार कहियइं। ए चत्तारि थोभवांदणां कहियइं। तउ पाछइ इच्छामो अणुसट्ठिं इसउं भणियइ। 'नित्थारग पारगा होह' इसा गुरुवचनश्रवणा- 30 नंतरु आपउं देवसिउ पडिक्कमियइ। केवलं भवनदेवता काउस्सग्गु शुद्ध अधिक कहियइ। स्तोत्रु पाक्षिक चतुर्मासक संवत्सरप्रतिक्रमणि निश्रइं सउं 'अजियं जिउ' अजितशांति स्तवु कहियइ। लघु स्तवनु 'उवसग्गहरं पासं' निश्रइं सउं कहेवउं। इति पाक्षिकादि प्रतिक्रमणविधि।

---

§341) 2 B.-वहे। §342) 1 Bh.-मिश्र। 2 Bh. omits. 3 Bh. भणियइ। 4 Bh. कहियइ।

§343) अथ प्रस्तावइनउ सामाइकरोमइपारणाविधि – पुणि लिखियइ। जघन्यपदि लघु वि घडिका भीम उत्कृष्टपदि जेतीवार भीम वासना तेतीवार भीम सामाइकि संपूर्णि कीधइ हूंतइ गुरु आगइ अथवा स्थापनाचार्य आगइ आवी करी इच्छामीत्यादि भणी एक खमासमणि 'इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! मुहपुत्तियं पडिलेहेमि' भणी बीय खमासमणि दीयइ हूंतइ बइसी ऊभइ थिकां मुहंती पडिलेही करी पाछइ उठी करी एक खमासमणि 'इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! सामाइयं पारावेह' इसउं कहियइं। 'पुणोवि कायव्वं' इसइ कथनि गुरि कहिइ हूंतइ बीय खमासमणि 'सामाइयं पारेमि' इसउं भणियइ। 'आयारो न मुत्तव्वो' इसइ गुरि कहियइ हूंतइ 'इच्छं' भणी तइउ खमासमणु दे करी अर्धावनतगात्रु करी ऊभां थिकां हाथे जोडिए मुहंती मुहि दीधि त्रिन्हि नमस्कार कहियइं। पाछइ संडासा पडिलेही गोडिहिलियां होई मस्तकु भुइं धरी हाथे जोडिए मुहंती मुहि देई

> सगरं दसण्णभद्दो सुदंसणो थूलभद्दवयरो य। [illegible] गिहनाया साहू एवंविहा हुंति ॥ [३६९]
>
> साहूण वंदणेणं नासइ पावं असंकिया भावा। फासुयदाणे निज्जर उवग्गहो नाणमाईणं ॥ [३७०]
>
> छउमत्थो मूढमणो कित्तियमित्तं पि संभरइ जीवो। जं च न सम्भरामि अहं मिच्छामि ह दुक्कडं तस्स ॥ [३७१]
>
> जं जं मणेन चिंतियमसुहं वायाइ भासियं किंपि। असुहं काएण कयं मिच्छामि ह दुक्कडं तस्स ॥ [३७२]

ए [illegible] कहियइं।

§344) ईहं [illegible] नउ अर्थु यथा–'सामाइयंमि उ कए' समणो होइ य सावओ होइ जम्हा' इसा भणनइनउ जिम महासरोवर भरिउं देखी कहियइ जाणे समुद्र छइ। अथवा सूर पुरुषु देखी करी भणियइ जाणे सिंहु छइ। अथवा महावृक्षु देखी करी कहियइ जाणे हाथियउ छइ। अथवा धनवंतु पुरुषु देखी करी भणियइ जाणे धनदयक्षु छइ। तिम समताभावि सामाइकि वर्तमानु श्रावकु देखी करी भणियइ जाणे श्रमणु छइ। तिणि कारणि सामाइकपारणा समइ जि केई जिनशासनि उत्कृष्ट श्रमण हुया [illegible] हुयइं [illegible] गुणवंत श्रीदशार्णभद्रराजऋषि श्रीसुदर्शनमहामुनि श्रीस्थूलभद्रयुगप्रधान श्रीवज्रस्वामि युगप्रधान वांदइ। ति किसा? गृहस्थ गिहनाया इति। गृहस्थपणु मेल्हु कीधउ गृहस्थानु संयमु लीधउं ति [illegible] इसा कहियइं। किसउ अर्थु? ति वि दशार्णभद्र थकइ सुदर्शनु [illegible] ति भवि [illegible] छइ। श्रीस्थूलभद्र युगप्रधान थकइ वज्रस्वामि युगप्रधानु देवलोकि पहुता, श्रीजइ भवि सेईं वे मोक्षि [illegible]। तथा च–

> [illegible] न कांति [illegible] आउरिया। अत्र [illegible] नेसिर मक्षे [illegible] ॥ [३७३]

[illegible] हुंति। [illegible] ति के, [illegible] साधु हुयइं। [illegible]

---

§343) 1 B [illegible] 2 B drops words between [illegible] 3 B drops words between [illegible] §344) 1 B [illegible] Bh, [illegible] 2 B... adds [illegible]

§ 345) तथा साधु पर्युपास्तिफलु पुणि चीतवियइ। साहूण वंदणेणं ति साधु तणइ वंदणि नमस्करणि कीजतइ हूंतइ असंकिया भावा असंकित भावइतउ संदेह पाखइ नासइ पात्रं पापु नासइ । अत्र कृष्णु दृष्टांतु। तथा साधु रहइं प्रासुकैषणीय अन्नपानादि दानि कीधइ हूंतइ निर्जर पूर्ववद् अशुभकर्म्म तणी निर्जरा क्षिपणा हुयइ। तथा उवग्गहो नाणमाइणंति ज्ञानादिक जि गुण साधु तणइ आधारि छइं तींहं गुणहं रहइं उपग्रहु उपष्टंभु आधारु कीधउ हुयइ। इसी परि साधुसेवादि अनुमोदना करी भणियइ। 5
छउमत्थो इति। जिम समुद्रि कल्लोलसंख्या आकाशि तारकसंख्या करी न सकियइं तिम छउमत्थ जीव रहइं किसउ अर्थु ? जां सूक्ष्म संपरायगुणठाणइ जीवु न जाइं तां प्रमत्ताप्रमत्तगुणस्थानकइं वर्त्तइ, साधु नी अपेक्षा करी श्रावकु पुणि देसविरति सम्यग्दृष्टि गुणठाणइ वर्त्तइ तउ पाछइ चित्त रहइं चपलता लगी एक मुहूर्त्त माहि जि के जीव रहइं अशुभ परिणाम नीपजइं तींहं नी संख्या पुणि जीवु करी न सकइं, इणि कारणि भणियइ छउमत्थो छद्मस्थु जीवु कित्तिय मित्तं पि केतलउं पापु सांभरइ समरइ। तिणि कारणि 10
जु सांभरइ समरइ जं च न संभरामि अहं। जु पापु हउं न सांभरउं समरउं तहीं मिच्छामि दु दुक्कडं तस्स। तेह सांभरताई अनइ असांभरताई पाप तणउ दुष्कृतु मिथ्या विफलु हुउ।

§ 346) इसी परि सामान्यहिं सामाइकशुद्धि करी विशेष शुद्धि निमित्तु भणियइ। जं जं ति– जं काईं असुभु मनि करी चीतविउं, जं कांइं अशुभु वाया करी वचनि करी भासिउं कहिउं। जं कांइं असुभु काइ करी कीधउं तेह तणउं दुष्कृतु मिथ्या हुउ। इसी परि सामाइक तणी विशेषशुद्धिकरणपूर्वकु 15
सामाइकु पारी करी पुनरपि प्रमादभावरिपु तणउ अविश्वासु मन माहि धरतां सर्वजीव मिथ्या दुष्कृतु दे करी–

सामाइय पोसहसंठियस्स जीवस्स जाइ जो कालो।
सो सफलो बोधव्वो सेसो संसारफलहेऊ ॥ [३७४]

इत्यादि भावना भावियइं। 20

§ 347) अथ पोसहपारणा विधि लिखियइ। संपूर्णे पौषधकृते सति एक खमासमणि भणियइ 'इच्छाकारेण संदिसह भगवन्। मुहपत्तियं पडिलेहेमि' बीय खमासमणु दे करी मुहुंती पडिलेही एक खमासमणि भणियइ 'इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! पोसहं पारावेह, 'पुणोवि कायव्वं' इसइ कथनि गुरि कहिइ हूंतइ बीय खमासमणि भणियइ 'इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! पोसहं पारावेमि'[1]। गुरि 'आयारो न मुत्तव्वो' इसइ कहिइ[2] हूंतइ 'इच्छं' भणनपूर्वकु तइय खमासमणु दे त्रिन्हि नमस्कार कहिइं[3]। 25
इति पोसह पारणाविधि।

§ 348) पडिकमणउं सामाइककरणपूर्वकु कीजइ तिणि कारणि पहिलुं सामाइकसूत्र वखाणु लिखियइ। 'करेमि भंते सामाइयं' इत्यादि। 'करेमि' करउं शिष्य नी ए प्रतिज्ञा। 'भंते' भदंत पूज्य भगवन् वा। भयांत वा सप्तविधभय अंतकारक। भवांत वा चतुर्गतिरूप संसारनिवारक। इसी परि भंते एह नउ अर्थु तु पुणि गुरु तणउं आमंत्रणु गुरु अनुज्ञातु सर्वु करिसउं। इसा अर्थ रहइं जाणाविवा निमित्तु 30
पाठइ इसउ अर्थु–हे भंते! भगवन्! गुरो! सम समस्तज्ञानादिकगुण तींहं नउ आयु लाभु समायु कहियइ। तिणि समायिं हूंतइ हुयइ इति सामायिकु कहियइ। यथा–

जो समो सव्वभूएसु तसेसु थावरेसु य।
तस्स सामाइयं हुज्जा इय केवलिभासियं

§ 347) 1 Bh. पारेमि। 2 Bh. वदियइ। 3 Bh

सु पुणि एकु सर्व सावद्ययोग प्रत्याख्यानरूपु । एकु देस सावद्यजोग प्रत्याख्यानरूपु । तत्र श्रावक रहइं सर्व सावद्यजोगहं नइ विषइ अनुमति निषेधु न संभवइं तिणि कारणि देस सावद्यजोग प्रत्याख्यातु हुयइ । इत्याह 'सावज्जं जोगं पच्चक्खामि' । अवद्यु जीवहिंसादिकु पापु तेह सहितु जु योगु व्यापारु सु सावद्यु जोगु व्यापारु 'पच्चक्खामि' निषेधउं । सु निषेधु यावज्जीवता अल्पकालविषयता करी बिउं भेदे 5 हुयइ इत्याह 'जावनियमं पज्जुवासामि' । जेतलउ कालु व्रति रहउं तेतलउ कालु पज्जुवासउं पालउं । व्रतावस्थानकालु जघन्यपदि मुहूर्तप्रमाणु उत्कर्षइतउ जां वासना तां सीम ।

§ 349) किसी परि ? 'दुविहं तिविहेणं' भनि वचनि काइ करी 'तिविहेणं' सावद्यु जोगु आपहे करउं नहीं, अनेरा कन्हा करावउं नहीं 'दुविहं' । अत्र 'भंदत्त ! सामाइयं करेमि' इणि करी प्रत्युत्पन्नु वर्त्तमानु सावद्यु सपापु जोगु व्यापारु तेह नी विरति कही । 'सावज्जं जोगं पच्चक्खामि' इणि करी अनागत 10 सावद्यजोग नी निवृत्ति कही । अतीत सावद्य जोग प्रतिक्रमण नइ कारणि कहइ । 'तस्स भंते पडिक्कमामि' । ईहां षष्ठी विभक्ति द्वितीया विभक्ति नइ अर्थि छइ । तमपि तेउ अतीतु सावद्यु पडिक्कमउं प्रतिक्रमउं नियर्त्तावउं निंदामि आपणी साखि गरिहामि गुरु नी साखि । समस्तु कार्यु करी गुरु आगइ कहियउं । इसा अर्थ तणइ कारणि बीजी वार भंते पदु भणियइ । 'अप्पाणं वोसिरामि' अतीत सावद्यकारकु आपणउं 'वोसिरामि' व्युत्सृजउं । किसउ अर्थु ? वोसिरउं मेल्हउं इति सामाइक दंडक तणउ अर्थु संपूर्णु लिखिउं ।

15 § 350) अथ पडिक्कमण तणउं फलु आगमानुवादि करी कहियइ ।

'पडिक्कमणेणं भंते ! जीवे किं जणइ ?'

'गोयमा ! पडिक्कमणेणं जीवे वयच्छिद्दाइं पेहेइ । पिहियवयच्छिद्दे पुण जीवे निरुद्धासवे असबलचरित्ते अट्ठसु पवयणमायासु उवउत्ते सुप्पणिहिए विहरइ' ।

इति उत्तराध्ययनसिद्धांत तृतीयाध्ययन माहि कहिउं । सुगमु एउ आलापकु । पर निरुद्धासवे 20 आश्रवप्राणातिपातादिक पांच ति निरुंधइ जीवु तिणि कारणि निरुद्धासवु । एकारु प्राकृतत्वइतउ । 'असबलचरित्ते' निर्मलसंजमे ईहां[1] एकारु पूर्ववत् । सु पडिकमणउं सकलातीचारविसुद्धिकरणभावि करी विशिष्टु श्रेयःकार्यु ।

§ 351) तिणि कारणि मंगलादिकइं भणिवा कारणि प्रथमगाथा प्रतिक्रमणकारु भणइ--

वंदित्तु सव्वसिद्धे धम्मायरिए सव्वसाहू य ।
25 इच्छामि पडिक्कमिउं सावगधम्माइयारस्स ॥ [३७६]

'वंदित्तु' वांदी करी नमस्करी करी । कउण ? 'सव्वसिद्धे' इति सर्वु समस्तु वस्तु जि जाणइं ति सर्वज्ञ तीर्थंकर । अथवा ति सर्वही जीवहं रहइं हित ति सार्व सर्वज्ञ तीर्थंकर भावार्हंत कहियइं । सीझइं सर्व-कर्मक्षयकरणइतउ कृतकृत्य निष्ठितार्थ हुयइं इणि कारणि सिद्ध मोक्षगत जीव । पाछइ सार्व अनइ सिद्ध सर्वसिद्ध ति वांदी करी । 'धम्मायरिए य' धर्माचार्य धर्मदायक गुरुवर कहियइं । चकारइतउ उपाध्याय 30 द्वादशांगवाचनादायक । तथा 'सव्व साहू य' समस्त साधु अढाई द्वीप समुद्र माहि जि के ज्ञानदर्शन-चारित्रलक्षणु मोक्षमार्गु सम्यक् साधइं ति सर्वसाधु वांदी करी विघ्न विनायक उपशमाविवा कारणि ।

§ 352) इसी परि पंचपरमेष्ठि नमस्कारु करी प्रतिक्रमणकारु 'इच्छामी' ति भणइ । 'इच्छामि' ईच्छउं वांछउं किसउं करिवा ? 'पडिक्कमिउं' पडिकमिवा निवर्त्तिवा । किसा हूंतउ ? 'सावयधम्माइयारस्स' । षष्ठी विभक्ति पंचमी विभक्ति तणइ अर्थि छइ तिणि कारणि श्रावकधर्मु द्वादशव्रत रू-

§349) 1 Bh. लिखिउ । §350) 1 Bh. adds -ई ।

स्थूलप्राणातिपातविरति १, स्थूलमृषावादविरति २, स्थूलअदत्तादानविरति ३, स्वदारसंतोष अथवा परदार परिहाररूप ४, परिग्रहपरिमाणकरण ५, पांच अणुव्रत। दिक्परिमाणकरण ६, कर्मइतउ अंगारा-जीवनादिक पनरहं कर्म्मादान यथाशक्ति परिहाररूप भोगइतउ अभक्ष्य पंचुंबरि चउ विगई इत्यादि परिहाररूप द्विविध भोगोपभोगमानरूप ७, अनर्थदंडव्रत परिहाररूप त्रिन्हि गुणव्रत ८, सामाइक ९, देशावकाशिक १०, पौषध ११, अतिथि संविभागरूप चत्तारि शिक्षाव्रत १२, इत्येवंरूपु श्रावकधर्मु 5 तेह नइ विषइ हूयउ छइ। अतीचारु सु सावगधम्माइयारु कहियइ। तेह हूंतउ निवर्त्तिवा वांछउं। इसी परि क्रियासंबंधु करिवउ ति पुणि अतीचार चउवीसउं सउ छइं। पुणि ईहां एकवचनु जातिविवक्षा करी दीधउं। इति प्रथमगाथार्थः।

§353) अथ पहिलउं सामान्यहिं सर्वव्रतातिचार प्रतिक्रमणनिमित्तु भणइ–

> जो मे वयाइयारो नाणे तह दंसणे चरित्ते य। 10
> सुहमो य बायरो वा तं निंदे तं च गरिहामि॥ [३७७]

सामान्यहिं मे मू रहइं जु व्रतातिचारु, व्रत कहियइं स्थूलप्राणातिपातविरत्यादिक द्वादश संख्य तीहं नइ विषइ जु अतीचारु वधबंधादिकु प्रत्येकु प्रत्येकु[1] व्रत व्रत प्रति पंचसंख्यु तथा भोगोपभोगव्रतु द्विविधु। एकु भोगइतउ एकु कर्म्मइतउ। तत्र जु भोगइतउ तेह ना अतीचार पांच व्रतहं माहि कहीसिइं। जु कर्म्मइतउ तेह ना अतीचार पनरह अंगारकर्म्मा जीवनादिक। तउ पाछइ व्रतहं विषइ ऊपनउ 15 छइ[2] एवमादिकु अतीचारु सु व्रतातिचारु कहियइ। तथा 'नाणे' ज्ञानविषइ, 'दंसणे' सम्यक्त्वविषइ 'चरित्ते य' देसविरतिविषइ आगइ सूत्र माहि विशेषि करी के एकि अतीचार कहीसिइं के एकि व्यक्ति करी जि न जाणियइं[3] ति ईहा प्रस्तावइतउ प्रकट कहियइं–

> काले १ विणए २ बहुमाणे ३ उवहाणे ४ तह अनिण्हवणे ५।
> वंजण ६ अत्थ ७ तदुभए ८ अट्ठविहो नाणमायारो॥ [३७८] 20
> कालक्कमेण पत्तं संवच्छरमाइणा उ जं जंमि।
> तं तंमि चेव धीरो वाइज्जा सो य कालोऽयं॥ [३७९]

जु श्रुतु जिणि संवत्सरादिकि कालि पढिया निमित्तु अर्हंतहं कहिउं छइ अणुजाणिउं छइ सु श्रुतु तेणिहीं जि कालि धीरु पंडितु हूंतउ 'वाइज्जा' वाचिजिउ पढिजिउ।

§354) सु पुणि पाठविषइ कालु इउ। यथा– 25

> तिवरिसपरियागस्स उ आयारपकप्पनाममज्झयणं।
> चउवरिसस्स य सम्मं सुयगडं नाम अंगंमि॥ [३८०]
> दसा-कप्प-व्ववहारा संवच्छर-पणगस्स दिक्खियस्सेव।
> ठाणं समवाओ वि य अंगे ते अट्ठवासस्स॥ [३८१]
> दसवासस्स विवाहा इक्कारसवासयस्स य इमे उ। 30
> खुड्डियविमाणमाई अज्झयणा पंच नायव्वा॥ [३८२]

§353) 1 Bh. omits. 2 B. omits. 3 B. drops words between आगइ...जाणियइं।
§355) 1 Bh. -समु।

बारसवासस्स तहा अरुणववायाइं पंच अज्झयणा ।
तेरसवासस्स तहा उट्ठाणसुयाईया चउरो ॥ [३८३]
चउदसवासस्स तहा आसीविसभावणं जिणा विंति ।
पन्नरसवासगस्स य दिट्ठीविसभावणं तह य ॥ [३८४]
सोलसवासाई सु य इकुत्तरवड्ढिएसु जहसंखं ।
चारणभावणमह सुविणभावणा तेयगनिसग्गा ॥ [३८५]
एगूणवीसगस्स य दिट्ठीवाओ दुवालसममंगं ।
संपुन्नवीसवरिसो अणुवाई सव्वसुत्तस्स ॥ [३८६]

इति पंचवस्तुक सिद्धांतगाथानुसारि करी जाणिवउ ।

10 §355) यथा दीक्षाग्रहणि कीधइ त्रीजइ वरसि पहिलउं आचारप्रकल्पु आचारांगु पढियइ । चउथइ वरसि सूयगडु बीजउ आंगु पढियउं । 'दसा-कप्प-ववहारा' इति दशाश्रुतस्कंध कल्प व्यवहार ए त्रिन्हि सिद्धांत पांचमइ वरसि पढियइं । ठाणांगु समवायांगु ए बि अंग आठमइ वरसि पढियइं । दसमइ वरसि विवाहा विवाहप्रज्ञप्ति नामु पांचमउं आंगु पढियइ । पांचमइ आंगि पढिइ आगिलां छह आंग ज्ञाताधर्मकथा १, उपासकदशा २, अंतगडदशा ३, अनुत्तरोपपातिकदशा ४, प्रश्नव्याकरण ५, 15 विपाकश्रुतनामक यथारुचि पढिया लाभइं । इगारमइ वरसि खुड्डिया विमाणपन्नत्ती, महल्लिया विमाणपन्नत्ती अंगचूलिया वग्गचूलिया विवाहचूलिया ए पांच सिद्धांत पढियइं । बारहमइ वरसि अरुणोपपात वरुणोपपात वेलंधरोपपात वेसमणोपपात देवेंद्रोपपात नाम पांच सिद्धांत पढियइं । तेरहमइ वरसि उट्ठाणसुयं समुट्ठाणसुयं नागपारियावलिया निरयावलिया नाम चत्तारि सिद्धांत पढियइं । चऊदमइ वरसि आसीविस भावणा । पनरमइ वरसि दिट्ठीविस भावणा पढियइ । सोलमइ वरसि चारण भावणा । सत्तरमइ वरसि 20 सुविण भावणा । अढारमइ वरसि तेयगनिसग्गा पढियइ । इगुणवीसमइ वरसि दिट्ठिवाओ दृष्टिवादाभिधानु द्वादशमु[1] अंगु । वीसमइ वरसि सर्वश्रुत रहइं अणुवाई पाठकु हुयइ ।

§356) दृष्टिवादु चऊद पूर्व, तींहं नां नाम, यथा-उत्पादु पूर्वु १, अग्रायणीउ पूर्वु २, वीर्यप्रवादु पूर्वु ३, अस्तिनास्तिप्रवादु पूर्वु ४, ज्ञानप्रवादु पूर्वु ५, सत्यप्रवादु पूर्वु ६, आत्मप्रवादु पूर्वु ७, कर्मप्रवादु पूर्वु ८, प्रत्याख्यानप्रवादु पूर्वु ९, विद्याप्रवादु पूर्वु १०, कल्याणनामधेउ पूर्वु ११, प्राण- 25 वायु पूर्वु १२, क्रियाविशालु पूर्वु १३, लोकबिंदुसारु पूर्वु १४, इति ।

§357) प्रस्तावइतउ पूर्वहं तणउं प्रमाणु पुणि लिखियइ ।

उप्पाए पय कोडी १ अग्गेणीयंमि छन्नऊ लक्खा २ ।
वीरियम्मि सयरि लक्खा ३ सट्ठि लक्खा अत्थिनत्थियमि ४ ॥ [३८७]
एगापउणा कोडी नाणपवायंमि होइ पुव्वंमि ५ ।
30 एगा पयाण कोडी छच सया सच्चवायंमि ६ ॥ [३८८]
छव्वीसं कोडीओ आयपवायंमि होइ पयसंखा ७ ।
कम्मपवाए कोडी असीइ लक्खेहिं अब्भहिया ८ ॥ [३८९]
चुलसीइ सयसहस्सा पच्चक्खाणंमि वन्निया पुव्वे ९ ।
इक्का पयाण कोडी दस सहस सहिया य विज्जाए १० ॥ [३९०]

छव्वीसं कोडीओ पयाण पुव्वे कल्लाणनामंमि[1] ११ ।
पाणाआए कोडी छप्पनलक्खेहिं संखाया १२ ॥ [३९१]
नव कोडीओ संखा किरियविसालंमि वन्निया गुरुणा १३ ।
अद्धत्तेरस लक्खा पयसंखा बिंदुसारंमि १४ ॥ [३९२]

चतुर्दशपूर्वपदप्रमाणु आगमगाथा करी भणिउं, परं आम्नाय तणा विच्छेदइतउ पदस्वरूपु सम्यग् 5
जाणियइं नहीं ।

§358) अथ प्रस्तावइतउ जेह सिद्धांत माहि जु अर्थु भणिउ छइ सु अर्थु सामान्यहिं
सिद्धांतगाथां करी लिखियइ–

आयार विणय गोयर सिक्खा भासाण चरणकरणाणं ।
निद्दिट्ठा वित्तीओ पढमंमि मुणीण अंगंमि ॥ [३९३] 10

पहिलइ अंगि आचारनामकि मुणीण मुनिसंबंधिनी आचार विनय गोचर शिक्षा भाषा चरणकरण
एतलां सघहीं तणी वृत्ति व्यापार कही छइं ।

सुइज्जइ सूयगडे जीवाजीवाइ लोगचरणाई ।
ससमय-परसमयाइं संखिज्जाओ निजुत्तीओ ॥ [३९४]
ठाणेणं ठाविज्जइ ससमय परसमय लोगजीवाई । 15
कूडा[1] कुंडा सेला वक्खारा आगरा सरिया ॥ [३९५]
समवाएणं जीवाजीवा लोगा य पयविज्जंति ।
तह सुयखंधुद्देसग कालज्झयणाइ चरणाई ॥ [३९६]
वायरणसहस्साइं छत्तीसं हुंति पंचम सुयंगे ।
संखिज्जा संगहणक्खराइं तह चरणकरणाई ॥ [३९७] 20
नायाधम्मकहाए नगरुज्जाणाइ चेइयवणाइं ।
राया अम्मापियरो समोसरणं धम्मआयरिओ ॥ [३९८]
धम्मकहोभयलोगिड्ढि वन्नणं भोगचाय[2] पव्वज्जा ।
सुयगहणं तवकरणं संलेहानियमगहणं च ॥ [३९९]
पायवोवगमणं सुकुलुप्पाओ सुबोहिय बलत्तं । 25
वीसपयाणमिमाणं दसधम्मकहाण वग्ग त्ति ॥ [४००]
दसवग्ग निबद्धाए तत्थिक्किकाइ धम्मसुकहाए ।
पंचसयाइं अक्खाइयाणमिह हुंति नियमेणं ॥ [४०१]
इक्किकाए अक्खाइयाइ बहुधम्मकह निबद्धाए ।
पंचसयाइं अक्खाइयाण भणियाइं पत्तेयं ॥ [४०२] 30
उभयाणं पि तहच्चिय इक्किकाए उ पंच उ सयाणि ।
हवइ य वद्धाण कोडी सयं च कोडीण पणवीसं ॥ [४०३]

§357) 1 B. Bh. कल्लाण- । §358) 1 B. Bh. [illegible] 2 [illegible] 3 B. Bh. पावबहुले- ।

सीलगुणव्वय पडिमोवसग्ग पोसह समंतकिरियाणं ।
विविहट्ठाणाइ तहा नायव्वमुवासगदसाए ॥	[४०४]

नगरुज्जाणवणाइं पाओगमणाइं अंतकिरियाओ ।
अंतगडाणं बोही पवप्पइ अट्ठमंगंमि ॥	[४०५]

5 पंचुत्तरवासीणं चवणुप्पत्ति सुधम्मकह बोही ।
अंतकिरियाउ कुसलं नवमंगे देसियं सव्वं ॥	[४०६]

अट्ठुत्तरपसणसयं नागसुवन्नाण वइयरं चेव ।
पन्हावागरणंगे दिट्ठं विज्जाण माहप्पं ॥	[४०७]

दुविहं च विवागसुयं दुक्करसुकरेहिं कम्ममेएहिं ।
10 नायकहादिट्ठाणं पयाण बहुविह वियप्पेहिं ॥	[४०८]

§359) कालभणनप्रसंगि सर्वसिद्धांत नामविचारादिकु संक्षेपिहिं कहिउं । एउ पूर्वोक्तु आगमपाठ विषइ कालु तिणि कालि पढइ तउ श्रुत आचारु अनेरइ कालि पढइ तउ अतीचारु अथवा कालवेला गर्जित वीजखिवणादि रहितु जु कालु सु स्वाध्यायकालु । तत्र कालवेला वि दीहसमइ वि रात्रिसमइ हुयइं । पूर्वाह्णि आठमी घडी घडी कालवेला । अपरार्धि पुणि आठमी घडी घडी कालवेला । ऋतुयद्धि कालि 15 गर्जिति हुयइ हूंतइ वि पहर सज्झाउ न कीजइं । वीजोल्हासि एकु पहरु सज्झाउ न कीजइं । तिणि कारणि कालवेलादि रहितु स्वाध्यायकालु तिणि कालि स्वाध्यायु करइ श्रुताचारु, अन्यथा अतीचारु १ ।

§360) अत्र कथा । नगरि एकि महऋषि एकु रात्रिसमइ श्मसानप्रदेशि[1] स्वाध्यायपर[2] वसइ । तउ रात्रि पूर्वार्द्ध तणी आठमी घडी कालवेलासमइ स्वाध्यायु करतउ देखी श्रीशासनदेवता महीयारी नइ रूपि आवी करी प्रतिबोधिउ,[3] अकाल स्वाध्याय हूंतउ निवारिउ १ ।

20 §361) विनउ द्वादशावर्त्त वंदनकादिकु, गुरु कन्हा नीचासनसेयनादिकु कीजइ तउ श्रुताचारु । अनेरइ प्रकारि अतीचारु २ । अत्र—

सीहासणे निसन्नं सोवागं सेणीओ नरवरिंदो ।
विज्जं मग्गइ पयओ इय साहुजणस्स सुयविणओ ॥	[४०९]

इसी परि श्रेणिक जिम गुरुविनउ करइ तउ श्रुतविषइ विनयाचारु । अनेरइ प्रकारि अतिचारु २ ।

25 §362-3) बहुमानु मन तणउ अनुरागु गुरु नइ विषइ, सु बहुमानु विद्यासफलीभावकारणु जिसउ श्रीगौतमस्वामि रहइं भगवंत श्रीमहावीरविषइ हूंतउ तिसउ करिवउ । तथा च भणितं—

भद्दो विणीय विणओ पढमगणहरो समत्त सुयनाणी ।
जाणंतो वि तमत्थं विम्हियहियओ सुणइ सव्वं ॥	[४१०]

गरूयाणं बहुमाणो [illegible] चिय जो माणसो पसाउ त्ति ।
30 बहिपडिवत्तीओ पुण मायावीणं पि दीसंति ॥	[४११]

इसी परि बहुमानु गुरुविषइ करइ तउ बहुमानाचारु, अनेरइ प्रकारि अतीचारु ३ ।

§364) उपधानु जेह सिद्धांत नउ जिसउ तपु छइ तिसउ तपु करी सिद्धांतु वाचियइ । तउ सिद्धांत नउ उपधानाचारु । अनेरइ प्रकारि अतीचारु ४ ।

---

§360) 1 Bh. श्मशानदेशि 2 B. स्वाध्यायरत । 3 Bh. प्रतिबोधिउ ।

§365) *तथा निन्हवु गुरु तणउं अपलवणु*[1] । तेह तणउ अभावु अनिन्हवनु । एकू अक्षरु जेह गुरु कन्हइ सिखिउ[2] हुयइ तेऊ[3] गुरु लोपियउं नहीं । जु गुरु निन्हवु करइ सु इहलोकिहिं लाघवु लहइ । यथा–

विज्जाए कासवसंतीयाए[4] दगसूयरो सिरिं पत्तो ।
पडिओ मुसं वयंतो सुयनिन्हवणाइय अपेच्छा ॥ [४१२] 5

कासयपु[5] नावी । तेह रहइं किणिहिं विद्याधरि[6] तूठइ हुंतइ विद्या दीधी । तेह नइ प्रभावि तेह[7] नी भांडी आकाशि थिकी तेह सरिसी[8] चालइ । अनेरइ दिवसि[9] दगसूकरु भणियइ ब्राह्मणु तिणि दीठी । तउ तिणि ब्राह्मणि तेह नी सेवा कीधी । विद्या[10] तेह कन्हा ब्राह्मणि लीधी । विद्याप्रभावि तेह नी धोयती[11] आकाशि[12] थिकी तेह सरसी[13] चालइ । तउ लोकु[14] आश्चर्यु देखी करी घणेरउं तेह ब्राह्मण रहइं भक्तिपूजासत्कारबहुमानु करिवा लागउ । इसी परि ब्राह्मणु कासयप नी विद्या करी श्रीप्राप्तु हूयउ । 10 अनेरइ दिवसि अनेरइ किणिहिं पूछिउ सु ब्राह्मणु, 'भगवन् ! महांतु तुम्हारउ प्रभावु । सु तप तणउ प्रभावु, किं वा विद्या तणउ प्रभावु[15] ?' ब्राह्मणु भणइ, 'विद्या तणउ प्रभावु एउ ।' 'ए विद्या किहां हुंती लाधी ?' विप्रु भणइ, 'हिमवंत गिरि वर्त्तमानि गरूयइं[16] गुरि तूसी करी आपी' । इसा[17] कथनसमकालिहिं[18] जि आकाशि[19] हुंती धोती[20] भूमि पडी । पाछइ सु ब्राह्मणु लघुताप्राप्तु हूयउ[21] । इसी परि जु गुरुनिन्हवु करइ सु श्रुतविराधकु अनेरइ प्रकारि श्रुताराधकु । जु गुरु तणउ अनिन्हवु सु श्रुतविषइ अनिन्हवाचारु । अनेरइ प्रकारि निन्हवातिचारु[22] ५ । 15

§366) 'वंजण' व्यंजन अक्षर बिंदु मात्रा लघु गुरु भेदशुद्ध जउ ऊचरइ तउ श्रुतविषइ व्यंजनाचारु । अनेरइ प्रकारि अतिचारु ६ ।

§367) अर्थु अक्षरालापसंबंधिउ[1] अभिधेयरूपु गुरुपादमूलि जिसउ सम्यक् सांभलिउ हुयइ तिसउ जउ चीतवइ तउ श्रुतविषइ अर्थाचारु, अनेरइ प्रकारि अतीचारु ७ । 20

§368) 'तदुभए' इति । व्यंजनअर्थलक्षणु तदुभउ तेह नइ विषइ समकालु यथोक्तविधि विषइ जउ वर्त्तइ तउ श्रुतविषइ तदुभयाचारु, अनेरइ प्रकारि अतीचारु ८ ।

§369) एउ अष्टविधु ज्ञान नउ आचारु विपरीतु अतीचारु जाणिवउ । एउ ज्ञानाचारु अनइ ज्ञानातिचारु जइपिहिं मुख्यवृत्ति करी साधुजन उद्दिसी कहिउ छइ तथापिहिं श्रावकजन उद्दिसी पुणि जिम संभवइ तिम जाणियउ । यथा कालवेलादिकि अस्वाध्यायकालि उपदेशमाला संग्रहणी कर्म्मग्रंथ क्षेत्र- 25 समासादिक सिद्धांतार्थं संग्रहकप्रकरण[1] पूर्वश्रुतधरविरचित न पढइं जउ तउ श्रावकु श्रुतविषइ कालाचारवंतु, अनेरइ प्रकारि अतिचारवंतु । इसी परि कालविषइ आचारातीचार श्रावकहीं रहइं संभवइं । तथा विनय तणइ अभावि विनइ विषइ बहुमान तणइ अभावि बहुमानविषइ । पंचपरमेष्टिनमस्कार श्रुतस्कंध । ईर्यापथिकी श्रुतस्कंध । भावार्हंतस्तव श्रुतस्कंध । स्थापनार्हंतस्तव श्रुतस्कंध । नामार्हंतस्तव श्रुतस्कंध ।

§365) 1 L. अवलंवनु । 2 Bh. L. सीखिउ । P. सीखिउ । 3 Bh. L. P. तेउ । 4 L. कादव- । Bh. -संतीयाइ । 5 P. कोइ एकु । 6 B. P. L. विद्याधरी । 7 L. तिह । P. तेहं । 8 Bh. सरसी । L. सरिसी । 9 B. L. P. दिवसी । 10 L. वद्या । 11 P. धोत्रती । 12 B. आकाशी । 13 P. सरिसी । 14 The mss. add आगे ब्राह्मण रहइं भक्ति करतउ तउ.... which seems to be a corruption in the text. 15 P. *adds:* एह विद्या किहां हुंती लाधी ? विप्रु भणइ । 16 Bh. P. गुरुयइ । L. गुरइ । 17 P. इसी । 18 L. समकाल हिं । 19 B. L. आकाशी । P. आकाश । 20 Bh. L. धोयती । 21 Bh. हूउ । 22 P. निन्हवाचारु । §367) 1 Bh.–लावय– । §369) 1 P[illegible]ग्रहक ।

श्रुतस्तव श्रुतस्कंध। सिद्धस्तव श्रुतस्कंध। समाराधना निमित्तु तपश्चरणकरणशक्तिसंभवि हूंतइ यथोक्त तपश्चरण अकरणि उपधानविषइ। व्यंजन अर्थ तदुभयविषइ जिम साधु रहइं श्रावकहिं रहइं तिमहिं जि संभवइं।

§370) अथ दर्शनातिचारविचारु लिखियइ। इहां दर्शनु सम्यक्त्वु कहियइ। सु पुणि देवविषइ 5 देवबुद्धि गुरुविषइ गुरुबुद्धि धर्म्मविषइ धर्म्मबुद्धि लक्षणु कहियइ। तथा च भणितं–

या देवे देवताबुद्धि र्गुरौ च गुरुतामतिः।
धर्म्मे च धर्म्मधीः शुद्धा सम्यक्त्वमिदमुच्यते॥ [४१३]

देवु सु जु अष्टादशदोषरहितु।

§371) ति पुणि अष्टादश दोष ए कहियइं। यथा दानांतरायु दोषु १, लाभांतरायु दोषु २, 10 वीर्यांतरायु दोषु ३, भोगांतरायु दोषु ४, उपभोगांतरायु दोषु ५, हास्यदोषु ६, रतिदोषु ७, अरतिदोषु ८, भयदोषु ९, जुगुप्सादोषु १०, शोकदोषु ११, कामदोषु १२, मिथ्यात्वदोषु १३, अज्ञानदोषु १४, निद्रादोषु १५, अविरतिदोषु १६, रागदोषु १७, द्वेषु दोषु १८, तथा च भणितं–

अन्तराया दान-लाभ-वीर्य-भोगोपभोगगाः।
हासो रत्यरती भीतिर्जुगुप्सा शोक एव च॥ [४१४]
15 कामो मिथ्यात्वमज्ञानं निद्रा चाविरतिस्तथा।
रागो द्वेषश्च नो दोषास्तेषामष्टादशाप्यमी॥ [४१५]

तथा च प्रकारांतरि पुणि अष्टादश दोषु सांभलियइं। रागु १, द्वेषु २, प्रमादु ३, अरति ४, रति ५, भउ ६, शोकु ७, जन्मु ८, चिंता ९, जुगुप्सा १०, मिथ्यात्वु ११, अज्ञानु १२, हास्यु १३, अविरति १४, मदनु १५, निद्रा १६, विषादु १७, अंतरायु १८। तथा चोक्तं–

20 रागद्वेषप्रमादारतिरतिभयशुग्जन्मचिंताजुगुप्सा
मिथ्यात्वाज्ञानहास्याविरतिमदननिद्राविषादान्तरायाः।
संसारावर्त्तगर्त्तव्यतिकरजनका देहिनां यस्य नैते
दोषा अष्टादशाऽऽप्तः स इह तदुदिते काऽस्ति शंकावकाशः?॥ [४१६]

इति श्रीजिनवल्लभसूरिविरचित आप्तपरीक्षा प्रस्तावि[1] अष्टादशदोष विवरणा।

25 §372) तथा चउत्रीस अतिशय सहितु जु सु देवु ति पुणि चउत्रीस अतिशयस्तवन हूंता चउत्रीस अतिशय जाणिया। यथा–

थोसामि जिणवरिंदे अब्भुयभएहिं अइसयगुणेहिं।
ते तिविहा साहाविय कम्मक्खयया सुरकया य॥ [४१७]

'थोसामि' स्तविसु, कउण? 'जिणवरिंदे'। जिन उपशांत मोहादिक तीहं माहि वर सामान्य केवल- 30 ज्ञानीया। तीहं माहि[1] तीर्थंकरनाम कर्म्मोदयवसइतउ इंद्र जिनवरेंद्र भाषइंत ति स्तविसु इसउ क्रियासंबंधु करियउ। किसी परि स्तविसु? 'अइसयगुणेहिं'। अतिशय ति कहियइं जि त्रैलोक्य माहि

§371) 1 Bh. omits -प्रस्तावि। §372) 1 Bh. drops words between तीहं माहि...तीहं माहि।

अनेरा कही रहइं हुयइ नहीं। तेई जि गुण संश्रयणीयता करी धरणीयता करी आधेय[1] अतिशयगुण जिणि कारणि अनेरा रहइं न हुयइं। तिणि कारणि 'अब्भुयभूय' किसउ अर्थु? आश्चर्यभूत चित्रता प्राप्त तींहं करी। ति पुणि अतिशय तिविहा, त्रिहुं भेदे, तेई जि त्रिन्हि भेद कहियइं। साहाविये़ति। एकि स्वाभाविक जि सहजि स्वभावि हुयइं ति स्वाभाविक। कम्मक्खयया इति कर्म्म ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहनीय अंतराय नाम चत्तारि घातिकर्म्म तींहं नउ क्षउ अपुनर्भवता करी विनासु तेह हूंता जि हुयइं 5 ति कर्म्मक्षयज कहियइं। सुरकया येति, सुर देव तेहे कृत सुरकृत कहियइं। तत्र जि स्वाभाविक ति चत्तारि, जि कर्म्मक्षयज ति इगार, जि देवकृत ति इगुणवीस। सव्वइ मिलिया चउतीस।

§373) ति चउतीसइ जहक्कमि करी कहइ–

देहं विमलसुयंधं आमयपासेहिं वज्जियं अरयं।
रुहिरं गोखीराभं निविसं पंडुरं मंसं॥   [४१८]   10
आहारा नीहारा अदिस्सा मंसचक्खुणो सययं।
नीसासो य सुयंधो जम्मप्पभिई गुणा एए॥   [४१९]

देहं विमलसुगंधं इति। तीर्थंकर तणउ देहु विमलु कनक जिम मलरहितु। किसउ अर्थु? स्वेद दुर्गंध रहितु सुरभि कमल जिम सुरभि सुगंधु हुयइ। तथा 'आमयपासेहिं वज्जियं'–आमय रोग, तेई भणित पाशा बंधनरज्जु वेढ तेहे करी वर्जितु रहितु। तथा अरयं जिम आरीसइ रजु न लागइं तिम 15 तिणि रजु न लागइं तिणि कारणि अरजु एवं गुणविशिष्टु देहु एकु स्वाभाविकु अतिसउ। १। रुधिर रक्तु अनइ आमिषु मांसु पंडुरं गोखीराभं[1] ति[2] गाइ ना दूध सरीखउं। अनइ निर्व्विसु पवित्रु, किसउ अर्थु? पूति दुर्गंध रहितु। एउ बीजउ स्वाभाविकु अतिसउ। २। आहारा नीहारा अदिस्सा मंसचक्खुणो इति मंसचक्खु, छद्मस्थु जीवु कहियइ जु[3] आंखि करी देखइ ज्ञानदृष्टि करी न देखइ सु मंसचक्खु कहियइ। तेह रहइं तीर्थंकर तणा आहारनीहारपानभोजनविधि लघुवृहन्नीतिविधि अदिस्सा हुंति दृष्टिगोचर 20 न हुयइं। एउ त्रीजउ स्वाभाविकु अतिशउ। ३। नीसासो य सुयंधो इति। नीसासु मुखवातु सुगंधु सुगंध कमलगंधबंधुरु। एउ चउथउ स्वाभाविकु अतिशउ। ४। ए चत्तारि[4] अतिशय गुण जन्मप्रभृति जन्म लगी हुयइं।

§374) अथ एकादश कर्म्मक्षयज कहियइं[1]।

खित्ते जोयणमित्ते जं जिय कोडीसहस्स सो माणं।   25
सव्वसमासाणुगयवयणं धम्मावबोहयरं॥   [४२०]

जोयण मात्र क्षेत्र माहि जु देव मनुष्य तिर्यंच जीव कोटि सहस्र तणउं मानु समाइयउं हुयइ सु कर्म्मक्षयज अतिशय माहि पहिलउ अतिसउ। १। जु वचनु सव्वसमासाणुगयं–सर्व देव मानव तिर्यंच कहियइं तींहं नी भाषा संस्कृत प्राकृत अपभ्रंसादिक तींहं रहइं अनुगतु सरीखउं। तथा धर्म्मावबोधकर– धर्म्मतत्त्वज्ञापकु। तथा च भणितं–   30

वासोदगस्स व जहा वन्नाई हुंति भायणविसेसा।
सव्वेसिं पि सभासा जिणभासा परिणमइ एवं॥   [४२१]

इसउं वचनु बीजउ अतिसउ। २।

§372) 2 Bh. drops words between सा···आधेय। §373) 1 Bh. omits. 2 Bh. omits. 3 Bh. omits. 4 Bh. चयारि। §374) 1 Bh. कहइ।

प्रदक्षिणावर्त्त चालतां पाय अधोगत आकाश सांचरियां नव हेमकमल देव करइं । एउ पांचमउ अतिसउ । ५ । एकु मूल रूपु पूर्वाभिमुखु बीजां त्रिन्हि रूप दक्षिणपश्चिमोत्तराभिमुख देव करइं इति चउमुहु भगवंतु समवसरण माहि यइसइ । एउ चउमुखतारूपु छट्ठउ अतिसउ । ६ । प्राकारत्रिकु रूप्यसुवर्णरत्न निर्मितु देव करइं । एउ सातमउ अतिसउ । ७ । स्वर्णमणिमय चत्तारि सीहासण देव करइं । एउ आठमउ अतिसउ । ८ । स्वामिवाणी पुष्टिकारणि आकाशि देवदुंदुभि देव वायइं । एउ नवमउ 5 अतिसउ । ९ । साधिकयोजनविस्तारि छायामंडलु जिनतनुप्रमाण द्वादशगुण समुच स्वर्णरत्नविनिर्मितु अशोकवृक्षु देव जिन ऊपरि करइं । एउ दसमउ अतिसउ । १० । मार्गि कंटक अधोमुख देव करइं । एउ इगारमउ अतिसउ । ११ । लोचकरणानंतरु इंदु जिनमस्तकि अनइ कूर्चि वज्र फेरइ । नखे पुणि वज्र फेरइ[1] तिणि कारणि केशनख तणी वृद्धि न हुयइं अवस्थितइ जि हुयइ । एउ बारमउ अतिसउ । १२ । पांचइ इंद्रियार्थ शब्दरूपरसगंधस्पर्श लक्षण अनुकूलइ जि हुयइं, इंद्रियदुखदायक प्रतिकूल न हुयइं । 10 एउ तेरमउ अतिसउ । १३ । हेमंतशिशिरवसंतग्रीष्मवर्षाशरत् इसे नामे प्रसिद्ध छइं छ ऋतु ति छ इ रितु तीर्थंकर रहइं इंद्रियानुकूल जिम हुयइं तिम सुर करइं । एउ चउदमउ अतिसउ । १४ । समवसरणभूमितलि गंधोदकवृष्टि मेघकुमार देव करइं । एउ पनरमउ अतिसउ । १५ । सुरभिपारिजात पंचवर्णकुसुम तीहं तणी अधोवृंत जानुमान वृष्टि समवसरणभूमितलि देव करइं । एउ सोलमउ अतिसउ । १६ । मार्गि शकुन प्रदक्षिणावर्त्त अनुकूल देव करइं । ए सतरमउ अतिसउ । १७ । पवनु वाउ अनुकूलु 15 वृष्टिसंमुखु वाइ देवप्रयत्नवसइतउ । एउ अढारमउ अतिसउ । १८ । मार्गि जिनु विहरइ जेतीवार तेतीवार द्रुम वृक्ष तीहं रहइं जिन प्रति आनति प्रणामु देव करावइं । एउ इगुणवीसमउ अतिसउ । १९ ।

§377) भयणवइ इति भवनपति व्यंतर ज्योतिष्क वैमानिकलक्षण चतुर्विध देव समवसरण माहि जघन्यवृत्ति जेतीवार अतिथोडा तेतीवारही कोटिमात्र हुयइं । इंतेहि य जंतेहि येति–शोभि सम्यक्त्वु तेह निमित्तु तेह तणइ कारणि आवते[1] देवे अथवा संसयत्थीहिं संशयार्थिभिः किसउ अर्थु ? संशय एव अर्थु 20 प्रयोजनु आगमनकारणु जीहं रहइं ति संसयार्थी कहियइं । संसय ऊतारिवा कारणि आवते देवे जंतेहि य कार्यि सरिइ हूंतइ जायते तिहां हूंता[2] आत्मस्थानक प्रति जायते[3] देवे करी जिनपादमूलु सदा अविरहितु जु हुयइ । चउरो जम्मप्पभई ति–चत्तारि अतिसय जन्म प्रभृति । एकादश अतिसय केवलज्ञानि ऊपनइ हुयइं । एकोनविंशति अतिसय देवजनित । सव्वे मिलिया चउत्रीस अतिसय जिन तणा थांदउं स्तवउं । चउतीस जिणाइसया चउत्रीससंख्य जिणाइसया इति जिनसंबंधियां अतिसय महिमाप्रकार । एवं इसी परि 25 समासेणं संक्षेपिहिं मइं वन्निया मइं वर्णविया कहिया । तीहं चउत्रीस अतिसय तणइ भणनि करी जिनवृषभ तीर्थनाथ मू ऊपरि संतुष्ट हूंता सुयनाणु आगमार्थपरिज्ञानु अनइ भवांतरिहिं बोधिलाभु सम्यक्त्वप्राप्ति दिउं इति चउत्रीस अतिसय स्तव विवरणं संपूर्णं ।

ईहं चउत्रीस अतिसयसहित देवविषइ देवबुद्धि । तथा चोक्तं–

सर्वज्ञो जितरागादिदोषस्त्रैलोक्यपूजितः । 30
यथास्थितार्थवादी च देवोऽर्हन् परमेश्वरः ॥ [४३१]
ध्यातव्योऽयमुपास्योऽयमयं शरणमिष्यतां ।
अस्यैव प्रतिपत्तव्यं शासनं चेतनाऽस्ति चेत् ॥ [४३२]

---

§376) 1 Bh. drops words between फेरइ...फेरइ । §377) 1 Bh. अवते । 2 Bh. हूंते । 3 Bh. जाते ।

§378) इसी परि जिम शास्त्र माहि देवबुद्धिविधि मुक्ति भणी छइ तिम करेवी ।

ये स्त्रीशस्त्राक्षसूत्रादिरागाद्यंककलंकिताः ।
निग्रहानुग्रहपरास्ते देवाः स्युर्न मुक्तये ॥ [४३३]
नाट्याट्टहाससंगीताद्युपप्लवविसंस्थुलाः ।
लंभयेयुः पदं शांतं प्रपन्नान् प्राणिनः कथं ॥ [४३४]

स्त्री राग तणउं चिन्हु शस्त्रु आयुधु द्वेष तणउं चिन्हु, अक्षसूत्रु जपमालिका मोह तणउं चिन्हु, जि देव वहइं ति देव रागादिकहं अंकहं[1] कलंकहं दोषहं करी कलंकित दूषित तथा निग्रहानुग्रहपर प्रसादाऽप्रसादकर हुयइं । ति देव मुक्तिनिमित्तु न हुयइं । तथा नाट्यादिकहं सदोषपुरुषचेष्टितहं करी सहित जि देव हुयइं ति देव किसी परि सेवक प्राणियर्गा रहइं शांतु पदु मुक्ति लभाडइं पमाडइं ? इसी परि प्रतिषेध-
10मुखि जिम शास्त्रमध्यविभागि देवबुद्धि कही छइ तिम करेवी ।

§379) तथा प्राणातिपात मृषावाद अदत्तादान मैथुन परिग्रहादि दोषवर्जितु[1] गुरु तेह नइ विषइ गुरुबुद्धि । अथवा देसकुलादि छत्रीस गुण सहितु जु हुयइ सु गुरु कहियइ । तथा च भणितं–

देस १ कुल २ जाइ ३ रूवी ४ संघयणी धिइजुओ ५ अणासंसी ६ ।
अविकत्थणो ७ अमाई ८ थिरपरिवाडी ९ गहियवक्को १० ॥ [४३५]
15 जियपरिसो ११ जियनिद्दो १२ मज्झत्थो १३ देस १४ कालभावन्नू[2] १५ ।
आसन्नलद्धपइभो १६ नाणाविहदेसभासन्नू १७ ॥ [४३६]
पंचविहे आयारे जुत्तो २२ सुत्त २३ त्थ २४ तदुभयविहिन्नू[3] २५ ।
आहरण २६ हेउ २७ कारण २८ नयनिउणो २९ गाहणाकुसलो ३० ॥ [४३७]
ससमयपरसमयविऊ ३१ गंभीरो ३२ दित्तिमं ३३ सिवो ३४ सोमो ३५ ।
20 गुणसयकलिओ ३६ जुग्गो पवयणसारं परिकहेउं ॥ [४३८]

§380) आर्यदेशमध्यि ऊपनउ सुखावबोधवचनु हुयइ इति देशगुणु । १ । पितृवंशु कुलु इक्ष्वाकादिकु ज्ञातकुलु महाव्रतभारिहिं थाकइ नहीं इति कुलगुणु । २ । मातृकी-जाति सुद्धजाति विनयवंतु हुयइ इति जातिगुणु । ३ । यत्राकृतिस्तत्र गुणा भवंति इति रूपगुणु । ४ । संहनन धृतिसहितु व्याख्यानादिकहं करी थाकइ नहीं इति संहननधृतिगुणु । ५ । अणासंसी श्रोतृ लोक कन्हा वस्त्रादिकु
25कांई वांछइ नहीं । ६ । अविकत्थणु हितमितवक्ता । ७ । अमाई मायारहितु सर्वहीं बोले विश्वासपात्रु हुयइ । ८ । थिरपरिपाडी सूत्रार्थ अविस्मरणस्वभावु । ९ । गाह्यवाक्यु अखंडितशासनु हुयइ । १० । जितपरिषत् राजादिकहीं नी सभा माहि क्षोभि न जाइं । ११ । जितनिद्रु निद्राप्रमादवंत शिष्य सुखिहिं यूझवइ । १२ । मध्यस्थु सर्वशिष्यहं रहइं समचित्तु हुयइ । १३ । देशभावज्ञु । १४ । कालभावज्ञु । १५ । सुखिहिं देसादिकहं माहि विहरइ । १५ । आसन्नलब्धपइभो परवादि उत्तरदान समर्थु
30हुयइ । १६ । नानाविह देशभासा जाणणहारु नानादेस जाति शिष्य सुखिहिं परीठवइ[1] । १७ । ज्ञानाद्याचारपंचकवंतु श्रद्धेयवचनु हुयइ ग्राह्यवचनु हुयइ इत्यर्थः । २२ । सूत्रार्थ तदुभयविधिज्ञु उत्सर्गापवाद विस्तारु यथोक्तु जाणइ[2] । २५ । हेतूदाहरण निमित्त नय प्रपंच चतुरु अनाकुलु थिकउ

§378) 1 B. Bh अकहं । §379) 1 Bh.–विवर्जितु । 2 Bh. भावन्नू । 3 Bh. विहन्नू ।
§380) 1 Bh. probably परिठवइ । 2 Bh. जाणिइ ।

हेत्वादिक परवादि सभा माहि बोलइ । २९ । गाहणाकुसलो अनेक युक्तिहिं करी परीठवइ । ३० । स्वसमयपरसमयज्ञु सुखिहिं स्वसमयस्थापना परसमयनिराकरणा करी सकइ । ३१ । गंभीरु अलब्धमध्यु । ३२ । दित्तिमंतु परहं पराभवी न सकियइं । ३३ । सिव रहइं करणु इणि कारणि सिवु । ३४ । तींहं महात्मा करी सहिति देसि मारी प्रभृतिक उपद्रव उपसमनभावइतउ । ३५ । सौम्यु सर्वजननयनमन प्रीणनकारकु[3] । ३५ । गुण-शतकलितु[4] विनयादिगुणशतयुक्तु । ३६ । एवंविधु सूरि प्रवचनसार कहिवा 5 योग्यु कुशलु हुयइ । एवंविध गुणयुक्त गुरु नइ विषइ गुरु बुद्धि ।

§381) तथा धर्म्मि श्रावकधर्म्मलक्षणि अथवा यतिधर्म्मलक्षणि धर्म्मबुद्धि । शुद्ध निःसंशय सम्यक्त्वु कहियइ । तेह सम्यक्त्व तणउ आचारु अष्टप्रकारु कहियइ । यथा–

निस्संकिय १ निकंखिय २ निव्वितिगिच्छा ३ अमूढदिट्ठी य ४ ।
उववूह ५ थिरीकरणे ६ वच्छल्ल ७ पभावणे अट्ठ ८ ॥　　　　[४३९]　10

पूर्व्विहिं जि सम्यक्त्वु कहिउं । तेह नइ विषइ निःशंकितु संदेहरहितु जउ हुयइ तउ आचारु १ संदेहकरणि अतीचारु । १ । निकांक्षु किसउ अर्थु ? जिम जिनु देवता तिम ईश्वरादिकु पुणि देवता अथवा जिम जिन तणउं दर्शनु तिम अनेरउं बौद्धादिकहं तणउं पुणि दर्शनु, किसउं देवहं रहइं अनइ धर्म्महं रहइं को भेदु छइ इसी बुद्धि न कीजइं किंतु जिनू जु एकु मुक्तिदायकु देवु जिनधर्म्मू जु एकु मुक्तिदायकु इसी बुद्धि निश्चल जउ[1] हुयइ तउ निःकांक्षताचारु २ अनेरइ प्रकारि अतीचारु । २ । निव्वितिगिच्छा 15 जिनधर्म्मफलविषइ संदेहु न कीजइं तउ निव्वितिगिच्छा आचारु ३ संदेहु कीजइ तउ अतीचारु । ३ । अथवा विचिकित्सा साधु[2]निंदा न कीजइं तउ आचारु ३ कीजइ तउ अतीचारु । ३ । अमूढदिट्ठि जु मिथ्यादृष्टि तणउ अतिसउ देखी करी एहू काइं साचउं तत्त्वु छइ इसी बुद्धि न करइं सु अमूढदृष्टि । यथा –　20

धिज्जाईण गिहीणं पासत्थाइण वा वि दट्ठूणं ।
जस्स न मुज्झइ दिट्ठि अमूढदिट्ठिं तयं बिंति ॥　　　　[४४०]

अत्र सुलसा श्राविका नउ दृष्टांतु जाणियउ । अमूढदृष्टिभावु आचारु ४ मूढदृष्टिभावु अतीचारु । ४ । उपबृंहा प्रशंसा जिणि समइ जि साधु श्रावक उत्कृष्ट क्रियाकारक गीतार्थ हुयइं तींहं नी अनुमोदना आचारु ५ अवगणना अतीचारु । ५ । थिरीकरणु अभिनव प्रतिबुद्धहं रहइं धर्म्मोपदेशवाक्य-दानादिकहं करी धर्म्म नइ विषइ थिरीकरणु दृढताकरणु सु थिरीकरणाचारु ६ न कीजइं तउ अतीचारु 25 ६ । वाच्छल्यु शक्तिसंभवि हूंतइ अशनपानवस्त्रतांबूलद्रव्योपष्टंभ प्रदानादिकु सु करइ तउ[3] आचारु[3] । अत्र भरत चक्रवर्त्ति दृष्टांतु ७ । न करइं तउ अतीचारु । ७ । प्रभावना शक्ति अनुसारि श्रावकहीं करेवी जिम संप्रति राजेंद्रि कीधी । साधु पुणि प्रभावक आठे भेदे हुयइं यथा–

पावइणी १ धम्मकही २ वाई ३ नेमित्तिओ ४ तवस्सी य ५ ।
विज्जा ६ सिद्धो ७ य कई[4] ८ अट्ठेव पभावगा भणिया ॥　　　　[४४१]　30

पावइणी सिद्धांतार्थ प्रदाननिपुणु । १ । धम्मकही आक्षेपिणी विक्षेपिणी निर्वेदजननी संवेगजननी [3] चतुर्विध कथाकथनि करी भव्यबोधकारकु । २ । राजसभा माहि प्रतिवादिविजयकारकु वादी । ३ । अष्टांगनिमित्तबलि अतीतानागतवर्त्तमानवस्तुकथकु नैमित्तिकु । ४ । तवस्सी षष्ठाष्टमादिकोत्कृष्टतपश्चरण-

§380) 3 Bh. संप्रीणन। 4 Bh. गुणशतयुक्तु and then drops words till युक्त। §381) 1 Bh. omits. 2 Bh. जिनमुनि। 3 B. omits. 4 B. क्वी।

करण परायणु । ५ । विज्ञा विद्यावंतु । ६ । सिद्धु सिद्धमंत्रचेटकु । ७ । कवि कवित्वकला करी राजादि सभारंजकु । ८ । ए आठ प्रभावक भणिया । जिगसासणि इसी परि प्रभावना करणु आचारु ८ । प्रभावना तणइ अकरणि अतीचारु । ८ । अतीचारु पुणि सगले शक्ति संभविहिं ति जाणिवउं । ए आठ दर्शनविषइ अतीचार साधु जिम श्रावकहीं रहइं संभवइं ।

5 §382) अथ चारित्रातिचार कहियइं–

पणिहाण जोगजुत्तो पंचहिं समिईहिं तीहिं गुत्तीहिं ।
एस चरित्तायारो अट्ठविहो होइ नायव्वो ॥ [४४२]

पांच समिति त्रिन्हि गुप्ति यथा–

जुगमित्तंतरदिट्ठी पयं पयं चक्खुणा विसोहिंतो ।
10 अव्वक्खित्ताउत्तो[1] इरियासमिओ मुणी होइ ॥ [४४३]

जुगु जूंसरु तन्मात्रांतरदृष्टि किसउ अर्थु ? जेवडउं जूंसरु हुयइ तेतली भुइं दृष्टि देखी करी 'पयं पयं चक्खुणा विसोहिंतो' पगु पगु चक्खु करी विमोयतउ, किसउ अर्थु ? जिहां पगु मूंकिसिइ तिहां भुइं सोधतउ दृष्टि करी त्रसथावरजीवरहित चीतवतउ । 'अव्वक्खित्तु' अव्याक्षिप्तु कार्यांतर करण रहितु 'आउत्तो' आयुक्तु सावधानचित्तु ईर्यासमितु मुनि हुयइ इति गाथार्थः । ए ईर्यासमिति ।

15 कज्जे भासइ भासं अणवज्जमकारणे न भासइ य ।
विकहविसुत्तियपरिवज्जिओ य जइ भासणासमिओ ॥ [४४४]

कार्यि ज्ञानदानादि प्रयोजनि ऊपनइ भाषा 'भासइ' बोलइ । सा ई भाषा अनवद्य पापरहित बोलइ । अकारणे 'न भासइ य' ज्ञानादिकारण पाखइ बोलइ नहीं । 'विकहविसुत्तियपरिवज्जिओ य' विकथा राजकथा भक्तकथा स्त्रीकथा देशकथा लक्षण कहियइं । तथा विस्रोतसिका दुष्टांतर्जल्परूपा तीहं
20 विकथा विस्रोतसिका करी रहितु विवर्जितु 'विकहविसुत्तियपरिवज्जिओ' कहियइ । चकारइतउ अनेराइं वचनदोषरहितु वचनगुणसहितु यति भाषासमितु कहियइ । ए भाषासमिति ।

बायालमेसणाए भोयणदोसे य पंच सोहेइ ।
सो एसणाइ समिओ आजीवी अन्नहा होइ ॥ [४४५]

सोळ उद्गमदोष, सोळ उत्पादना दोष, दस एषणा दोष, पांच भोजनदोष इसा जु बइतालीस
25 एषणादोष, पांच भोजनदोष, सोधइ परिहरइ [2] साधु एषणासमितु हुयइ । अन्नहा अनेरइ प्रकारि आजीवी आजीवकु हुयइ । संजमु तेह रहइं आजीवना हेतु हुयइ, मोक्षनिमित्तु न हुयइं । ए एषणासमिति ।

पुव्विं चक्खु परिक्खिय पमज्जिउं जो ठवेइ गिन्हइ य ।
आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिओ मुणि होइ ॥ [४४६]

जिणि प्रदेसि काइं वस्तु मेल्हिसिइं अथवा जेह प्रदेस हूंतउं काइं भाजनादिकु वस्तु लेसिइ [2]
30 प्रदेसु पूर्विहिं चक्खु करी परीखी देखी रजोहरणि करी पउंजी तउ पाछइ ठवइ वस्तु मेल्हइ अथवा लियइ जु सु आदानभांडमात्र निक्षेपणासमितु मुनि कहियइ । ए आदानभांडमात्र निक्षेपणासमिति ।

उच्चारपासवण खेल जल्ल सिंघाण य पाणविही ।
सुविवेइए पएसे निसिरंतो होइ तस्समिओ ॥ [४४७]

§382) 1 Bh. उव्वक्खित्ता । 2 Bh. omits ।

उच्चारु पुरीषु वडी नीति पासवणु मूत्रु लहुडी नीति । खेलु श्लेष्मा । जल्लु देह तणउ मलु । सिंघाणु नासिकामलु एतलउं उच्चारादिकु वस्तु । चकारइतउ असुद्धभक्तपानकादिकु वस्तु सु विवेचिति दृष्टि दृष्टि रजोहरण प्रतिलेखिति प्रदेसि जु विसृजइ परिठवइ सु मुनि तस्समिओ होइ । उच्चार पासवण खेल जल्ल सिंघाण पारिठावणियासमितु हुयइ । ए उच्चार पासवण खेल जल्ल सिंघाण पारिट्ठावणियासमिति । ए पांच समिति[3] ।

§383) अथ त्रिन्हि गुप्ति कहियइं । मनोगुप्ति वचनगुप्ति कायगुप्ति । तत्र—

विमुक्तकल्पनाजालं समत्वे सुप्रतिष्ठितं ।
आत्मारामं मनस्तज्ज्ञैर्मनोगुप्तिरुदाहृता ॥　　[४४८]

विमुक्तकल्पनाजालु विषयवासनारहितु । समत्वि सुप्रतिष्ठितु समता वर्त्तमानु । आत्मारामु आत्माइं जि विषइ आ सामस्त्य करी रमइ आत्मारामु । मनु चित्तु । तज्ज्ञइं मनोगुप्तिपंडितइं मनोगुप्तिरुदाहृती मनोगुप्ति कही । ए मनोगुप्ति ।

संज्ञादिपरिहारेण यन्मौनस्यावलंबनं ।
वाग्वृत्तेः संवृतिर्वा या सा वाग्गुप्तिरिहोच्यते ॥　　[४४९]

शिरःकंपन हस्तचालनादिक जि छइं संज्ञाविधि निषेधसूचक तीहं नइ परिहारि सहित वाग्वृत्ति तणी संवृति निरोधु तेहतउ जु मौन तणउं अवलंबनु स वाग्गुप्ति इह ईहां जिनशासनि उच्यते कहियइ । ए वाग्गुप्ति ।

उपसर्गप्रसंगेऽपि कायोत्सर्गजुषो मुनेः ।
स्थिरीभावः शरीरस्य कायगुप्तिर्निगद्यते ॥　　[४५०]

'उपसर्ग' देव मनुष्य पशुविहित उपद्रव । तीहं तणइ प्रसंगिहिं संबंधिहिं हूंतइ कायोत्सर्गि वर्त्तमान मुनि रहइं जु शरीर स्थिरीभावु निश्चलता सु कायगुप्ति 'निगद्यते' कहियइ । ए कायगुप्ति । पांचहीं समिति विषइ त्रिहुं गुप्ति विषइ प्रणिधानु सावधान पणउं तेह तउ जोगु संबंधु तिणि करी जु जुत्तु मनु कीजइ एउ अष्टविधु चारित्राचारु । विपरीतु अतीचारु । तथा च भणितं—

एताः चारित्रगात्रस्य जननात् परिपालनात् ।
संशोधनाच्च साधूनां मातरोऽष्टौ प्रकीर्त्तिताः ॥　　[४५१]

अष्टप्रवचनमातृविधि प्रतिपालना लक्षणु अष्टविधु चारित्राचारु । अविधि-पालनालक्षणु अष्टविधु अतीचारु । यद्यपिहिं मुख्यवृत्ति करी चारित्राचारु साधु रहइं कहिउ छइ तथापिहिं देसविरतही रहइं देसत समितिगुप्तिविधि पालनारूपु आचारु । अविधि-पालनारूपु अतीचारु जाणिवउ । इसी परि आठ-त्री-चउवीस अतीचार ज्ञान-दर्शन-चारित्र विषइया पूर्वभणित पंचहुत्तरि संख्यइं अतीचारहं सउं मिलिया हूंता नवाणवइ संख्य अतीचार हूया । पाछिला 'सव्वे चरित्ते य,' ईहां छइ चकारु तिणि करी जाणिवा ।

§384) तथाहि द्वादशविधु तपु उत्तरगुणप्रत्याख्यानप्रस्तावि कहिउ ... नइ विषइ अविधिकरणादिलक्षण द्वादश अतीचार । त्रिन्हि वीर्यातीचार मनो... म त्रिविध वीर्य रहइं धर्म्म नइ विषइ सम्यक् प्रयोग नइ अभावि त्रिन्हि ... पांच

§382) 3 B. omits '...

संलेखनातीचार। शंकादि पांच सम्यक्त्वातीचार सर्वे मिलिया पंचत्रीस । नवाणवइ सउं मिलिया चउवीसउं सउ अतीचार हुयइं । तथा च भणितं—

पण संलेहण ५ पन्नरस कम्म १५ नाणाइ अट्ठ पत्तेयं २४ ।
बारस तव १२ विरइतियं ३ पण सम्म ५ वयाइं पत्तेयं ६० ॥ [४५२]

'सुहुमो य बायरो वा' 'सुहुमु' सूक्ष्मु अज्ञातु अथवा अल्प प्रायश्चित्तशोध्यु । 'बायरु' स्थूलु व्यक्तु ज्ञातु अथवा गुरुप्रायश्चित्तशोध्यु । 'तं निंदे' सु निंदउं आपणपइं वरूयउं[1] कीधउं इसी परि गरिहामि । गुरु साखि वरूउं[2] कीधउं इसी परि गरिहउं । २ ।

§385) प्राइहिं सव्वेइ अतीचार परिग्रह हूंता संभवइं । तिणि कारणि सामान्यहिं पहिलउं परिग्रहप्रतिक्रमणु कहइ—

10 दुविहे परिग्गहंमि सावज्जे बहुविहे य आरंभे ।
कारावणे य करणे पडिक्कमे देवसियं सव्वं ॥ [४५३]

द्विविध सचित्ताचित्त रूपपरिग्रह विषइ सावद्य सपाप बहुविध अनेक प्रकार आरंभ प्राणातिपातादिक तींहं नइ विषइ अनेरां कन्हा कारावणु तेह नइ विषइ, आपणपइं करणु तेह नइ विषइ । चकारइतउ किहांई अनुमतिहीनइ विषइ । 'जो मेऽतिचारु' इसउं पाछा हूंतउं आवइ[1] । जु मूं रहइं 15 अतीचारु आविउ सु निरवसेषु सगलु 'पडिकमे देसियं सव्वं' । आर्षत्वइतउ दैवसिकं पद तणइ स्थानकि 'देसियं' इसउं हुयइ । 'पडिक्कमे' किसउ अर्थु ? तेह दैवसिक सगलाई अतीचार हूंतउ नियर्त्तउं । राई पडिकमणइ 'पडिकमे राईयं सव्वं' कहिवउं । पक्खिय पडिकमणइ 'पडिकमे पक्खियं सव्वं' कहिवउं । चउमासा नउ पडिकमणइ 'पडिकमे चउमासियं सव्वं' कहिवउं । संवच्छरिय पडिकमणइ 'पडिकमे संवच्छरियं सव्वं' कहिवउं । अर्थु सर्वत्र पूर्व जिम, नवरं राईय अतीचार चउमासीय अतीचार 20 संवच्छरीय अतीचार हूंतउ निवर्त्तउं इति नाम भेदु करीवउ । अथवा अशुभभाव हूंतउ निवर्त्ती करी शुभभाव प्रतिक्रमउं वली जाउं इउ प्रतिक्रमण नउ अर्थु । यदुक्तं—

स्वस्थानाद्यत् परस्थानं प्रमादस्य वशाद्गतः ।
तत्रैव क्रमणं भूयः प्रतिक्रमणमुच्यते ॥ [४५४]

§386) अत्र महापरिग्रहारंभनिवृत्तानिवृत्तहं[1] बिहुं श्रेष्ठिहिं तणउं कथानकु गुणदोषविकासकु[2] 25 कहियइ ।

नाशिक्यु नामि नगरु । तिहां नंद नामक बि श्रेष्ठि वाणिज्यकला-कुसल[3] हूया तींहं माहि एकु गृहिधर्म्मपरायणु व्यवसायशुद्धि जुकु[4] हूंतउं आपणां गुणहं करी धर्म्मनंदु इसी ख्यातिप्राप्तु हूयउ । बीजउ लोभाभिभूतु कूटवाणिज्यकला लगी लोभनंदु[5] इसी ख्यातिप्राप्तु हूयउ । अनेरइ दिवसि सरोवरि ख्णीतइ पूर्वसंगोपित सुवर्ण्णमय कुसा नीसरिया । लोहमय[6] बुद्धिवसइतउ महंतइ खनकइं रहइं आपिया । 30 तेहे पुणि ति कुसा ले करी धर्म्मनंद[7] रहइं दिखालिया । कहिउं, 'इंहं वडइं अम्ह रहइं घृततैलधान्यादि विसाहणउं आपि । तिणि पुणि अतिभारादि कारणि करी सुवर्ण्णमय जाणी करी भणिउं, 'एहे मू रहइं

§384) 1 Bh. वरूयउं । 2 Bh. वरुउं । §385) 1 Bh. adds. छइ । §386) 1 P. omits निवृत्त । 2 Bh. विकासिकु । P. विद्यावकु । 3 Bh.-कुशल । 4 P.-युक्तु । 5 P. लोभिंदु । 6 Bh. लोहमइ । 7 Bh. नंदि ।

काजु नहीं'। तउ पाछइ तेहे ति लोभनंद[7] रहइं दिखालिया । तिणि पुणि ति सुवर्ण्णमय जाणिया। पाछइ शीघ्रु हाट माहि लांखी करी तींहं रहइं विसाहणउं घणउं दीधउं । तींहं कन्हा कुशा नी उत्पत्ति पूछी करी कहइ, 'मूं रहइं लोह माहि काजु छइ । तुम्हे कुशा मूंहीं जि देजिउ, हउं तुम्ह रहइं घणउं विसाहणउं देसु'। तउ पाछइ ति ओड[8] हृष्ट तुष्ट हूंता तींहीं जि रहइं नितु नितु कुशा[9] आणी दियइं, विसाहणउं लियइं। अतिलोभवसइतउ अल्पमूल्य वडइं सुवर्ण्णकुशा[9] लियतउ[10] तृप्त[11] न थाइं। पुत्रहं पूछताइं हूंतां कुशां नउ परमार्थु कहइ[12] नही। अनेरइ दिवसि कुशाग्रहणविषइ शिक्षा पुत्रहं रहइं दे करी प्रत्यासन्नग्रामि मित्र नइ विषइ प्रेमु वहतउ वीवाहि गयउ। खनके कुशा[13] वि आणी करी श्रेष्ठिपुत्रहं हाथि आपिया। तेहे कोप वशइतउ आस्फाली करी फोडिया। सुवर्ण्णमय झलहलता देखी[14] लोकु घणउ मिलिउ। तेतलइ श्रेष्ठि पुणि गाम हूंतउ आविउ[15]। सु वृत्तांतु जाणी करी श्रेष्ठि अति विषादवंतु[16] हूयउ रीस वसइतउ श्रेष्ठिइं आपणाई[17] जि पग पाहणि आहणी भागा किसइ कारणि जइ ए न हुउतइ तउ हउं गामि न जायतइ[18] धिग् हुउ ईहं रहइं इति पादनिंदा करतउ आर्त्तरौद्रध्यानपरु हूयउ। राजपुरुषहं कुशावृत्तांतु राजा आगइ सांभलिउ। राजेंद्रि खनक पूछिया। तेहे सगलु वृत्तांतु कहिउ। तदनंतरु धर्मनंदु पडिहारकन्हा तेडाविउ लोभनंदु निग्रहाविउ। कृतप्रणाम धर्म्मनंद आगइ राजेंद्रि कहिउं, 'कुशा किसइ कारणि तइं न लीधाई। सुवर्ण्ण तणा किसइ कारणि न कहियाई।' तिणि भणिउं, 'परिग्रहप्रमाणव्रतभंगभयवसइतउ[19] तथा चोरितवस्तुग्रहणनियमइतउ न लीधाई। असत्यवचनभाषणइतउ[20] न कहियाई।'

§ 387) तउ राजा श्रेष्ठिगुणरंजितु हूंतउ धर्म्मनंद नी प्रशंसा करइ। 'अहो पापभीरुता। अहो निर्लोभता। अहो विवेकिता[1]। श्रेष्ठिन्! तउं[2] सर्वहीं पूज्य।' इसी परि वार वार सभा माहि वर्ण्णवी करी वस्त्रालंकारसत्कारकरणपूर्वु आवासि धर्म्मनंदु पाठविउ। लोभनंद आगइ राजा कहइ, 'रे पश्यतोहर! अज्ञान खनक[3] किसइं कारणि तइं मुसिया।' इसउं भणी करी सर्वस्वहरणु विडंबनादिकु करी महाकष्टि लोभनंदु राजेंद्रि मेल्हिउ। धर्म्मनंदु लोभवर्ज्जितु इह परत्र कीर्तिपुण्यभाजनु हूयउ। लोभनंदु लोभाभिभूतु इह परत्र अकीर्त्ति अधर्म्म भाजनु हुयउ।

> उच्चैर्महारंभपरिग्रहस्य विपाकमेवं विरसं निशम्य।
> संसारभूमीरुहवीजभूते तदत्र भव्या दधतां निवृत्तिम्॥ [४५५]

§ 388) अथ ज्ञानातिचारनिंदा कहइ।

> जं बद्धमिंदिएहिं चउहिं कसाएहिं अप्पसत्थेहिं।
> रागेण व दोसेण व तं निंदे तं च गरिहामि॥ [४५६]

जु कर्म्मु इंद्रिए करी बाधउं आत्मासउं क्षीरनीर जिम अथवा अग्निलोह जिम एकरूपता नमाडिउं। जिम सनत्कुमार स्त्रीरत्न नइ अलकसंस्पर्शि करी संभूति मातंग मुनि बाधउं। मांसरसास्वादि करी सोदासि राजकुमारि बाधउं। घ्राणलोभि करी घ्राणप्रियकुमारि बाधउं। रूपरागि करी मथुरावाणियइ बाधउं। शब्द तणइ संगि सुभद्रा श्रेष्ठिनी बाधउं। तिम तथा चउहिं कसाएहिं क्रोधमानमायालोभ लक्षणहं चउं कसायहं करी जु कर्म्मु बाधउं। जिम तीव्रोदयप्राप्ति क्रोधि करी मंडूकी क्षपकि बाधउं।

---

§386) 7 Bh. नंदि। 8 P. उड। 9 P. कुसा। 10 B. L. P. लियइ तउ। 11 Bh. P. तृप्तउ। 12 P. omits. 13 Bh. कुसा। 14 Bh. adds करी। 15 P. omits. 16 P. omits अति। 17 P. आपणी। 18 P. जायतउ। 19 P. परिग्रहप्रमाणव्रतभयभंगवसतउ। 20 B. L. असत्य-भाषणवचन-। §387) 1 P. विवेकता। 2 P. तुं। 3 P. adds किहिं।

अतिशयोदयप्राप्ति मानि करी जिम परशुरामि बाधउं। अतितीव्रोदयप्राप्ति मायागुणि करी जिम धनश्री बाधउं। अतितृष्णोदय संगमि करी मम्मणि बाधउं। तिम किसां इंद्रियहं अनइ कसायहं करी कर्मु बाधउं इत्याह–'अप्पसत्थेहिं' अप्रशस्तइं अस्थानप्रवृत्तहं तथा रागेण वा दृष्टिरागलक्षणु रागु तिणि करी। यदुक्तं–

> कामराग-स्नेहरागावीषत्करनिवारणौ।
> दृष्टिरागस्तु पापीयान् दुरुच्छेदः सतामपि॥ [४५७]

कामरागु स्त्रीरतिस्वरूपु। स्नेहरागु मातृपितृपुत्रपौत्रादिरतिलक्षणु। ति बे ईषत्करनिवारण, किसउ अर्थु? सुरतनिषेधनीय धर्मरतिपरायणहं अनेक जीवहं श्रीजंबूस्वामि जिम निवारितत्वइतउ। 'दृष्टिरागस्तु पापीयान् दुरुच्छेदः सतामपि' दृष्टिरागु मिथ्यादर्शनानुरागु 'सतामपि' साधुहीं रहइं ज्ञानदर्शनचारित्रवंतहीं रहइं दुरुच्छेदु दुक्खनिषेध्यु कष्टनिवारणीउ। परोहित पुत्रभवि सुद्धसंजमपरिणामिहिं मेतार्यजीव रहइं जिनेंद्रधर्म्मु समस्तू प्रशस्तु पुणि जु अशुचि शरीर थिकां रहियइ यु एकु धरुयउं। इसउ दृष्टिरागु दुर्निवारु हूयउ तेह नइ प्रभावि नीचातिनीचि[1] चंडालकुलि मेयकुलि ऊपनउ। तथा रागपदि करी कामराग स्नेहराग पुणि जाणिवा तिणि रागि करी वा 'दोसेण वा' अप्रीतिरूपु द्वेषु तिणि करी जिम गोष्ठामाहिलि बाधउं तिम जु कर्म्मु बाधउं सु कर्म्मु निंदउं गरिहउं। जे किमइ को कहइ इंद्रियादिकइं करी जु कर्म्मु बाधउं सु ज्ञानातिचारु किसी परि हुयइ। तउ[2] कहियइ[1] ज्ञान तणउं फलु विरति स इंद्रियादिजयकरी हुयइ। तथा च भणितं–

> तज् ज्ञानमेव न भवति यस्मिन्नुदिते विभाति रागगणः।
> तमसः कुतोऽस्ति शक्तिर्दिनकरकिरणाग्रतः स्थातुम्॥ [४५८]

इति फल तणी अवहेलना करी ज्ञानातिचारु।

§389) इंद्रियहं करी द्वादशविध अविरति सूचवी। तद्यथा–'बारसविहा अविरई मणइंदिय अनियमो छक्कायवहो' इति। 'चउहिं कसाएहिं' पंचवीसकषाय नवनोकषायत्व भेद सूचविया। तथा च भणितं–

> सोलस जाण कसाया, नव भेया नोकसायाणं।
> कोहो माणो माया लोभो, चउरो य हुंति चउभेया॥
> अण अपच्चक्खाणा पच्चक्खाणा य संजलणा॥ [४५९]
> जल-रेणु-पुढवि-पव्वयराईसरिसो चउव्विहो कोहो।
> तणिसलया-कट्ठ-ऽट्ठिय-सेलत्थंभोवमो माणो॥ [४६०]
> मायावलेह-गोमुत्ति-मिंढसिंग-घणवंसमूलसमा।
> लोहो हलिद्द-कद्दम-खंजण-किमिरागसारिच्छो॥ [४६१]

माया लोभ बे मिलिया रागु कहिइं[1]। क्रोध मान बे मिलिया द्वेषु कहियइं। तउ पाछइ 'चउहिं कसाएहिं' इणिहिं जि करी राग द्वेष बे आव्या। किसइ कारणि वली 'रागेन य दोसेन य' एउ कहियइ! इसउं न कहिवूं। पूर्विहिं एकि एकि करी कर्मबंधु कहिउ। 'रागेन वा दोसेन वा' इणि करी बिहुं बिहुं करी कर्मबंधु कहिउ।

---

§388) 1 Bh. बेव। 2 Bh. omits. §389) 1 Bh. कहियई।

§390) अथवा 'दृष्टिरागेण वा' इणि करी मिथ्यात्वसूचा कीधी। सु पुणि मिथ्यात्वु पंचप्रकारु हुयइ। अभिग्रहि एकांति[1] निश्चयि करी हुयइ सु आभिग्रहिकु। सु पुणि प्राइहिं मिथ्यादर्शनवंतहं दीक्षितहिं जि रहइं हुयइ। १। अनभिग्रहि एकांत अनिश्चयि करी हुयइ सु अनाभिग्रहिकु। सु पुणि सामान्यमिथ्यात्ववंतहं जनहं रहइं प्राइहिं हुयइं। २। अभिनिवेशि अहंकारि करी हुयइ सु आभिनिवेशिकु। सु मिथ्यात्वु निन्हवहं रहइं हुयइं। ३। संशयि करी हुयइ सु सांशयिकु। संत जि छइं जीवादिकपदार्थ तीहं नइं विषइ संशयलगी हुयइ। ४। अनाभोगु अज्ञानु तिणि करी हुयइ सु अनाभोगिकु।[2] पृथिवीकायादिकहं विकलेंद्रियहं असंज्ञियहं संमूर्च्छिम पंचेंद्रियावसानहं सर्वहीं जीवहं रहइं हुयइ सु अनाभोगिकु। ५। तथा च भणितं– 5

आभिग्गहियं अणभिग्गहियं, तह अभिनिवेसियं चेव।
संसइयमणाभोगं, मिच्छत्तं पंचहा एव॥ [४६२] 10

तथा हास्य १ रति २ अरति ३ जुगुप्सा ४ भय ५ शोकलक्षण छ नोकसाय पुरुषवेद स्त्रीवेद नपुंसकवेद लक्षण त्रिन्हि नोकसाय सव्वइ मिलिया नव नोकसाय कहियइं। तथा आगइ 'काएण' इत्यादि करी योग साक्षात्कारिहिं जि कहीसिइं। तउ पाछइ 'जं बद्धमिंदिएहिं' इणि गाहा करी संपूर्ण कर्म्मबंधकारण भणियां। तद्यथा–

बंधस्स मिच्छ ५ अविरइ १२ कसाय २५ जोगु त्ति १५ हेयवो चउरो। 15
पंच दुवालस पणवीस पन्नरस कमेण भेया सिं॥ [४६३]

मिथ्यात्व ५ पूर्विहिं भणियां। अविरति १२ पूर्विहिं भणी। कषाय नोकसाय पंचवीस पूर्विहिं भणिया। जोग १५ भणियइं।

सच्चं मोसं मीसं असच्चमोसं मणं तह वई य।
उरलविउव्वाहारा मीसा कम्मइग मिय जोगा॥ [४६४] 20

जिनोक्त जीवादितत्त्वचिंता प्रवृत्तु साचउं मनु १। मिथ्याशास्त्रचिंता परिणतु मनु मृषामनु २। कूडउं मनु इति पर्यायः। लोकव्यवहारचिंताप्रवृत्तु मनु सत्यमृषु मिश्रु मनु ३। शून्यतापतितु असत्यामृषु मनु न साचउं न कूडउं ४। एवं वचनु पुणि चउभेदि। जीवादितत्त्व सप्तभंग प्रतिपादकु सत्यु वचनु १। मिथ्याशास्त्रार्थ प्रतिपादकु असत्यु वचनु २। लोकव्यवहारभाषाप्रतिपादकु मिश्रितु सत्यासत्यु वचनु ३। स्वापावस्थावचनु मद्यावस्थावचनु सर्वथा शून्यतापतित मन जीव तणउं वचनु असत्यामृषु न साचउं न कूडउं वचनु। ४। 25

तथा औदारिक वैक्रिय आहारक औदारिकमिश्र वैक्रियमिश्र आहारकमिश्र कार्मणलक्षण सात काय।

एवं मन वचन काय सव्वइ मिलिया पनरह जोग एवलइ सत्तावन कर्मबंध हेतु भणिया। ईहं माहि 'अप्पसत्थेहिं' इणि करी कीजइ। पापबंधहेतु जूजूया करी तत्कृत कर्मबंध तणउं प्रतिक्रमणु 'तं निंदे तं च गरिहामि' इणि करी कीजइ। ज्ञानातिचार प्रतिक्रमणु भणिउं। 30

§391) संप्रति सम्यक्त्वातिचार प्रतिक्रमणु अनइ चक्षुदर्शन प्रतिक्रमणु भणइ ४।

आगमणे निग्गमणे, ठाणे चंकमणे अणाभोगे।
अभिओगे अ निओगे, पडिकमे देसियं सव्वं॥ [४६५]

§390) 1 Bh. एकांत। 2 B. omits.

§ 395) धम्मा धम्मागासा तिय तिय भेया तहेव अद्धा य ।
खंधादेस पएसा परिमाणु अजीव चउदसहा ॥ [४७१]

धर्मास्तिकायद्रव्यु अमूर्त्तु लोकव्यापकु परिणामिनित्यु । जीवाजीवगति करी अनुमान प्रमाण गोचरु छद्मस्थहं रहइं । तथा हि–

लोकु धर्मास्तिकायद्रव्य सहितु । जीवाजीवगतियुक्तत्वइतउ । जु धर्मास्तिकायद्रव्य सहितु[1] न हुयइं सु जीवाजीवगति सहितु पुणि न हुयइं जिम अलोकाकाशु । जीवाजीवगति युक्तु लोकु तिणि कारणि धर्मास्तिकायद्रव्य सहितु । एहू जु अर्थु भणिउ । यथा–

जीवानां पुद्गलानां च, गत्युपष्टंभकारणम् ।
धर्मास्तिकायो ज्ञानस्य, दीपश्चक्षुष्मतां यथा ॥ [४७२]

तथा अधर्मास्तिकायद्रव्यु पुणि अमूर्त्तु लोकव्यापकु परिणामिनित्यु जीवाजीवस्थिति करी अनुमान प्रमाण गोचरु छद्मस्थहं रहइं । तथा हि लोकु अधर्मास्तिकायद्रव्य सहितु जीवाजीवस्थिति सहितत्वइतउ जु अधर्मास्तिकायद्रव्ययुक्तु न हुयइं सु जीवाजीवस्थिति सहितु पुणि न हुयइं । जिम अलोकाकाशु । जीवाजीवस्थिति सहितु लोकु तिणि कारणि अधर्मास्तिकाय द्रव्य सहितु । तथा च भणितं–

जीवानां पुद्गलानां च, स्थित्युपष्टंभकारणम् ।
अधर्मः पुरुषस्येव, तिष्ठासोरवनिः समा ॥ [४७३]

§ 396) आकाशु पुणि अमूर्त्तु लोकालोक व्यापकु परिणामिनित्यु सु पुणि अवकाशलिंगगम्यु । तथा च भणितं–

जीवानां पुद्गलानां च, धर्माधर्मास्तिकाययोः ।
बदराणां घटो यद्वदाकाशमवकाशदम् ॥ [४७४]

ए त्रिन्हइ द्रव्य देश प्रदेश भेदइतउ त्रिविध । तथाहि ।

धर्मास्तिकायद्रव्यु । धर्मास्तिकायदेश । धर्मास्तिकायप्रदेश । एवं अधर्मास्तिकायद्रव्यु । अधर्मास्तिकायदेश । अधर्मास्तिकायप्रदेश । तथा आकाशास्तिकायद्रव्यु । आकाशास्तिकायदेश । आकाशास्तिकायप्रदेश । एवं नव अजीवभेद । दशमउ 'अद्धा' कालु स्कंध । देश प्रदेश केवल परमाणुभेदइं करी पुद्गल चउं भेदे । ति पुद्गल मूर्त्तिमंत स्पर्श रस गंध वर्ण शब्द स्वभाव संघात विघात संजात जिनइं कहिया । तथा च भणितं–

स्पर्शरसगंधवर्णशब्दा मूर्त्तस्वभावजाः ।
संघातभेदनिष्पन्नाः पुद्गला जिनदेशिताः ॥ [४७५]

सर्वे मिलिता चतुर्दश अजीवभेद हुयइं । एहू जु अर्थु भणइ–

धम्माधम्मा पुद्गल नह कालो पंच हुंति अजीवा ।
चलसंठाणो धम्मो थिरसंठाणो अहम्मो य ॥ [४७६]

एह नउ अर्थु पूर्वगाह नइ अर्थि भणीतइ सगळु भणिउ ।

अवगाहो आगासं पुग्गलजीवाण पुग्गला चउहा ।
खंधा देस पएसा, परमाणू चेव नायव्वा ॥ [४७७]

§ 395) 1 Bh. adds पुणि न हुयइं । जिम अलोकाकाशु ।

मिच्छादंसणवित्ती ९ अपच्चक्खाण १० दिट्ठि ११ पुट्ठी १२ य।
पाडुच्चिय १३ सामंतोवणिय १४ नेसट्ठि १५ साहत्थी १६ आणवणिय १७॥ [४९४]
वियारणिया १८ अणभोगा १९ अणवकंखपच्चइया २०।
अन्ना पओग २१ समुदाण २२ पिज्ज २३ दोसे २४ इरियावहिया २५॥ [४९५]

5 तत्र ज कायि करी कीजइ स काइकी क्रिया १, अधिकरणि खड्गादिकि करी ज कीजइ स आधिकरणिकी क्रिया २, प्रद्वेषि प्रकृष्टकोपि करी ज कीजइ स प्राद्वेषिकी क्रिया ३, अनेरां प्राणियां तणइ परितापि कष्टि करी ज कीजइ स परितापनिकी क्रिया ४, प्राणातिपाति जीवविनासी करी ज कीजइ स प्राणातिपातिकी क्रिया ५, आरंभि पृथिवीकायाद्युपघाति करी ज कीजइ स आरंभिकी क्रिया ६, परिग्रहि मूर्च्छापरिणामि करी ज कीजइ स पारिग्रहिकी ७, मायाप्रत्यया मायानिमित्ता क्रिया ८, मिथ्यात्व-
10 प्रत्यया मिथ्यात्वहेतुका ९ संयमविघातकारि कषाय तणउं प्रत्याख्यानु परिहारु जिणि क्रिया कीजती हुंती न हुयइं स अप्रत्याख्यान क्रिया १०, रागद्वेषसहित दृष्टिक्रिया दृष्टि ११, रागपूर्व स्त्रीकाय संस्पर्शलक्षण स्पृष्टि क्रिया १२, प्रतीति पूर्वकोत्पन्न क्रोधादि क्रियास्थानु तेह आश्रयी करी ज क्रिया कीधी स प्रातीतिकी १३, समंतइतउ सामस्त्यइतउ उपनिपातु आगमनु स्त्री पशु प्रभृतिकहं जीवहं तणउ जिहां हुयइ स स्थानु समंतोपनिपातु कहियइ। तिहां ज क्रिया हुयइ स सामंतोपनिपातिकी १४, निसृष्टि सहजु तिणि करी ज
15 क्रिया हुयइ स निसृष्टिकी १५, चिरकाल सेवित पापानुष्ठानविषइ जु स्वभावइतउ अनुष्ठानु स नैसृष्टिकी १५, आपणइ हाथि कीधी स्वाहस्तिकी अतिकोपवसइतउ अन्य पुरुषसाध्य ज क्रिया आपणइ हाथि कीजइ स स्वाहस्तिकी १६, आनयनि करी नीपनी आनयनिकी स पुणि भगवंति वीतरागि भणियां छइं जीवादिक तत्त्व तीहं तणउं आपणी बुद्धि करी अनेरइ प्रकारांतरि करी आनयनु प्ररूपणु तिणि करी निष्पन्न आनयनिकी १७, विदारणु परहं रहइं अप्रकाश्यु हुयइ तेह नउं प्रकाशनु तिणि करी निष्पन्न वैदारणिकी १८,
20 अनवभोगा अप्रत्युपेक्षित अप्रमार्जित दुःप्रमार्जित प्रदेसि अज्ञानभावि शरीरादि निक्षेप लक्षणक्रिया १९, अनवकांक्ष क्रिया जिनोक्तानुष्ठान विषइ प्रमादवशवर्त्तिता करी अनादर क्रिया २०, प्रयोगु धावन वल्गनादिकु कायव्यापारु। जीवपीडाकारकु परुषवाक्यादिकु वचनव्यापारु। द्रोहेर्ष्याभिमानादिकु मनोव्यापारु। तेह नइ करणी करी नीपनी प्रायोगिकी २१, समुदानु इंद्रिउ तेह नी क्रिया देशसर्वोपघातरूपु व्यापारु स समुदानक्रिया २२, 'पिज्ज' प्रेम प्रत्ययक्रिया २३, 'दोसे' द्वेष प्रत्ययक्रिया २४, ईरणं ईर्या गमनु तिणि उपलक्षितु
25 पथु मार्गु ईर्यापथु तिहां ज जीवघातादिक क्रिया स ईर्यापथिकी क्रिया कहियइ। २५ ए पंचवीस क्रिया। मन वचन काय त्रिन्हि जोग कहियइं, प्राणातिपात १ मृषावाद २ अदत्तादान ३ मैथुन ४ परिग्रह ५ प्रमाणता लक्षण पांच अणुव्रत कहियइं। क्रोध मान माया लोभ नाम चत्तारि कषाय कहियइ।

फरसन रसन घ्राण चक्षुः श्रवण नाम पांच इंद्रिय कहियइं। सर्व मीलनि बइतालीस आश्रवभेद कहियइं।

30 §401) अथ संवरभेद लिखियइं।

समिई ५ गुत्ति ३ परीसह २२ जइधम्मो १० भावणा १२ चरित्ताणि ५।
पण-ति-दुवीस-दस-बार-पंचभेएहिं सगवन्ना॥ [४९६]

समिति गुप्ति पूर्विहिं जिम भणी तिमहिं जि जाणवी।

खुहा १ पिवासा २ सी ३ उण्हं ४ दंसा ५ ऽचेला ६ ऽरइ ७ त्थिय ८।
35 चरिया ९ निसीहिया १० सिज्जा ११ अक्कोस १२ वह १३ जायणा १४॥ [४९७]

अलाभ १५ रोग १६ तणफासा १७ मल १८ सक्कार १९ परीसहापन्ना २० ।
अन्नाण २१ संमत्तं २२ इय बावीसं परीसहा ॥ [४९८]

यथा 'छुहा' इत्यादि । 'छुहा' भूख सह जि परीषहु तप तणइ कारणि अनेषणीय अशुद्धपिंड परिहार कारणि मुनिहिं परीसहियइं । इणि कारणि छुहा परीसहु १ । 'पिवासा' जलपान वांछा । पुणि प्रासुकजल तणइ अलाभि[1] मुनिहिं परिसहियइ अहियासियइ तिणि कारणि पिवासा परीसहु २ । आतापना निमित्तु शीतसहनु शीत परीषहु ३ । तापसहनु उष्णपरिषहु ४ । 'दंस' डांस मगसा चउरिंद्रिय जीवविशेष दंस ति उपलक्षणु । अनेराइं जि के जूका मत्कुण मक्षिका पिपीलिका सुलहलादिक जीव ति पुणि जाणिवा दंसादिक जीव. जेतीवार शरीरि विलगइ तेतीवार तीहं ऊपरि द्वेष तणउ अकरणि पीडा तणइ अहियासनि तीहं जीवहं तणइ अतिचारजि भय तणइ अकरणि दंसपरिषहु जाणिवउ ५ । 'अचेल' वस्त्रसंपत्ति तणइ अभावि भाविहिं शोभादि परिहार निमित्त जीर्णमलिनादि वस्त्रपरिधानि दैन्यभाव तणइ अकरणि आकांक्षा तणइ अभावि अचेल परीषहु ६ । अरति मोहनीय कर्मोदयसमुत्थउ चित्तविकारु तेह तणइ निषेधि अरति परीषहु ७ ।

स्त्री तणउं परिषहणु निरपेक्ष भावि करी रहणु ब्रह्मचर्य प्रतिपालनु स्त्री परीषहु ८ ।

चर्या ग्राम नगरादिकहं अप्रतिबद्धभावि करी विहार करणु तेह नउं परिषहणु चर्या परीषहु ९ ।

नैषेधिकी स्वाध्यायभूमि शून्यगृहादिक तेह नउं परिषहणु उपसर्गभावहिं भय तणउं अकरणु नैषेधिकी परीषहु १० ।

शय्या वसति तेह नउं परिषहणुं निहां सु दुःखु तेह तणी उपेक्षा शय्या परीषहु ११ ।

आक्रोशु दुर्वचनादिकु तेह नउं परिषहणु आक्रोश परीषहु १२ ।

वधु अथवा बंधु दंडादिताडनु तेह नउ परिषहणु वध परीषहु १३ ।

याच्या भिक्षा तेह नउं परिषहणु मानवर्जनु १४ ।

अलाभु भक्तादिकहं तणी अप्राप्ति तेह नउं परिषहणु दीनताभाव तणउ अभावु १५ ।

रोगु व्याधि तेह नउं परिषहणु पीडासहनु चिकित्सापरिवर्जनु वा रोग परीषहु १६ ।

तृण दर्भादिक तीहं नउं स्पर्शु तेह नउं परिषहणु । संस्तारकादिनिमित्तु तृणसहणु तृणस्पर्श कर्कशता सहनु स्पर्श परीषहु १७ ।

सर्वतो देशतो वा स्नानोद्वर्तनादिवर्जनु मल परीषहु १८ ।

सत्कारु वस्त्रादिपूजापूर्वकु राजादिकृताभ्युत्थानादिकु तेह नउं परिषहणु तेह नइ संभविहिं आत्मोत्कर्षपरिवर्जनु सत्कार परीषहु १९ ।

प्रज्ञा मति तेह नइ अभावि उद्वेग तणउं अकरणु प्रज्ञा तणइ संभविहिं हूंतइ मदवर्जनु प्रज्ञा परीषहु २० ।

ज्ञानु मत्यादिकु तेह नइ अभावि उद्वेग तणउं अकरणु,विशिष्टता संभवि मद तणउं अकरणु, अभावि दीनता परिवर्जनु ज्ञानपरीषहु २१ ।

सम्यक्त्वु तत्त्वश्रद्धानु तेह नउ परिषहणु जिनेंद्रहं विषइ प्राणातिपातादि विरत गुरहं विषइं जिनोक्त जीवादितत्त्वहं विषइ अश्रद्धानु तथा भाव तणउं असहनु तेह तणउं वर्जनु सम्यक्त्व परीषहु २२ ।

इति बावीस परीषह, आठ अनइ बावीस त्रीस ॥

खंती १ य मद्दव २ ऽज्जव ३ मुत्ती ४ तव ५ संजमे ६ य बोधव्वे ।
सच्चं ७ सोयं ८ आकिंचणं ९ च बंभं च जइधम्मो १० ॥ [४९९]

क्षांति क्रोधोपशमु १, मार्दवु मानोपशमु २, आर्जवु मायोपशमु ३, मुक्ति लोभोपशमु ४, तपु द्वादशविधु ५, संजमु सत्तरभेदु ।

---

401) 1 Bh. स पुणि प्रासुकजलाभावि ।

यथा–

पंचाश्रवाद्विरमणं पंचेन्द्रियनिग्रहः ।
कषायजयः दण्डत्रयविरतिश्चेति संजमः[2] ॥ सप्तदशभेदः ॥ [५००]

सुगमा ६। सत्यु सद्भूतभावभाषणु ७, शौचु–संजमातिचार वर्जनु ८, आकिंचिन्यु ९, निरतिचारता ९,
5 'बंभु'–ब्रह्मचर्यु १०, इति दशविधु यतिधर्मु १०.

बीस अनइ दस चियालीस, भावना १२ मीलनि ५२।

पांच चारित्र यथा–

सामाइयऽत्थ पढमं, छेओवट्ठावणं भवे बीयं ।
परिहार विसुद्धीयं, सुहुमं तह संपरायं च ॥ [५०१]

10 तत्तो य अहक्खायं खायं, सव्वंमि जीवलोगंमि ।
जं चरिऊण सुविहिया, वच्चंतिऽयरामरं ठाणं ॥ [५०२]

सामायिकु चारित्तु १, छेदोपस्थापनकु चारित्तु २, परिहारु तपोविशेषु तेह जु चारित्तु परिहार-विशुद्धि चारित्तु ३, यथा परिहरणं परिहारु तपोविशेषु तिणि जि चरइं ति परिहारविशुद्धिक कहियइं । ति पुणि बिहुं भेदे हुयइं । एकि निर्विशमानक । एकि निर्विष्टकायिक । तीहं बिहुं माहि परिहार तप रहइं जि
15 आसेवक ति निर्विशमानक । जेहे पूर्विहिं परिहार तपु आसेविउ कीधउ हुयइं ति निर्विष्टकायिक ।

तथाहि–नवकु साधु गणु हुयइ । तीहं माहि एकु कल्पस्थितु वाचनाचार्यु थापियइ । बीजा चत्तारि पारिहारिक निर्विशमानक हुयइं । चत्तारि निर्विष्टकायिक हुयइं ।

परिहारियाण उ नवो जहन्नु मज्झो तहेव उक्कोसो ।
सी उन्ह वासकाले भणिओ धीरेहिं पत्तेयं ॥ [५०३]

20 तीहं निर्विशमानकहीं अनइ निर्विष्टकायिकहीं तणउ तपु त्रिविधु शीतकालि उष्णकालि वर्षाकालि धीरहं तीर्थंकर गणहरं कहिउ । यथा शीतकालतपु १ उष्णकालतपु २ वर्षाकालतपु एकु एकु त्रिविधु जघन्य मध्यम उत्कृष्ट भेदइतउ हुयइ–तत्र उष्णकालतपु कहइ–

तत्थ जहन्नो गिम्हे चउत्थु छट्ठं तु होइ मज्झिमओ ।
अट्ठममिह उक्कोसो इत्तो सिसिरे पवक्खामि ॥ [५०४]

25 सिसिरे उ जहन्नाई छट्ठाई दसमु चरमगो होइ ।
वासासु अट्ठमाइ बारसपज्जंतगो नेओ ॥ [५०५]

उष्णकालि–अतिरूक्षता भावइतउ चतुर्थु जघन्यु तपु, छट्ठं मध्यमु तपु, अट्ठमु उत्कृष्टु तपु ।

शीतकालि ग्रीष्मइतउ किंचित् साधारणि छट्ठु जघन्यु । अष्टमु मध्यमु दसमु उत्कृष्टु ।

तथा वर्षाकालि–शीतकालहीं[3] कन्हा अतिसाधारणि अष्टमु जघन्यु दशमु द्वादशमु मध्यमु उत्कृष्टु

30 पारणगे आयामं पंचसु गहो दोसुऽभिग्गहो भिक्खे ।
कप्पट्ठिया वि पइदिण करिंति एमेवायामं ॥[4] [५०६]

पारणइ उन्हाले[5] सीयाले वरसाले तीहं रहइं आंबिलु हुयइ ।

401) 2 Note the Prakrit form in the Skt. verse. 3 Bh. शीतकालि ही ।
4 B. drops the verse after mentioning पारणगे आयामं । 5 Bh. उन्हालइ ।

तथा सैरत्सुहम्मोहस्सु प्रथम वि भिक्षा वर्जी करी पांजी उत्तुनाहिक पांच भिक्षा सांतं नउं ग्रहु ग्रहणु। नियम्ा नियम मउं करेउडं। पुनरपि त्रिनि त्रिनि विनुं भिक्षा तणउ अग्रहु अग्रहणु करेवउं। किसउ अर्थु। पांच भिक्षा माहरणउ बिउं भिक्षा लेवा तणउं अभिग्रहु इच्छानुसारि करिवउ। बिहं जि भिक्षा मइं लेवी इसी परि त्रिनि इ एक भ त त्रिरइ एक पानक त्रिरइ। एउ परिहारिकु परिहारकहं तणउ तपु। जि मुनि कल्पस्थितारिक पांच माहि माहि एकु वाचनाचार्यु च्यारि अनुचारिया। ति मुनि इसां ही जि परि भिक्षा-भिक्षा सहित हुंता करीसिनु अंबिलु करइं। इसी परि छ मास सीम तपु करी पाछइ जि पारिहारिक ति अनुचारक हुयइं [illegible] मास सीम। जि अनुचारक ति पारिहारिक हुयइं [illegible] मास सीम। पाछइ कल्पस्थितु वाचना-चार्यु छ मास सीम परिहार तपु करइ। बीजा आठ जि पारिहारिक अनुचारक हूता तीहं माहरतउ एकु कल्पस्थितु वाचनाचार्यु हुयइ बीजा सातइ अनुचारक हुयइं मास छ सीम। इसी परि अढारहे मासे परिहार तपु हुयइ। एउ तपु तीर्थंकर कन्हइ कीजइ अथवा तीर्थंकर कन्हइ जिणि कीधउं हुयइ तेह कन्हइ कीजइ। 10 सांपरायभूसंभारि कीजइ ते सूक्ष्मसंपरायु दशमउं गुणठाणउं।

तऊ जु चारित्रु सूक्ष्मसंपराय चारित्रु ४ यथाख्यात चारित्रु केवलज्ञानावस्थाभावि ५ ए पांच चारित्र मीलिहं मइ मीलति करीइ बावन अनइ पांच सत्तावन भेद संवर तणा हुयइं।

§402) अथ निर्जरा अनइ बंधभेद त्रिविधइं[1]।

बारसविहो तवो निज्जरा य बंधो य चउविगप्पो य। 15

पयइ ठिइ अणुभाग पएसभेएहिं नायव्वो ॥ [५०७]

बाह्यतपभेद छ अंतरंगतपभेद छ ए बारहविध निर्जरा। प्रकृतिबंधु १, स्थितिबंधु २, अनुभाग-बंधु ३, प्रदेशबंधु ४. इणि चतुर्धा बंधु।

यथा–

स्वभावः प्रकृतिः प्रोक्तः स्थितिः कालावधारणम्। 20

अनुभागो रसो ज्ञेयः प्रदेशो दलसंचयः ॥ [५०८]

तेह कर्म नउ जिसउ स्वभावु [illegible] जिसी परि बांधियइ। एउ स्वभावु बंधु॥

यथा–

पड पडिहार सि मज्ज हडि चित्तकुलाल भंडगारीणं।

जह एएसिं भावा कम्माण वि जाण तह भावा ॥ [५०९] 25

निर्मल इ दृष्टि पडि आवरी हुंती जिम देखइ काई नहीं तिम ज्ञानावरणि आवरिउ हुंतउ जीवु ज्ञानमयि हुंतो इ जाणइ काई नहीं। इणि कारणि पट सद्भावु ज्ञानावरणु कर्मु १। जिम पडिहारु जेह रहइं माहि न मेल्हइ तेह रहइं राजा देखणहार हुंतउ देखइ नहीं तिम दर्शनावरणि करी आवरिउ हूतउं जीवु सर्व वस्तु सामान्यज्ञानसद्भावु हुंतउ सामान्यज्ञान रहितु हुयइ। इणि कारणि पडिहारसद्भावु दर्शनावरणु कर्मु २। जिम मधुलिप्त तीक्ष्ण खड्गधारा जीभ करी लिहींती हुंती पहिलउं मधुरास्वादनदायक हुयइ पाछइ छेदाधान 30 हेतु करी कटुदायक हुयइ तिम सातवेदनीय कर्मु सुखहेतु असातवेदनीय कर्मु दुक्खहेतु हुयइ तिणि कारणि मधुलिप्तखड्गधारासद्भावु वेदनीय कर्मु ३।

---

401) 6 B. omits. 7 Bh. इसी परि। 8 Bh. omits [illegible] मास सीम।

§402) 1 Bb. puts [illegible] initially in both the cases.

जिम मधु पीधउं सचेतनावस्था फेडइ अचेतनावस्था करइ तिम मोहनीउ[2] कर्मु जीव रहइं चारित्र[3] चेतना अपहरइ। अचेतना करइ तिणि कारणि मद्यपानसद्भावु मोहनीउ कर्मु ४।

जिम चोरु हडि घातिऊ हडि वियोग पाखइ छूटइ नही तिम आयुःकर्म तणइ सद्भावि जीवु भवांतरि जाई न सकइं तिणि कारणि जिसउ हडि सद्भावु तिसउ आयुःकर्म सद्भावु ५।

जिसउ चित्रकर नउ सद्भावु तिसउ नामकर्मतणउ सद्भावु ६।

जिसउ कुंभकार सद्भावु तिसउ गोत्रकर्म सद्भावु ७।

जिसउ भंडारी तणउ सद्भावु तिसउ अंतरायकर्म तणउ सद्भावु।

तथा च भणितं—

सरउग्गय ससिनिम्मलयरस्स जीवस्स छायणं जमिह।
नाणावरणं कम्मं पडोवमं होइ एवं तु॥ [५१०]

जह निम्मला वि चक्खू पडेण केणावि छाइया संती।
मंदं मंदतरागं पिच्छइ सा निम्मला जइवि नाणावरणं॥ [५११]

जह राया तह जीवो पडिहारसमं तु दंसणावरणं।
तेणि ह विबंधएणं न पिच्छए सो घडाईयं॥ दंसणावरणं॥ [५१२]

महुलित्त निसियकरवालधार जीहाइ जारिसं लिहणं।
तारिसयं वेयणिय सुहदुह उप्पायगं मुणइ॥ [५१३]

महुआसायण सरिसो सायावेयस्स होइ हु विवागो।
जह असिणा तहिं छिज्जइ सो उ विवागो असायस्स॥ वेयणीयं॥ [५१४]

जह मज्जपाणमूढो लोए पुरिसो परव्व सो होइ।
तह मोहेण वि मूढो जीवो वि परव्वसो होइ॥ [५१५]

मोहेइ मोहणीयं तंपि समासेण होइ दुविहं तु।
दंसणमोहं पढमं चरित्तमोहं भवे बीयं॥ [५१६]

दंसणमोहं तिविहं सम्मं मीसं च तह य मिच्छत्तं।
सुद्धं अद्धविसुद्धं अविसुद्धं तं जहा कमसो॥ [५१७]

केवलनाणुवलद्धे जीवाइ पयत्थ सद्दहे जेण।
तं समत्तं कम्मं सिवसुह संपत्ति परिणामं॥ [५१८]

रागं नवि जिणधम्मे नवि दोसं जाइ जस्स उदएणं।
सो मीसस्स विवागो अंतमुहुत्तं हवइ कालं॥ [५१९]

जिणधम्मंमि पओसं, वहइ य हियए ण जस्स।
उदएणं तं मिच्छत्तं, कम्मं संकिट्ठो तस्स उ विवागो॥ [५२०]

जं पि य चरित मोहं तं पि हु दुविहं समासओ होइ।
सोलस जाण कसाया नवभेया नोकसायाणं॥ [५२१]

---

102) 2 Bh. मोहनीय। 3 Bh. सम्यक्त्व चारित्र।

कोहो माणो माया लोभो, चउरो वि हुंति चउभेया।
अण अप्पचक्खाणा, पच्चक्खाणा य संजलणा॥ [५२२]

कोहो माणो मायालोभो, पढमा अणंतबंधीओ।
एयाणुदए जीवो, इह संमत्तं न पावेइ॥ [५२३]

कोहो माणो माया लोभो, बीया अपच्चक्खाणाओ।
एयाणुदए जीवो, विरयाविरयं न पावेइ॥ [५२४] 5

कोहो माणो माया लोभो तइया उ पच्चक्खाणाओ।
एयाणुदए जीवो, पावेइ न सव्व विरइं तु॥ [५२५]

कोहो माणो माया लोभो, चरमा उ हुंति संजलणा।
एयाणुदए जीवो न लहइ अहक्खाय चारित्तं॥ [५२६] 10

नव नोकसाय भणिमो, वेया तिन्नेव हास छक्कं च।
इत्थी-पुरिस-नपुंसग तेसिं सरूवं इमं होइ॥ [५२७]

पुरिसं पइ अहिलासो, उदएणं होइ जस्स कम्मस्स।
सो कुंकुम दाह समो इत्थी वेयस्स उ विवागो॥ [५२८]

इत्थीए पुण उवरिं जस्सुदएणं तु रागमुप्पज्जे। 15
सो तण दाह समाणो होइ विवागो उ पुमवेए॥ [५२९]

इत्थी पुरिसाणुवरिं, जस्सुदएणं तु रागमुप्पज्जे।
नगर मही दाह समो, जाण विवागो अपुमवेए॥ [५३०]

सनिमित्त निमित्तं वा जं हासं होइ इत्थ जीवस्स।
सो हास मोहणीयस्स होइ कम्मस्स उ विवागो॥ [५३१] 20

सचित्ता चित्तेसु य बाहिर दव्वेसु जस्स उदएणं।
होइ रईरइ मोहे सो उ विवागो मुणेयव्वो॥ [५३२]

सचित्ताचित्तेसु य बाहिरदव्वेसु जस्स उदएणं।
अरई होइ हु जीवे सो उ विवागो अरइमोहे॥ [५३३]

भय वज्जियंमि जीवे जस्सिह उदएण हुंति कम्मस्स। 25
सत्त भयट्ठाणाइं भयमोहे सो विवागो उ॥ [५३४]

सोय रहियंमि जीवे जस्सिह उदएण होइ कम्मस्स।
अक्कंदणा इ सोगो तं जाणह सोग मोहणियं॥ [५३५]

दुगंध मलिणंगेसु य अब्भितर बाहिरेसु दव्वेसु। 30
जेण विलीयं जीवे उप्पज्जइ सो दुगुंच्छाओ॥ मोहनीउ॥ [५३६]

दुक्खं न देइ आउं न वि य सुहं देइ चउसु विगईसु।
दुक्खसहाणाधारं धरेइ देहट्ठियं जीवं॥ आयुःकर्म्मु॥ [५३७]

जह चित्तयरो निउणो अणेगरूवाइं कुणइ रूवाइं ।
सोहणमसोहणाइं, चुक्खाचुक्खेहिं वन्नेहिं ॥ [५३८]

तह नामंपि य कम्मं अणेगरूवाइं कुणइ जीवस्स ।
सोहणमसोहणाइं इट्ठाऽणिट्ठाणि लोयस्स ॥ नामकम्मु ॥ [५३९]

5 जह इत्थ कुंभकारो पुढवीए कुणइ परिसं रूवं ।
जं लोयाओ पूयं पावइ उइ पुन्न कलसाइं ॥ [५४०]

धुंधुल्लमाई अन्नं सुच्चिय पुढवीइ कुणइ रूवं तु ।
जं लोयाओ निंदं पावइ अरूए नि मज्जंमि ॥ [५४१]

एवं कुलालसमाणं गोयं कम्मं तु होइ जीवस्स ।
10 उच्चा नीय विवागो जह होइ तहा निसामेह ॥ [५४२]

लोयंमि लहइ पूयं उच्चागोयं त यं होइ ।
सधणो रूवेण जूओ बुद्धीनिउणो वि जस्स उदएणं ॥ [५४३]

अधणो बुद्धिविहीणो रूवविहीणो वि जस्स उदएणं ।
लोयंमि लहइ निंदं एयं पुण होइ नीयं तु ॥ गोत्रुकर्मु ॥ [५४४]

15 जह राया इह भंडारिएण विणएण कुणउ दाणाइं ।
तेण उ पडिकूलेणं न कुणइ सो दाणमाइंणि ॥ [५४५]

जह राया तह जीवो, भंडारी जह तहंतरायं तु ।
तेण उ वि वंघएण न कुणइ सो दाणमाइंणि ॥ अंतरायकर्मु ॥ [५४६]

एउ स्वभावुबंधु प्रकृतिबंधु कहियइ ।

20 जेह कर्म नी जिसी स्थिति छइ सु कर्मु तिसी स्थिति करी बांधियइ एउ स्थितिबंधु कहियइ । जेह कर्म मउ जिसउ रसु छइ सु कर्मु तिसइ रसि करी बांधियइ एउ अनुभाग बंधु कहियइ ।

जेह कर्म रहइं जेतला कार्मण वर्गणा गृहीत पुद्गल कहिया छइं सु कर्मु तेतले कर्म वर्गणे पुद्गले करी बांधियइ एउ प्रदेशबंधु कहियइ ।

इति सामान्यहिं चतुर्विध कर्मबंध तणउं स्वरूपु कहिउं । विशेषइतउ कर्मबंध विचार वसातउ
25 जाणियउं ।

इति द्वादशविध निर्जरा । चतुर्विध कर्मबंध तणउ स्वरूपु भणिउं ।

§403) अथ मोक्षतत्त्व तणा नव भेद लिखियइं ।

संतपय परूवणया १ दव्वपमाणं २ च खित्तफुसणा ३ य ।
कालो ४ य अंतरं ५ भाग ६ भाव ७ अप्पा ८ बहुं ९ चेव ॥ [५४७]

30 संतिपदानि सत्पदानि । ति पुणि गत्यादिक । यथा-

गइ १ इंदिए २ य काये ३ जोगे ४ वेए ५ कसाय ६ नाणे ७ य ।
संजम ८ दंसण ९ लेसा १० भवि ११ सम्मे १२ सन्नि १३ आहारे १४ ॥ [५४८]

तत्र गति चत्तारि—देवगति १, मनुष्यगति २, तिर्यग्गति ३, नरकगति ४, पंचमी मुक्तिगति ५। इंद्रिय पांच—फरसन १, रसन २, घ्राण ३, चक्षु ४, श्रवण ५, उपलक्षण तउ एकेंद्रियजाति, बेंद्रियजाति

§403) 1 Bh. omits.

त्रींद्रियजाति चउरिंद्रियजाति पंचेंद्रियजाति पुणि जाणिवी। काय छ—पृथिवीकाय १ अप्काय २ तेउकाय ३ वाउकाय ४ वनस्पतिकाय ५ त्रसकाय ६ लक्षण। जोग— मन वचन काय रूप त्रिन्हि।

वेद—पुरुषवेद स्त्रीवेद नपुंसकवेद रूप त्रिन्हि।

कसाय—क्रोध मान माया लोभ रूप चत्तारि।

ज्ञान—मतिज्ञान श्रुतज्ञान अवधिज्ञान मनःपर्यवज्ञान केवलज्ञान लक्षण पांच। तद्यथा- 5

आभिणिबोहीनाणं सुयनाणं चेव ओहिनाणं च।
तह मणपज्जवनाणं केवलनाणं च पंचमयं ॥ [५४९]

आभिनिबोधिकज्ञानु मतिज्ञानु तेह तणा अट्ठावीस भेद यथा-अर्थ अनइ इंद्रिय रहइं संबंधु पउ व्यंजनावग्रहु कहियइ।

सु पुणि चउ भेदे फरस फरसनेंद्रिय संबंधु १, रस रसनेंद्रिय संबंधु २, घ्राणघ्राणेंद्रिय संबंधु ३ 10 शब्द श्रवणेंद्रिय संबंधु ४। चक्षुरिंद्रिय अनइ मन बिहुं रहइं अर्थ सउं संबंधु हुयइ नंही इणि कारणि व्यंजनावग्रहु चतुर्धा हुयइ। तथा च भणितं-

पुट्ठं सुणेइ सद्दं रूवं पुण पासई अपुट्ठं तु।
गंधं रसं च फासं च बद्धपुट्ठं वियागरे ॥ [५५०]

अर्थावग्रहु सामान्यज्ञानु सु पुणि छ प भेदे। पांच इंद्रिय छट्ठउं मनु तीह करी अर्थ सामान्य धर्म 15 विचारणि हुंतइ।

किंचिद् रूपु। कोपि रसु, कोपि गंधु, कोपि फरसु कोपि सद्दु इसी परि पांचे इंद्रिये करी हुयइ। मनि करी पुणि इसी परि पांचहीं विषयहं विषइ सामान्यार्थ विचारु हुयइ इति अर्थावग्रहु छप भेदे।

तथा ईहा पुणि छ प भेदे इसी ही जि परि हुयइ। नवरं ईहा[1] वितर्कु कहियइ। सु पुणि वितर्कु उभयकोटि फरसी हुयइ। 20

-यथा किंचिद् रूपु इसउ जु छइ। अर्थावग्रहु तेह नउ[2] अनंतरकालि किं पुरुषरूपं किं वा स्त्रीरूपं। इसी परि 'एवं रसे गंधे फरसे सद्दे च' यथा—कोपि रसु पह अनंतरकालि मधुरो वा कटुको वा। इसी परि कोपि गंधु पह अनंतरकालि असुरभि वा सुरभि वा। इसी परि कोपि फरसु पह अनंतरकालि शीतो वा उष्णो वा। इसी परि कोपि सद्दु पह अनंतरकालि शंख संबंधी वा भेरि संबंधी वा। इसी परि पांचहीं इंद्रियहं करी पंच प्रकारे ईहा हुयइ। मन एकलाई रहइं सर्विहुं विषयहं विषइ इसी परि ईहा[3] संभवइ। इति 25 ईहा[4] तणा छ भेद हुयइं। तथा अपोहु पुणि छए भेदे सु पुणि एक कोटि फरसी। यथा-पुरुषहीं जिनउं रूपु अथवा स्त्रीहीं जिनउं रूपु। इसी परि एवं मधुरु जु रसु अथवा कटुरू जु रसु। इसी परि असुरहु जु गंधु अथवा सुरहु जु गंधु। इसी परि एवं शीतलु जु फरसु अथवा अशीतलु जु फरसु। इसी परि एवं शंखस्वरू[5] अथवा भेरीस्वरू इसी परि एवं मन एकलाई रहइं पांचहीं विषयहं विषइ अपोहु ऊपजइ इति अपोह तणा छ भेद। एवं धारणा पुणि छए भेदे। अपोहि करी जु अर्थु निश्चितु कीधउ हुयइ सु अर्थु सदा जु मन माहि 30 धरियइ स धारणा। स पुणि पांच इंद्रिय छट्ठउं मनू तीहं करी छप भेदे हुयइ।

इसी परि मतिज्ञान तणा अट्ठावीस भेद हुयइं। अर्थावग्रह ईहा अपोह धारणा ईहं चउहुं तणा प्रत्येक प्रत्येक छ छ[6] भेद एवं चउवीस भेद।

---

103) 2 Bh. तउ। 3 Bh. हां। 4 B. Bh. ईहां। 5 Bh. adds जु and omits the rest.

चत्वारि व्यंजनावग्रह तणा भेद इति अट्ठावीस भेद ।

अथ श्रुतज्ञानभेद लिख्यते ।

अक्षरश्रुत १, अनक्षरश्रुत २, सादिश्रुत ३, अनादिश्रुत ४, सांतुश्रुत ५, अनंतुश्रुत ६, गमिकुश्रुत ७, अगमिकुश्रुत ८, अंगप्रविष्टुश्रुत ९, अनंगप्रविष्टुश्रुत १०, सम्यक्श्रुत ११, असम्यक्श्रुत १२, संज्ञिश्रुत १३, असंज्ञिश्रुत १४ । तथा च भणितं–

अक्खर सन्नी सम्मं साईयं खलु [illegible] पज्जवसियं च ।
गमियं अंगपविट्ठं सत्त वि एए स पडिवक्खा ॥ [५५१]

[illegible] अक्षर [illegible] करी अर्थप्रतीति निमित्तु अक्षरश्रुत १ । शिरःकंप हस्तचालनादि [illegible] [illegible] पुरि जु बुद्धिनिमित्तु सु अनक्षर श्रुत २ । सम्यक्त्व[illegible] [illegible] सम्यग्दृष्टि रहइं ज्ञानात्मकु सादिश्रुत ३ । अज्ञानात्मकु सम्यक्त्वभ्रष्ट मिथ्यादृष्टि रहइं सादि श्रुतु ३ । [illegible] मिथ्यादृष्टि रहइं अज्ञानात्मकु अनादिश्रुत ४ । सांतु सपर्यवसितु भव्यहं [illegible] [illegible] पर्यवसितुश्रुत ५ । अभव्यहं रहइं अपर्यवसितुश्रुत ६ । केवल[illegible] [illegible] अनंतुश्रुत पुणि भेऊ जु ६ । अंतरइ अंतरइ अथि तेई जि जि अक्षर [illegible] हुयइ [illegible] गमिकुश्रुत ७ । [illegible] अगमिकुश्रुत ८, आचारांगादि अंगप्रविष्टु ९ श्रुतु । प्रकीर्णकादि अनंगप्रविष्टु १० श्रुतु । सम्यग्दृष्टि रहइं जिनवर्णितु अथवा मिथ्यात्वि वर्णितु सर्वुं श्रुतु सम्यग्श्रुतु ११ । तेऊ जु मिथ्यादृष्टि रहइं जिनवर्णितु अथवा मिथ्यात्वि वर्णितु सर्वश्रुतु असम्यक्श्रुतु १२ । समनस्क पंचेंद्रिय रहइं मनः [illegible] [illegible] संज्ञिश्रुतु १३ । मनोरहित इंद्रिय जनितु तेऊ जु असंज्ञिश्रुतु १४ । इति श्रुतज्ञानभेद १४ ।

अथ अवधिज्ञानभेद लिख्यते ।

अवधिज्ञानु छए भेद । यथा–

अनुगामि लोचन जिम १ । अननुगामि स्थानस्थदीप जिम २ । अवस्थितु अप्रतिपात [illegible] [illegible] जिम ३ । [illegible] जिम जु प्रतिपात [illegible] अनवस्थितु ४ । जु अंगुलासंख्येय[illegible] [illegible] पुनरपि [illegible] [illegible] । [illegible] क्षय न जाइ ५ । जु अंगुलासंख्येयभागादि [illegible] [illegible] असंख्यात अलोकाकाश[illegible] [illegible] ६ इति अवधिज्ञान तणा छ भेद ।

[illegible]

तेहे[12] मनःपर्याये करी चिंतनीउ जु मूर्तु स्तंभकुंभादिकु वस्तु छइ सु वस्तु मनःपर्यायज्ञानी अनुमानि करी जाणइ। मन तणा पर्याय साक्षात्कारि देखइ। इसइ परिणामि परिणत मनोद्रव्य तउ हुयइं जउ इसउं वस्तु एहे चींतविउं हुयइ इसी परि जिम लेखाक्षर दर्शनइतउ लेखार्थ परिज्ञानु हुयइ तिम मनोद्रव्य-दर्शनइतउ चिंतनीयवस्तु अनुमिणइ। इउ बाह्य अनइ आभ्यंतरु विपउ बहुतर स्फुटतर विशेष जोगि करी विपुलमति रहइं विपुलतरु जाणिवउ इति मनःपर्यायज्ञान विचारः। 5

केवलु एकु ज्ञानु केवलज्ञानु कहियइ। तेह नइ भावि छद्मस्थ सर्वज्ञ ज्ञानदर्शन तणा अभावतउ जिम सूर्यि ऊगिइ अनेरा ग्रह नी प्रभा न हुयइं तिम केवलज्ञान तणइ उदइ अनेरा ज्ञान नी प्रभा न हुयइं॥

'उप्पसंमि अणंते नट्ठंमि य छाउमत्थिए नाणे'

इति वचन भावइतउ॥ इति केवलज्ञानविचारः।

मिथ्यादृष्टि तणइं मतिज्ञानु श्रुतज्ञानु अवधिज्ञानु। 10

मत्यज्ञानु १, श्रुताज्ञानु २, विभंगावधि ज्ञानु ३, इसी परि त्रिन्हइ अज्ञान कहियइं। तथा दंसण इहां[13] चत्तारि कहियइं : यथा–

चक्षुदर्शनु १ अचक्षुदर्शनु २ अवधिदर्शनु ३ केवलदर्शनु ४ ति पुणि कहीसिइ। एतलइ

नाणं पंचविहं तह अन्नाणतिगंति अट्ठ सागारा।
चउ दंसणमणगारा बारस जिय लक्खणोवओगा॥ [५५२] 15

इति द्वादश संख्य जीवलक्षणोपयोग जीवतत्त्व परिज्ञानकारण पुणि प्रसंगिहिं भणिया। गतं ज्ञानद्वारं। ज्ञानप्रसंगि दर्शनद्वारं च।

अथ संजमभेद लिखियइं।

संजम सामायिकादिक ५ पूर्विहिं जिम भणिया तिमहीं जि जाणिवा। संजमशब्दि करी संजमप्रतिपक्षु असंजमु पुणि देशविरतिसंजमु पुणि जाणिवउं। 20

अथ लेश्या लिखियइं।

कृष्ण नील कापोत तेजः पद्म शुक्लरूप कर्मपुद्गलोदयवशइतउ जीव रहइं स्फटिक जिम तथा परिणामतारूप छ लेश्या कहियइं॥ यथा। कृष्णलेश्या १ नीललेश्या २ कापोतलेश्या ३ तेजोलेश्या ४ पद्मलेश्या ५ शुक्ललेश्या ६। तथा च भणितं–

कृष्णादि द्रव्यसाचिव्यात्परिणामो य आत्मनः। 25
स्फटिकस्येव तत्रायं लेश्याशब्दः प्रवर्त्तते॥ [५५३]

प्रसंगिहिं लेश्याविषइ उदाहरण लिखियइं।

जह जंबुतरुवरेगो सुपक्क फलभार नमिय साहग्गो।
दिट्ठो छहिं पुरिसेहिं ते चिंती जंबु भक्खेमो॥ [५५४]

किह पुण ते विंतिको आरुहमाणाण जीवसंदेहो। 30
तो छिंदिऊण मूले पाडेउं ताइं भक्खेमो॥ [५५५]

बीयाऽऽह इद्दहेणं किं छिन्नेणं तरुण मम्हंति।
साहामहल्लछिंदह तइओ बेइ पसाहाओ॥ [५५६]

गुच्छे चउत्थओ पुण पंचमओ बेइ गिन्हफलाइं।
छट्ठो बेई पडियाइं एइचिय खायहाऽच्छितुं॥ [५५७] 35

403) 12 Bh. तेह। 13 Bh. omits.

दिट्ठंतस्सोवणओ जो वेइ एयंचिछंदिमो मूले ।
सो वट्टइ किन्हाए साल महल्लाउ नीलाए ॥ [५५८]

हवइ पसाहा काऊ गुच्छे तेऊ फलाइ पम्हाए ।
पडियाइं सुक्कलेसा अहवा अन्नं इमाऽऽहरणं ॥ [५५९]

चोरा गाम वहत्थं विणिग्गया एगु बेइ घाएह ।
जं पासह तं सव्वं दुपयं च चउप्पयं वावि ॥ [५६०]

बीओ माणुस पुरिसेय तइयओ साउहे चउत्थोय ।
पंचमओ जुज्झंते छट्ठो पुण तत्थियं भणइ ॥ [५६१]

एगं ता हरह धणं बीयं मारेह मा कुणह एयं ।
केवल हरह धणं ता उवसंहारो इमो तेसिं ॥ [५६२]

सव्वे मारेहत्ती वट्टइ सो किन्ह लेस परिणामो ।
एवं कमेणं सेसा जा चरमो सुक्कलेसाए ॥ [५६३]

गतं लेश्याद्वारम् । अथ भव्यत्वद्वारम् लिखियइ ।

भव्यु सिद्धिगमन योग्यु जीवु कहियइ । तथा भव्य प्रतिपक्षु अभव्यु पुणि ईहां भव्यराशि करी जाणियउ । गतं भव्याभव्यद्वारम् ।

सम्यग्दर्शनु कहियइ तेह नउ भावु मोक्षाविरोधी प्रशस्तु परिणामु सम्यक्त्वु कहियइ । ते पुणि आगमभणिउ पुणि त्रिविधु ।

औपशमिक, क्षायोपशमिक, क्षायिक, भेदइतउ ।

तेह ना प्रतिपक्ष मिश्र सासादन पुणि जाणिवा । गतं सम्यक्त्वद्वारम् ।

संज्ञी प्राणि भणिय स्वरूपु । तेह नउ प्रतिपक्षु असंज्ञी पुणि जाणियउ ॥ गतं संज्ञीद्वारम् ।

अथ आहारक द्वार कहियइ ।

ओजो लोम प्रक्षेपरूपु आहार जु आहारइ सु आहारकु । तेह नउ प्रतिपक्षु अनाहारकु पुणि जाणियउ । उक्तं च –

विग्गहगइमावन्ना केवलिणो समुहया अजोगी य ।
सिद्धा य अणाहारा सेसा आहारगा जीवा ॥ [५६४]

विग्रहगति । वक्रगति ४ तेह मांहि विग्रहगतिमापन्न जीव कहियइं । ति मध्यम समय लगी अनाहारक हुइं । केवलिनो समुद्घाता इति । समुद्घातु कर्म समीकरण निमित्तु केवली करइ । यदुक्तं –

यस्य पुनः केवलिनः कर्म भवत्यायुषोऽतिरिक्ततरम् ।
स समुद्घातं भगवानथ गच्छति तत्समीकर्तुम् ॥ [५६५]

दण्डं प्रथमे समये कपाटमथ चोत्तरे तथा समये ।
मन्थानमथ तृतीये लोकव्यापी चतुर्थे तु ॥ [५६६]

संहरति पञ्चमे त्वन्तराणि मन्थानमथ पुनः षष्ठे ।
सप्तमके तु कपाटं संहरति ततोऽष्टमे दण्डम् ॥ [५६७]

अंतोमुहुत्त मित्तंपि फासियं जेहिं हुज्ज सम्मत्तं ।
तेसिं अवड्ढ पुग्गल, परंतो होइ संसारो ॥ [५८०]

॥ समाप्तं नवतत्त्वविवरणम् ॥

तेह सम्यक्त्वगुण रहइं आविर्भावकु श्री नरवर्म महाराज कथानकु लिखियइ ॥

§425) ईही जि जंबूद्वीप[1] माहि भरतक्षेत्र माहि मगध नामि जनपदु छइ । तिहां विजयवती नामि नगरी । तिहां नरवर्मु नामि राजा । रतिसुंदरी नामि पट्टमहादेवी हूंती । हरिदत्तु नामि पुत्रु हूंतउ । मति सागरादिक अनेक[2] महामात्य हूंता । अनेरइ दिवसि राजेंद्र आगइ सभा माहि धर्मविचारविषयी आला[प] नीपनउ । तत्र एकि कहिउं धर्मु दाक्षिण्यौदार्यादिकहं गुणहं[3] करी हुयइ । तथा परोपकारइतउ लोक विरुद्ध त्यागइतउ पुणि धर्मु हुयइ । बीजइं कहिउं वेदोक्तु अग्निहोत्रादिकु धर्मु । त्रीजइ कहिउं कुलक्रमाग[त] धर्मु । चउथइ कहिउं धर्माधर्म प्रत्यक्ष प्रमाणि करी गगनारविंद जिम दीसइं नहीं इणि कारणि नथी । इ[सी] परि सभ्य धर्मविवादु करता देखी करी विवेकवंतु नरवर्मु राजा मन माहि चींतवइ । दाक्षिण्यादिक गुणहं करी तां धर्मु न होइ । ति दाक्षिण्यादिक गुण पुरुषव्रतु । वेदोक्तु पुणि धर्मु नही । हिंसाद[ि] दूषितत्वइतउ । क्रमागतु पुणि धर्मु नही । इसी परि कुण[4] रहइं धर्मु न हुयइं ।

§426) नास्तिकवचनु जगजंतु सुखदुक्खादिदर्शन भावइतउ घटइ नहीं । सर्वदोषरहित शु[द्ध] कनक जिम किसउ धर्मु हुयइ । इसउं मन माहि जेतलइ नरवर्मु राजा चींतवइ तेतलइ पडिहारु रा[जा] रहइं वीनवइ । 'देव ! महाराज ! तम्हारउ[1] बालमित्तु मदनदत्तु चिरागतु द्वारदेसि वर्त्तइ[2] । राजा[दे]शि तउ मदनदत्तु माहि मेलिहउ । राजेंद्रि समालिंगन सन्मानबहुमान पूर्वकु पूछिउ । 'मित्र ! एतलउ [काल] किहां थाकउ ? किसउं उपार्जिउं ?' सु पुणि राजा रहइं प्रणामु करी वीनवइ । 'महाराज अनेकि अनेकि [देशि भमतां] अनेकि अनेकि आश्चर्य दीठां । प्रभूत धनु उपार्जिउं एउ नक्षत्रश्रेणि-सहोदरु एकावली हारु, महार[ाज !] मइं लाधउ' । राजा भणइ, 'मित्र एह हार नउ लाभु मू आगइ आमूलचूल कहि' । सु [भणइ] "महाराज ! तदाकालि हउं पुर[3] हूंतउ नीसरिउ । प्रभूत देशांतर भमतउ[3] हूंतउ द्रुपदिकाटवी [माहि] गयउ । तृषाक्रांतु तेह माहि ओरहउ परहउ घणउं भमिउ । तिहां फिरतइ हूंतइ गुणधरसूरि [नामि] आचार्यु भेटिउ । तेह महात्मा[4] आगइ एकावली हार साराऌंकार धारकु देवु एकु देवी सहित म[हा]तणा गुरु हूंतउं धर्मु जिनप्रणीतु सांभलतउ मइ दीठउ । हउं पुणि वांदी करी तिहां बइठउ । मू रहइं धर्मु सांभलता तृस सर्वथा नाठी । आपणा बांधव जिम मू देखता हूंता तेह देव रहइं मू ऊपरि [अ]प्रीति ऊपनी । तउ पाछइ तिणि देवि महात्मा पूछिउ 'मू रहइं एह ऊपरि किसा कारण लगी नेह तणउ अतिशउ'[5] ।' महात्मा भणइ-'एह भव तउ पूर्व भवि कौशांबी नगरी माहि जयराजेंद्र तणा विजय वैजयंत नामहं करी प्रसिद्ध पुत्र हूंता । तुम्हारी माता दैवजोगइतउ[6] परलोकि गई । धात्री पालीता हूंता तुम्हे यौवन प्राप्त हूया । जयराजेंद्रु तुम्ह रहइं यौवराज्यपदु देणहारु जाणी उद्यानवनि[7] क्रीडा करिवा गया हूंता माता नीं सउकि विसु दिवारिउं । तत्र कालि तिहां अशो[क त]लि दिवाकर मुनि गुरुडोपपाताध्ययनु गुणतउ हूंतउ । तेह नइ प्रभावि तिहां गुरुडेंदु[9] अ[वतरिउ] महामुनि तेह रहइं सेवापरायणु हुयउ । गरुडेंद्र[10] तणा प्रभावइतउ तुम्ह रहइं विषमु विषु प्र[भवइ] नहीं । गरुडराजु तेह मुनि रहइं प्रणमी करी[11] संतुष्टु हूंतउ गरुडोपपाताध्ययनु[12] सांभलिवा लागउ । विषापहार प्रभावइतउ विस्मित चित्त हूंता तुम्हे पुणि तेह मुनि रहइं प्रणमी करी[13] आगइ आवी[15] बइठा । गरुडेंद्र कहिउं । 'जइ दिवाकर मुनिवरु ईहा न होयतइ तउ[14] तुम्हे[15] मूया हउत । तिणि कारणि ए[ह]

§ 425) 1. Bh. जंबूद्वीपि । 2. Bh. अनेकि । 3. B. P. omit. 4. P. कुणहं ।
§ 426) 1. Bh. तुम्हारइ । 2. B. Bh. पुर । 3. P. भ्रमतउ । 4. Bh. माहात्मा । 5. P. अतिसउ । 6. P. दैवयोगइतउ । 7. P. omits-न- 8. B. omits-न- 9. Bh. P. गरुडेंद्रु । 10. Bh. गुरुडेंद्र । 11. P. [illegible] 12. Bh. गुरुडो- 13. Bh. drops words between प्रणमी करी । 14. Bh. omits. 15. P. omits words between आगइ आवी......तुम्हे ।

॥ तुम्ह रहइं जीवितव्य दाता मातापिता समानु । एह महात्मा तणी भक्तिपरि सेव करिजिउ' ।
भणी करी गरुडेंदु आपणइ थानकि पहुतउ ।

§427) तुम्हे पुणि ज्ञाततत्त्व तेह मुनि कन्हइ संजमु ले करी दुष्कर तप नियमपर हूया । तुम्ह
न्येगु मरी करी प्रथमि देवलोकि विद्युत्प्रभाभिधानु देवु हूयउ । तउं लहुडउ विद्युत्सुंदरु नामि तिहां
वु हूयउ । तिहां हूंतउ वडउ भाई चवी करी विजयवती नगरी माहि मदनदत्तु नामि नरवर्मु[1] राजेंद्र
मंत्तु वाणिया नउ पुत्तु हूयउ । सु पुणि इउ धनकारणि फिरतउ[2] हिवडां तइं दीठउं । तिणि कारणि
शाभ्यास यमइतउ तू रहइं[3] एह विपइ स्नेहातिसउ । इसउं सांभली करी तिणि देवि एउ एकावली
मू रहइं दीधउ । महात्मा पूछिउ 'मूं रहइं निद्रादिक अपलक्षण किसइ कारणि ?' महात्मा कहिउं,
तहं मरणु ढूकडउं वर्त्तइ' । तिणि भणिउं,' 'किहां मूं रहइं उत्पत्ति किसी परि[4] बोधिलाभु ?
मा भणिउं, 'तउं नरवर्मु[5] राजेंद्र तणउं पुत्रु हरिदत्तु नामि होइसि[7] । एउ[8] एकावलीहारु देखी
[illegible]मिति ।' इसी परि छिन्नसंशय हूंतउ सूरी नमी करी गयउ ।

§428) तउ मइं गुरु पूछिउ[1] । 'भगवन् एउ हारु किसउ ?' सूरि भणिउं, 'पूर्विहिं नवोत्पन्नु
[illegible]दु इंद्रस्थानि गयउ । इंद्रि हाकिउ नाठउ ।' अधोमुख नासता हूंता एउ हारु गला हूंतउ ईहां हूंतउ
न्यातमइ द्वीपि पडिउ । इणि देवि लाधउ ।' इसउं सांभली गुरु वांदी पंचवीस वरिस सीम देसांतरि
इसी धनु प्रभूतु उपार्जी करी एउं हवडां[2] स्वामिन् ! आविउ । स्वामिन् ! सु देवु तुम्हारउ पुत्तु हूयउ किं नहीं ।'
द्रि कहिउं, 'मित्र ! हरिदत्त रहइं हारु दिखालउं ।' हरिदत्त तेडी हारु दिखालिउ । हार दर्शनइतउ तेह रहइं
[illegible]तिस्मरणु[4] ऊपनउं । राजेंद्रि पूछिइ हूंतइ हरिदत्ति कुमारि तिम हिं जि पूर्वभवसंबंधु कहिउ जिम पूर्विहिं
दत्ति[5] कहिउ । राजा चित्त माहि चीतवइ 'जु आगइ धर्मविषइ विवादु हूयउ सु विवादु एह पुत्र नइ
[illegible]त्रि करी उच्छेदिउ । एह विश्व माहि धर्मु जिनप्रणीतु जु[6] छइ भव्य रहइं भवभयछेदकु मोक्षसुखदायकु ।'

§429) एतलइ प्रस्तावि उद्यानपालकि राजेंदु वीनविउ, 'देव ! आजु पुष्पावतंसकि[1] उद्यानि
[illegible]शिष्य परिवृतु चतुर्ज्ञानी सुरासुर-नरेश्वर-नमस्कृतु श्री गुणंधरु[1] नामि सुगुरु समोसरिउ छइ' ।
म मेघ तणउं गर्जितु सांभली करी मयूरु नाचइ तिम तेह नउं वचनु सांभली करी राउ हरखिउ ।
[illegible]स्कंध समारूढु पुत्र-मित्रादि परिवारि[2] परिवृतु महंत ऋद्धिसमुदय करी गुरुपाद वांदिवा राउ पुहुतउ[3] ।'
[illegible]धिवत् वांदी करी यथास्थानि वइठउ । अमृतरस सारणि समान धर्मदेशना सांभलइ ।

यथा-'भो भव्या ! सर्वधर्ममूलु शिवपुरद्वारु सम्यक्त्वु वर्त्तइ । सु सम्यक्त्वु देव गुरु धर्म विपइ
[illegible] गुरु धर्म बुद्धिस्वरूपु कहियइ । अदेव अगुरु अधर्म विपइ देव गुरु धर्म बुद्धि स्वरूपु सम्यक्त्व विपरीतु
[illegible]थ्यात्वु कहियइ । तत्र जित-राग-द्वेष-मोहु देवु जिनु महाव्रत-धरु गुरु । दयामूलु धर्मु इति । इणि
[illegible]म्यक्त्वि लाधइ नरकगति तिर्यग्गति गमनु न हुयइं । मनुष्य-देव-मोक्ष-सुख जीव रहइं स्वाधीन हुयइं ।
[illegible]था च भणितं -

सम्मत्तंमि उ लद्धे ठइयाइं नरयतिरियदाराइं ।
दिव्वाणि माणुसाणि य मुक्खसुहाइं सहीणाइं ॥　　[५८१]

§430) इसउं सांभली करी राजा पुत्र सहितु सम्यक्त्व पूर्वु गृहिधर्मु ले करी संतुष्टु हूतउं आपणइ
घरि गयउ । अनेरइ दिवसि सुधर्मा सभा माहि वइठउ सौधर्मेंदु नरवर्म राजेंद्र तणउं सम्यक्त्वु देवहीं रहइं

---

§ 427)1. Bh.-वर्म । 2. Bh. adds हूंतउं । 3. P. रइं । 4. Bh पु (पुणि or प-) भणिउं । 5. P. omits
6. Bh.-वर्म । 7. Bh. had होइसिइ, but final -इ is cancelled P. होइसिइ । 8. P. omits.

§ 428)1. Bh. पूछिउ । 2. Bh. हवडां इउं । 3. P. omits. 4. P.-स्मरणु । 5. Bh. मन-।
6. P. एकु । (in B. ॥ appears like एकु).

[illegible] 3. P. पहुतउ ।

§ 429)1. P

अधालनीउ कहइ । तउ पाछइ सुवेगु देवु इंद्रवचन विषइ संदेहु धरतउ हूंतउ वैक्रियऋद्धि[1] विस्तार सहितु परीक्षा निमित्तु आविउ । तिणि देवि दिव्यशक्ति बलि मायागउ[2] साधु समूहु अकार्य करतउ राजेंद्र रहइं तिम दिखालिउ जिम जउ अनेरउ देखइ तउ धर्म हूंतउ निश्चइं सउं पडवडइ । नरवर्मु राजेंदु पुणि तिम साधुवृंदु देखी मन माहि चींतवइ । 'कयादिकहं[3] करी हेम जिम शुद्धु जिन धर्मु एकु छइं । किंतु ए पुण मुनि गुण कर्मभारभावि करी विनडिया[4] हूंता जिन धर्म रहइं लाघवु करइं । सु लाघवु जि मतिमंत हुयइं तेहे टालि हूंती अवश्यु राखिवउ' इसउं चींतवी करी सामभाविहिं[5] जि करी अकार्य हूंता मुनि निवारिया । देवु सम्यक्त्वविषइ निश्चलु जाणी करी नरवर्म राय रहइं प्रणमी करी साक्षात्कारि होई कहइ– 'महाराज धन्यु तउं जेह तू रहइं सभा माहि बइठउ इंद्र महाराजु सम्यक्त्व तणी स्तुति करइ ।' इसउं भणी आरणउ मउडु आपी करी आपणइ थानकि गयउ । नरवर्मु महाराजु सम्यक्त्वमूलु गृहिधर्मु[6] चिरकालु प्रतिपाली करी पुत्र मित्रादि सहितु दीक्षा ले करी सुगति पहुतउ ॥

> नरवर्म नरेंद्रस्य दृष्ट्वा सम्यक्त्वजं फलम् ।
> स्वर्गापवर्गदं भव्याः सम्यक्त्वे सन्तु निश्चलाः ॥ [५८२]

§431) अथ सम्यक्त्वातिचार प्रतिक्रमणु प्रस्तुतु कहइ ।

जीवादि तत्त्वविषइ संदेह करणु शंका कहियइ १ अहिंसाद्विलेस दर्शनहतउ पहू धर्मु जिनभणिउ पुणि धर्मु इसी परि अन्य धर्म तणी स्पृहा आकांक्षा कहियइ २ । 'विगिंछि'त्ति धर्मफल विषइ संदेहु विचिकित्सा कहियइ । विउच्छ'त्ति पाठि हूंतइ जिहं यथास्थितु जीवादि तत्त्वु जाणइं तिणि कारणि विद्वांस साधु कहियइ ३ ।[1] अहो मलमलिना एह इसी परि साधु निंदा विउच्छा कहियइ ३ । 'पसंस तह संथवो कुलिंगीसु' कहिउ वचनप्रामाणि वेदकाणिद्वगादिकु अनिसउ को एकु मिथ्यादृष्टि तणउ देखी करी 'अहो महाकवि एउ' इसी परि स्तुति मिथ्यादृष्टि कुलिंगी तेह तणी प्रशंसा कहियइ ४ । तथा संस्तवु मिथ्यादृष्टि कुलिंगी तेह सउं मैत्री कहियइ ५ ॥

§432) इहां शंका विषइ उदाहरणु । यथा–

नगरि एकि सेठि एक[1] तणा बि पुत्र लेखाल पढइं । तीहं रहइं आरोग्य बुद्धि वृद्धि निमित्तु माता सद्भाव भाजी पेया एकांतस्थानि थिकी[2] करावइ । तीहं माहि एक रहइं मक्षिकादि शंका करी मनि घृण ऊपजइ । मातरपुत्रकपूर्वक सरीखुकल इणि कारणि तेह रहइं वल्गुली रोगु ऊपनउ । मूयउ । इहलोक सुख हूंतउ चूकउ । बीजउ पुनु मन माहि[3] चींतवइ 'माता अहितु कदाकालिहिं न चींतवइं ।' तिणि कारणि निस्संदेहु थिकउ[4] पेयापानकु करतउ आरोग्य बुद्धि वृद्धि सहितु चिरंजीवी हुयउ इहलोकि सुखभागी हुयउ ।

इसी परि सम्यक्त्व विषइ पुणि जु जीवु संदेहवंत हुयइ सु सम्यक्त्वु न लहइ । तिणि[5] हूंतउ सम्यक्त्वु लहइ ।

§433) आकांक्षा[1] विषइ उदाहरणु–

राजा अनइ प्रधानपुत्रु बे जणा अश्वापहारवंत अटवी माहि गया । भूखिया हुया । वनफल खाधां । अतिहि आंदिया । राजा सूपकार तेडी करी कहइ, 'जि के भक्ष्यभेद[2] संसारइं ति सगलाइं करउ' ।

§430 1. P. [illegible] (in B. [illegible] like [illegible]) 2. Bh. [illegible] । 3. Bh. [illegible] । B. and [illegible] have [illegible] after [illegible] । 4. P. [illegible] । 5. Bh. P. [illegible] । 6. P. [illegible] । 7. P. [illegible]

§431 1. [illegible] differently: '[illegible]'[illegible] [illegible] ।

§432 1. B. P. [illegible] 2. P. [illegible] । 3. P. [illegible] । 4. P. [illegible] । 5. P. [illegible] ।

§433 1. P. [illegible] । 2. P. [illegible] ।

सूपकारे कीधा। राजा आगइ आणिया। राजेंद्रि चीतविउं 'मधुरमोदक पूपकादिक भक्ष्यभेद पाछेई भाविसिइं' इणि कारणि पहिलउं वाकुल[3] ढोकलादिक भक्ष्यभेद भरवी करी पाछइ मधुराहार भक्षणु कीधउं। किसइ कारणि जिम 'सवहीं आहार तणा स्वाद लिउं'। महंतइ[4] पुणि जीमी करी वमन विरेचनादिकु कीधउं। राजेंद्रि पुणि सर्वाहार भोगलुब्धि हूंतइ वमनविरेचनादिकु न कीधउं। तिणि आहारदोषि राउ मूयउ। इहलोक सुख चूकउ। महामात्यु जीविउ। इहलोक सुखभागी हूयउ। तिम जीवु पुणि अन्यान्य धर्मतत्त्वबुद्धि करी वांछतउ मोक्षसुख हूंतउ[5] चूकइ। अवांछतउ[6] मुक्तिसुखभागी हुयइ। इणि कारणि जिम लवण अनइ कर्पूर रहइं, तिमिर अनइ प्रकाश रहइं, गोक्षीर अनइ अर्कक्षीर रहइं, खल[7] अनइ गुल रहइं समता न कीजइं तिम शिवशर्मदायक[8] जिनधर्म अनइ जन्मजरामरणाद्यनंतदुरंतदुक्खदायक मिथ्यादृष्टि धर्म रहइं समानता लक्षण आकांक्षा न कीजइं।

§434) धर्मफल संदेह विषइ वणिय तस्कर बिहुं तणउं उदाहरणु। तथाहि–वसंतपुर नामि नगरु जिणदास नामि श्रावकु। तेह तणउ महेसरदत्तु नामि मित्रु। जिणदासु आगासगामिणी[1] विद्या तणइ बलि नंदीश्वरि द्वीपि[2] शाश्वत चैत्य वांदिवा गयउ। आविउ हूंतउ महेसरदत्ति भणिउ, 'मित्र ताहरइ देहि अपूर्वु सुगंधु[3] गंधाइ'। तिणि नंदीश्वर यात्रावृत्तांतु कहिउ। तउ महेसरदत्तु भणइ, 'मू रहइं पुणि आकाशगामिनी विद्या आपि'। तउ अतिनिर्बंधि कीधइ हूंतइ जिणदासि[4] महेसरदत्त रहइं विद्या[5] दीधी। कृष्ण चतुर्दशी रात्रि समइ श्मसानि[6] जाई, हेठइ अग्निकुंडु ज्वलइ, ऊपरि वृक्ष तणी शाखा छीकउं[7] बांधी करी आपणपइं तिहां चडी करी विद्या जपइ। जावि संपूर्णि हूंतइ एक एक तणी खड्ग घाइ करी छेदइ। जेतीवार चउथी तणी छेदिवा वार हुयइ तेतीवार मन माहि संदेहु ऊपजइ 'विद्यासिद्धि होसिइ[8] किंवा नहीं होइ, पुण मू रहइं मरणु निश्चइं होइसिइ'। तउ वलीवली छीकउं बांधइ वलीवली संदेहु करइ। एतलइ[9] प्रस्तावि चोरु एकु चोरी करी तिहां आविउ। केडइ वाहर पुण[10] आवी। चोरु श्मशान वनगहन माहि पइठउ। वाहर वाहिरि वेढु करी रही। चोरि महेसरदत्तु चडतउ ऊतरतउ देखी करी बोलाविउ। 'तउं जे[11] विद्या साधइ छइ स मू रहइं आपि। एउ माहरउं धनु तउं[12] लइ'। तिणि चीतविउं, 'भलउ मू रहइं एतला फल तणी प्राप्ति छइं' इसउं भणी करी विद्या चोर रहइं आपी, चोर तणउं धनु आपणपइं लीधउं। चोरि निःसंदेहि थिकइ[13] एक वार रूडी परि जापु करी खड्ग नइ एक घाइ करी चियारइ तणी छेदी करी[14] आकाशि ऊपरमिउ[15]। प्रभाति चोर पगि लागी वाहर वन माहि आवी महेसरदत्तु वस्तुसंयुक्तु चोरु करी बांधउ। मारिवा लीजतउ देखी करी चोरि आकाशगति विद्यागुरु भणी नगर रहइं वीहावी करी मेल्हाविउ।

इसी परि जु धर्मफल[16] विषइ संशउ करइ सु महेसरदत्त जिम अपाइ पडइ जु संशउ न करइ सु चोर जिम सकल अनर्थ हूंतउ छूटइ। मनोवांछितु लहइ।

§435) साधु निंदा विषइ दुर्गंधा[1] उदाहरणु। मिथ्यादृष्टि प्रशंसा परिहार विषइ सकडालु महामात्यु उदाहरणु। मिथ्यादृष्टि संस्तवु[2] मिथ्यादृष्टि सउं मैत्री कहियइ।

तेह विषइ जिणदासु उदाहरणु। यथा–

ऊजीणी[3] नामि नगरी। जिणदासु नामि सुश्रावकु[4]। तिहां एकादशमी प्रतिमा वहतउ मुनि सरसउ विहारु करतउ सार्थभ्रष्टु हूंतउ बौद्धहं तणइ सार्थि मिलिउ। मार्गि मूयउ। आपणउ आचारु करी बौद्धे[5]

---

433) 3. P. वाकुला। 4. Bh. महतइ। 5. B. has added words between सउ...तउ...in the margin. 6. Bh. अवांछतु। 7. P. खलि। 8. Bh. शव-।

§434) 1. P. आकास-। 2. P. दीपि 3. P. गंधु। 4. Bh. जिणि-। 5. P. omits. 6. Bh. P. श्मसानि। 7. P. छीकउ। 8. P. होइसिइ। 9. P. एतइ। 10. P. पुणि। 11. Bh. P. ज। 12. P. तूं। 13. P. थकइ। 14. P. omits. 15. Bh. ऊपरि-। P. ऊप मिउ।) 16. Bh. omits.

§435) 1. दुर्गंछा। 2. P. स्तविउ। 3. P. ऊजेणी। 4. Bh. श्रावकु। 5. B. बौद्ध।

रक्तवस्त्र वेष्टितु करी तिहां मेल्हिउ। सु नमस्कार-स्मरण-परायणु[6] मरी करी देवु हूयउ। अवधिज्ञानि आत्मदेहु देखी बौद्धभकु[7] हूयउ। इणि कारणि मिथ्यादृष्टि परिचउ न कीजइ। बौद्धहं रहइं रत्न स्वर्णालंकारालंकृति हाथि करी अदृष्टु हूंतउ भोजनु दियइ। लोकमध्यभागि इसउ अतिसउ बौद्धहं रहइं हूयउ। 'अहो धन्यु बौद्धशासनु!' श्रावकु लोकु लोके अवलेहियइ।

5 अनेरइ दिवसि श्रीधर्मघोषसूरि नाम[8] आचार्यमिश्र तिहां आविया। श्रावके वांदी करी तिहां ना वृत्तांतु कहिउ। आचार्ये उपयोगि दीधइ सगलु वृत्तांतु जाणी करी एकु साधु संघाटउ मोकलिउ। भणिउं "बौद्ध देव कन्हा भिक्षा विचारिसिइं, पूर्णि तुम्हे म लेजिउ[10]। हाथु साही इसउं भणिजिउ। गुज्झगा! बुज्झ, बुज्झ, मा मुज्झ।" इसउं तेहे कीधउं। देव रहइं सुभ कर्मोदय लगी प्रतिबोधु ऊपनउ। भवांतरु जाणिउ। गुरुपादमूलि आवी 'मिथ्या दुष्कृतु' दीधउं। थली साधु रहइं भक्ति करिवा लागउ।
10 ईहं सम्यक्त्वातिचार तणइ आचरणि जु कम्मु बांधउं सु 'पडिकम्मे देसियं सव्वं' पूर्ववत्।

§436) सम्यक्त्व प्रकर्षइतउ तीर्थंकर नामकर्म[1] तणी उपार्जना जीव रहइं हुयइ। सम्यक्त्व प्रकर्षु पुण वीस थानक संसेवना करी हुयइ। तिणि कारणि वीस थानक विचारु लिखियइ।

अर्हदाराधनु १, सिद्धाराधनु २, प्रवचनाराधनु ३, गुर्वाराधनु ४, स्थविराराधनु ५, श्रुतधराराधनु ६, तपस्विशुश्रूषा ७, अभीक्ष्णज्ञानोपयोगु ८, सम्यक्त्वनिरतीचारता ९, विनयनिरतिचारता
15 १०, आवश्यकनिरतिचारता[2] ११, मूलोत्तरगुण निरतिचारता १२, क्षणलवसंज्ञिकालिहिं आर्तरौद्रपरिहार धर्मध्यानासेवना[3] १३, तपश्चरणकरणता १४, सुपात्रदानता १५, वैयावृत्यकरणता १६, मनःसमाधि संपादना १७, नवज्ञानग्रहणता १८, श्रुतभक्तिकरणता १९, प्रवचनप्रभावना[4] २०।

§437) तत्र-अरहंतहं रहइं त्रिहुं काले विधिवत् पूजा सद्भूतगुणस्तवन यथादर्शनप्रणमनादि
20 करणु अर्हदाराधनु पहिलउं थानकुं।

लोकाग्रप्राप्त प्रक्षीणशेषकर्मजाल अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंतसम्यक्त्व अनंतवीर्य अनंतानंत छइं सिद्ध तीहं तणइ विषइ एकाग्रता मन माहि ज कीजइ स बीजउं थानकु।

चतुर्विध श्रीसंघरूपु प्रवचनु अथवा द्वादशांग लक्षणु प्रवचनु तेह[1] विषइ शक्ति[2] तणइ अनुसारि आज्ञाप्रतिपालनु जु कीजइ सु त्रीजउं थानकु।

25 पंचमहाव्रत प्रतिपालक शुद्धधर्मोपदेशदायक गुरु तणइ विषइ परतंत्रता करी सर्व धर्म कर्म विषइ जु प्रवर्त्तनु सु गुर्वाराधनु चउथउं थानकु।

समवायांगधर अथवा वयोवृद्ध जि छइं स्थविर तीहं तणइ विषइ जु निश्चल भक्तिकरणु ते
30 स्थविराराधनु पांचमउं थानकु।

सूत्रधर कन्हा अर्थधर प्रधानु अर्थधर कन्हा सूत्रार्थधर प्रधानु इसी परि बहुश्रुतहं तणइ विषइ सातेतर भावि करी जु भक्तिकरणु सु बहुश्रुताराधनु छट्ठउं थानकु॥

तीव्रतपु जि करइं तीहं तणइ विषइ श्रद्धानपरायण होई करी जु शुश्रूषा कीजइ सु तपस्विसमाराधनु सातमउं थानकु॥
35 सिद्धांत तणा पाठ विषइ गुणन विषइ प्ररूपण विषइ वारवार जु सावधानता भवनु सु अभीक्ष्णज्ञानोपयोगु आठमउं थानकु॥

§435) 6. P. सरर। 7. Bh. भविधि। 8. Bh. भक्त। 9. Bh. omits. 10. P. लिजिउ। evidently confusing the preceding म with लेजिउ।

§436) 1. Bh. omits-कर्म। 2. Bh. adds शीलव्रतनिरतिचारता १२। 3. Bh.-धर्मध्यानशुद्धध्यानासेवना। 4. Bh. adds इत्यादि।

§437) 1 Bh. adds तणइ। 2 Bh. भक्ति।

हर्ष रोमांचितगात्र होई करी सिद्धांत विषइ ज भक्ति कीजइ सिद्धांत पुस्तक लिखावियां सउं सारावियइ जु सु श्रुतभक्ति लक्षणु उगणवीसमउं थानकु ।

धर्मव्याख्यान प्रतिवादि निराकरण कविता कलादिकहं करी जु तीर्थ प्रभावना कीजइ सु प्रभावकु वीसमउं थानकु ।

§439) तथा च भणितं –

अरहंत १ सिद्ध २ पवयण ३ गुरु ४ थेर ५ बहुस्सुए ६ तवस्सीसु ७ ।
वच्छल्लयाइ एसुं अभिक्ख नाणोवओगे य ८ ॥ [५८५]
दंसण ९ विणए १० आवस्सए ११ सीलव्वए १२ निरइयारो ।
खण लव १३ तव १४ चियाए १५ वेयावच्चे १६ समाही १७ य ॥ [५८६]
अपुव्वनाणगहणे १८ सुयभत्ती १९ पवयणे पभावणया २० ।
एएहिं कारणेहिं तित्थयरत्तं लहइ जीवो ॥ [५८७]

§440) अथ चारित्रातिचार प्रतिक्रमणु करिवा वांछतउ हूंतउ पहिलउं सामान्यहिं आरंभ निंदा निमित्तु भणइ ।

छक्काय समारंभे, पयणे पयावणे य जे दोसा ।
अत्तट्ठा य परट्ठा, उभयट्ठा चेव तं निंदे ॥ [५८८]

पृथिवी सलिल अनल अनिल वनस्पति त्रस लक्षण जि छइं षट्काय तीहं नइ समारंभि परितापनि तथा संरंभि आरंभि इसउं पुणि जाणिवउं । तत्र संरंभु संकल्पु आरंभु विद्रावणु। इहं छक्काय जीव संबंधिया समारंभ संरंभ आरंभ हूंता जि दोष पाप समाचरण न पुण अतीचार अंगीकरण तणइ अभावि हूंतइ मालिन्य तणा अभावहतउ किसइ हूंतइ । दोस इत्याह- 'पयणे' पचनि हूंतइ 'पयावणे य' अनइ पचावनि हूंतइ चकारहतउ अनुमति हूंती पुण जाणिवउं। कउण निमित्तु 'अत्तट्ठा य परट्ठा' आपणपा निमित्तु, पर प्राघुर्णकु तेह निमित्तु । 'उभयट्ठा' आप पर बिहुं निमित्तु । चकारु अनर्थक राग द्वेषादि दोष संसूचकु । ए चकारु प्रकारहं रहइं ईयत्ता सूचकु आप पर उभयलक्षण छइं तिन्हि पक्ष तीहं हूंतउ चउथउ पक्षु नही इणि कारणि । अथवा अतिमुग्धता लगी साधु रहइं असनि पचिइ मू रहइं पुण्यु होइसिइ इसी परि आपणपा निमित्तु । तथा पर मातादिक तीहं रहइं पुण्यु होइसिइ इसी परि 'परट्ठा' परनिमित्तु । पुणि अम्ह बिहुं रहइं साधु निमित्तु पचनादिकि कीजतइ हूंतइ पुण्यु होइसिइ इसि परि उभयट्ठा उभयनिमित्तु पुणि । अथवा छक्काय समारंभादिकहं विषइ सचित्त पुढविकाय लवणादिक । अप्काय सचित्त जलादिक । वाउकाय अग्नि संधूपणादि कारणि वातकरणादिक । तेउकाय अग्नि प्रज्वालनादिक । वनस्पतिकाय वनछेदन क्षेत्र नीदाण करण सूडण करणादिक । त्रसकाय कीटिकादि गृहप्रमार्जन खंडन पेषण अणछाणियां जल व्यापारणादिक षट्काय जीव सावद्यव्यापार । तेहे करी अनेराइं जि के जीव आरंभु करतां विणसइं तीहं करी जि के पाप कीधां ति पाप निंदउं । पूर्ववत् ।

§441) अथ सामान्यहिं चारित्रातिचार प्रतिक्रमणु भणइ ।

पंचन्हमणुव्वयाणं गुणव्वयाणं च तिन्हमइयारे ।
सिक्खाणं च चउन्हं पडिक्कमे देसियं सव्वं ॥ सुगमा ॥

---

§438)5 Bh. सव्व ।

विशेषु पुणि इसउ सम्यक्त्वइतउ अणु पाछइ कीजइं। इणि कारणि अणुव्रत कहियइं ॥
अथवा महाव्रतहं हूंता अणु लहुडां इणि कारणि अणुव्रत पांच कहियइं ॥

तथा च भणितं –

> थूला सुहुमा जीवा संकप्पारंभओ य ते दुविहा ।
> सावराह[1] निरवराहा साविक्खा चेव निरविक्खा ॥ [५९०]

अत्र थूल जीव बेंद्रियादिक सूक्ष्म एकेंद्रिय पृथिवीकायादिक । तत्र श्रावक रहइं एकेंद्रिय जीव-रक्षा सर्वथा पलइ नहीं तिणि कारणि दशविशा जीवदया । थूल जीव बेंद्रियादिक संकल्पिहिं करी विणासिवा नहीं । आरंभिहिं करी विणासिवा नहीं । तत्र आरंभइतउ विनासरक्षा श्रावक रहइं सर्वथा पलइ नहीं । तिणि कारणि पांच विशा ।

तथा ति सापराधइ राखिवा निरपराधइ राखिवा । तत्र सापराध नी रक्षा श्रावक रहइं सर्वथा पलइ नहीं तिणि कारणि अढाई विशा ।

सापेक्षबुद्धि करी पुण न दुहवेवा निरपेक्षबुद्धि करी पुण न दुहवेवा । तत्र श्रावक रहइं सापेक्ष-बुद्धि करी दुहवण निषेधु न संभवइ तिणि कारणि सवादु विशउ एकु जीवदया श्रावक रहइं हुयइ । तिणि कारणि मेरुसमान महाव्रत तणी अपेक्षा करी श्रावकव्रत अणुव्रत कहियइं ति पांच मूल गुण कहियइं । तीहीं जि रहइं विशेष गुणकारिता करी दिग्व्रतादिक त्रिन्हि गुणव्रत कहियइं । पांच अणु-व्रत त्रिन्हि गुणव्रत यावज्जीव पालनीय हुयइं । शिक्षाव्रत पुणि चत्तारि सामायिक देशावकाशिकादिक कदाचित्पालनीय । जिम शिष्य रहइं विद्या पुनपुन अभ्यासयोग्य । तिम तिम सामायिकादिक अभ्यास-योग्य ।　　तथा च भणितं —

' जाहे खणिओ ताहे सामाइयं कुज्जा ' इणि आलावइ ' खणिओ ' इसइ पाठि जेतीवार गृह-कार्यु कांई न हुयइं तेतीवार श्रावकु क्षणिकु धर्मावसरवंतु हूंतउ सामायिकु करिजिउ । इसउ अर्थु ।

' खणियं ' इसइ पाठि जेतीवार क्षणु प्रस्तावु हुयइ तेतीवार सामायिकु ' कुज्जा ' कुर्यात् करिजिउ न पुण दिनावसानिहिं जि[2] अथवा निशावसानिहिं जि ।

§442) अथ प्रथमव्रत प्रतिक्रमणु भणइ ।

> पढमे अणुव्वयंमी थूलग पाणाइवाय विरईओ ।
> आयरियमपसत्थे इत्थ पमायप्पसंगेणं ॥ [५९१]

प्रथमि सर्वव्रत माहि सारता करी धुरि वर्त्तमानि अणुव्रति महाव्रत तणी अपेक्षा करी लघुतरि । ' थूलग पाणाइवाय विरईओ ' गत्यादिकहं स्पष्टहं लिंगहं करी बाह्यहीं रहइं जीवत्व बुद्धि करी परिज्ञात स्थूल द्वींद्रियादिक जीव थूलगपाण कहियइं । तीह नउं मांस रुधिर दंत नख अस्थि शृंग चर्म्मादिकहं तणइ कारणि अतिपातु विनासु तेह नी विरति निवृत्ति थूलग पाणाइवाय विरति तेह सकासइतउ ' आयरियमपसत्थे ' । ' अतिचरिउं ' अतिक्रमिउं किसइं हूंतइ । अप्रशस्ति भावि हूंतइ । किसउ अर्थु । क्रोधादिकि उदयप्राप्ति हूंतइ । ' इत्थ पमायप्पसंगेणं ' अत्र प्राणातिपात विषइ प्रमाद मद्यादिक पांच[1] तीहं नइ विषइ प्रसंजनु प्रकर्षि करी प्रवर्त्तनु प्रमाद प्रसंगु तिणि करी प्रमाद प्रसंग ग्रहणि करी सजातीय[2] आकुट्यादिक जि छइं तीह नउं पुणि ग्रहणु हुयइ ॥ इति गाथार्थः ।

---

§441) 1. B. Bh. सवराह । 2 Bh. omits.

§442) 1. Bh. पंच । 2. Bh. साजातीय ।

(§448) शत्रुंजय राजा सूरपुत्र विपइ समत्सरु थिकउ मरी वन माहि चित्रकु [illegible]
[illegible] मृग पुणि देसांतर फिरतउ हूंतउ जिणि वनि श्वापजीवु चित्रकु [illegible]
[illegible] बंडउ। अनइ पूर्वभव वैरतउ मारिउ। तिहांई जि मरी करी भिल्लु हूआ।
[illegible] हूंतउ तिणिहिं जि चित्रकि बीजी वार पुणि मारिउ। सु चीत्रउ तेह . [illegible]
[illegible] जि बिहुं वन माहि बे जीव शूकर हूया। त्रिहुं वरसहं तणां हूंता आपणा [illegible]
[illegible] मारिया। तउ पाछइ अनेरइ किणिहिं वनि मृग ऊपना। समत्सर हूंता भिल्लें मारि[illegible]
[illegible] हूया। युद्ध करता यूथभ्रष्ट हूंता भिल्ले बांधी करी चंद्रराजेंद्र तणइ [illegible]
[illegible] युद्धु करता हूंतां पऊंतारे महाकाष्ठि रासियइं। एक दिवसि तिहां [illegible]
[illegible] मारिउ। भक्तिभारभासुर अंतःपुर चतुरंग सेना परिवृतु चंद्रु नरेंद्रु आवी करी [illegible]
[illegible] तिहुं वारणहं तणउं कारणु वैर कारणु पूछइ। केवली सकलु तेह [illegible]
[illegible] सु भीलु नउं चरित्रु सांभली करी चंद्रु राजेंद्रु अति वैराग्य संवेगवंतु हूंतउ
[illegible] करी दीक्षा प्राप्तु हूयउ। सु दुस्तपु तपु करी चंद्रु देवलोकि गयउ। ति गजराज [illegible]
[illegible] मरी करी पहिलइ नरकि गया। तिहां हूंता उद्वृत्ति करी पापजोनि माहि
[illegible] हूंतउ मरी करी शुद्ध मनुष्यभवु लही करी [illegible]
[illegible] हूया।

न्यासापहार कूटसाक्षि विहुं अदत्तादान माहि संभविहिं हूंतइ। ईहां वचन राहइं प्रधान भावना करी अलीक वचन भावना लगी ईहां तीहं नउं भणनु कीजइ। लभ्यदेयवस्तु विषइ जु मानिउं छइ द्रव्यु तेह नइ विषइ राग द्वेष भावना लगी अलभ्य अप्रामव्यना भणनु कूडी साखि कहियइ ५। ए बे द्विपदा-लीक माहि आवइं। पुणि लोक माहि ए बे अतिनिंदित इनि जुयउं भणनुं ईह नउं कीधउं। एह पंचविध अलीक तणी ज विरति तेह तउ 'आपाणए'त्यादि पूर्ववत्॥

एह व्रत नो अनाचार नउं प्रतिक्रमणु कहइ।

सहसा रहसदारे मोसुवएसे य कूडलेहे य।
बीयवयस्सऽइयारे पडिक्कमे देसियं सव्वं॥ [६०३]

तत्र मृषु भूचकु हुयइ तिणि कारणि सहसात्कारि करी सहसात्कारि अणआलोची करी 'चोर तउं' 'पारदारिकु तउं' इसी परि कही एक रहइं अभ्याख्यानु अणहूंता दोष तणउं रोपणु सहसाभ्याख्यानु जाणियउं १।

तथा रहः शब्दि करी रहोमंत्रभेदु जाणियउ-सु पुण इसी परि। रहसु एकांतु तिणि एकांति मंत्रु आलोचु करतां देखी करी इमउं इमउं राजविरुद्ध आलोचइं छइं। २ 'दार' इति विश्वास लगी स्वदाराहं रहस्य कलत्रहं जि कथन कहियां हुयइं तीहं नउं प्रकाशतउ अनेरा आगिलइ समइ कथनु दारमंत्रभेदु कहियइ। उपलक्षणत्वइतउ मित्रमंत्रभेदु पुण दारमंत्रभेदि करी जाणियउ ३।

अणजाणिया औषध-मंत्रादिकहं तणउं कथनु मृषोपदेशु ४, कहियइ। 'कूडलेहे य' त्ति। कूडा अर्थ नउं लेखनु कूडलेखु कहियइ ५।

'बीयवयस्से'त्यादि पूर्व जिम।

§451) अथ मृषावाद परिहारविषइ हंसराजेंद्र कथा लिखियइ।

अणुव्रतं द्वितीयं तद्वाच्यं क्वापि नाऽनृतम्।
भू-कन्या-गो-धनन्यास-साक्ष्येषु न विशेषतः॥ [६०४]
जन्तूनामहितं यत्तद्वाच्यं सत्यमप्यहो।
गुर्वाभिर्धीमपक्षेन शोधनीयोऽत्र पृच्छकः॥ [६०५]
ईदृग् सत्यगिरो वक्ता यथा राजपुरीपतिः।
वैभवं विभरामास हंसः संश्रूयतां तथा॥ [६०६]

राजपुरी नामि पुरी। हंसु[1] राजा। सम्यक्त्वमूल श्रावकधर्मधुरा धौरेयता धरतउ अनेरइ दिवसि मास चत्र[2] लंघ्यमार्गि रत्नशृंगगिरि पूर्वजकारित श्रीऋषभदेव देवगृहि तीर्थयात्रा करिवा सकललोक सहितु सम्यक्चलनसहितु गर्वरहितु हूंतउ चालिउ। अर्द्धमार्गि संघि गयइ हूंतइ पाछा हूंतउ चर एकु आविउ। राजेंद्र रहइं वीनवइ, "महाराज! तुम्ह चालियां पाछइ दसमइ दिवसि अर्जुनु[3] नामि सीमालु पुरी लेवा आविउ। तुम्हे जि के रक्षपाल मेल्हिया हूंता ति सव्वे तिणि जीता। राजपुरी आपणी करी बइठउ। सयमीतु लोकु वेगाली करी तुम्हारइ सिंहासनि उपविष्टु वर्तइ। अनेरा नइ[4] घरि नाठउ छइ सुमित्रु नामि मंत्री तीणि हउं तुम्ह कन्हइ मोकलिउ। इणि कारणि जु काई युक्तु हुयइ सु कीजउ।" तत्कालि समीपगत जि छइ सुभट तेहे कहिउं, "महाराज! हवडां पाछा वलियइ। अम्ह हूंता कउणु[5] तादरद पुरि विस्फुरइ"। तीहं आगइ राजा कहइ-

§450) 5. Bh. omits. 6. B. omits. 7. Bh. विभागइं।

§451) 1 Bh. adds नामि। 2 Bh. gloss: दिन। 3 P. अर्जुन. 4 P. इ। 5 P. कवण। 6 P. पाडइ। 7 P. सवैना सिद्धि।

संपदो विपदोऽपि स्युः पूर्वकर्मवशाद्ध्रुवम् ।
मूढो मुदं विषादं वा तत्संपत्तिषु तन्वते ॥ [६०७]

पुण्यप्राप्तिनिबंधनु यात्राकरणु मेल्ही करी पुण्यलभ्य राज्य तणइ कारणि पाछउं[6] वलनु युक्तउं नहीं । तथा सर्वनासिहिं[7] यात्रा अकरी हउं वलउं नही । यदाहुः-

5 प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचैः प्रारभ्य विघ्नचकिता विरमन्ति मध्याः ।
विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः प्रारब्धमुत्तमजना न परित्यजन्ति ॥ [६०८]

§452) इसउं[1] भणी करी हंसु राजा आघउ चालिउ । परिवारु क्रमि क्रमि सगलुं पाछउ वलिउ । एकु छत्रधरू आपणापा पासि देखी करि वस्त्रालंकार तुरंगमादि वस्तु समस्त दे करी पाछउ मोकलिउ । जउ एतलउ लोकु आवत तउ पुणि पुण्यविभागु[2] लियत । लोकु पाछउ गयउ तउ हव 10 मू एकलाई जि रहइं पुण्यु होइसिइ । इसउं मन माहि हर्षितु थिकउ[3] चीतवतउ हूंतउ तीर्थाभिमुखु एकलउ पादचारिहिं जि चालिउ ।

§453) कहीं[1] एक अटवी माहि महीपति रहइं देखतांई जि हूंता मृगु एकु परा हूंतउ नाठउ । आवी करी लतावितान माहि पइठउ । तेह नइ पगि लागउ[2] भीलु एकु धनुष्कि चडावियइ सरि सांधिइ आविउ । राजेंद्र कन्हा पूछइ । "महापुरुष ! इणि पत्रछाञि[3] वनि मृग तणउ पगु दीसइ नही । सु पुणि मृगु माहरउं भक्ष्यु[4] किहां गयउ ?" तउ पाछइ राजा चित्ति चीतवइ । 'साचइ कहिइ मृगविनासु[5] हुयइं, कूडइ कहियइ द्वितीयव्रत भंगु हुयइ । तिणि कारणि बुद्धि करी एउ विप्रतारिवउं ।' इसउं चीतवी करी 15 राजा भणइ, "अहो माहरउं स्वरूपु पूछइ । मार्गभ्रष्टु हउं इहां आविउ ।" भीलु भणइ, "मूढ ! नाठउ मृगु किहां गयउ ?" राजा भणइ, "हउं सु हंसु नामि पुरुषु" । आहेडी गाढइं स्वरि कहइ, "मृग नउं मार्गु मूर्ख मू रहइं कहि" । राजा भणइ, "राजपुरी माहरउं थानकु ।" आहेडी कोपि चडिउ[6] भणइ, "जु तू रहइं बधिरता व्याधि गाढउ छइ सु गाढेरउ होइजिउ ।" इसउं भणी करी भीलु अनेरइ मार्गि[7] गयउ । मृग रहइं मतिप्रयोगि छोडवी करी आपणउं व्रतु अलीकवचनपरिहारलक्षणु अखंडु प्रतिपालइ ।

20 §454) तिहां हूंतउ आघउ चालिउ । सांमुहा आवता मुनि रहइं वांदी करी मार्गु मेल्ही करी आघउ चालिउ । यम किंकर सरिखा भील त्रि कोपारुण लोचन धणुहिं[1] चडावियइ सरि सांधिइ आवी करी राजेंद्र आगइ कहइं । "चिरकालइतउ चौर्यनिमित्तु मृग नामि पल्लीपति नीसरिउ । सूरइतउ एह वन माहि मुंड पाखंडि एक रहइं देखी करी, अशुकनु एउ, इणि कारणि तेह मारावियां कारणि अम्हे मोकलिया । सुपाखंडिकु जइ तइं दीठउ तउ अम्हे आगइ कहि" । तउ राउ मनि चीतवइ । जउ हउं मौनु करी रहिसु अथवा व्याज वचन भणिसु तउ भील सरलइ[2] मार्गि जायता हूंता मुनि रहइं विनासहेतु[3] होइसिइं । तिणि कारणि सांप्रतु असत्यु अइ कहियइ तउ सत्य कन्हा अधिक 25 पुण्यकारकु हुयइ । इति शब्द छलइतउ सत्यु असत्यु राजा कहइ । "जिणि मार्गि तुम्हे जाउ छउ, तेह मार्ग हूंतउ जु वामउ मार्गु तिणि मार्गि महात्मा जाइ छइ" । विश्व जंतु जात रक्षणि[4] करी दक्षिण मुनि तणउ दक्षिणु मार्गु मेल्ही करी ति भील वामइ, सकल जीव विघात भावि करी वामइ मार्गि जिम-पूर्विहिं ति भील जायता हूंता तिमाहिं जि गया । मुनि कुशलि क्षेमि पहुतउ । ति भील विहुं प्रकारइं करी अमार्गि गया ।

§452) 1 P इसिउं । 2 P. पुण्यभागु । 3 P. थकउ ।
30 §453) 1 mss. कहां । 2 Bh. लागु । 3 P. -छन्न । 4 P. भक्षु । 5 Bh. मृगु- । 6 P. चडी । 7 P. मार्गहि ।
§454) 1 B.Bh. धणहि । 2 Bh. सरल । 3 P. विनाश - । 4 Bh. रक्षिणि ।

§455) राजा वचनसुधासेक समुल्लासित कीर्त्ति कल्पलतावितानु हूंतउ आघउ चालिउ। संध्यासमइ महाद्रुम एक अधोभागि वासइ रहिउ। "संधि समृद्धि धनवंति चउयइ दिवसि पडिसियां। धनसलिल माहि विलसियां[1]। दारिद्रयधुलि ऊतारिसियां" इसी वात करता वनांतरित[2] चोर राजेंद्रि तिहां जाणिया 'किसी परि ए चोर संघ विघात कारक नही हूयइं' जेतलइ मन माहि राजेंद्रु इसी परि चीतवइ तेतलइ दीपिकादीपिताशावकाश उद्यायुध महायोध तिहां आविया। राजेंद्र आगइ भणइं, 5 "तउ कवणु? के[3] एकि चोर संघ विघातकारक हेरकइं अम्ह आगइ ईहां कहिया छइं। जइ तउं जाणइ तउ कहि। जिम ति चोर मारी करी संघ रक्षा करी यशु[4] अनइ पुण्य वि वस्तु ऊपार्जां[5]। जिणि कारणि श्रीपुर नगर नायकि श्रीगाधि नामकि जिनशासन भक्ति तीहं चोरहं मारिवा निमित्तु अम्हे मोकलिया छां।" राजा पुनरपि चित्ति चीतवइ। 'साचइ भणिइ चोर घात पातकु लागइ। कूडइ[6] भणिइ संघ लुंटन दूषणु लागइ'। इसउं चीतवी करी राउ भणइ। "तुम्हे संघि जाऊ[7]। तिहां गया हूंतां रहइं 10 संघरक्षा पुण्य अनइ यशु बे बोल होइसिइं[8]। ति पुरुष राजा नइ वचनि करी रंजिया संघ माहि गया। लतावितान हूंता चोर नीसरिया राजेंद्र ने पगे आवी करी[9] पडिया। इसउं वीनवइं, "अहो महापुरुष! तइं अम्हे ईहां छता जाणिया पुण अम्हारी दया करी तइं न कहियाइं। तिणि कारणि तउं अम्ह रहइं जीवितव्यदाता परमोपकारी पिता।" इसउं भणी प्रणमी करी वली गया।

§456) प्रभाति राजा आघउ चालिउ। केतली कल गया हूंता ऊतावला असवार के एकि 15 राय रहइं मिलिया। राय आगइ कहइं, "जिणि अम्हारउ ठाकुर वींटिउ सु हंसु ईहां किहांई दीठउ। जइ दीठउ तउ कहि, जिम सु मारी करी आपणा[1] ठाकुर तणउं वैर सोधउं" इसउं सांभली करी राजा मन माहि चीतवइ। 'आपणा जीवितव्य तणइ कारणि कउणु विचक्षणु कूडउं बोलइ'? इसउं चीतवी राउ भणइ, "हउ सु हंसु राजा"! आयुध ले करी आगइ ऊभउ हूयउ। तउ एक गमइ अनेकि अश्वाधिरूढ प्रौढ[2] सुभट[3], बीजइ गमइ एकु हंसु राजा। तउ पाछइ धर्मप्रभावइतउ युद्ध करतउ राजा घणेई असवारे 20 पाछउ करी न सांकिउ। किंतु पंचपरमेष्ठि महामंत्र समरण परायणु तेऊ जु एकु सर्वे निर्जिणी करी संग्राम भूमि पीठि रहिउ।

§457) 'सत्यवादिन् जयजये'ति वाद्यपूर्वकु देवदुंदुभि नाद करण समकाल पंचवर्ण कुसुम नी वृष्टि राजेंद्र नइ मस्तकि करतउ तेह वन तणु अध्यक्षु ज्यक्षु नामि यक्षु प्रत्यक्षु आगिलइ गमइ हूयउ[1]। ताहरइ सत्यवादि करी प्रसन्नचित्तु हउं ज्यक्षाख्यु[2] यक्षु ताहरा वइरी सर्व निर्जिणी करी तू आगइ इसउं 25 कहइं, "रत्नशृंगाभिधानि गिरि जिणि दिणि यात्रा हुयइ, आजु सु दिवसु, तिणि कारणि इणि विमानि माहरइ चडि, जिम हयडाई जि तिहां जाइयइ। तउ राउ विमानि चडिउ। आपणपउं दिव्यालंकार शृंगारधारकु देखइ। आगलिइ गमइ दिव्य संगीतकु स्वकीय गुण तणइ गानि करी मनोहरु सांभलइ। गुह्यक नइ अर्द्धासनि समासीनु हूंतउ हंसु देवगृहि आविउ। दिव्य कुसुम गंधसार घनसार कस्तूरिकाउ गुरुवारइं करी जिनबिंबहं रहइं महापूज करी यात्रा संपूर्ण करइ। विमानाधिरूढु राजपुरी[3] परिसरोद्यानि 30 आविउ। यक्षि अर्जुनु[4] रिपु बांधी करी पगे आणी घातिउ। सु रिपु दया परिणाम वसइतउ[5] मेल्ही करी हंसु राजा राजपुरी माहि आवी राजि बइठउ। "दिव्यभोग राजेंद्र रहइं तुम्हे पूरिवा" इसउ आदेसु दे करी चत्तारि यक्ष हंस रहइं अंगरक्ष ज्यक्षयक्षु मेल्ही करी राउ मोकलावी आपणइ थानकि पहुतउ। हंसु राजेंद्रु राजपुरीजन रहइं महाहर्षु ऊपजावतउ सत्यप्रभावि पुरंदर जिम प्राज्यु राज्यु प्रतिपाली करी देवलोकि गयउ। 35

§455) 1 Bh. P. विलसिया। 2 P.–रिता। 3 P. कइ। 4 P. या मु। thus confusing it with previous करी। 5 P. ऊपार्जा। 6 P. कूड। 7 Bh. जायउ। 8 Bh. होसिइं। 9 P. omits.

§456) 1 P. आपण। 2 Bh. added in margin. 3 Bh. omits.

§457) 1 P. हुवउ। 2 P. यक्षाख्यु। 3 Bh. adds–पति, but it is cancelled later. 4 B. P. अर्जुन। 5 P.–वसतउ। 6 P. omits.

हंसराजवत्संस्य सत्यवाद्फलं फलम् ।
श्रुत्वा भव्यजनाः सत्यं ब्रूत याथ महोन्नतिम् ॥ [६०९]

द्वितीयाणुव्रत विषइ हंसराजेंद्र कथा समाप्त ॥

§458) अथ त्रीजउं व्रतु भणइ ।

तइए अणुव्वयंमी थूलग परदव्वहरण विरईओ ।
आयरियमप्पसत्थे इत्थपमायप्पसंगेणं ॥ [६१०]

त्रीजइ अणुव्रति स्थूलकु राजनिग्रहादि हेतु जु छइ परद्रव्यु तेह नउं हरणु सहणु थूलग परदव्व हरणु कहियइ । तेह तणी विरति निवृत्ति तेह सकासइतउ इत्यादिकु पूर्व जिम जाणिवउं । परद्रव्यापहरणु महापातकु । यदुक्तं –

10 एकस्यैकं क्षणं दुःखं मार्यमाणस्य जायते ।
सपुत्रपौत्रस्य पुनर्यावज्जीवं हृते धने ॥ [६११]

तथा–

सम्बन्ध्यपि निगृह्येत चौर्यान्मण्डिकवन्नृपः ।
चौरोऽपि त्यक्तचौर्यः स्यात् स्वर्गभाग् रोहणेयवत् ॥ [६१२]

15 §459) अथ अतिचार प्रतिक्रमणु कहइ ॥

तेनाहडप्पयोगे तप्पडिरूवे य विरुद्धगमणे य ।
कूडतुल कूडमाणे पडिक्कमे देसियं सव्वं ॥ [६१३]

स्तेन चोर तेहे आहृतु देशांतर समानीतु वस्तु स्तेनाहृतु वस्तु कहियइ । अथवा आपणाइं जि थानक हुंतउं आणिउं[1] वस्तु तेनाहडु कहियइ । तेह नउं ग्रहणु १ स्तेन प्रयोगु ।

20 चोरहं रहइं ऊधारि वस्तुदानु तिणि करी चोरहं रहइं चोरी विषइ प्रेरणु स्तेन प्रयोगु २ ।

'तप्पडिरूवे य' । तत्प्रतिरूपु घृतादि माहि वसादि भेलनु तत्प्रतिरूपु कहियइ ३ ।

'विरुद्ध गमणे य' । विरुद्ध नृपहं तणइ राज्यि गमनु विरुद्ध राज्य[2] गमनु[3] ४ राजा देश पाखइ धनलाभ लोभि करी गमनु विरुद्ध गमनु कहियइ ४ ॥

'कूडतुल कूडमाणे' । तुला कोत्रंड विशेषु मानु मेनिकादिकु । सीहं रहइं कूडमानहइतउ

25 अधिक हरणु अथवा ऊणा हरणु । कूडतुल कूडमाणु कहियइ ५ ।

§460) ईहां अतिचारना अनिककला ए चोरी नहीं । इसी परि व्रत सापेक्षना हुती । यदाह–

गवियं मुत्तूण कलं दव्वाइ कयागयं न उवारिसं ।
निवडियमवि जाणंतो परस्स संतं न गिण्हिइ ॥ [६१४]

उचित राजनियम रहइं अयोग्य कला व्यापार एक अधिक व्यापार एक ऊणा करण व्यापार दक्षिनव्रतुः प्रतिक्रमण कहियइ । तेह मेल्ही करी 'कयागयं' । पितृ पितामहादि कालि करी आगत महार्घादिकु मेल्ही करी । 'उवारिसं' अधिकु । 'निवडियमवि जाणंतो' । भूमि पडिउ जाणतउं हुंतउ 'परस्स संतं न गिण्हिइ' । एह मनइं लिइं नहीं । तथा चोक्तं–

§459) 1 B. आणिउं । 2 B. ...राज्य । 3 Bh. गमितव्य ।

परद्रव्य लेवा नियमु लीधउ। मू रहइं महाविस्मय हूयउ[5]। 'जोयउ न, ए वाणिया धनलवलाभ[6] निमित्तु सरीरू सर्वस्व् जोखिमि घाती करी दूर विषम देशांतर पूर फिरइं तीहं रहइं अदत्तादानविरति नियमु[7] किसी परि प्रतिपालइ[8]। तिणि कारणि एह तणी हउं परीक्षा करिसु'। इसउं चीतवी अदृष्टु थिकउ तू पाखती[9] फिरिउ। फिरतइ हूंतइ आजु मइं अवसरु लाधउं। तउ मइं तू रहइं स्वर्णलक्ष्य मूल्य रत्नावली पतित दिखाली। निधानु पुण[10] दिखालिउं। अनइ घोडउ मूयउ दिखालिउ। मइं तउं पुण लोभि जीतउ नहीं। तृसिया हूंता तू रहइं पाणी भरी कीयडी दिखाली। शुक नइ रूपि तू रहइं जलपान विषइ प्रेरणा कीधी। तइं पुण मोटेइं प्राणरक्षणलक्षणि कार्यि उपस्थितइ हूंतइ तइं अल्पु पाणीपानमात्रु अदत्तादानु करावी न सकिउ हूं।"

§465) इसउं भणी करी सूर्यि विद्याधरि आपणा सेवक विद्याधर तेडिया। ति अदृश्य हूंता सर्वे दृश्य हूया। तीहं कन्हा मणिमाला अणावी निधानु अणाविउं। अनेरउं घणुं[1] धनु अणाविउं। मूयउ हूंतउ जु घोडउ सु जीवाडिउ। सार्थवाह आगइ सूर्यु विद्याधरु भणइ, "सार्थवाह! एउ ताहरउ घोडउ आपणउ साति" इसउं भणी करी सार्थ माहि आणी सार्थवाहु मेलिउ। धनु सार्थवाहु आगइ मेल्हिउं। सार्थवाहु भणइ, "किसउं एउ धनु"। सु भणइ, "कांई एकु माहरउं, कांई एकु कउतिग लगी पर हूंतउं अपहरिउं[2]। तद्दाकालि राजऋषि विशदमुनि वचनि ज मू रहइं चोरी तणी निवृत्ति न हुईयइ[3], स हववां[4] ताहरा साहसदरशनइतउ मू रहइं चोरी निवृत्ति ऊपनी। तिणि कारणि तुम्ह रहइं मइं धर्मगुरु भणी धनु पादभेट[5] कीधउं।" इसउं कहता सूर्य विद्याधर आगइ गुणधरु भणइ। "जु धनु जेह नउं तइं हरिउं छइ सु तेह रहइं पाछउं दइ"। तिणि तिमइ जि कीधउं। "पाछिलउं माहरउं धनु गुणधर! तउं लइ" इसउं भणता सूर्य आगइ गुणधरु कहइ, "अहो विद्याधर। तउं एउ माहरउं धनु[6] सगहूं[7] लइ। जिणि कारणि इसउं मइं मनिउं हूंतउ 'जु को माहरउ घोडउ जीवाडइ तेह रहइं सगलूं[7] आपणउं धनु आपउं'। तइं माहरउ घोडउ जीवाडिउ, तिणि कारणि तउं माहरउं धनु लइ। किंच पात्रु[8] पात्रि दीजइ। हउं पुण दानयोग्यु पात्रु नहीं। तिणि कारणि ताहरउं धनु कथमपिहिं लिउं नहीं।"

§466) इसउं भणता गुणधरु आगइ विद्याधरु भणइ, "हउं ताहरा उपदेश रहइं इणि भवि ऊरिणु[1] नहीं हुउं। मइं माया लगी ताहरउ घोडउ मूयउ दिखालिउ, तिणि कारणि किसी परि ताहरउं धनु हउं लिउं। माहरउं धनुं तउं न लियइं, ताहरउं धनु हउं न लिउं। तउ पाछइ एह धन रहइं कउणु धनिकु होइसिइ?" सार्थवाहु कहइ, "धर्मु जेह रहइं देसिइ तेउ[2] धनिकु होइसिइ। तिणि कारणि आवि, जिम सर्वज्ञ देसिति धर्मि येचां, लक्ष्मी कृतार्थ नीपजावां"। तेह नइ वचनि विद्याधरि अंगीकरियइ[3] हूंतइ तेह, बिहुं आपणी लक्ष्मी सप्तक्षेत्री माहि वावी। तउ पाछइ गुणधरु मरी करी तउं लक्ष्मीपुंजु हूयउ। हउं पुण ताहरा उपदेशइतउ सुपात्रि धनु दियतउ आयु पूरी करी व्यंतरु ऊपनउ। ताहरइं पुण्यि करी हउं पुण आवर्जितु हूंतउ तू रहइं आजन्मंहितु कालोचितु वस्तु पूरउं।" इसउं व्यंतरवचनु सांभली करी मूर्च्छा गयउ हूंतउ सीतोपचारइतउ मूर्च्छापगमइतउ जातिसमरणु लही करी लक्ष्मीपुंज प्रमोदपुंजु हूयउ[4]। यावज्जीवु विशुद्धु जिनधर्मु प्रतिपाली करी अंतकालि अनसनु[5] करी समाधिसउं मरी अच्युतदेवलोकि देवु होई पुनरपि मनुष्यभवु लही, दीक्षा ले,[7] केवलज्ञानु ऊपाडी, मोक्ष पहुतउ॥

---

§464) 5 P. हुइ। 6 P. omits –रु–। 7 P. नियमि। 8 B. –पलइ। 9 P. ह. (?) पा. omits –खती 10 P. पुणि.

§465) 1 Bh. घणउं। 2 P. अपहरउ। 3 P. हूयइ। 4 P. हइ। 5 P. पादभेटि। 6 P drops words between माहरउं धनु.... माहरउं धनु। though it retains गुणधर। 7 Bh. has added words between सगलूं......सगलूं in the margin. 8 Bh. दान।

§466) 1 P. ऊरण। 2 P. तउ। 3 P. –करिइ। 4 Bh. तेहे। 5 P. हुउ। 6 P. अणसनु। 7 B. omits.

धन्याकुक्षिसरोहंस! भाग्यसौभाग्यपात्र! जनावतंस! मणिपुर इसइ नामि पुर छइ। तिहां पुण्यधर गुणधरु इसइ नामि सार्थवाहु हुंतउ। सु अनेरइ दिनि विमदाभिधान मुनि समीपि वन माहि गयउ।

जन्तोः स्याद् दुःखदं द्रव्यहरणं मरणादपि।
अतः सुकृतिभिः कार्यं चौर्यचर्याविमोचनम्॥ [६१७]
5 एवमाकर्ण्य पुण्यात्मा स विद्याधरसंसदि[3]।
अदत्तादानविरतिं व्यधात्तत्र तदा मुदा॥ [६१८]

पुर माहि आविउ हुंतउ व्यवसायनिमित्तु भूरि भांडसंभारु ले करी देसांतरि चालिउ। आपणा देस तणइ अंति[4] सार्थि अटवी माहि पइठइ हुंतइ आपणपइं सार्थवाहु घोडइ चडिउ आगइ थिकउ जाइवा लागउ। पाछइ मार्गु मूंकी करी मौढ पदमचारि किणिहिं ठांइइ पडिउ। सुवर्णलक्ष मूल्य रत्नावली 10 एक तिहां भुइं पतित देखइ। व्रतभंग भयवशइतउ वली बीजीवार तिणि गमइ दृष्टि अफरतउ हुंतउ आघउ गयउ। सार्थ संचल भाव तणा अलाभइतउं[5] 'किसुं' सार्थु दूरि गयउ' इसी परि मन माहि शंका ऊपनी तउ पाछइ सार्थवाहु आपणउ वाहु आघउ ऊतावलउ चलावइ खुरशुण्णि मार्गि स्वर्णपूर्ण त्रांबानउ कुंभु देखइ। व्रतभंगइतउ तिमाहिं जि मूकी करी आघउ गयउ। ऊतावला जायता हुंता सहसात्कारि वाहनवाहु मूयउ। पापभय भीतु चीतवइ 'मू वाहतां हुंतां एउ मूयउ हा हतोस्मि। जु को एह रहां 15 जीवाडइ तेह रहइं एउ तुरंगमु हउं आपउं। अनइ ऊपरि घणउं धनु आपउं' इसउं मन माहि चीतवतउ हुंतउ सार्थवाहु पादचारिहिं जि आघउ चालिउ[6]। तृषाक्रांतु हुंतउ वृक्षशाखानिबद्ध वारिपूरित दीयडी देखइ। तउ अदत्तादानव्रतभंग[7] बीहतउ ऊंचइ स्वरि करी कहइ, "कउण तणी ए दीयडी"? इसी परि वार वार भणतउ हुंतउ सांभली करी तीही जि तरु नी शाखा बाधउं छइ पांजरउं, तिहां छइ सूयडउ, तिणि भणिउं, "वन माहि ओसही लेवा गयउ वैद्यपुत्रु तेह नी ए दीयडी। हउं तेह आगइ कांई नहीं 20 कहउं तउ शीतलु जलु पी", इसउं शुक तणउं वचनु सांभली करी कर्ण हाथे ढांकी करी शुक आगइ सार्थवाहु कहइ। "तृस वरि माहरा प्राण हरउ, पुण तोई वैधि अणदीधउं जलु पीयउं नहीं, महापापभय भावइतउ।" तउ पाछइ शुक नउं रूपु संहरी करी वृक्ष हुंतउ ऊतरिउ को एकु वरु पुरुषु। सार्थवाह आगइ हर्षितु थिकउ[8] कहइ।

§464) "वैताढ्य नामि पर्वति विपुला इसइ नामि नगरी। तिहां नउ हउं सूर्यु इसइ नामि 25 विद्याधरु। अनेरइ दिनि माहरइ मणिपूरु इसइ नामि करी प्रसिद्धि नगरि विशदाभिधानु माहरउ जनकु विद्याचारण मुनिवरु उद्यानवनि समोसरिउं हुंतउ हउं तेह रहइ वांदिवा तिहां[1] आविउ। वांदी करी यथास्थानि बइठउ। तदाकालि भूं उद्दिसी करी महात्मा भणिउं।

अनादानमदत्तस्यास्तेयव्रतमुदीरितम्।
बाह्याः प्राणा नृणामर्थो हरता तं हता हि ते॥ [६१९]

30 तथा—

परं विभवबन्ध्यता सुजनभावभाजां नृणाम् असाधुचरितार्जिता न पुनरूर्जिताः संपदः।
कृशत्वमपि शोभते सहजमायतौ सुंदरं, विपाकविरसा न तु श्वयथुसंभवा[2] स्थूलता॥ [६२०]

माहरइ तउ धनु घणुं[3] आगे[4]छइ। किसइ कारणि परद्रव्यापहारु करइ"। इत्यादि चोरी परिहरण विषइ घणउं भणिउं। तथापिहिं हउं चौर्यव्यसनी फिटउ नहीं। तइं पुणि मूं देखता तदाकालि

§463) 3 Bh. gloss: सभायाम्। 4 P. omits. 5 Bh. अलाभयतउ। 6 Bh. किमउं। 7 Bh. गयउ। 8 P. omits -भंग। 9 P. थकउ।

§464) 1 Bh. omits. 2 Mss. श्वयथु-। 3 Bh. घणूं। P. घणउ। 4 P. आगइ।

परद्रव्य लेवा नियमु लीधउ। मू रहइं महाविस्मय हूयउ[5]। 'जोयउ न, ए वाणिया धनलवलाभ[6] निमित्तु सरीरु सर्वस्वु जोखिमि घाती करी दूर विषम देशांतर पूर फिरइं तींहं रहइं अदत्तादानविरति नियमु[7] किसी परि प्रतिपालइ[8]। तिणि कारणि एह तणी हउं परीक्षा करिसु'। इसउं चीतवी अदृष्टु थिकउ तू पाखती[9] फिरिउ। फिरतइ हूंतइ आजु मइं अवसरु लाधउं। तउ मइं तू रहइं स्वर्णलक्ष्य मूल्य रत्नावली पतित दिखाली। निधानु पुण[10] दिखालिउं। अनइ घोडउ मूयउ दिखालिउ। मइं तउं पुण लोभि जीतउ नहीं। तृसिया हूंता तू रहइं पाणी भरी दीयडी दिखाली। शूक नइ रूपि तू रहइं जलपान विषइ प्रेरणा कीधी। तइं पुण मोटेइं प्राणरक्षणलक्षणि कार्यि उपस्थितइ हूंतइ तइं अल्पु पाणीपानमात्रु अदत्तादानु करावी न सकिउ ई।"

§465) इसउं भणी करी सूर्यि विद्याधरि आपणा सेवक विद्याधर तेडिया। ति अदृश्य हूंता सर्वे दृश्य हूया। तीहं कन्हा मणिमाला अणावीं निधानु अणाविउं। अनेरउं घणुं[1] धनु अणाविउं। मूयउ हूंतउ जु घोडउ सु जीवाडिउ। सार्थवाह आगइ सूर्यु विद्याधरु भणइ, "सार्थवाह! एउ ताहरउ घोडउ आपणउ साति" इसउं भणी करी सार्थ माहि आणी सार्थवाहु मेलिउ। धनु सार्थवाहु आगइ मेल्हिउं। सार्थवाहु भणइ, "किसउं एउ धनु"। सु भणइ, "कांई एकु माहरउं, कांई एकु कउतिग लगी पर हूंतउं अपहरिउं[2]। तदाकालि राजऋषि विशदमुनि वचनि ज मू रहइं चोरी तणी निवृत्ति न हुईयइ[3], स हयडां[4] ताहरा साहसदर्शनहतउ मू रहइं चोरी निवृत्ति ऊपनी। तिणि कारणि तुम्ह रहइं मइं धर्मगुरु भणी धनु पादभेट[5] कीधउं।" इसउं कहता सूर्य विद्याधर आगइ गुणधरु भणइ। "जु धनु जेह नउं तइं हरिउं छइ सु तेह रहइं पाछउं दइ"। तिणि तिमइ जि कीधउं। "पाछिलउं माहरउं धनु गुणधर! तउं लइ" इसउं भणता सूर्य आगइ गुणधरु कहइ, "अहो विद्याधर। तउं एउ माहरउं धनु[6] सगलुं[7] लइ। जिणि कारणि इसउं मइं मनिउं हूंतउ 'जु को माहरउ घोडउ जीवाडइ तेह रहइं सगलुं आपणउं धनु आपउं'। तइं माहरउ घोडउ जीवाडिउ, तिणि कारणि तउं माहरउं धनु लइ। किंच दानु[8] पात्रि दीजइ। हउं पुण दानयोग्यु पात्रु नहीं। तिणि कारणि ताहरउं धनु कथमपिहिं लिउं नहीं।"

§466) इसउं भणता गुणधरु आगइ विद्याधरु भणइ, "हउं ताहरा उपदेश रहइं इणि भवि ऊरिणु[1] नहीं हुउं। मइं माया लगी ताहरउ घोडउ मूयउ दिखालिउ, तिणि कारणि किसी परि ताहरउं धनु हउं लिउं। माहरउं धनुं तउं न लियइं, ताहरउं धनु हउं न लिउं। तउ पाछइ एह धन रहइं कउणु धनिकु होइसिइ?" सार्थवाहु कहइ, "धर्मु जेह रहइं देसिइ तेउ[2] धनिकु होइसिइ। तिणि कारणि आवि, जिम सर्वज्ञ देसिति धर्मि वेचां, लक्ष्मी कृतार्थ नीपजावां"। तेह नइ वचनि विद्याधरि अंगीकरियइ[3] हूंतइं तेह, बिहुं आपणी लक्ष्मी सप्तक्षेत्री माहि वावी। तउ पाछइ गुणधरु मरी करी तउं लक्ष्मीपुंजु हूयउ। हउं पुण ताहरा उपदेशाइतउ सुपात्रि धनु दियतउ आयु पूरी करी व्यंतरु ऊपनउ। ताहरइं पुण्यि करी हउं पुण आवर्जितु हूंतउ तू रहइं आजन्महितु कालोचितु वस्तु पूरउं।" इसउं व्यंतरवचनु सांभली करी मूर्च्छां गयउ हूंतउ सीतोपचारहतउ मूर्च्छांपगमइतउ जातिस्मरणु लही करी लक्ष्मीपुंज प्रमोदपुंजु हूयउ[?]। यावज्जीवु विशुद्धु जिनधर्मु प्रतिपाली करी अंतकालि अनसनु[?] करी समाधिसउं मरी अच्युतदेवलोकि देवु होई पुनरपि मनुष्यभवु लही, दीक्षा ले,[7] केवलज्ञानु ऊपाडी, मोक्ष पहुतउ॥

---

§464) 5 P. हुइ। 6 P. omits -ल-। 7 P. नियमि। 8 B. -पलइ। 9 P. ल. (?) पा. omits-खती 10 P. पुणि.

§465) 1 Bh. घणउं। 2 P. अपहरउ। 3 P. हुयइ। 4 P. हइ। 5 P. पादभेटि। 6 P drops words between माहरउं धनु.... माहरउं धनु। though it retains गुणधर। 7 Bh. has added words between सगलुं......सगलुं in the margin. 8 Bh. दान।

§466) 1 P. ऊरण। 2 P. तउ। 3 P. -करिइ। 4 Bh. नेहे। 5 P. हुउ। 6 P. अनशनु। 7 B. omits.

[illegible] ।
[illegible] ॥ [६२१]

[illegible] ॥

§467) [illegible] ।

[illegible] ।
[illegible] ॥ [६२२]

[illegible]

[illegible] ।
[illegible] ॥ [६२३]
[illegible] ।
[illegible] ॥ [६२४]

[illegible]

§468) [illegible] अतिचार [illegible] ।

[illegible] ।
[illegible] ॥ [६२५]

अपरिगृहीता [illegible] अपरिगृहीतागमनु [illegible] 'इत्वरि'—[illegible] ... 'अनंग'ति—[illegible] । 'परविवाह'ति [illegible] कारणु परविवाहकरणु ४ । [illegible] कविता युक्त हुयइ । 'तिव्रअणुराग'ति—कामभोग [illegible] अनुराग करिइ सदा विषयाध्यवसायु इत्यर्थः ॥५॥

जु स्वदारसंतोषी श्रावकु हुयइ तिह [illegible] अतिचार [illegible] अतिचार भेदइ जि हुयइं । तथा च भणितं—

परदारवज्जिणो पंच हुंति तिन्निउ सदारसंतुट्ठे ।
इत्थीए तिन्नि पंचइ भंग विगप्पेहिं नायव्वा ॥ [६२६]

ति आश्चर्यो करी जु कर्म बांधइ—इत्यादि पूर्ववत् ॥

§469) चतुर्थव्रत विषइ नागिलकथा लिखियइ ॥

अहो ब्रह्मव्रतं भुक्तेः संमुग्धीकारकारणम् ।
नीयते नागिलस्येव विपदामुपदाकृत् ॥ [६२७]

तथाहि—

महापुर नामि पुर । भोजु नामि राजा । लक्ष्मणु नामु श्रेष्ठि जिनधर्मु सर्वेनामि मनइ[1] । तेह नी नंदा नामि विवेकिनी नंदनी[2] । स पुण[3] सतीमतल्लिका परिणयन योग्य हूंती पिता आगइ कहइ—

§468) 1 Bh. कहियइ ।
§469) 1 Bh. has corrected मानइ to मनइ । P. नमइ । 2 Bh. gloss : पुत्रिका । P. अंति ।
3 P. पुणि ।

[illegible] ।

[illegible] ॥ [६२८]

[illegible]

§470) [illegible]

§471) [illegible]

[illegible] ।

[illegible] ॥ [६२९]

[illegible]

---

4 P. [illegible] । 5 P. [illegible] ।

§470) 1 Bh. [illegible] । 2 P. [illegible] । 3 P. [illegible] । 4 P. [illegible] । 5 B. [illegible] (-[illegible] appears to have been cancelled). 6 P. [illegible] । 7 P. [illegible] । 8 Bh. [illegible] । P. [illegible] । 9 P. adds [illegible] । 10 P. [illegible] । 11 B. [illegible] । 12 P. [illegible] । 13 Bh. [illegible] ।

§471) 1 P. [illegible] । 2 P. [illegible] । 3 B. drops words between [illegible]......[illegible] ।

§472) घरि आवी स्नानु करी विधिवत् देवपूजा करइ । सुपात्रहं रहइं दानु प्रवर्तावइ । यथेच्छा कामसुख भोगवइ । तउ पाछइ विवेकवंतु कांतु देखी करी नंदा सानंदा हूंती भणइ, “ शील सलिल परिसिक्त हूंती जिनभक्ति कल्पलता आजु मु रहइं सफल हुई । कांत जु मइं तउं विवेकवंतु दीठउ ।” नागिलु भणइ, “प्रियतमे ! जु मइं व्यसनु मेल्ही करी विवेकु अंगीकरिउ[1] तेह अर्थविषइ गुरु नउ आदेशु[2] कारणु । यत उक्तं—

मनो न निश्चलं तावद्यावत्तत्त्वं न विंदति ।
विदिते [illegible] परे तत्त्वे मनो नौकूपकाकवत् ॥ [६३०]

तेह दिवस हूंती तीहं रहइं एकचित्तता हुई । नागिल नंदा बिहुं आधिरहितहं[3] समाधिसहितहं समान धर्म-रूप-कला-यौवनवंतहं तीहं तणी कायकांति अतिशय प्राप्त हुई ।

§473) अनेरइ दिनि किणिहिं पर्वि नंदा पीहरि गई[1] । नागिलु आपणा घर तणी सातमी भुइं नइ मणिकुट्टिमि देवपल्यंकोपमान शयनीय उपरि सूतउ चंद्रबिंबि दत्तलोचनु वर्त्तइ । कइ[2] एक[3] विद्याधरी प्रिय विरहिणी[4] आकाशमार्गि जायती नागिल रहइं देखी करी सकाम हुई हूंती नागिल[5] आगइ आवी करी भणइ । “ कामाग्नि-संतप्त-गात्र[6] हूंती हउं अहो महापुरुष । तू रहइं शरणइ[7] आवी । स्वामिन् ! स्वांगसंग-सुधातरंगरंगकेलीसुख[8] मु रहइं करावि । हउं पुण विद्याधरशिरोमणि छइ हंसु विद्याधरु तेह नी गेहिनी, मइं दीठइ तेह हूंतउ माहरउ मनु ऊभीठउं हूयउं । चंद्र नाम खेचरेश्वर नी हउं दीकिरी नामि करी आगइ लीलावती, तइं आदरी तउ हउं कामिहिं करी लीलावती होइसु । अथ मू रहइं जइ किमइ नहीं अंगीकरइ तउ मउं[9] नही हुयइ अथवा हउं नही हुउं । तेतीवार धर्मज्ञ तउं किसउं स्त्रीहत्यापातकी[10] हुयइ ! पनि तणी विद्या पिना तणी विद्या हउं सत्य[11] ति[12] जाणउं ति विद्या तू रहइं देसु, पाति अनर पिना तू रहइं साध्य करिसु । तिणि कारणि तुंउं[13] मू रहइं अंगीकरि । माहरउं वचनु अन्यथा म करिसि ” । इसउं भणी करी तेह ना पाइ आपणइ मस्तकि धरिवा कारणि जेतलइ धाई तेतलइ ‘ परस्त्री संस्पर्शु माहरां पगहीं रहइं म हुउ ’ इणि कारणि नागिलि जिम दहन हूंता दाझता पाछा कीजइ तिम कीधा ।

§474) तउ पाछइ स विद्याधरी कोपवशगत हूंती आकाशगत अतीवाऽऽरक्तलोचन थिकी अग्निवर्णु लोहगोलु अतिविलोलु विकुर्वी करी नागिल तणा मस्तक ऊपरि मूकइ । “ दाधउ रे दाधउ रे ” इसी परि गगनगत हूंती वाहयइ । तेह रहइं बीहवइ । तउ पाछइ नागिलु पंचपरमेष्ठि नमस्कारु मन माहि समरइ । नमस्कार नइ प्रभावि लोहगोलउ विलइ गयउ । स विद्याधरी पराजित हूंती लाजी करी अदृश्य हुई । नागिलु हर्ष रोमांच कंचुकित गात्र हूयउ । “ तुम्हउ पालइ त्रिभुवंसिरिहिं मू रहइं राति नहीं । ” इसउं भणती[1] हूंती नंदा नइ रूपि नंदा नइ स्वरि स खेचरी शृङ्गारि आवी । परिवार कन्हा द्वार ऊघडाय[2] नागिलु स्वरि करी नंदा ओलखतू हूंतउ खेचरी कपटाशंका[3] करी संकीर्णस्थानस्थु होइ तउ नंदा बोलावइ । “ हे अरविंदाक्षि, दाक्षिण्यनिधे यदि त्वं नंदासि तदा मामेहि । अथाऽन्या कापि तदा धर्मस्य प्रभावात् त्वमपि नियंत्र । ”

इसा कथन कथनानंतर धर्म नइ प्रभावि स खेचरी स्तंभितगति हूंती तेह नइ चरित्रि करी विस्मयापन्न इसी विद्याधरी आगइ ऊभी रही । नागिलु कपटीनाऽऽमाकी[4] शीलरक्षा कारणि आपइ प्रभु लियइ । मान्नवंदवनाद[5] वेसु धरतउ हूंतउ शुद्धस्थितु जु छइ यक्षरांजु तेह आगइ इसुं[6] कहइ । “ अहो आश्चर्य ! नंदा नइ रूपि मइं तउं शुद्धस्थिता पमाडिउ[7] हूंतउ । सांप्रतु हउं कृतकृत्यु हूयउ ।

§472) 1 P. [illegible] । 2 P. आदेशु । 3 P. [illegible] ।

§473) 1 [illegible] । 2 P. के । 3 P. [illegible] । 4 P. –विरहिणि । 5 P. नागिलइ । 6 P. omits –[illegible] । 7 [illegible] । 8 P. –[illegible]– । 9 P. omits. 10 B. Bh. add नहीं । 11 P. [illegible] । 12 [illegible] । 13 [illegible] ।

§474) 1 P. [illegible] । 2 P. [illegible] । 3 P. omits [illegible]– । 4 B. P. –[illegible] । 5 P. [illegible] । 6 [illegible] । 7 P. [illegible] ।

विरूपाक्षय[8] यक्ष ! तउं आपणइ थानि पहुचि । " तउ दीप हूंती भाषा नीसरी, "जां तउं[9] जीविसि तां एउं तू सरसु[10] रहिसु " । तथा शीलमहिमा देखी करी स खेचरी अतिरंजितचित्त हूंती प्रभात समइ महाविस्तरि[11] दीक्षा महोत्सवु करावइ । सूर्योदयाहिं दीप्रभासु[12] जु छइ यक्षदीपु तिणि अनुगम्यमानु विस्मय स्मेर लोचनहं[13], लोकहं विलोक्यमानु नागिलु भवसमुद्रकूलि गुरुपादमूलि पहुतउ । नंदा सहितु दीक्षा ले करी दुस्तर[14] तपक्रियाकलाप[15] करतउ हूंतउ गुरु सरिसउ विहरिउ । रातिहिं[16] यक्षदीप[17] तणइ मयांसि श्रुतपाउ करतउ[18] थोडे दिवसे ज्ञात ज्ञातव्यु गीतार्थशिरोमणि हूयउ संजमग्रहणपूर्विहिं आयुःकर्म बाधउं[19] हूतउं, तिणि कारणि हरिवर्षक्षेत्रि कल्पवृक्षतलि नंदा स्नेह लगी जुगलियउ हूयउ । सु जुगलु भाग्यशेष तणइ प्रभावि स्वर्गभोग भोगवी करी महाविदेहि क्षेत्रि मनुष्यता लही सिद्धिहिं गयउ ।

शीलं स्वर्णाभरणं परीक्ष्य हीरान्वितं नागिलवन्निधाय ।
आसंसृति सारमामवाप्य श्रेयाश्रियं भव्यजना लभध्वम् ॥ [६३१]

चतुर्थव्रत विषइ नागिलसूतकार कथा समाप्ता[20] ॥

§475) अथ पांचमा व्रत तणउं प्रतिक्रमणु भणइ ॥

इत्तो अणुव्वए पंचमंमि आयरियमप्पसत्थंमि ।
परिमाण परिच्छेए इत्थ पमायप्पसंगेणं ॥ [६३२] 15

'इत्तो' इति । पहू चउथा व्रत अनंतरु धन १, धान्य २, क्षेत्र ३, वास्तु ४, रूप्य ५, सुवर्ण ६, कुपित ७, द्विपद ८, चतुष्पद ९, लक्षण नवविध परिग्रह तणइ इच्छापरिमाण परिच्छेदि प्रमाणकरण रूपि पांचमइ अणुव्रति जु आचरिउं अप्रशस्त लोभोदयरूपि भावि श्रद्धाविशेषि हूंतइ । किसा विषइ ! इच्छा परिग्रह प्रमाण विषइ । किमउ अर्थु ! प्रमाणाधिकता विषइ लंपटपणउं कीधउं । 'पमायपसंगेणं' इत्यादि पूर्ववत् । अवश्यमेव श्रावकि परिग्रह परिमाणु करिवउं । यतः 20

संसारमूलमारम्भास्तेषां हेतुः परिग्रहः ।
तस्मादुपासकः, कुर्यादल्पमल्पं परिग्रहम् ॥ [६३३]

तृप्तो न पुत्रैः सगरः, कुचकर्णो न गोधनैः ।
न धान्यैस्तिलकः, श्रेष्ठी न नन्दः कनकोत्करैः ॥ [६३४]

यदिस्तृप्यति नेन्धनैरिह यथा नाम्भोभिरम्भोनिधि- 25
स्तद्वन्मोहघनो घनैरपि घनैर्जन्तुर्न सन्तुष्यति ।
नत्वेवं मनुते विमुच्य विभवं निःशेषमन्यं भवं
यात्यात्मा तदहं मुधैव विदधाम्येनांसि भूयांसि किम् ॥ [६३५]

§476) अथ पहू व्रत तणां अतिचार तणउं प्रतिक्रमणु भणइ ॥

धण-धन्न-खित्त-वत्थू-रुप्प-सुवन्ने य कुवियपरिमाणे । 30
दुप्पये चउप्पयंमि य पडिक्कमे देसियं सव्वं ॥ [६३६]

§477) तत्र– धनु गणिम धरिम मेय परिच्छेद्य भेदइतउ चउं प्रकारे । तत्र–गणिमु–पूगीफल जातीफलादिकु १, धरिमु–गुड, खंड, खजूरादिकु २. मेउ–घृत तैल मध्वादिकु ३. पारिच्छेद्यु–हीरक

§674) 8 P. विरूपाक्ष । 9 Bh. तूं । 10 Bh. सरिसउ । 11 P. विस्तारि । 12 P. सूर्यादिहि दीप प्रभा सु । 13 Bh. –विलोचन – । 14 P. दुस्तप । 15 P. तप– । 16 P. तिहिं । 17 P. यक्षि– 18 P. repeats ले करी……करतउ । dittography. 19 P. बांधतउ । 20 P. omits.

माणिक्यादिकु ४। धान्यु व्रीहिगोधूमयवादिकु अनेक विधु। ईहं धनधान्य विहुं नइ अतिक्रमि अतीचारु।
तत्र धनधान्य रहइं प्रमाणप्राप्ति हूंती अधिकु लाभ भावि हूंतइ जेतलउ आगिलउं येचइ तेतलइ संचकाराति
दानि करी धनधान्य आवणां करी बीजा नइ घरि अथवा क्षेत्रि स्तलइ मूडकादिकि बंधावी राखइ। आगिलइ
वीकिइ हूंतइ आपणइ घरि आणइ। इसीपरि धनधान्यातिक्रम रूपु प्रथम अतीचारु।

§478) क्षेत्रु सेतुकेतुकर्ममेदु भूखंडविशेषु। वास्तु खातु सरोवर वापी कूपादिकु। उच्छ्रितु
गृह हट्ट भांडशालादिकु। तउ पाछइ सेतु पालि कहियइ। केतु स्तंभादिकु कहियइ।

सु सेतु ऊतारी करी केतु ऊतारी करी बिहुं क्षेत्रहं तणइ थानकि एक क्षेत्र तणउं करणु[1]।
अंतरभित्ति ऊतारी करी बिहुं घर अथवा बिहुं हाट थानकि एक घर तणउं एक हाट तणउं करावणु जु
कीजइ सु क्षेत्र वास्तु अतिक्रमलक्षणु बीजउ अतीचारु २।

रूप्यु–रजतु सुवर्णु कनकु तीहं तणइ प्रमाणि आगइ पूगइ हूंतइ भार्यादि निमित्ति। भूषणमिषां
तरि करी अवधि सीम हानि हूंतइ। रूप्य सुवर्णातिक्रम लक्षणु त्रीजउ अतीचारु ३।

कुपितु–थाल कच्चोलकादिकु तीहं नउं लाभनिमित्तु स्थूलता करावणु[2] कुपितातिक्रमलक्षणु
चउथउ अतीचारु ४।

§479) 'दुपए चउप्पयंमी 'ति–द्विपदादि दास्य दास्यादिकु। चतुष्पदु गो महिषी वृषभ करभ
तुरंगमादिकु। द्विपद चतुष्पदावधि पूरण निमित्तु पाछेरउं गर्भग्रहणु करावइ। तिणि करी द्विपद चतुष्पद-
मानातिक्रमु पांचमउ अतीचारु ५। 'पडिक्कमे देसियं सव्वं' पूर्ववत्।

§480) परिग्रह परिमाण करण विषइ विद्यापति महीपति कथा लिखियइ।

परिग्रहप्रमाणाख्यव्रतकल्पद्रुरद्भुतः।
निषिध्यमानमप्यर्थं दद्याद्विद्यापतेरिव ॥

पोतनपुरि नगरि धनद जिम धनपति विद्यापति इसइ नामि श्रेष्ठि अति विख्यातु हूयउ। तेह नइ [६३७]
शृंगारसुंदरी इसइ नामि श्रेष्ठिनी, रूपि करी जिसी सुरसुंदरी हुयइ तिसी। ति बे जिनभक्त अनंतफल लाभ-
वांछा करी सप्तक्षेत्रीतलि[1] धनबीजु वावतां हूंतां यथाकामु वृषपोषणु करइं। धनु उपार्जतां[2] जिनधर्मु
विधिवत् करतां सुखमय हर्षमय विस्मयमय समय नीगमतां हूंतां तीहं रहइं अनेरइ दिवसि रात्रि समइ
स्वप्न माहि विद्यापति रहइं का एक स्त्री कहइ, "हउं ताहरा घर नी लक्ष्मी एतला दिवस ताहराइ पुण्यि
गुणि करी बाधी हूंती तू रहइं वश[3] हूंती। हव[4] हउं दैवि मोकली तिणि कारणि आज हूंती दसमइ दिवसि
ताहरा घर हूंती जाइसु"। इसउं दुःश्रवु वचनु तेह नउं विद्यापति सांभली करी जागिउ। 'दरिद्रु हउं
होइसिउ[5]' इसीपरि चितावस्थु हूयउ। प्रभातसमइ शृंगारसुंदरी विद्यापति चितापतितु देखी[7] भणइ।
"कांत! रविबिंब जिम तुम्हारइ मुखि मालिन्यु अदृष्टपूर्वकु किसइं कारणि आजु दीसइ?"

§481) स्वप्न स्वरूपि विद्यापति भणिइ हूंतइ पुनरपि शृंगारसुंदरी भणइ, "निर्वाणनगर-
प्रदेश[1] निषेधार्गला लक्ष्मी संतहं रहइं हृदयशल्यतुल्य जइ जाइ तउ जाउ। विवेकु एकु सर्वसमीहित[2]
संपादकु तुम्ह कन्हा म जाइजिउ। तथा धन तणउं फलु सुपात्रदानु तुम्हे भव्य परि[3] एतला दिवस सीम
लीधउं। मोक्षमार्ग भंगविषइ वाडि ए लक्ष्मी जइ भाग्यवशि भागी तउ ताहरी पुण्यवृत्ति जागी। तिणि
कारणि हर्षस्थानि[4] किसइ कारणि विषादु करउ? किसीपरि ए लक्ष्मी दसमइ दिवसि जाइसिइ। आतमा
यत्न हूंती आजू जु सप्तक्षेत्री माहि वावउ। परिग्रह परिमाणु व्रतु करउ। असुभकाल तणउं हरणु करउं"।

§ 478) 1 Bh. केतु ऊतारी करी बिहुं हाट थानकि एक घर तणउं करणु। 2 Mss. कारापणु।
§ 480) 1 P. तलि। 2 P. ऊपार्जतां। 3 Bh. P. पुण्य–। 4 Bh. वशि। ॥ later correction over
वश। 5 P. दिव। ॥ Bh. होइसु। 7 Bh. adds करी।
§ 481) 1 Bh. –प्रदेश। P. प्रदेशि। 2 P. समीहित। 3 P. –पदि। 4 P. हर्षि–।

इसी प्रियतमाभाषा सांभली करी हर्षितु हूंतउ प्रभातिहिं जि समस्त लक्ष्मी सप्तक्षेत्रीं वेचइ। देह मात्रोपयोग्यु स्वल्पु धनु राहवी करी मध्यंदिनि जिनपूजा करी इसउं कहइ, "एक शृंगारसुंदरी भार्या, एक शय्या, बि वस्त्र पात्रु एकु, आहारु, दिन भोजन मात्रु मूंकी करी अपर समस्तवस्तु परिग्रहकरण नियमु। जिनेंद्र सेवा निमित्तु घणूं वस्तु धरउं"। इसी परि[5] परिग्रहप्रमाणु करी समस्त दिवसु धर्मध्यानपरायण थिकउ[6] नीगमइ। 'धन पाखइ प्रभाति किसी परि याचकमुख देखीसिइं? इणि कारणि रात्रि समइ लोकि सूतइ हूंतइ देशांतरि गमनु करिया युक्तु' इसउं शृंगारसुंदरी सउं आलोची करी सूतउ। रात्रि प्रहरद्वय समइ देशांतरि चालिवा जउ ऊठिउ तउ घरु तिमहीं जि धन भरिउं देखइ। तउ विस्मयापन्नु हूंतउ विद्यापति प्रियतमा प्रति भणइ,। "इसमइ दिनि आकार्यंतइ[8] जि हूंती श्री जाइसिइ, दस[9] दिवस सीम दीयमानइ हूंती माहरा घर हूंती नहीं जाइ। तिणि कारणि 'धमदानु धनक्षयहेतु धन तणउं अदानु धनसंचय हेतु' इसउं[10] मुग्धजन मुधा बोलइं—

न याति दीयमानापि श्रीश्चेद्दीयत एव तत्।
तिष्ठत्यदीयमानापि नोचेद्दीयत एव तत्॥ [६३८]

§482) इसी वार्त्ता तणइ विस्मयरसि वर्त्तमानहं हूंतां तीह रहइं सूर्यु उगिउ। बीजइ दिनि पुणि तिमहिं जि लक्ष्मी सुपात्रि दे करी परिग्रह परिमाणु करी सूतउ। प्रभाति तिमहिं जि श्री देखइ। वली तिमहिं जि ऋद्धि सुक्षेत्रि वावइ। इसी परि नव दिवस सीम करइ। इसुं कांई एकु सुपात्रु दानु प्रवर्त्तीयिउं जिसइ कल्पद्रुमादि देवीं रहइं पुण विस्मउ ऊपनउ। 'पूर्वपुण्यपयः पंकु[1] मुक्तिमार्गं रहइं कूपकु थी नउ पुरु मू रहइं प्रभाति शोषि जाइसिइ' इसी परि हर्षपूरितु हूंतउ रात्रि सूतउ। स्वप्न माहि श्री[2] आवी करी भणइ। "अहो महापुरुष! ताहरां दानधर्महं करी हुं[3] वेधु[4] वूरि कीधउं हउं' जायती वली थाहरायी।

अत्युग्रपुण्यपापानामिहैव फलमश्नुते।
इति सूक्तं त्वया कारि मतिसार यथातथम्॥ [६३९]

कदाचन न मुञ्चामि तदहं सदनं तव।
यथेच्छं भाग्यभङ्गीभिरुत्सङ्गीकृत भुंस्व[4] माम्॥" [६४०]

तदाकालिहिं जि जागिउ हूंतउ भार्या आगइ[5] आगिलइ गमइ स्वप्नविचारु कहइ। प्रतिज्ञा निर्वाहनिमित्तु कहइ, "प्रियतमि! भोगमात्रफलि श्री दानव्यसनिहिं जि हा! माहरउ जन्मु जाइसिइ! मुक्तिफलि तापि किसी परि प्रवर्त्तिसु? कदाकालिहिं लोभलोलितु मनु नियम भंगु पुण[6] कराविसिइ? तिणि कारणि श्री-पुरपूरितु मंदिरु मूंकी करी किणिहिं देशांतरि जाइयइ। तउ श्री ग्रहतइ[7] छूटियइ।" इसउं भार्यासउं आलोची करी जिनबिंब करंडिका ऊपाडी करी शृंगारसुंदरीमात्र परिवार हूंतउ घर[8] हूंतउ[8] बाहिरउ नीसरिउ। पंचपरमेष्ठि नमस्कार समरणा करतउ नगरइतउ चालिउ।

§483) नगरि एकि जाई करी सूतउ। तिहां अपुत्रु राउ विणठउ। प्रधानपुरुषे पांच दिव्य अधिवासियां, जिहां विद्यापति हूंतउ तिहां आवियां। घोडइं हेषारवु कीधउ, छत्रु आवी माथइ रहिउं, चामर बिहुंगमे ढलिया लागां, पट्टहस्ति गलगर्जिकरणपूर्वुं तीर्थजलपूर्ण कलसे[1] करी राज्याभिषेकु करी भार्यासहितु ऊपाडी[2] करी शुंडादंडि[3] करी कुंभस्थलि चडाविउ। तउ पाछइ मंत्रि सामंत मंडलेश्वर विसरपरिवृतु[4] राजा[5] सौध ऊपरि आवतउ मन माहि चीतवइ। 'जिम पूनिम नउ चंद्रमा मेघपटल[6] हूंतउ

§ 481) 5 P. omits. 6 P. थकउ। 7 P. इसमइ। 8 P. आकर्षितइ। 9 P. दश। 10 P. omits.
§ 482) 1 B.–पया–। 2 B adds it in the margin,। 3 B. omits P. हु। 4 P. मुंच। 5 B. omits. 6 P. पुणि। 7 P. श्रीमहतउ। 8 Bh. omits.
§ 483) 1 P. कलशे। 2 P. उपाडी। 3 P. शुंडादंडि। 4 Bh. gloss over विसरः समूह। 5 B. Bh. राज। 6 P. पडल।

नीसरिउ राज्यग्रस्तु हुयइ, तिम हउं अल्पधनपंक हूंतउ[7] कथमपिहिं नीसरिउ, प्राज्यराज्य महापंक माहि पडिउ'। भद्रासनि बइसाली करी महामात्य राज्याभिषेकु करावइं। विद्यापति भणइ, "मूं रहइं राज्य माहि कार्यु नहीं" प्रधान कहइं, "इम किम हुयइ? देवता तू रहइं राज्यु दियइ"। विद्यापति भणइ, "तथापिहिं मू राज्यि कार्यु नहीं"। इसीपरि वार वार राज्याभिषेक निषेधु करतइ हूंतइ आकाश-
5 भाषा ऊछली, "अजी! भोगफलु प्रभूतु कर्मु छइ तिणि कारणि राज्यलक्ष्मी पाणिपीडनु करि" इसउं निज भाग्यदेवता वचनु सांभली करी सिंहासनि जिनप्रतिमा बइसाली करी तेह नइ पार्श्वपाठि आपणपइं बइसी करी जिनप्रतिमा रहइं राज्याभिषेक तणइ व्याजि आपणवा रहइं त्रिभुवनाधिपत्यनिमित्तु अभिसींचावइ। जेतलउं अंगीकरिउं छइ तेतलउं आपणइ लेखइ करी बीजउं समस्तु वस्तु शस्त[8] हरित तुरंगम[9] भांडागारादिकु जिन नामांकितु करइ। सदा तीर्थयात्रादि प्रभावना करावइ। चैत्यगृह करा-
10 वइ। जिनबिंब भरावइ। अभयघोषणा अमारिघोषणा करावइ। लोक कन्हा कर न लियइं। कहइ, "अहो लोकउ जु राजु[10] मागु आवइ सु धनु धर्मिहिं जि वेचउ"। तउ पाछइ जिनधर्म नइ एकातपत्रि राज्यि प्रवर्त्तइ[11] हूंतइ 'मार'[12] इसा अक्षर दंदर्पनाम मूंकी करी अनेरइ थानकि, न केवलं जीवविषय कोइ[13] न कहइं, अजीव छइं जि द्यूत माहि सारि तींहीं आगइ को न कहइं मारि। जिम जिम विद्यापति-राजा धनु वेचइ तिम तिम तेह नी भाग्यदेवता राजमंदिरि धनु वरसइ। अनेरइ दिनि समीपगत राजेंद्र
15 मिली करी तेह ना राज्य रहइं लेवा आविया। विद्यापति धर्म मूकी बीजी वात जाणइ नहीं। जिनाधिष्ठायक छइं यक्ष तेहे तींहं रहइं रोग ऊपजावी करी नामविया। विद्रवियां तणउं विरूउ कटकु देखी करी विद्यापति चित्ति चीतवइ।

§484) "अहो! शक्र-विक्रमवंत शत्रु राजेंद्र छइं, तेइं धर्म तणइ प्रभावि भाजी गया। मूं रहइं अल्प परिग्रहता देखी करी महापरिग्रह शत्रुलोक जिणिवा कारणि आपणा सेवक[1] भणी[2] धर्मि
20 निश्चइं साहाय्यु कीधउं।

तदहं यद्यमुं सेवे, त्यक्त्वाशेषपरिग्रहः।
तदन्तरायभङ्गेऽपि, भवत्ययमुपक्रमः॥ [६४१]

इसउं चीतवी करी शृंगारसुंदरी संभवु शृंगारसेनु सूनु राज्यि बइसाली करी संजमसूरि समीपि संजमु ले करी कल्याणभउ आपणउ आत्मा तपोग्नि तापि शुद्धवी करी विद्यापति राजऋषि देवलोकि
25 गयउ। मनुष्य देव भव पंचकि हूयइ हूंतइ मुक्ति गयउ।

विद्यापतिकृतपरिग्रहमानयामं
श्रुत्वा बुधा भवत सम्पदि निस्पृहा भोः।
येन स्वयंवरवधूः शिवसम्पदेषा
जातस्पृहा क्षिपति वः स्रजमाशु कण्ठे॥ [६४२]

30 इति परिग्रह परिमाण करण व्रतफलविषइ विद्यापति राजऋषि कथा समाप्ता[3]।

§485) अथ त्रिन्हि गुणव्रत कहियइं।

तत्र प्रथम गुणव्रत प्रतिक्रमणा निमित्तु भणइ—

गमणस्स य परिमाणे दिसासु उड्ढं अहे य तिरियं च।
वुड्ढि-सइ-अंतरद्धा पढमंमि गुणव्वए निंदे॥ [६४३]

गमनु भणियइ गति तेह तणइ परिमाणि एतलां जोयण जाइसु इसीपरि छोदि प्रमाणि अंगी-करिइ हूंतइ। किसा नइ विषइ?

---

§ 483) 7 P. हंतउ। 8 B. P. वस्तु। 9 P. तुरंग। 10 Bh. राज। 11 Bh. later corrected to प्रवर्त्तइ। P. प्रवर्तिइ। 12 Bh. मारि। 13 Bh. को।

§ 484) 1 P. सेव। 2 P. तणी। 3 P. omits.

पूर्वा दक्षिणा पश्चिमा उत्तरा लक्षणासु दिसासु । तथा आग्नेय नैर्ऋति वायव्य ऐशान लक्षणासु विदिसासु तथा 'उड्ढं-' ऊर्ध्वदिसि 'अहे' अधोदिसि विषइ जु अतिक्रमिउं सु अतीचारु तदेवाह—।

'उड्ढं' ऊर्ध्वं योजनद्वय मानि कीधइ हूंतइ अनाभोगादिवशइतउ अधिक गमनि हूंतइ ऊर्ध्वदिक्प-रिमाणातिक्रमु प्रथमु अतीचारु १।

एवं अधोदिक्परिमाणातिक्रमु बीजउ अतीचारु २।

तिर्यग्दिक्परिमाणातिक्रमु त्रीजउ अतीचारु ३।

तथा 'वुड्ढि' त्ति एक दिशि सउ जोयण बीजी दिसि धारियइं प्रयोजनवशइतउ तिणि दिशि प्रोढियइं । यथा पूर्वपश्चिमादिपु प्रभू जु दिक्परिमाणु कीधउं छइ पाछइ दहोत्तरसय ऊपरि कार्यु ऊपनउं पाछइ पश्चिमदिसि मयइ योजन घटावी करी पूर्वदिसि दहोत्तरुसउ जाइ । इसी परि क्षेत्रवृद्धि चउथउ अतीचारु ४।

§486) 'सइ अंतरद्धि' त्ति-'सइ' स्मृति तेह तणी अंतर्द्धा व्रतप्रमाण विस्मरणु । स स्मृत्यंतर्द्धा कहियइ । यथा पूर्वदिसि गमनि उपस्थितइ[1] हूंतइ मनि संदेहु हुयइ । किसउं मू रहइं सउ अथवा पंचास जोयण मोकलां छइ इसी परि स्मृत्यंतर्द्धानि हूंतइ अधिकगमनि स्मृत्यंतर्द्धानु पांचमउ अतीचारु ५।

इसी परि नियमित भूभाग मेल्ही करी अपर चतुर्दश रज्जुप्रमाण लोकगत जंतुजात रक्षालक्षण गुण निमित्तु प्रतु गुणव्रतु कहियइ । तिणि प्रथमि गुणव्रति जु अतिचरिउं – इत्यादि पूर्ववत् । तप्त लोह-गोलक सरीखउ छइ गृही तेह रहइं एउ प्रधानुव्रतु । तथा च भणितं—

तत्तायगोलकप्पो पमत्तजीवो निवारियप्पसरो ।
सव्वत्थ किं न कुज्जा पावं तक्कारणाणुगओ ॥　　[६४४]

चराचराणां जीवानां विमर्दननिवर्त्तनात् ।
तप्तायोगोलकल्पस्य सद्व्रतं गृहिणोऽप्यदः ॥　　[६४५]

जगदाक्रममाणस्य प्रसरल्लोभवारिधेः ।
स्खलनं विदधे तेन, येन दिग्विरतिः कृता ॥　　[६४६]

§487) दिक्परिमाणव्रतकरण विषइ सिंहकथा लिखियइ ।

गन्तॄ संक्रमयन्त्येवं, यः स्वं दिग्विरतिव्रतम् ।
संसारलङ्घनोत्तालफलारम्भः[1] स सिंहवत् ॥　　[६४७]

धारावती[2] नामि नगरी । कीर्त्तिपालु नामि राजा । भीमु नामि तेह तणउ पुत्रु । पुत्रहीं[3] कन्हा अतिवल्लभु सिंहुनामि श्रेष्ठि । सुपुण[4] परम श्रावकु जिनभक्तिवंतु वर्त्तइ । अनेरइ दिनि सभा माहि कीर्त्ति-पालु राजा सिंहश्रेष्ठि मुखकमलु भ्रमर जिम जोयतउ हूंतउ वर्त्तइ[5] । तेतलइ प्रस्तावि प्रतीहारु आवी राजेंद्र रहइं वीनवइ । "महाराज ! तुम्हे रहइं देखणहारु एकु[6] पुरुषु[6] दिव्याकारु द्वारि आविउ छइ ।" राजा भणइ "माहि मेल्हि" तउ पाछइ प्रतीहारु मुक्तु हूंतउ सु पुरुषु माहि आवी राजेंद्र रहइं प्रणमी करी आसनि सभासीनु वीनवइ ।

§488) "महाराज–नागपुरु नामि नगरु । तिहां चंद्रु नामि नरेंद्रु । रत्नमंजरी नामि राज्ञी । तीहं नी गुणमाला नामि कीकिरी । स ताहरा पुत्र भीम रहइं देवा कारणि स्वामिन् ! तुम्ह कन्हइ हउं

---

§ 486 1 B. Bh. have उपस्थितइ ।

§ 487) 1 B. Bh. –फाल– । 2 Bh. begins with तथाहि । 3 B. Bh. ही । 4 Bh. पुणु । 5 Bh. has अनेरइ...वर्त्तइ in the margin. 6 P. omits.

नीसरिउ राजुपरतु हुयइ, तिम हउं अल्पधनपंक हूंतउ[7] कथमपिहिं नीसरिउ. प्राज्यराज्य महापंक माहि पडिउ[8]। भद्रासनि बइसाली करी महामात्य राज्याभिषेकु करावइं। विद्यापति भणइ, "मू रहई राज्य माहि कार्यु नहीं" प्रधान कहइं, "इम किम हुयइ ! देवता तू रहइं राज्यु दियइ"। विद्यापति भणइ, "तथापिहिं मू राज्यि कार्यु नहीं"। इसीपरि वार वार राज्याभिषेक निषेधु करतइ हूंतइ आकाश-5 भाषा ऊछली, "अजी ! भोगफलु प्रभूतु कर्मु छइ तिणि कारणि राज्यलक्ष्मी पाणिग्रहणु करि" इसी निज भाग्यदेवता वचनु सांभली करी सिंहासनि जिनेंद्रप्रतिमा बइसाली करी तेह नइ पार्श्वपीठि आपणपइं बइसी करी जिनप्रतिमा रहइं राज्याभिषेक तणइ व्याजि आपणा रहइं त्रिभुवनाधिपत्यनिमित्तु अभिसींचावइ। जेतलउं अंगीकरिउं छइ तेतलउं आपणइ लेखइ करी बीजउं गमस्तु वस्तु रहस्त[9] हस्ति तुरंगम[9] भांडागारादिकु जिन नामांकितु करइ। सदा तीर्थयात्रादि प्रभावना करावइ। चैत्यगृह करा-10 वइ। जिनबिंब भरावइ। अभयघोषणा अमारिघोषणा करावइ। लोक कन्हा कर न लियइं। कहइ, "अहो लोकउ जु राजु[10] भागु आवइ सु धनु धर्मिहिं जि वेचउ"। तउ पाछइ जिनधर्म नइ एकातपत्रि राज्यि प्रवर्त्तइ[11] हूंतइ 'मार'[12] इसा अक्षर कंदर्पनाम मूंकी करी अनेरइ थानकि, न केवलं जीवविषइ कोइ[13] न कहइं, अजीव छइं जि द्यूत माहि सारि सोंगटी आगइ को न कहइं मारि। जिम जिम विद्यापति-राजा धनु वेचइ तिम तिम तेह नी भाग्यदेवता राजमंदिरि धनु वरसइ। अनेरइ दिनि समीपगत राजेंद्र 15 मिली करी तेह ना राज्य रहइं लेवा आविया। विद्यापति धर्म मूकी बीजी वात जाणइ नहीं। जिनाधिष्ठा-यक छइं यक्ष तेहे सींहं रहइं रोग ऊपजावी करी नासविया। विद्वेषियां तणउं विकटु कटकु देखी करी विद्यापति चित्ति चींतवइ।

§484) "अहो ! शक्र-विक्रमवंत शत्रु राजेंद्र छइं, तेई धर्म तणइ प्रभावि भाजी गया। मूं रहइं अल्प परिग्रहता देखी करी महापरिग्रह शत्रुलोक जिणिवा कारणि आपणा सेवक[1] भणी[2] धर्मि 20 निश्चइं साहाय्यु कीधउं।

> तदहं वयमुं सेवे, त्यक्त्वाशेषपरिग्रहः।
> तदन्तरायभङ्गेऽपि, भवत्ययमुपक्रमः॥ [६४१]

इसउं चींतवी करी शृंगारसुंदरी संभवु शृंगारसेनु सुतु राज्यि बइसाली करी संजमसूरि समीपि संजमु ले करी कल्याणमउ आपणउ आत्मा तपोग्नि तापि सूझवी करी विद्यापति राजऋषि देवलोकि 25 गयउ। मनुष्य देव भव पंचकि हूयइ हूंतइ मुक्ति गयउ।

> विद्यापतिकृतपरिग्रहमानयामं
> श्रुत्वा बुधा भवत सम्पदि निस्पृहा भोः।
> येन स्वयंवरवधूः शिवसम्पदेषा
> जातस्पृहा क्षिपति वः स्रजमाशु कण्ठे॥ [६४२]

इति परिग्रह परिमाण करण व्रतफलविषइ विद्यापति राजऋषि कथा समाप्ता[3]।

30 §485) अथ त्रिन्हि गुणव्रत कहियइं।

तत्र प्रथम गुणव्रत प्रतिक्रमणा निमित्तु भणइ—

> गमणस्स य परिमाणे दिसासु उड्ढं अहे य तिरियं च।
> वुड्ढि-सइ-अंतरद्धा पढमंमि गुणव्वए निंदे॥ [६४३]

गमनु भणियइ गति तेह तणइ परिमाणि एतलां जोयण जाइसु इसीपरि छोदि प्रमाणि अंगीकरिइ हूंतइ। किसा नइ विषइ ?

§ 483) 7 P. हूंतउ। 8 B. P. पडिउ। 9 P. तुरंग। 10 Bh. राज। 11 Bh. later corrected to प्रवर्त्तइ। P. प्रवर्तिइ। 12 Bh. मारि। 13 Bh. को।

§ 484) 1 P. सेव। 2 P. तणी। 3 P. omits.

पूर्वा दक्षिणा पश्चिमा उत्तरा लक्षणासु दिसासु । तथा आग्नेय नैऋति वायव्य ऐशान लक्षणासु विदिसासु तथा 'उड्ढं–' उर्द्ध्वदिसि 'अहे' अधोदिसि विषइ जु अतिक्रमिउं सु अतीचारु तदेवाह—।

'उड्ढं' ऊर्द्ध्वं योजनद्वय मानि कीधइ हूंतइ अनाभोगादिवशइतउ अधिक गमनि हूंतइ उर्द्ध्वदिक्परिमाणातिक्रमु प्रथमु अतीचारु १।

एवं अधोदिक्परिमाणातिक्रमु बीजउ अतीचारु २।

तिर्यग्दिक्परिमाणातिक्रमु त्रीजउ अतीचारु ३।

तथा 'वुड्ढि' त्ति एक दिशि ना जोयण बीजी दिसि वधारियइं प्रयोजनवशइतउ तिणि दिशि प्रक्षिपियइं। यथा पूर्वपश्चिमादिषु समू जु दिक्परिमाणु कीधउं छइ पाछइ दशोत्तरशय ऊपरि कार्यु ऊपनउं पाछइ पश्चिमदिशि नवइ योजन चींतवी करी पूर्वदिसि दशोत्तरसउ जाइ। इसी परि क्षेत्रवृद्धि चउथउ अतीचारु ४।

§486) 'सइ अंतरद्धि'त्ति–'सइ' स्मृति तेह तणी अंतर्द्धा व्रतप्रमाण विस्मरणु। स स्मृत्यंतर्द्धा कहियइ। यथा पूर्वदिसि गमनि उपस्थितइ हूंतइ मनि संदेहु हुयइ। किसउं मू रहइं शउ अथवा पंचाश जोयण मोकलां छइ इसी परि स्मृत्यंतर्द्धानि हूंतइ अधिकगमनि स्मृत्यंतर्द्धानु पांचमउ अतीचारु ५।

इसी परि नियमित भूभाग मेल्ही करी अपर चतुर्दश रज्जुप्रमाण लोकगत जंतुजात रक्षालक्षण गुण निमित्तु व्रतु गुणव्रतु कहियइ। तिणि प्रथमि गुणव्रति जु अतिचरिउं – इत्यादि पूर्ववत्। तप्त लोहगोलक सरीखउ छइ गृही तेह रहइं एउ व्रतानुव्रतु। तथा च भणितं—

तत्तायगोलकप्पो पमत्तजीवो निवारियप्पसरो।
सव्वत्थ किं न कुज्जा पावं तक्कारणाणुगओ ॥ [६४४]

चराचराणां जीवानां विमर्दननिवर्त्तनात्।
तप्तायो गोलकल्पस्य सद्व्रतं गृहिणोऽप्यदः ॥ [६४५]

जगदाक्रममाणस्य प्रसरल्लोभवारिधेः
स्खलनं विदधे तेन, येन दिग्विरतिः कृता ॥ [६४६]

§487) दिक्परिमाणव्रतकरण विषइ सिंहकथा लिखियइ।

गतीं संकोचयत्येवं, यः स्वं दिग्विरतिव्रतम्।
संसारलङ्घनोत्तालफलारम्भः[1] स सिंहवत् ॥ [६४७]

वासंती[2] नामि नगरी। कीर्तिपालु नामि राजा। भीमु नामि तेह तणउ पुत्रु। पुत्रहीं[3] कन्दा अतियस्तु सिंहुनामि श्रेष्ठि। सुगुण[4] परम श्रावकु जिनभक्तियंतु वर्त्तइ। अनेरइ दिनि सभा माहि कीर्तिपालु राजा सिंहश्रेष्ठि मुखकमलु भ्रमर जिम जोयतउ हूंतउ वर्त्तइ[5]। तेतलइ प्रस्तावि प्रतीहारु आवी राजेंद्र रहइं वीनवइ। "महाराज ! तुम्हे रहइं देखणहारु एकु[6] पुरुषु[6] दिव्याकारु द्वारि आविउ छइ।" राजा भणइ "माहि मेल्हि" तउ पाछइ प्रतीहारु मुकु हूंतउ सु पुरुषु माहि आवी राजेंद्र रहइं प्रणामी करी आसनि सभासीनु वीनवइ।

§488) "महाराज–नागपुरु नामि नगरु। तिहां चंद्रु नामि नरेंद्रु। रत्नमंजरी नामि राणी। तीहं नी गुणमाला नामि दीकिरी। स तातरा पुत्र भीम रहइं देवा कारणि स्वामिन् ! तुम्ह कन्हइ इउं

§ 48[illegible] 1 B. Bh. have उवरियइ।

§ 487) 1 B. Bh. –कान्त– । 2 Bh. begins with स्वरि । 3 B. Bh. दै । 4 Bh. पुत्र । 5 Bh. has अनेरइ...वर्त्तइ in the margin. 6 P. omits.

नीसरिउ राजुमत्तु हुयइ. तिम हउं अल्पधनपंक हूंतउ' कथमपिहिं नीसरिउ, प्राज्यराज्य महापंक नीसरिउ राजुमत्तु हुयइ, तिम हउं अल्पधनपंक हूंतउ कथमपिहिं नीसरिउ, प्राज्यराज्य महापंक माहि पडिउ'। महामात्ये बइसाली करी महामात्य राज्याभिषेकु करावइं। विद्यापति भणइ, "मुं रहइं राज्य माहि कार्युं नहीं" प्रधान कहइं, "इम किम हुयइ? देवता तू रहइं राज्यु दियइ"। विद्यापति राज्याभिषेक निषेधु करतइ हूंतइ आकाशवाणी भणइ, "तथापिहिं मु राज्यि कार्युं नहीं"। इसीपरि वार वार राज्याभिषेक निषेधु करतइ हूंतइ आकाश-भाषा ऊछली, "अहो! भोगफलु प्रभूतु कर्मु छइ तिणि कारणि राज्यलक्ष्मी पाणिपीडनु करि" इसी भाषा ऊछली, "अहो! भोगफलु प्रभूतु कर्मु छइ तिणि कारणि राज्यलक्ष्मी पाणिपीडनु करि" इसी निज भाग्यदेवता वचनु सांभली करी सिंहासनि जिनेंद्रप्रतिमा बइसाली करी तेह नइ पार्श्वंति आपणपउं धर्मी करी जिनप्रतिमा रहइं राज्याभिषेक तणइ व्याजि आपणपा रहइं त्रिभुवनाधिपत्यनिमित्त अभिषेकु करावइ। जेतलउं अंगीकरिउं छइ तेतलउं आपणइ लेखइ करी बीजउं समस्त वस्तु शस्त्र' हस्ति तुरंगम' भांडागारादिकु जिन नामांकितु करइ। सदा तीर्थयात्रादि प्रभावना करावइ। देवगृह करावइ। जिनबिंब भरावइ। अभयघोषणा अमारिघोषणा करावइ। लोक कन्हा कर न लियइं। कहइ "अहो लोकउ नु राजु' मागु आवइ सु धनु धर्मिहिं जि वेचउ"। तउ पाछइ जिनधर्म नइ एकातपत्र राज्यि प्रवर्तते'' हूंतइ 'मार'" इसा अक्षर दर्पणनाम मूंकी करी अनेरइ थानकि, न केवलं जीववधि "मारि" म करउं, अनेरा पुरइं जि तृन माहि स्वारि तीहीं आगइ को न कहइं मारि। जिम जिम विद्यापति राजा धनु वेचइ तिम तिम तेह नी भाग्यदेवता राजमंदिरि धनु वरसइ। अनेरइ दिनि समीपगत राजेंद्र [illegible] करी तेह ना राज्य रहइं लेवा आविया। विद्यापति धर्म मूकी बीजी वात जाणइ नहीं। [illegible] [illegible] रहइं [illegible] करी नासविया। विद्वेषियां तणउं विरुद्ध कटकु देखी करी विद्यापति [illegible] भणइ।

(484) "अहो! शक विक्रमवंत प्रमुख राजेंद्र छइं, तेई धर्म तणइ प्रभावि भाजी गया। मुं रहइं [illegible] करी महापरिग्रह शत्रुलोक जिणिवा कारणि आपणा सेवक' भणी' धर्मि [illegible] [illegible] कीधउं।

मदं प्रथमं गेहे, [illegible] [६४१]
[illegible], [illegible] ॥

इसउं भावना करी शृंगारसुंदरी संयमु शृंगारकेतु सुनु राज्यि बइसाली करी संजमगुरि समीपि संयमु ले करी [illegible] आत्मा तपोभि तापि सुन्नयी करी विद्यापति राजऋषि देवलोकि [illegible]। मनुष्य देव भव पंचकि हुयइ हूंतइ मुक्ति गयउ।

विद्यापतिकृतपरिग्रहमानमार्यं
श्रुत्वा पृथा भवत मत्यादि निस्पृहा भोः।
येन [illegible] [illegible]
[illegible] शिवानि वः प्रतपातु कण्ठे ॥ [६४२]

इति पंचमपरिग्रहपरिमाण व्रत प्रस्तावनि विद्यापति राजऋषि कथा समाप्ता'।

(485) अथ [illegible] गुणव्रत [illegible]।

तत्र प्रथम गुणव्रत [illegible] [illegible] भणइ—

गमणस्स य परिमाणे दिसासु उड्ढं अहे य तिरियं च ।
वुड्ढि सइ अंतरद्धा पढमंमि गुणव्वए निंदे ॥ [६४३]

[illegible] [illegible] [illegible] परिमाणि [illegible] आरतु इसीपरि छेदि प्रमाणि [illegible] [illegible] हूंतइ। [illegible]

पूर्वा दक्षिणा पश्चिमा उत्तरा लक्षणासु दिसासु । तथा आग्नेय नैऋति वायव्य ऐशान लक्षणासु विदिसासु तथा 'उड्ढं–' उर्द्धदिसि 'अहे' अधोदिसि विषइ जु अतिक्रमिउं ■ अतीचारु तदेवाह—।

'उड्ढं' ऊर्द्धं योजनद्वय मानि कीधइ हूंतइ अनाभोगादिवशइतउ अधिक गमनि हूंतइ उर्द्धदिक्परिमाणातिक्रमु प्रथमु अतीचारु १।

एवं अधोदिक्परिमाणातिक्रमु बीजउ अतीचारु २।

तिर्यग्दिक्परिमाणातिक्रमु त्रीजउ अतीचारु ३।

तथा 'वुड्ढि' त्ति एक दिशि ना जोयण बीजी दिसि वधारियइं प्रयोजनवशइतउ तिणि दिशि ओढियइं। यथा पूर्वपश्चिमादिपु सम् जु दिक्परिमाणु कीधउं छइ पाछइ दशोत्तरशय ऊपरि कार्यु ऊपनउं पाछइ पश्चिमदिशि नवइ योजन चांतवी करी पूर्वदिसि दशोत्तरुसउ जाइ। इसी परि क्षेत्रवृद्धि चउथउ अतीचारु ४।

§486) 'सइ अंतरद्धि'त्ति–'सइ' स्मृति तेह तणी अंतर्द्धा व्रतप्रमाण विस्मरणु। स स्मृत्यंतर्द्धा कहियइ। यथा पूर्वदिसि गमनि उपस्थितइ[1] हूंतइ मनि संदेहु हुयइ। किसउं मू रहइं शउ अथवा पंचाश जोयण मोकलां छइ इसी परि स्मृत्यंतर्द्धानि हूंतइ अधिकगमनि स्मृत्यंतर्द्धानु पांचमउ अतीचारु ५।

इसी परि नियमित भूभाग मेल्ही करी अपर चतुर्द्दश रज्जुप्रमाण लोकगत जंतुजात रक्षालक्षण गुण निमित्तु व्रतु गुणव्रतु कहियइ। तिणि प्रथमि गुणव्रति जु अतिचरिउं – इत्यादि पूर्ववत्। तप्त लोहगोलक सरीखउ छइ गृही तेह रहइं एउ प्रथानुव्रतु। तथा च भणितं—

> तत्तायगोलकप्पो पमत्तजीवो निवारियप्पसरो।
> सव्वत्थ किं न कुज्जा पावं तक्कारणाणुगओ॥ [६४४]
>
> चराचराणां जीवानां विमर्दननिवर्त्तनात्।
> तप्तायो गोलकल्पस्य सद्व्रतं गृहिणोऽप्यदः॥ [६४५]
>
> जगदाक्रममाणस्य प्रसरल्लोभवारिधेः।
> स्खलनं विदधे तेन, येन दिग्विरतिः कृता॥ [६४६]

§487) दिक्परिमाणव्रतकरण विषइ सिंहकथा लिखियइ।

> गतीः संकोचयत्येवं, यः स्वं दिग्विरतिव्रतम्।
> संसारलङ्घनोत्तालफलारम्भः[1] स सिंहवत्॥ [६४७]

वासंती[2] नामि नगरी। कीर्त्तिपालु नामि राजा। भीमु नामि तेह तणउ पुत्रु। पुत्रहीं[3] कन्हा अतिवल्लभु सिंहनामि श्रेष्ठि। सुपुण्[4] परम श्रावकु जिनभक्तियंतु वर्त्तइ। अनेरइ दिनि सभा माहि कीर्त्तिपालु राजा सिंहश्रेष्ठि मुखकमलु भ्रमर जिम जोयतउ हूंतउ वर्त्तइ[5]। तेतलइ प्रस्तावि प्रतीहारु आवी राजेंद्र रहइं वीनवइ। "महाराज! तुम्हे रहइं देखणहारु एकु[6] पुरुषु[6] दिव्याकारु द्वारि आविउ छइ।" राजा भणइ "माहि मेल्हि" तउ पाछइ प्रतीहारु मुकु हूंतउ सु पुरुषु माहि आवी राजेंद्र रहइं प्रणमी करी आसनि समासीनु वीनवइ।

§488) "महाराज–नागपुरु नामि नगरु। तिहां चंद्रु नामि नरेंद्रु। रत्नमंजरी नामि राज्ञी। तीहं नी गुणमाला नामि डीकिरी। स ताहरा पुत्र भीम रहइं देवा कारणि स्वामिन्! तुम्ह कन्हइ हउं

---

§ 486 1 B. Bh. have उपस्थिइ।

§ 487) 1 B. Bh. –फाला– । 2 Bh. begins with तथाहि । 3 B. Bh. ही । 4 Bh. पुत्रु । 5 Bh. has अनेरइ...वर्त्तइ in the margin. 6 P. omits.

पाठिविउ[1]। तिणि कारणि, अहो महीपाल! स राजपुत्रिका रूपशोभा करी रति रहइं वत्तजयपत्रिका वर्त्तइ। रूपलक्ष्मी करी जितलक्ष्मीपुत्रु जु छइ भीमु नामि तुम्हारउ पुत्रु तेह रहइं प्रमाणु करउ"। दूति इसइ अर्थि वीनविइ हूंतइ सिंहश्रेष्ठि मुख सामुहउं जोयतउ हूंतउ कीर्तिपालु राजा भणइ। "सिंहश्रेष्ठिन्! आपणपा रहइं आगे[3] भेदु को[4] नंही। तिणि कारणि माहरइ थानकि थाई, तुम्हे भीमु नागपुरि ले करी पहुचउ। बांधव! ए संबंधु करउ।" दिग्विरति-विरति-व्रत भंग अनइ अनर्थदंड-विरति-व्रत भंग भयभीतु हूंतउ सिंहु अधोमुखु थाई रहिउ। राजेंद्र रहइं उतरु न दियइं। लगार एक कुपितलोचन हूंतउ राउ भणइ, "किसउं बांधवु! एउ संबंधु बंधरु नंही जु तउं ऊतरु कोई न दियइं?" आकारइंगितादिकइं चिह्नइं करी सकोपु राउ जाणी करी सुधाशीतलवाणी राउ जिम शीतलु थाइ, तिणि कारणि सिंहु बोलइ। "ईहां हूंतउ जोयण सउ अधिकेरउं नागपुरु हुयइ। इणि कारणि व्रतभंगभय वशइतउ हउं नागपुरि न जाउं।" इसइ भणिइ हूंतइ सिंह ऊपरि कीर्तिपालु राउ कोपि चडिउ। जिम घृतसेकि करी वैश्वानरु ज्वलइ तिम प्रज्वलिउ। तउ राउ कोपवशि हूंतउ भणइ। "जइ किमइ जोयणसय ऊपरि नहीं आइ तउ हउं तू रहइं बांधीकरी जोयणसहस्र ऊपरि निक्षिपाविसु।" तउ सिंहुं समुत्पन्नमति हूंतउ पुनरपि भणइ। "महाराज! ताहरउ विरहु हउं सहीं[5] सकउं नहीं, तिणि कारणि अहंकाररहितु हूंतउ 'जोयण सय ऊपरि हउं जाउं नंही' इसा ऊतर तुम्ह आगइ कहउं" इसइ वचनि राउ उपशांतकोपानलु हूंतउ सरसउं प्रबलु दलु दे करी भीम सरसउ सिंहु चलावइ। कटक आगइ, कुमार भीमकुमार आगइ भणिउं। "जं कांई सिंहु कहइ तं तुम्हे करिवउं" तउ पाछइ रायाभियोगि अकामु थिकउ[6] सिंहु भीमकुमार सरसउ चालिउ[7] हूंतउ कुमार आगइ संसारासारता[8] शुभवृत्ति[9] करी कहइ—

> बहिरन्तर्विपर्यासः स्त्रीशरीरस्य[10] चेद्भवेत् ।
> तस्यैव कामुकः कुर्याद्गृध्रगोमायुगोपनम्[11] ॥ [६४८]

> यकृत्शकृन्मलश्लेष्म, मज्जास्थिपरिपूरिताः ।
> स्नायुस्यूता बहिर्रम्याः, स्त्रियश्चर्ममसेविकाः ॥ [६४९]

§489) तउ भीमकुमार रहइं महोपशम वशइतउ भववासना छूटी गई। मुक्तिकन्यानुरक्तचित्तु[1] हूंतउ भीमुकुमारु श्री[2] अनइ स्त्री तृण ही सरीसी न देखइं। जोयणशत मार्गि आविउ हूंतउ सिंहुं आघउं पियाणउं[3] करइ नहीं। जेतीवार बीजा महता पूछइं तेतीवार कूडा ऊतर करइ। जइ दिन ५-६ हुया तिहां तउ पाछइ बीजे महते भीमकुमार आगइ कहिउं। "कुमारवर! राजेंद्रि अम्ह आगइ सिंह छानउं इसउं[4] कहिउं छइं। 'जइ किमइ किहांई गयउ हूंतउ सिंह आघउ न चालइं तउ तुम्हे बलात्कारि सिंहु बांधी करी आघउं पियाणउं कराविजिउ'। तिणि कारणि जु तुम्हे भणउ तउ सिंहु बांधी करी चलावियइ।" भीमु कहइ, "आजु जउ पियाणउं आघउं[5] सिंहु न करइ तउ कालिह[6] तुम्हे राजादेशु करिजिउ"। इसउं मंत्रिवचनु एकांति भीमु सिंहु आगइ कहइ। संसार निरास बुद्धि हूंतउ सिंहु भीम आगइ भणइ[7]—

> न किञ्चिदत्र संसारे, निस्सारेऽस्य शरीरिणः ।
> शरीरमपि न स्वीयं, स्वीयमन्यीह कस्यचित् ॥ [६५०]

इत्यादि वैराग्यकाव्य बहु भणी करी कटक हूंतउ रात्रि समइ प्राहरिक लोकि सूतइ हूंतइ नीसरिउ, कुमार पुण सरसउ नीसरिउ। "किणिहिं गिरि वणोद्देशि[9] जाई करी पादपोपगमनु अनशनु[10]"

§ 488) 1 P. पाठविउ। 2 P. वदन-। 3 P. आगइ। 4 Bh. को भेदु is corrected to भेदु को। 5 R. adds न। 6 P. थकउ। 7 P. चालियउ। 8 P. वैराग्य। 9 P. शुभि। 10 P. स्त्रीशरीर 11 P. कैवाय-।

§ 489) 1 P. मुक्ति-। 2 P. omits. 3 P. पयाणउं। 4 Bh. omits. 5 Bh. adds it in the margin P. omits. 6 P. कालि। 7 P. राजादेशु। 8 Bh. कहइ। 9 Bh. -देशि। 10 P. omits अन-

करिसु। तउ ति महामात्य माहरउं किसउं करिसिइं ? किम मू रहइं बांधी लेसिइं ? जु शरीरु लेसिइं सु हउ पहिलउं मूकी रहिसु" इसउं भणी करी भीम आगइ आघउ[11] जाइवा लागउ। भीमु भणइ " मू रहइं तुम्हे ई जि शरणु"। इसउं भणतउ सरसू जु चालिउ[12]। गिरि एकि जाई शुद्ध शिलातलि बिहुं पादपोपगमनु अनशनु कीधउं। प्रभाति प्रधान महामात्य कुमार भीम सिंहश्रेष्ठि बिहुं रहइं अदेखता हूंता पादानुसारि नीसरिया। घणी भुंइ गया। किणिहिं पर्वति शिलातलि गृहीतदीक्ष कृत पादपोपगमन सिंह भीम देखी 5 करी विलक्षवदन थिका प्रणमी करी चाटुकारकरणपूर्वं घणउं खमावइं। पाये[13] लागी मनावइं, "पसाउ-करी अम्हारउ अपराधु खमिजिउ। ऊभा थाउ, जिम नागपुरि जाइयइ[14]। एउ वृत्तांतु जाणी करी तिलहं जिम घाणइ घाती राउ कीर्त्तिपालु अम्ह रहइं पीडाविसिइ। तिणि कारणि तुम्हे कृपासमुद्र अम्ह ऊपरि कृपा करी अम्ह सोमुहउं काइ देखउ नहीं ? कांइ अम्हसउं बोलउ नहीं ?"

§490) 'इत्येवमादिकु बहुधा भणी करी महामात्यहं विलक्षहं पाछा वली सु वृत्तांतु 10 कीर्त्तिपाल महीपाल रहइं जाणाविउ। 'सिंहु वष्टु, कुमारु परिणाविवउ[1] इसउं राउ मनि चींतवतउ हूंतउ विहलउ तिहां आविउ। इसइ महा विरुद्धइ मनि[2] हूंतइ राउ ति महापुरुष महासत्त्व सिंह व्याघ्र चित्रक शूकर[3] वृक प्रमुख क्षुद्र श्वापद संसेव्यपाद देखी करी मनि चीतवइ, 'महा सप्रभाव ए महासत्त्व, मइं ए परामवी नहीं सकियइ किंतु सेवायोग्य ए' इसउं ध्यायतउ राउ तींहं कन्हइ गयउ।

श्वापदैर्दत्तमार्गं तं, मार्गन्तं वीक्षणान्यपि। 15
नमन्तं चाटुमन्तं च नेक्षांचक्रतुरप्यमू ॥ [६५१]

मासोपवासावसानि सुरासुर नराधीश संसेव्यमान शुक्लध्यानानल दग्ध कर्म्मेंधनवितान मुक्तिपद प्राप्त हूया।

न योजनशतादूर्ध्वं यामीति तव निश्चयः।
असङ्ख्ययोजनर्मित्र मां मुक्त्वा किमगाः[5] शिवम् ॥ [६५२] 20

§491) इसी परि विलपतउ हूंतउ राउ सिंह अनइ भीम बिहुं रहइं संस्कारु करी आपणपइं शोकानल वह्यमानमानसु हूंतउ देवे संबोधिउ, भणिउं, "महाराज शोकु तींहं मउ कीजइ जि अकृतकृत्य हुयइं। ए महात्मा स्तुत्यपाइ"। इसी परि तउ पाछइ, पाछउ चली राउ वासंतीनगरी गयउ।

सङ्कोच्यसिंह इवसौवगतिं यथाऽऽप
श्राद्धाग्रणीर्यगिति भीमयुतः स सिंहः। 25
स्वर्गः पदं प्रमदमन्दिरमिद्धशर्म्म
भव्यास्तथैव विलसन्तु वसन्तु तत्र ॥ [६५३]

दिग्व्रतविषइ सिंहश्रावककथा समाप्ता[1]।

§492) अथ द्वितीउ[1] गुणव्रतु भणइ।

सु पुण द्विविधु–भोगइतउ, कर्मइतउ। भोग पुण द्विविधु–उपभोग परिभोग भेदइतउ। तत्र उप 30 किसउ अर्थु ? एक वार जेह तणउ भोगु हुयइ सु आहार, माल्य, तांबूलादिकु उपभोगु कहियइ।

परि किसउ अर्थु ? वार वार जेह तणउ भोगु हुयइ सु भवनांगना वसनादिकु परिभोगु कहियइ। तथा उपभोगु भोगु पुण कहियइ। तथा च भणितं–

§ 489) 11 P. आघइ। 12 Bh. चालियउ। 13 P. पाए। 14 Bh. जाईइ।
§ 490. 1 P. परिणाविवा। 2 B. P. put it after हूंतइ। 3 P. सूकर। 4. Bh. adds in the margin हूंतउ। 5 P. किमगः।
§ 491) 1 P. omits.
§ 492) 1 Bh. द्वितीय। 2 B. Bh. have सय मुक्तियति। 3 Bh. प्रायुकि। 4 Bh. फासु।

सइ भुज्जइत्ति भोगो सो पुण आहारपुप्फमाईओ।
परिभोगो य पुणो पुण परिभुज्जइ भवणविलयाई॥ [६५४]

तथा—भोगोपभोगव्रतपक्षि जिसउ अर्थु परिभोग तणउ तिसउ उपभोग तणउ पुण जाणिवउ। तथा च हेमाचार्यमिश्राः प्राहुः—

सकृदेव भुज्यते यः स भोगोऽन्नस्रगादिकः।
पुनः पुनः पुनर्भोज्य उपभोगोऽङ्गनादिकः॥ [६५५]

तथा—उत्सर्गइतउ श्रावकि प्रासुक' वस्तु भोजकि होइवउं। किसउं अर्थु? जि आपणइ भावि फासु' हुयइं तींहं रहइं भोजकि होइवउं। प्रासुक नइ अभावि सचित्त परिवर्जकि होइवउं। किसउ अर्थु? आपणपा निमित्तु फासू करी अथवा करावीतउ तींहं रहइं भोजकि होइवउं। तींहं नइ अभावि 10 हुंतइ बहु सावद्य जि छइं मद्यादिक तींहं रहइं परिवर्जकि होइवउं॥ तथा च भणितं—

निरवज्जाऽऽहारेणं निज्जीवेणं परित्तमीसेणं।
अत्ताणुसंधणपरा सु सावया एरिसा हुंति॥ [६५६]

§493) इणि कारणि मस्तवइतउ जाणायिवा कारणि वर्जनीय वस्तु लिखियइं।

मद्यं मांसं नवनीतं, मधूदुम्बरपञ्चकम्।
अनन्तकायमज्ञातफलं रात्रौ च भोजनम्॥ [६५७]
आमगोरससंपृक्तं, द्विदलं पुष्पितौदनम्।
दध्यहर्द्वितयातीतं कुथितान्नं च वर्जयेत्॥ [६५८]
मदिरापानमात्रेण बुद्धिर्नश्यति दूरतः।
वैदग्धी बन्धुरस्यापि दौर्भाग्येणेव कामिनी॥ [६५९]
पापाः कादम्बरीपानविवशीकृतचेतसः।
जननीं हा प्रियीयन्ति जननीयन्ति च प्रियाम्॥ [६६०]
न जानाति परं स्वं वा मद्याच्चलितचेतनः।
स्वामीयति वराकः स्वं स्वामिनं किङ्करीयति॥ [६६१]
मद्यपस्य शवस्येव लुठितस्य चतुष्पथे।
मूत्रयन्ति मुखे श्वानो व्यात्ते विवरशङ्कया॥ [६६२]
मद्यपानरसे मग्नो नग्नः स्वपिति चत्वरे।
गूढं च स्वमभिप्रायं प्रकाशयति लीलया॥ [६६३]
वारुणीपानतो यान्ति कान्तिकीर्तिमतिश्रियः।
विचित्राश्चित्ररचना विलुठत्कज्जलादिव॥ [६६४]
भूतात्तवन्नरीनर्ति रारटीति सशोकवत्।
दाहज्वरार्तवद्भूमौ सुरापो लोलुठीति च॥ [६६५]
विदधत्यङ्गशैथिल्यं ग्लपयन्तीन्द्रियाणि च।
मूर्छामतुच्छां यच्छन्ती हाला हालाहलोपमा॥ [६६६]
विवेकः संयमो ज्ञानं सत्यं शौचं दया क्षमा।
मद्यात्प्रलीयते सर्वं तृण्या वह्निकणादिव॥ [६६७]

दोषाणां कारणं मद्यं मद्यं कारणमापदाम् ।
रोगातुर इवापथ्यं तस्मान्मद्यं विवर्जयेत् ॥ [६६८]

इति मद्यदोषाः ।

§494) चिखादिषति यो मांसं प्राणिप्राणापहारतः ।
उन्मूलयत्यसौ मूलं दयाऽऽख्यं धर्मशाखिनः ॥ [६६९]
अशनीयन् सदा मांसं दयां यो हि चिकीर्षति ।
ज्वलति ज्वलने वल्लीं स रोपयितुमिच्छति ॥ [६७०]
हन्ता पलस्य विक्रेता संस्कर्ता भक्षकस्तथा ।
क्रेताऽनुमन्ता दाता च घातका एव यन्मनुः ॥ [६७१]
अनुमन्ता विशसिता निहन्ता क्रयविक्रयी ।
संस्कर्ता चोपहर्ता च खादकश्चेति घातकाः ॥ [६७२]
नाकृत्वा प्राणिनां हिंसां मांसमुत्पद्यते क्वचित् ।
न च प्राणिवधः स्वर्ग्यस्तस्मान्मांसं विवर्जयेत् ॥ [६७३]
ये भक्षयन्त्यन्यपलं स्वकीयपलपुष्टये ।
त एव घातका यन्न वधको भक्षकं विना ॥ [६७४]
मिष्टान्नान्यपि विष्टासादमृतान्यपि मूत्रसात् ।
स्युर्यस्मिन्नङ्गकस्यास्य कृते कः पापमाचरेत् ॥ [६७५]
मांसाशने न दोषोऽस्तीत्युच्यते यैर्दुरात्मभिः ।
व्याधगृध्रवृकव्याघ्रशृगालास्तैर्गुरूकृताः ॥ [६७६]
मां स खादयिताऽमुत्र यस्य मांसमिहाद्म्यहम् ।
एतन्मांसस्य मांसत्वे निरुक्तं मनुरब्रवीत् ॥ [६७७]
मांसास्वादनलुब्धस्य देहिनं देहिनं प्रति ।
हन्तुं प्रवर्तते बुद्धिः शाकिन्या इव दुर्धियः ॥ [६७८]
ये भक्षयन्ति पिशितं दिव्यभोज्येषु सत्स्वपि ।
सुधारसं परित्यज्य भुञ्जते ते हलाहलम् ॥ [६७९]
न धर्मो निर्दयस्यास्ति पलादस्य कुतो दया ।
पललुब्धो न तद्वेत्ति विद्याद्वोपदिशेन्न हि ॥ [६८०]
केचिन्मांसं महामोहादश्नन्ति न परं स्वयम् ।
देवपित्रतिथिभ्योऽपि कल्पयन्ति यदूचिरे ॥ [६८१]
क्रीत्वा स्वयं वाऽप्युत्पाद्य परोपहृतमेव वा ।
देवान् पितॄन् समभ्यर्च्य खादन्मांसं न दुष्यति ॥ [६८२]
मन्त्रसंस्कृतमप्यद्याद्यवाल्पमपि नो पलम् ।
भवेज्जीवितनाशाय हालाहललवोऽपि हि ॥ [६८३]

सद्यः संमूर्च्छितानन्तजन्तुसन्तानदूषितम् ।
नरकाध्वनि पाथेयं कोऽश्नीयात्पिशितं सुधीः ॥ इति मांसदोषाः । [६८४]

§495) अन्तर्मुहूर्तात्परतः सुसूक्ष्मा जन्तुराशयः ।
यत्र मूर्च्छन्ति तन्नाद्यं नवनीतं विवेकिभिः ॥ [६८५]

एकस्यापि हि जीवस्य हिंसने किमघं भवेत् ।
जन्तुजातमयं तत् को नवनीतं निषेवते ॥ इति माखणदोषाः । [६८६]

§ 496) अनेकजन्तुसंघातनिघातनसमुद्भवम् ।
जुगुप्सनीयं लालावत् कः स्वादयति माक्षिकम् ॥ [६८७]

भक्षयन्माक्षिकं क्षुद्रजन्तु लक्षक्षयोद्भवम् ।
स्तोकजन्तु निहन्तृभ्यः शौनिकेभ्योऽतिरिच्यते ॥ [६८८]

एकैककुसुमक्रोडाद्रसमापीय मक्षिकाः ।
यद्वमन्ति मधूच्छिष्टं तदश्नन्ति न धार्मिकाः ॥ [६८९]

अप्यौषधकृते जग्धं मधुश्वभ्रनिबन्धनम् ।
भक्षितः प्राणनाशाय कालकूटकणोऽपि हि ॥ [६९०]

मधुनोऽपि हि माधुर्यमबोधैरहहोच्यते ।
आसाद्यन्ते यदा स्वादाच्चिरं नरकवेदनाः ॥ [६९१]

मक्षिकामुखनिष्ठ्यूतं जन्तुघातोद्भवं मधु ।
अहो पवित्रं मन्वाना देवस्नाने प्रयुञ्जते ॥ इति मधुदोषाः । [६९२]

§ 497) उदुम्बरवटप्लक्षकाकोदुम्बरशाखिनाम् ।
पिप्पलस्य च नाश्नीयात् फलं कृमिकुलाकुलम् ॥ [६९३]

अप्राप्नुवन्नन्यभक्ष्यमपि क्षामो बुभुक्षया ।
न भक्षयति पुण्यात्मा पञ्चोदुम्बरजं फलम् ॥ [६९४]

आर्द्रः कन्दः समग्रोऽपि सर्वः किशलयोऽपि च ।
स्नुही लवणवृक्षत्वक् कुमारी गिरिकर्णिका ॥ [६९५]

शतावरी विरूढा निगुडूची कोमलाम्लिका ।
पल्यङ्कोऽमृतवल्ली च वल्लः शूकरसंज्ञकः ॥ [६९६]

अनन्तकायाः सूत्रोक्ता अपरेऽपि कृपापरैः ।
मिथ्यादृशामविज्ञाता वर्जनीया प्रयत्नतः ॥ इति अनंतकायविचारः । [६९७]

§498) स्वयं परेण वा ज्ञातं फलमद्याद्विशारदः ।
निषिद्धे विषफले वा मा भूदस्य प्रवर्तनम् ॥ इति अज्ञातफलनिषेधः । [६९८]

§499) अन्नं प्रेतपिशाचाद्यैः संचरद्भिर्निरङ्कुशैः ।
उच्छिष्टं क्रियते यत्र तत्र नाद्याद्दिनात्यये ॥ [६९९]

घोरान्धकाररुद्धाक्षैः पतन्तो यत्र जन्तवः ।
नैव भोज्ये निरीक्ष्यन्ते तत्र भुञ्जीत को निशि ॥ [७००]

मेधां पिपीलिका हन्ति यूका कुर्याज्जलोदरम् ।
कुरुते मक्षिका वान्तिं कुष्ठरोगं च कोलिकः ॥ [७०१]

कण्टको दारुखण्डं च वितनोति गलव्यथाम् ।
व्यञ्जनान्तर्निपतितस्तालु विध्यति वृश्चिकः ॥ [७०२] 5

विलग्नश्च गले वालः स्वरभङ्गाय जायते ।
इत्यादयो दृष्टदोषाः सर्वेषां निशि भोजने ॥ [७०३]

नाप्रेक्ष्य सूक्ष्मजन्तूनि निश्यद्यात्प्रासुकान्यपि ।
अप्युद्यत्केवलज्ञानैर्नादृतं निशि भोजनम् ॥ [७०४]

धर्मविन्नैव भुञ्जीत कदाचन दिनात्यये ।
बाह्या अपि निशाभोज्यं यदभोज्यं प्रचक्षते ॥ तद्यथा । [७०५] 10

त्रयी तेजोमयो भानुरिति वेदविदो विदुः ।
तत्करैः पूतमखिलं शुभं कर्म समाचरेत् ॥ [७०६]

नैवाहुतिर्न च स्नानं न श्राद्धं देवतार्चनम् ।
दानं वा विहितं रात्रौ भोजनं तु विशेषतः ॥ [७०७] 15

दिवसस्याष्टमे भागे मन्दीभूते दिवाकरे ।
नक्तं तद्विजानीयान्न नक्तं निशि भोजनम् ॥ [७०८]

देवैस्तु भुक्तं पूर्वाह्णे मध्याह्ने ऋषिभिस्तथा ।
अपराह्णे तु पितृभिः सायाह्ने दैत्यदानवैः ॥ [७०९]

सन्ध्यायां यक्षरक्षोभिः सदा भुक्तं कुलोद्वह ।
सर्ववेलां व्यतिक्रम्य रात्रौ भुक्तमभोजनम् ॥ [७१०] 20

आयुर्वेदेऽप्युक्तं—

हृन्नाभिपद्मसंकोचश्चण्डरोचिरपायतः ।
अतो नक्तं न भोक्तव्यं सूक्ष्मजीवादनादपि ॥ [७११]

संसजज्जीवसंघातं भुञ्जाना निशि भोजनम् ।
राक्षसेभ्यो विशिष्यन्ते मूढात्मानः कथं न ते ॥ [७१२] 25

वासरे च रजन्यां च यः खादन्नेव तिष्ठति ।
शृङ्गपुच्छपरिभ्रष्टः स्पष्टं स पशुरेव हि ॥ [७१३]

अह्नो मुखेऽवसाने च यो द्वे द्वे घटिके त्यजन् ।
निशाभोजनदोषज्ञोऽश्नात्यसौ पुण्यभाजनम् ॥ [७१४] 30

अकृत्वा नियमं दोषाभोजनाद्दिनभोज्यपि ।
फलं भजेन्न निर्व्याजं न वृद्धिर्भाषितं विना ॥ [७१५]

ये वासरं परित्यज्य रजन्यामेव भुञ्जते ।
ते परित्यज्य माणिक्यं काचमाददते जडाः ॥ [७१६]

वासरे सति ये श्रेयस्काम्यया निशि भुञ्जते ।
ते वपन्त्यूषरक्षेत्रे शालीन् सत्यपि[1] पल्वले ॥ [७१७]

श्रूयते ह्यन्यशपथाननादृत्यैव लक्ष्मणः ।
निशाभोजनशपथं कारितो वनमालया ॥ [७१८]

करोति विरतिं धन्यो यः सदा निशि भोजनात् ।
सोऽर्द्धं पुरुषायुषस्य, स्यादवश्यमुपोषितः ॥ [७१९]

रजनीभोजनत्यागे ये गुणाः परितोपि तान् ।
न सर्वज्ञादृते कश्चिदपरो वक्तुमीश्वरः ॥ [७२०]

इति रात्रिभोजनपरिहारश्लोकाः ।

§500) आमगोरससंपृक्तद्विदलादिषु जन्तवः ।
दृष्टाः केवलिभिः सूक्ष्मास्तस्मात्तानि विवर्जयेत् ॥ [७२१]

इति द्विदलपरिभोगनिषेधः ।
तथान्यत्रापि सिद्धान्त माहि भणिउं ।

जइ मुग्गमासपमुहं विदलं कच्चंमि गोरसे पडइ ।
ता तसजीवुप्पत्ती भणिया दहिए वि तिदिणुवरिं ॥ [७२२]

द्विदलु स्वरूपु लिखियइ ।

जंमि य पीलिज्जंते मणयं पि न नेहनिग्गमो हुज्जा ।
दुन्नि य दलाइं दीसंति मिन्थिगाईण जह लोए ॥ [७२३]

संगरिहलिमुग्गमुट्ठ मासकंडू पमुक्ख विदलाइं ।
सह गोरसेण न जिमे एवं गयात्तियं न करे ॥ इति द्विदल विचारः । [७२४]

जन्तुमिश्रं फलं पुष्पं पत्रं चान्यदपि त्यजेत् ।

इति अनेक जीवमिश्रितपुष्पफलपत्रनिषेधः ।

सन्धानमपि संसक्तं जिनधर्मपरायणः ॥ [७२५]

संधानु अथाणउं संसक्तु संमूर्च्छिम जीव संयुक्तु जिनधर्मपरायणु जिनधर्मतत्परु 'त्यजेत्' इसउं क्रियापदु इहां पुण जोडिवउं ।

एवमादिक वर्जनीयवस्तु परिहानि इंतर पाछइ यथाशक्ति व्रतु करेवउं ।

§501) यथा—

भोगोपभोगयोः संख्या शक्त्या यत्र विधीयते ।
भोगोपभोगमानं तद्वैतीयीकं गुणव्रतम् ॥ [७२६]

अथ अतिचारमाह—

---

§499) 1 These stanzas, commencing with the author's comment in the paragraph §492 upto this stanza, are taken from Hemacandra's Yogaśāstra III. 5–66.

मज्जंमि य मंसंमि य पुप्फे य फले य गंधमल्ले य।
उवभोगपरीभोगे बीयंमि गुणव्वए निंदे ॥　　[७२७]

अत्र मद्योत्पत्ति केतला काली सर्वथा परिहरउं मद्यु कीधउं ति पुण मद्यदोष पूर्वलिखित योगशास्त्रश्लोकहं हूंता जाणिवा। तथा इहां भणियइं —

गुरुमोह-कलह-निद्दा-परिभव-उवहास-रोस-मयहेऊ।
मज्जं दुग्गइमूलं हिरि-सिरि-मइ-धम्मनासकरं ॥　　[७२८]

तथा—मांसु सिसिरु तेह मद्य निर्गतु तेह ना दोष पूर्वलिखित योगशास्त्रश्लोकहं करी भणिया छइं। वली भणियइं—

आमासु य पक्कासु य विपच्चमाणासु मंसपेसीसु।
भणिओ निगोयजीवाण संभवो अणंतनाणीहिं ॥　　[७२९]

मज्जे महुंमि मंसंमि नवणीयंमि चउत्थए।
उप्पज्जंति अणंता तव्वण्णा तत्थ जंतुणो ॥　　[७३०]

पंचिंदियवहभूयं मंसं दुग्गंधमसुइ बीभच्छं।
रक्खपरितुलियभक्खणमामयजणयं कुगइमूलं ॥　　[७३१]

'मज्जंमि य मंसंमि य।' इहां छइ प्रकार तेह तउ दोष अभक्ष्यभेद अनंतकाय पंचोदुंबरि प्रमुख जाणिवां ति पुण[1] पूर्विहिं योगशास्त्रश्लोकहं करी कहिया छइं ति तिहां नहीं कहिया।

तिम जिम कारक सर्व मृत्तिका कर्पूरादि परिमाण मधु य ति पुण जाणिवा। 'पुप्फे फले य' ति। फूल करीर पुप्फ महूयादिक प्रकारहतउ संगत पत्रादिग्रहणु जाणिवउं।

'फले य' ति—अंगारा जंबू पीलुकादिक फल जाणिवां।

ईहं मद्यादिकहं तणइ विषइ राजव्यापारादि वर्तमानि हूंतइ जं काइं क्रयविक्रय कीधउं तेह नइं विषइ। तथा ईहं करी अंतर्भोगु सूचित। बहिर्भोग पुण 'गंधमल्ले य' इणि करी जाणिवउ।

तत्र 'गंध' वास, 'माल्य' फूलमाला गंधमाल्य उपलक्षणु, बीजाई जि के भोगभेद चंदन कुंकुम कस्तूरिका धुपनि अवापि कर्पूर गंधतमालुक प्रमुख छइं ति जाणिवा। तउ पाछइ गंधमाल्यादिकहं भोगहं तणइ विषइ। उवभोग परीभोग इति नामि बीजइ गुणव्रति जु काइं अतिक्रमिउ 'तं निंदे' इति पूर्ववत्॥

§502) अत्र भोगहतउ अतिचार प्रतिक्रमण निमित्तु भणइ—

सचित्ते १ पडिबद्धे[1] २ अपउल ३ दुप्पोलिए य आहारे ४।
तुच्छोसहि भक्खणया ५ पडिक्कमे देसियं सव्वं ॥　　[७३२]

जिणि सचित्त नउं प्रत्याख्यानु कीधउं हुयइ अथवा सचित्त तणउं परिमाणु कीधउं हुयइ तेह पइइं अनाभोगादि कारणहतउ सचित्ताहारु अतीचारु १।

एवं नालिकेर गोटक पक्वाम्रफलादिक सचित्त प्रतिबद्धाहार कहियइं तींहं नउ आहारु सचित्तप्रतिबद्धाहारु अतीचारु २।

एवं अत्यालित कणिकादिक अपरिणत अग्नि करी असंस्कृत अपक्व कहियइं तेह नउ आहारु अपक्वाहारु अतीचारु ३।

एवं पृथुक होलादिक दुःपक्व कहियइं तींहं नउ आहारु दुःपक्वाहारु अतीचारु ४।

---

§501) 1 Bh. पुप्फि। 2 Bh. adds हे य।
§502) 1 Bh. पडिबद्धे।

फोडीकम्मं पुढवीइ फोडणं हलकुद्दालमाईहिं । अथवा [७३९]
तह घण अंडुयमाईहिं पाहाणाईण जं हणणं ॥ [७४०]
पुढवागराण खणणं तउ तंबयरुप्प सीसमाईणं ।
सिंधवसोवच्चलमाईयाण तत्थेव य वणिज्जं ॥

इति स्फोटिकाजीविका ५ ।

§509) अथ दंतवाणिज्जं । [७४१]
दंतवाणिज्जं चम्माइ तसजियंगाण आगरवणिज्जं ।
संखणासिप्पसुत्तिपत्तगाडनहचमरमाईणं ॥

इति दंतवाणिज्यं ६ ।

अथ लाक्षा वाणिज्जं— [७४२]
लक्खवाणिज्जे लक्खा धाइ इय' सक्कूड तह कुसुंभाई ।
अन्नंपि य संसत्तं दव्वं तह पाणिपविसयंमि ॥

इति लाक्षावाणिज्यं ७ ॥

अथ रसवाणिज्यं [७४३]
रसवाणिज्जंमि वसा महु मज्जं मंस सोणिय विरुद्धा ।
अविरुद्धा घय-गुल-तिलमाइ वाणिज्जविसयंमि ॥

इति रसवाणिज्यं ८ ॥

अथ केशवाणिज्यं । [७४४]
केसवाणिज्जं जीवाण विक्कयं मणुयं-तिरियंमाइणं ।
गो-तुरय-हत्थिमाइसु नरपक्खीणं च जं कहवि ॥

इति केशवाणिज्यं ९ ॥

अथ विषवाणिज्यं । [७४५]
विसवाणिज्जंमि विसं थावरविस-जंगमाइ बहुभेयं ।
लोह-हरियाल-मणासिल-सत्थाइ-अणेगभेयं च ॥

इति विषवाणिज्यं १० ॥

§510) अथ यंत्र पीडणकर्मु । [७४६]
जंता इह बहुभेया तिलजल उच्छूण गोहुमाईणं ।
लाभट्ठा नियगेहे पीलेइ तहत्र पीलावे ॥

इति यंत्रकर्मु ११॥

अथ निर्लाञ्छनकर्मु । [७४७]
निल्लंछणं च वद्धियकरणं तह नक्कन्न वेधाई ।
तह सोहाइ निमित्तं अंकण करणाइ जीवाणं ॥

इति निर्लाञ्छन कर्मु १२ ।

§509) Bh. पायइ

करी विहरावइ। श्रावक पुण यथ नइ अनुसारि पितृ मातृ भ्रातृ समान रहितउ[17] हूंतउ घरहिं जि रहावइ[18] वस्त्रभोजनादि आपणपा समूं जु करावइ। इसी परि सुपात्रइनिकइयमन पोषी करी अणंतु व्रतु प्रतिपाली करी कालयोगवशइतउ प्रवरु मरी करी देवलोकि सुरवरु हूयउ। जिसउं इंद्र हुयइ ऋद्धि करी तिसउं इंद्र सामानिकु हूयउ। शाश्वतार्हत यात्रादि सुकृतहं करी आयु पूरी चित्ति चींतवइ। 'श्रावानि श्रावक नइ कुलि
5 हउं ऊपजिजिउं। मिथ्यात्विकुलि राजेंद्रु म होइजिउं'। तउ पाछइ ताहरा नगर समीपि छइ चित्रशालु इसइ नामि विचित्रशालु पुरवरु[19] तिहां छइ शुद्धबुद्धि इसइ नामि श्रावकु जिणि इसी दुर्भिक्ष वार्ता धान्य तणउ संग्रहु[20] न कीधो। तेह नइ विमला इसइ नामि गुणहं करी अति विमला श्राविका। तेह नी कुक्षि संभूतु सु देवु पुत्रु हूयउ। तेह महाभाग[21] तणइ जन्मि द्वादश वार्षिक दुर्भिक्ष हतुक[22] मह निर्जिणी करी सुभिक्षु[23] कीधउं।" इसउं केवली वचनु सांभली करी केवली रहइं वांदी करी। चित्रशालि नगरि
10 जाई सु बालकु उत्संगी करी इसी परि स्तुति करइ।

> दुर्भिक्षपङ्कमग्नोपि[24] व्याधार वीर नमोस्तु ते।
> राजा त्वमेव मे राज्ये तलारक्षोस्मि तावकः ॥ [७५४]
>
> मूर्तिमानिव धर्मोयमित्थं दुर्भिक्षभञ्जकृत्।
> इति तस्याभिधा धर्म इति धात्रीभृता कृता ॥ [७५५]

15 §517) तउ पाछइ सु बालकु जातमात्रु हूंतउ प्रसिद्धउ हूयउ। अनेराई जि के पार्थिवा राजा छइं तेहे पुण आपणइ राज्यि धर्म नी आणि[1] प्रवर्त्तावी करी मेह वरसाविया। समस्त राजमंडल तणा कालोचित[2] यथोचित प्राभृत दिनि दिनि तेह रहइं आवइं। जिम मंदरकंदरागतु कल्पपादपु निरुपद्रवु थिकउ[3] प्रवर्द्धइ तिम सु बालकु प्रवर्द्धइ। यौवनि आविइ[4] हूंतइ जिम समुद्र रहइं नदी स्वयंवर आवइं तिम सवहीं दिनि तणा जि छइं राजेंद्र तीहं नी दीकिरी[5] स्वयंवर आवत अनेकि सु धर्मबालकु परिणिउ। धर्मु समस्त
20 महिमस्तक विहिताह्यु देवगुरु भक्तिमंतु[6] धर्मवंतु नवां कर्म अबांधतउ पूर्व पुण्यफल भोग भोगवतउ प्रस्तावि संयमु ले करी केवलज्ञानु ऊपाडी[7] मोक्षि[8] पहुतउ ॥

> भोगोपभोगविरतिं प्रतिपाल्य पूर्वं धर्मो यथा शिवमयाप निरस्तपापः।
> यूयं तथेह भविकाः प्रतिपद्य सद्यः सिद्धिश्रियं वृणुत तिष्ठत लोकमौलौ ॥ [७५६]

भोगोपभोग परिमाणव्रत प्रतिपालन विषइ धर्मराजेंद्र कथा समाप्ता[9]।

25 §518) अथ अनर्थदंड विरतिलक्षणु त्रीजउं गुणव्रतु लिखियइ।

तत्र अर्थु देह स्वजनादि कार्यु, तेह नउ अभावु अनर्थु। तउ पाछइ प्राणियउ कार्य पाखइ पुण्य धनापहारि करी पापकर्महं दंडियइ दंडियइ जिणि करी सु अपध्यानाचरितादिकु अनर्थु दंडु कहियइ। तेह तणउ मुहूर्तादि कालावधि करी निषेधु अनर्थदंडविरति व्रतु कहियइ ॥ तथा च भणितं

> तहणत्थदंडविरई अन्नं स चउव्विहो अवज्झाणे।
30 > पमयायरिए हिंसप्पयाण पावो व एसे य ॥ [७५७]

तथा अनर्थदंडश्चतुर्धा चउं भेदे हुयइ। यथा अपध्यानाचरितु, १ प्रमादाचरितु २, हिंस्रवस्तु प्रदानु ३ पापोपदेशु ४।

516) 17 P. रहितउ। 18 P. रहाविउ। 19 Bh. P. पुरवरु। 20 P. संग्रहु। 21 B महा भाग्य 22 P. omits –क। 23 Mss have सुभक्षु। 24 Bh. मग्नोप्याधार।
517) 1 Bh P आणी। 2 B. Bh. कालोचित। 3 P. थकउ। 4 P. आविइ। 5 P. दीकरी। 6 Bh. भक्तिवंतु। 7 P. ऊपाडी। 8 P. मोक्ष। 9 P. omits.

तत्र अपध्यानु आर्त्तध्यानु अनइ रौद्रध्यानु, यथा—

वैरिघ्नमोद्दन्धवधव्यथादेर्विद्याधरेन्द्रत्वनरेन्द्रतादेः।
रौद्रार्त्तं भावाकुलितस्य चिन्तापध्यानमेतन्निगदन्ति तज्ज्ञाः॥ [७५८]

पापोपदेशो यथा—

हुतभुजमिह देहि क्षेत्रदेशे द्रुमाणां
कुरु कृपणविनाशं मुञ्च सस्येषु कुल्याम्।
दमय वृषभवृन्दं घातय मत्यनीका-
निति दिशति विवेकी को हि पापोपदेशम्॥ [७५९]

हिंसप्रदानु अनइ प्रमादाचरितु अनर्थदंडु बिहुं[1] गाहां करी सूत्र माहि कहइ॥

सत्थग्गिमुसलजंतगतणकट्ठे मंतमूलभेसज्जे।
दिन्ने दवाविए वा पडिक्कमे देसियं सव्वं॥ [७६०]

न्हाणुव्वट्टणवन्नगविलेवणे सद्द रूव रस गंधे।
वत्थासणआभरणे पडिक्कमे देसियं सव्वं॥ [७६१]

शस्त्र अग्नि मुशल प्रसिद्ध। यंत्रशकटादिक, तृणवारि बुहारी वधुरादिक,[2] काष्ठ अरघट्ट यष्ट्यादिक, मंत्रु विषापहारादिकु, मूलु नागदमनी प्रमुखु। ज्वराद्युपशममूलिका वा। अथवा गर्भशातनादि मूलकर्मु 15 भेसज्जु। उच्चाटनादि निमित्तु द्रव्यमेलनु कहियइ। एउ शस्त्रादिकु प्रभूत भूत संघात विघात हेतुभूत दाक्षिण्यादिहं तणइ अभावि अनेराई निमित्तु जु दीधउं दिवारिउं तेह हूंतउ 'पडिक्कमे' इत्यादि पूर्ववत्।

§519) स्नानु अभ्यंगपूर्वुं शरीरप्रक्षालनु।

जिहां प्रभूतजीवाकुल भूमितलि। तथा संपातिम जीवाकुलि। अथवा कालि[1] अथवा अछाणिइ जालि 20 अयतना करी जु कीधउं ऊवटणउं[2] तेह नी वींवलांटी राल माहि मसली नहीं, भूमितलि मर्ही नहीं वा[3]। वर्णक तउ पाछइ ति कीटिका मक्षिका कटक संकुल कृतिरे खाजइं अथवा लोक तणां पायइं मर्दियइं। वर्णक कस्तूरिकादि मंडनु। चंदन कुंकुमादि अंगरागु विलेपनु। संपातिम जीवाकुलि कालि अयतना करी कीधां हुयइं। वर्णक वेलपन वेणु वीणादि संबंधिउ शब्दु कौतुकवशि रागपाशि सांभलिउ हुयइ। अथवा रात्रि समइ 25 उच्चैः स्वरि करी शब्दु कीधउ हुयइ। नाटकादिकहं माहि रूप अनेकविध दीठां हुयइं। रसु मधुरादिकु अनेराई रहइं जिम रागु हुयइ तिम वर्णविउ हुयइ। एवं गंधादिकइ जाणिया।

इंद्रिय विषयहं तणा मदणहतउ मद्यादि पंचविध प्रमादमदणु पुण जाणिवउं।

मज्जं विसय कसाया निद्दाविगहा य पंचमी भणिया।
एए पंच पमाया, जीवं पाडंति संसारे॥ [७६२]

तउ पाछइ स्नानु उद्वर्त्तनु वर्णकु विलेपनु शब्द रूप रस गंध फरस इंद्र सवहीं नइ विषइ तथा मद्यादिकइं 30 नइ विषइ जु[4] आचरिउं। तथा 'वत्थासण आभरणे'। पट्ट कूलादिक वस्त्र। 'आसंदी' मूढकादिक आसन। 'आभरण' हीरालग मोतीलग सुवर्णादिमय। तीहं नइ विषइ जु आचरिउं मूर्च्छादिकु प्रमादाचरितु तेह हूंतउ 'पडिक्कमे' इत्यादि पूर्ववत्।

518) 1 Bh.बिउं। 2 Bh. बुहारा—।
519) 1 This may be अपवादकालि। 2 B. omits. 3 Bh. erases this वा। 4 Bh. omits.

§520) अथ अतिचार प्रतिक्रमण निमित्त भणइ ॥

> कंदप्पे १ कुक्कुइए २ मोहरि ३ अहिगरण ४ भोग अइरित्ते ५ ।
> दंडंमि अणट्ठाए तइयंमि गुणव्वए निंदे ॥ [७६३]

कंदर्पु मोहोद्दीपन कारकु हासउं १ । कौकुच्यु–नेत्रादि विक्रिया गर्भित हास्यजनक विट चेष्टा २. मौखर्यु–असंबद्ध बहुवचनता ३. । अधिकरण उद्खल मुसलादिक ति संयुक्त धरियइं, यथा उखल मुसल' धे एकठां करी धरइ । अथवा घरट्टी मांकडी धे एकठां करी धरइ ।

पालिणि वइं' जूसर' एकठां करी धरइ । एवमादि अनेकविध संयुक्ताधिकरणता ४. जु विवेकी हुयइ सु संयुक्त शकटादिकु अधिकरणु न धरइ । सु देखी करी टेयतउ हुंतउ पण राखी राखी न सकियइं । विसंयुक्ति पुण हुंतइ अधिकरणि आपहं निवारितु पण हुयइ ।

भोगातिरिक्तता–भोगोपभोगाधिकता तीहं रहइं अधिकता हुंती लोकु पुण मागइ मूर्च्छावृद्धि पुण हुयइ । 'दंडंमि अणट्ठाए' अनर्थदंड विरत्याख्य त्रीजइ व्रति' इत्यादि पूर्ववत् ।

§521) अनर्थदंड विरतिव्रत' विषइ सुरसेनकथा लिखियइ ।

> अनर्थदण्डविराम व्रतधीरा' महोदयम् ।
> लभन्ते गुरसम्भारभागुगः सुरसेनवत् । [७६४]

तथाहि —

वसुंधरावंधुर' वंधुर इसइ नामि नगरि । तिहां धीरशिरोमणि धीरसेनु नामि राजा । सुरसेन महासेन नाम वि पुत्र । अनेरइ दिनि महासेन तणी जीभ सूणी । तिम हेषनइं करी वैद्यागम मन्त्रवइ तिम औषधइं' करी सु शोफु रोगि वृद्धि गयउ । 'धर्म एकु पण रहइ औषधु' । इसउं भणी वैद्यहं सु मेल्हिउ । क्रमिक्रमि तेह नी जीभ पुरी । मार्गीण मधुमेदप जिम धंवाली । उग्र दुर्गंधु इसउ उछलिउ जिम ₂₀माय पितृ भायीरिइं वंधुजनइं मेल्हिउ । तेह कन्हइ माणसु घडइ को रहइ नहीं । तद्यकालि सुरसेनु मात' मइ स्नेहि दुर्गंधु जिसौ करी कन्हइ रहिउ । तथा च भणितं—

> धनणे मित्तपरिक्खा, दाणपरिक्खा य होइ दुकाले ।
> विणये सीसपरिक्खा,' सुहडपरिक्खा य संगामे ॥ [७६५]

सुरसेनु महासेनु भाइ कहइ "भ्रात ! जां तू रहइं एउ जीविसु छइ तां तउं प्रत्याख्यानु करि, इउं करीं तउ आराउं' जउ तू रहइं रोगु न जाइ । अन्यथा न आहारुं" निणि पुण निमती नि कीधउं । पुनरपि सुरसेनु कहइ, "भ्रात ! महासेन ! जइ किसइ इसि प्रत्य मरणि विकइ तउं मारिसि तउ अनशन तणउं फलु लहिसि ।" इसउं भणी करी भाई आगइ" थाई सुरसेनु धर्माचार्य भागी" थीजइ । निमलु चित्त" पंचपरमेष्ठि नमस्कार हुयइ । नमस्कारानिमंत्रिणि जडि करी महासेन नी जीभ सींचइ । महासेन कन्हा नमस्कार नमराइ । जिम जिम जीभ माहि सु नीर परिणमइ तिम तिम रोगोपशमु हुयइ ।

> निर्व्रणं निर्व्रणं' नीरुग् निर्दुर्गन्धं' सुगन्धि च ।
> इत्युक्ते' सुरं जहे वर न पदः समभावात् ॥ [७६६]

520) 1 [illegible] 2 [illegible] 3 [illegible] 4 [illegible]

521) 1 [illegible] 2 [illegible] P. [illegible] 3 B. [illegible] 4 B. [illegible] 5 B. [illegible] 6 P. [illegible] 7 P. [illegible] 8 P. [illegible] 9 P. [illegible] 10 B. [illegible] 11 P. [illegible] 12 P. [illegible] 13 B. [illegible] 14 B. [illegible] 15 P. [illegible]

[illegible] आनि [illegible] [illegible] । [illegible] [illegible] [illegible]

(§522) मुनि [illegible] [illegible]

[illegible] मातुल मुनि [illegible] [illegible] मुनि [illegible] [illegible] " हे [illegible] [illegible] " [illegible] [illegible] आ [illegible] " [illegible] महामुनि [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

> [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ।
> [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ॥

। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ।

[illegible] [illegible] ।
(§523) अथ [illegible] [illegible] ।
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

> [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ।
> [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ॥

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible]

तणउ कालु जघन्याहिं मुहूर्त्तात्मकु छइ उत्कर्षि समाधानु सीमु छइ। तेह समउं अपूरणु अथवा अनादर करणु पूर्वु अवस्थानु अनवस्थानु ४, सामायिकु[2] जेतीवार मुख्यवसार तिवा न हुयइ तेतीवार करिवउं।

तथा चाह चूर्णिकारः

5 'जाहे खणिओ ताहे करेइ सामाइयं इयमो[3] न भंजेइ' त्ति।

तथा स्मृतिविहीनं निद्रादि प्रमादवशउतउ शून्याकारता करी कीजइ सामायिकु स्मृतिविहीनता पांचमउ अतीचारु ५।

ए पांच अतीचार आश्रयी करी कीधुं[4] सामायिकि परिहरइ शिक्षाव्रति। अविनाधिकृति- अविधि पूर्वं विरचिति सम्यग् अकीधइ जु अतिचरिउं सु निंदउं॥

10 §524) अत्र शिष्य भणइ–'दुविहं तिविहेणं' इसइ प्रत्याख्यानि भणिइ हूंतइ मनोदुःप्रणिधान वर्जन रहइं अशक्य करणता करी प्रतिषेधु संभवइ नहीं। तउ पाछइ सामाइक व्रत तणउं भंगु हुयइ। किसी परि सामायिकु संभवइ? तिणि कारणि सामायिक प्रतिपत्ति कन्हा अप्रतिपत्ति भली। इसउं न कहिवूं। मनि करी न करूं १. वचनि करी न करूं २. कायि करी न करूं ३. मनि करी न करावूं. ४. वचनि करी न करावूं ५. कायि करी न करावूं ६.

15 इति छ पच्चक्खाण तीहं माहि मनोदुःप्रणिधानि करी मनि करी न करूं एह षड्भंगिहिं हूंतइ बीजा पांचहं तणा संभवइतउ प्रतिपत्ति इ जि भली। तथा मनोदुःप्रणिधानतउ[1] जु अतिचरिउं तेह रहइं मिथ्यादुःकृत मात्र भणनि करी शुद्धि तणा भणनइतउ सामायिक तणी अप्रतिपत्ति न भलियइ किंतु प्रतिपत्ति जि भली। तथा अविधिकृत कन्हा अकृतु भलउं। एहू वचनु युक्तउं नहीं। यदुक्तं—

अविहिकया वरमकयं असूयवयणं भणंति समयन्नू।
20 पायच्छित्तं जम्हा अकए गुरुयं कए लहुयं॥ [७६९]

§525) सामायिकव्रत विषइ केसरी नाम श्रावकपुत्रकथा लिखियइ।

क्रूराचारोपि संसारकारया मुच्यतेद्भुतम्[1]।
केसरीव त्रुटत्कर्मदामा सामायिकव्रतात्॥ [७७०]

तथाहि—

25 कामपुरु नामि पुरु तिहां विजउ नामि राजा। सिंहदत्तु नामि श्रेष्ठि। अनेरइ दिवसि सिंहदत्तु श्रेष्ठि राजेंद्र रहइं प्रणमी करी वीनवइ, "महाराज! केसरी नामि माहरउ पुत्रु चोरु छइ पाछइ मू रहइं दूषणु म देजिउ। हउं तुम्ह आगइ वीनवी करी निरुत्तरु हुयउ[2]।" राजा केसरी रहइं देसवटउ दियइ। पुण केसरी राजेंद्र तणा भय लगी नगर हूंतउ नीसरिउ, देशांतरि गयउ। श्रांतु हूंतउ किणिहिं वनगहनि स्वच्छ शीतल स्वादु जल सरोवर तीरि बइठउ चीतवइ। 'मइं जन्मलगी चेतना संभवि हूयइ हूंतइ अचोरिउं
30 पाणीउ[3] पीधउं नहीं अहो अकार्य! धिग्धिग् मू रहइं! आजु मइं सु[4] अचोरिउं पीधउं[5]।' इसउं[6] मन माहि

§523). 2 Bh. सामायिकु। 3 Bh इउगो। 4 Bh. omits.

§524) 1. Bh मनोदुःप्रणिधानदृतउ।

§525) 1 Bh दुतं। Bh. 2 P. हुअउ। 3 P. omits–ऊ। 4. P. सु मइं। 5 P. पीधउं। 6 Bh. omits.

चीतवतउ हूंतउ ■ चोरु भ्रांतु कांतार-सरोवरि जलु पियइ। स्नानु पुण करइ। तउ पाछइ श्रमरहितु हूंतउ सरोवर पालिस्थित चूत तरु ऊपरि चडिउ फल खाई[7] तृप्तउ हूयउ[8] हूंतउ मन माहि चीतवइ। 'ह हा मु रहइं किम आज् नउ दिवसु चोरी पाखइ जाइसिइ'? इसउं तिणि चोरि चींतवतइ हूंतइ एकु को[9] योगींद्रु मंत्रसिद्धपादुकु आकाश हूंतउ सरोवर तीरि ऊतरिउ। पादुका तीरि मूंकी उरहउ[10] परहउ[12] जोई[10] करी भूमि लागता पगहं करी सरोवर माहि पइठउ। तत्काालि तिणि चोरि वृक्ष ऊपरि चइठइ[11] चिंतइ[12] इसउं चींतविउं, 'एइ योगी रहइं गगन गमनविषइ ए पादुका ई[13]जि कारणु, नहीं त किम ईहं पाखइ भूमिगतिहिं[14] जि हींडइ! तिणि कारणि ए पादुका चोरउं, दिन सफलु करउं।'

§526) इसउं चीतवी चूत हूंतउ ऊतरी पादुका पाए[1] पहिरी गगनि[2]गमनु करइ। तउ पाछइ सिंहु किणिहिं वनगहनि रही करी रात्तिसमइ ति पादुका पाइं पहिरी आपणइ घरि गयउ। जनक सिंहदत्तश्रेष्ठि आगइ कहइ; "राउ वीनवी करी तइं हउं नगर हूंतउ कढावियउ"। इसउं भणी करी तां दंडे करी मारइ, जां मरइ। मूयउ बापु मूकी करी जि जि महर्द्धिक घर तींहं तीहं हूंतउं सारु सारु अपहरइ। इसी परि त्रिन्ही पहर रात्रि सीम स्वेच्छाचारि तेह पुर माहि विचरइ। रात्रि तणइ चउथइ पहरि पुनरपि दुर्गमारण्यमंडनि तिणिहिं जि सरोवरि[3] गयउ। इसी परि राति राति सु चोरु तेऊ जु नगरु विविध प्रकारइं करी लूंटइ। पापबुद्धि हूंतउ साधु सती मुख्यलोक[4] रहइं संतापइ। तउ पाछइ जिम जमागमु भयंकरु हुयइ तिम तिणि नगरि निसागमु हुयइ। तेह नउं स्वरूपु नगराधिपति जाणी करी तलारु बोलायइ। तलारु विलक्ष्यवदनु[5] हूंतउ अधोमुख होई करी वीनवइ। "महाराज! जे भूमि गोचरु चोरु हुयइ तउ माहरइ पाडि हुयइ। एउ खेचरु कोइ चोरु माहरइ पाडि नहीं"

§527) तउ पाछइ राउ कोपाग्नितापसंतप्तु आपणउं मुखु, दुक्खितलोक दर्शनि करी हुई छइ कृपा तेह लगी, नेत्रहं हूंतां नीसरइ छइ जि अश्रुजल तीहं करी, शीतलु करइ। "तपोधनहं तणां जि छइं तपोधर्म, शीलव्रती जि छइं युवती तीहं तणा छइं शीलधर्म, तीहं तणइ प्रभावि सु चोरु मू रहइं दृष्टिगोचरु होइजिउ"। इसउं भणी करी अल्पपरिवारु राउ आपणपइं पुरी माहि फिरी चोरु जोयइ। जि के देवकुल, जि के आश्रमपद, जि के जनसमवायपद, जि के वेश्यापाटक,[1] जि के कलालपाटक तिहां सगले जोइउ जइ न लाधउ[2] तउ राउ[3] नगर बाहिरि नीसरिउ। वापी कूप तडागारामादि स्थानि फिरिउ। जउ तिहांई न लाधो तउ राउ नगर बाहिरि[4] वन माहि गयउ[5]। तिहां दिव्यु गंधु[6] उपलभी करी गंधानुसारि जायतउ हूंतउ वनबहुमध्यि चंडिका भुवनु देखइ। तेह माहि चंडिकामूर्त्ति चंपकादि दिव्य कुसुम संभार[7] संपूजित देखइ। धूपोत्क्षेपु करतउ हूंतउ पूजारउ राय कन्हइ आवियउ। राइ[8] तेह तणां दिव्य वस्त्र देखी करी विस्मयापन्न हूंतइ पूछिउ, "आजु किसइ उच्छावि[9] किसइ पर्विं, किणि भाविकइ इसी पूजा[10] करावी छइ? इसी विभूषा[11] देवी रहइं करावी छइ? तू रहइं देवदूष्यावतार तार वस्त्र किणि दीधां?" इसइ राइ पूछतइ हूंतइ पूजाकारकु भणइ—

§528) "महाराज! मूं दुक्खित रहइं देवी चंडिका तूठी। प्रभाति देवीपूजा निमित्तु आवउं अनइ देवी तणां पादहं आगइ वर्त्तमान स्वर्णरत्नसंतान लहउं। तिणि कारणि त्रिहुं काले देवी रहइं पूजउं। देवी प्रभावि धनद धन जयकारकु धनु लहउं"। तउ राजा चित्ति चीतवइ, 'निश्चइसउं रात्रि समइ देवीपूजा निमित्तु चोरु ईहां आवइ। देवी आगइ सुवर्ण[1] रत्न मूकइ' इसी परि चोरु संचारु तिहां

§525) 7 P. काइं। 8. P. omits. 9 P. कोइ। 10 B. Bh. omit. 11 P. चइठउ। 12 P. थकउ। 13 P. adds हि। 14 P. भमि–।

§526) 1 Bh. पादे। 2 P. गगन विषइ। 3 P. सरोवरतरि। 4 P. बनींइं मनुष्य। 5 P. विलक्ष–।

§527) 1 Bh.–पटक। 2. Bh. लाधो। 3. B. P. omit. 4. Bh. omits. 5. Bh. गइउ! 6. B. P. omit. गंधु उपलभी करी। 7. P. omits. 8. P. राय। 9. P. उत्सवि। 10. Bh. पूज। 11. B. पूजा।

§528) 1 P. स्वर्ण। B. स्व on the recto and वर्ण on the verso.

संभावी करी प्रभात समइ राउ वाग्मरकृत्य करिवा कारणि आपणइ आवासि आविउ। रात्रि समइ सार परिवार सहितु भयरहितु निज नगरहितु[2] राउ चंडिका देवकुलि आविउ। सुरङ्ग गुप्तपूर[3] पूरपूर[4] रहावी करी आपणपई स्तंभांतरितु होई करी देवकुल माहि रहिउ। तिहुं पहर रात्रि[5] गमइ पादुकासिद्ध तेह तस्कर राइं तिहां आविया हुंता राउ देखइ। पादुका युगलु उतारी[6] नामि[7] करि लेई, देवकुल[8] माहि जाई, सु चोरु प्रधानरत्नहं करी देवीपूजा करइ। पूजा करी देवी आगइ कहइ, "स्वामिनि! चोरीकारिया स्वेच्छाचारिया मू राइं प्रभूत धनरा क्षणदा सदा होइजिउ"। इसउं भणी पाछउ वली सु महाबली जायतउ हुंतउ प्राण रुंधी करी रहितु हुंतउ राइ[9] बोलाविउ।

§529) "रे! जीवतउ नहीं जाइ" इसी परि राइ[1] धर्षितु हुंतइ बोलाविउ हुंतउ सु चोरु प्रस्तावोचितु हथियारु पादुका युगलु राय ना मालस्थल उद्दिशी करी लोपइ। तेह नइ प्रहारि[2] करी वेदनाक्रांति राइ हुयइ हुंतइ, "हा हउं जीवतउ[3]जाउं[4] छउं" इसउं भणतउ सु चोरु बाहिरि नीसरिउ क्षणांतरि राइ वेदनारहिति हुयइ हुंतइ 'जाइ' 'जाइ' इसी परि राइ भणतइ हुंतइ पाखलियां राखीया हुंता जि उभट[5] सुभट ति तेह राइं केडइ धाया। आकाशगति हेतु पादुका युगलु मंत्रिवचनतउ ले करी राउ पुणि[6] चोर पुठि प्रधाविउ। सु चोरु गतिवेगी करी दूरमुक्त सूरपूर,[7] पुर ग्रामांतर मार्गांतर लोकसंचार माहि पग गोपाविया कारणि गयउ। भयवशइतउ[8] कांई एकु वैराग्य गयउ हुंतउ चीतवइ। "आजु गाढउं पापु निश्चइं फलिउं" कही एक ग्राम तणइ आरामि ध्यानतत्त्वु उपदिशतउ छइ मुनि तेह तणउं इसउं वचनुं सांभलइ[9]।

"सर्वत्र ध्यानसमताञ्चिर्मुच्येत पातकैः।
जनः सद्योपि तिमिरैः कृतदीप इवालयः॥" [७७१]

"जिम दीवइ कीधइ आलउ घरु तिमिरहं अंधकारहं मेल्हियइ तिम 'जन' लोकु, ध्यानवशइतउ सर्वत्र[10] 'समतारुचि' किसउ अर्थु? सर्वभाव विषइ समानबुद्धिपरिणामु, न कहीं विषइ सरागु न कहीं विषइ सद्वेषु जु हुयइ सु सर्वत्र समतारुचि[11] कहियइ। इसउ समता वर्त्तमानु जनु पातकहं पापहं 'सद्यः' किसउ अर्थु? तेतीही जि वार 'मुच्येत' मेल्हियइ[12]।" इसउं ध्यानतत्त्वु सांभली करी सु चोरु तिहांई जि रहितु सारवस्तु ति असारवस्तु निंदाविरहितु, मध्यस्थभावि निमग्नु, दोषराशि, आगामिउं चित्तु ध्यानस्थितु थाकउ तिम, जिम परमात्मा नइ विषइ मनु स्थिर हुयउं। घातिकर्मक्षयवशइतउ शुक्लध्यानांतरिका वर्त्तमान हुंता संध्या समइ केवलज्ञानु ऊपनउं। तथा च भणितं—

तव तविए जव जविए बहुविह कालेण हुंति सिद्धीओ॥
निद्दहियपुव्वपावा[13] झाणेण तक्खणा सिद्धी॥
तथा ध्यान समता ऊपहरउं संसारिसुरु पुण[14] कांइ नथी। तथा च भणितं—

जं च कामसुहं लोए जं च दिव्वं[15] महासुहं।
वीयरायसुहस्सेहऽणंतभागं[16] न अग्घइ॥ [७७२]
अज्जं वा कल्लं वा केवलनाणं भवेइ का तत्ती।
समरस तत्ते पत्ते किं अहियं भणसु मुक्खे वि॥ [७७३]

---

§528) 2. P. सहितु। 3. P.-पूरइ। 4. Bh. P. omit. 5. Bh. राति। 6. P. कतरी। 7. P. धा 8. P. देवकुलि। 9. Mss. read : राउ तिणि बोलाविउ which is not supported by the context, hen the emendation.

§529.) 1 Bh. राउ। 2. Bh. प्रहारि। 3. P. जीवु-। 4. Bh. जायउं। 5. P. उद्द। 6. P. पुण 7. P सूरपुर। 8. P. उभय। 9. P. सांभलीइ। 10. P. सर्व जीव। 11. P. समानता। 12. Bh. P. मेल्हियइ 3. B. -पाव। Bh.-पावं। 14. P. पुण्य। 15. P.-दिट्ठं। 16. P. सहस्सेणं इ-।

10 [illegible]

§534) [illegible] सुमित्र मंत्रि कथा लिखियइ।

> [illegible] ।
> [illegible] ॥ [७८०]
> [illegible] ।
> [illegible] ॥ [७८१]

15 यथाहि—

मालवदेशमंडन[1] [illegible] नामि नगरी। तारापीडु इसइ नामि राजा तिहां राज्यु करइ। सुमित्रु नामि तेह तणइ मंत्री। सु पुण [illegible] सुभावइ। [illegible] तारापीडु राजा नव तारुण्यवंतु पुण्यकर्म पराङ्मुखु हूंतउ सुमित्र मंत्रि प्रति भणइ, "[illegible] धर्म करी 20 किसइ कारणि मुधा आपणउं जन्मु [illegible]? [illegible] करी [illegible] आपणउं देहु कउणु [illegible]!" इसीपरि राइ भणतइ हूंतइ सुमित्रु मंत्री [illegible] हूंतउ राजेंद्र प्रति भणइ, "महाराज! इसीपरि अनुचितु वचनु [illegible] बोलउ! [illegible] रहइं धर्म [illegible] उद्यमु करावियां वांछउं[1]। [illegible] पुण [illegible] रहइं धर्मविधु [illegible]। [illegible] मन। सु धर्मु किम विफलु हुयइ, जेह तणा [illegible] स्वर्ग मोक्ष तणां सुख पुण [illegible] लाभइं[2]?" अथ राजा भाइ "महामात्य 25 मू रहइं विपत्ति-निवृत्ति-संपत्ति-प्रवृत्ति लक्षणु धर्मतणु प्रत्यक्षु [illegible]।"

§535) मंत्री भाइ "महाराज! तउं राजा, अनेरा माहरा सेवक लोक, तउ प्रत्यक्षु धर्म तणउं फलु किसउं न हुयइं?" तउ राउ मंत्रि प्रति भणइ,

"एकि[1] पाषाणि बि खांडि कीधइ हूंतइ, एकि खांडि देवतामूर्ति हुयइ बीजइ खांडि सोपानु हुयइ। भणि[2] महामात्य! किसउं एकि खांडि पुण्य कीधउं, बीजइ खांडि[3] पापु कीधउं छइ? तिणि कारणि स्वभा- 30 वही जि तउ विश्व रहइं भव्याभव्यता व्यवस्थापिवी"। इसइ वचनि राइ भणिइ हूंतइ मंत्री भणइ, "राजन्! पाषाणु पाषाणु अजीवु, तेह तणउं दृष्टांतु न हुयइं[4], काइं जउ धर्मी जीवु हुयइ तउ धर्म पुण्य पापु हुयइं। तथा जइ सजीवु पाषाणु कहियइ,

'पुढवि चित्तमंतमक्खाया, अणेगे जीवा पुढो सत्ता। अन्नत्थ सत्थ परिणएणं' इसा आगमवचनइ-

§533) 1 Bh. हंस्वउ।

§534) 1 P. मंडन देशि। B. has the same order but it is corrected later. 2 P. परमा। 3 P. विकसित। 4 P omits वां –। 5 Bh. जीव। 6 B. P. संप्रति।

§535) 1 P. एक। 2 B. भणइ। p. भणइं। 3 Bh. adds सिउं। 4 p. हुइ।

तउ। तउ तीही जि आगम वचनइतउ[5] अनेक जीव रूपु सु पाषाणु, न पुनरेकजीवरूपु। तउ पाछइ तीही रहइं भव्याभव्यता धर्माधर्म विनिर्मित इ जि जाणिवी।" तउ राउ भणइ, "महामात्य! तई हउं वचनि करी[6] निरुत्तरु कीधउ। तथापिहिं प्रत्यक्षदृष्टिहिं जि धर्मफलि[7] करी हउं निःसंदेहु धर्मु मानउं। अनेरइ प्रकारि मानउं नहीं।" इसी परि राइ अनइ मंत्रि रहइं नितु धर्म विषइ विवादु हुयइ। तउ सु विवादु प्रसिद्धउ[8] हूयउ।

§536) एकवार सर्व वासर कर्म नीपजावी करी पाक्षिक प्रतिक्रमण करिवा कारणि संध्या-समइ आपणइ आवासि आविउ मंत्री गृहावधि देशावकाशिकु[1] व्रतु करइ। प्रतिक्रमणु विधिवत् सामाचारी करी शुद्ध धर्म ध्यान परायणु पंचपरमेष्ठि नमस्कार परावर्त्तनु करिवा लागउ। तद्वाकालि राइप्रतीहारु आवी मंत्री आगइ कहइ, "महामात्य! गुरुकार्य करिवा[2] कारणि राउ तुम्ह रहइं तेडइ" तउ मंत्री प्रतीहार आगइ कहइ, "प्रभाति[3] सीम मंत्री गृहबाहिरि आइवा नियम निश्चलचित्तु हूंतउ रहिसिइ घरिहिं जि। प्रभाति राज[4] समीपि आविसिइ"। इसउं भणी करी पडिहार रहइं मोकलइ। पंचपरमेष्ठि महामंत्रसंस्मरणु सुधासेकि करी मनुष्यजन्मु कल्पवृक्षु मंत्री तद्वाकालि विशेषि करी सींचइ। अथ पुनरपि पडिहारु आवी करी भणइ, "मंत्रिन्! तुम्हारउं कथनु सांभली करी आज्ञाभंग कारक[5] जिम तुम्ह ऊपरि राउ रूठउ। वली हउं मोकलिउ, 'मंत्री न आवइ तउ म आवउ। तउं माहरी सर्वाधिपत्य मुद्रा ले आवि'। इणि कारणि हउं मोकलिउ"। इसउं प्रतीहार तणउं वचनु सांभली करी हसतउ हूंतउ जिम कुशील दासी आपणा घर हूंती बाहिरि किजइ तिम राजमुद्रा मोकलइ।

§537) माग-मुद्रा कौतुकी हूंतउ करि पिहिरी[1] करी प्रतिहारु हर्षितु हूंतउ आपणा पायकहं आगइ कहइ, "हउं[2] मंत्री हूयउ। मंत्री मस्तक-मुकुट शनैः शनैः पाउ धारउ" इसउं भणतां भट्टहं परिवृतु घर हूंतउ प्रतीहारु राजमंदिर ऊपरि चालिउ जेतलइ, तेतलइ दैवजोगइतउ कीहां एकहं सुभटहं निःकासितासिदंडहं कूटी करी पाडिउ[3] यममंदिरि मोकलिउ। जि नाठा ति नाठा, जि केतलइ रहिया प्रतीहार तणा जण हूंता तेहे वैरी पुण मारिया। 'प्रतिहारु मारिउ'[4] इसउ कोलाहलु ऊछलिउ। राजा कोलाहलु सांभली करी कोपांध लोचनु[5] हूंतउ चित्ति चीतवइ। 'प्रतीहारु अम्हारउं काजु करतउ दुष्टि मंत्री मारिउ। एह मंत्रि तणउं मस्तकु आपणइ हाथि छेदी करी ऊछालउं दडा नी परि, तउ मू रहइं बलवंतपणउं सफलु हुयइ निवृत्ति[6] पुण हुयइ'।

§538) इसउं बोलतउ कोपाटोप संयुक्त गोपति जिहां [illegible] प्रतीहार घातक घातार्त्त कंठागतप्राण[1] पडिया छइं तिहां आविउ। 'महामात्य तणा ए घातक अथवा अनेरा को[2] वैदेशिक सुभट[3] होइसिइं' इसउं ध्यायतउ हूंतउ राउ दीपदीपितावकाशु ति देखी करी बोलावइ। "कउणि तुम्हे? किसइ कारणि प्रतीहारु मारिउ?" तउ पाछइ ति[4] भणइ, "महाराज! अम्हे धंठ कंठागत प्राण हुया, अम्ह रहइं किसउं पूछइ! दैवु दुराचारु पूछि, जिणि अम्हारा स्वामी तणउ मनोरथु विफलु कीधउ। जिणि कारणि धरावास नगराधीश सूरसेन राय तणा अम्हे सेवक, तिणी अम्हे सुमित्र मंत्री रहइं मारिवा कारणि मोकलिया हूंता। जिणि कारणि [illegible] मंत्री सुमित्रु नामि करी छइ, अम्हारा स्वामी रहइं पुण[5] अमित्रु, नितु दंडइ वरसि वरसि। तउं अम्हारा प्रभु तणउ वइरी सेइ रहइं सुमित्रु सदा पोषइ। तिणि कारणि अम्हे स्वस्वामी आदेशइतउ सुमित्र तणउ मार्गु वांधिउ[7] हूंतउ। किहां हूंतउ पउ प्रतीहारु सिंह तणइ ओडइ अंबुक जिम पडिउ" इसी परि बोलता हूंता ति चियारइ सुभट प्रतीहारघातक पंचता प्राप्त हुया।

---

§535) 5 p. वचन भउ। 6 p. omits 7 Bh. p. धर्म्म-। 8 p. प्रसिद्ध।

§536) 1B.– काशकु। 2 Bh. omits. 3 Bh. प्रभात। 4 P. राजा। 5 Bh.–कारक।

§537) 1 Bh. P. पहिरी। 2 P. इसइ। 3 Bh. पाडिवउ। 4 Bh. [illegible] Bh. कोपांधु-। 6 B. P. निर्वृति।

§538) 1 Bh. कंठगत-। 2 Bh. P. के। 3 P. सुभ। 4 Bh. [illegible] किसइ कारणि' 6 Bh. पुणि। 7 P. बांधिउ।

§539) तउ राजा पश्चात्ताप संयुक्त हूंतउ पुरलोक राजलोक साखिइं सुमित्र मंत्रि[1] रहइं खमावइ। घाटु साही करी इसउं कहइ, "महामात्य! तूं तात समान भणी मइं पापिष्ठि जु अपराधु कीध-
उ सु पसाउ करी खिमि[2]। तात जे किमइं तउं तनु न करतइ तउ न जीवत। तूं पाखइ प्रभूत विभु राज्यु मू रहइं न होयतइ[3]। तिणि कारणि आजु कल्याणकारक पुण्यकर्म तणउं फलु प्रत्यक्षु[4] मइं दीठउं।
5 चिरकाल संचितु धर्म विषइ मोहु मू रहइं ऊतरिउ।

सुकृतं जीवितव्यं ते धनेनानेन पोषितम्।
शोषितं त्वत्कृतेनाद्य दुष्कृतं दुर्गतश्च मे॥ [७८२]
तत्सहस्वापराधं मे प्रसीद वद सात्त्विक।
धर्म्मं कारय मां तात तारयाशु भवार्णवम्॥ [७८३]

10 इसी परि राइ खमावतइ हूंतइ मंत्री भणइ, "महाराज! जु मू रहइं स्वयउ अनुतापु हुयउ, तिणि करी तू रहइं अपराधु को नहीं"। तउ पाछइ राय तूठइ हूंतइ पुनरपि सर्वाधिकारमुद्रा सुमित्र रहइं दीधी। सुमित्र प्रेरिति हूंतइ राइ पूर्णचंद्र गुरु समीपि गृहिधर्म मुद्रा लीधी। अथवा युक्तउं छइ, राय अधर्मि हूंतइ संसारांगदेशमुद्रा[5] महामात्य रहइं दीधी। महामात्यि सधर्मि हूंतइ प्रत्युपकारकरण[6] वांछा करी राय रहइं मोक्षांगदेश मुद्रा गुरु कन्हा दिवारी। तउ धर्मविषइ एकचित्तमा हुई हूंतीं बीहं रहइं धर्म
15 प्रोत्सर्प्पणा करतां कालु जाइ[7]।

§540) सु वृत्तांतु जाणी करी अनेरइ दिनि शूरसेनु सुमित्रभयभीतु हूंतउ कांधि कुहाडउ करी राय नीं सेव[1] करिवा आविउ। राइ सन्मानितु हूंतउ भक्तु सेवकु हुयउ। राजा देवार्चा दान सुध्यान तीर्थयात्रा तीर्थप्रभावनादि धर्मकर्महं मंत्रि प्रशासतउ करी आपणउं[2] जन्मु जीवितु पवित्रु करइ।

तत्र स्वामिनि बालोऽपि, चण्डालोऽपि न सो भवेत्।
20 न यो जिनाधिनाथोक्तधर्मकर्मरतो गतः॥ [७८४]
इत्थं मन्त्री च भूपश्च, कृत्वा धर्म्मं विशुद्धधीः।
महाविदेहे मर्त्यत्वं प्राप्य लेभे शिवश्रियम्॥ [७८५]
ततः सुमित्रदीपेन गमितेऽस्मिन् प्रकाशताम्।
देशावकाशिकपथे सञ्चरन्तु सुखं बुधाः॥ [७८६]
25 इति देशावकाशिकव्रत विषइ सुमित्र मंत्रिवर कथा समाप्ता।

§541) अथ पौषधव्रतु भणियइ।

धर्म तणउ पोषु पुष्टि करइ तिणि कारणि पौषधु कहियइ। सु पुण चतुःपर्वी विषेउ अनुष्ठानु विशेषु तथा चाह–

चतुःपर्व्यां चतुर्था हि कुव्यापारनिषेधनम्।
30 ब्रह्मचर्य-क्रिया-स्नानादित्यागः पौषधव्रतम्॥ [७८७]

पौषधग्रहण विधि प्रस्तावि सिद्धांतालापक पुण पर्वदिवसिहिं जि पौषधु करीवउं इसा अर्थ विषइ लिखिया छइं ईहां इणि कारणि न लिखियाहं तेइ जि ईहां समरिवा।

---

§539) 1 P. omits. 2. P. क्षमि। 3 Bh. होइतइ। P. होयत। 4 B. P. omit. 5 P.–देइ। 6 B P.–कारण। 7 Bh. जायइ।

§540) 1 Bh. सेवा। 2 Bh. अपणउं।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

(542) [illegible]

[illegible]

[illegible]

(543) [illegible]

[illegible]

[illegible]

' [illegible] प्रमादि हुंतइ । ' तह चेव [illegible] ' किसउ अर्थु ? ' तथैव भणवि ' [illegible] जिम प्रमादि हुंतइ तिम ' अनाभोग ' अनाभोगवानता हुंती ' पोसहविहि विवरीए ' [illegible] करणु अनाभोगपालना स्वरूपु पांचमउ अतीचार हुयइ ।

' [illegible] ' [illegible] पाठांतरउ भोजन तणइ अभोगि चिंतवनि हुंतइ । उपलक्षण मात्रकउ [illegible] शरीर [illegible] जाणिया । तउ पाछइ [illegible] तणइ [illegible] हुंतइ पोसहविहि विवरी-[illegible] पांचमउ अतीचार यथा-

[illegible] मनि [illegible] 'काल्हि [illegible] आहार करावितु, तथा स्नान मस्तक [illegible] [illegible] करावितु, कामगुण अनुभावितु, [illegible] करावितु, इसी परि पोसध विपरीततास्वरूप हुयइ ।

(544) [illegible] मिथ्यादुष्कृत [illegible] कथा लिखियइ ।

[illegible] ।
[illegible] पालितेन्द्रियैः ॥ [७९०]

[illegible] श्राम् ।
[illegible] ॥ [७९१]

यथा -

[illegible] माति [illegible] । [illegible] आत्मा [illegible] मानु [illegible] मानु [illegible] नामि [illegible] । [illegible] नामि [illegible] हुंतइ [illegible] आपणइ बुद्धिबलि करी [illegible] ।

[illegible] पुण्य [illegible] विवादु हुयउ ।

[illegible] । "

[illegible], " [illegible] । तउ पाछइ [illegible] करी [illegible] करी [illegible], " [illegible] प्रमाणु नहीं पुण्यु जु प्रमाणु, तउ महामात्य ! पुण्यबलतणि हुंतइ [illegible] अनुमानु कीजिइ' [illegible] प्राण [illegible] [illegible] ! आपणउं वचनु प्रमाणु करि । यदि [illegible] नहीं, [illegible] [illegible] आपणा वचन [illegible] । [illegible] [illegible] पुण्यप्रमाण [illegible] कारणि [illegible] [illegible] । इसी परि [illegible] हुंतइ [illegible] [illegible] करी [illegible] महामात्य [illegible] । [illegible] गुण हुया । आत्मा [illegible] [illegible] पुण्य [illegible] " [illegible] । " [illegible] । [illegible] करी " [illegible]

[illegible]

किसउं ?" आश्चर्यु चित्ति चींतवइ छइ मंत्री तेह आपणउं काई अकहिऊं जु करी ए दुष्टु आकाशि[20] ऊप-
रमिउ।[21]

§545) अथानंतर चंपकादि तरुकुसुमे चिंतामणि पूजी करी मित्राणंदु सानंदु संभृत हूंतउ चतुरंगु सैन्यु करावी करी गंध्यागमइ गज वाजि रथ पदाति लक्षण चतुरंगदल सहितु प्रबलनिस्वान निस्वनइं करी दस दिसामुख[1] मुखर करतउ आपणा पुर प्रति चालिउ[2] आविउ। जिम महोरगु ऊंदिर रहइं वेढु घातइ तिम पुर रहइं वेढु घाली रहिउ[3]। 'कउणि पुर[4] वेढु घालिउ'! इसउं भणी करी राइ हेरक मोकलिया हूंता, हेरक कटक माहि आविया। मित्राणंदि मंत्रिपतिइं देखी करी ओलखिया। भणिउ, "अहो हेरकउ भुजागर्व[5] गर्विष्ठु छइ भूपति, सु तुम्हे माहरइ वचनि भणउ। 'पुण्यप्रभावि संप्राप्त[6] सैन्य संभार मित्राणंदु मंत्रींद्रु बाहिरि आविउ छइ[7]। जइ किमइ सउं विक्रमाक्रांत समुद्रांत महीतलु छउ, तउ वहिलउ[8] प्रहार करिवा निमित्तु ढूंकि।" इसी परि हेरक आभाषी करी वस्त्रालंकारइं संभृती करी राजेंद्र कन्हइ मंत्रींद्रि मोकलिया। ति पुण हेरक पाछा नगर माहि आवी करी राजेंद्र रहइं निसाहिं वि-
नविउं। तउ पाछइ राउ अति विस्मयरस[9] गंभीरितु हूंतउ लज्जाविनतु[10] होइ करी कंठलाई कुहाड[11] लोकहं परिवृतु हूंतउ जिहां मित्राणंदु मंत्रींद्रु छइ तिहां आविउ। मित्राणंदु पूर्वप्रतिपन्ना रखी राय रहइं साम्हउ ऊठिउ। 'इसु विरोधु तां हुयइं जां दर्शनु न होइ सज्जन रहइं'। प्रणमी करी राउ सिंहासनि बइसारीउ महोत्सवइ[12]। महोत्सउ[13] राइ बलात्कारिहिं बइसाडी करी भणिउं—

चरेण्य[14] पुण्यमन्येव शौर्यादिव्यवसायतः[15]।
पुण्यभाजो हि जायन्ते किङ्करा व्यवसायिनः॥　　[७९२]

भवद्भाग्योदयः कश्चिद् यस्मादीदृक् समुन्नयः।
येनाहं तव भर्तापि भृत्यवज्जामि तेऽग्रतः॥　　[७९३]

§546) इसी परि राउ भणी करी पूछइ। "मंत्रि[1] मंत्रीश्वर! ए अर्थाभूतिक विभूति तू रहइं किहां हूंती हुई!" मंत्री भणइ, "महाराज! पुण्यप्रभावि किसउं किसउं[2] न हुयइ!" दिव्यपुरुष तणउ वृत्तांतु कहिउ। तउ पाछइ राउ शल्यरहितु[3] थिउ। महामहोत्सवि मंत्रींद्र सहितु राजेंद्रु साश्चर्य पुरलोक[4] विलोकीतउ हूंतउ पुर माहि आविउ। तेह त्रिजगत्श्री चिंतामणि प्रभावि पूर्ण मनोवांछित लक्ष्मीक छइ मित्राणंदु मंत्री, तेह सउं राय रहइं महा मैत्री हुयइं[5]।

§547) एक वार भानुभूपति सउं सभा माहि बइठा हूंता महामात्य सउं उद्यानपालु आवी राय रहइं वधावइ, "महाराज! श्रीसंधर इसइ नामि यथार्थाभिधानु गणधरु तुम्हारइ क्रीडोद्यानि समोस-
रिउ।" उद्यानपाल रहइं सर्वांगविभूषण वस्त्र दानि करी भानुभूपति सउं मित्राणंदु मंत्रीश्वर मुनिवंदन निमित्तु उद्यानि चालिउ। तिहां नेत्रामृत वृष्टिकारक मुनिवर रहइं राजेंद्र मंत्रींद्र वांदी करी देश-
नामृतपानविधान निमित्तु उचित स्थानकि बइठा। देशनावसानि राजेंद्र मुनि कन्हा पूछइ। "भगवन! मित्राणंद रहइं विपत्ति मध्य[1] संपत्ति किसा पुण्य तणइ प्रभावि हुई[2]?" मुनि भणइ, "महाराज! जिहां[3] लक्ष्मी भारि करी भूमिपतित अमरावती हुयइ इसी पद्मपुरा नामि पुरी हुई ए पुण्य लोक माहि अतिसांप्रत हुई। तिहां प्रतापि करी जितउ ग्रीष्मकालु आदित्यु हुयइ इसउ आदित्यु नामि महीपति हुयइ। राजेंद्र

§544) 20 Bh. [illegible]। P. [illegible]। 21 B. [illegible]। P. [illegible]।

§545) 1 B. omits-[illegible]। 2 P. [illegible]। 3. Bh. omits [illegible]। 4 P. [illegible]। 5 P. adds [illegible]। 6 P. [illegible]। 7 P. [illegible]। 8 Bh. [illegible]। 9 P. [illegible]। 10 P. [illegible]। 11 Bh. omits. 12 Bh. P. [illegible]। 13 Bh. P. [illegible]। 14 P. [illegible]। 15 P. [illegible]।

§546) 1 P. [illegible]। 2 P. does not repeat. 3 P. [illegible]। 4 P. adds [illegible]। 5 Bh. [illegible]।

§547) 1 P. [illegible]। 2 P. [illegible]। 3 B. omits [illegible]; Bh. has it in the margin; P. has [illegible]।

रहइं प्रतिबिंब समानु सुदत्तु इसइ नामि श्रेष्ठि हुयउ। सु पुणु[4] जिणधर्म धुरंधरु हुयउ। पर्वदिवसि पाप संताप निर्वाप[5] विषइ महौषधु पौषधु ले करी त्रिहुं पहर राति समइ समता वर्त्तमानु गृह तणइ एकदेशि रहिउ छइ। तद्राकालि को एकु तस्करु अवस्वापिनी-विद्या विशारदु प्रभूत भून भैरव सुभट परिवार परिवृत्तु तेह नइ घरि धाडि पइठउ। चोर नी विद्या करी बीजा लोक रहइं नींद्र वशि करी मूर्च्छा आवी। पंचपरमेष्ठि नमस्कारु महामंत्रानुभावि सुदत्तश्रेष्ठि विषइ विद्या न प्रभवियइ। तेह सुदत्तश्रेष्ठि देखता रहइं अदेखता हूतां ति तस्कर[6] गृहसारु समस्तु हर्षित थिका[7] मुसइं। कपाट फोडिया[8] लागा, मंजूष ऊघाडिया लागा, द्रव्य तणइं कारणि भूमिगृह पुण फोडिया लागा।

अहो महात्मनस्तस्य, धर्मावष्टंभयन्त्रितम्।
जातेष्युत्पातजातेपि, न ध्यानाच्चलितं मनः॥
अनागतेष्वथाऽगत्य, गृह्णत्सु धनपद्धतीः।
तेषु यातेषु च ध्यानभेदोऽभूत्तस्य न क्वचित्॥ [७९४]

प्रभात[9] समइ धननाशु देखी करी सकलि गृहजनि शोकु करतइ हूंतइ श्रेष्ठि पोसहु पारी करी दिवसकृत्यविधि सउं करिवा लागउ। पुण्यानुभावि तेह नइ घरि वली घणाइं जि धन[10] हुयां। [७९५]

§548) अनेरइ दिनि सु अवस्वापविद्या-चोरु सेठि ना घर हूंती ज वस्तु चोरी[1] हूंती तेह वस्तु माहिलउ एकु अमूलिकु मुक्ताफल नउ हारु[2] ले करी तिणिहिं जि नगरि वीकिवा आविउ। सु हारु सुदत्त श्रेष्ठि तणइ वाणउत्रि ओलखिउ। सु चोरु धरी करी तलार रहइं आणिउ। सु चोरधरण वृत्तांतु सुदत्तु जाणी करी इसउं चीतवइ[3]।

न सत्यमपि भाषेत, परपीडाकरं वचः।
लोकेपि श्रूयते यस्मात्कौशिको नरकं गतः॥ [७९६]

इसउं चीतवी वेगि आवी चोर रहइं मेल्हावइ। किसी परि आपणा वाणउत्र[4] ऊपरि कोपु करंतउ हूंतउ तलार आगइ कहइ, "एउ अम्हारउ वाणउत्रु कांइं[5] जाणइ नहीं। मइं पूर्विहिं एकि दिनि एउ हारु एह रहइं मूलि दीधउ हूंतउ। एउ किसउं इसउं माणसु छइ जिं[6] सु[6] चोरी करइ। एह वात माहि कांई छइ नही। तुम्हे एउ परहउ मेल्हउ।" तलारि चीतविउं, "जु धणी जाणइ[7] सु पाडोसी न जाणइ। तिणि कारणि सेठि साचउ, वाणउत्रु कूडउ। अनइ[8] द्वादशव्रतधारी श्रेष्ठि कूडउं बोलइ नहीं,' तिणि कारणि २५ श्रेष्ठि नइ कथनि तलारि चोरु मेल्हिउ। बुद्धिमंत तणी बुद्धि रहइं असाध्यु कांई नहीं। श्रेष्ठि चोरु आपणइ घरि आणि जीमाडी कापड पहिरावी मोकलिउ। कहिउं, "वली रखे[9] चोरी करतउ। मइं दया करी[10] मेल्हाविउ छइ, पुण बीजउ को[11] नहीं मेल्हावइ[12]।" इसउं भणी करी घरि[13] मोकलिउ। श्रेष्ठि नइ उपकारि[14] चोरी[15] तणउं मनु भीनउ। तउ पाछइ अकृत्यकरण भय[16] तणी जाणिवा वांछा ऊपनी। यदुक्तं—

जो जारिसेण संगं करेइ आचिरेण तारिसो होइ।
कुसुमेहिं संवसंता तिला वि तग्गंधया हुंति॥ [७९७]

§547) 4 P. पुण। 5 P. -निर्वापि। 6 P. omits त-। 7 P. थका। 8 P. फाडिवा। 9 P. प्रभाति। 10 P. omits ध-।

§548) 1 P. चोइ। 2 P. भार। 3 P. चीतवी, and omits the following couplet, and continues with चोर रहइं, haplography 4 P. वाणउत्रउं। 5 B. omits 6 Bh. जिसउं। P. जिसुं। 7 Bh. आणइ। 8 B. P. अन। 9 B. Bh. रखे। 10 Bh. करी। 11 Bh. कोइ। 12 Bh. मेल्हावसि नहीं। 13 B. P. omit. 14 Bh. adds करी। 15 Bh. चोरहीं; one expects चोरि। 16 P. -भय।

§549) सेतपुर नगर बाहिरि मंगलारिउ तेतलइ उद्यान माहि धर्मोपदेशानुप्रवृत्ति करी[1] भव्यसत्त्वनी बोधतउ सुदत्तमाभिधानु प्रधानु मुनि देखइ । बांदी, धर्मदेशना सांभली, कृत्याकृत्य विवेकु आणी करी, मांसी थि कारइ मधु प्रीतामरणु करइ । सुरसु धारिमु प्रतिपाली करी अंतकालि समाधिमरणु आयु पूरी सौधर्म देवलोकि महर्द्धिकु देवु हुयउ । सुदत्तु श्रेष्ठि पुण आपणउं आयु पूरी करी महाराज ! तउ तुम्हारउ मंत्री[2] मित्रानंदु हुयउ[3] । 5

> सम्यक्तु दिग्दनात्तु पट्टभक्तु न पौषधम् ।
> पदे पदे च सेनार्थं विचित्राः सार सम्पदः ॥ [७९८]
> स तु पौषः सुरभूपः स्वर्गसुखहनीः कृती ।
> चिन्तामणिं ददौ रत्नं भण्डारं प्राप्य मन्त्रिणे ॥ [७९९]

§550) राजा भणइ भगवन्, "हमी मेह देव रहई मंत्री देशिगिइ ?" मुनि भणइ, "मंत्रि 10 रहई महाकालि[1] अंतिमरानु[2] होइसिइ तदनन्तरि सेह देव भवई धर्मनु मुक्ति हेतु होइसिइ । जिणि कारणि नंदीश्वरि भाथि देवदेवना मनोरथि मंत्री रहई हुयइ एतइ भगवानतु सु[3] देवु विमानु आणी देसिइ । तिणि विमानि चडिया मंत्री रहई जावता हुंता सुद्ध शुक्लध्यानानुसारि लवणसमुद्र ऊपरि थिका[4] केवलज्ञानवान्, आयु रहि, मुक्ति होइसिइ ।" इसउं मुनि वचनु सांभली करी राजादिकलोक महाधर्मरागि वासित मानस हुंता नरेंद्र निज निज मंदिरि गया । 15

> श्री मित्रानन्द मन्त्रीन्द्रोः श्रुत्वा पौषधमन्त्रम् ।
> सुमेरुसः स्थिरध्यानात्मन्त्रकुर्वन्तु सुरासु ॥ [८००]

इति पौषधव्रत विषइ मित्रानंद कथा ।

§551) अथातिथि संविभागव्रतविचार लिखियइ ।

तत्र तिथि भणियइ–सोमवारादिक पर्व 'ति' जेहे मेलिया ति अतिथि कहियइ[1], साधु । तथा चोक्तं–20

> तिथिः पर्वोत्सवाः सर्वे मुक्ता येन महात्मना ।
> अतिथिं तं विजानीयाच्छेषमभ्यागतं विदुः ॥ [८०१]

तीहं रहई 'संविभागु' किसउ अर्थु ? निर्दोषु प्रासुकैषणीय जि छई असणपान ताहं तणउं यथाशक्ति दोषपरिहार पूर्वं विशुद्ध श्रद्धा सहित वर्तमान हुंतां आत्मानुग्रह बुद्धि करी जु दानु सु अतिथि संविभागु कहियइ । 25

हीं एउ विधि । जिणि श्रावकि पोसहु कीधउ हुयइ तिणि अवश्यु अतिथि संविभागु आसेवियउ, पारणई सउ कल्पिउं[2] सउ साधुना रहई संविभागु करावि उ हुयइ । अनेरां रहई अनियमु । किसउ अर्थु ? यथा समाधि । यतः—

> पढमं जईण दाऊण अप्पणा पणमिऊण पारेइ ।
> असइ य सुविहियाणं भुंजइ कयदिसालोओ ॥ [८०२] 30

§552) अथातिचार प्रतिक्रमणनिमित्तं भणइ ।

> सचित्ते निक्खिवणे[1] १ पिहिणे २ ववएस ३ मच्छरे ४ चेव ।
> कालाइक्कमदाणे ५ चउत्थे सिक्खावए निंदे ॥ [८०३]

---

§549) 1 P. omits. 2 Bh. places it after मित्रानंदु । 3 P. हुअउ ।
§550) 1 P. मर- । 2 P. वीतनी सुद्दे । 3 P. omits. 4 P. थका ।
§551) 1 Bh. कहियई । 2 Bh. कल्पिउं ।
§552) 1 B. Bh. have निक्खमणे ।

द्रानत्यु अदानादिकु तेह तणउं अदानबुद्धि वगइतउ सचित्त पृथ्वीकायादिक तींहं माहि निक्षिपणु सचित्त निक्षिपणता पहिलउ अतीचारु।

सचित्ति करी ढांकतां हूंतां सचित्तपिधानता बीजउ अतीचारु।

5 आपणउं अदानादिकु अदानबुद्धि करी पर तणउ कहतां परद्रव्य व्यपदेशु त्रीजउं अतीचारु।

किसउं ईहं कन्हां हउं हीनु इसी परि परु हीनधनु दितउ देखी मच्छर लगी दियतां हूंतां मत्सरदानु चउथउ अतीचारु।

साधुभिक्षा वेलातिक्रमि हूयइ हूंतइ भिक्षानिमित्तु साधु निमंत्रतां हूंतां कालातिक्रमदानु पांचमउ अतीचारु।

10 ईहं नउ विषइ चउथइ शिक्षाव्रति जं कांई पापु बांधउ सु निंदउं।

§553) अतिथिसंविभागव्रत विषइ सुमित्रा नामं परम श्राविका, तेह तणी कथा लिखियइ। तथाहि—

एकान्नयवनोप्येनन्संविनं श्रद्धयाधिकम्।
सुमित्राया इवाहत्यै जायते द्वादशं व्रतम्॥

श्रीवसंतपुरु इसइ नामि पुरु। अतिविक्रमवंतु इसइ नामि अतिविक्रमवंतु राजा तिहां राज्यु 15 करइ। तेह तणइ वसु इमित नामि मंत्रीश्वरु हूयउ सदा विकासिनि जेह तणइ बुद्धिकमलि राज्यलक्ष्मी-सुनिरिहिं वसी। जिनदासु नामि राजा रहइं अनिवल्लभु श्रेष्ठि हूयउ। सु पुण जिणधर्मधुराधौरेउ कल्याण तणउं निधानु सकल पौरजन प्रधानु वर्त्तइ। तिणि एनलोकि सुवर्ण रत्न उपार्जियां जेहे करी क्षिति माहि अनेकि मंडपयंत अनेकि रोहणपर्वत उपाड्यइं। 'यक्षराजु धनाढ्यतु' इसी परि जाचकं लोकि भणिउ। धनइ जिनदासु एकु संस्तविउ। वाणारसी नगरी वास्तव्यु धनु नामि इरि सार्थवाहु तेह तणी रत्नवती 20 नामि दीकिरी कन्यावतां लीलावतीं तिणि परणी। जिणदास रहइं विश्वासपात्रु लक्ष्मीधरु इसइ नामि मात्रणु मित्रउ लहुडउ भाई हुयइ इसउं परममित्रु हूयउ। राजेंद्र अतिविक्रमवंत रहइं तिम न मंत्री न पुत्रु न कलत्रु वल्लभु जिम जिनदासु वल्लभु। [८०४]

§554) 'एह जिनदास मित्र रहइं राउ कदाकालि मंत्रिमुद्रा पुण आपिसिइ' इसी परि वसु सचिवेश्वरु मन माहि संभावी करी जिनदास रहइं मारिवा विषइ मनु करइ। जिणदासु पुण इसना 25 इसी वसुमंत्रीश्वरि आकारादिकइं लक्षणइं करी आपणा ऊपरि विरुद्धउ जाणइ। तउ पाछइ राजेंद्र रहइं मोकलावी करी तीर्थयात्रा व्याजांतरि भार्या रत्नवती पीहरि मोकलइ। वसुमंत्रीश्वरि पुण तेह मारायिवा कारणि रात्रि तेह तणा घर सतउ मागुं आपणी जणई कन्हा खोधाविउ। जिणदासु पुण मागुं थापउ जाणी करी अनि सबभाव बहुमूल्य रत्न ले करी लक्ष्मीधर मित्रसहितु कर्मकरवेषु करी पुर हूंतउ नीसरिउ। मागुं अजाणतो भयवसइतउ निर्गम नासतउ हूंतउ अरिण्य माहि पडिउ। तिहां जउ अति 30 थाकु तृषाक्रांतु हूयउ तउ वस्त्रांचलबद्ध सबभाव रत्नापोटरा मित्र लक्ष्मीधर करि आपइ। जिमउं साहस्कारि तेह तणउं अविश्वासु हूयइ निसी न रत्नपोटरा इइ।

§555) तउ पाछइ आपणइं ढिकाणिइं कूपि पाणी जोयतउ हूंतउं रत्न तणइ लोभि तीणि लक्ष्मीधरि मित्रि पूठि धक्कउ दीधउ हूंतउ कूपि पडिउ। पडतउ हूंतउ 'कउणु इउ!' इसउ ... खलाविउ हूंतउ भाम्बी निघृतमा रत्नवती ओलखी करी भणइ, 'निम...

किसी परि पडी ? सु तारक¹ परिवार किहां गयउ ? हा² ! धिग् धिग् धिग्³ विडंबना रहइं ! " मा इं अदरपापविद्यु कोइ संनिधि मंत्रपूत देखी करी हर्षविषादसंकर-संकीर्णं लोचनु करइ । प्रियतम मेलापकारक धनु आपणपइं तिणइं मनसी हूंती मनइ. " ए हउं रत्नवती, ताहरी सुंदरी प्रिया । तिहां हूंती आवती हूंती अटवी माहि आवी । समुद्र मार्गु चोरे लूंटिउ । ए परिजनु नासी करी गयउ । चोरे ऊंचीपार माहरा शीलभंग करिवा कारणि मनुष्यु कीधउ, तेसीवार हउं धाइ करी शीलरक्षा कारणि आपूनी हूंती कुशलकुशल इनिम्न एह कूप माहि पडी । तुम्हारा दर्शनालोक भोक्तव्य कर्मइं करी जीवी । कहउ म तुम्ह रहइं⁴ एह कूप माहि किसी परि पतनु हूयउं⁵ ? तिणि सन्निधि विशेषयइ तुम्ह रहइं⁶ विशेषतउ कोणइं कीधउं ?

§556) जिनदासु कहइ, " तिणि सन्निधि मात्स्योत्सुकि हूयइ हूंतइ हउं कर्मकरथोपि एकलउ भीमचित्र । तिहार विहारि हेरे आविउ । तृषितु हूंतउ एह कूप माहि पडिउ । पाणी हूंगलउ पाद-स्खलना वासलउ " । तिर्भेंक एह कूप माहि नाविकनाउ जलु हूयउं, पुण्य प्रभावइतउ । जिमउं बीज हूयइ स्यउं सु बीज पी करि ति बे संड पुण उपगमार्गो करी अति सुवर्णचित्त हूयां¹ । अथ सार्थवाहि² सार्थु एहू आविउ । जीमउं माहे तणउं पुण्यपुंजु हूयइ तिणउ कुंभु रज्जु बांधी करी पाणी काढिवा कारणि एह कूप माहि किणिहिं मूकिउ । सु कुंभु भरिद ऊंचेतावार³ माहिउ तेतीवार तिणि कुपि माहि मानुषु⁴ नाभी⁵ अरह पुरुष आभां, भावा करां वादिरि, जिम जनमुग हूंता काढियइं तिम काढियो बे जण । जेतलइं ति कूपा हूंता नीगलियां तेतलइ आविलइ गमइ रहितु छइ सार्थु सु ' कूपा हूंतउं मिथुनु नीगलिउं ' इसउ कोलाहलु करइ । तेह हाइहाउ कौतुकी सार्थवाहु पुण तिहां आविउ । मनोर महिला हीलिहि देखी करी मन माहि विस्मयावन्नु हूयउ । जिणदासु पुण ' सुसुरउ एउ ' इसी परि धनसार्थवाह रहइं ओलखी करी चमत्कारचित्तु हूंतउ प्रणामु करइ । ' किसउं एउ ' इसी परि सन्निग्मय⁶ चित्ता⁷ सार्थवाह रहइं पूछता हूतां जिणदासि आपणउं वृत्तांतु मूल हूंतां समग्रु कहिउ । तिणि समाणि संबंधि हूयइ हूंतइ स्वजन तणउं हृदउं समग्र गलंउ गयउं । ति बन्हे पुरुषा माहि सुरोहिं रहियां । अत्यमन विलातरि आईं करी आविलिय सीमं तणइ आश्चर्यकारकि इसइ चरित्रि कहियइ हूतइं जाणे ओहवा⁸ कारणि उदयाचिलि संध्या समइ हाती आविउ

§557) अथ संवीरह समइ जिनदासु देहचिंता करिवा प्रत्युत्तन वनांतरि¹ गयउ । तिहां दर्भांचक सूतउ देखी² जांवइ, तउ भूवउ³ देखइ । अहातु सु देखी करी विस्मयचित्तु सर्वदंकु तेह रहइं जाणी करी तुरिततु हूयउ³ । तेह फलहा सवभाव⁴ दर्शीव⁵ रत्न ले करी पाणी ओढीं तेह रहइं पाइं नीसादर । तउ सार्थवाहि सु आविउ देखी जिणदासु परिवायतु⁶ थिउ ।

> उपकृत्युपकुर्वाणा ध्रियन्ते धरया न के ।
> सरकृत्युपकारी यस्तेन तु ध्रियते धरा ॥   [८०५]

दर्भांचक आविउ हूंतउ तउ जिनदास रहइं देखी करी लज्जावनताननु हूयउ⁷ । तउ पाछइ जिनदासु⁸ तेह आगइ कहइ, " मित्र ! हउं तइं कूपा माहि न पातिउ । किंतु पदस्खलना लगी हउं आप-ईं कूपा माहि पडिउ⁹ । तउं आपणा मन माहि किसीपइ लाज म करि । जिमउं को कुवादी भरता पुत्रि मरी सकइ छइ ? तू रहइं अनुगा धन सार्थवाहु मिलिउ हउं तेहमउं वाणारसी नगरी जाइसु तउं इहां

§555) 1 Bh. तारउ । 2 Bh. हा हा । 3 B. omits. 4 B. P. रहि । 5 P. हूयउ । 6 P. रहं 7 P. omits.

§556) 1 P. हूया । 2 Bh. adds तिहां । 3 B. जेवार । Bh. also has added – ती – later. 4 Bh. मानुषु । 5 P. adds करी । 6 P. omits च– । 7 P. चत्ता । 8 Bh. ओपवा ।

§557) 1 B. वनांतरि । P. वनांतरि । 2 P. adds करी । 3 P. हूयउ । 4 B. स्वभाव । Bh. सुप्रभाव P. स्वभाव । These transmitted unoriginal readings call for emendation. 5 Bh. omits. 6. Bh. इच्छियायतु । 7 P. जिनदासु । 8. P. पाडिउ । 9 P. माहरो ।

निवारी। अथवा स्त्रीवदांगत निसत्त्व किसउं किसउं[1] न समाचरइं। सुमित्रा पुण तद्राकालि इसउ अभिग्रहु मन माहि करइ। 'जे मू रहइं प्राणभुक्ति हुयइ तो हूं भोजनमात्रहीं दानि अकीधइ[2] हउं भोजनु करउं नहीं'। आठ उपवास जउ सुमित्रा रहइं हूया, तउ पाछइ दुर्यशोवाद शंकित हूंती जयां तेह नउ वृत्तांतु दत्त आगइ कहिउ। तउ पाछइ बंधुवर्ग सहितु दत्तु सुमित्रा रहइं पारणा कारणि महा निर्बंधु करइ। तउ सुमित्रा पारणा करिवा[4] कारणि उपवेशित हूंती चित्ति चीतवइ। 'अभोजनविषइ पात्रदाना- ५
भाव रूपु कारणु जाणतू[7] हूंतउ पुत्रु मू रहइं दानु दिवारइ नहीं। धिग् धिग्! माहरा कर्म विडंबन रहइं! जइ किमइ एह आपणा परीसिया भोजन माह कही-एक महर्षि रहइं अथवा दयापात्र कही-एक रहइं संविभागु करावउं तउ माहरउ अभिग्रहु भाजइ[8] नहीं। अपि तु श्लाघनीउ हूयइ। पुत्रु पुण्यवंतु अश्लाघ्यु न हूयइं'।

§561) इसउं ध्यायती सुमित्रा रहइं जिसउ मूर्तिमंतु पुण्यराशि हुयइ इसउ महामुनि एकु 10
गृहांगणि आगिलइ गमइ आविउ देखइ। तद्राकालि रोमांच कंचुकित गात्र हूंती हर्षाश्रुबिंदुवृष्टि नयन हूंती मूंकती भाजनु बिहुं हाथे ऊपाडी करी सामुही ऊठी करी[1] महर्षि आगइ भणइ, " भगवन्! महांतु अनुग्रहु मू ऊपरि करउ। पात्रु धरउ। प्रासुकैषणीउ[2] आहारु विहरिउ।" महासत्तु[3] प्रासुकैषणीउ[2] जाणी करी विहरइ। तउ तेह तणइ सत्त्वि करी संतुष्ट हूंती[4] श्री शासनदेवता गंधांबुवृष्टि गृहांगणि करी प्रत्यक्ष होई करी कहइ। " धन्ये! मासोपवासी महर्षि जु तइं पारणउं करांविउ, तेह ताहरा सत्त्व प्रभा- 15
वइतउ संभूतु जु[5] दानधर्मु[6] तेह तणा महात्म्यइतउ दुर्भिक्ष हेतुकग्रह उपशांत हूया।" इसउं गलगर्जितु करी देवि[7] मेहु वरसाविउ। दुर्भिक्षु प्रणासाविउ। राजा आवी करी महामहोत्सवु करावइ। सकलु लोकु सनालिकेराक्षतपात्र[8]पाणि वर्त्तमाता वधावइ। दत्तु जया सहितु पाए लागी सुमित्रा रहइं खमावइ। ति त्रिन्हइ अथानंतरु उत्तरोत्तरु धर्मु समाचरी करी आपणपउं आयु संपूर्णु भोगवइं।

§562) तींहीं[1] माहा सुमित्रा जीवु महाराज! तउं हूयउ[2]। दत्तात्मा जिनदासु ताहरउ मित्रु 20
हूयउ[3]। जयात्मा रत्नवती जिनदास तणी युवती हुई। दानधर्मनिरोधइतउ ताहरा मित्र रहइं लक्ष्मी सांतर हुई"। इसी परि पूर्वभवु सांभली गुरु नमस्करी करी[4] राजादिक सकललोक नगरि गया। धर्मध्यानपर अतिथिविक्रमयंत राजेंद्र जिनदास रत्नवती जीव तिणिहिं जि भवि संयमु प्रतिपाली केवल- ज्ञानु ऊपार्जी[5] मोक्षि गया।

पात्रार्थया रचितया रमया सुमित्रा- 25
श्रद्धया महानरवरेन्द्रिरया सहेह।
लेभे महोदयरमापि तथा भवद्भि-
र्लभ्येत हन्त भविका भविकाम्यपुण्याः॥ [८०७]

इति अतिथि संविभाग व्रतविषइ सुमित्रा कथा समाप्ता[6]।

§563) अथ अत्र विषइ जु रागादि भावि करी दीधउं तेह प्रतिक्रमिया कारणि भणइ। 30

सुहिएसु य दुहिएसु य जं मे अस्संजएसु अणुकंपा।
रागेण व दोसेण व तं निंदे तं च गरिहामि॥ [८०८]

संविभागव्रत प्रस्तावइतउ साधु अभणियाई जाणिवा। तींहं साधु किसां विषइ। इत्याह—

§560) 4 P. omits. 5 Bh. adds हूंतइ। 6 P. omits. 7 P. जाणतउ। 8 Bh. पूजइ।

§561) 1 P. omits. 2 P. प्रासुके–। 3 B. P. –सत्तु। 4 P. adds – उ। 5 Bh. omits. 6 Bh. दानु जु धर्मु। 7 P. देवे। 8 P. – पात्रि –।

§562) 1 Bh. तींहं। 2. Bh. हुयउ। P. हुअउ। 3 P. हुअउ। 4 Bh. omits. 5 P. उपार्जी। 6 P. omits.

'सुहिएसु' य इत्यादि। सुष्ठु अतिशय करी हितु ज्ञानादि त्रिकु जीहं रहइं हुयइ ति सुहित कहियइं। तीहं नइ विषः। तथा 'दुहिएसु ये' ति। दुक्खितेषु रोगि करी तपि करी वा जि क्लांत हुयइं ति दुक्खित कहियइं। तीहं नइ विषइ। अथ श्रमवशइतउ मार्गि जि खिन्न हुयइं ति क्लांत दुक्खित कहियइं तीहं नइ विषइ। तथा 'अस्संजएसु'। 'सं' किसउ अर्थु? आपणइ छंदि स्वेच्छा करी यत उद्यत विहारी इसा नहीं, किंतु गुरु तणी आण करी जि विहरइं ति असंयत कहियइं। तीहं नइ विषइ। मइं अनुकंपा भक्ति कीधी 'रागेण वे' ति–रागि पुत्रादि प्रेमि करी न सुद्ध साधु बुद्धि करी। तथा 'दोसेण वे' ति–द्वेषि करी द्वेषु ईहां साधुनिंदा स्वरूपु जाणिवउ। यथा—

'अदत्तदाना मलाविलदेहा ज्ञातिजनपरित्यक्ता क्षुधार्त्ताः सर्वथा निर्गतका अमी अत उपष्टंभार्हा' इत्येवं निंदापूर्वं ज अनुकंपा सापि निंदार्हाः। अशुभदीर्घायुः कर्मबंधहेतुत्वात्।

§564) यदागमः—'तहारूवं समणं वा माहणं वा संजय विरय पडिहय पच्चक्खाय पावकम्मं हीलित्ता निंदित्ता गरहित्ता[1] अवमन्नित्ता अमणुन्नेणं अपीइ-कारगेणं असणपाणखाइमसाइमेणं पडिलाहित्ता असुहदीहा उयत्ताए कम्मं पकरेइ'।

एह आलापक नउ अर्थु-तथारूपु साधुगुणजुक्तु श्रमणु विविध कष्टानुष्ठाननिरतु[2]। माहणु-ब्रह्मचर्य सहितु। संजतु-जितेंद्रियु। विरतु नानाविध तपविषइ 'वि'[3] विशेषि करी रतु विरतु कहियइ। प्रतिहत प्रत्याख्यात पापकर्मा। किसउ अर्थु। प्रतिहतु स्थितिह्रासइतउ ग्रंथिभेदि करी। हेतु तणा अभावइतउ पुनर्वृद्धि भावाभावइतउ प्रत्याख्यातु निराकरिउं पापकर्मु चारित्राचारादिकु जिणि सु प्रतिहत प्रत्याख्यात पापकर्मा कहिइ[4]। एवं गुणयुक्त महामुनि रहइं हीला अवज्ञा स करी 'हीलित्ता' कहियइ। निंदा अदत्तदाना इत्यादि। तत्र, पूर्विहं भवे दीधउं नहीं तीणि कारणि भिक्षाटनु करइं भिक्षाजीविया। इति अदत्तदाना तणउ अर्थु। 'मलाविलदेहा' इत्यादि सुगमं। नवरं 'सर्वथा निर्गतका' किसउ अर्थु? सर्वहीं प्रकारहं करी इहलोक सुख हूंता 'निर्गत' नीसरिया। इहलोकिहिं परलोकिहिं ईहं रहइं सुगु नहीं इसउ अर्थु। इसी परि परमार्थि निंदा करी। इसी हीं जि परि आपसाखि गरिही करी 'गरहित्ता' तणउ अर्थु। 'अवमन्नित्ता'। अभ्युत्थानादि विनय तणइ अभावि भिक्षाचर मात्र गणना करी जु इडु सु अपमान पूर्वु 'अवमन्नित्ता' कहियइ। 'अमणुन्नेणं'। पर्युषित यद्वच्चपाकादि अरम विरमाहारेणं। 'अपीइकारेणं'। गुणराग तणइ अभावि करी असणादिकि करी 'पडिलाहित्ता' विहरावी करी शुभविपर्यासु अशुभदुक्खहेतुकु दीर्घु नरयउं आयु कर्मु दाता हूंतउ 'पकरेइ' किसउं अर्थु? बांधइ।

§565) जिम द्रौपदी जीवि कुटुक तुंबकादिदानि' करी कर्मु बांधउं तेह तणउं फलु नरकादिकहं भवहं प्रभूतु कालु वेदी करी तउ छेदिहं तेह तणा अंगउदयवशइतउ दुःभांग्यु वेदउं।

§566) अथवा 'सुहितेसु दुक्खितेसु' किसउ अर्थु। मातगारयादि गारव सहित सुहित चरक परिव्राजकादिक। अथवा पार्श्वस्थादिक। अशास्त्रीक दुक्खित। ति किउणि? असंयत षड्विध जीव निकाय वधक। असाधु तीहं नइ विषइ ज मइ अनुकंपा अन्नादि दानलक्षण भक्ति कीधी तथा ज अनुकंपा साधु रहइं भक्तिशाच्यना विषइ सिद्धांत गाथा।

आयरिय अणुकंपयाए गच्छो अणुकंपिओ महाभागो।
गच्छाणुकंपयाए अव्वोच्छित्ती कया तित्थे॥ [८०९]

'रागेण वा'–माइता मित्र ए, स्वजनादि संबंधिया ए इसी परि, अथवा एहे अम्ह रहइं मार्ग विषि वैसंपत्यादिक कर्यावतु इसी परि। 'दोसेण वा'– कुलिंगी नइ विषइ जिम धर्म निंदक ए तथा निंदक ए इसी परि। इत्यंभूत्तरहइं विषइ।

§564) 1 Bh. [illegible] 2 Bh. [illegible] 3 Bh. [illegible] 4 Bh. [illegible]।

दगपाणं पुप्फफलं अणेसणिज्जं गिहत्थ किच्चाई।
अजया पडिसेवंति य जइ वेसविडंबगा नवरं।

इसी परि तीहं ना दोष देखी करी अप्रीतिभावइतउ जु दीजइ ■ द्वेषेण वा' एहु णउ अर्थु। तिणि करी जु कांइ अशुभु कर्मु बांधउं 'तं निंदे' इत्यादि पूर्ववत्।

§567) जु पुण उचितु दानु ■ न दिद्धउं। जिणि कारणि तेह तणउ निषेधु तीर्थंकरहीं कीधउ ⁵ नहीं। तथा च भणितं–

'गिहमागयाणमुचियं पडिसिद्धं भगवयावि न हु सुत्ते'।

§568) अथ साधुविषइ जु दीधउं नही तेह पडिक्कमिवा निमित्तु कहइ—

साहूसु संविभागो न कओ तव-चरण-करण जुत्तेसु।
संते फासुयदाणे तं निंदे तं च गरिहामि॥　　　सुगमा॥ [८१०]　१०

§569) नवरं चरण करण सत्तरी लिखियइ—

वय ५ समणधम्म १० संजम १७ वेयावच्चं १० च बंभगुत्तीओ ९।
नाणाइ तियं ३ तव १२ कोह निग्गहा ४ इय चरणमेयं॥　　　[८११]

प्राणातिपात विरति, मृषावाद विरति, अदत्तादान विरति, मैथुन विरति, परिग्रह विरति, नामक पांच महाव्रत ५।　　　१५

खंतीय १ मद्दव २ ज्जव ३ मुत्ती ४ तव ५ संजमे ६ य बोधव्वे।
सच्चं ७ सोयं ८ आकिंचणं च ९ बंभं च १० जई धम्मो॥　　　[८१२]

इति दशविधु यतिधर्म्म।

पञ्चास्रवा¹द्विरमणं पञ्चेन्द्रियनिग्रहः।
कषायजयः दण्डत्रयविरतिश्चेति संजमः सप्तदशभेदः॥　　　[८१३]　२०

इति सप्तदशधा संयमः।

आयरिय १ उवज्झाए २ थेर ३ तवस्सी ४ गिलाण ५ सेहाणं ६।
साहम्मि ७ कुल ८ गण ९ संघसंगयं १० तमिह कायव्वं॥　　　[८१४]

इति दशविधु वैयावृत्यम्।

वसहि १ कह २ निसिज्जि ३ दिय ४ कुड्डिंतर ५ पुव्वकीलिय ६।　　　२५
पणिए ७ अइमायाहार ८ विभूसणा ९ य नव बंभगुत्तीओ॥　　　[८१५]

इति ब्रह्मचर्य गुप्ति नवकम्।

काले १ विणए २ बहुमाणे ३ उवहाणे ४ तहय निन्हवणे ५।
वंजण ६ अत्थ ७ तदुभए ८ अट्ठविहो नाणमायारो॥　　　[८१६]　३०

इत्यष्टधा ज्ञानाचारः।

निस्संकिय १ निक्कंखिय २ निव्वितिगिच्छा ३ अमूढदिट्ठी ४ य।
उववूह ५ थिरीकरणे ६ वच्छल्ल ७ पभावणे ८ अट्ठ॥　　　[८१७]

इत्यष्टधा दर्शनाचारः।

---

§566) 2 Bh. तेहं।
§569) 1 B. Bh. have – श –।

पणिहाण जोगजुत्तो पंचहिं समिईहिं तीहिं गुत्तीहिं ।
एस चरित्तायारो अट्ठविहो होइ नायव्वो ॥ [८१८]

इत्यष्टधा चारित्राचारः ।

इसी परि ज्ञान दर्शन चारित्रहं रहइं अष्टभेदता हूंतीहीं ईहां 'नाणाइ तियं' इसा भणनहतउ
5 त्रिन्हइ जि भेद लीजइं ।

अणसण १ मूणोयरिया २ वित्तीसंखेवणं ३ रसचाओ ४ ।
कायकिलेसो ५ संलीणया ६ य बज्झो तवो भणिओ ॥ [८१९]

इति षोढा बाह्य तपः ।

पायच्छित्तं १ विणओ २ वेयावच्चं ३ तहेव सज्झाओ ४ ॥
10 झाणं ५ उस्सग्गो वि ६ य अब्भिंतरओ तवो होइ ॥ [८२०]

'कोहनिग्गहा' इति बहुवचनहतउ क्रोध मान माया लोभ रूप चत्तारि[2] कषाय तीहं तणा निग्गह ४ लीजइं । 'इय चरणमेयं' इसा भणनहतउ सवहीं नइ मीलनि कीधइ हूंतइ सत्तरि भेद[2] चरण तणा हुयइं । इसउ अर्थु ।

इति चरण सत्तरी भेदा ।

15 §570) अथ करण सत्तरी लिखियइ ।

पिंडविसोही ४ समिई ५ भावण १२ पडिमा १२ य इंदिय निरोहो ५ ।
पडिलेहण २५ गुत्तीओ ३ अभिग्गहा ४ चेव करणं तु ॥ [८२१]

एह नउ अर्थु- यति संबंधिया छइं उत्तर गुण तीहं नइ प्रस्तावि लिखिउ छइ तिहां हूंतउ जाणिवउ । नवरं 'इंदियनिरोहु' पांच इंद्रिय नउ विजउ । सर्व मीलनि करणसत्तरी करण तणा सत्तरि भेद
20 हुयइं इसउ अर्थु ।

अत्र तपु चरणसत्तरी माहि आविउ छइं पुण वली 'तवचरणकरण जुत्तेसु' ईहां तपग्रहणु निकाचित अवश्यवेद्य जि हुयइं कर्म तीहीं तणउ क्षउ तपि करी हुयइ । इसी परि कर्मक्षयं प्रति तप रहइं प्रधानता जाणाविवा[1] निमित्तु । तथा च आगम —

पुव्विं दुच्चिन्नाणं दुप्पडिक्कंताणं वेइत्ता मुक्खो ।
25 नत्थि अवेइत्ता तवसा वा झोसइत्ता ॥ [८२२]

§571) अथ संलेखनातिचार परिहार रहइं करिवा वांछतउ हूंतउ भणइ ॥

इहलोए परलोए जीविय मरणे य आसंस पओगे ।
पंचविहो अईयारो मा मज्झं हुज्ज मरणंते ॥ [८२३]

अत्र आशंसा प्रयोग इसउं सर्वत्रहीं जोडियउं । यथा इहलोकाशंसा प्रयोगु । माणुस रहइं मनुष्य-
30 लोकु इहलोकु तेह तणी आशंसा 'चक्रवर्ति हउं एह अनसन तणइ प्रभावि होइजिउं' इसी परि १ । देवलोकु तेह तणी परलोकाशंसा । यथा । 'देवु हउं होइजिउं' इसी परि २ । जीवितव्य तणी आशंसा 'जउ हउं घणउं जीवउं तउ मू रहइं घणी प्रभावना हुयइं घणी पूजा हुयइ महिमाविख्याति हुयइ' । इसी परि । मरणशंसा 'मइं अणसणु लीधउं मू रहइं महिमाविकु कोई नहीं तिणि कारणि हिव वहिलउ जउ मरउं तउ रूडउं' इसी परि मरणाशंसा ॥ अथवा अनेरा रहइं रूडी महिमा अणसण समइ देखी करी
35 महिमा निमित्तु अणसणु लीजइ ए पुण मरणाशंसा ४ ।

§569) 2 B. drops words between चत्तार ... भेद ।
§570) 1 Bh. जणाविवा ।
§571) 1 Bh. omits.

धकारहतउ कामभोगाशंसा । तत्र शब्दरूप काम कहियइं । गंध रस स्पर्श भोग कहियइं । यथा ।
'एह तप तणइ प्रभावि मू रहइं परलइ भवि काम भोग मनोवांछित होइजिउं ।' इसी परि एउ पंचविधु ५
अतिचार मू रहइं मरणंते अ‍ॅ थरमु ऊसासु तेतीहीं वार म होइजिउ ५ ॥

§572) तत्र इह लोकशंसा विषइ चित्त तणउ भाइ संभूत मातंगऋषि दृष्टांतु । परलोकाशंसा
विषइ अनामिका दृष्टांतु ललितांग देवदर्शनानुरागि जिणि नियाणउं देवी भाव विषइ कीधउं । कामभोगा- 5
शंसा विषइ ब्रह्मदत्त कथा ।

§573) जीविताशंसा[1] मरणाशंसा[2] विषइ धर्मघोष धर्मयश इसा नामइं करी प्रसिद्ध छइं मह-
ऋषि तींहं तणी कथा लिखियइ ॥

इही जि भरतक्षेत्र माहि कौशांबी नामि नगरी हूंती । तिहां अजितसेनु नामि राजा । धारिणी
नामि राणी । अनेरइ परवि बहुश्रुत गुणविभूत धर्मवसु इसइं नामि आचार्य संजमगुण समाहित तिणि
नगरी पूहतायाजि रहिया । तींहं तणा बि शिष्य एकु धर्मघोषु बीजउ धर्मयशु । बिहुं तींहं महामत्तइं 10
संलेखना करिया[3] आरंभी । तिहां विगतभया इसइ नामि यथार्थनाम[4] प्रवर्त्तिनी[5] हूंती । तिणि संघु
पूछी करी अणसणु लीधउं । चमत्कारकारिणी[6] तेह रहइं प्रभावना संघि करावी । तिणि देवलोकि
गइं हूंती पुनरवि तेह तणा कलेवर रहइं सज्जनानंदकारिणी[7] पूजा पीरजनइं करावी । सु पूजाडंबरु 15
देखी करी धर्मघोषु ऋषि मन माहि चींतवइ, 'धन्य धन्य ए प्रवर्त्तिनी । जेह जीवतांही मृतही रहइं इसी
प्रभावना हुई । एह पुरी माहि जिमा हउं पुण[8] हउंसउं[1] अणसणु करउं तउ मू रहइं पुण इसी प्रभावना
हुइ ' । इसउं चींतवी करी धर्मघोषि अणसणु लीधउं ।

§574) बीजउ धर्मयश मुनि चींतवइ 'लोकि जाणायिइ[1] किसउं छइ ! हउं आपहे एकांति 20
जाइं भावना करउं ॥ तथाच भणितं—

किं परजण बहु जाणावइ वरमप्पसक्खियं सुकयं । [८२४]
इह भरहचक्कवट्टी पसन्नचंदो य दिट्ठंता ॥

इसउं चीतवी करी गुरु नी अनुमति ले करी उज्जयिनी अनइ वच्छगा नदी अंतरालि गिरिकंदरि
जाइं करी पादपोपगमनि अनशनि रहिउ । जिम भित्तु निर्माकु हुयइ तिम थाइं एकाकी सुस्थिरचित्तु
हूयउ[2] । एतलइ प्रस्तावि उज्जयिनी नगरीमंडनु चंड प्रद्योतनरेन्द्रनु धारिणी-कुक्षिसंभवु पालकु इसइ नामि
युवराजा । लघुकर्म भावइतउ सु सगुरु अवनिपालकु हूयउ । तेह तउ लहुडउ भाइ गोपालु इसइ नामि दीक्षा[3] करी विख्यात पिण हूया' । 25
पादमूलि दीक्षामहणु करइ । पालक तणा अवंतिवर्द्धन राष्ट्रवर्द्धन इसे नामइं करी विख्यात बि पुत्र हूया । 25
ति पुत्र राज्य अनइ यौवराज्य थापी करी पालकि पुण दीक्षा लीधी । धारिणी नामि राष्ट्रवर्द्धन तणी
भार्या, रूपि करी जिसी कामभार्या हुयइ तिसी, हुई । अवंतिसेनु इसइ नामि तेह तणउ पुत्र हूयउ[3] ।

§575) अनेरइ दिनि उद्यानवनि क्रीडा करितीं[1] धारिणी अवंतिवर्द्धनि ज्येष्ठि निज नेत्रकौमुदी
समानरूप दीठी । तउ पाछइ सकामु थिकउ[2] दूतिकामुखि मार्थिवा लागउ । धारिणी भणिउं, " महाराज ! 30
जे आपणी लाज नहीं तउ किमउं भाई तणी लाज पुण[3] नहीं ! " तउ पाछइ अवंतिवर्द्धनि कामातुरि हूंतइ
आपणउ भाई राष्ट्रवर्द्धनु कपटु करी मारिउ । अथवा कामी किसउं किसउं न करइं ।

both drop the -h - and write

---

§571) ■ Note the solitary example where B. and Bh. both drop the -h - and write
पहल्द for पल्हिद । 3 Bh. omits.

§573) 1 P. शंसा । 2 P. adds निमितु । 3 P.–नामि । 4. P. प्रवर्त्तनी । 5 P. चमत्कारक– । 6. P.
संज्जना– । 7. Bh. omits. 8 Bh. हिवडां ।

§574) 1 Bh. जाणायिइ । P. जाणाविइ । 2 P. हूअउ । 3. Bh. नामइं । 4 P. हूआ ।

§575) 1. Bh. करती । 2. P. थकउ । 3. Bh. p. omit.

सन्मार्गे तावदास्ते प्रभवति पुरुषस्तावदेवेन्द्रियाणां
लज्जां तावद्विधत्ते विनयमपि समालम्बते तावदेव ।
भ्रूचापाकृष्टमुक्ताः श्रवणपथजुषो नीलपक्ष्माण एते
यावल्लीलावतीनां न हृदि धृतिमुषो दृष्टिबाणाः पतन्ति ॥ [८२५]

5 तदाकालि धारिणी गर्भधारिणी आत्मशीलरक्षा हुंती निज शीलरत्न रक्षा करवा कारणि राजाईं नाममुद्रा सहित हुंती नासी करी नेती जि मार्गे मेलि करी कौशांबी नगरी गई । तेउ नगरी मांहि रही हुंती महासती तीहं कन्हइ दीक्षा लीधी । दीक्षानिषेधभयलगि गर्भु कहिउ नहीं । पाछइ गर्भलिंगे जाणियइ हुंतइ मच्छप्रवृत्ति न रहावी ।

§576) प्रस्तावि जिम मेरुभूमि कल्पतरु प्रसवइ तिम तिणि पुत्र जायउ । साध्वी रहइं पुत्र अनइं 10 आर्णी करी जिम कोइ जाणइ नहीं तिम राजकुलांगणि नाम मुद्रांकितु पुत्र मेल्हि आविउ । प्रभाति तदा अजितसेनु राजा जिमउ मणिपुंजु हुयइ इसउ स बालकु कांतिमंतु देखी करी, अपुत्र हूंतइ आपणी राणी रहइं हर्षितु थिकउ पुत्र करी आपइ । गूढगर्भा राणी हुंती इसी परि प्रकाशी करी पुत्रजन्म महोत्सवु अजितसेनु राजेंद्रु करावइ । मणिप्रभु इसउं यथार्थु नामु करइ । प्रवर्तिनी पूछी हुंती धारिणी भणइ "मृतु पुत्रु जायउ सु ढिंपलाइं जि लोकी करी हउं आवी ।"

15 §577) अथ पुत्रप्रेम भावइतउ राणी सउं धारिणी प्रीति करइं । अजितसेनि दिवंगति हुंतइ मणिप्रभु राजा हूयउ । सु अवंतिवर्द्धनु, अनुज राष्ट्रवर्द्धनु रहइं, धारिणी तणइ कारणि मारी करी राष्ट्रवर्द्धनु युवराजेंद्र अनइं धारिणी बिहुं हुंतउ भ्रष्टु हूयउ हुंतउ अति वैराग्य भावइतउ भाई तउ पुत्र अवंतिसेनु राज्यि बइसाली करी दीक्षा लियइ । अनेरइ दिनि अवंतिसेनि उज्जयिनी नायकि कौशांबी नायकु मणिप्रभु दूतमुखि भणाविउ, "मू रहइं क्रमागतु दंडु दे करी सुखिहिं निर्भय थिकउ राज्यु 20 भोगवि ।" तउ पाछइ मणिप्रभु भणावइ, "तउ तात सु तादृशउं राज्यु हउं लेसु" इसउं भणी करी तिणि दूतु पाछउ मोकलिउ । तउ पाछइ दूतमुखइतउ सु अवंतिसेनु राजेंद्रु सांभली करी जिम कलकलतउं घृतु जलबिंदुपाति झाल मेल्हइ तिम कोपि करी प्रज्वलतउ हुंतउ सर्वाभिसारि मणिप्रभ ऊपरि कटकी करइ । त्वरितगति आवी कौशांबी नगरी विध्वंसबुद्धि हुंतउ स बिहुं गमा वेढु घाती रहिउ । मणिप्रभु पुण संग्रामसज्ज सुभटवज्र करी परसुभट तृणसमान मननउ हुंतउ कोट्ट मांहि सगुण थाई रहिउ । 25 तदाकालि नगरलोकु परकटक भयातुरु हूयउ । निवातोत्पातचिंता करी व्याकुलु हूयउ । विहारोच्चार भूमि रहइं संकीर्णता भावइतउ यतिलोकु असमाहितु हूयउ । पदि पदि संयम विराधना आत्मविराधना घ हाइया लागी । तउ पाछइ जिणि धर्मघोषि मुनि अणसणु कीधउं हुंतउं तेह रहइं सुगतप सुत-संयम वार्त्ता रहइं पूछणहारु को हूयउ नहीं । जीवितार्थी सु धर्मघोषु मुनि पूजा प्रभावना तणा अभावइतउ आर्त्तध्यानि वर्त्तमानु हुंतउ मूयउ । जिम पाषाणु लांखियइ तिम कोट ऊपरवाडइ ऊलाली करी 30 लांखिउ ।

§575) 4 B. लज्जा । 5 Bh.–मुखो । 6 P. omits. 7 Bh.–मुषो । P. मुरे । 8. P. पश्यं– 9. P. राष्ट्रवर्द्धमानु । 10 P. omits नाम– । 11 B. omits. 12 Bh. P. ज । 13 B. adds–य–later. 14 Bh. राहवी ।

§576) 1 Bh. को । 2 P. धात्री । 3 P. थकउ । 4 P. प्रकाशि । 5 P. अजितु- । 6 B. Bh. add. नामु ।

§577) 1 P. हूअउ । 2 P. omits दी– । 3 P. omits following three sentences. 4 B. drops words between तउ पाछइ...तउ पाछइ । 5 Bh.–मारि । 6 P.–गत । 7 B. P. add करी । 8 B. P. समान हूतउ मननउ । B. has afterwards tried to change–उ of हूतउ to–अ and thus confused ... गमानइ असमननउ । The whole passage from बिहुं गमा ... अणसणु कीधउं हूंतउं ... in Bh. 9 P. omits. 10. Bh. P.–घोष । 11. Bh. अनसणु । ... 15. P. ऊपरि– ।

§578) अथ धारिणी मणिप्रभ[1] वृत्तांतु मूललगी कही करी प्रवर्त्तिनी रहइं वीनवइ, "ए सहोदर भाई बे अज्ञानभावइतउ राज्यकारणि विढइं[2] छइं। जुउ[3] तुम्हे भणउ तउ हउं वारउं। तउ पाछइ प्रवर्त्तिनी अनुज्ञात हूंती धारिणी साध्वी मणिप्रभ आगइ सर्व स्वरूपु कही करी भणइ। "तू रहइं वडा भाई सउं युद्ध करिया न यूझियइं।" इसी परि भणिउ हूंतउ अभिमान लगी जउ निवर्त्तइ नहीं तउ पाछइ धारिणी अवंतिसेन कन्हइ शीघ्रु गई। अवंतिसेनि प्रणमी करी पूछी हूंती[4] सगळु वृत्तांतु कहइ। "वच्छ! आपणा अनुज लहुडा भाई सउं किसउं झूझु!" तउ पाछइ संग्रामु संरंभु मूंकी करी मणिप्रभ मिलिवा निमित्तु अवंतिसेनु ससेनु हूंतउ चालिउ। मणिप्रभु पुण अवंतिसेनु मिलिवा आवतउ[5] सांभली करी साम्हउं[6] आविउ। जेतीवार दृष्टिमेलावउ हूयउ[7] तेतीवार बे वाहन हूंतां ऊतरी[8] करी आपणपा माहि हिया माहि जिम पइसणहार हुयइं तिम साइंप आविया। महाप्रवेशक महोत्सवपूर्वु नगरी माहि आविया। केतलाई दिवस प्रेमानुबंधु घरा हूंता तिहां रही करी अवंती ऊपरि चालियां।

§579) तीहं समामंत्रित हूंती व्रतिनी पुण सरसी चाली। मार्गि जायतां हूतां वच्छगा नदी नइ तटि कटक वासियां। ति महासती गिरिकंदर हूंतउ ऊतरतउ चडतउ लोकु अस्तोकु[1] देखी पूछइं। लोकमुखहतउ धर्मयशामुनि तिहां पादपोपगमनि अनसनि[2] वर्त्तमानु सांभलइ। तेहे राजेंद्रइं आगइ कहिउं। तउ पाछइ राजेंद्र[3] सहित हूंती व्रतिनी गिरिकंदरि[4] पहुती। मुनि नमस्करिउ। महिमा महांत करावी राजेंद्र चालणहार हूतां व्रतिनी पुण सारिसी तेडइ। व्रतिनी भणइं, "अम्हे अनसनी मुनि मूकी[5] करी नहीं आवउं"। तउ पाछइ राजेंद्र पुण रहिया। नितु नितु महात्मा रहइं वांदइं, पूजइं। रास, भास, गीत, नाच, नाद[6], पूजा करावइं। महासती आराधनाऽमृतु[7] पानु करावइं। पंचपरमेष्ठि महामंत्रु समरावइं। इसी परि धर्मयशा महऋषि[8] रहइं निस्पृहवृत्ति भाविहिं हूंतइ धर्मानुरागि शून्यहिं स्थानि[9] महिमा हूयउ। समाधि सहितु सु महाभागु स्वर्गसुख भाजनु हूयउ[10]। जिणि धर्मघोषि महऋषि[11] पूजा तणी स्पृहा कीधी तेह रहइं अपभ्राजना हुई।

छिन्नोर्व्वीरुहपातवन्निजवपुः कृत्वा मनोप्यस्पृहं
येनैवं मुनिपुङ्गवेन विदधे प्रायो व्रतं निस्तुषम् ।
शून्येमून्महिमास्य धर्मयशसोऽन्यथाऽन्यत्र तु
श्रुत्वेति क्रियतां तदित्थमसुमानुर्ध्वगतिं लभ्यताम् ॥ [८२६]

इति जीवितमरणाशंसा[12] विषइ धर्मयश कथा, अन्वयविषइ व्यतिरेकविषइ[13] धर्मघोषकथा ॥

§580) सगलो ई अतीचारु योगत्रय हूंतउ हुयइ इणि कारणि योग उद्दिशी योगे ई जि करी पडिकमतउ भणइ—

काएण काइयस्सा पडिक्कमे वाइयस्स वायाए ।
मणसा माणसियस्स[1] सव्वस्स वयाइयारस्स ॥ [८२७]

वधबंधादिकारकि कायि करी कीधउ व्रतातीचारु कोइकु वध[2] बंधादिकु अतीचारु तेह रहइं काइहिं जि तपः कायोत्सर्गादि अनुष्ठानकारकि करी 'प्रतिक्रामेत्' किसउ अर्थु? निवर्त्तिजिउ इसी परि। 'वाएण' वचनि करी यथा 'चोरु तउं' परदारगामी तउं' इसी परि सहसाभ्याख्यान दानादिरूप छइ वाणी तिणि करी कीधउ जु सु वाचिकु तेह रहइं वाइहिं जि करी यथा मिच्छामिदुक्कडदानलक्षण छइ वाणी तिणिहिं जि करी 'प्रतिक्रामेत्' निवर्त्तिजिउ।

---

§578) 1 P. मुणि-। 2 P. वेढइं। 3 P. जउ। 4 Bh. adds धारिणी। 5 P. आवता। 6 P. साम्हउं। 7 P. हुअउ। 8 P. ऊतारि।

§579) 1 P. omits. 2 P. omits. 3 Bh. राजेंद्रह। 4 B. Bh. गरि-। 5 Bh. P. मूंकी। 6 Bh. omits. 7. Bh. -मृत। 8 P. महा-। 9 P. स्थान। 10 P. हुअउ। 11 P. -ऋषि (?)। 12 P. -शंसा। 13 P. omits.

§580) 1 B. Bh. have -स्सा। 2 B. Bh. बंध।

सन्मार्गे तावदास्ते प्रभवति पुरुषस्तावदेवेन्द्रियाणां
लज्जां[4] तावद्विधत्ते विनयमपि समालंबते तावदेव ।
भ्रूचापाकृष्टमुक्ताः श्रवणपथजुषो[5] नीलपक्ष्माण एते
यावल्लीलावतीनां न[6] हृदि धृतिमुषो[7] दृष्टिबाणाः पतन्ति ॥ [८२५]

5 तदाकालि धारिणी गर्भधारिणी[8] आसन्नप्रसव हूंती निज शीलरत्न सर्वस्व रक्षाकारिणी राष्ट्रवर्द्धन[9] नाममुद्रा[10] सहित हूंती नासी करी तेती[11] जि वार[12] वेगि करी कौशांबी नगरी गई । राय तणी यानशाला माहि रही हूंती महासती तीहं कन्हइ दीक्षा लीधी । दीक्षाविघ्नकारणि गर्भु कहिउ नहीं । पाछइ प्रवर्त्तिनी गार्भ जाणियइ[13] हूंतइ प्रच्छन्नवृत्ति स रहावी[14] ।

§576) प्रस्तावि जिम मेरुभूमि कल्पतरु प्रसवइ तिम तिणि पुत्र जाइउ । साध्वी रहइं पुत्रु अनर्थु 10 जाणी करी जिम कोइ[1] जाणइ नहीं तिम राजगृहांगणि नाम मुद्रांकितु पुत्रु तिणि मेल्हिउ । प्रभात समइ अजितसेनु राजा जिसउ मणिपुंजु हुयइ इसउ स बालकु कांतिमंतु देखी करी, अपुत्र छइ आपणी राणी[2] तेह रहइं हर्षितु थिकउ[3] पुत्रु करी आपइ । गूढगर्भा राणी हूंती इसी परि प्रकाशी[4] करी पुत्रजन्म महोत्सवु अजितसेनु[5] राजेंद्र करावइ । मणिप्रभु इसउं[6] यथार्थु नामु करइ । प्रवर्त्तिनी पूछी हूंती धारिणी भणइ, " मृत पुत्रु जाइउ सु हियडाइं जि लांखी करी हउं आवी । "

15 §577) अथ पुत्रप्रेम भावइतउ राणी सउं धारिणी प्रीति करइं । अजितसेनि त्रिदंगति हूंतइ मणिप्रभु राजा हूयउ[1] । सु अवंतिवर्द्धनु, अनुज राष्ट्रवर्द्धनु रहइं, धारिणी तणइ कारणि मारी करी राष्ट्रवर्द्धनु युवराजेंद्र अनइं धारिणी बिहुं हूंतउ भ्रष्टु हूयउ[2] हूंतउ अति वैराग्य भावइतउ मार्इं नउ पुत्र अवंतिसेनु राज्यि थइसाली करी दीक्षा[3] लियइ । अनेरइ दिनि अवंतिसेनि उज्जयिनी नायकि कौशांबी नायकु मणिप्रभु दूतमुखि भणाविउ[3], " मु रहइं क्रमागतु दंडु दे करी सुखिहिं निर्भय थिकउ राज्यु 20 भोगवि । " तउ पाछइ[4] मणिप्रभु भणावइ, " सव्याजु ताहरउं राज्यु हउं लेसु " इसउं भणी करी तिणि दूत पाछउ मोकलिउ । तउ पाछइ[4] दूतमुखइतउ सु अवंतिसेनु राजेंद्रु सांभली करी जिम कलकलतउं घृत जलबिंदुपाति झाल मेल्हइ तिम कोपि करी प्रज्वलतउ हूंतउ सर्वाभिसारि[5] मणिप्रभ ऊपरि कटकी करइ । त्वरितगति[6] आवी कौशांबी नगरी विध्वंसबुद्धि हूंतउ स बिहुं गमा वेढु[7] घाती रहिउ । मणिप्रभु पुण संग्रामसज्ज सुभटयज्ञ करी परसुभट तृणसमान मनतउ[8] हूंतउ कोट्ट माहि प्रगुण थाई रहिउ । 25 तदाकालि नगरलोकु परकटक भयातुर हूयउ[9] । निखातोत्खातचिंता करी व्याकुलु हूयउ । विहारोच्चार भूमि रहइं संकीर्णता भावइतउ यतिलोकु असमाहितु हूयउ । पदि पदि संयम विराधना आत्मविराधना घ[1] होइवा लागी । तउ पाछइ जिणि धर्मघोषि[10] मुनि अणसणु[11] कीधउं हूंतउं तेह रहइं सुतत्तप सुत-संयम धार्त्ता रहइं पृच्छणहार को हूयउ[12] नहीं । जीवितार्दाशी[13] सु धर्मघोषु मुनि पूजा प्रभावना तणा अभावइतउ आर्त्तध्यानि वर्त्तमानु हूंतउ मूयउ[14] । जिम पाषाणु लांखियइ तिम कोट ऊपरथाउइ[15] उछाली करी 30 लांखिउ ।

---

§575) 4 B. लज्जा । 5 Bh.–जुषो । 6 P. omits. 7 Bh.-मुषो । P. मुषे । 8. P. गर्भु– । 9. P. राष्ट्रवर्द्धमानु । 10 P. omits नाम– । 11 B. omits. 12 Bh. P. ज । 13 B. adds–य–later. 14 Bh. रहवी ।

§576) 1 Bh. को । 2 P. धारणी । 3 P. थकउ । 4 P. प्रकाशि । 5 P. अजितु- । 6 B. Bh. add. नामु ।

§577) 1 P. हुअउ । 2 P. omits दी– । 3 P. omits following three sentences. 4 B. drops words between तउ पाछइ...तउ पाछइ । 5 Bh.–भारि । 6 P.–गत । 7 B. P. add करी । 8 B. P. समान हूतउ मनतउ । B. has afterwards tried to change–उ of हूतउ to–अ and thus confused. Bh. समानइ अमनतउ । The whole passage from बिहुं गमा…अणगणु कीधउं हूंतउ is added in the margin in Bh. 9 P. omits. 10. Bh. P.–घोष । 11. Bh. अनगणु । 12. P. हुउ । 13.–दंर्शी । 14. P. मूअउ । 15. P. ऊपरि–

सम्यग्दृष्टि श्रावकि जु अल्पु पापु कर्मु बांधउं सु प्रतिक्रमणि छ विवहावश्यकि करी सहितु स प्रतिक्रमणु ॥ तथा 'हा दुट्ठु कयं हा दुट्ठु चिंतियं अणुमयंपि हा दुट्ठु' इत्यादिकु पाप समाचरणानंतर जु अनुतापु परितापु कहियइ तिणि करी सहितु स परियावं सपरितापु कहियइ। तथा गुरूपदिष्ट प्रायश्चित्त समाचरण। लक्षणु छइ उत्तरगुणु तिणि करी सहितु स उत्तरगुणु हूंतउं सु श्रावकु 'खिप्पं' किसउं अर्थु ? शीघ्रु विहलउं उपसमावइ। एह अर्थ विषइ उदाहरणु कहइ—

'वाहिव्व सुसिक्खिओ विज्जो' जिम सुशिक्षितु वैद्यु व्याधि उपसमावइ तिम सुश्रेष्ठि श्रावकु पापु उपशामावइ। 'खंपि हु' ईहां 'हु' शब्दु एव शब्द तणइ अर्थि छइ। निःसंतापु पापु करइ ईं जि इसउं अर्थु।

§588) ईहीं जि अर्थु विषइ बीजउ दृष्टांतु कहइ—

जहा विसं कुट्ठगयं मंतमूलविसारया। [८३९]
विज्जा हणंति मंतेहिं तो तं हवइ निव्विसं ॥ तिं

जिम मंत्रमूल विशारद वैद्य मंत्रहं करी विसु कोष्ठगतु शरीरगतु हणइ। 'तो तं हवइ निव्विसं' ति। 'तो' तउ पाछइ 'तं' सु विसु 'हवइ' हुयइ किसुं हुयइ ? 'निव्विसं' अमृतरूपं। अयमभिप्रायः। जेह पात्र रहइं विषु कोष्ठगतु काय संक्रांत हुयउं हुयइ सु पात्रु विषवेदना मूर्छितु हूंतउं तीहं मंत्राक्षर नउ अर्थु अवगिहिं जाणइ नहीं तथापिहिं 'अचिंत्यो मणिमंत्रौषधीनां प्रभाव' इणि कारणि अक्षरमात्र श्रवणिहिं विषमूर्च्छालहरीभंग लक्षणु गुणु तेह रहइं संपजइ।

§589) एह अर्थ विषइ डोकरि एक नउं उदाहरणु कहियइ। तथाहि—

ग्रामि एकि अतिदरिद्रता करी दुःखित डोकरि एक हूंती। हंसउ इसइं नामि तेह नइ दीकिरउ एकु हूंतउ। सु आजीविका कारणि ग्रामलोक तणो वाछरू चारतु। अनेरइ दिनि संध्यासमइ उद्यान वन हूंतउ वाछरू ले आवतउ हूंतउ सु सर्पि डसिउ। मूर्च्छा आवी। तिहां ईं जि विषवेगसंगतु हूंतउ हेठउ ढलिउ। जिम काष्ठु निश्चेष्टु हुयइ तिम धाईं महीपीठि पडिउ। किणिहिं एकि ग्राम माहि आवी करी डोकरी आगइ कहिउं। "ताहरउ दीकिरउ सर्पि डसिउ। बाहिरि अचेतनु धाईं पडिउ छइ"। तउ पाछइ स डोकरी तेतीहीं जि वार मंत्र तंत्र यंत्र पंडित मेलो करी रोयती हूंती दीकिरा कन्हइ आवी। मांत्रिक तांत्रिकादिक सु बालकु मृतकु इसउं जाणी करी जिम गया हूंता तिमहीं जि पाछा आविया। डोकरी पुण स एकली य जि डोकरीकु-संकीलितचित्त हूंती तिहां रही। पुत्र तणइ कर्णमूलि होई करी जिम दिगंगना रहईं पुण कद्रनु आवइ तिम करुणस्वरि उच्चैस्वरि "हा पुत्र ! हंस ! हंस !" इसी परि अभ्रांत स्वांत बोलावती हूंती किणिहिं एकि महा संतापितांग हूंती सकल रात्रि अतिक्रमावइ। "सुमयच्छ हंस ! हंस ! ऊठि" इसी परि पुत्र आगइ भणती तेह डोकरि रहइं जिम एकि गमइ पूर्वदिग्मुख शोभावतं सु हंसु सहस्रकरु ऊगिउ, तिम तेह नउ पुत्रु बीजइ गमइ हंसु पुण ऊठिउ। तउ पाछइ कमलवन जिम तिणि समइ विहसइं तिम तेह डोकरि तणा नयण पुण विहसिया। सु बालकु जीविउ इसउं सांभली करी ग्राम माहि लोकु सगलो धाई तिहां आविउ। प्रभात समइ मांत्रिक तांत्रिकादिक पुण तिहां आविया। मन माहि आश्चर्य [illegible] हूंता तेह डोकरि आगइ इसउं कहइ "तईं एह रहईं किसुं कीधउं ?" वृद्धा भणइ, "मईं [illegible] थिकी रात्रि नीगमी।" गारुडमंत्र माहि 'हंस हंस ! [illegible] ई परि एह नइ कर्णमूलि जपती रोयती [illegible] विषु उपशामिउं, इसउं गारुडिके जाणिउं। तउ पाछइ जिम तिणि हंस' [illegible] अक्षर छइं, तीहं नइ प्र[illegible] प्रभावाक्रांत सचेतनु निर्विषु कीधउ। अक्षरहां जि तमा प्रभावदत्तउ।
अजाणतीहीं पुत्र [illegible]

[illegible] त्रि। [illegible] तिमउ [illegible] हंसु। 3 Bh. P. चारतउ। 4 p. तिहि। 5 p. धाइं। 6 p. अचेतन। 7 P. [illegible] 10 P. एक। 11 P. प्रभात। 12 P. मांत्रिक। 13 P. puts it after तिहां। [illegible] 16 P. repeats. 17 B. omits.

इह भरहे केइ जिया मिच्छद्दिट्ठीउ भद्दया भव्वा।
जे मरिऊणं नवमे वरिसे होहिंति केवलिणो ॥ [८३५]

इसी परि जि कृष्णतर कृष्णतम मिथ्यात्वकर्म प्रकृति छइं तीहं तणी अपेक्षा जि जि शुद्ध शुद्धतर शुद्धतम मिथ्यात्व कर्मप्रकृति छइं तीहं वर्त्तमान जि छइं जीव तीहं रहइं ज्ञानादिगुण शुद्धि प्रकर्षु अशुद्धि अपकर्षु 'स्थान' शब्द तणउ अर्थु सुलभु छइ।

§585) तत्र मिथ्यात्व गुणस्थानु १, सास्वादनु गुणस्थानु २, मिश्रगुणस्थानु ३, अविरत सम्यग्दृष्टि गुणस्थानु ४, देशविरति सम्यग्दृष्टि गुणस्थानु ५, प्रमत्तसंयत गुणस्थानु ६, अप्रमत्त संयत-गुणस्थानु ७, निवृत्त बादरगुणस्थानु एह रहइं अपूर्वकरणु इसउं बीजउं नामु पुण कहियइ अपूर्वकरणु, गुणस्थानु ८, अनिवृत्त बादरगुणस्थानु ९, सूक्ष्म संपराय गुणस्थानु १०, उपशांत मोह गुणस्थानु ११ क्षीणमोह-गुणस्थानु १२, सयोगिकेवलि गुणस्थानु १३, अयोगिकेवलि गुणस्थानु १४, इति चतुर्दश गुणस्थानक नाम जाणिवां। ईहं तणउं स्वरूपु सविस्तरु कर्मग्रंथहं हूंतउं जाणिवउं।

§586) अथ प्रकृत जु कहियइ। मिथ्यादृष्टि गुणस्थान तणी अपेक्षा करी सास्वादन गुणस्थानि थोडउ कर्मबंधु सास्वादन गुणस्थान तणी अपेक्षा करी मिश्रगुणस्थानि स्तोकु कर्मबंधु। मिश्रगुणस्थान तणी अपेक्षा करी अविरत सम्यग्दृष्टि गुणस्थानि अल्पु[1] कर्मबंधु। अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान तणी अपेक्षा करी देशविरति सम्यग्दृष्टि गुणस्थानि स्वल्पु कर्मबंधु हुयइ। सु पुण थोडउ कर्मबंधु अशुभु शुभु पुण पूर्व पूर्व गुणस्थान कन्हा सूक्ष्म संपराय गुणस्थान सीम घणउ घणउ हुयइ। जां सरागसंयमु अराग-संयमु गुणस्थानि वर्त्तमानु शुभाशुभकर्म सवहीं तणउ क्षउ करइ, बंधु एक सातवेदनीय कर्म तणउ करइ। अनइ उपायइ पुण सातवेदनीय कर्मु तिणि कारणि कहिउं सम्यग्दृष्टि रहइं अल्पु कर्मु बंधु हुयइ। तथा च भणितं–

नाणं पढइ नाणं गुणइ नाणेण कुणइ किआइं।
नाणी नवं न बंधइ नाणविणीओ हवे तम्हा ॥ [८३६]

अथ को एकु इसउं कहइ, जिम नीचा हूंतउ पडिउ थोडउं दूहवियइ प्रायिहिं। ऊंचा हूंतउ पडिउ पुण[2] घणउं दुहवियइ। तिम अजाणु पापु करतउ थोडउं कर्मु बांधइ [3] जाणु घणउं कर्मु बांधइ। पाछइ मिथ्यादृष्टि सास्वादन मिश्रगुणस्थान नी अपेक्षा करी सम्यग्दृष्टि गुणस्थानि अल्प कर्मु बंधु किम[4] घटइ? हाथल ज्ञानशुद्धि भावइतउ तेह रहइं पापविषयइ प्रवृत्ति इ जि म जोयइं। इसउं न कहिवूं। जिम ज्ञानशुद्धिवंत जीव बहु[5] सावद्य कृष्यादिक कर्म पाले निर्वहइं ति कृष्यादिकु करइं नहीं। जि पुण अनिर्वहता हूंता[6] अकर्त्तव्यबुद्धि करी करइं ति तथाविह कर्मबंधक न हुयइं। जिम भयदत्तसहोदरि माय-देवि भावकि गृह धर्म सेवा करतेइं अकृतगृह धर्म सेवकि हुयउं। जु ज्ञानवंतु तत्त्वबुद्धि करी पापु करइ सु घणउं कर्मु बांधइ। सु पुण परमार्थवृत्ति करी ज्ञानवंतु जु न हुयइ जु पापु तत्त्वबुद्धि करी करइ। तदुक्तं–

तदज्ञानमेव न भवति यस्मिन्नुदिते विभाति रागगणः।
तमसः कुतोऽस्ति शक्तिर्दिनकरकिरणाग्रतः स्थातुम् ॥ [८३७]

§587) थोडाइं विस तणी जिम विसमगति तिम थोडाइं कर्म तणी विसमगति। इणि कारणि भणइ–

मंति हु सम्मद्दिट्ठिस्स मज्झरियावं सउत्तरगुणं च।
गिप्पं उवसामेइं वाहि व्व सुसिक्खिओ विज्जो ॥ [८३८]

§586) 1 B. drops words up to स्वल्पु। 2 B. omits. 3 B. omits.
4 B. omits. 5 B. omits.

सम्यग्दृष्टि श्रावकि जु अल्पु पापु कर्मु बांधउं सु प्रतिक्रमणि छ द्विहावश्यकि करी सहितु स प्रतिक्रमणु ॥ तथा 'हा दुट्ठु कयं हा दुट्ठु चिंतियं अणुमयंपि हा दुट्ठु' इत्यादिकु पाप समाचरणानंतरु जु अनुतापु परितापु कहियइ तिणि करी सहितु स परियावं सपरितापु कहियइ। तथा गुरूपदिष्ट प्रायश्चित्त समाचरण। लक्षणु छइ उत्तरगुणु तिणि करी सहितु स उत्तरगुणु हूंतउं सु श्रावकु 'खिप्पं' किसउं अर्थु? शीघ्रु विहलउं उपसमावइ। एह अर्थ विषइ उदाहरणु कहइ—

'वाहिव्व सुसिक्खिओ विज्जो' जिम सुशिक्षितु वैद्यु व्याधि उपसमावइ तिम सुविहिं श्रावकु पापु उपशमावइ। 'तंपि हु' ईहां 'हु' शब्दु एव शब्द तणइ अर्थि छइ। निःप्रतापु पापु करइ[1] हीं जि इसउं अर्थु।

[८३९]

§588) ईहीं जि अर्थु विषइ बीजउ दृष्टांतु कहइ—

जहा विसं कुट्ठगयं मंतमूलविसारया।
विज्जा हणंति मंतेहिं तो तं हवइ निव्विसं ॥ ति[1]

जिम मंत्रमूल विशारद वैद्य मंत्रहं करी विसु कोष्ठगतु शरीरगतु हणइ। 'तो तं हवइ निव्विसं'ति। 'तो' तउ पाछइ 'तं' सु विसु 'हवइ' हुयइ किसुं[2] हुयइ? 'निव्विसं' अमृतरूपं। अयमभिप्रायः। जेह पात्र रहइं विषु कोष्ठगतु काय संक्रांत हूयउं हुयइ सु पात्रु विषवेदना मूर्छित हूंतउं तीहं मंत्राक्षर नउ अर्थु जइपिहिं जाणइ नहीं तथापिहिं 'अचिंत्यो मणिमंत्रौषधीनां प्रभाव' इणि कारणि अक्षरमात्र श्रवणिहिं विषमूर्च्छालहरीभंग लक्षणु गुणु तेह रहइं संपजइ।

§589) एह अर्थ विषइ डोकरि एक नउं उदाहरणु कहियइ। तथाहि—

ग्रामि एकि अतिदरिद्रता करी दुस्थित[1] डोकरि एक हूंती। हंसउ[2] इसइं नामि तेह नइ दीकिरउ एकु हूंतउ। सु आजीविका कारणि ग्रामलोक तणां वाछरू चारतउ[3]। अनेरइ दिनि संध्यासमइ उद्यान थन हूंतउ वाछरू ले आवतउ हूंतउ सु सर्पि डसिउ। मूर्च्छा आवी। तिहां ईं जि विषवेगसंगतु हूंतउ हेठउ ढलिउ। जिम काष्टु निश्चेष्टु हुयइ तिम[4] थाई[5] महीपीठि पडिउ। किणिहिं एकि ग्राम माहि आवी करी डोकरी आगइ कहिउं। "ताहरउ दीकिरउ सर्पि डसिउ। बाहिरि अचेतनु[6] थाई पडिउ छइ"। तउ पाछइ स[7] डोकरी तेतीहीं जि वार मंत्र तंत्र यंत्र पंडित मेली करी रोयती हूंती दीकिरा कन्हइ आवी। मांत्रिक[8] तांत्रिकादिक सु बालकु मृतकु इसउं जाणी करी जिम गया हूंता तिमहीं जि पाछा आविया। डोकरी पुण स एकली य जि शोकशंकु-संकीलितचित्त हूंती तिहां रही। पुत्र तणइ कर्णमूलि होई करी जिम दिगंगना रहइं पुण करुनु आवइ तिम करुणस्वरि उच्चैस्वरि "हा[9] पुत्र! हंस! हंस!" इसी परि अश्रांत स्वांत बोलायती हूंती किणिहिं एकि महा संतापितांग हूंती सकल रात्रि अतिक्रमावइ। "सुतवच्छ हंस! हंस! ऊठि" इसी परि पुत्र आगइ भणती तेह डोकरि रहइं जिम एकि[10] गमइ पूर्वदिसिमुख शोभावतं सु हंसु सहस्रकरु ऊगिउ, तिम तेह नउ पुत्रु बीजइ गमइ हंसु पुण ऊठिउ। तउ पाछइ कमलवण जिम तिणि समइ विहसइं तिम तेह डोकरि तणां नयण पुण विहसियां। सु बालकु जीविउ इसउं सांभली करी ग्राम-लोकु सगलो धाई तिहां आविउ। प्रभात[11] समइ मांत्रिक[12] तांत्रिकादिक पुण[13] तिहां आविया। मन माहि आश्चर्यु करता हूंता तेह डोकरि आगइ इसउं कहइं "तइं एह रहइं किसुं[14] कीधउं?" वृद्धा भणइ, "मइं हंस! हंस! इसी परि एह नइ कर्णमूलि[15] जपती रोयती[16] थिकी रात्रि नीगमी।" गारुडमंत्र माहि 'हंस हंस' ए बीजाक्षर छइं, 'तीहं नइ प्रभावि विषु उपशमिउं, इसउं गारुडिके जाणिउं। तउ पाछइ जिम तिणि[17] डोकरी मंत्रार्थु अजाणतीहीं पुत्रु अचेतनु विषाक्रांतु सचेतनु निर्विषु कीधउ। अक्षरहीं जि तणा प्रभावइतउ।

---

§587) 1 B. Bh. have करही जि।
§588) 1 Bh. omits 2 Bh. किमउं
§589) 1 p दुस्थिता। 2 P. हंसु। 3 Bh. P. चारतउ। 4 p. तिमि। 5 p. थ्याई। 6 p. अचेतना। 7 p. सा। 8 p. मांत्रिकादिक। 9 P. हो। 10 P. एक। 11 P. प्रभात। 12 P. मांत्रिका। 13 P. puts it after तिहां। 14 Bh. किसउं। 15 Bh. कर्ण-। 16 P. repeats. 17 B. omits.

§590) दार्ष्टांतु[1] भणइ–

एवं अट्ठविहं कम्मं रागदोस समज्जियं[2]।
आलोयंतो य निंदितो[3] खिप्पं हणइ सु सावओ ॥ [८४०]

'एवं' इसी परि किसउ अर्थु ?

5 जिम ॥ बालकु विषमूर्च्छितु मंत्राक्षरार्थु अजाणतो हूंतउ मंत्राक्षर प्रभावइतउ निर्विषु हुयउ तिम मुग्धजनु जदपिहिं प्रतिक्रमण सूत्रार्थु जाणइ नही तथापिहिं एकि के जीव इसा श्रद्धापरायण[4] हुयइं जि अजाणताई आपणपउ शुद्धउं करइं। न पुण सव्वे। इणिहिं जि कारणि अतिप्रसंगनिषेध निमित्तु 'सु सावओ खिप्पं हणइ' न पुण श्रावकमात्रु इसउं कहिउं। इसी परि दार्ष्टांत भावना करी इह गाथाक्षरार्थु लिखियइ।

10 'एवं अट्ठविहमि'त्ति स विष बालक निर्विष भवन जिम। श्री गौतमस्वामि श्रीसुधर्मस्वामि नाम श्रीगणधरदेव विरचित सलक्षण सूत्राक्षर महाप्रभाववशइतउ अष्टविधु ज्ञानावरणीयादिकु कर्मु 'रागदोस समज्जियं' रागद्वेषपहं करी उपार्जिउं। दिन समइ अनइ रात्रि समइ गुरु आगइ आलोयतउ वचनि करी प्रकासतउ। किसउ अर्थु। जिम बालकु कार्यु अकार्यु बोलतउ हूंतउ काई विमरसइ नहीं जु काई मन माहि हुयइ ॥ कहइ तिम जु पापु जिम कीधउं हुयइ सु पापु तिमहीं जि कहइ, गुरु आगइ प्रकाशइ।
15 'कथनीयमिदमकथनीयमिदं' इसी परि विमासइ नहीं। तथा 'निंदंतो' आपणा आत्मा आगइ 'हा दुट्ठुकयं, हा दुट्ठु चिंतियं अणुमयंपि हा 'दुट्ठ' इत्यादिकि क्रमि करी निंदतउ शोचतउ। 'सु सावओ' सु श्रावकु प्रकृष्ट गुणविशिष्टु गृहस्थु न पुण नाम श्रावकमात्रु। प्रकृष्ट गुणविशिष्टु पुण सु जु षट्स्थान युक्तु हुयइ। छ स्थानक पुण ॥ कहियइं। यथा—

कृतव्रतकर्मा १, शीलवान् २, गुणवान् ३, ऋजुव्यवहारी ४, गुरुशुश्रूषाकरु[5] ५, प्रवचनकुशलु ६॥
20 तथा च भणितं—

कयवयकम्मो १ तह सीलवं २ च गुणवं ३ च उज्ज ववहारी ४।
गुरुसुस्सूसो ५ पवयणकुसलो ६ खलुभावसड्ढत्ति ॥ [८४१]

क्षिप्रु शीघ्रु हणइ निस्सारु करइ इति गाथाक्षरार्थः।

§591) अत्र अष्टविधु कर्म कहिउं सु पुण कहिया पाखइ जाणियइ नहीं तिणि कारणि संक्षेपिहिं
25 मुग्धजन जाणाविवा कर्मविचारु लिखियइ—

कीरइ जिएण जीएणं मिच्छत्ताईहिं चउगइगएणं।
तेणिह भन्नइ कम्मं अणाइयं तं पवाहेणं ॥ [८४२]

देव मनुष्य तिर्यंच नरकगति लक्षण चत्तारि गति, तिहां वर्त्तमानि जीवि प्राणियइ मिथ्यात्वादिकहं हेतुहं करी जिणि कारणि कीजइ तिणि कारणि। इह किसउ अर्थु ? जिनशासनि कर्मु कहियइ, ॥ पुण
30 बीजांकुर जिम प्रवाहि करी अनादि किसउ अर्थु ? जिम बीज हूंतउ अंकुर अंकुर हूंतउं बीजु हुयइ इसी परि अनादि छइ, तिम पूर्व कर्म लगी संसारु[1] हुयइ संसार लगी कर्मु हुयइ। इसी परि अनादि कर्मु छइ। एहु जु अर्थु भणिउ 'अणाइयं तं पवाहेणं'। तेह कर्म नउ बंधु चतुर्विधु हुयइ। यथा–

§592) 'पगइबंधो ठिइबंधो अणुभागबंधो पएसबंधो तत्थ पगइबंधो अट्ठविहो। तंजहा– नाणावरणीयं १, दंसणावरणीयं २, वेयणीयं ३, मोहणीयं ४, आउयं ५, नामं ६, गोयं ७
35 अंतराईयं ८, मूलभेया इमे, एसिं उत्तर भेया। तंजहा– नाणावरणीयं पंचविहं– तंजहा—

§590) 1 i.e. दर्ष्टांत। 2 B.– विरज्जियं। 3 i. e. निंदंतो। Bh. 4 श्रद्धापरायण. 5 Bh. शुश्रूषाकर।
§591) 1 Bh. adds, in the margin, प्रबल।

मइनाणावरणीयं, सुयनाणावरणीयं, ओहिनाणावरणीयं, मणप्पज्जवनाणावरणीयं, केवलनाणावरणीयं ।

§593) दंसणावरणीयं नवविहं तंजहा–चक्खुदंसणावरणीयं, अचक्खुदंसणावरणीयं, ओहिदंसणावरणीयं, केवलदंसणावरणीयं, निद्दा निद्दानिद्दा पयला पयलापयला थीणद्धी । 5

§594) वेयणीयं दुविहं, तंजहा सायवेयणीयं असायवेयणीयं ।

§595) मोहणीयं अट्ठावीसविहं, तंजहा–

तत्र – दंसणमोहणीयं तिविहं, मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्तं सम्मत्तं च, चरित्रमोहणीयं दुविहं कसाय चारित्रमोहणीयं नोकसाय चारित्रमोहणीयं । तत्थ कसाय चारित्रमोहणीयं सोलसविहं तंजहा–

अणंताणुबंधि कोहकसाय चारित्रमोहणीयं, अप्पच्चक्खाण कोहकसाय चारित्रमोहणीयं, सपच्चक्खाण[1] कोहकसाय चारित्रमोहणीयं, संजलण कोहकसाय चारित्रमोहणीयं ४, अणंताणुबंधि माणकसाय 10 चारित्रमोहणीयं, अप्पच्चक्खाण माणकसाय चारित्रमोहणीयं, पच्चक्खाण माणकसाय चारित्रमोहणीयं, संजलणमाणकसाय चारित्रमोहणीयं, ८ अणंताणुबंधि मायाकसाय चारित्रमोहणीयं, संजलण अप्पच्चक्खाण मायाकसाय चारित्रमोहणीयं, पच्चक्खाण मायाकसाय चारित्रमोहणीयं, अप्पच्चक्खाण लोभकसाय मायाकसाय चारित्रमोहणीयं १२, अणंताणु लोभकसाय चारित्रमोहणीयं, संजलण लोभकसाय चारित्रमोहणीयं १६ । 15 चारित्रमोहणीयं, पच्चक्खाण लोभकसाय चारित्रमोहणीयं, नवविहं तंजहा–

हास नोकसाय चारित्रमोहणीयं, रति नोकसाय चारित्रमोहणीयं, २ अरति नोकसाय चारित्रमोहणीयं ३, भय नोकसाय चारित्रमोहणीयं ४, सोग नोकसाय चारित्रमोहणीयं, दुगंछा नोकसाय चारित्रमोहणीयं, पुरुषवेद नोकसाय चारित्रमोहणीयं ८, नपुंसक 20 चारित्रमोहणीयं, स्त्रीवेद नोकसाय चारित्रमोहणीयं, वेद नोकसाय चारित्रमोहणीयं ९ ।

§596) आउयं चउव्विहं तंजहा—

नरयाउयं, तिरियाउयं, मणुयाउयं, देयाउयं, ४ ।

§597) नामं बायालीसविहं तंजहा—

गइनामं १, आइनामं २, सरीरनामं ३, अंगोवंगनामं ४, विहायोगतिनामं ५, बंधणनामं ६, संघयणनामं ७, संठाणनामं ८, संघायणनामं ९. फरसनामं १०, रसनामं ११, गंधनामं १२, वन्ननामं 25 १३, आणुपुव्वीनामं १४, अगुरुलहुनामं १५, उवघायनामं १६, परायायनामं १७. आयवनामं १८, उज्जोयनामं १९, उस्सासनामं २०, निम्माणनामं २१, पत्तेयसरीरनामं २२, साहारण सरीरनामं २३. तसनामं २४. थावरनामं २५, सुभगनामं २६, दुभगनामं २७, सूसरनामं २८, दूसरनामं २९, सुहनामं ३०, असुहनामं ३१, सुहुमनामं ३२, बायरनामं ३३, पज्जत्तनामं ३४, अपज्जत्तनामं ३५, थिरनामं ३६, अथिरनामं ३७, 30 आइज्जनामं ३८. अणाइज्जनामं ३९, जसनामं ४०, अजसनामं ४१, तित्थयरनामं ४२ ।

§598) गोयं दुविहं, तंजहा उच्चगोयं१, नीचगोयं २ ।

§599) अंतराइयं पंचविहं, तंजहा–

दाणंतराइयं १, लाभंतराइयं २, भोगंतराइयं ३, उवभोगंतराइयं ४, वीरियंतराइयं ५, । पगइबंधो संमत्तो ।

§600) अह ठिइबंधो भण्णइ – नाणावरणीयस्स दंसणावरणीयस्स वेयणीयस्स अंतराईयस्स 35 तीसं कोडाकोडीओ सागरोवमाणं । उक्कोसा ठिई पन्नत्ता – मोहणीयस्स सत्तरि सागरोवम कोडाकोडीओ

§595) 1 Bh. omits स–।

नामस्स गोयस्स य वीस सागरोवम कोडाकोडीओ आउयस्स तित्तीसं सागरोवमा पुव्वकोडी तिभागसहिया। नामगुत्ताणं जहन्ना ठिई अट्ठमुहुत्ता वेयणीयस्स बारसमुहुत्ता अंतोमुहुत्ता सेसाणं। ठिइबंधो सम्मत्तो।

सुभासुभकर्मपुद्गलेसु जो रसो सो अणुभागो वुच्चइ। तत्थसुभेसु महुरो रसो, असुभेसु अमहुरो 5 रसो, तस्स बंधो अणुभागबंधो।

अणुभागबंध विचारु गहनु छइ तिणि कारणि विस्तरी करी लिखिउ नहीं।

अणुबंधो सम्मत्तो।

§601) पएसा कम्मवग्गणा, खंधा तीहं तणउ बंधु, जीवप्रदेसहं सउं यत्ति लोह संबंध जिम अथवा खीर नीर संबंध जिम जु एकरूपता भयनु सु प्रदेसबंधु कहियइ। तथा च भणितं—

10 जीवकर्मप्रदेशानां यः सम्बन्धः परस्परम्।
कृशानुलोहवद्धेतोस्तं बन्धं जगदुर्बुधाः॥ [८४३]

सु पुण स्पृष्ट बद्ध निधत्त निकाचित करणभेदइतउ चतुर्विधु हुयइ। समूहगत सूचिका समवाय जिम स्पृष्ट कर्मबंधः। दवरकबद्ध सूचिका संबंधबद्ध कर्मबंधः। वर्णांतरित दवरकबद्ध सूचिका संबंधवन्निद्धत्त कर्मबंधः। अग्निध्मात सूचिका समवायमेलयन्निकाचित कर्मबंधः। अथवा कोरी भीति ऊपरि 15 चूर्ण पूर्ण पुट्टलिका खोटियइ तउ चूर्ण तणउ परागु भीति लागइ तिम जीवप्रदेसहं अनइ कर्मप्रदेशहं रहइं जु संबंधु हुयइ सु स्पृष्ट कर्मबंधु कहियइ १।

भीनी भीति[1] चूर्ण पुट्टलिका पखोडणि कीधइ हूंतइ भीति सूकी हुंती जु चूर्ण संबंधु भीति रहइं तेह[2] सरीखउ जीवप्रदेस कर्मप्रदेस संबंधु जु जुयइ सु बद्ध कर्मबंधु कहियइ २।

छोह टीप सरीखउ जीवकर्म प्रदेसहं रहइं जु संबंधु सु निधत्त कर्मबंधु कहियइ. ३।

20 सर्व घोल छोह सरीखउ जीवकर्म प्रदेसहं रहइं जु संबंधु सु निकाचितु कर्मबंधु कहियइ ४।

एउ सगलू पूर्वभणितु संक्षेपिहिं प्रदेशबंधु कहियइ। एह तणउं सविस्तरु स्वरूपु गहनु छइ तिणि कारणि लिखिउं नहीं। 'पएसबंधो सम्मत्तो'।

इति संक्षेपिहिं कर्म तणउ विचारु लिखिउ छइ। जु को विस्तरि करी कर्म विचारु जोयइ तिणि कर्मग्रंथ पढी, गुरु कन्हइ वखाणवी, अर्थु हिया माहि अवधारी करी सदा चीतविवउ। अनेराइं श्रद्धा 25 नयंतहं भविकलोकहं आगिलइं गमइं सु निश्चितु जाणतो हूंतो कहिवउ। संशइ हूंतइ पुण कहिवउ नहीं-मिथ्यात्व प्ररूपणा भयइतउ।

§602) अथ 'एवं अट्ठविहं' इत्यादि गाथा करी जु अर्थु कहिउ सोई जि अर्थु विशेषि करी कहइ।

कयपावो वि मणूसो आलोइय निंदिओ गुरुसगासे।
30 होइ अइरेगलहुओ ओहरियभरुव्व भारवहो॥ [८४४]

'कय पावो वि' ईहां 'अपि' शब्दु अकृत पाप रहइं संग्रहार्थु। तउ पाछइ इसउं अर्थु-जिणि थोडउं सउं पापु कीधउं हुयइ सु जिम 'अनुदरा कन्या' इसइ भणियइ[1] उदर पातइ कन्या गमियइ। स पुण संभवइ नहीं तिणि कारणि 'तुच्छोदराकन्या' गमियइ तिम संसारि माहिं[2] अकृतपाप पुरुष संभवइ नहीं। पाछइ अकृतपापु इसइ भणियइ[1] तुच्छपापु पुरुष लाभइ। तउ पाछइ न पुण अकृतपापु तुच्छपापु 35 पुरुषु कृतपापु विरचित प्रचुरपापु पुरुषु पुण गुरुसगासि आलोचितु। किसउ अर्थु? जिम पापु कीधउं

601) 1 Bh. adds तिणि। 2 B. omits.
602) 1 Bh. भणिइ। 2 B. माहीं।

हुयइ तिमहिं जि जे किमइ कृतालोचनु हुयइ। तथा आपणी साखि निंदितु किसउ अर्थु ? 'हा दुट्ठु कयं' इत्यादि प्रकारि करी कृतात्मनिंदनु हुयइ। तउ जिम 'ओहरिय भरुव्व भारवहो'। किसउ अर्थु ! 'भारवहु' भणियइ भार ऊपाडणहारु पुरुषु। 'ओहरियभरो' किसउ अर्थु ? मुक्तभारु हूंतउ 'होइ' हुयइ, किसउ हुयइ ! 'अइरेग लहुओ।' अति हलयउ हुयइ, तिम श्रावक पुण पापभार रहितु हूंतउ अतिरेकलघु। अति हलयउ तुंबक जिम ऊर्द्धगामी हुयइ। अत्र 'मणूसो' ईहां मनुष्य ग्रहणु मनुष्यही जि रहइं प्रति- 5 क्रमण योग्यता जाणायिवा निमित्तु कीधउं।

§603) अथ एकदायारंभयंत ही श्रावक हीं[1] रहइं आवश्यकि करी मुक्ति हुयइ। इसा अर्थ प्रकटिया कारणि कहइ—

आवस्सएण एएण सावओ जइ वि बहुरओ होइ।
दुक्खाणमंतकिरियं काही अचिरेण कालेण ॥　　[८४५]　10

श्रावकु गृही 'जइ वि बहुरओ होइ' जद्यपिहिं बहुपाप कर्मारंभु हुयइ। तथापिहिं 'सामाइयं चउवीसत्थो[2] वंदणं[3] पडिक्कमणं काउस्सग्गो पच्चक्खाणं' इत्येवंरूपु जु छइ छव्विहु भावावश्यकु तिणि करी, न पुण दंत मुख क्षालनरूपु छइ द्रव्यावश्यकु तिणि करी 'दुक्खाणमंत किरियमि'ति। सारीर मानस लक्षण छइं दुक्ख कष्ट तीह नीं 'अंतकिरिया' विनासु। 'काही अचिरेण कालेणे'ति। अचिरि थोडइ कालि समइ करी करिसिइ। दुक्ख नी अंतकिरिया मुक्ति कहियइ। तेह रहइं अनंतरु हेतु यथाख्यातु चारित्रु 15 परंपरा हेतु पउ आवश्यकु पुण हुयइ जिम श्रेष्ठि सुदर्शन रहइं हूयउं।

§604) अथ जि के वीसरिया छइं अतीचार तीहं रहइं पडिक्कमिवा निमित्तु कहइ–

आलोयणा बहुविहा नयसंभारिया पडिक्कमणकाले।
मूलगुण उत्तरगुणे तं निंदे तं च गरिहामि ॥　　[८४६]

एक दिवस माहि अथवा रात्रि माहि जु जु वस्तु इंद्रिय मनोभिरामु अथवा अणभिरामु जीवु 20 देखइ सांभलइ अणुहवइ। तेह तेह वस्तु विषइ आर्त्तध्यानरौद्रध्यानवशु हूंतउ जेतला विकल्प कल्पइ तेतला वली वलता सांभरइं नहीं। अत आह–

आलोयणा बहुविहा। आलोचनीय गुरु आगइ प्रकाशनीय पापस्थान बहुविध प्रभूतप्रकार ति पुण मूलगुण पांच अणुव्रत उत्तरगुण त्रिन्हि गुणव्रत चत्तारि शिक्षाव्रत तीहं नइ विषइ पडिक्कमणकालि आलोचनादि निंदा गरिहावसरि सांभरी नहीं चित्ति आवी नहीं। चित्तशून्यतादि प्रमादवशइतउ 'तं 25 निंदे तं च गरिहामि'। पूर्ववत्।

§6) 'एवं इसी परि प्रतिक्रमण कारकु आलोचना निंदा गरिहा करी धर्माराधना निमित्तु काइ करी अभ्युत्थितु हूंतउ। 'तस्स धम्मस्स केवलि पन्नत्तस्स' इसउं मन माहि करतउ हूंतउ भाव- मंगल गर्भु।

अब्भुट्ठिओमि आराहणाए विरओ मि विराहणाए।　30
तिविहेण पडिक्कंतो वंदामि जिणे चउव्वीसं ॥　　[८४७]

केवलिप्रज्ञप्त सर्वज्ञभाषित तेह धर्म, किसउ अर्थु ?

श्रावकधर्म तणी आराधना पूर्णलाभु तेह निमित्तु 'अम्हि' हउं अभ्युत्थितु उद्यमवंतु तेह तणी विराधना खंडना तेह हूंतउ विरतु निवर्त्तिउ। 'तिविहेण पडिक्कंतो' इति मन वचन काय लक्षण छइं त्रिन्हि

603) 1 Bh. omits. 2 Bh. चउवीसत्थओ। 3 Bh. वंदणयं।

करण तिणि तिविहि करीनि करी पडिक्कंतु प्रतिक्रांतु पापकर्म हूंतउ निवृत्तु 'वंदामि जिणे चउव्वीसं' ति। जिन ऋषभादिक श्री महावीरावसान चउवीस वांदउं इति अंतभाव मंगलं।

तथा च भणितं-मंगलादीनि मंगलमध्यानि मंगलांतानि शास्त्राणि श्रेयस्कराणि भवंति—

इसी परि भावजिन वांदी करी स्थापनाजिन वंदना निमित्तु भणइ—

5 जावंति चेइयाइं उड्ढे य अहे य तिरिय लोए य।
सव्वाइं ताइं वंदे इह संतो[1] तत्थ संताइं[2] ॥४४॥ सुगमा [८४८]

नवरं इह संतो[1] इहां हूंतउ हउं तत्थ संताइं[2] तिहां त्रैलोक्य माहि हूंता जेतलां चैत्य ऊर्द्धलोकि अधोलोकि तिर्यग्लोकि छइं तेतलां सव्वे वांदउं।

§606) अत्र प्रस्तावइतउ त्रैलोक्यगत चैत्यसंख्या बिंबसंख्या च इतयानि करी लिखियइ—

10 श्री ऋषभवर्द्धमानकचन्द्राननवारिषेण्यजिनचंद्रान्।
तद्भवनबिम्बमानानुकीर्तनेनेष संस्तौमि ॥ [८४९]
भवनपतिव्यानमन्तरतारकवैमानिकालयेषु वराः।
त्रिद्वाराः श्रुतभणिताः प्रत्येकं पञ्चपञ्चसभाः ॥ [८५०]
जन्माभिषेकभूषा व्यवसितिं सौधर्मनामिकास्तास्तु।
15 मुखमण्डपादि मण्डपमणिपीठस्तूपचद्वाराः ॥ [८५१]
स्तूपे स्तूपे दिशि दिशि प्रतिमैकैकास्तितस्तदनु पीठगतौ।
धर्मध्वजचैत्यतरू प्रवरजला तदनु पुष्करिणी ॥ [८५२]

§607) भवनपतीनां मध्ये मणितोरणकलसकेतनछत्रैः[1]।
चैत्यानि सन्ति कोट्यः सप्तद्वासप्ततिर्लक्षाः ॥ [८५३]
20 त्रिद्वाराणि सुरत्नस्तम्भसहस्रोच्छ्रितानि चैत्यानि।
एषु मुखमण्डपाद्यं सभावदुक्तं श्रुते सर्वं ॥ [८५४]
द्वात्रिंशदुच्चभावे पञ्चाशद्योजनानि दीर्घत्वे।
प्राथिम्नि च पञ्चविंशतिरेतेषां मानमसुरेषु ॥ [८५५]
तदर्धप्रमितानि तु नागादिषु नवसु तानि भणितानि।
25 तन्मध्ये प्रत्येकं प्रतिमा अष्टोत्तरं च शतम् ॥ [८५६]
षड्भिः सभासु पञ्चसु विंशं शतमस्ति जिनगृहेष्वेवं।
भवने भवने वन्दे प्रतिमानां शतमशीत्यधिकम् ॥ [८५७]
अधिकानि च दशकोटी शतानि सैकोननवति कोटीनि।
लक्षाणि षष्टिमेवं नमामि भवनेषु बिम्बानाम् ॥ [८५८]

30 §608) क्रोशाधिक षड्योजन पृथूनि तद्द्विगुणितायतानि तथा।
नवयोजनोन्नतानि व्यन्तरनगरेषु चैत्यानि ॥ [८५९]
त्रिमुखान्यमितानि पुनर्वदन्ति चैत्यानि पूर्वमुनिवृषभाः।
ज्योतिर्व्यन्तरकाणां सुराजधानीषु चेतांसि ॥ [८६०]

---

§605) 1 B. Bh. संतो। 2 B. Bh. संता-।
§607) 1 B. Bh. कलस। i. e. कलश।

ज्योतिष्केषु विसंख्या जिनालयास्त्रिदशमालया महिताः ।
तेष्वप्यसंख्यसंख्याः संख्यावद्भिः स्तुताः प्रतिमाः ॥ [८६१]

§609) दशकल्पनिवासीन्द्राश्चत्वारिंशच्च लोकपालसुराः ।
शक्रेशानमहिष्यः षोडश तद्राजधानीषु ॥ [८६२]
द्विर्दश भवनपतीन्द्रास्तद्देव्योऽष्टादशोत्तरं च शतम् ।
तदशीति लोकपालास्तेषामपि राजधानीषु ॥ [८६३]
नन्दीश्वर रुचकादिषु शतद्वयं चतुरशीति संयुक्तम् ।
स्वविमानभुवनजिनगृहसमानपंचाशि चैत्यानाम् ॥ [८६४]
नन्दीश्वरे द्विपञ्चाशद्रुचके कुण्डले च चत्वारि ।
योजनशतपञ्चाशद्द्वासप्तति दीर्घपृथुलोच्चाः ॥ [८६५]
जिनभुवनपङ्क्तिरेषा चतुर्मुखा तदपरे' त्रिमुखा ।
उभयत्र प्रतिवक्त्रं मुखमण्डप मुख्यपट्कं च ॥ [८६६]
त्रिमुखे चतुर्मुखेपि च चैत्ये वन्देऽष्टशतमिताः प्रमिताः ।
स्तूपाधिनास्तु वक्त्रे द्वादशषोडश यथासंख्यम् ॥ [८६७]

§610) प्राच्यां सप्तविंशतिरर्घा ऋषभस्य चान्यतीर्थेशाम् ।
अन्यदिशासु क्रमशस्तथैकशः स्तूपगाः प्रतिमाः ॥ [८६८]
मेरुष्वशीतिरेका वक्षस्कारेष्वशीतिरपरा च ।
वर्षनगेषु त्रिंशद्विंशतिरिभदन्तकेषु तथा ॥ [८६९]
चत्वारि चेषुकारा चन्द्रेषु मनुजोत्तरे च चत्वारि ।
द्विशतीमष्टादश वा नमामि चैतानि चैत्यानि ॥ [८७०]
एतेषामिदमुक्तं प्रमाणमिह योजनानि षट्त्रिंशत् ।
पञ्चाशदर्द्धपञ्चाशदुच्छ्रया यामपृथुतासु ॥ [८७१]

§611) दिग्गजचत्वारिंशत्सु मेरुचूलासु पञ्चसु' दीर्घेषु ।
वैताढ्येषु च सप्ततिशतं च जम्बूतरावेकम् ॥ [८७२]
तत्परिवेषे जम्बूशिखरिष्वष्टोत्तरं शतं च तथा ।
तद्बाह्ये वनषण्डे चाष्टौ दिग्विदिगवस्थानात् ॥ [८७३]
अन्येषु नवसु चैतच्छाल्मलिमुख्येषु निखिलमवसेयम् ।
सप्तत्यधिकैकादशशतानि चैत्यानि कुरु दशके ॥ [८७४]
काञ्चनगिरिषु सहस्रं त्रिशती साशीतिरस्ति कुण्डगता ।
विंशतिरिह यमकस्था सुदृत्तवैताढ्यगा सैव ॥ [८७५]
पद्मादिषु चाशीतिर्गङ्गादिषु सप्ततिश्च चैत्यानि ।
स्थानकदशकस्थान्यपि समानि मानेन चैमानि ॥ [८७६]

§609) 1 B. तदपमे । Bh. तदपरेसमे ।
§611) 1 Bh. omits. –सु ।

चत्वारिंशत्समधिकधनुश्शतुः पूर्वदशशतसमुच्चाः ।
क्रोशायामाः क्रोशार्द्धं पृथुला चैत्यमालेयम् ॥ [८७७]
पञ्चशती त्रिसहस्री चैत्यानां सप्तदशयुता भूमौ ।
द्वाविंशतिः सहस्रा लक्षचतुष्कं शतद्वितयम् ॥ [८७८]
5 सार्द्धानि च बिम्बानां तिर्यग्लोके मयार्च्यते भक्त्या ।
कल्पेषु जिनावासा नन्दीश्वरचैत्यसमतुल्याः ॥ [८७९]

§612) सप्तनवतिः सहस्राश्चैत्यानां चतुरशीतिलक्षाश्च ।
त्रियुक्तविंशत्यधिकाः सुरलोके तेषु बिम्बानाम् ॥ [८८०]
कोटीशतं द्विपञ्चाशत्कोट्यो लक्षकाश्चतुर्नवतिः ।
10 स सहस्रचतुश्चत्वारिंशत्षष्ट्यधिकसप्तशती ॥ [८८१]
कोट्योऽष्ट सप्तपञ्चाशल्लक्षाः पञ्चकं शतानां च ।
चत्वारिंशत्सहितं त्रिभुवन चैत्यावलिं वन्दे ॥ [८८२]
कनकमयी तनुयष्टिः करचरणनखादिकाः परेऽवयवाः ।
शाश्वतजिनबिम्बानां रक्तादिकवर्णरत्नमयाः ॥ [८८३]
15 मणिपीठोपरि देवच्छन्दः सिंहासनं च तस्योर्ध्वम् ।
पर्यङ्कासनसंस्था ऋषभसमाः शाश्वतप्रतिमाः ॥ [८८४]
पृष्ठे छत्रधरार्च्चा पार्श्वे द्वे चामरग्रहे प्रतिमे ।
नागौ भूतौ यक्षौ कुण्डधरौ द्वौ प्रति प्रतिमम् ॥ [८८५]
कोटिशतपञ्चदशकं द्विकचत्वारिंशतामिताः कोट्यः ।
20 लक्षाष्टा पञ्चाशत्साहस्री सप्तषष्टिश्च ॥ [८८६]
चत्वारिंशत्कलिता त्रैलोक्ये शाश्वतीरिमाः प्रतिमाः ।
नित्यं नमामि भक्त्या पराणि तीर्थान्यपि प्रमदात् ॥ [८८७]
प्रातः प्रमोदपुलकाङ्कित कायपष्टि-
स्तोत्रामृतास्वादविमर्शनहृष्टदृष्टिः ।
25 यः स्तोष्यते सकलशाश्वततीर्थराज-
स्तोत्रं गमिष्यति रमां स जिनाधिराजः ॥ [८८८]
इत्थं स्तुताः श्रुतमहाहिमशालिचित्त–
विद्यार्णवसंगतगुरुः सुरैश्च ।
त्रैलोक्यशाश्वतजिनप्रतिमाः समस्ता
30 सर्वं दिशन्तु तदनुग्रहपारगं स्ताम् ॥ [८८९]
इति त्रैलोक्यशाश्वतजिनचैत्यस्तवनं समाप्तमिति ।

(613) आठ कोडि सत्तावन लाख पांचसइं चिहाल शाश्वतचैत्य त्रैलोक्यगत पद स्तवन माहि कहियां छइं। पनरह कोडिसइं बइतालीस कोडि अठावन लाख सतसठि सहस्र चियालीसे आगला शाश्वत प्रतिमा एवं संख्या करी एह स्तव माहि कही छइं। तत्र सात कोडि बहुत्तरि लाख भवनपति माहि शाश्वत चैत्य छइं। यथा—

§611) 2 Lb. निम्बे।

असुरा १ नागा २ विज्जू ३ सुवन्न ४ अग्गी य ५ वाय ६ थणिया य ७ । उदही ८ दीव ९ दिसा १० वि य दस भेया भवणवासीणं ॥ [८९०]

तत्र-असुर निकाय माहि चउसट्ठिलाख, नागकुमार निकाय माहि चउरासीलाख, । सुवर्णकुमार निकाय माहि बहुत्तरि लाख, वायुकुमार निकाय माहि छन्नवइलाख । द्वीपकुमार, दिसाकुमार उदधिकुमार, विद्युत्कुमार, स्तनितकुमार अग्निकुमार नामक छइं छ निकाय तींहं माहि छहत्तरि छहत्तरि लाख शाश्वत चैत्य छइं । एवंकारइ पूर्वोक्त सात कोडि बहुत्तरिलाख शाश्वतचैत्य भवनपति माहि इसी परि हुयइं । व्यानमंतर माहि असंख्यात शाश्वतचैत्य हुयइं जो इसी माहि असंख्यात शाश्वतचैत्य हुयइं । पृथ्वीतलि त्रिन्हि सहस्र पांचसइं सतरह शाश्वतचैत्य भणिया छइं । ऊर्ध्वलोकि चउराशीलाख सत्ताणवइ सहस्र त्रेवींसे करी अधिक शाश्वत चैत्य छइं । तत्र सौधर्म देवलोकि बत्रीसलाख । ईशान देवलोकि अट्ठावीसलाख । सनत्कुमार देवलोकि बारहलाख । माहेंद्र देवलोकि आठलाख । ब्रह्म देवलोकि चत्तारिलाख । लांतक देवलोकि पंचास सहस्स । महाशुक्र देवलोकि चियालीस सहस्स, । सहस्रार देवलोकि छ सहस्स । आनत देवलोक प्राणत देवलोक बिहुं चत्तारिसइं । आरण देवलोक अच्युत देवलोक बिहुं त्रिन्हिसइं ।

हिट्ठिमगे विज्जतिगे एकु सउ इगारोत्तरु मज्झिमगे विज्जतिगे एकु सउ सत्तोत्तरु । उवरिमगे विज्जतिगे एकु सउ विजय वेजयंत जयंत । अपराजित सर्वार्थ नामासिद्धि नामसु पंच पंचोत्तरेसु पंच सासयचेयाणि ।

एवंकारइ पूर्वोक्त चउरासी लाख सत्ताणवइ सहस्स त्रेवीसे करी अधिक शाश्वतचैत्य ऊर्ध्वलोकि छइं । एकि एकि चैत्यि गर्भगृह माहि अट्ठोत्तरुसउ अट्ठोत्तरुसउ जिनबिंब छइं । एकि त्रिद्वार चैत्य, एकि चतुर्द्वार चैत्य छइं । द्वारि द्वारि स्तूपगत चत्तारि चत्तारि जिनप्रतिमा छइं । एवं सभा पुण त्रिद्वार छइं । द्वारि द्वारि स्तूपगत चत्तारि चत्तारि जिनप्रतिमा छइं । एवंकारइ असीसउ असीसउ जिनबिंब भवनि भवनि विमानि विमानि छइं । तथा पृथिवीगत पुण जि शाश्वत चैत्य छइं तिहां पुण पूर्वोक्त साठि चैत्यगत चउवीसउं सउ चउवीसउं सउ जिनबिंब छइं । बीजे सविहुं वीसउं सउ वीसउं सउ जिनबिंब छइं । एवंकारइ सर्वत्रैलोक्यगत पनरह कोडि सइं बइतालीस कोडि अट्ठावनलाख सत्तसट्ठि सहस्स चियालीसे करी अधिक जिनप्रतिमा छइं ।

इति संक्षेपिहिं त्रैलोक्य शाश्वतचैत्य जिनबिंब संख्या कही । विस्तर प्ररूपणा स्तवनार्थइतउ जाणिवी । यथा—

'श्रीऋषभे'ति । श्रीऋषभ वर्द्धमान २ श्री चंद्रानन ३ श्री वारिषेण ४ इसां नामहं करी सर्वइ जिनबिंब शाश्वतां वांदी करी । तींहं तणां भवन देवगृह । अनइ बिंब प्रतिमा । तींहं तणउं मानु संख्यानु । तेह तणइ अनुकीर्त्तनि सिद्धांतानुवादि करी ति जिनचंद्र एव हउं 'संस्तौमि' संस्तवउं कहउं ।

'भवनपती'ति । भवनपति व्यंतर ज्योतिष्क वैमानिक चतुर्विध देवनिकाय निवासहं माहि । उपपात १ अभिषेक २ अलंकार ३ व्यवसाय ४ सौधर्माभिधान पांच पांच सभा छइं । तत्र उपपात सभा माहि छइं उपपातशय्या तींहं ऊपरि देव ऊपजइ । अभिषेकसभा माहि स्वर्णरत्न सिंहासनोपविष्ट देव रहइं सेवक देव तीर्थोदक सुगंधजलपूर्ण स्वर्णरत्नकलसहं करी अभिषेकु करइं । अलंकारसभा माहि नानाविध निज पुण्यानुसारि स्वर्णरत्नमुक्तालंकार स्ववांछानुसारि पहिरइं । व्यवसायसभा माहि रमणीय स्वर्णरत्नमय शाश्वत पुस्तक वाचइं, देव नी स्थिति देव जाणइं । सुधर्मासभा माहि सभा पूरी देव स्वकीया धिपत्यु भोगवइं । एक एक सभा पूर्वदक्षिणोत्तर द्वारत्रय सहित छइ । द्वारि द्वारि मुखमंडपु १, अखाडामंडप सहितु प्रेक्षामंडपु २, मणिपीठस्तूपु ३, मणिपीठ धर्मध्वजु ४, मणिपीठ चैत्यतरु ५, पुष्करिणी ६, एवं नामक छ छ वस्तु छइं । स्तूपि स्तूपि चत्तारि चत्तारि जिनबिंब चतुर्दिग्विभागावस्थित छइं । इत्यार्या चउ नउ अर्थु ॥ ४ ॥

§614) 'भवनपतीनां मध्ये' इति । दसविध पूर्वभणित असुरादिक छइं भवनपति । तींहं तणां [illegible] जिनायतोरण मणिमयकलस भृंगार सुवर्णमय ध्वजादिकहं करी उपलक्षित स्तंभ

शतमहस्र । संनिविष्ट विनिष्ट मत्त वारण छाजायलि मकरमुख सिंहमुख गजमुख वृषभमुख तुरगमुख मृगमुखादि रूपकवर्णकाभिराम[1] । सातकोडि बहत्तरि लाख चैत्यशाश्वतां छइं । ति सर्वइ त्रिद्वार मुखमंडपादिक समोक्त स्थानक पद्म सहित छइं ॥६

'द्वात्रिंशदुच्चभावे' इति । तत्र असुरनिकाय माहि चैत्यप्रमाणु । यथा बत्रीस जोयण ऊंचपणि । 5 पंचास जोयण लांबपणि । पंचवीस जोयण पिहुलपणि ॥७

'तत्नेमी'ति-। तीहं असुरकुमार निकाय माहि[2] चैत्यहं तणउं नेमि अर्थु ।

तेह समान 'तन्नेमि प्रमित' कहियइं । 'नागादिषु नवसु' इति ॥

नागकुमार १, विद्युत्कुमार २, सुवर्णकुमार ३, अग्निकुमार ४, वायुकुमार ५, स्तनितकुमार ६, उदधिकुमार ७, द्वीपकुमार ८, दिशाकुमार ९, नामक छइं नव भवनपति निकाय तीहं माहि 'तन्नेमि प्रमित' 10 छइं । किसउं अर्थु ? सोल जोयण ऊंचपणि 'तानि भणितानी' ति ति चैत्य भणियां तीर्थकर गणधरहं कहियां ॥ तथा पंचवीस जोयण लांबपणि, सार्द्ध द्वादश जोयण पिहुलपणि छइं । तीहं सवहीं माहि अठोत्तरसउ अठोत्तरसउ जिनप्रतिमा छइं ॥८॥

'वह्निः समासु पंचसु' इति । पूर्वोक्त जि छइं पांच पांच सभा तीहं तणां द्वारहं त्रिन्हि त्रिन्हि जि छइं स्तूप तिहां छइं द्वादश द्वादश प्रतिमा । चार पंचउं साठि ति साठि प्रतिमा । अनइ वीसउं सउ 15 बिंब जिनभवन माहि । यथा–

अठोत्तर गभारा माहि, बारह बिंब स्तूप त्रय तणां सर्वइ मिलीयां वीसउंसउ । अनइ साठि सभा तणां इणी परि भवनि भवनि प्रतिमा तणउं असीसउ वांदउं ॥९॥

अथ भवनपति बिंब प्रमाणु कहियइ—

'स्वपिकानि च दशकोटी शतानी'ति । त्रिहुं करी अधिकदश कोडि सइं[3] । किसउ अर्थु ? तेरह 20 कोडिसइं, इगुणनवइ कोडि, साठि लाख बिंब, सर्व भवनगत छइं ॥१०॥

§615) अथ व्यंतर नगरगत चैत्यमानु कहियइं । नव जोयण ऊंचपणि, सार्द्धद्वादश जोयण लांबपणि, छ जोयण एकु गाऊ पिहुलपणि, व्यंतर नगरहं माहि चैत्य छइं ॥११॥

'त्रिमुखानी' ति सुगमा ॥१२॥

'ज्योतिष्केष्वि'ति । ज्योतिर्निकाय माहि, 'विसंख्य,' किसउ अर्थु ? असंख्यात जिनालय छइं ति 25 पुण विशालां देवनिकाय तेहे 'महित' पूजित छइं । 'तेष्वप्यसंख्यसंख्या' इति । 'अपि' शब्दु समुच्चय अर्थि । न केवलं व्यंतरगत असंख्यात छइं तीहं माहि असीसय असीसय जिनप्रतिमा भावि करी जिनप्रतिमा पुण असंख्यात संख्यावंतहं महाबुद्धिमंतहं पंडितहे 'स्तुताः' किसउ अर्थु ? कथिताः ॥१३॥

§616) अथ ऊर्ध्वलोकस्थितां चैत्य वांदियइं । 'दशकल्पे'ति । 'त्रिदशे'ति । 'मंदरेश्वरे'ति सौधर्मेंद्र १, ईशानेंद्र २, सनत्कुमारेंद्र ३, माहेंद्र ४, ब्रह्मेंद्र ५, लांतकेंद्र ६, महाशुक्रेंद्र ७, सहस्रारेंद्र ८, 30 प्राणतेंद्र ९, अच्युतेंद्र १०, इसां नामहं छइं दशकल्प तिवारभिइं दश देवलोक तणा दश इंद्र । तीहं दशहीं इंद्रहं[1] तणा चत्तारि चत्तारि लोकपाल सुरेंद्रचउक्कइं चियालीस लोकपाल देव । तथा 'शक्रेशान महिष्य' इति । सौधर्मेंद्र ईशानेंद्र तणी आठ आठ अग्रमहिषी । आठ दूणउं सोल तीहं इंद्रादिकहं तणी यथासंख्य दश चियालीस सोलस संख्यात छइं राजधानी ति पुण सर्वं संख्या करी छासट्ठि छइं तीहं माहि । १४॥

35 'द्विदश' वि बार दस, बीससंख्य भवनपतींद्र चमरेंद्र १, बलींद्र २, धरणेंद्र ३, भूतानंदेंद्र ४, वेणुदेवेंद्र ५, वेणुदालींद्र ६, हरिकांतेंद्र ७, हरिस्सहेंद्र ८, अग्निशिखेंद्र[2] ९, अग्निमाणवेंद्र १०, पूर्णेंद्र ११.

§614) 1 B.-कमनीय 2 B. omits. 3 B. D.-सइं ।
§616) 1 B. omits 2 B. अग्निसिंहेंद्र ।

विशिष्टेंद्र १२. जलकांतेंद्र १३, जलप्रभेंद्र १४, अमितगतींद्र १५, अमितवाहनेंद्र १६, वेलंबेंद्र १७, प्रभंजनेंद्र १८, घोषेंद्र १९, महाघोषेंद्र २०, इसां नामहं करी प्रसिद्ध। अनइ अढारोत्तरसउ तीहं नी अग्रमहिषी देवी। यथा असुरेंद्रहं चमरबलि बिहुं रहइं पांच पांच अग्रमहिषी। बीजां अढारहीं रहइं छ छ अग्रमहिषी। सर्व मीलनि एकुसउ अढारहोत्तरु। तथा तींहं तणा असी लोकपालदेव। सर्वमीलनि त्रिसइं अढारहोत्तर तींहीं तणी राजधानी हुयइं। पाछिली छासठि राजधानी। अनइं त्रिसइं अढारहोत्तर राजधानी ए एकठी कीजइं त्रिसइं चउरासी राजधानी हुयइं। ति सव्वइ राजधानी नंदीश्वर रुचकादिकहं द्वीपहं माहि छइं। तींहं माहि जि देवलोक तणा देव तींहं तणी राजधानी माहि चैत्य पुण देवलोक चैत्यसमान। जि भवनपति देव तींहं तणी राजधानी माहि पुणु जेवडा भवन माहि चैत्य छइं तेवडाई जि छइं। तिणि कारणि कहिउं 'स्व विमान भवनजिनगृह समानं' स्व आपणां छइं विमान अनइ भवन तिहां छइं जिनगृह तींहीं रहइं मानि करी समानु 'अंचामि' चैत्यानां सवहुगु चउरासीं करी संयुक्त चैत्यहं तणउं 'अंचामि' भावपूजा स्तोत्र 10 स्तुति करणादिक तिणि करी पूजउं। तथा विद्याधर नरेसर सुरेसर विरचिज्जमाण छइ दिव्यकुसुम कुंकुम कर्पूर कृष्णागुरु मृगमद चंदन नाना नैवेद्यादिकहं करी द्रव्यपूजा तेह तणइ अनुमोदनि अनुवदनि रूपि द्रव्यपूजनि करी पुण पूजउं।१६॥ 'नंदीश्वरे' इति-नंदीश्वर नामि आठमइ द्वीपि बावनचैत्य। यथा—

पुव्वदिसि देवरमणो १ निच्चुज्जोओ य २ दाहिणदिसाए। [८९१] 15

अवरदिसाइ सयंपभु ३ रमणिज्जो ४ उत्तरे पासे ॥

इसा वचनइतउ पूर्वदिशि देवरमणु इसइ नामि देयकां चउरासी सहस्स जोयण ऊंचउ दससहस्स जोयण मूलविक्खंभु अंजनगिरि छइ। एवडो ई जि दक्षिण दिशि नित्योद्योतु इसइ नामि अंजनगिरि छइं। इसू जु पश्चिमदिशि स्वयंप्रभु इसइं नामि अंजनागिरि छइ। उत्तरदिशि रमणिज्जु इसइ नामि तेवडोई जि अंजनगिरि छइ। चउहूं अंजनगिरि चउहूं दिशि देयकां लाखु लाखु जोयण जउ जाइयइ तउ तिहां लाख 20 लाख जोयणप्रमाण चंद्रमंडलाकार सहस्स जोयणावगाह चत्तारि पुष्करिणी छइं। एवंकारइ सोल पुष्करिणी। यथा—

नंदिसेणा य १ मोहा य २ गोथुभा य ३ सुदंसणा ४। [८९२]

नंदुत्तरा य ५ नंदा ६ सुनंदा ७ नंदिवद्धणा८ ॥

भद्दा ९ विसाला १० कुमुया ११ वारसी पुंडरीगिणी १२। [८९३] 25

विजया य १३ वेजयंती १४ जयंती १५ अपराजिया१६ ॥

नंदिषेणा १, अमोघा २, गोस्तुभा ३, सुदर्शना ४, नंदोत्तरा ५, नंदा ६, सुनंदा ७, नंदिवर्द्धना ८, भद्रा ९, विशाला १०, कुमुदा ११, पुंडरीकिणी १२, विजया १३, वैजयंती १४, जयंती १५, अपराजिता १६, इसां नामहं करी आणवीं[3]। तींहं सवहीं पुष्करिणी हूंता चउहूं दिशि पांच पांच सइ जोयण जउ जाइयइ तिहां पांच पांच सइं जोयण विहुलां लाखु लाखु जोयण लांबा एक एक भावि करी चत्तारि वन- 30 खंड छइं। तत्र पूर्वदिशि[4] अशोकवनु १, दक्षिणदिशि[4] सप्तपर्णवनु २, पश्चिमदिशि[4] चंपकवनु ३ उत्तरदिशि सर्वानुचूतवनु ४ तथा च भणित—

पुव्वेण असोगवणं दाहिणउ ताण सत्तवन्नवणं। [८९४]

चंपगवणमवरेणुत्तरेण सव्वाणुचूयवणं ॥

तींहं सोलहीं पुष्करिणी मध्यि एकु एकु दधिमुखु पल्याकारु देयकां चउसट्ठिसहस्स जोयण ऊंचउ दससहस्स जोयण मूलविक्खंभु पर्वतु छइ। एवंकारइ सोल दधिमुख पर्वत छइं। तउ पाछइ चउं अंजनगिरि 35 पर्वतहं सोल दधिमुखपर्वतहं ऊपरि एक एक चैत्यभावि करी वीस चैत्य छइं। चउहूं विदिशि पुष्करिणी अंतरालि बि बि रतिकर पर्वतहं सहस्स सहस्स जोयण ऊंचपणि झालरी नइ आकारि छइं। तींहं ऊपरि पुण

§616) 3 Bh. आणिवी। 4 Bh.-दिशि।

एक एक चैत्यमात्रि करी बत्रीस चैत्य छइं। इसी परि [illegible] पालन चैत्य [illegible] छइं। रुचकु इसइ नामि तेरमउ द्वीपु छइ। कुंडलु इसइ नामि इग्यारमउ द्वीपु छइ। [illegible] चैत्य छइं। एवं सर्व संमीलनि [illegible] साठि चैत्य हुयइं। [illegible] माहि चैत्य [illegible] पंचास पंचास जोयण पिहुलपणि बहुत्तरि बहुत्तरि जोयण ऊंचपणि छइं॥१७॥

'जिन भवने' ति–जिनभवन [illegible] माहि चतुर्मुख [illegible]। [illegible] जि के ऊर्ध्वलोकि [illegible] अधोलोकि चैत्य छइं ति सर्व्वइं त्रिमुख त्रिद्वार छइं। 'उभयत्र' ति–त्रिमुखिहिं, चतुर्मुखिहिं। [illegible] मुखि मुखि। मुखमंडप १, अक्षाटकमंडप सहित प्रेक्षामंडप २, मणिपीठ स्तूप ३, [illegible] मणिपीठ चैत्यतरु ५, पुष्करिणी लक्षण ६, छ छ पदार्थ छइं॥१८॥

'त्रिमुखे' इति। त्रिमुखिहिं चतुर्मुखिहिं चैत्य अष्टोत्तरशत अष्टोत्तरशत जिनप्रतिमा नमस्करउं। 'स्तूपाश्रिता' इति। स्तूपगत त्रिद्वारि चैत्य द्वादश प्रतिमा चतुर्द्वारि चैत्य सोल प्रतिमा नमस्करउं। 'यथासंख्यं'॥ अनुक्रमि करी॥१९॥

§617) 'प्राच्यामि' ति। जि के शाश्वत चैत्य [illegible] माहि छइं तीहं सविहुं गभारा पूर्वाभिमुख सत्तावीस श्रीऋषभ नाम जिनप्रतिमा छइं। दक्षिणाभिमुख सत्तावीस श्रीवर्द्धमान नाम [illegible] प्रतिमा छइं। पश्चिमाभिमुख सत्तावीस श्रीचंद्रानन नाम जिनप्रतिमा छइं। उत्तराभिमुख [illegible] वारिषेण्य नाम जिनप्रतिमा छइं। एवं सत्तावीस चउक्कु अष्टोत्तर सउ जिनप्रतिमा गर्भगृहगत [illegible] तथा तिणिहिं जि प्रकारि 'स्तूपगत' स्तूप वर्त्तमान प्रतिमा पुण जाणिवी। किसउ अर्थु? पूर्वदिशि[1] [illegible] ऋषभजिनप्रतिमा। दक्षिणदिशि[1] श्रीवर्द्धमान जिनप्रतिमा। पश्चिमदिशि[1] श्रीचंद्रानन जिनप्रतिमा। [illegible] दिशि[1] श्रीवारिषेण्य जिनप्रतिमा एक एक जाणिवी॥२०॥

'मेरुष्वशीतिरेके' ति–एकु जंबूद्वीपि बि धातुकी खंडि, बि पुष्करवर द्वीपार्द्धि, एवं पांच मेरु [illegible] छइं। एक एकि मेरुपर्वति चत्तारि चत्तारि वन छइं यथा—

भूमीइ भद्दसालं मेहलजुयलंमि दुन्नि रम्माइं।
नंदण सोमणसाइं पंडगपरिमंडियं सिहरं॥ [८९५]

भूमितलि भद्रशालु इसइ नामि वनु मेहल जुयलि किसउ अर्थु? मेखला पर्वत मध्यभाग कहियइं तिहां नंदनवन सौमनस्यवन इसां नामहं करी बि वन छइं। 'पंडगपरिमंडियं सिहरमि' ति। पंडकु इसइ नामि वनु मेरुशिखरि छइ। तीहं चउहुं भद्रशालादिकहं वनहं माहि चउहुं दिशि एक एक चैत्य भावि चत्तारि चत्तारि चैत्य छइं। एवंकारइ एक मेरुप्रतिबद्ध सोल चैत्य छइं। एवं अन्य मेरुचउक्क संबद्ध सोल सोल चैत्य छइं। इति सोल पंचउं असी[2] इसी परि पंचमेरुगत असी चैत्य हुयइं। इसीपरि एक [illegible] चैत्यहं तणी '[illegible]स्कारेष्वशीतिरपरा चे' ति। महाविदेह क्षेत्र माहि विजयांतराल वर्त्तमान सोल वक्षस्कार पर्वत [illegible] विदेहगत सोल पंचउं असी इति असी वक्षस्कार पर्वत हुयइं। तिहां एक एक चैत्य भावि [illegible]री चैत्यहं तणी। 'वर्षं नगेषु त्रिंशाद्रि' ति।

हिमवंत १ महाहिमवंत २ पव्वयानि सढ ३ नीलवंता य ४।
रुप्पी ५ सिहरी ६ एते वा सहरागिरी मुणेयव्वा॥ [८९६]

[illegible]यवं [illegible] पुद्दलछोभयमांतु सुवर्णमय देवकां जोयणसय समुच्चु हिमवंत पर्वतु भरतक्षेत्र पर-

[illegible] [illegible]ण समुच्चु सुवर्णमयु पूर्वापरसमुद्दलछोभयमांतु महाहिमवंतु पर्वतु हैमवत क्षेत्र पर-

1. दिशि। 2 B. Bh. इसी।

पूर्वापरसमुद्रलग्नोभयप्रांतु चत्तारिसइं जोयण समुच्चु रक्तरत्नमयु निषधु नामि पर्वतु हरिवर्ष-क्षेत्र परभागवर्त्ती छइं। महाविदेहक्षेत्र परभागवर्त्ती निषध समानु नीलमणिमयु नीलवंतु पर्वतु छइं। महाहिमवंत समानु रम्यकक्षेत्र परभागवर्त्ती रुक्मी पर्वतु छइ। हिमवंत समानु ऐरण्यवतक्षेत्र परभाग-वर्त्ती शिषरी पर्वतु छइ।

इति हिमवंत १, महाहिमवंत २, निषध ३, नीलवंत ४, रुक्मी ५, शिषरी ६, इसां नामहं छ वर्ष-5 धर पर्वत जंबूद्वीप माहि बार धातुकी खंड माहि छइं। बार पुष्करवर द्वीपार्द्ध माहि छइं। एवं कारइ त्रीस वर्षधर पर्वत सर्व संख्या करी हुयइं। तिहां एक एक चैत्यभावि करी वर्षनगहं वर्षधर पर्वतहं त्रीस चैत्य हुयइं। 'विंशतिरिभदंतकेषु तथे'ति। एक एक मेरु पर्वत विदिशि वर्त्तमान गजदंताकार चत्तारि चत्तारि गजदंत पर्वत छइं। पंचमेरुप्रतिबद्ध वीस गजदंत पर्वत हुयइं। तिहां एक एक चैत्यभावि करी वीस चैत्य गजदंत पर्वतहं हुयइं ॥२१॥　10

'चत्तारी'ति–धातुकीखंड अनइ पुष्करवर द्वीपार्द्ध रहइं द्विखंडीकरण हेतुक जिसा 'इषु' बाण हुयइं इसा सत्याभिधान चत्तारि इषुकार पर्वत छइं। तिहां एक एक चैत्यभावि करी चत्तारि चैत्य छइं। 'मनुजोत्तरे च चत्तारी' ति – मानुषक्षेत्र वलयाकारु छइ मानुषोत्तर पर्वतु तिणि चउहुं दिशि एक एक चैत्यभावि करी चत्तारि चैत्य छइं। 'मेरुष्वशीतिरेका' ईहां लगी जि के चैत्य कहियां तींहं सवहीं तणी संख्या विसइं अढारोत्तर चैत्य हुयइं ति हउं 'नमामि' भावि करी वांदउं ॥ २२ ॥　15

'एतेषामी'ति – ईहं बिहुं सइं अढारोत्तरहीं तणउं प्रमाणु इसउं सिद्धांत माहि उक्तउं कहिउं। छत्रीसजोयण ऊंचपणि, पंचासजोयण लांबपणि, पंचवीसजोयण पिहुलपणि ॥ २३ ॥

अथ स्थानक दशक चैत्यसमानता निमित्तु कहियइ।

§618) 'दिग्गज चत्वारिंशदि'त्यादि ॥ आर्या पांच ॥

एक एक मेरु प्रतिबद्ध भद्रशालवन वर्त्तमान गजसमान दिशि[1]विदिशि[1] भावि करी आठ आठ20 दिशि विदिशि रहइं प्रभव उत्पत्ति हेतु दिग्गजपर्वत छइं। ति सव्वइ मिलिया आठपंचउं चियालीस दिग्गजपर्वत हुयइं। तिहां एक एक चैत्यभावि करी चियालीस चैत्य हुयइं ॥ १ ॥

'सुमेरु चूलासु पांच' पांच मेरुपर्वत संबंधिनी पांच चूला तिहां एक एक चैत्यभावि[2] करी पांच चैत्य हुयइं 'दीर्घेषु वैताढयेषु वे' ति। दीर्घ वैताढ्य सतरिसउ यथा। साढु सउ विजयगत भरतैरवतगत दस दस सव्वइ मिलिया सतरु सउ। तिहां तिहां एक चैत्यभावइतउ सतरु सउ चैत्य हुयइं।25 'जंबूतरावेकं' ति उत्तरकुरु माहि पृथिवीविकाररूपु जंबू इसइ नामि सुवर्णरत्नमउ वृक्षु छइ। जेह नइ नामि जंबूद्वीपु कहियइ। तेह ऊपरि एकु चैत्यु छइ। तेह जंबू नइ परिवेषि पाखतियां अट्ठोत्तर सउ जंबू वृक्ष छइं। तीहं ऊपरि पुण एक एक चैत्यभावि करी अठोत्तर सउ चैत्य हुयइं। तीहं जंबू बाहिरि परिवेषाकारु वनखंडु छइ। तेह वनखंड माहि दिशिविदिशि एकैकभावि करी आठ चैत्य छइं। एवं कारइ एक जंबू परिवारि एकु सउ सतरहोत्तरु सउ चैत्यहं तणउं छइ। 'शाल्मलिमुख्येषु निखिलमवसेयं' ति[3]।30 एवं इसी परि देवकुरु प्रभृतिकहं माहि शाल्मलिप्रमुख जंबू सरीखा नववृक्ष नवकुरु गत छइं जिम उत्तरकुरु माहि ऐशानदिशि जंबूवृक्षु छइ तिम देवकुरु माहि नैऋतदिसि शाल्मली वृक्षु छइ इसी परि धातुकीखंड पुष्करवर द्वीपार्द्ध माहि वि बि मेरु प्रतिबद्ध कुरु छइं। एवं आठ ए, वि पाछिलां, सव्वइ मिलिया दस कुरु हुयइं। तिहां एक एक वृक्षभावि करी आठ वृक्ष ति हुयइं। तिहां पुण जंबूवृक्ष जिम सतरहोत्तरसउ सतरहोत्तरसउ चैत्य छइं। एवं कारइ कुरु दसाकि इगारसइं सतर चैत्य छइं। ४ ॥ २६ ॥　35

§618) 1 Bh. – दिसि। 2 Bh. omits. चैत्य। 3 B. Bh. निखिलमसेयं।

'कांचनगिरिषु सहस्रमि'ति–महाविदेह माहि सीता सीतोदा नाम नदी मध्यभागिया देवकुरु उत्तरकुरु गत पांच पांच द्रह छइं ॥ तथा च भणितं—

सीया सीओयाणं बहुमज्झे पंच पंच हरयाओ ।
उत्तरदाहिण दीहा पुव्वावरवित्थडाइ णमो ॥ [८९७]

5 सीता सीतोदा बहुमध्यि उत्तरकुरु माहि सीता बहुमध्यि भागिया पांच द्रह । देवकुरु माहि सीतोदा बहुमध्यि पांच द्रह । तत्र उत्तरकुरु माहि नीलवंतु इसइ नामि छइ गजदंत पर्वतु तेह तणा समीप हूंता नीलवंत द्रहु १, उत्तरकुरुद्रहु २, चंद्रद्रहु ३, ऐरावतद्रहु ४, माल्यवंतद्रहु ५, इसां नामहं प्रसिद्ध पांच द्रह छइं । तथा देवकुरु माहि विद्युत्प्रभाभिधान गजदंतपर्वत समीप हूंता निषधद्रहु १, देवकुरु द्रहु २, सूरद्रहु ३, सुलसद्रहु ४, विद्युत्प्रभद्रहु ५, इसां नामहं प्रसिद्ध पांच द्रह छइं । ए इसइ द्रह उत्तर 10 दक्षिण दीर्घ, पूर्व पश्चिम पृथुल छइं । ईहं दसहीं द्रहहं हूंता दसे दसे जोयणे पूर्वदिशि पश्चिमदिशि दशदश कांचनगिरि छइं । सर्व एक महाविदेह माहि बिसइं कांचनगिरि छइं । पांचहीं महाविदेह तणां मेलिया हूंता सहस्र संख्य कांचनगिरि हुयइं । तिहां तिहां एक एक चैत्य भावइतउ सहस्र कांचनगिरिगतु चैत्यहं तणउ हुयइ ॥ ५ ॥

'त्रिशतीसाशीतिरस्ति कुंडगता' । साठि सय विजय माहि बि बि नदी छइं जेहे करी विजय 15 षट्खंड नीपजइं । ति सव्वइ मेलित हूंती त्रिन्हि सइं वीसां महानदीय तणां नीपजइं । तथा–पांच महाविदेह माहि बारबार विजयांतरालगत महानदी छइं । बारपंचउ साठि नदी हुयइं त्रिन्हि सइं वीसां अनइ साठि, त्रिन्हि सइं असी, नदी हुयइं तींहं तणा प्रपात कुंड त्रिन्हि सइं असी हुयइं । तिहां एकेक चैत्यभावइतउ त्रिन्हि सइं असी चैत्य हुयइं ६ ।

'विंशतिरिह यमकस्थे' ति—

20 देवकुराए गिरिणो विचित्तकूडो य चित्तकूडो य ।
दो जमगपव्वयवरा चिट्ठंसया उत्तरकुराए ॥ [८९८]

विचित्रकूट १ चित्रकूट इसां नामहं करी प्रसिद्ध देवकुरु माहि बि यमकपर्वत छइं । उत्तरकुरु माहि पुण बि यमकपर्वत छइं । एवं अपर सर्व देवकुरूत्तरकुरु माहि बि बि यमक पर्वत छइं सर्व संख्या करी वीस यमक पर्वत छइं । तिहां एकैक चैत्यभावइतउ वीस चैत्य हुयइं । ७ ।

25 'सुवृत्तवैताढ्यगासीवे' ति । हैमवत १, हरिवर्ष २, रम्यक ३, ऐरण्यवत ४, नाम जंबूद्वीपगत चत्तारि युगलिया नां क्षेत्र छइं तींहं माहि एक एक भावि करी वृत्ताकार चत्तारि वृत्तवैताढ्यपर्वत छइं । धातुकीखंड पुष्करवर द्वीपार्द्धगत बि बि हिमवंत बि बि हरिवर्ष बि बि रम्यक बि बि ऐरण्यवत क्षेत्र छइं । तिहां पुण एकैक वृत्तवैताढ्य भावि करी सोल वृत्तवैताढ्य छइं । चत्तारि जंबूद्वीपगत वृत्तवैताढ्य अनइ सोल धातुकीखंड पुष्करवर द्वीपगत एवं कारइ वीस वृत्तवैताढ्य पर्वत छइं । तिहां एकैक चैत्यभाव- 30 तउ वीस चैत्य छइं । ८ ।

'पद्मादिषु चेति—पद्मद्रहु १, महापद्मद्रहु २, तिगिच्छिद्रहु ३, केसरीद्रहु ४, महापुंडरीकद्रहु ५, पुंडरीकद्रहु ६, छ द्रह ए । अनइ दस द्रह पूर्विहिं महाविदेह माहि कहिया, सव्वइ सोल द्रह जंबूद्वीप माहि छइं । तथा धातुकीखंड पुष्करवर द्वीपार्द्ध माहि बत्रीसबत्रीस द्रह छइं, सव्वइ मिलिया असी द्रह पद्मादिक हुयइं तिहां एकैक चैत्यभावइतउ पृथिवीविकार कमलोपरि वर्तमान असी चैत्य छइं ॥ ९ ॥

'गंगादिषु सप्ततिश्च चैत्यानी' ति। गंगा १, सिंधु २, रोहितांसा ३, रोहिता ४, हरिकांता ५, हरिसलिला ६, सीतोदा ७, सीता ८, नारिकांता ९, नरकांता १०, रूप्यकूला ११, सलिला १२, सुवर्ण-कूला १३, रक्तवती १४, [4] इसां नामहं करी प्रसिद्ध चऊद महानदी जंबूद्वीप माहि छइं। धातुकीखंड पुष्करवर द्वीपार्द्ध माहि इसां ई जि नामहं अट्ठावीस महानदी छइं। सव्वइ मिलिया गंगादिक सत्तरि महानदी हुयइं तीहं तणां छइं प्रपातकुंड तीहं माहि पृथिवी विकार छइं कमल। तींहं ऊपरि ऊपरि एकैक चैत्यभावि करी गंगादिकहं महानदीयहं माहि सत्तरि चैत्य हुयइं। स्थानक दशकस्थान्यपि 'समानि मानेन चेमानि' दिग्गजचत्वारि इंहां हूंता जि अनुक्रमि करी दस स्थानक तणां चैत्य कहियां ति सगलांई मानि प्रमाणि करी समान छइं॥ २८॥

तेऊ जु समानु मानु कहियइ। 'चत्वारिंशदि' ति – चऊदसइं चियाल धणुह ऊंचपणि, एकु कोसु आयामि लांबपणि, अर्द्धकोसु पिहुलपणि। ए दसहीं स्थानहं[5] तणी चैत्यमाला देवगृह परंपरा प्रमाणि करी छइं॥ २९॥

अथ नंदीश्वरे द्वि पंचाशत् इंहां लगी जि के भूमिगत चैत्य कहियां तीहं तणी सर्व संख्या कहियइ। 'पंचशती' त्यादि। त्रिन्हि सहस्र पांच सइं सतरहोत्तर संख्या करी भूमिगत चैत्य हुयइं। अथ भूमिगत चैत्यबिंब संख्याकरणपूर्वक अर्चियइं। 'द्वाविंशतिरि' ति। चत्तारि लाख बावीस सहस्स नि सइं असी बिंब। तिर्यग्लोक माहि मइं भक्तिभावि करी अर्चियइं पूजियइं। अथ ऊर्ध्वलोक चैत्यमानु नंदीश्वरचैत्य समानता करी कहियइ। 'कल्पेषु जिनावासा' इति। सौधर्मादिकहं बारहीं कल्पहं देवलोकहं 'जिनावासा' जिनभवन। नंदीश्वरि द्वीपि जेवडा पूर्विहिं कहिया तेवडाई जि जिनावास छइं॥ ३१॥

§619) अथ देवलोक चैत्यसंख्या कहियइ।

'सप्तनवतिरि' ति–चउरासी[1] लाख सत्ताणवइ सहस्स त्रेवीसे करी अधिक जिम पूर्विहिं व्यक्ति करी भणियां तिम सुरलोके ऊर्ध्वलोकि बारेहं[2] देवलोके नवग्रैवेयके पांचे पंचुत्तरे चैत्य छइं। अथ तीहीं जि चैत्यहं तणा जि छइ बिंब तीहं तणउं प्रमाणु कहियइ॥ ३२॥

'कोटीशतमि' ति – एकु कोडिसउ बावनकोडि चउराणवइ लाख चउरासी सहस्स सातसइं साठि करी अधिकाबिंब ऊर्ध्वलोकि सर्वसंख्या करी हुयइं॥ ३३॥

अथ त्रिभुवनचैत्यसंख्या कथनपूर्वकु वांदियइं। 'कोट्योष्टे' ति–आठ कोडि सत्तावन लाख पांचसइं चियाल त्रिभुवन चैत्यावलि। त्रैलोक्यचैत्यपरंपरा सर्वसंख्या करी वांदउं॥ ३४॥

§620) अथ प्रतिमास्वरूपु निरूपियइ।

'कनकमयी' ति – शाश्वतजिनप्रतिमा तणी गात्रयष्टि कनकमयी आत्य सुवर्णमयी सहजि हिं छइं, इसउं नहीं किणिहिं घडी। 'करचरणनखादिकापरेऽवयवा' इति। 'आदि' शब्दहतउ[1] बीजाई अवयव जाणिवा। 'रक्तादिक वर्णरत्नमया' इति। आदि शब्दहतउ[1] कृष्णादिक वर्ण जि छइं रत्न तन्मय जिसा हुयइं तिसा सहजि हिं[2] छइं। यथा कनकमयी गात्रयष्टि, लोहिताक्ष रत्नपरिसेक अंक, रत्नमय नख, तपनीयमय पाणिपादतल, रिष्टरत्नमय रोमराजि, तपनीयमय नाभिचूचक, श्रीवत्स जिह्वा तालु तल,

---

618) 4 Bh. combines सलिला सुवर्णकूला and adds रक्ता as the fourteenth; it may be more appropriate. *It is a later marginal addition in Bh.* 5 Bh. स्थान।

§619) 1 Bh. चउरासी। 2 Bh. बारे।

§620) 1 Bh. *drops words between* आदिशब्दहतउ। 2 B. *omits* हिं।

रिष्टरत्नमय श्मश्रु[1], शिलाप्रवाल[2] भणियइं परवालां तन्मय ओष्ठ, स्फटिकरत्नमय दंत, लोहिताक्ष रत्न-[illegible] कनकमय नासिका,[3] रिष्टरत्नमय अक्षिपत्र, रिष्टरत्नमय नेत्रतारिका, रिष्टरत्नमय भ्रूपल्लव, [illegible] [illegible], कनकमयी केशभूमि, रिष्टरत्नमय मस्तककेश, एवं इसी परि सर्वावयव स्वरूपु [illegible] जाणिवउं।

§621)[1] ईहां जि अर्थि मूलगु स्तवनु लिखियइं।

[illegible]नाथमृषभं [illegible] वर्द्धमानं,
[illegible] [illegible] च वारिषेण्यम्।
[illegible] [illegible]जिनायतनेषु बिम्ब-
[illegible]मारभामि ॥ [८९९]

[illegible] पंचशतचापमितानि तेषा-
[illegible] [illegible] सुरसंस्थितानि।
[illegible]मितानि पराणि सप्त-
[illegible] [illegible] स्तुवानि ॥ [९००]

[illegible] कनकात्मिकास्ति
[illegible] [illegible] चकास्ति।
[illegible] [illegible]मयी महासा
[illegible] [illegible]: [illegible]: ॥ [९०१]

[illegible] [illegible]:
[illegible]'कनकाणुमयी च नासा।
[illegible]रत्नमयाश्च दन्ता
[illegible] [illegible]रम्यरूपाः ॥ [९०२]

[illegible] [illegible]मयानि जिह्वा-
[illegible]कनाभिदेशाः।
[illegible]मयाश्च ग्रीवा
[illegible]मयाश्च तेषाम् ॥ [९०३]

[illegible] [illegible]लोहिताक्ष-
[illegible]मयाः शुभन्ति।
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] [illegible] ॥ [९०४]

[illegible] [illegible]
[illegible] [illegible]

§620) 3 i.e. [illegible]
§621) 1 [illegible]

द्वे स्वर्णकुण्डधरयोः फणिणोरपि द्वे
द्वे यक्षयोश्च पुरतो वरभूतयोर्द्वे ॥ [९०५]
इत्थं शाश्वतचैत्यबिम्बपटलीरूपस्वरूपं मया
सूत्रे साधुमतह्लिकाभिरभितः संकीर्तितं कीर्तितम् ।
येऽदः श्रद्दधते सदाभिदधते तेषां भवत्यंतिके
तूर्णं श्रीतरुणप्रभाभिरुचितं श्रेयः परमुत्तुरम् ॥ [९०६]

॥ इति शाश्वत जिनबिंव स्वरूप निरूपकं स्तवनं समाप्तमिति ॥

'मणिपीठे' ति आर्याद्वयं सुगमं ॥ नवरमत्र सर्व प्रतिमापरिकर स्वरूपु कहिउं छइ ॥३८॥

§622) अथ सर्व त्रैलोक्यगत प्रतिमाप्रमाणु कहियइ ॥

'कोटिशते' ति । पनरहकोडिसइं बइतालीस कोडि अट्ठावनलाख सत्तसट्ठिसहस्स चियालीसे करी अधिक त्रैलोक्य माहि प्रतिमा 'सम' समस्त 'नित्य' सदा भक्ति करी नमस्करउं अनेराई जि के तीर्थ छइं ति सगलाई नमस्करउं 'प्रमदात्' अतिसमाधि संपन्न परमानंद वहइतउ ॥ ३९ ॥

'प्रातरि' ति-'प्रातः' प्रभात समइ प्रमोदइतउ समाधि महानंदइतउ 'पुलकांकित' रोमांचित छइ 'काययष्टि' हर्ष रोमांकुरित तनुलता जेह तणी सु 'प्रातः प्रमोद पुलकांकित काययष्टि' पुरुष कहियइ । पुनरपि किसउ 'तोयास्रुवाहे' ति- 'तोयास्रुवाह' कहियइं हर्षास्रु जलप्रवाह तींहं करी 'विमलीकृत' पवित्रीकृत 'दृष्ट' विकसित 'दृष्टि' लोचनु जेह तणी तोयास्रुवाह विमलीकृत दृष्ट दृष्टि कहियइं । इसउं हूंतउं जु भव्यु जीवु 'स्तोष्यते' स्तवेसिइ । कउण रहइं ? इत्याह- 'सकल शाश्वततीर्थराजस्तोम' समस्तशाश्वततीर्थकर बिंबकदंबु । सु जिनाधिराज तणी 'रमा' लक्ष्मी 'गमिष्यति' लहिसिइ ॥ ४० ॥

'इत्थं स्तुते' ति - 'इत्थं' इणि प्रकारि 'स्तुत' संकीर्तित कियइं । 'श्रुते' ति - श्रुत सिद्धांत तेहं नइ विषइ समाहितु सावधानु, इणिहं जि कारणि शांतु कषायोदय रहितु चित्तु मनु जींहं तणउं हुयइ ति 'श्रुतसमाहितशांतचित्त[1]' कहियइं । ति कउणि[2] ! 'विद्याधरै गणधरैरि' ति - विद्याचारण जंघाचारणादिक महर्षि । तथा गणधर गच्छधारी श्रीगौतमादिक अथवा गीतार्थ विद्याधर धरणीधर । विद्याधर गणधर सूरिवर । तेहे न केवलं पुण कउणि[3] ? तेहे 'असुरैः सुरैश्च' ति देवहं दानवहं 'स्तुत त्रैलोक्य-शाश्वत जिनप्रतिमाः' ॥ सुगमं ॥ 'मह्यं दिशंतु तरुणप्रभयाद्दशो स्वां' । 'तरुण' नवी छइ 'प्रभा' कांति, तिणि करी उपलक्षित 'स्व' आपणी दृष्टि 'मह्यं' मू निमित्तु 'दिशंतु' दियउं ॥ ४१ ॥

॥ इति शाश्वतचैत्यजिनबिंबमानस्तवनविवरणं समाप्तं ॥

§623) अथ सर्वसाधु वंदननिमित्तु कहइ-

जावंति केइ साहू भरहेरवए महाविदेहे य ।
सव्वेसु तेसु पणओ तिविहेण तिदंड विरयाणं ॥ [९०७ सुगमा ॥]

नवरं प्रथम संहनानि उत्कृष्टपदि । पनरह कर्म्मभूमि, पांच भरत, पांच ऐरवत, पांच महाविदेह, लक्षण तींहं माहि नवकोडि केवलज्ञानि साधुसंपदा, नवकोडिसहस्स वर ज्ञानदर्शनचरणधर साधु संपदा । जघन्यपदि बिकोडि केवलज्ञानि साधुसंपदा, बिकोडिसहस्स वरसाधुसंपदा[1] कहियइं ।

§622) 1 Bh. सातचित्त । 2 Bh. कउण as a correction over original कउणि । 3 Mss. place पुण कउणि after देवहं दानवहं ।
§623) 1 Bh. omits वर ।

§624) इसी परि सर्व चैत्य सर्व साधु वंदनु करी प्रतिक्रमणकार श्रावकु आगामिइ कालि सुधु आसंसतउ हूंतउ भणइ ।

चिरसंचिय पावपणासणिय भवसयसहस्स महणीए ।
चउवीसजिणविणिग्गयकहाइ वोलंतु मे दियहा ॥ [९०८]

जिम बीज हूंतउ अंकुरु नीसरइ, सूर्य हूंतउ प्रभापूर विस्तरइ तिम चउवीस जिण ऋषभ प्रमुख श्रीमहावीरायसान तीहं हूंती कथा नीसरी । तीर्थंकर नामोच्चारण गुणोत्कीर्तन लक्षण वचन पद्धति नीसरी 'चउवीसजिण विणिग्गय कहा' कहियइ । तीणि करी मे मू रहइं दीह अहोरात्र वोलउं जायउं । ज चउवीस जिन कथा किसी छइ । 'चिर' ति–चिरकालि प्रभूतभवर संचितु उपार्जिउं जु पाउ तेह रहइं प्रणासिका फेडणहारि । तिणिहिं जि कारणि 'भवसयसहस्स महणीए' भवलक्ष भ्रमणनिवारक।

§625) अथ जन्मांतरिहि समाधिबोधि तणी आशंसा करइ ।

मम मंगलमरहंता सिद्धा साहू सुयं च धम्मो य ।
सम्मद्दिट्ठी देवा दिंतु समाहिं च बोहिं च ॥ [९०९]

अर्हंत सिद्ध साधु श्रुत द्वादशांगु धर्मु चारित्रधर्मु ए पांचइ 'मम' मू रहइं मंगल मांगलिक्य-कल्प वर्त्तइं । 'सुयं च' ईहां च कारु छइ तेहतउ न पुण ए मू रहइं मांगलिक्यर जि छइं लोकोत्तम पुण छइं, शरणु पुण छइं, इसउं जाणिवउं । ईहां धर्म माहि श्रुतलाभ छइं पुण 'नाणकिरियाहिं मुक्खो' इसा वचनतउ ज्ञानक्रिया बिहुं मिलियाइं जि हूंता मोक्षु इसा अर्थ जाणाविवा कारणि श्रुतग्रहणु पृथक् कीधउं । तथा[1] सम्यग्दृष्टिदेव अर्हंतभक्त सौधर्मेंद्रादिक । अथवा चतुर्विंशति यक्षयक्षिणी लक्षणा[2] 'दिंतु' दियउं किसउं दियउं ? समाधि चित्त स्वस्थता कहियइ । बोधि भवांतरि सम्यक्त्वप्राप्ति इ समाधि अनइ बोधि वि वस्तु दियउं । इति गाथार्थः ॥

§626) ईहां शिष्यु पूछइ । समाधि बोधि दानविषइ सम्यग्दृष्टि देव समर्थ छइं कि नथी ? जइ समर्थ नथी तउ प्रार्थना निरर्थक । अथ समर्थ तउ अभव्य दूर भव्य जि छइं तींही रहइं समाधिबोध दियउं । अथ इसउं कहिसु[1] जि योग्य हुयइं तींहीं जि रहइं दियइं अयोग्य रहइं न दियइं । तउ योग्यता ईं जि समाधि बोधि कारणु छइ । इसउं एकांतवादी कहइं, स्याद्वादवादी भगवंतु । तत्र–एक एक नय तणउ एकांति करी वादु एकांतवादु । यथा–योग्यता ईं जि हूंतउं काजु हुयइ । इसी परि सर्व नयमयता करी स्याद्वाद रहइं न योग्यता ईं जि कारणु एकांतिहिं किंतु योग्यता कारणु इसउं कहियइ । तथा च 'स्याद्वाद-मुद्रा सामग्री वै जनका'[2] इति । जिम घट निष्पत्ति विषइ माटी रहइं योग्यता हूंतीहीं कुंभकार चक्र चीवर दवरक दंडादिक सहकारि कारण पुण हुयइं तिम जीव रहइं समाधि बोधि योग्यता हूंती विघ्नविनासकता भावि करी यक्षांबादिक देव पुण मेतार्यादिकहं जिम समाधि बोधिकारण हुयइं । इणि कारणि सम्यग्दृष्टि देव तणी प्रार्थना निरर्थक नहीं ।

§627) अथ जीहं कारण लगी प्रतिक्रमणु कीजइ ति कारण कहइ ।

पडिसिद्धाणं करणे किच्चाणमकरणे य पडिकमणं ।
असद्दहणे य तहा विवरीयपरूवणाए य ॥ [९१०]

प्रतिषिद्ध निवारित छइं सम्यक्त्व तणा शंकादिक अतीचार अणुव्रतादिकहं तणा बंधादिक अतीचार तीहं तणइ करणि हूंतइ । कृत्य छइं सामाइकादिक दिनकृत्य अथवा देवपूजा करणादिक नियम

§625) 1 Bh. omits. 2 Bh. omits.
§626) 1 Bh. कहिसिउ । 2 Bh. जनिका ।

मांहि गमइ अकारणि हुंतइ । तथा 'अणट्ठाए'-निवारं दुहाइ पराछलांहि सूक्ष्म विचार तणइ आलापांहिं अप्रत्यइ अनर्थेनि मादि हुंतइ 'विरुद्धेय पच्चक्खाण य' अनुष्ठाने स्थापना विरुद्ध पच्चक्खाण न पुन भांगि जिम धूरि भव परिभ्रमण कारण हुयइ । जिणि विरुद्ध प्रवर्त्तनि अनाभोगादिकारणि कीधा हुंतइ प्रतिक्रमणु करेवउं हुयइ ।

§628) इहां शिष्यु पूछइ—श्रावक रहइं धर्मोपदेश देवा तणउ अधिकार छइ कि नहीं ? छइ, इस्यउं कहां । जिणि श्रावकि गीतार्थ गुरु कन्हइ सूत्रार्थ सम्यक् परिभाविउ हुयइ, तत्त्व हियां माहि अवधारिउ हुयइ, अनि तु निश्चितु कीधउ हुयइ अनइ सदा गुरु परतंत्रु हुयइ. तेह रहइं धर्मकथन विषइ किसउ साधु अधिकार नथी ?

'पढइ सुणइ गुणेइ य जणस्स धम्मं परिकहेइ' इत्यादि आगम तथा अनुयोगद्वार तणी चूर्णि मांहि पुण भणिउं । 'सो जिणदास गणिओ अट्ठमि चउद्दसीसु उववासं करेइ । पुच्छई वत्तइ' ति ।

§629) अथ संसारसागर परिभ्रमण पराधीन जीवहं रहइं सघलाइं जीवहं सउं वैर संभवइ । तिणि कारणि सर्व जीव क्षामणा निमित्तु भणइ—

खामेमि सव्वे जीवा सव्वे जीवा खमंतु मे ।
मित्ती मे सव्व भूएसु, वेरं मज्झ न केणइ ॥		[९११]

सघलाइ जीव खमावउं जिणि किणिहिं मू ऊपरि अपराध कीधउं छइ तु हउं खमउं, कीधउं अपराधु खमउं' इसउ अर्थु । अज्ञाननिमित्तप्रमादोपधि हुंतइ मई सघलाइं जीवहं रहइं दुःखिहि पीडा कीधी छइ । सघलाइ जीव मू दुःख पीड्या रहइं खमउं खमावउं । कोपु मू ऊपरि म करिसिउ । इसउ अर्थु तथा किस कारणु कहइ—' मित्ती मे सव्व भूएसु' सघलाहीं जीवहं सउं मू रहइं मैत्री शुभबुद्धि 'वेरं मज्झ न केणइ' वैर मू रहइं कही सउं नही । किसउ अर्थु ? जि मोक्षमार्ग रहइं हेतुभूत छइं ज्ञान दर्शन चारित्र ति आपणी शक्ति तणइ अनुसारि तीहं रहइं सहाइउं । आपणा रहइं विराधकारकहीं सीहं किसउं वैर न करउं । जिणि कारणि कलह सउ भवभवि भवुनिरई जिम भवसंसारकारकानुपूर्वि कारणु हुयइ ।

§630) अथ प्रतिक्रमणाध्ययनु उपसंहरतउ हुंतउ अवसानमंगल निमित्तिं करइ ।

एवमालोइय निंदिय गरहिय दुगंछिउं ।
तिविहेण पडिक्कंतो वंदामि जिणे चउव्वीसं ॥		[९१२]

इसी परि आलोई करी लघु सार्थवाह गुरु आगइ प्रकाशी करी निंदी करी गरही करी दुगंछी करी मायशुद्धिपूर्वं - 'तिविहेण पडिक्कंतो' मन वचन काय करी पाप हुंतउ प्रतिक्रमणु निवर्तितु हुंतउ 'वंदामि जिणे चउव्वीसं' चउवीस जिन अरहंत चतुर्विंशतिस्तव करउं चउवीसं तीर्थकर प्रति नमस्करउं ॥

॥ इति श्रावकप्रतिक्रमणसूत्र विवरणं समाप्तम् ।

§631) जयति वर्द्धमानं शुभसंयुक्तं, कुकर्मयोगविरहितमकरमुपम' ।
शुभकरैः परमपदं, विधिरेषपरमोरगणमनुपमम् ॥ १ ॥		[९१३]

§627) 1 B. BN. [illegible] । §628) 1 B. BN. [illegible]
§629) 1 B. BN. [illegible] । 2 BN. [illegible] । 3 BN. [illegible]
§631) 1 BN. [illegible] । 2 BN. [illegible] । [illegible]

यः स्तम्भनाधीश्वरपार्श्वनाथप्रसादमासाद्य नवाङ्गवृत्तिम् ।
लब्धा व्यधात्तेह किमत्र चित्रं, सोऽत्राजनिष्टाभयदेवसूरिः ॥ २ ॥ [९१४]

तदीयपादद्वयपद्मसेवामधुव्रतः श्रीजिनवल्लभोऽभूत् ।
यदङ्गरङ्गे व्रतनर्तकेन[3] किं नृत्यता कीर्तिधनं न लेभे ॥ ३ ॥ [९१५]

तत्पट्टशैलेऽजनि योगराजः[4], सुरानतः श्रीजिनदत्तसूरिः ।
तदन्तिपार्श्वैक उदैत्कलावान्, विनाकलङ्कं जिनचन्द्रसूरिः ॥ ४ ॥ [९१६]

शिष्योऽस्य जज्ञे जिनपत्यभिख्यः, प्रवादिनागेन्द्रजये मृगेन्द्रः ।
जिनेश्वराख्योऽस्य बभूव शिष्यः, प्रभावनोद्भावनसिद्धिरामः ॥ ५ ॥ [९१७]

जिनप्रबोधाभिध सूरिरासीत् तत्पट्टपूर्वाचलचण्डभानुः[5] ।
पदे तदीये जिनचन्द्रसूरिरभून्मनोभू जयकारिमूर्तिः[6] ॥ ६ ॥ [९१८]

येषां युगप्रधानानां प्रसद्य पद्दैवतं ।
दीक्षाचिन्तामणीं मह्यं[7] ज्ञानतेजस्विनीं ददौ ॥ ७ ॥ [९१९]

पितृभ्योप्यतिवात्सल्यं येनाधायितरां मयि ।
यशःकीर्तिगणिर्मां स पूर्वं विद्यामभाणयत्[8] ॥ ८ ॥ -[९२०]

राजेन्द्रचन्द्रसूरीन्द्रैर्विद्या काचन काचन[9] ।
जिनादिकुशलाख्यैः[10] श्चादाय्याचार्यपदं च मे ॥ ८ ॥[11] [९२१]

अम्भोरुहमकरन्दबिन्दुनिकराल्लात्वा यथा षट्पदः
स्वां वृत्तिं तनुते तथा श्रुतकणानादाय रुच्यैः पदैः ।
सूरिः श्रीतरुणप्रभः प्रमितये मुग्धातिमुग्धात्मनां
षोडावश्यकसूत्रवृत्तिमलिखत्सौख्यावबोधप्रदाम् ॥ ९ ॥ [९२२]

यन्मिथ्याभिदधे मया मतिमहामोहादसम्यग्विदा[12]
व्याक्षेपादथवा तदत्र सुधियः संशोध्य निर्मत्सराः ।
व्यातन्वन्तु तथेमिकां गतधियो निःसंशयाना यथा
षोढाऽऽवश्यककर्मकर्मणि[13] परं सम्बोधमाबिभ्रते ॥ १० ॥ [९२३]

---

§631) 3 P. नर्तनेन । 4 L. योगीराज । 5 L. –चंद्रभानुः । 6 L. omits –मनोभू– leaving blank space for three letters. 7 L. adds सह्यं । 8 B. has added this verse in the margin. 9 L. कांचन । 10 B. जिनादि– । 11 Bh. P. number this verse as 9, and repeat the same number in the following verse, thus avoiding numbering different from B.; L. changes the numbering by one. 12 Bh. L. विदो । 13 Bh.–मर्म्मणि । L.–सूत्रकर्मणि ।

अबुधबोधदर्शेन्धनदीधितेर्दिनकृतेर्विवृतेर्यदुपार्जयम् ।[14]
उपाचितं सुकृतं सुकृतेप्सितं भवतु तेन भवी सुकृती कृती ॥ ११ ॥ [९२४]
शशि-शशि-चेदेन्दु-मिते संवति सति पत्तने महानगरे ।
दीपोत्सवे च लिलिखे सुगमा दिनकृत्यविवृतिरियम् ॥ १२ ॥ [९२५]
§632) जयत्यसौ मन्त्रिदलीयवंशकः, सुगोत्रधात्रीवलयावतंसकः ।
चतुर्दिगन्तस्थगुणप्रतिष्ठिते न नर्त्ति यत्राऽद्भुतकीर्तिनर्तकी ॥ १३[1] ॥ [९२६]
तत्राभूत्पुण्यभूर्मुक्तोपमप्रक्कुर दुर्लभः ।
तदङ्गभूर्द्गमराख्यश्चामरामलसद्गुणः ॥ १४ ॥ [९२७]
तस्याऽऽसीदात्मभूर्मालः ठकुरः सुकृताङ्कुरः ।
इष्टसाधनसाधिष्ठः कीर्त्तिकर्पूरसौरभी ॥ १५ ॥ [९२८]
देवपालो गुरुस्तेजपालोऽपरोजयतपालः तथा राजपालः सुधीः ।
सहणपालो नयात्पाल एतेऽभवन् सतनस्तस्य पड्भारतांशा इव ॥ १६ ॥ [९२९]

---

§631) 14 Bh. gloss on दर्शेधनः प्रदीप ।

§632) 1 Bh. omits verses 13–31 (both inclusive).

L. P. omit verses 13–32 (both inclusive).

Bh. after writing verses 32–33, begins: स. १४११ वर्षे दीपोत्सवे श्रीमदणहिल्लपत्तने शनिवारे... and goes on like B. till मन्त्रि–where the page ends abruptly. Later hand, in the margin below, writes: उप. श्री ठाकुरसीजी गणिभिः स्वपुण्यार्थं भाण्डागारार्थं कृतमिदं पुस्तकं धृत च गुरुणामादेशात् शिष्य धनजीकेन चि. अमरसी कर्पूरादि सहितेन वाच्यमानं चिरं नंदतादिति श्रेयः ॥ श्री ॥

(and continues in the margin of the recto)

भट्टारक श्री जिनराजसूरिशिष्योपा० (i. e. उपाध्याय) श्रीज्ञानकुशलगणिशिष्योपा० श्री ज्ञानसिंहगणिभिः स्वपुण्य-संचयार्थं श्री कृष्णदुर्गं भाण्डागारार्थं कृतमिदं पुस्तकं चोपा० श्री धनजीकैः चि. अमरसीकर्पूरादि शिष्यसहितैः स्वगुरूणामा-देशाच्च गुरूणा पुण्यसंचयार्थं ॥ श्रेयः ॥

L. after writing verse 13 (= B. 12), writes: संवत् १४१९ । पौष शुदि ५ । then verse 33; *words –दश– in 33b are missing. It continues:* संवत् १४११ वर्षे दीपोत्सवदिवसे शनिवासरे श्रीमदणहिल्लपत्तने....लिखिता like B. Then ends with : शुभ भवतु । शुभमस्तु । लेखकवाचकसुश्रावकवर्गस्य । अनुष्टुभां सहस्राणि....etc.

P. after writing verse 12, continues with verses यादृशं पुस्तक....and अनुष्टुभां सहस्राणि... numbering them 13 and 14 respectively; and continues : ओम् न्हा श्री न्हि उं असिया उसा नमः । लघु नमस्कारम् । अथ श्री नृप विक्रमादित्यराज्ये संवत् १५०८ वर्षे ज्येष्ठ वदि ११ मंगलवासरे उत्तराभाद्रपदनक्षत्रे श्री सरस्वती-पत्तनाभ्यंतरे श्री खरतरगच्छिय....the last words 'खरतर' are superimposed on some other words. Later hand continues: श्री उद्योतनसूरीशान्वए (sic) पू. श्री जिनदत्तसूरिः । तशान्वए (i. e. तस्यान्वये) श्री जिनकुशलसूरिः तद्वंशे श्री जिनेश्वरसूरिः । जिनशेपसूरिः । श्री जितधर्मसूरिः । श्री जिनचंद्रसूरिः । उ. (i. e. उपाध्याय) श्री पार्श्वचंद्रपट्ट-तिलकभूषण उ. श्री देवचंद्रपट्टे भाणभास्कर उ. श्री श्री श्री क्षमासुंदरमिश्रैः ग. देव कल्लोल पुण्यार्थं ।

हरिराज-हेमराजौ, देवपालस्य नन्दनौ ।
जज्ञाते हरिराजस्य, रासलदे च गेहिनी ॥ १७ ॥ [९३०]

शुक्ताविव मुक्ताभौ तत्कुक्षावभवतां प्रचुरवृत्तौ ।
पुत्रौ ख्यातौ चाहड-धन्धकाख्यौ च ठक्कुरौ ॥ १८ ॥ [९३१]

राजानुग्रहशालिना गुणवता लक्ष्मीवता धीमता
स्थाने चाहडठक्कुरेण विदधे तीर्थोन्नतिः सद्गुरौ ।
देवे चार्हति भक्तिरद्भुततमा साधर्मिकोपक्रिया
षोढाऽवश्यककर्मकर्मठहृदां ह्येतद्धिकर्मोचितम् ॥ १९ ॥ [९३२]

तत्पत्नी सहजलदे समचित्ता समजनिष्ट सुकृतेषु ।
अनयोस्तनयाः सिंहानयनविजयजवणकर्णेभ्यः ॥ २० ॥ [९३३]

व्यधितविजयसिंह स्तीर्थयात्रादिकार्ये,
स्वधनमनिधनं राक् सप्तक्षेत्र्यां वपन् यः ।
अणहिलपुरमध्येऽभ्येत्य भक्तिं व्यकासी–
ज्जिनकुशलगुरूणां स्थापनावादरोधात् ॥ २१ ॥ [९३४]

मदनपाल तनया वीरमदे विजयसिंह दयिताऽजनि धुर्या ।
पूर्णिनीति धरदेव तनूजा तस्य भीरुरपरापि पराङ्गी ॥ २२ ॥ [९३५]

रत्नगर्भे च पुंरत्ने सुतौ प्रासूत चादिमा ।
राजमानसु तेजस्कौ महार्घौ आसवर्जितौ ॥ २३ ॥ [९३६]

धल्हिराजस्तयोर्ज्येष्ठो, गिरिराजः कनिष्ठकः ।
शुभाशुभावपि स्निग्धावाश्विनीतनयाविव ॥ २४ ॥ [९३७]

उदयकरमल्लाभयरतो, राजाः साधारणश्च चत्वारः ।
पूर्णिन्या वाग्मिन्याः सुता राजन्ति गुणविदिताः ॥ २५ ॥ [९३८]

शीलशालीन्यकौलीन्याश्यालिन्यगुणमालिनी ।
धल्हिराजस्य भार्याऽभूत् कोल्हाची धीविशालिनी ॥ २६ ॥ [९३९]

जिनधर्मानुरक्तायाः भक्तायाः पत्युरुत्तमः ।
खेमसिंहः सुतस्तस्य जज्ञे हीम्ह च तत्प्रिया ॥ २७ ॥ [९४०]

रूपराजः सुतस्तस्य गर्भश्रावकतागुणः ।
अनुस्मृतेर यद्बुद्धिर्जिनधर्मेण राजते ॥ २८ ॥ [९४१]

परार्हतस्य तस्यासौ बलिराजस्य हृद्गयः ।
कल्पारामेऽर्हतो धर्मे भ्राम्यन् स्खलति नात्र यः ॥ २९ ॥ [९४२]

कलौ कल्पादि वैकल्ये औदार्यं तत्र किं महत् ।
करे पद्माकरे यस्य, कुवलयं वलयं च यत् ॥ ३० ॥ [९४३]

सर्वतीर्थेशानि तीर्थानि विम्बितानि मनोमणौ ।
नित्ययात्रोत्सवं यस्य वितन्वन्ति मनीषिणः ॥ ३१ ॥ [९४४]

उपकृति बलिराजो लेखयामास भासां
परिवृढ इव पोडावश्यकीयां सुबोधाम् ।
सुविवृतिमिमिको प्राङ् मच्छकाशात्स्वयं च
स्वपरनरहितार्थं पुस्तके लीलिखच्च ॥ ३२ ॥ [९४५]

भरतमिवखडं शं त्रायमाणोऽङ्गिकार्यं
त्रिदशदशनांशैः श्लाघ्यमानार्घ्यधामा ।
चरमजिनवरश्रीशासनं सार्वभौमं [९४६]
प्रभवति भुवि यावत्तावदेषा सुवृत्तिः ॥ ३३ ॥

§633) संवत् १४११ वर्षे दीपोत्सवदिवसे शनिवारे श्रीमदणहिलपत्तने महाराजाधिराज पातसाहि श्रीपिरोजसाहि विजयराज्ये प्रवर्तमाने श्रीचन्द्रगच्छालंकार श्रीखरतरगच्छाधिपति श्रीजिनचंद्रसूरिशिष्यलेश श्रीतरुणप्रभसूरिभिः श्रीमंत्रिदलीयवंशावतंस ठक्कुर बाहडसुत परमार्हत ठक्कुर विजयसिंहसुत श्रीजिनशासनप्रभावक श्रीदेवगुर्वाज्ञाचिंतामणिविभूपितमस्तक श्रीजिनधर्मकाचकर्पूरपूरसुरभितसप्तधातुपरमार्हत ठक्कुर बलिराजकृत गाढाभ्यर्थनया षडावश्यकवृत्तिः सुगमा बालावबोधकारिणी सकलसत्त्वोपकारिणी लिखिता ॥ शुभमस्तु ॥

अनुष्टुभां सहस्राणि सप्तान्यक्षरसङ्ख्यया ।
ज्ञेयानि विवृतावत्र साधिकानि मनीषिभिः ॥ [९४७]

॥ संवत् १४१२ वर्षे चैत्र शुदि ९ शुक्रे श्रीमदणहिलपत्तने श्रीगच्छराज श्रीखरतरगच्छे श्रीषडावश्यकवृत्ति लिखिता पं० महिपालेन ।

यादृशं पुस्तके दृष्टं तादृशं लिखितं मया ।
यदि शुद्धमशुद्धं वा मम दोषो न दीयते ॥ [९४८]

भग्नपृष्टिकटिग्रीवा ऊर्ध्वदृष्टिरधोमुखी ।
कष्टेन लिखितं शास्त्रं यत्नेन परिपालयेत् ॥ [९४९]

शिवमस्तु ॥ मङ्गलं भवतु ॥ समस्त श्रीसाधु श्रीसमुदायस्य ॥ आचन्द्रार्कं नन्दतु ॥

The Index

Repeated occurrences of the same form are not noted, except in cases of words of rare occurrence.

Sk. and Pk. loanwords are generally omitted, except in cases of loanwords which show *significant phonological or grammatical features of Old Gujarati.*

Proper nouns from the illustrative narratives are entered in the index.

Different grammatical forms of the same word are grouped together under a convenient form.

The order of the Nāgarī alphabet is observed; vowels followed by anusvāra are entered after simple vowels. Reference to the text is given by number of the paragraph.

References to the Nepali Dictionary by R. L. Turner and Formation de la Langue Marathe by Jules Bloch are given respectively, by citing the Nepali and the Marathi word.

filter' is not traceable, though many NIA dialects have similar cognates. Turner suggests (under chānnu) *kṣāṇayati, cf. Sk. kṣaṇóti, Pk. chāṇa- n. 'to sift grain,' chāṇaṇa- 'to filter'. Since filtering is frequently done by tying a coarse cloth over a vessel (e. g. curds or sugarcane juice) connection with Sk. chādanam n. 'covering' is worth considering.

अछोपाडि *achopāḍi* inst. sg. 129. Meaning and derivation not known

अजाण *ajāṇa* "ignorant" sub. dir. pl m 3; ajāṇu adj. dir. sg. m. 285 586; Sk. ajānat, Pk. a + jāṇa–.

अजाणतउ *ajāṇatau* "not knowing" pres. part. m. dir. sg. 462; also ajāṇato 554, 590; ajāṇati i f. emphatic; ajāṇatā i pl. 590; v. s. v. jāṇai, ajāṇa.

अजित *ajita* proper noun m. dir. sg. 110.

अजितसेनु *ajitasenu* proper noun m. dir. sg. 573.

अजी¹ *ajī*[1] particle of address. 483.

अजी² *ajī*[2] 'yet, still" adv. 297. Sk. adya api Pk. ajja vi; note in MG. hajī 'even now'.

अठाणऊसउ *aṭhāṇaü sau* "one hundred ninety eight" num. dir. sg. 33,37; In the context aṭhanaüya sau aṭṭhāṇaü sau 33, the former does not convey the meaning very clearly. cf. Sk. aṣṭānavatiḥ, Pk. aṭṭhānaui; Turner athanabe.

अठावीस *aṭhāvīsa* "twenty eight" num. dir. sg. 74. Sk. aṣṭāviṁśatiḥ, f. Pk. aṭṭhavīsa. Turner aṭhāis.

अठेताळीस *aṭhetālīsa* "forty eight" num. 35. v. s. v. aṭhitālīsa.

अठोत्तरु सउ *aṭhottaru sau* "one hundred and eight' num. dir. sg. m. 613; athottaru sau 421, also aṭhottara saya 424. Sk. aṣṭa + uttara + śata- Pk. aṭṭhottara saya; lw. Pk.

अठोत्तर सहस्सु *aṭhottara sahassu* "one thousand and eight" num. dir. m. 342. lw. Pk.

अठसठि *aṭhasaṭhi* "sixty eight" num. dir. sg. 74. cf. Sk. aṣṭaṣaṣṭiḥ f.; Pa. aṭṭhasaṭṭhi, Pk. aṭhasaṭṭhim. Bloch aṛ–, Turner arsath.

अठितालीस *aṭhitālīsa* "forty eight" num. 421. cf. Sk. aṣṭācatvāriṁśat Pk. aṭṭhatālīsa, MG. aṛtālīs Turner athacalis.

अठिल *aṭhila* probably some type of chain to tied a prisoner etc.; meaning and derivation not clear; the context is aṭhila ghātia nigaliu, 313.

अडनउय सयं *aḍa nauya sayaṁ* "one hundred ninety eight" num. 24; lw. Pk. v. s. v. aṭṭhāṇau sau; also note Sk. aṣṭan, Pk. aṭṭha, aṭha, aḍa.

अडयाला *aḍayālā* "forty eight" num. 24. Pk. lw. v. s.v. aṭhitālīsa.

अढाई *aḍhāī* "two and a half" num. 331, 403, 441 Sk ardhatṛtīyaḥ, Pa. aḍḍhatiyo, Aś. adhatiya–, Pk. aḍḍhāijja, aḍḍhāiya. MG. aḍhī, aḍdhī Bloch aṛic, Turner aṛāi.

अढारमइ *aḍhāramai* "eighteenth" ord. loc. sg. 355. aḍhārabe māse inst. pl. 401; "after eighteen months" probably such usage explains the extension of –e pl. to –e sg. Sk. aṣṭādaśau Pk. aṭṭhārasa, aṭṭhāra; also cf. Pk. aḍhārasama "eighteenth" MG. aḍhār, Bloch atharā, Turner athāra.

अढारोत्तरु सउ *aḍhārottaru sau* "one hundred and eighteen" num. 616. v. s. v. aḍhāramai

अणआथमियइ *aṇa āthamiyai* "when not set, not ended" past part. loc. sg. 325. Sk. ástam éti, perfect part. ástamita Pk. atthamiya OG. ana + āthamiu. MG. verbal base ātham- 'to set, to decline'.

अणआलोची *aṇa ālocī* "without atoning" abs. 410, also anāloi. Sk. ālocate, OG. ana + ālocī ana + āloi (-ī); v. s v. āloium.

अणऊठीं *aṇa ūṭhīṁ* 'while not got up, not dispersed" past part. loc. sg. 164 OG. ana + ūṭhi + loc. suffix iṁ. v. s. v. ūṭhiu.

अणघातिइ *aṇa ghātii* "not throwing" past part. loc. sg. 315. OG. ana + ghātiī, v. s v. ghātiu.

अणछाणियां *aṇa chāṇiyāṁ* "not filtered" adj. past part. n. pl. 440. OG. aṇa + chāniyāṁ. v. s. v. achāṇiu.

अणजाणिया *aṇa jāṇiyā* "not known" adj. past part. pl. m. 150, OG. ana + jāṇiyā, v. s. v. jāṇai.

अणदीधउं *aṇa dīdhauṁ* "not given" adj. past part. n. dir. sg. 463. OG. ana + dīdhaum v. s. v. dei.

अणपडिहिं जि *aṇa paḍihiṁ ji* "not fallen" past part. loc. sg. (ji emphatic) 313; cf. paḍiī 312; OG. ana + paḍihiṁ, v. s. v. paḍai.

अणपूगइ *aṇa pūgai* "not reaching farther" past part. loc. sg. 296. OG. ana + pūgau, v. s. v. pūgau.

अणपूछी *aṇa pūchī* "without asking" abs. 164. OG. ana + pūchī v. s. v. pūchai.

अणविहरतां *aṇa viharatāṃ* "in not moving out" pres. part. obl. gen. 223; OG. aṇa + viharatāṃ v. s. v. viharai.

अणसणु *aṇasaṇu* "fast" sub. n. dir. sg. 573. Sk. anaśanam, Pk. aṇasaṇa.

अणहूंता *aṇahūṃtā* "not having" past part. pl. 450; OG. aṇa + hūṃtā, v. s. v. hoi.

अणाविउ *aṇāviu* "brought on to oneself" caus. past part. m. dir. sg. 326. Note that though the causal base is used, the meaning is not causal, the context is: aticāru aṇāviu huyai. āṇivā inf. of purpose 333. Sk. ānayati Pk. āṇei. MG. āṇvũ.

अणुठाणु *aṇuṭhāṇu* "religious practice" sub. dir. sg. n. 325. Sk. anuṣṭhānam Pk. aṇuṭṭhāṇam; note the short -u- in OG. before a long vowel in the succeeding syllable.

अणुवाई *aṇuvāī* "one who studies" sub. dir. sg. m. 355. Sk. anuvācin, Pk. aṇuvāī, aṇuvāī.

अत *ata* "now, here" used as a particle, as a response to a question. 339; meaning and derivation are not clear. cf. however, Sk. atra, Pk. atta. Bloch atā.

अतिक्रमावइ *atikramāvai* "causes to pass, passes" v. caus. pres. 3rd sg. 461 462,589. lw. Sk. ati kram- 'to cross over'.

अतिचारिउं *aticariuṃ* "transgressed" past part. dir. sg. n. 523 lw. Sk. aticar- 'to transgress.'

अतिविक्रमवंतु *ativikramavaṃtu* proper noun m. dir. sg. 553.

अतिसउ *atisau* "excess, peculiarity" adj. m. dir. sg. 435; atiśau (v. l. atisau) 426; lw. Sk. atiśaya-.

अतिसी *atisī* "linseed" sub. f. 311. cf. Sk. atasī 'flax linum-usitatissimum, linseed;' MG. alsī. Bloch alśī, Turner ālas, tisī.

अथाणउं *athāṇauṃ* "pickles" sub. dir. sg. n. 300. cf. MG. athāṇũ n. pickles; it refers to pickles in general, each special variety e. g. mango pickle, has its own name. These pickles are made once in a year, and then preserved, and consumed during the year. Considerable amount of fermentation precedes before it is ready for consumption. Hence its relation with fermentation may be noted. cf. MG. āthvũ v. trans. 'to ferment', ātho sub. m. 'fermentation'. athāṇũ can be a nominal derivative. Source of these words is not known; relation with Sk. base ā + sthā in the sense of 'coagulation' may be considered.

अदेखता *adekhatā* "not seeing" pres. part. m. pl. 489,547, OG. a + dekhatā. v. s. v. dekhai.

अधिकेरउं *adhikeraum* "more and more" adj. dir. sg. n. lw. Sk. adhika + OG. -eraum, Sk. -tara-, Pk. -yara.

अधिवासियां *adhivāsiyāṃ* "worshipped -by means of perfumes-" past part. n. dir. pl. 483. lw. Sk. adhivāsita-.

अनइ *anai* "and" conj. 38,74; also anī 93, Sk. anya- stereotyped loc. in OG.; MG. anE. Pk. anna-; Bloch ānī, Turner ani.

अनुमनइ *anumanai* "approves" v. pres. 3rd sg. 284,285; anumaniuṃ past. part. dir. sg. n. 326. lw. Sk. anumanute, anumanyate.

अनुमिणइ *anumiṇai* "infers" v. pres. 3rd sg. 403. cf. Sk. anumimāna- 'inferring' anumāna- 'inference'.

अनुमोदतां *anumodatāṃ* "supporting, agreeing" pres. part. obl. pl. 113. lw. Sk. anumodayati.

अनेक *aneka* "many" adj. 33; aneki loc. sg. 426; aneke prakāre inst. pl. 411; prob. lw. Sk. aneka-.

अनेरउ *anerau* "another, different" adj. dir. sg. m. 430, also anero 239, anerum n. 326; -rai inst. sg. 535, also -rei, -rai inst pl. 442; -aiṃ, -ai, loc. sg. 73; -rā obl. pl. m. 532,538; -rāṃ n. pl. Sk. anyataraḥ Pk. aṇṇayaro, aṇṇayara, ext. in OG. anera + u.

अनंत *ananta* proper noun m. dir. sg. 110.

अपहरइ *apaharai* "robs, snatches" v. pres. 3rd sg. 526; apaharisii (v. l. apaharasii) fut. 3rd sg. 544; apahariuṃ past part. n. dir. sg. 465. lw. Sk. apaharati; Pk. apahārī 'robber'.

अपाइ *apāi* "in trouble, in misery" sub. n. loc. sg. 434. lw. Sk. apāya-.

अपूरणु *apūraṇu* "non-fulfilment" sub. dir. sg. n. 523; lw. Sk. pūraṇa- 'fulfilment'. OG. a + pūraṇu.

अप्पथुई *appathuī* "one's own praise" sub. dir. sg. f. 326. lw. Pk; Sk ātma-stutiḥ, Pk. appa-thui; note the long ī.

अफेडणु *apheḍaṇu* "absence of destruction" sub. dir. sg. n. 129; OG. a + pheḍaṇu; v.s.v. pheḍivā.

अबांधतउ *abāṃdhatau* "not binding" pres. part. m. dir. sg. 517. OG. a + bāṃdhatau. v. s. v. bāṃdhai.

अभिनंदन *abhinaṃdana* proper noun m. dir. sg. 110.

अभिप्राउ *abhiprāu* "opinion" sub. m. dir. sg. 471. v. l. abhiprāyu 144; lw. Sk. abhiprāyaḥ.

अभिसिंचावइ *abhisiṁcāvai* "besprinkles" v. caus. pres. 3rd sg. 483; lw. Sk. abhisiñcati, caus. abhisecayati, abhisiñcayati, Pk. abhisiṁcāvei.

अभीरू *abhīrū* "fearless" sub. dir. sg. m. lw. Sk. abhīru, Pk. abhīru.

अभ्यसइ *abhyasai* "studies" v. pres. 3rd sg. 215 lw. Sk. abhyasyati, Pk. abbhasai.

अमुक *amuka* "particular (without specification)" pro. dir. sg. 164. lw. Sk. amuka–; Pk. amua.

अमूलिकु *amūliku* "invaluable" adj. dir. sg. 548. lw. Sk. amūlya-ka-; Pk. amolla–.

अमेल्हतउ *amelhatau* "not leaving" pres. part. m. dir. sg. 516; OG. a + melhatau. v. s. v. melhai.

अम्ह *amha* "we' pers. pro. obl. pl. 110,533; ambe nom. pl. 94,110,579, also ambi 605; Sk. asmád, asmā́n; Pa. Pk. ambe. Bloch āmhi, Turner hami.

अम्हारउं *amhāraum* "our" pers pro. sg. n. 537; also ambārau sg. m. 456, ambāru sg. m. 439; ambārā pl. m. 461,538. ambārī pl. f. 112, 455; ambārai loc. [illegible] n. 461. v. s. v. amba. Pk. amhāra–, Turner hāmro.

अर *ara* proper noun m. dir. sg. 110.

अरणेटउ *araṇeṭau* "a kind of white clay" sub. dir. sg. m. 20; MG. arṇeṭo. Der. not known; the word is recorded in Deś.; –ṭa–u, are, apparently, suffixes.

अरण्य *araṇya* "forest" sub. n. sg. (v. l. ariṇya) 554. lw. Sk. araṇya–; for -a-/-i- see Burrow BSOS. vol. p. 131.

अर्जनु *arjanu* proper noun (v. l. arjunu) m. dir. sg. 451.

अवलवणु *avalavaṇu* "concealing-truth-" sub. n. dir. sg. 365. Sk. apa-lapana–. Pk. avalavaṇa–; v. s. v. aulevevaum.

अवलंबी *avalaṁbī* "depending, resting upon" abs. 110; Sk. avalambya, Pk. avalambiya.

अवहेलियइ *avaheliyai* "is insulted, not respected" v. pass. sg. 436; Sk. avahelyate, Pk. avahela–.

अवंतिवर्द्धन *avaṁtivarddhana* proper noun m. dir. sg. 574.

अवंतिसेनु *avaṁtisenu* proper noun m. dir. sg. 574.

अवांछतउ *avāṁchatau* "not desiring" pres. part. m. dir. sg. 433. OG. a + vāṁchatau. v. s. v. vāṁchatau.

अशकटा *aśakaṭā* "one who does not possess a ca[rt]" sub. f. dir. sg. 94. lw. Sk. a + śakaṭā.

अशठु *aśaṭhu* "honest" sub. dir. sg. m. 3. lw. S[k.] aśaṭha–.

अशुकुनु *aśukunu* "ill-omen" sub. m. dir. sg. v. aśakunu 450; lw. Sk. a + śakuna–. Note t[he] change śakuna to śukuna–.

असकता *asakatā* "not able, incapable" pres. pa[rt.] m. dir. pl. 109; OG. a + sakatā. v. s. v. sakai.

असन्नी *asannī* "not having consciousness (Ja[in] theological term – one who is not a Jain)" su[b.] dir. sg. m. 33. Sk. asañjñin, Pk. asaṇṇī.

असवार *asavāra* "rider, horsemen" sub. m. di[r.] pl. 456. Sk. aśvavāraḥ; cf. Pers. asvār.

असांभरताई *asāṁbharatāī* "while not rememb[e]ring" pres. part. pl. m. 345; ī emphatic. O[G.] a + sāṁbharatā, v. s. v. sāṁbharai.

असीसउ *asīsau* "hundred and eighty" num. 61[.] Sk. śatám, Pk. saya–, OG. sau 'one hundred' For OG. asī, cf. Sk. aśītiḥ, f. Pa. asīti, Pk. asī Bloch aiśī, Turner assi.

असुभ *asubha* "inauspicious" adj. dir. sg. 481; lw. Sk. aśubha–.

अश्रुजल *aśrujala* "tears" sub. n. dir. pl. 537. lw. Sk. aśru-jala–.

असंखउ *asaṁkhau* name of a chapter in the utta[]rādhyayana sūtra. 94.

अहुठे *ahūṭhe* "by three and half" num. inst. sg. 158. Sk. ardha- caturtha–, *ardha turtha– (Pischel §450, Katre NIA I. 6. pp. 401); also cf. later Sk. back formation adhyuṣṭa–, [Pk.] addhuṭṭha–. Note the exceptional -ddh- > h-. MG. ūṭhū n.

अंगलूहणउं *aṁgalūhaṇauṁ* "cloth used for wiping the body" sub. dir. sg. n. 281. Sk. lūṣati 'decorates' Pk. lūhai, luhai 'wipes'. cf. MG. luvũ 'to wipe'.

अंगारा *aṁgārā* "burning charcoal" in the compound aṁgārājīvana– 'those who make living by selling charcoals for burning' 352. Sk. āṁgāra– Pk. aṁgāra–.

अंगूठउ *aṁgūṭhau* "thumb" sub. m. dir. sg. 113, aṁgūṭhai inst. sg. 461; aṁgūṭhā obl; Sk. aṁgūṣṭháḥ, Pk. aṁguṭṭha– ext. Bloch aṁguṭhā Turner aũṭho.

अंगीकरइ *aṁgīkarai* "accepts" v. pres. 3rd sg. 473 (used in the sense of fut.); aṁgīkare imp. 2nd sg. 473; aṁgīkariyai past part. loc. sg. 465,

aṃgikariuṃ past part. n. dir. sg. 472, Sk. aṃgikaroti, Pk. aṃgīkarei.

अंडुउ *aṃḍuu* "one who has a hammer in his hands" sub. m dir. sg. 213; also aṃḍuya 'hammer' 503; *der. not known.*

अंधारहं *aṃdhārahaṃ* "darkness" sub. obl. pl. n. 529; Sk. andhakāra-, Pk. aṃdhayāra-. Bloch aṃdhār, Turner ā̃dhyāro.

अंब तरु *aṃba taru* "mango tree" sub. n. 25; lw. Pk; Sk. āmraḥ, Pk. aṃba taru lw. Sk. Pk.

*

आकर्षइ *ākarṣai* "attracts, drags" v. pres. 3rd sg. 25. lw. Sk. ākarṣayati, ākarṣa-.

आकुड्य *ākuḍya* "resting against a wall" sub. in a comp. 442. lw. Sk. kuḍya n. 'wall'.

आक्रमिवा *ākramivā* "to attack" inf. obl. 81. lw. Sk. ākramayati, ākrama + OG -ivā (obl. of inf.).

आखर *ākhara* "word, letter" sub. dir. sg. m. 160. ākhari inst. sg. 1; Sk. akṣara-, Pk. akkhara, cf. Visaladeva Rāso (ed. Varma) p. 2· ākhara, this word is not used in MG, where it is replaced by the Sk. lw. (*for a discussion of* -kh- < -kṣ - see Turner BSOAS viii p. 795).

आगउ *āgau* "in front" adj. dir. sg. m. 456, āgai loc. sg. 38, 74, āge (v. l. āgai) 488, "in future" 464, Sk. ágra- Pk. agga- OG. ext; later used adverbially (as a stereotyped loc.) in the dialects of Rajasthan. Bloch agyā, agalā, Turner aghi, āge.

आगिलउं *āgilauṃ* "former, previous" adj. dir. sg. n. 168, āgilāṃ pl. n. 355, āgilai loc. sg. 456, -laiṃ loc. sg. 501, āgalī f. 684; v. s. v. āgau; with MI extension *-illaka-, OG. -ilau;* MG. āgaḷ 'in front' adv. is derived from ágra- with OG. ext. -lau. Bloch agalā, Turner aghillo.

आगामिउं *āgāmiuṃ* "forthcoming, approaching, relating to future" adj. dir. sg. n. 529; āgamii loc. sg. 624. cf. MG. āgāmī. Sk. āgamin, āgāmin, Pk. āgami, āgāmi, Sk. *ext. in OG.*

आगासगामिणी *āgāsagāmiṇī* "*flying in the sky*, an occult vidyā" adj. f. dir. sg. 434; Sk. ākāśagāmini-; lw., cf. Pk. āgāsagāmi-.

आगि *āgi* "fire" sub. dir. sg. f. 20. Sk. agniḥ m. Pa. aggi m. Pk. aggi- m. f. MI change in gender is due to analogy of -i ending nouns. MG. āg is f. Bloch āga, *Turner* āgo.

आघउं *āghauṃ* "further" adj. *adv. dir. sg.* n. 489, 545; āghau dir. sg. m. 452; āghai loc. sg. 446. Sk. ágra-, Pk. agga, later probably suffixed by Ap. terminations -hu, him, gives OG. -gh-. MG. āgho m. 'far, distant,' has a *slightly* altered meaning. Of the Indo-Aryan languages, N. alone has this -gh- form, but the meaning is "in front, previously" see Turner aghāḍi, aghi, aghil, aghillo.

आचरिउं *ācariuṃ* "performed," past part. dir. sg. n. 519. lw. Sk. ācaritam Pk. ācariya- with OG. -uṃ.

आछणु *āchaṇu* "filtered (water)" sub. dir. sg. 283. *der.* not known, cf. *however* MG. āchrelũ pāṇī 'clear water, when dirt has settled down.'

आजु *āju* "to-day" adv. 85,473,525; Sk. adyá- Pk. ajja. Bloch āja, Turner āja, āju.

आजूणां *ājūṇāṃ* "now" adv. 326. Sk. adya + adhunā; but the long -ū- in OG. remains unexplained. cf. Marathi ajūn for which Katre (Formation of Koṅkaṇi s. v. ajūni) suggests *adya + ahnaḥ*.

आठ *āṭha* "eight" *num. dir. sg.* 73. āṭha dūnauṃ sola "eight multplied by two is sixteen" 616. Sk. aṣṭaú, aṣṭā́ Pk. aṭṭha, Bloch āṭh, Turner āṭh.

आठमउ *āṭhamau* "eighth" ordinal dir. sg. m. 62. āṭhamai loc. sg. 355, āṭhamā obl. 223. Sk. aṣṭamáḥ Pk. aṭṭhama, *ext. in* OG

आण *āṇa* "command, rule" sub. f. dir sg. 644; *also* āṇi *f.* (v. l. āṇa) 517; Sk. ājñā-, Pk. āṇā. Note the MI treatment of the -jñ- nexus to -ṇ-; it may be an early simplification. Sk. ājñā, Pk. āṇā. Bloch āṇa.

आणइ *āṇai* "brings, fetches" v. pres. 3rd sg. 477; āṇiu past part. m. dir sg. 446; āṇiyā pl. 433; āṇiuṃ n. 459; āṇivauṃ *inf. dir.* sg. n. 438; āṇivā obl. inf. 333,532; āṇī abs.; aṇāvai caus. pres. 3rd sg. 111,533; aṇāviuṃ past part. dir. sg. n. 465; aṇāvī abs. 465, (v. l. āṇāvī) 447. MG. āṇ-vũ 'to bring'; also cf. MG. āṇũ n. 'items – mainly ornaments and household goods – brought by the bride from her parents' house to her father-in-law's house.' Sk. ānayati Pk. āṇai. Bloch āṇaṇẽ.

आथमण *āthamaṇa* "setting – of the sun –" sub. n. sg. 556; Sk. astamanam (astam-áyana), Pk. atthamaṇa.

आदित्यु *āditya* proper noun m. dir. sg. 547.

आदेसु *adesu* "order, command" sub. m. dir. sg. 109 lw. Sk. ādeśaḥ, Pk. ādesa-.

आधउ *ādhau* "half" adj. dir. sg. m. 95. Sk. ardhaḥ, Pk. addha-, Bloch ādhā, Turner ādhā.

आनपान *ānapāna* "breathing, inhaling and exhaling" sub. Jain thelogical term lw. Sk. āna + prāṇa; note the second -n- changed to -n- by the influence of āna.

आपइ *āpai* "gives" v. pres. 3rd sg. 534, āpaum 1st. sg. (in future sense) 463; āpi imp. 2nd sg. 386; āpiu past part. m. dir. sg. 548; āpiyā pl. 386; āpī f. dir sg. 365; āpisii fut. 3rd sg. 534, āpāvai caus. pres. 3rd sg. 558, Sk. arpayati, Pk. appei.

आपडियइ *āpaḍiyai* "when falls together, comes together" past part. loc. sg. 186; OG. ā + paḍiu v. s. v. paḍai.

आपणउ *āpaṇau* "one's own" pro. dir. sg. n. 111, 556; āpaṇā obl. m. 85,459,463,560; also āpaṇāṁ n. 554, āpaṇī f. 74,622; āpaṇai inst. sg. 73,559, also loc. sg. 557. Sk. ātmán, Pk. appaṇo, ext. in OG. Bloch āp, Turner āphnu.

आपणपउं *āpaṇapaum* "one's self" pro. dir. sg. (v. l. āpaṇapau) 74,85,112; āpaṇapā obl. sg. 38,440, 554; āpaṇapaiṁ inst. sg. 85, 551. āpaṇa ext. with -paum <sk. -tvaka-.

आपसाखि *āpasākhi* "with self as witness" sub. inst. sg. 564. For āpa- v. s. v. āpaṇau; Sk. sākṣya- Pk. sakkha n.

आपहे *āpahe* "by one's self" pro. inst. sg. 1,47,349, 474,520,557. For āpa- s. v. āpaṇau; āpahe seems to be an archaism cf. Pk. appa, inst. appehi.

आभिओगिक *ābhiogika* "a type of gods, in Jain Mythology". m. dir. pl. 74. lw. Sk. ābhiyogika-, Pk. ābhiogiya.

आभीषी *ābhīṣī* "having caused fear" abs. 545. lw. Sk. ābhīṣayati. Sk. ābhīṣ- + OG. -ī.

आयूषउं *āyūṣaum* "span of life" sub. dir. sg. n. 25. Sk. āyuḥ, āyuṣya-, āyuṣka-, Pk. āu, āusa, āukka. If the OG. -ṣ- may be interpreted as representing -kh- (cf. MG. āykhũ n.) then the line of development is Sk. āyuṣka-, Pk. āukka, ० āukkha -; otherwise it may be treated as a lw. from Sk; cf. MG. āyuṣ.

आराडि *ārāḍi* "scream, shout" sub. f. 25,81. Sk. āraṭati, Pk. āraḍai; Pk. rāṭi, rāḍi, "quarrel" cf. MG. rāṛ f. (Also cf. MG. raḍvũ 'to cry', āraḍvũ 'to shout'.)

आराधिउ *ārādhiu* "worshipped" past part. m. dir. sg. 470. lw. Sk. ārādhita-, ārādh- + OG. -iu.

आरीसइ *ārīsai* "in the mirror" sub. loc. s. 373 Sk. ādarśa- m. Pk. āyaṁsa, āyaṁsa OG. -ī- cannot be explained; it may be p... plus. MG. has ārso m. 'a big mirror', ... 'a small mirror'. ; Marathi has only the ... form; most of the other IA languages ... only the f. form. Bloch ārsī, ārsī, Turner ...

आरंभिउं *ārambhiuṁ* "started, commenced" past part. n. dir. sg. 94; ārambhī f. 573 Sk. ārabhya-, Pk. ārambhia- + OG -iuṁ.

आलउ *ālau* "residence" sub. n. dir. sg. 5... Sk. ālaya-.

आलावा *ālāvā* "recitations" sub. obl. pl. m. 1... Sk. ālāpa- Pk. ālāva- ext. in OG.

आलोइउं *āloiuṁ* "atoned, repented" past part. ... dir. sg. (v. l. āloiuṁ, āloyauṁ) 34; āloi (v. l. āloiyai, -iṁ) loc. sg. 142; āloisu fut. 1st s. 320; āloiyaiṁ pass. pl. 338; āloī abs. 53... Sk. ālocate Pk. āloei.

आलोची *ālocī* "having atoned, repented" abs. ... lw. Sk. āloc- + OG. -ī abs. v. s. v. āloiuṁ.

आवइ[1] *āvai*[1] "comes" v. pres. 3rd sg. 85,469; ... pl. 44,450; āvauṁ 1st pl. (in fut. sense) ... āvi imp. 2nd sg. 536, āvau 3rd sg. 108,532,... āvisii fut. 3rd sg. 110,536, āvisiṁ pl. ... āvata pres. part. (unenlarged) 452; āvatau pres. part. (enlarged) dir. sg. m. 112,483,573, ... obl. 454, 534; āvatāṁ obl. 108; āvate loc. ... 377; āviu past part. dir. sg. m. 73. āviuṁ ... 94, āviyā (v. l. āvyā) pl. 38; āvyāṁ n. pl. ... also āviyau past part. m. dir. sg. 527; ... loc. sg. 461, also āvii (v. l. iyai) 517; ... 434,553,604; āvī abs. 426,559. Sk. āyāti ... explain the intrusion of -v-; Sk. āpayati, ... āvei. Turner āunu.[1]

आवइ[2] *āvai*[2] "knows" v. pres. 3rd sg. 94; ... past part. n. dir. sg. 94; āviyāṁ pl. 94 ... s. v. āvai[1].

आवपहारि *āvapahāri* "approaching" sub. loc. ... (loc. abs.) 282. OG. āvapahāra agent ... derived from the base āva-; dir. s. v. āvai.

आवर्जितु *āvarjjitu* "inclined-favourably" past part. m. dir. sg. 466. lw. Sk. āvarjitaḥ.

आवली *āvalī* "a very short unit of time" Jain theological term. sub. sg. f. 397. lw. Sk.

आश्रयी *āśrayī* "having obeyed" abs. 523. lw. Sk. āśraya-OG.-ī abs.

आसंसा *āśaṁsā* "longing for praise, glory" ... f. obl. sg. (v. l. āśaṁsā) 573. lw. Sk. āśaṁsā

उपोसिउ *uposiu* "abstained from food, fast" past part. m. dir. sg, 85; lw. Sk. upośita-.

उमकु *umaku* "some, particular" indef. pron. dir. sg. n. 309; umaki loc. sg. 282, 309 lw. Sk. amuka; cf. Sk. pronom. base amu, used in the declension of the pronoun adás- "that" MG. amuk.

उयारउ *uyārau* "place where water is dragged from the well or a pond" sub. dir. sg. m. 79; Sk. ava-tāraka-, Pk. oyāraga, MG. ovāro, higher o- in MG. suggests an early contraction of ava; OG. reading u- should be interpreted in that light.

उरहउ *urahau* with parahau, "here and there-far and near" 525. for der. s. v.

उलिउं *ulium* past part. n. sg. 91; meaning and derivation not known.

उल्हसइं *ullasaiṁ* "shine, rise" v. pres. 3rd pl. 516; ullasī past part. f. dir. sg. 426. Sk. ullasati. Pk. ullasai lw. Pk

उसहु *usaha* "medicine" sub. dir. sg. 450. Sk. oṣadhiḥ f., Pk. osahi f., osaha n. MG osaṛ. OG u- seems to be graphic, probably an error.

उंदिर *uṁdira* "mouse" sub. n. obl. sg 545 Sk. lex. undura-, unduru. Pk. umdara, umdura.

•

ऊ *ū* emphatic particle 41, 48, 456, 525. sometimes precedes ju emphatic, also kadācitū (Sk. kadācit + OG ū) 56. see Tessitori §104, cf. Sk. tu, Pk. u.

ऊखल *ūkhala* "a wooden mortar" sub. sg 520. cf. Sk. udūkhala-n. Pk. udūkhala, uūkhala-m. n. also Pk. ukkhala; probably a non-Aryan borrowing. Bloch: BSOS V. 4, Turner, okhli.

ऊगरिउं *ūgariuṁ* "saved, escaped" past part. dir. [illegible] n. 85, ūgariyaṁ n. 175; ugaratā (note the short u-) pres. part. pl. m. 341. Sk. udgirati, [illegible]-, Pk. uggilai, uggāra, uggila. MG [illegible] Bloch ugalṇeṁ, Turner ugilnu,

[illegible] "gone up" past part. dir. sg. [illegible] udgata, Pk. uggaa-, OG [illegible] suffix -iu.

[illegible] "causes to [illegible]" [illegible] (v. l. [illegible]) [illegible]

[illegible] adj [illegible]

[illegible] as n. adj [illegible]

dāvai; cf. MG. ugharvũ, ughāḍvũ Turner ughārnu.

ऊचरइ *ūcarai* "speak" v. pres. 3rd sg. 325, 364. ūcaratāṁ 'while uttering' 154. obl. of the pres. part. but the nasalisation may be due to the loc. sense, see however Dave p. 51. ucarivā ger. pl. m. 10, also-revā 160. Sk. uccarati Pk. uccarai.

ऊछलिउ *ūchaliu* "sprang up, rose up" past part. m. dir. sg. 521, -lī f. 483. Sk. ucchalati, ucchalita Pk. ucchalai, ucchali-. Turner uchalnu.

ऊजालता *ūjālatā* "causing to shine, illuminating" caus. pres. part. m. dir. pl 522. Sk. ujjvalati, caus. ujjvalayati, Pk. ujjāla-. Turner ujyālnu.

ऊजेणि *ūjeṇi* name of a town (v. l. ujjeṇi) f. 435.

ऊठिउ *ūṭhiu* "got up" past part. m. dir. sg. 73, ūṭhī abs. 103, 341. ūṭhiuṁ. n. sg. 326. ūṭhālī caus. abs. 416, ūṭhi imp. 2nd sg. 399. cf. Sk. uttiṣṭhati; Sk. ut + sthā, Pk. uṭṭhai Bloch uṭhṇeṁ, Turner uṭhnu.

ऊड *ūḍa* "name of a tribe of diggers", 396, for der. s. v. oḍa.

ऊणउ *ūṇau* "deficient" adj. dir. sg. m. 339, ūṇā pl. also uṇāṁ (note the short u-) 332, Sk. ūnā, Pk. ūṇa ext. with OG. -u. s. v. ūṇatā.

ऊणाती *ūṇatī* "deficiency", sub-abstract noun-f. sg. 459. Sk. ūnā, Pk. ūṇa, der. with OG -tī.

ऊतरिउ *ūtariu* "got down, came down" past part. m. dir. sg. 463, 522, 539; ūtaratao pres. part. m. dir. sg. 434, 279, ūtarī abs. 73, ūtarī pass. 3rd sg. 296, ūtaraiṁ caus. pres. 3rd pl. 521; ūtaraūṁ 1st sg. 74; ūtarīsyaṁ fut. 1st pl. 495; utarī abs. 525, [illegible] obl. of inf. of the causal base 377. Note the short u-, Sk. uttarati, Pk. uttarai. Bloch [illegible], Turner utranu.

ऊतर *ūtara* "reply, answer" sub. m. dir. sg. 7, 244, 450, Sk. uttara-, Pk. uttara-.

ऊतावल *ūtāvala* "hasty, fast" adj m. dir. sg. 453 [illegible] also pl. 456, Sk. utsu [illegible] Pk. uttāvala- ext. [illegible] [illegible] Turner utālo.

[illegible] "[illegible]" [illegible]

[illegible] "[illegible] ants" sub. [illegible] [illegible] Guj. word, der. [illegible]

इसउं *isaum* "thus, in this way" adv. adj. n. sg. (v. l. isyau, isau) 73, 74; also isum 474; isai inst. sg. 73; also isaim 522; also isaim (v. l. isai) 533; ise inst. pl. 376; isā obl. sg. 535, 541; also pl. 573; also isām pl. 522; isī f. inst. sg. 74, 522. Note the short i– in OG. Sk. īdṛśāḥ, īdṛśakaḥ; Pk. īdisa, īisa. Turner uso.

इसी *isī* "eighty" num. 617. cf. OG. asī, for der. s. v. asīsau.

इंद्राणी *imdrāṇī* "Indra's wife" f. dir. sg. 74. lw. Sk.

इहिकु "belonging to this" pro. 85 (v. l. ihiku, iha hū, iha loki). The termination –ku is a borrowing from midland (unless the derivation be aihika–which is also likely); note the reluctance of the mss. to accept the termination; der. s. v. imham.

•

ई ī particle of emphasis 73, 94, 432, also īm 544, 554 for der. s. v. i.

ईछउं *īchaum* "I wish" v. pres. 1st sg. 158. Sk. icchāmi, Pk. icchāmi, Ap. icchaum.

ईर्ष्यालु *īrṣyālu* "jealous" (v. l. īrṣālu) m. dir. sg. 516. lw. Sk. īrṣyālu.

ईह *īham* "these" dem. pro. obl. pl. 336; also imham 346. Sk. eṣaḥ Pk. eso Ap. eho m., eha, n. Note the initial short and long i– in OG.

ईहीं *īhīm* "in here, here" adv. 425, 573. Sk. ihá + OG emphatic ī. s. v. imham.

ईहां *īhām* "here (v. l. ihām, ihā) adv. 85. cf. Sk. ihá. Turner kahām.

•

उगउ *ugau* "agitated, alarmed" past part. m. dir. sg. 34 der. uncertain.

उगरता *ugaratā* "being saved, remaining" pres. part. pl. m. 341. For der. s. v. ugarium.

उच्छवि *ucchavi* "in the celebration" sub. m. loc. sg. 527; Sk. utsavaḥ, Pk. ucchavo, lw. Pk. ucchava + OG. loc. termination –i. cf. MG Ochav.

उच्छेदिउ *ucchediu* "cut off, destroyed" past part. m. dir. sg. 425. lw. Sk. ucchedа + OG –iu past part. inflection.

उजयिनी *ujjayinī* name of a town f. sg. 574.

उठिउ *uṭhiu* "got up, grew" 434. der. s. v. uṭhiu.

उद्खारकरणु *udkhārakaraṇu* "act of belching" sub. dir. sg. 42. udkhāra + karaṇa, cf. MG. odkar, der. not clear.

उत्कटु *utkaṭu* "fierce, mighty" (v. l. utkaṭa) adj. m. dir. sg. 444. Sk. utkaṭa, Pk. ukkaḍa–. lw. Pk.

उदइ udai "to the rise" sub. loc. sg. 94. lw. Sk. udaya–.

उदाहरी *udāharī* "gave an example" past part. f. 383. Sk. udāharati, Pk. udāharai (lw. from Sk.).

उद्दिसी *uddisī* "referring to" abs. 360. 464. Pk. uddiśati, uddiśya Pk. uddisai, uddisiya, lw. from Pk. uddis– + OG. ī.

उन्हाले *unhāle* "in summer" sub. m. loc. sg. 401. Pk. uṣṇa + kālaḥ, Pk. unha–, ext. in OG. unhālau; MG unālo; Note the short u– in OG, probably on account of the following –ā– in the next syllable.

उपदिशतउ *upadiśatau* "advising, instructing" pres. part. m. dir. sg. 529. lw. Sk. upadiśati, upadiśa + OG.–tau.

उपरमिउ *uparamiu* "reached, terminated" past part. m. dir. sg. 434, 544. lw. Sk. uparama + OG. suffix –iu.

उपलभी *upalabhī* "having obtained" abs. 527. lw. Sk. upalabhate, upalabha + OG. –ī. s. v. lahai.

उपशामिउं *upaśāmiuṁ* "assuaged, calmed" past part. n. dir. sg. 589, upasamāvaum caus. pres. 1st sg. 326, upaśamāvī caus. abs. 556, upaśamāviva obl. of inf. caus. 351. lw. Sk. upśāmyati, upśama– + OG. suffixes.

उपसंहरतउ *upasamharatau* "while finishing" pres. part. dir. sg. m. 630. lw. Sk. upasamharati, upasamhara + OG. suffix –tau.

उपाडणहारु *upāḍaṇahāru* "one who carries a burden" sub. dir. sg. m. 602. upāḍaṇa + hāru; note the short u–, Sk. utpāṭayati 'to tear up, pull out', utpāṭana–, Pk. uppāḍaṇa 'to raise up'. –hāra is an agentive suffix; 'one who carries' cf. karaṇahāra 'one who does'; from which MO. –nār has developed. This –āra is probably comparable to Sk. –kāraḥ, but –h– cannot be explained except as intrusive. upāḍaṇa + haru in OG was probably pronounced with –nh– (for aspiration moving to the initial syllable cf. scribal variations such as sāmuhau, sāmhau; Sk. sammukha–) developing as –n– in MG. An alternative suggestion is –dhāra, see Dave s. v. ūtāracahāra.

उपार्जिउं *upārjiuṁ* "earned, attained" past part. dir. sg. n. (v. l. upārjium) 428; upārjiyām pl. 331; upārjatau pres. part. m. dir. sg. 441, upārjatām obl. pl. 120, upārjām pres. 1st pl. 435, upārjī abs. 424. lw. Sk. upārjayati, upārja– + OG. suffixes.

उपोसिउ *upositu* "abstained from food, fast" past part. m. dir. sg. 65; lw. Sk. upośita–.

उमकु *umaku* "some, particular" indef. pron. dir. sg. n. 309; umaki loc. sg. 282, 309 lw. Sk. amuka; cf. Sk. pronom. base amu, used in the declension of the pronoun adas– "that" MG. amuk.

उयारउ *uyāru* "place where water is dragged from the well or a pond" sub. dir. sg. m. 79; Sk. ava-tāraka–, Pk. oyāraga; MG. ovāro; higher o– in MG. suggests an early contraction of ava; OG. reading u– should be interpreted in that light.

उरहउ *urahau* with parahau, "here and there–far and near" 523. for der. s. v.

उलिउं *uliuṁ* past part. n. sg. 91; meaning and derivation not known.

उल्लसइं *ullasaiṁ* "shine, rise" v. pres. 3rd pl. 516; ullasī past part. f. dir. sg. 426. Sk. ullasati, Pk. ullasai lw. Pk.

उसहु *usahu* "medicine" sub. dir. sg. 450.
Sk. oṣadhiḥ f., Pk. osahi f., osaha n. MG osaṛ. OG u– seems to be graphic, probably an error.

उंदिर *uṁdira* "mouse" sub. n. obl. sg. 545. Sk. lex. undura–, unduru. Pk. uṁdara, uṁdura.

•

ऊ *ū* emphatic particle. 41, 48, 456, 525.
sometimes precedes ju emphatic, also kadāciū (Sk. kadācit + OG ū) 56. see Tessittori §104, cf. Sk. tu, Pk. u.

ऊखल *ūkhala* "a wooden mortar" sub. sg. 520. cf. Sk. udūkhala-n. Pk. udūkhala, uūkhala-m. n. also Pk. ukkhala; *probably a non-Aryan* borrowing. Bloch: BSOS V. 4., Turner, okhli.

ऊगरिउं *ūgariuṁ* "saved, escaped" past part. dir. sg. n. 85. ūgariyaṁ n. 175; ugaratā (note the short u–) pres. part. pl. m. 341. Sk. udgirati, udgāra–; Pk. uggilai, uggāra, uggāla. MG. ugarvuṁ. Bloch ugalpeṁ, Turner ugelnu, ugrāunu.

ऊगिउ *ūgiu.* "arose, gone up" past part. dir. sg. m. 482, 589. Sk. udgataḥ, Pk. ugga–, OG. ūg + past part. m. suffix –iu.

ऊघडावइ *ūghaḍāvai* "causes to open" v. caus. pres. 3rd sg. (v. l. ūghāḍāvai) 474; ughāḍivā inf. 547. ughāḍauṁ adj dir. sg. n. 309 (OG. ughāḍa-der. as n. adj.) *Sk. udghāṭayati caus.* ud-ghaṭ;. Pk. ugghāḍai; further caus. ugghāḍāvai; cf. MG. ugharvū, ughrāvvū Turner ughārnu.

ऊचरइ *ūcarai* "speak" v. pres. 3rd sg. 325, 366. ūcaratām 'while uttering' 154. obl. of the pres. part. but the nasalisation may be due to the loc. sense; see however Dave p. 51. ucarivā ger. pl. m. 10, also–revā 160. Sk. uccarati Pk. uccarai.

ऊछलिउ *ūchaliu* "sprang up, rose up" past part. m. dir. sg. 521,–lī f 483. Sk. ucchalati, ucchalita Pk. ucchalai, ucchali–. Turner uchranu.

ऊजालता *ūjālatā* "causing to shine, illuminating" caus. pres. part. m. dir. pl. 522. Sk. ujjvalati, caus. ujjvalayati, Pk. ujjāla–. Turner ujyālnu.

ऊजीणि *ūjīṇi* name of a town (v. l. ujjeṇi) f. 435.

ऊठिउ *ūṭhiu* "got up" past part. m. dir. sg. 73; ūṭhī abs. 163, 341. ūṭhiuṁ. n. sg. 326. ūṭhāḍī caus. abs. 446; *ūṭhi imp. 2nd sg. 589. cf. Sk.* uttiṣṭhati; Sk. ut + sthā, Pk. uṭṭhai Bloch uṭhṇẽ, Turner uṭhnu.

ऊड *ūḍa* "name of a tribe of diggers", 386, for der. s. v. oḍa.

ऊणउ *ūṇau* "deficient" adj. dir. sg. m. 339, ūṇā pl. *also ūṇāṁ (note the short u–)* 339, Sk. ūṇá, Pk. ūṇa ext. with OG. –u. s. v. ūṇatā.

ऊणता *ūṇatā* "deficiency", sub-abstract noun–f. sg. 459. Sk. ūná, Pk. ūṇa, der. with OG –tā.

ऊतरिउ *ūtariu* "got down, came down" past part. m. dir. sg. 463, 525, 539; ūtaratau pres. part. m. dir. sg. 434, 579; utarī abs. 73; ūtarīi pass. 3rd sg. 296; ūtāraiṁ caus. pres. 3rd pl. 521; ūtārauṁ 1st sg. 74; utārisiyāṁ *fut. 1st pl. 455; utārī abs. 528;* ūtārivā *obl. of inf. of the* causal base 377. Note the short u–, Sk. uttarati, Pk. uttarai. Bloch utarṇẽ, Turner utranu.

ऊतरु *ūtaru* "reply, answer" sub. m. dir. sg. 7, 284, 488; Sk. uttara–, Pk. uttara– .

ऊतावलउ *ūtāvalau* "hasty, fast" adj. m. dir. sg. *463; ūtāvalā obl. sg. 463; also pl.* 456. Sk. uttāpa- ext. with –la; Pk. uttāvala– ext. in OG. Bloch ūtāval, Turner utāulo.

ऊदेगियइ *ūdegiyai* "is troubled" pass. sg. 94. Sk. udvegaḥ borrowed in [illegible] idega, develops in OG. as [illegible] flection of OG.

ऊदेही *ū*[illegible] [illegible] f. 31; cf. MG. udh[illegible] [illegible] sanskritization of [illegible] not known.

ऊधरि *ūdhari* "remove, draw out" v. imp. 2nd sg. 44. Sk. uddharati, Pk. uddharai, uddharehi also -ahi imp.

ऊधसइं *ūdhasaiṁ* "rise, go up" v. pres. 3rd pl. 246; Sk. udharsate (ud-harṣate); cf. Pk. uddhusia, *uddhasai.

ऊधारी *ūdhārī* "by loan, credit", sub. inst. sg. 459; Sk. uddhāráḥ m. Pk. uddhāra m. Turner udhāro.

ऊधि *ūdhi* "the wooden seat in the centre of the yoke (of a cart)" sub. dir. sg. 44. Meaning is not quite clear; it may mean the vertical plank of wood fitted in the yoke, may be connected with Sk. ūrdhvá- . Doubtful.

ऊपजइ *ūpajai* "is produced, rises" v. pres. 3rd sg. 432; ūpajijiuṁ des. pres. 1st sg. 516; ūpāiyaiṁ caus. pres. 3rd pl. 553; ūpajāvatau pres part. m. dir. sg. 457; ūpajāvī caus. abs. 38, 483, Sk. utpadyate, Pk. uppajjai. Bloch upajṇẽ, Turner ubjanu.

ऊपनउं *ūpanauṁ* "produced, created" past part. dir. sg. n. 108; ūpanau 432; (v. l. ūpanu, 110) ūpanā pl. 44; ūpanī f. 463. Sk. ut-pad-, utpanna-; Pk. uppanna-ext. in OG.

ऊपरि *ūpari* "on, above adv. 74, 557; Sk. upari. Pk. uppari. Turner upar.

ऊपरवाडइ *ūparavāḍai* "on, above" adv. loc. sg. 577. Sk. upári adv. ūpara: Pk. uppar-. for vāḍau cf. MG. pachvaḍũ pachāṛī, "back, behind" and analogically MG. agāṛī "in front" cf. also P. pachavāṛā; in ūpara-vāḍai, vāḍai is possibly an analogical extension of the same but etymology is not clear. Turner (s. v. pachāṛī) suggests comparison with paścārdháḥ "hinder part".

ऊपहरउ *ūpaharau* "above, belonging to the above" adv. m. dir. sg. 10, ūpaharā (v. l.-hirā) obl. pl; 109 also ūpaharām obl. (gen.) 186; possibly ūpara + rahau; for der s. v. ūpari, and rahaiṁ.

ऊपहरउं *ūpaharauṁ* "more than" comparative adj. n. sg. 445, 553. v. s. v. ūpaharau.

ऊपाडी¹ *ūpāḍī*[1] "having lifted" abs. 432, 561; ūpāḍiu past part. m. dir. sg. 555. ūpāḍatām pres. part. obl (gen.), 211. Sk. utpāṭayati, Pk uppāḍei.

ऊपाडी² *ūpāḍī*[2] "having attained, obtained" abs. (v. l. ūpājivī) 38, 466; ūpāḍata pres. part. (unenlarged) 85, for der. s. v. ūpāḍī[1].

ऊपेला *ūpelā* "above" adv. adj. obl. sg. 247; upelai (note the short u.) loc. sg. 9; cf. MG. uplo adj. m. 'above' probably uppa- (cf. upari). with illa; cf. Pk. uppelia 'raised'.

ऊबीठउं *ūbīṭhauṁ* "nauseated, full of aversion" past part. dir. sg. n. 473; probably Sk. *ud- viṣṭa- (contrast praviṣṭa-) Pk. *uvviṭṭha; even though -v- > -b- remains doubtful though cf. H. ūb ūthnā. Extremely doubtful.

ऊभउ *ūbhau* "raised, elevated" adj. m. dir. sg. 456; ūbhā pl. 489, also obl. 48; ūbhām obl. 323; ūbhī f. 474. Sk. ūrdhváḥ Pk. ubbha-, uddha-, uddha-. Bloch ubhā, Turner ūbho.

ऊभडु *ūbhaḍū* "half standing position" dir. sg. 322, 326; Pk. ubbha ext. in OG -ḍau, developing as ū; der. s. v. ūbhau.

ऊभलूंखी *ūbhalūṁkhī* "(fried with) a little oil, refers to chapatti put on a frying pan with a little oil" adj. f. 315; etymology not clear; cf. however MG. lukhũ adj. 'dry, not buttered'; Sk. rūkṣa- Pk. lukkha-.

ऊलालउं *ūlālauṁ* "cause to toss up, jump" v. caus. pres. 1st sg. (in fut. sense) 537; ūlālī abs. 577. Sk. ullalati, Pk. ullalai; also *ullālayati Pk. ullālei. Bloch ulālā, Turner urlanu.

ऊषध *ūṣadha* "medicine" sub. dir. sg. 172. The initial u cannot be explained; lw. Sk. auṣadhám.

ऊसास *ūsāsa* "breathing" sub. m. 331; also ūsāsu 571. Sk. uchvāsah, Pk. ussāsa m. Bloch usās.

ऊसु *ūsu* "dew" sub. dir. sg. 20. MG. os. Sk. avaśyā f. Pk. ossā f. also Pk. ussā; also Sk. avaśyāya m. Pk. osāa m.

ऊंचउ *ūṁcau* "tall, high" adj. dir. sg. m. 616. also ūṁcu 533; uṁcai loc. 463; ūṁcā obl. 536. Sk. uccá Pk ucca. Turner ũc.

ऊंचपणि *ūṁcapaṇi* "due to height" sub. inst. sg. 614. ūṁca + panauṁ, for ūṁca, s. v. ūṁcau; Sk.-tvana, Pa.-tpana, Pk.-ppaṇa-, OG. ext. Pischel § 597.

ऊंन्हउं *ūṁnhauṁ* "hot" adj. dir. sg. n. 175. Sk. uṣṇá- Pk. uṇha- ext. in OG.

ऊंबाडु *ūṁbāḍu* "a burning stick, straw or a faggot" sub. dir. sg. 154; ūṁbāḍā obl. sg. 154. Sk. úlmuka-, Pk. ummua-, ext. -ḍau.

ए *e* "this" dem. adj. pro. nom. sg. f. m. 94, 363, 424, 491, 526; also pl. 455; also remote 133. Sk. eṣaḥ m; eṣā f. etat n.; Pk. esa m. esā f. etaṁ n.

एसइ *esai* "will accept alms" v. fut. 3rd sg. 137. Sk. eṣati Pk. esai, OG. e- with the future morpheme -isa-: esai.

एउ *eu* "this, that", dem. pro. 10. OG e + u, u is emphatic. For der. s. v. e.

एक *eka* "one, some" num. indef. art. 74, also eku 34, eki inst. sg. 425, also loc. sg. 38. Sk ekaḥ, lw. in Pk. ekka-, Bloch ek. Turner ek.

एकठी *ekaṭhī* "together" adj. f. 520, 616. ekaṭhāṁ n. pl. 520. Sk. eka-stha- Pk. ekkattha- ext.

एकत्रीसमउ *ekatrīsamaü* "thirty first" ord. obl 222. Sk. ekatriṁśat- Pk. ekkatīsaima, Note the retention of -tr- cluster in OG, also cf. MG ekatrīs.

एकलउ *ekalaü* "alone" adj. dir. sg m. 432; also ekalu 344; ekalā obl. sg m. 432; ekalī f 539. Pk. ekkalla 'strong, powerful'; note the retention of this meaning in the MG. compound 'ekal-vīr' 'the lone warrior'.

एकवार *ekavāra* "once" adv. 96, 300, 492. Sk. ekavāram, Pk. ekka- (also cf. bījivāra 96).

एकवीस *ekavīsa* "twentyone" num. dir. 74; ekavīsāṁ pl. n. 74; ekavīse inst. pl. 239, Sk. ekaviṁśatiḥ, Pk. ekkavīsam, Turner ekkīs.

एकहुत्तरि *ekahuttari* "seventyone" num. dir. 74. From Sk. eka-saptati to Pk. eka-hattari, for Sk. -t- to Pk. -r- see Pischel § 245. -r- is noted in cognate Indo-Aryan languages excepting Kashmiri and Sinhalese. Bloch sattar, Turner ek'hattar.

एकादशमी *ekādaśamī* "eleventh" num. card. f. dir. sg. 435. lw. Sk. ekādaśa + OG. -mī.

एकासणउं *ekāsaṇaüṁ* "vow of eating once" sub. dir sg. 300. (a Jain vow) OG. eka + āsanaum; Sk. āsanam Pk. āsana- ext. MG. ekāsṇũ.

एक सउ सतेतालु *eka sau satetālu* "one hundred fortyseven" num. 285. For ekasau, v. s. v. eka and sau. satetālu: Sk. saptácatvāriṁśat, Pk. satta cattālisa, *sattyattālisa. MG. has, however, suṛtālis, prob. on the analogy of aṛtālis (forty eight) Turner saltālis.

एग *ega* "one" num. dir. sg. 142 lw. Pk. ega; v. s. v. eka.

एतलउ *etalaü* "so much, that much adj. dir. sg. 426; etalā obl. pl. 431, 480; etalāṁ n. pl. 74; also used as etalāṁ ke 553; etalai loc. sg. 74, 431; etale inst. pl. 74; etalī dir. sg. f. 74, also etalīṁ f. 112. Sk. iyattakaḥ cf. iyat; Pk. ettula Bloch itukā, Turner uti.

एरंड *eraṇḍa* "the castor-oil plant, Ricinus Communis or Palma Christi". sub. sg. 311. Sk. eraṇḍaḥ Pk. eraṇḍa.

एरावण *erāvaṇa* "Indra's elephant" m. dir. sg. 74. Sk. airāvaṇa-, Pk. erāvaṇa.

एवडउ *evaḍaü* "so big" adj. dir. sg. m. 539; evaḍe inst. sg. 470. Pk. evaḍḍa- ext.

एह *eha* "this" dem. pro. nom. sg. 74, 94, 110; ehe inst. pl. 386, also ehū 381, with emphatic -u; v. s. v. e in OG; eha is an archaism, Sk. eṣaḥ, Pk. eso, eha.

•

ओकली *okalī* "(wind) which spreads like a wave" adj. sg. 20. Sk. utkalikā f. 'a wave' Pk. ukkaliyā f.

ओगुणीस *oguṇīsa* "nineteen" num. dir. 41. cf. MG. ogṇīs. see Pischel's suggestion *apa-guṇa-viṁśati, § 444. v. s. v. iguṇatrīse.

ओघउ *oghaü* "the staff carried by Jain monks" sub. dir. sg. m. 158. oghai loc. sg. m. 135. Sk. ava-grahaḥ, Pk. oggaha-, oggaha- ext. in OG.

ओछावणु *ochāvaṇu* "covering", sub. dir. sg. 12. Sk. ava-cchādana- Pk. occhāyaṇa- note the -y- changing to -v-, which cannot be explained.

ओटहिया *oṭahiyā* "rolled in dust (?)" past part. pl. 22. Derivation not clear.

ओठंभी *oṭhaṁbhī* "having supported" abs. 44. Sk. avaṣṭabhya Pk uṭṭhambhiya.

ओड *oḍa* "wandering tribe of workers and craftsmen" sub. m. dir. pl. 386. Sk. oḍra-, Pk. uḍḍa. Turner oṛ.

ओडइ *oḍai* "in the residence." sub. loc. sg. 533. cf. Sk. uṭaja.- Pk. uḍaya-.

ओदाली *odālī* "having snatched" abs. 187; ūdāliva inf. of purpose 105. Sk. uddalati caus. uddāla-, Pk. uddālai.

ओधारि *odhāri* "by loan" sub. inst. sg. 182. also cf. ūdhāri. Sk. uddhāraḥ Pk. uddhāra-; Turner udhāro.

ओयरइ *oyarai* "adds, puts in, refers specially to cooking when grain is put in boiling water"- v. pres. 3rd sg. 189; oriyai past part. loc. sg. 175, also pass. sg. 175; MG. or-vũ. Sk. avatā'

rayati, Pk. *oyārei; cf. Sk. avatāraka- Pk. oyāraga-.

ओरइ *orai* "in the neighbourhood, near, prior," adv. loc. sg. 179; also orai parai "near and far" 391; Sk. àvaraḥ, ext. v. s. v. parahau.

ओरहउ *orahau* "near, forward" adj. dir. sg. m. 425; orahā pl. (honorific) (v. l. urahā) 108; also orahāṁ 151. cf. Sk. ávaraḥ; s. v. orai.

ओलखतु *olakhatu* "knowing, recognising" pres. part. m. dir. sg. 474; olakhiyā past part. m. dir. pl. 545; olakhī abs. 555. Sk. lakṣayati, poss. with Middle Indian prefix o-, Pk. o-lakkhai. Bloch olakhnẽ.

ओलगिउ *olagiu* "attached, stuck to" past part. m. dir. sg. 445; Sk. avalagnaḥ, Pk. olagga, OG. olag + iu.

ओलण *olaṇa* "without salt" adj. dir. sg. 304 cf. Sk lavaṇa-, possibly *apalavaṇa-.

ओसहु *osahu* "medicine" sub. dir sg. n. 527, osahī f. 432, 463, osadha-haṁ n. inst. pl. 521. Sk. auṣadham, auṣadhi-, oṣadhi-, Pk. osaha n. osahi n., osadha is lw. in OG.

ओसामणु *osāmaṇu* "which causes to dry" sub. dir sg. m. 303. Probably connected with MG. osāv-vũ 'to cause to dry, esp. to drain the water from rice' MG. osāmaṇ 'water derived from rice, a gruel;' see P. B. Pandit 'E and O in Gujrati' Ind. Ling. vol. xv p. 37. cf. Sk. avaśyātaḥ 'cooled'. Turner osmu.

ओहडणु *ohaḍaṇu* "removal, reduction" sub. dir. sg. n. 12, ohaḍāvaṇatthu. lw. Pk. 'for the sake of reduction' 331. Sk. apa + ghaṭanam, Pk. *ohaḍaṇam.

ओहटी *ohaṭī* "having sprinkled" abs. 551 cf. Pk. phrase amsujala-ohaliya-gaṁḍayalo "whose cheeks are sprinkled by tears" in Sheth's Pkt. Dictionary, under ohaliya, which he renders as 'darkened, lustreless'. Der. not known.

ओहि *ohi* "limit, border" (Jain theological term). sub. dir. sg. m. 325, Sk. avadhiḥ, Pk. ohi, final i cannot be explained, prob. ext. in Pk.

•

कइठु *kaiṭhu* "Feronia Elephantum and its fruit" sub. dir. sg 44; Sk. kapittha-, a kapi-stha, "on which monkeys dwell"; Pk. kavittha-, kaviṭṭha-, MG. koṭhī Bloch kavath, Turner kaïṭh.

कउडां *kauḍāṁ* "cowries" sub. obl. pl. n. (v. l. kavaḍāṁ) 461. Sk. kaparda- m., Pk. kavaḍḍa- m. Bloch kavṛā, Turner kauṛī.

कउण *kauṇa* "who" inter. pro. obl. sg. 463; kaunu dir. sg. 451, 534, 555; kuṇa obl. sg. 112, 557, also kuni 538; elsewhere kuni inst. sg. 545. Sk. káḥ púnaḥ, Pk. kavaṇu. Bloch koṇ, Turner kun.

कउतिग *kautiga* "curiosity, miracle" sub. n. sg. 465. lw. Sk. kaūtukam. -k- > -g- indicates an earlier loan.

कच्चोलक *kaccolaka* "a porcelain (or glass) cup" sub. dir. sg. 478 Pk. kaccolaya-. In OG. final -ya is replaced by -ka. MG. kacolũ.

कडाहा *kaḍāhā* "a large cooking pan" sub. obl. sg. m. 311. kaḍāhai loc. sg. 315. Sk. kaṭāhaḥ Pk. kaḍāha-, ext. in OG. Bloch kaḍhai, Turner karāi.

कडियाली *kaḍiyālī* 41; meaning and derivation not known.

कडुक *kaḍuka* "bitter" adj. dir. pl. (v. l. kaṭuka) 516; Sk. kaṭuka-, Pk. kaḍua-, OG. kaḍu ext. with -ka. Bloch kaṛū, Turner karuwa.

कणिक्क *kaṇikka* "a smaller variety of rice" sub. (in a compound kaṇikkādika) 509; also kaṇika 311. Pk. kaṇikka der. not known. Deśīnāmamālā 1.37 records kaṇikā 'wet dough for bread.' m. MG. there are two words kaṇki 'smaller grain of rice' and kaṇak, kaṇek dough for bread'.

कदाचितु *kadācitu* "any time, some time" adv. 91 lw. Sk. kadācit + OG. suffix -u.

कन्हइ *kanhai* "near" postpos. 94, 103, 549, also kanhā 74, 487, 533, 554; cf. Sk. kárṇe; Turner kana.

कपर्दक *kapardaka* "cowrie" sub. dir. sg. m. 21. lw. Sk. kapardakaḥ.

कपाट *kapāṭa* "door, panel of a door" sub. m. n. dir. pl. 547. lw. Sk. kapāṭa-.

करइ *karai* "does, accomplishes" v. pres. 3rd sg 85, 495; karaiṁ pl. 142; karauṁ 1st sg 85, 560, also karūṁ 521, 529; karisu fut. 1st sg 94, 530; karisiṁ 3rd pl. 489; karau imp. 3rd sg. (also 2nd pl.) 433, 495, 561, also karo 164; kari 2nd sg. 104, 537; karijiu pres. 3rd sg 426; karata pres. part. (unenlarged) 530, karatau pres. part. m. dir. sg. 85; karatā pl. 85, 544, karatāṁ gen. pl. 440, 450; karata

loc. sg. 74, 108; *karatī dir. sg. f.* 461, also karitī (v. l. karatī) 575; karivā obl. of inf. 94; karī abs. 38, 73, also post pas. 94, 109, 112; *kijai pass. sg.* 538, *kījaṁ pl. 433; kariu* past part. 403; karivauṁ ger. n. sg. 488 also karevauṁ 13, 500, also karīvauṁ 541, also *karivaṁ* 551; *karivau m. 326, also karevā* 442; karevī f. 10, 249; kareviyai 13, cannot be explained, it seems to be an error for karevī...................karāvai caus. pres. 3rd sg. 432, 474; karāvaiṁ 3rd pl. 483; karāvūṁ 524; karāvi imp. 2nd sg. 473; karāvisu *fut. 1st sg.* 543; *karāvatau pres part. m. dir.* sg. 73, also karāvītau 492, karāviu past part. m. dir. sg. 461; karāviyā pl. 74; karāvī f. *dir. sg. 73, 579; karāvivā obl. of inf. 533, 534,* karāvijiu pres. 3rd pl. 489. Sk. Pk. kar-; OG. kar-; Sk. karóti Pk. karei, karāvei; Bloch *karṇẽ*, Turner garnu.

करह *karaha* "camels" *sub. m dir. pl.* 507. Sk. karabhaḥ Pk. karaha.

करा *karā* "icicles (due to hail)" sub. m. pl. [illegible] Sk. karaka- m. 'hail', Pk. karaga- m.

करावणहार *karāvaṇahāra* "one who causes to act" sub. m. dir. sg. 53; OG. karāvana (from the causal base kar-) + -hāra agentive suffix; *-hāra may be derived from oblique ha + kāra,* or -h- may be intrusive. v. s. v. upālambhāra.

करावणु *karāvaṇu* "act of causing to do" sub. dir. sg. n. Pk. karāvaṇa; der. s. v. karai.

करोट *karoṭa* "a pot, basin" sub. in the compound *karoṭādiku bhājanu 305; lw.* Sk. karoṭa- m.

करोटक *karoṭaka* "a pot, basin" sub. in the compound karoṭakādi. 209. lw. Sk karoṭa-; s. v. karoṭa.

करोटी *karoṭī* "a pot, basin" sub f. 209. lw. Sk. karoṭa-; s. v. karoṭa.

कल *kala* "distance" (?) f. dir. sg. 456 der. not known.

कलकलतउं *kalakalatauṁ* "burning, boiling" pres. part. dir. sg. n. 577; kalakalatā obl. pl. m. 25; Sk. kalakala- Pk. kalakalanta-. In Sk. and Pk. it means only indistinct noise; perhaps it is transferred to the noise of any boiling liquid cf. MG. kaḷkaḷtũ tel 'boiling oil'.

कलसे *kalase* "by the water pot, pitcher" sub. m. inst. sg. 483; Sk. kalaśa-, Pk. kalasa-, MG. kalśo. Turner kalas.

कसियइ *kasiyai* "*is dragged*" *pass. sg.* 582. Sk. kaṣ- to injure, to rub. Pk. kas-to stiffen, to rub. Note the -ṣ- indicating a learned habit. Bloch *kasṇẽ*.

कहइ *kahai* "narrates, tells" *v. pres.* 3rd *sg.* 86; kahaiṁ (v. l. kahai) 38; kahauṁ 1st sg. 457, 463 (in fut. sense); kahisu fut. 1st sg. *626, kahi imp. 2nd sg. 426, also* kahehi 142; kahatī (v. l. kahitī) pres. part. dir. sg. f. 142. kahatāṁ gen. obl. pl. 552; kahiu past part. m. dir. sg. 386, 435 also kahiuṁ (v. l. kahiu) 38, 74; kahii loc. sg. 453, 468; kahiyā obl. pl. 386, 591; kahiyāṁ n. pl. 450, kahī f. 349; *kahivo ger. m. dir. sg. 132. Sk. kathayati, Pk.* kahehi, kahai. Turner kahanu.

कहां *kahāṁ* "where, in what" adv. 628; der. s. v. kihāṁ.

कहि *kahi* "whom" interr. pro. obl. sg. 101; for der. s. v. kahī; short -i cannot be explained.

कही *kahī* "any, some" indef. pro. obl. 529; (followed by eku) 560, (followed by sauṁ) *629; (followed by ūpari) 83; Sk. kasyāpi, Pk.* kassai; OG. kahī.

कहिं *kahiṁ* "sometime" indef. pro. loc. sg. 94. der. s. v. kahī.

का *kā* "someone" pro. dir. sg. f. 480, 514. Sk. kā, Pk. kā.

काइ *kāi* "by the body" sub. inst. sg. 316; Sk. kāya- m Pk. kāya- m.

काइया *kāiyā* "bodily" adj. dir. sg. f. 143; Sk. kayikā, Pk. kāiā.

काइं[1] *kāiṁ*[1] "*why, what for*" *inter. particle 531,* Ap. kāiṁ.

काइं[2] *kāiṁ*[2] "any" indef. pro. nom. n. (v. l. kāi, kāṁiṁ) 38, 465; kāi 463. Sk. kāṁcit.

काउस्सग्ग *kāusaggu* "in meditation, a form of Jain meditation" sub. loc. sg. m. 85; Sk. kāyotsarga- Pk. kāussaggo; lw. Pk.

काकबउ *kākabau* "half extracted juice of sugarcane" *sub. dir. sg. m. 314. der. not known.*

काछवा *kāchavā* "tortoise" sub. obl. sg. m. 150. cf. Ved. Sk. kaśyápa-, Sk. kacchapa- (*kakṣapa- 'inhabiting a marsh'). Pk. kacchava-, kacchabha- MG. kācbo. Bloch kāsav, Turner kachuwā.

काजउ *kājau* "work; assignment" sub. dir. sg. m. 323. Sk. kārya n. Pk. kajja -n. OG. kāja- ext. change in gender cannot be explained;

कुणइ *kuṇai* "by some one" inst. sg. 313. der. s.v. kuṇa.

कुदाल *kudāla* "spade" sub. sg. 5.4. Sk. kuddāla- m. 'mountain ebony,' kuddālaka- m. lex. Pk. kuddāla- ext; M G. kOdāḷ, kOdāḷo. Bloch kudāḷ, Turner kodālo.

कुसल *kusala* "clever" adj. m. d.r. pl. 333. Sk. kuśala-, Pk. kusala, Bloch kusaḷ. Turner kusal.

कुसा *kusā* "small pea-like pieces" sub. m. d.r. and obl. pl. 3?6, der. not known.

कुहणी *kuhaṇī* "elbow" sub. f. sg. 131. 279. MG kOṇī. Sk. kaphoṇi- m. Pk. kuhaṇī f.

कुहाड *kuhāḍa* "axe" sub. m. d.r. sg. 31?. cf. Sk. kuṭhāraḥ; Pk. kuhāḍa ext. Bloch kuṛhāḍ.

कुही *kuhī* "became rotten, suppurated" past part. f. d.r. sg. 521. Sk. kuthayati, kuthita-, Pk. kuhia-; Turner kuhunu.

कूडमाप *kūḍamāpa* "placing a false measure of weight" sub. obl. 47?; lw. Sk. kūṭa + māpa-.

कूटी *kūṭī* "having beaten" abs. 537. Sk. kuṭṭayati, Pk. kuṭṭai. Bloch kuṭṇẽ, Turner kuṭnu.

कूडउ *kūḍau* "false, untruth" adj. d.r. sg. 376, kūḍaum n. sg. 300,456; kūḍā pl. m. 489; kūḍa obl. sg. 450; kūḍi f. 450: (note the short –u–) obl. sg. 450; Sk. kūṭa–, kuṭaka– Pk. kūḍa– ext. Bloch kuṛā.

कूडी *kūḍī* "a type of vessel, sometimes made of leather, sometime of clay" sub f. 1?5. Etymology not known; cf. however Sk. kūṭi, kūḍī, 'bunch of twigs'.

कूति *kūti* "a type of plant from which bees make honey" the context is kūti naṁ madhu 316; der. not known.

कूतिरे *kūtire* "by dogs" sub. inst. pl. 519. MG. kutro. Der. not known. For some suggestions and other IA cognates see Bloch kutrā, Turner kuti.

कूया *kūyā* "well" sub. m. obl. sg. 556, 557. Sk. kūpaḥ, Pk. kūva–; ext. in OG. MG. kuvo. Turner kuwā.

के *ke* "some, those" indef. pro. nom. pl. 433. 456, 527; (v. l. kai) 455. Sk. kaḥ, ke, Pk. ke.

केडइ *keḍai* "at the back, after" adv. 434, ... stereotyped loc.; der uncertain. cf. ... ṭa–, kaṭi–, Pk. kaḍ–, and then the ... by epenthesis.

केतलु *ketalu* "some, how much" adj. ... 5?3; ketala obl. pl. 55, 578; Sk. kiyat ... Ap. ketula.

केतीवार *ketīvāra* "frequently" adv. ... vāra. Sk. kiyat-ka–, Sk. vāram; Pk. ... vāra– s.v. ketalu.

केवडु *kevaḍu* "how much, of what size" adj. n.r. sg. 74. Ap. kevala–; cf. ...

केवलज्ञानीया *kevalajñānīyā* "those ... kevalajñāna" sub. d.r. pl. 372, ... Sk. kevala-jñānin ext. in OG. ... jñānī.

केसरि *kesari* proper noun, d.r. sg. ...

को *ko* "some, any, who" indef. pro. ... f. 475, 488, 537; emphatic ... 483 ... koi (v. l. ko) 558. ... Pk. ko. Sk. kaḥ api Pk. koi. Turner ...

कोट *koṭa* "fortress" sub. d.r. sg. ... koṭṭa–, Pk. koṭṭa–.

कोट *koṭa* "fortress" sub. d.r. ... koṭa.

कोडि *koḍi* "a crore, ten million" ... 74; kolākoḍi 'ten millio... koḍi. MG. karoḍ.

कोडिन्य *koḍinya* proper n... kauḍinya) 109, 111.

कोणे *koṇe* "in the corner" ... sg. 36. Sk. koṇaḥ, Pk. ...

कोमासइं *komāsaiṁ* ... sub. m. obl. pl. ...

कोरी *korī* "dry" ... dry; der. ...

कोलिका *kolikā* ... sub. d.r. sg. ... a weaver ... sanskrit... for spider ... to the ... (see P... II. ...

... 450, MG. ... ,oing- gama- lw. in ... sg. 38, 126, 489, ... gatāḥ, ... 1st sg. ... inst. sg. ... garua–, ... adj. f. 71. with f. ... gālium gālayati, Turner ... (first kahaṁ) ... 38. Sk. gala- ... doubtful. ... sg. 423. cf. Sk. ... perhaps also n. in Sk., ... galā, Turner ... compound verb ... 56. Sk. galati ... 25; Sk. gāvī ... Bloch gāy, gāī ... (ement) ... Sk. gav- ... miles" ... 615;

possibly the present word means 'a lotus', if so, the etymology is clearer: Sk. Pk. kamala–.

कांगुण *kāṁguṇa* "A type of creeper" sub. (part of a comp) sg. 311; Sk. kaṁku. m. kaṁgu, f. kaṁguni f. 'celastrus paniculatus.' Pk. kaṁgu, kaṁgaṇī.

कांधि *kāṁdhi* "on the shoulder" sub. loc. sg. 510; Sk. skandha–; Pk. kaṁdha, khaṁdha–, MG. khā̆dh, kā̆dh, f. It is used here in the idiom kāṁdhi kuhāḷau kari–'in all readiness' Turner kā̆dh.

किंचूण *kiṁcūṇa* "a little less" adv. 251. Sk. kiṁcit + ūnam, Pk. kiṁca + ūṇa, OG. kiṁcūna.

कुंडी *kuṁḍī* "a bowl-shaped vessel, basin" sub. f. 25. Sk. kuṇḍaka, kuṇḍikā, Pk. kuṇḍiyā, kundī. MG. kundi.

कुंथु *kuṁthu* proper noun m dir. sg. 110.

कुंथुया *kuṁthuyā* "a type of insect" sub. pl. 21; cf. Sk kunthati, 'to hurt, to twine round.' Pk. kunthu– ext. in. OG: kuṁthuu.

कुंभु *kuṁbhu* proper noun dir. sg. m. 446.

कुंभी *kuṁbhī* "jar, pitcher" sub. sg. 25. Sk. Pk. kuṁbhī.

कृमि *kṛmi* "insect" sub. sg. 21. lw. Sk. kṛmi– krimi.

कृष्णु *kṛṣṇu* proper noun m. dir. sg. 145.

क्रयाणउं *krayāṇauṁ* "a purchasable object, transaction" sub. dir. sg. n. 507. Sk. krayânaka–; note the retention of –r– in OG. MG. kariāṇũ.

क्षउ *kṣau* "annihilation, destruction" sub. dir. sg. m. 74, 94. lw. Sk. kṣaya–.

क्षिइ *kṣii* "will be annihilated, will wane" v. pres. (in fut. sense) 3rd sg. 550 Sk. kṣayati, lw. OG. kṣi–.

क्षिमि *kṣimi* "pardon, forgive" v. imp. 2nd sg. (v. l. ksami) 530; lw. Sk. ksamati, OG. ksim–; OG. –i– in the first syllable may be due to the following –i– or some dialectal habit of the scribe.

•

खचर *khacar* "moving in the air, flying" sub. 21 lw. Sk. khacara–.

खजूर *khajūra* "dates" sub. pl. 477. Sk. kharjūra- m. 'phoenix sylvestris, the wild date tree'; Pk. khajjura m. Bloch khajūr, Turner khajur.

खडी *khaḍī* "chalk" sub. f. sg. 20. Sk. khatikā, Pk. khaḍiā MG. khaḍī. Bloch khaḍī, Turner. khaṛi.[1]

खणणु *khaṇaṇu* "act of digging" sub. sg. n. 503. Sk. khananam Pk. khaṇaṇam.

खणीतइ *khaṇītai* "being dug" pass pres. part. loc. sg. 386. This passive formation is new in OG, it is derived from Pk. passive suffix –ia–, and –tau is the extended form of the Pk. –aṁta of the present participle. Sk. khanati, Pk. khaṇai.

खणक *khaṇaka* "diggers" sub. m. dir. pl. 397; khaṇakahaṁ obl. pl. 186. lw. Sk. khanaka–.

खपावइ *khapāvai* "causes to consume, annihilate." caus. pres. 3rd sg. 586. khapiyai pass. 3rd sg 154. Sk. kṣapyate; Bloch khapṇẽ, Turner khapnu.

खमउं *khamauṁ* "atone, pardon" v. pres. 1st sg. 327, 629; also 1st pl. 629; also in the compound tense khamākarauṁ 1st pl. 629; khamāvauṁ caus. pres. 1st sg. 629; khamāvai caus. pres. 3rd sg. 539; khamāvaiṁ pl. 489; khamāviyā past part. m. dir. pl. 108; khamāvī abs. 113; khamijiu precative 3rd sg. 489. MG. khamvũ, khamāvvũ. Sk. kṣámate, kṣamyati; Pk. khamai, khamāvai.

खमासणु *khamāsaṇu* "act of paying respect, bowing down"–originally a respectful way of addressing the teacher and the elders 'kṣamāśramaṇa', but later came to mean, among Jains, the act of paying respect, sub. n. sg. 322; also khamāsamaṇu 322. khamāsamaṇi inst. sg. 322, Sk. kṣamāśramaṇa– m. Pk. khamāsamaṇa m.

खरवलतउ *kharavalatau* "scratching" pres. part. m. dir. sg. 461; der. not known.

खरंटिउ *kharaṁṭiu* "polluted, impure (by contact with impure object) past part. sg. 305; kharaṁtiti loc. sg. 209. Pk. kharaṁta, sanskritised in OG. with Sk. participial suffix –ita; cf. Pk. kharaḍa 'to besmear, MG. kharaḍvũ 'to besmear, to make dirty by besmearing'.

खल *khala* "residue of the seasumum seed after the oil is pressed out, oil-cake" sub. m. dir. pl. (v. l. khali) 433; Sk. khála–, khali–, Pk. khalī; MG. khOḷ m. Bloch khaḷ, Turher khali.

खलइ *khalai* "in the thrashing floor, granary" sub. loc. sg. 477. Sk. khála– m. Pk. khala–, *khalaṁ OG. khalauṁ MG. khaḷũ. Bloch khaḷ.

खाइ *khāi* "eats" v. pres. 3rd sg. 25; khājaiṁ pass. pl. 519; khādhāṁ past part. n. dir. pl. 433; khāī abs. 525; Sk. khā́dati, Pk. khāai MG. khāvũ; Bloch khāṇẽ, Turner khānu.

खाटकी *khāṭakī* "butcher" sub. m. dir. sg. 129. Sk. khattika–, Pk. khaṭṭia, khaṭṭikka–. MG.

khāṇi, the transference (?) of -ī- cannot be explained.

खाणि *khāṇi* "quarry" sub. dir. sg. f. 20, 308. Sk. khani- f. khāni-, Pk. khaṇi, khāṇī, MG. khāṇ f. Bloch khāṇ, Turner khāṇi¹.

खामणउं *khāmaṇaüṁ* "act of asking pardon" Jain theological term. sub. dir. sg. n. 326. khāmaṇāṁ pl. 341; cf. Sk. kṣamā, kṣamāpana. Pk. khāmaṇā f.

खासडां *khāsaḍāṁ* "shoes" sub. obl. pl. n. 12, der. not known.

खिसइं *khisaiṁ* "move, slip" v. pres. 3rd pl. 316. MG. khasvũ. Pk. khisai, khasai cf. H. khis-. which suggests that MI. base should be *khisa- see however, Turner khasnu.

खीरि *khīri* "rice cooked with milk" sub. f. dir. sg. 112, khīra n. dir. sg. 556; Sk. kṣīram, kṣīrikā, Pk. khīra- n. khīrī. Bloch khīr, Turner khīr²

खीली *khīlī* "nail" sub. f. 215. Sk. khīlaḥ 'post,' Pk. khīla m. khīliyā f. there should also be a MI. form *khilla- to explain MG (also M. and O.) khīlo, khīlī. Bloch khīl, Turner khil²

खूपइं *khūpaiṁ* "sink, submerge" v. pres. 3rd pl. 74. khūtā past part. m. dir. pl. Pk. khuppai. For a possible IE. derivation of the whole range of words such as MG. khũpvũ, khosvũ khũdvũ, see Turner copnu.

खोडियइ *khoḍiyai* "being fixed, attached" pass. 3rd sg. 601; cf. MG. khoḍvũ 'to fix, drive in', note the open -O- in MG. cf. Sk. kṣoṭ- 'to throw, to cast'.

खांसकरणु *khāṁsa karaṇu* "act of coughing" sub. n. sg. 42. cf. MG. khāṁsī 'cough'. Sk. kāsa kāsikā f. Pk. khāsa m. khāsia n. Turner khāsnu.

खंड *khaṇḍa* "sugar" sub. 417, lw. Sk. khaṇḍa- m. n. Pk. khaṇḍa- m. n. MG. khā̃ḍ f., however, goes back to Pk. khaṇḍā f. Bloch khā̃ḍ, Turner khā̃ṛ.

खांचियइं *khāṁciyaiṁ* "are thrown, cornered" pass. 3rd pl. 382; cf. MG. khā̃co corner, Pk. khaṁcia- 'controlled, dragged.' der. not known. Turner khā̃co khā̃cnu.

खांडतउ *khāṁḍatau* "pounding, pressing, breaking" pres. part. m. dir. sg. 213, 514. Sk. khaṇḍayati, Pk. khaṁḍai,

•

गडूलु *gaḍūlu* "water in which rice is boiled" sub. dir. sg. m. 307. Pk. gaḍula-; der. not known.

गणिउ *gaṇiu* "counted, considered" past part. m. dir. sg. Sk. gaṇitam, Pk. gaṇiaṁ, ext.

गणाइं *gaṇāiṁ* "counted, noted" pass. 3rd pl. 405. Note the use of -ā- passive, which is rare in this period. The usual passive suffix is -iya-. der. s. v. gaṇai.

गभारइ *gabhārai* "inner part of the shrine" sub. obl. sg. m. 617. cf. Sk. garbhagṛha- n; *garbhaghara-, Pk. gabbha hara- ext.

गमइ *gamai* "side, direction" adv. loc. sg. 450, 457, 590, also game 483, gamā obl. 530. MG. gam, game. Sk. gamya-, Pk. gamma-, gama-, OG ext.

गमणागमणु *gamaṇāgamaṇu* "coming and going-bodily movement" sub. n. dir. sg. (v. l. gamaṇāgamaṇaum) 38, Sk. gamanāgamanam, lw. in Pk. gamaṇāgamaṇa- ext.

गयउ *gayau* "went" past part. m. dir. sg. 38, 74, gayā pl. 86, 433, 550, gai f. sg. 426, 489, 573, gayai past part. loc. sg. m. 431. Sk. gataḥ, Pk. gaya- ext. in OG. Turner gayo.

गरिहउं *garihaüṁ* "exonerate" v. pres. 1st sg. 384, also garhaum 166; garihī abs. 564.

गरुयइं *garuyaiṁ* "by the elder" adj. m. inst. sg. 365, garuyā obl. pl. 516. Sk. guruḥ, Pk. garua-.

गरुई *garuī* "big, on a grand scale" adj. f. 71. Sk. guruḥ Pk. garua- ext. in OG. with f. suffix -ī.

गलइ *galai* "melts" v. pres. 3rd sg. 438; gāliuṁ caus. past part. sg. n. 25 Sk. *galati, gālayati, Pk. galai. MG. gaḷ-vũ. Bloch gaḷṇẽ, Turner galnu.

गलकंबल *galakaṁbala* "a bull's dewlap" (first part of a compound: galakaṁvalādikabaṁ) sub. 443. Sk. galakambala-.

गलसरण *galasaraṇa* "sobs" sub. n. pl. 38. Sk. galasvara 'noise in the throat'? doubtful.

गलइ *galā* "neck" sub. n. obl. sg. 423. cf. Sk. galaka- m., Pk. gala- m., perhaps also n. in Sk., Pk. *galaṁ; MG. gaḷũ. Bloch gaḷā, Turner galo.

गली *galī* "swallowed" (in the compound verb construction with gayau) abs. 556. Sk. galati 'swallows'.

गाइ *gāi* "cow" sub. sg. f. 264, 311, 325; Sk. gāvī f. Pk. gāvī, gāī f. MG. gā, gāy. Bloch gāy, gāī Turner gāī.

गाउ *gāü* "two miles" (unit of measurement) sub. m. dir. sg. 615; gāuyāiṁ n. pl. 7. Sk. gav-

गोठइ *goṭhai* "(inside) the fold for cattle, (goṭhā mahiṁ)" sub. obl. sg. m. 359, lw. Sk. goṣṭha; ext. in OG. goṭhau, obl. goṭhā.

गौतमु *gautamu* proper noun m. dir. sg. 104.

गंठि *gaṁṭhi* "knot" sub. (as a first member of a compound gaṁṭhisahita) 209. Sk. granthiḥ Pk. gaṁṭhi m. f. MG. gāṁṭh f. Bloch gāṭh, Turner gāṭh.

गंडोल *gaṁḍola* "a type of worm" sub. 31, Sk. gaṇḍola- m.

गंधाइ *gaṁdhāi* "smells" v. pres. 3rd sg. 434. Sk. gandhaḥ m. Pk. gaṁdha- m. Sk. gandhavati ?

•

घटइ *ghaṭai* "fits, suits" v. pres. 3rd sg. 426, ghaṭiratāṁ pres. part. cont. gen. obl. pl. 339, ghaṭiritai pass. pres. part. loc. sg. 339 lw. Sk. ghaṭate, ghaṭa- + OG. verb inflection.

घडउ *ghaḍau* "pitcher" sub dir. sg. m. 183. Sk. ghaṭaḥ, ghaṭakaḥ, Pk. ghaḍa -, ghaḍaga. "small pitcher" MG. ghaṛo Bloch ghaṛā, Turner ghaṛā.

घडणु *ghaḍaṇu* "manufacture" sub. sg. n. 506 ghaḍāvaṇu sub. n. sg. (fr. caus. base). 'causing to manufacture' 506. Sk. ghaṭanam Pk. ghaḍaṇa -.

घडियइ *ghaḍiyai* "hour" sub. f. loc. sg. 325. Sk. ghaṭikā, Pk. ghaḍiyā. MG ghaṛī.

घडिया ghaḍiyā "swift, lit. travelling in the same hour" (ghaḍiyā joyaṇi sāṁḍhi 'a camel which runs one yojana an hour') adj. f. sg 359. Sk. ghaṭikā, Pk. ghaḍiyā. Also s. v. ghaḍiyai.

घण *ghaṇa* "hammer" sub. m. dir sg. 508, Sk. ghanaḥ Pk. ghaṇa m. MG. ghaṇ.

घणउं *ghaṇauṁ* "much" adj. adv. m. dir. sg. (v. l. ghaṇu) 112, 586, ghaṇā pl. 519; ghaṇauṁ n. sg. 571, also ghaṇuṁ 404, 481; ghaṇī f. 489, 571; ghaṇe inst. pl. 456. Sk. ghana -, Pk. ghaṇa - ext. Bloch ghaṇa, Turner ghaṇu.

घणेरउं *ghaṇeraum* "much" superlative adj. dir. sg. n. 38, 246, 516. OG. ghaṇ- + eraum; for ghaṇ- see ghaṇau, for -eraum see adhikeraum.

घर *ghara* "house" sub. n. dir. sg. 85, also ghara 529; ghari loc. sg. 85, 430, 526, also ghare (pl. ?) 86. *For the problems of relating Sk. gṛha- with MIA ghara- see Turner BSOS iii pp. 401. Bloch ghar, Turner ghar.*

घरटी *gharaṭī* "grindstone" sub. dir. sg. f. 520. Sk. gharaṭṭa m. grindstone, Pk. gharaṭṭa m. also probably *gharaṭṭikā 'a smaller grindstone for domestic use.' MG. ghaṇṭī.

घाइ *ghāi* "by stroke, attack" sub. m. inst. sg. 434, Sk. ghātaḥ, Pk. ghāya, OG. ghā, ext. to ghāu (probably to preserve m. gender). Bloch ghāy, Turner ghāu.

घाणइ *ghāṇai* "in the oil-mill" sub. m. loc. sg. 499, Sk. ghātana- Pk. ghāyaṇa- ext. in OG. ghāṇau; MG. ghāṇo m., ghāṇī f. s. v. ghāṇu.

घाणु *ghāṇu* "quantity sufficient for one time (to be put in a frying- boiling- pan)" sub. dir. sg. m. 311; also ghāṇa 311, cf. MG. ghāṇ, *also ghāṇo m. 'oil-mill' ghāṇī f.* Sk. ghātanam, Pk. ghāyaṇa. Turner ghāṇ.

घातिउ *ghātiu* "thrown" past part. m. dir. sg. 437, 557, ghātivā obl. of inf.; ghātī abs. 464, 459. lw. Sk. ghātayati, ghāta- + OG. verbal inflection.

घारउं *ghāraüṁ* "a type of sweet prepared with ghee and sugar" sub. dir. pl. n. 316, cf. MG. ghārī, cf. Deś. ghāraṁta-m. etymology not known.

घी *ghī* "ghee, melted butter" sub. dir. sg. n. 91. Sk. ghṛtám n. Pk. ghiaṁ n. Bloch ghī, Turner ghiu.

घोडउ *ghoḍau* "horse" *sub. m. dir. sg. 484;* ghoḍaiṁ inst. sg. 483; ghoḍī f. 264 Sk. ghoṭaka- Pk. ghoḍao, Bloch ghoṛā, Turner ghoṛā.

घोल *ghola* "combination, mixture" sub. m. 601. Sk. *lex.* gholayati Pk. gholei; cf. Pk. ghola n. 'curds strained through a piece of cloth'-by constant rubbing; MG. gholvũ 'to stir, mix'; Bloch gholṇẽ, Turner gholnu.

घूंटी *ghūṁṭī* "ankle" *sub. f. sg.* (in the compound pāda-ghūṁṭī) 42; cf. MG. ghūṭī 'ankle' ghūṭaṇ m. knee; (also cf. gOṭhaṇ m. knee). Der. not known. g~gh- alternation may suggest a non-aryan loan.

•

चउकि *caüki* "in the quadrangle" sub. loc. sg 246 Sk. catuṣka- Pk. caukka; MG cOk m. *Bloch cauk, Turner cok.*

चउतालिस *cautālisa* "fortyfour" num. dir. sg. 74; Sk. catuḥ- catvāriṁśat Pk. cauyāllsaṁ, cattālīsaṁ; *MG. cūwālīs, cummālīs;* the OG. cautālīsa seems to be built upon a probable MI cau- and cattālīsa; the MG. form is derived from Pk. cauyālīsaṁ. Bloch §223, Turner cauwālīs.

चालइ *cālai* "walks, goes" v. pres. 3rd sg. 365; cālaiṁ pl. 489; cālatā pres. part. m. dir. pl. 544; cāliu past part. m. dir. sg. 94, 451, 578; cāliyā pl. 578; cāliyāṁ 451; cālī f. sg. 579; cālivā inf. of purpose 481; calāvai caus. pres. 3rd sg. 488; calāviyai pass. sg. 489; Sk. *calyati, Pk. callai. Bloch cālṇẽ, Turner calnu.

चित्ति *citti* "in the mind" sub. n. loc. sg. 94. Sk. citta-, Pk. citta-; lw. Pk.

चित्रउ *citrau* "panther" sub. m. dir. sg. 448; citrai inst. sg. 448; also citraku, citrakī 448. Sk. citráḥ 'spotted' citrakaḥ Pk. citta-ext. MG. citto; note the retention of -tr- in OG. Bloch citā, cittā, Turner cituwā.

चित्रसालु *citrasālu* proper noun m. dir. sg. 516.

चियालीस *ciyālīsa* "forty" num. 342, 616; MG. cālīś, cāḷīs; OG. ciyā- can be explained to suggest an initial palatal glide, *cyā-; also cf. OG. ciyāri; Sk. catvāriṁśát, Pk. cattālīsam, cāyālīsaṁ. Bloch cālīs, Turner cālis.

चियारि *ciyāri* "four" num. dir. sg. 74, also cattāri 110; v. l. cyāri 142; cau huṁ emphatic obl. 142; also ciyāra i emphatic 434, 538. MG. cār, emphatic cāre. cf. Sk. catvā́raḥ m., nom., catvā́ri n. nom. acc., *catāraḥ, *catāri, could explain the present form. Bloch cār, cyār. Turner cār.

चीतवइ, चींतवइ *citavai*, *ciṁtavai* "thinks, ponders" v. pres. 3rd sg. 73, 74; citavatau pres. part. m. dir. sg. 38; citavatāṁ obl. pl. 38; citaviuṁ past part. n. dir. sg. 112; citavivā obl. of inf. 74, also citaveva 85; citavi abs. 112. Absence of nasalisation in many forms is due to contamination with citta- Sk. cintayati, Pk. ciṁtei, ciṁtavai (causal in primitive sense).

चिंचूड *ciṁcuḍa* "a type of small mosquito" sub. 21; MG. cīcaṛ. Der. not known.

चूकइ *cūkai* "misses" v. pres. 3rd sg. 433. cf. Sk. cyutáḥ; Dhātupātha cukk- 'to suffer pain'. Pk. cukka- 'to forget, be deprived of.' Bloch cukṇẽ, Turner cuknu.

चूल्हि *cūlhi* "cooking place" sub. f. sg. 178. Sk. cullī f., Pk. cullī f., MG. cūl f. Note the MIA -ll->-lh- development common to other NIA dialects S. P. and L. Bloch cūl, Turner culi.

चेडी *ceḍī* "maid servant" sub. f. dir. sg. 85; Sk. ceṭikā; Pk. ceḍiā, ceḍī.

चेलु *celu* "pupil" sub. m. n. dir. sg. 38, also celau 38. cf. Sk. ceṭa; Deś. cilla-; Bloch suggests Dravidian origin. Bloch celā, Turner celo.

चोखा *cokhā* "rice" sub. obl. pl. m. MG. cokhā 'rice' and the adj. cokhkhū 'pure'. Sk. caukṣáḥ, cokṣaḥ 'pure', Pk. cokkha- Bloch cokh, Turner cokho.

चोपडणु *copaḍaṇu* "smearing (act of)" sub. n. dir. sg. 12 der. from the OG. base copaḍ- s. v. copaḍiuṁ.

चोपडिउं *copaḍiuṁ* "besmeared" past part. dir. sg. n. 317; copaḍī abs. 316. Pk. copaḍa-'to apply oil, ghee etc. Der. not known. For various suggestions see Turner copnu.

चोरउं *coraüṁ* "steal" v. pres. 1st sg. 525; corī past part. f. 548. Sk. corayati, Pk. coria 'stolen'; Turner cornu.

चोरु *coru* "thief" sub. m. dir. sg. 522; cori inst. sg. 525, core inst. pl. 555. Sk. coráḥ m. Pk. cora m. Bloch cor, Turner cor.

चोरी *corī* "theft" sub. f. dir. sg. 464, 522, 525. Sk. caurikā, Pk. coriā, corī Turner corī.

चोलपट्टउ *colapaṭṭau* "a piece of cloth worn round the middle of the body." sub dir. sg. m. 44; lw. Sk. colapaṭṭa- ext. in O .

चंद्र *caṁdra* proper noun m. dir. sg. 445, 488.

चंद्रप्रभ *caṁdraprabha* proper noun m. di . sg. 110.

चंद्रिका *caṁdrikā* proper noun f. dir. sg. 534.

चंपा *champā* name of a town f. dir. sg. 108

चांचूड *cāṁcuḍa* "a type of small bug" sub. dir. 21. Derivation uncertain, but cf. Sk. lex. caṅcūda-m. 'beak-leaved, a kind of vegetable,' cf. Sk. caṅcupattra-. MG. cā̃car m.

चांपी *cāṁpī* "having massaged, pressed, subdued" abs. 279; MG. cā̃pvū De. campai.

छ *cha* "six" sub. num. 135; cha e inst. pl. 120, 316. cf. Sk. ṣaṭ; Pa. Pkt. cha. For various etymological suggestions see Bloch § 218, Pischel § 441; Bloch sahā, Turner cha.[2]

छइ[1] *chai*[1] "image, form" sub. f. dir. sg. (second member of the compound tāra-chai 'bright image). Sk. chavī, chaviḥ; Pk. chavi.

छइ[2] *chai*[2] "is" v. pres. 3rd sg. 112, 548; chaiṁ pl. 142, also sg. 430; che 3rd pl. 383; chāṁ 1st pl. 455. chataüṁ pres. part. dir. sg. n. 533, chatā pres. part. pl. m. 408, 455. Sk. ṛkṣeti Pk. acchai, achai. for alternative suggestions see Bloch asṇẽ; Turner chanu.

the base jāṇa- v. s. v. jāṇai; for hāru v. s. v. karana-hāru.

जायणहार *jāyaṇahāra* "one who goes" sub. dir. pl. 493 jāyaṇa + hāra; agentive noun from the base jā, jāya; v. s. v. jāi.

जालां *jālām* "holes" sub. obl. pl. n. 264; Sk. jālaká- n., Pk. jālaya-; MG. jāḷũ n.

जि *ji*[1] "only" particle of emphasis 73; Pk. ji; He. ii. 217, iv. 419–20; Pischel §336 suggests eva, with a y-glide in the initial syllable (as in Pali yeva), later developing as jeva, ji.

जि *ji*[2] "these" rel. pro. noun. pl. 113, 526, 537; Sk. ye, Pk. je; v. s. v. je.

जिणदासु *jiṇadāsu* proper noun m. dir. sg. 435.

जिणि *jiṇi* "by whom" rel. pro. inst. sg. 74, 94; Sk. yéna, Pk. jīṇa with the OG inst. inflection. Note the short -i- in the initial syllable. MG. jEṇE.

जिणिवा *jiṇivā* "to win" obl. of inf. 246, 484; abs. 515. Sk. ji-; Pk. jiṇai.

जिनउं *jinaum* "whose" rel. pro. dir. sg. n. 403; an early alternation of jeha + naum. v. s. v. je[1]. MG. jEnũ.

जिनदासु *jinadāsu* proper noun m. dir. sg. 553.

जिनसंबंधियां *jinasambamdhiyām* "related to Jinas" lw. Sk. jina-sambandhin Pk. sambamdhi; extended in OG. with -u: jinasambamdhiu.

जिम *jima* "as, like" adv. 73, 553, 559; Pischel § 261 suggests building of similar forms on the analogy of evam; kiṽa, jiṽa (Ap. jemva), in the sense of Sk. katham, yathā.

जिसउ *jisau* "of what type, like" adj. 109, 553; jisām n. pl. 74; jisai inst. sg. 143; jisī f. sg. 143, 480, 547. Sk. yādṛśikam; v. s. v. isau.

जिहां *jihām* "where" adv. 483, 538. Turner (s. v. jahā̃, kahā̃) suggests three probable sources for the suffix -hā̃: suffix of Sk. ihá, kuhá; that of Sk. kathám, táthā, or the ending of loc. in -asmin, Pk., him.

जीतउ *jītau* "won, conquered" past part. m. dir. sg. 74, 464; jītā obl. pl. 451; Sk. jáyati, past part. jitá-; Pk. jia, jitta, latter being formed on the analogy of other -tta- past participles.

जीपइं *jīpaim* "conquer" pass. 3rd sg. (pl.-im may be an error for -i) 251; Pk. jippai; cf. Sk. paradigm of the stem ji, and formations such as jitvan, jitvara-, which may be the sources of Pk. jippa-.

जीभ *jībha* "tongue" sub. f. dir. sg. 521; cf. Sk. jihvā; Pk. jibbhā. Bloch jibh, Turner jibro.

जीमणउ *jīmaṇau* "right" adj. dir. sg. m. 392. Sk. jemati 'eats'; jemanaka-; Pk. jimaṇa 'eating', OG. ext. -u, 'hand by which one eats'. Initial -ī- cannot be explained. MG. jamṇo, 'right', jamvũ 'to eat', suggest that the -i- should be short. v. s. v. jīmisu.

जीमिसु *jīmisu* "I will eat" v. fut. 1st. sg. 85, jīmatau pres. part. dir. sg. m. 213; jīmatām obl. gen. pl. 296; jīmī abs. 433; jīmāḍī caus. abs. 51[2], initial long ī in jīma- cannot be explained, v. s. v. jīmaṇaũ. MG. jamvũ. Turner notes Austro (Munda) affinities, Sk. jemati, Pk. jimai. Bloch jevṇẽ, Turner jiunār.

जीविसि *jīvisi* "will live" v. fut. 2nd sg. 474, jīvatau pres. part. m. dir. sg. 529; jīvitī (v. l. jīvatī) f. sg. 573; jīviu past part. m. dir. sg. 433, 589; jīvī f. sg. 555; jīvata-i pres. part. (unenlarged) 539; jīvāḍai caus. pres. 3rd sg. 463, 522; also in fut. sense 465; jīvāḍiu caus. past part. m. dir. sg. 465, 522. Sk. jīvati; Pk. jīvai. Turner jiunu.

जु *ju*[1] "if" conj. 561; also jau (v. l. jau) 578, v. s. v. jau.

जु *ju*[2] particle of emphasis 412, 444, 544. v. s. v. ji.

जु *ju*[3] "who" rel. pro. nom. sg. 85, 109, 365, 465, 539. Sk. yaḥ, Pk. jo, Ap. ju.

जुक्तु *juktu* "joined, endowed with" past part. m. dir. sg. 144; Sk. yukta- lw. in OG.

जुगत *jugata* "proper" adj. m. dir. sg. 68; also jugatū 3, 70; Sk. yukta- lw. in OG. v. s. v. juktū. -ga-suggests a late MIA loan.

जुग्गविओ *juggavio* "one who practices gymnastics, acrobatics" sub. m. dir. sg. 250. Sk. yogya 'bodily exercise, gymnastics; Pk. *juggavio; lw. Pk.

जुयउं *juyaum* "separate" adj. adv. dir. sg. Sk. yutáḥ Pk. jua – ext. in OG.

जुयारी *juyārī* "gambler" sub. m. dir. sg. 470; Sk. dyūtakāraḥ. *dyutakārin, Pk. juāri- ext. Turner juwārī[2].

जूका *jūkā* "louse" sub. f. dir. sg. 401. Sk. yūkā f. lw. in OG. v. s. v. jū.

जू *jū* "louse" sub. f. dir. sg. 21, 338; Sk. yūkā f. Pk. jūā f. Bloch ū, Turner jumro.

जूवनु *jūvanu* "youth" adj. n. dir. sg. 94; Sk. yauvanam, Pk. jovvaṇa- n. lw. in OG.

[illegible] "[illegible] tied to the [illegible] when they are [illegible]" [illegible] pl. [illegible]; also [illegible] 512 Sk. [illegible], Pk. [illegible], MG. [illegible] explained.

[illegible] "[illegible]" [illegible] pl. [illegible] sg. [illegible] 323; [illegible] sg. 541 [illegible] pl. 421 411 Pk. [illegible] Pk. [illegible] MG. [illegible] is retained here on the analogy of other pronominal forms [illegible] as [illegible]"

[illegible] "[illegible]" [illegible] Sk. [illegible] Pk. [illegible] in OG. [illegible] in conjunction with [illegible] (Sk. [illegible]); later, analogically [illegible] to [illegible] we get [illegible] and then MG. [illegible]

[illegible] "[illegible]" [illegible] sg. [illegible] loc. sg. [illegible]; Pk. [illegible] cf. [illegible]

[illegible] "in that [illegible] time" adv. [illegible] Pk. [illegible]

[illegible] "[illegible]" [illegible] sg. [illegible] e. g. [illegible]

[illegible] "[illegible], i. e., [illegible]" adv. dir. sg. n. [illegible], [illegible]. Pk. [illegible] Pischel § 151 suggests [illegible] of [illegible]. In the present text this form is rarely used. Usually [illegible] is used. It seems to be the standard form. Today also [illegible], [illegible], [illegible] are standard forms current in central Gujarat while [illegible], [illegible], [illegible] are dialectal forms current in [illegible]

[illegible] "fortune teller" sub. m. sg. [illegible] Sk. [illegible] Pk. [illegible] Bloch [illegible] Turner [illegible]

[illegible] "a type of [illegible]" sub. m. 31 for [illegible] i. e. [illegible]

[illegible] "control, Jain theological term" sub. m. sg. [illegible], [illegible], lw. Sk. yogaḥ.

[illegible] "a type of [illegible] like vessel" sub. f. [illegible]; der. not known.

[illegible] *joḍavaṃ* "to unite, put together" ger. dir. sg. n. [illegible], 571; joḍi also, 12; joḍiyai pass. 3rd sg. 3, 250, Sk. *yutayati caus. of yutati; cf. Sk. jutati, jyotati 'binds'; Pk. joḍei. Bloch joḍaṇẽ, jaḍaṇẽ. Turner jornu, jurnu.

[illegible] *joni* "womb" sub. f. dir. sg. 418, Sk. yoniḥ m. f. lw. in OG.

[illegible] *joyai* "sees" v. pres. 3rd sg. 108, 527, 542; joi imp. 2nd sg. 12; joyau imp. 3rd sg. 461; joyatau pres. part. m. dir. sg. 71, 488; joiu past part. m. dir. sg. 527; joivā obl. of inf. (v. l. jovā) 556, Sk. dyotate, dyotayati, Pk. joi, Bloch jopavṇẽ, Turner jokhnu.

[illegible] *joyaṇa* "eight miles" sub. m. (member of a compound joyaṇasaa) 464; joyaṇi f. 'one who travels that distance' 558; joyaṇe inst. pl. 614. Sk. yojana-, Pk. joyaṇa-.

[illegible] *jogami* "in risk" sub. n. loc. sg. 465, MG. jokham Sk. yogakṣema-, Pa. yogakkhema-, Turner jokhim?

[illegible] *jambuddiya* a name for Bhārata 425.

[illegible] "was born" past part. m. dir. sg. 142; [illegible] f. 91. Sk. jayate, jatah Pk. jāo, lw. Pk.

[illegible] "the fruit of the rose apple tree" sub. [illegible], Sk. jambū f. Pk. jambua m., jambū f, MG. jāṃbu n.

[illegible] "so long as" adv. 91 545; Sk. yāvat, Pk. jāva jāvaṃ, for -v > -w see Pischel § 251

[illegible] "turns" v. pres. 3rd sg. 434, 455; Sk. yujāte, lw. in OG

[illegible] "elder" adj dir sg 427, Sk. jyeṣṭha- lw in OG

*

[illegible] *jhagaḍa* "quarrel" sub obl. sg. 12. Desi. jhagaḍa Turner jhagaṛā.

[illegible] *jhalahalata* "shining" pres part. dir. pl. 246 Pk. jhalahalai, jhalahalamta-; Turner jhalkanu, jhaljhal

[illegible] *jhala* "flame" sub f. dir sg. 577, cf. Sk. jvala, Turner jhalkanu

[illegible] *jhalari* "a kind of musical instrument, a type of cymbal" sub. f. sg. 616; Sk. jhallari f. Pk. jhallari f. The final syllable-i should be short in OG cf. MG. jhālar. Bloch jhālar, Turner jhalar.

[illegible] *jhilana* "bathing, sporting in water" sub. n. dir. sg. 12 cf MG. jhīlvũ (dialectal) 'to bathe (in a river)' cf. Pk. jhilli f. 'wave', jhillai 'bathes'. Turner jhil.

[illegible] *jhujhatā* "fighting" pres. part. dir. pl. 448; Sk. yudhyate, Pk. jujjhai.

[illegible] *jhujha* "fight" sub m. dir. sg. 448; also jhūjhu 578; Pk. jujjha. n.; Pk. jujjha-n. is probably based on the Pk. verbal base jujjha- jujjhai; Sk. yudhyate.

*

[illegible] *ṭaliyāṃ* "finished, got over, departed" past part. obl. pl. n. 223; Sk. ṭal-, ṭalati 'to be disturbed; MG. ṭal-vũ 'to depart (in derogatory sense)' and the echo-formation ṭal-vaḷ-vũ 'to be in anguish, to long for'. Bloch ṭaḷṇẽ, Turner ṭarnu.

टिलां *ṭilāṁ* meaning and derivation not known 112.

टीप *ṭīpa* "that which is pounded, beaten" sub m. sg 601; cf. MG. ṭīprũ to beat, to pound; der. doubtful, cf Sk. tip. tepayati. *tipyate 'to heap together'. Probably ṭīpũ drop' and ṭapakvũ ' to fall drop by drop' may be connected Bloch ṭip, Turner ṭapkanu

*

ठवी *ṭhavī* "having placed" abs. 142. Sk. sthā-, sthāti, sthāpayati, Pk. ṭhai, ṭhavai, abs ṭhaviam OG. ṭhavī. Bloch ṭhenẽ, Turner ṭhāknu, ṭhāpnu

ठालउ *ṭhālau* "empty" adj. dir sg. m 397, ṭhālaum n. 112; cf MG (dialects of Saurashtra) ṭhālũ adj. 'empty, worthless'. Des ṭhalla 'poor, without any possessions.

ठाहउ *ṭhāhau* "dirt (of oil) which has settled at the bottom" sub dir. sg. m. 315, cf Sk stāgha 'shallow' (cf Sk astāgha 'deep'. Pk atthāha-).

*

डसिउ *ḍasiu* "smitten, stung" past part m. dir sg. 522, 389; ḍasī abs. 522. Sk. daśati, Pk ḍamsai. MG. ḍasvũ, v. s. v ḍaṁka. Bloch ḍasṇẽ, Turner ḍasnu.

डोकरी *ḍokarī* "old woman" sub. f dir sg. 589; also cf. MG. ḍok f. 'neck', ḍokũ n. 'head', and Nepali ḍoko 'basket (carried on the back)'. Derivation is not known; for other IA cognates see Bloch and Turner. Bloch ḍoī, ḍokī, Turner ḍoko.

डोल *ḍola* "name of a mountain" sub. m. sg. 311.

डंक *ḍaṁka* "sting, bite" (sarppa-'snake bite') sub. m dir. sg. 532, also ḍaṁku 537. MG. ḍaṁkh. Relation with Pk. ḍaṁsai is not clear. But compare similar words in Panjabi, Lahandi and Sindhi: ḍaṅgṇā, ḍaṁg, ḍaṁganu; a probable source may be daṁśa-kṣata-'wound by biting' Bloch ḍaṁkh, Turner ḍasnu.

डांस *ḍāṁsa* "mosquitoes" sub. m. dir. pl. 401; -ś- may be Sanskritic influence or dialectal. MG. ḍā̃s. Sk. daṁśaḥ m., Pk. ḍaṁsa-m. v. s. v. ḍasiu. Turner ḍā̃s.

*

ढलिउ *ḍhaliu* "fell, toppled" past part. m. dir. sg. 589; ḍhalatāṁ pres. part. gen. obl. pl. 376; ḍhalivā obl. of inf. 483, cf. MG. ḍhaḷvũ, 'fall' ḍhāḷvũ caus; ḍhāḷ f. 'slope'. Pk. ḍhalai, ḍhālai caus. Turner ḍhalnu, ḍhālnu.

ढाडी *ḍhāḍī* sub. f. 12. meaning and der. not known.

ढीलउ *ḍhīlu* "viscous" adj dir sg m 311 Pk. ḍhilla- Bloch ḍhilā, Turner ḍhilo

ढूकडउं *ḍhūkaḍaum* "near, adjoining" adj dir sg n 127, ḍhūkaḍim loc (used adverbially) D cf Sk ḍhaukate 'approaches', Pk. ḍhukkai, ḍhukka-ext in OG ḍhūkaḍaum Turner ḍhuknu

ढूकि *ḍhūki* "go near" v imp. 2nd sg 543 Pk. ḍhukkai v. s v ḍhūkaḍaum

ढोइली *ḍhoilī* "a small lota" sub f 209, cf. MG ṭoyli Der not known

ढोकला *ḍhokalā* "an eatable, a preparation of fermented flour" sub. n. obl. 133. Der. not known. MG. ḍhokḷũ.

ढांकणउं *ḍhāṁkaṇaum* "cover, lid" sub dir. sg n 211 Pk ḍhakkai 'covers'; Deś ḍhaṁkiṇi f 'lid, cover'; *ḍhaṁkaṇa-cover. v s.v ḍhāṁkium

ढांकिउं *ḍhāṁkium* "closed, covered" past part. dir sg. n. 309; ḍhāṁkatāṁ pres. part. gen. obl pl 372; ḍhāṁki abs. 403 Pk. ḍhakkai, Deś ḍhaṁkiṇī f. cover, lid.' Bloch ḍhā̃kṇẽ, jhā̃knẽ, Turner ḍhaknu.

ढींक *ḍhīṁka* "type of cranes" sub. 21; cf. MG ḍhẽkhaglo; Pk. ḍhiṁka, ḍhemka 'a type of bird'.

ढूंढणवटइ *ḍhūṁḍhaṇa vaṭai* "by bartering" sub. n 183, der. not known.

*

त *ta* "then, otherwise" a particle with some contrastive meaning. conj. 532. Sk. tadā, Pk. tayā, taya. Turner taí.

तउ *tau* "then, therefore" conj. postpos. Sk. tātaḥ, Pk. tao, MG tO.

तउं *taum* "you" pers. pro. 2nd pers. sg. (v. l tũ, tūm) 71, 427, 465, 474, 538; also tuṁ 474; tũ obl. sg. 457, 474, 539; taim inst. sg 74, 522, 526. cf. Sk. tvám, which had an alternant dialectally, a dissyllabic form Ved. Sk. tuvám, Pk. tumam, tuum; contam. first person haum. OG taum. Bloch tũ, Turner tã.

तडफडतां *taḍaphaḍatāṁ* "convulsing (with pain), trembling and shaking violently in agony" pres. part. gen. obl. pl. 25; Pk. taḍapphaḍai, taḍapphaḍaṁta-; cf. Sk. traṭat 'crackling', traṭatraṭa-; and *phaṭ (see Turner: pharkanu) Pk. *phaḍ-; cf. MG. words, pharko 'shock,' pharpharvũ or phaphaṛvũ 'throbbing (of the heart)' MG. taṛphaṛvũ to be convulsing in pain; taṛphaṛ 'quarrel'; taṛphaṛ (-bolvũ) 'to speak sharply and plainly-rudely-'. cf. also MG. taṭaṛvũ or taṭaṛvũ 'cracking, making the noise of cracking'. Bloch taṛphaṛ.



Pk. to; tela may be explained from etásya; for a detailed discussion of the probable line of development of allied pronominal forms see Dave pp. 32-33.

तेडइ *teḍai* "calls, invites" v. pres 3rd sg 536; teḍaiṁ pl. 579; teḍiyā past part. dir pl 465; teḍī abs. 428; teḍāviu caus. past part dir. sg. 386. MG. teḍvũ 'to invite, to carry (a child) on the waist'. Der. not known.

तेतलउं *tetalauṁ* "that much" adv n dir. sg. 483; tetalaiṁ loc. sg. 38, 549; tetalā obl 405. Pronominal stem ta- for der. s. v. etalau. Ap tettula- ext. Bloch titkā, titlā. Turner tyati.

तेतीवार *tetīvāra* "in the meantime" adv. 38, 556, tetī is also followed by him emphatic 86. tetī + vāra; cf. tettula- etc, s. v. etalau. tetalauṁ; Pk. tettia. formed analogically based upon kettia- *kayattiya. see Pischel §. 153

तेरमा *teramā* "thirteenth" ordinal obl. 222 also terahamai loc. sg. 355; for der. s v. teraha.

तेरह *teraha* "thirteen" num dir. sg. 74. cf. Sk. tráyodaśa; Pk. teraha; MI -e- in the initial syllable cannot be explained. Bloch terā, Turner tera.

तेल *tela* "oil" sub n. 311, also obl. tela nau 315. cf. Sk. tailám n.; Pk. tilla, tella-; Pk. -ll- cannot be explained; may be lw. fr. Sk. Bloch tel, Turner tel

तेवडा *tevaḍā* "of that size" adj obl. pl. 405; cf. MG. evḍo jevḍo. tevḍo: kevḍo; used rarely in the present text. The pronominal stems are clear but the derivation is not clear. For some suggestions see Pischel § 149. cf. Pk. evadda-.

तो *to* "even, therefore" particle with some emphatic and contrastive force. 91, 132, 463, 560, also tau q. v; Sk. tátah Pk. tao OG tau MG. to.

तोलइ *tolai* "weighs" v. pres. 3rd sg 246. Sk. tolayati Pk. tolei, tolai, MG tolvũ. Bloch tul, tol, Turner tulnu, taulanu.

तंबोल *tambolu* "the betel leaf" sub dir. sg. n. 291, Sk. tāmbūlam n. Pk. tambola- n Austric origin has been suggested Turner tamol.

तंबोलिया *tamboliyā* "(insects) belonging to the betel-leaf" sub m dir. pl. 21; Sk. tāmbūlin for pl. Also cf. MG. tamboḷi m. 'one who sells betel-leaves', Sk. tāmbūlika-, Pk. tambolia-. v. s. v. tambolu.

तां *tāṁ* "till, up to that time" adv. 94, 112, 345. Sk. tāvat, Pk. tāva (cf. Ap. tāma). for v > ~ v; cf. Pischel 261: MI graphic -ava- may have a ~ ~ v ~ value. Tessitori §. 98.1. suggests tasmāt, Pk. tamhā; which is not necessary. v. s. v. jā.

तींहं *tīṁhaṁ* "those" pers. pro. 3rd pers. gen. pl (v. l. tihaṁ, tiṁha) 74, 94; Sk. teṣām, Pk. tesiṁ.

तुंबडउं *tũmbaḍauṁ* "a dried gourd" sub. dir. sg. n. 223. MG. tũbḍũ. Sk. tumba- Pk. tumba- n. ext. in OG.; Austric origin is suggested. Bloch tũbri. Turner tumbo.

त्रणवारि *traṇavāri* "broomstick" (lit. one which obstructs grass or dust i. e, something which cleans. broom-stick). sub. f. dir. sg. 518. lw. Sk. tṛṇa- + vārin. MG. word for broomstick is sāvarṇī, derived from Sk. saṁvāraṇa- warding off, keeping back, saṁvāraṇikā f.

त्रस *tras* "thirst" sub. f. dir. sg. 426, 463; Sk tṛṣā f.; retention of -r- in script may suggest a retention of -tra-, and -tar-; in that case this may not be considered as a lw.

त्रसिउ *trasiu* "thirsty" past part. dir. sg. m. 541, 556. Sk. tṛṣita-; for der. s. v. tṛsa-.

त्रसाडिया *trasāḍiyā* "caused trouble" past part. caus. pl. 22 Sk. trásati: caus. trāsayati; Proto Guj. *trāsai: caus. *trasāḍai past part. trasāḍia. Note the preservation of tr-; cf. S. ṭrahaṇu P. tarāhṇā. Bloch tarasa-, Turner tarsanu.

त्राठउ *trāṭhau* "terrorised, afraid" past part. m dir. sg. 453. Sk. trásati, trastah; cf. Pk. tattho; Sk. trāsayati caus. note the retention of tr- in OG. v. s. v. trasāḍiyā.

त्रिऊ *triū* "group of three" sub. m. dir. sg 10; Sk. trikā-, cf. Pk. tia; Proto Gujarati *tria is ext. with OG. -u: triū.

त्रिन्हि *trinhi* "three" num. dir. sg. 73, 74; also trinni 74; trium (v. l. tri hum) obl. 109; trinha i: i is emphatic 109 (based on a Prakritic form tinha- Pischel §. 438); Sk. trīṇi n. pl. MG. traṇ; Pk. tiṇṇi, tinha- have influenced the OG. scribes, though they have retained the tr- cluster. Bloch tīn, Turner tin.

त्रिन्हिसइं *trinhisaiṁ* "three hundred" num. 613 v. s. v. trinhi + saiṁ cf. MG. transE, transO.

त्रिपउं *tripauṁ* "tin" sub. n. dir. sg. 25. lw. Sk. trapu n.; note the -i- in the initial syllable; also note the extended form to indicate gender.

त्रिभुवनातिशायिया *tribhuvanātiśāyiyāṁ* "excelling three worlds" sub. dir. pl. n, 7. lw. Sk. tribhuvana + atiśayain- OG. tribhuvanātiśāyi -ext -u. sg.

त्रिसट्ठ *trisaṭṭha* "sixtythree" num. (in. comp.) 37. cf. Sk. triṣaṣṭiḥ f. Pk. tesaṭṭhiṃ. MG. trEsaṭh.

त्रीजउ *trījau* "third" ordinal dir. sg m. 154, trījauṁ n. 161; trījī f. obl. sg. 109; trījai inst. sg. m. 118, 425 also loc. sg. 355. Sk. tṛtīyaḥ; Pk. tiijja ext. in OG. (with tr– group influenced by triṇi – traṇ) trīja–u. Bloch tij, Turner tesro.

त्रीस *trīsa* "thirty" num. 36. Sk triṃśat. Pk. tīsaṁ; OG. and MG. have retained tr–. Bloch tis. Turner tīs.

त्रीसमा *trīsamā* "thirtieth" ordinal obl 222 OG dir. trīsamau; ord. suffix –ma, ext. v s v. trīsa.

त्रेत्रीस *tretrīsa* "thirty three" num. 135. tretrīsā obl. pl. 9. cf. Sk. tráyastriṁśat f.; Pk. tettīsaṃ Note the preservation of tr– and –tr–, the latter on the analogy of trīsa. Turner tettis

त्रेपनउं *trepanauṁ* "raft, some sort of help in swimming" meaning is not clear. sub. n. dir. sg. 38. cf. MG. trāpo, tarāpo Noted in 'Periplus of the Erythrean sea' Gk. trappoga. Bloch tāpo.

त्रेविसमा *treviśamā* "twentythird" ordinal obl. 222. trevīsa + mā; ordinal suffix –ma ext. obl. cf Sk. trayoviṃśat; Pk. tevīsaṁ Turner teis.

त्रेवीसे *trevīse* "by twenty three" num. inst. pl. 613. cf. Sk. tráyoviṁśat; Pk. tevīsam

त्रोडियइं *troḍiyaiṁ* "being broken" pass 3rd pl. 485. Sk. truṭati, caus. troṭayati. Bloch toṛṇẽ. Turner toṛnu.

त्रुटी *truṭī* "broken" past part. f. dir sg. 480. MG. ṭuṭ-vũ, tuṭ-vũ. Sk. truṭyati; Pk. tuṭṭai; tr– is retained. Bloch tuṭṇẽ.

त्रांबउं *trāmbauṁ* "copper" sub. n. dir. sg. 25, trāmbā obl. sg. 403. Sk. tāmrám. cf. Sindhi ṭrāmo m., Lahanda trāmī f.; possibly *trāmra– Bloch tābẽ, Turner tāmo.

त्र्यङ्कु *tryaṅkṛ* proper noun m. dir. sg. (v. l. trakṛu) 457.

*

थवेसु *thavisu* "I will praise" v. fut. 1st sg. 372. Sk. stávate Pk. thavai.

थाइ *thāi* "becomes" v. pres. 3rd sg. 112, 488. also thāiṁ 386; thāisiṁ fut. 3rd pl. 489; thāu imp. 3rd sg. also 2nd pl. 489; thā imp. 2nd sg. 326, 470; thiu past part. m. dir. sg. 546, 557; (v. l. thio) 516; thāī abs. 326. 488. Sk. *sthāti, Pk. thāi.

थाकइ *thākai* "wears out, tires" v. pres. 3rd sg. 350; thākau past part. m. dir. sg. 91. In some participial forms it is used in another meaning "remaining, staying": thākatauṁ pres. part. dir. sg. n. 296; thākatām obl. pl. 307, thākatai loc. sg. 325; thākau past part. m. dir. sg. 426, 529. Turner suggests possible extension in –akka– of the Sk. sthā 'stand' (v. s. v. thāi). Bloch thakṇẽ, Turner thāknu.

थान *thāna* "place" sub. dir. sg. n. 22; thāni loc. sg. 22. Sk. sthā́nam Pk. thāṇa; retention of –n– suggests a loan formation. On the other hand, various NIA languages have this form with –n–, which leads Turner to suggest a connection with Sk. sthā́man. *sthāmna– > MI *thānna–, or sthā́man– with a dialectal –nn–, v. s. v. thānakaṁ Bloch thāṇ, Turner thānt.

थानकउं *thānakaṁ* "place, residence, shrine" sub. dir sg n. 437, thānakahaṁ obl. pl. 26; thānaki loc. sg. 85, thānake loc. pl. 512. cf. Sk. sthānaka–. For the retention of –n– v. s. v. thāna, possibly, this retention may be due to a specialised meaning – religious parlance – 'shrine', in MG. thānak n means 'shrine of a deity'; contrast with this MG. thāṇũ 'police station'. This supports the loan formation rather than postulating –nn– in MI.

थापइं *thāpaṁ* "establishes, places" v. pres. 3rd pl 7; thāpi abs 374; thāpivau gerund dir. sg. m 558, thapiyai pass. sg 237, 401. Sk. sthāpyate Pk thappia– placed. Bloch thāpṇẽ, Turner thāpnu.

थाल *thāla* "plate" sub. 478. Sk. sthālī f. sthālam n. Pk. thālī f. thālam n MG thāḷ m. 'a big plate'; thāḷī f 'a smaller plate'. Bloch thāḷā. Turner thāl.

थाहर *thāhara* "place, residence" sub. obl. sg. 251 (thāhara hūṁtau) Sk sthāvara– "standing still". –h– cannot be explained, but De. thāha– 'place' should be noted. Bloch thār

थाहरि *thāharii* "your" pro loc sg. 470; for derivation s v. tāharau.

थाहराव्यो *thāharāvyo* "stopped" caus. past part. f. dir. sg. 482 cf. Sk. sthāvará– s. v. thāhara; also compare Dhātup. sthalati 'to stand firm'.

थिका *thikā* "being, remaining" past part. (auxiliary) pl. m 91, 550, 556; thikī f. 474, 516; thikām gen obl. 10, 341. For derivation s v. thākai; –i– is due to analogical influence of sthita– and absence of compensatory lengthening due to its frequency as an auxiliary (cf. Dave p. 58).

थिर *thira* "steady, firm" adj. dir. sg. 28; thirīkarana n. 'act of stabilizing' 341. Sk. sthirá– Pk. thira–. Bloch thir, Turner thiro

थोडउ *thoḍau* "less, little" adj. dir. sg. m. 586; thoḍā pl. 377, 413, 416, 419; thoḍai inst. sg. 604; thoḍe inst. pl. 474; thoḍai inst. sg. 221, 586; thoḍaum sanm "a little bit" (cf MG thoḍũ sũ) n. 170, 301; thoḍām n pl 417; thoḍi dir sg. f. 112 Sk. stoka- Pk. thova ext in OG with -ḍau. Bloch thorā. Turner thor

थोभवंदणां *thobhavamdanam* "a type of vandana" sub pl n 312 This type of vandana is performed when some guilt or error is in question. The correct word is chobbha vamdana- (Sk kṣobhya vandana-). in various mss. however, the graphic similarity of cho- and tho- has given rise to a word like thobha vamdana- has also acquired a meaning "a vandana performed while standing (i e not hurriedly) Both the words are found in mss. and in the usage of monks

थूक *thuka* spittle sub dir sg n 12, 309, also thumka 309 Pk thukka- n cf Sk. thutkārah Nasalisation is not regular, and found only in Guj. MG thūk Turner thuk

थंभ *thambha* "pillar" (in the compound thambhaikalam) sub m 22 thambhai loc sg of the ext thāmbhau, 44 Sk stambha- Pk thambha- ext in OG

थापणि *thāpaṇi* "deposit" sub dir sg f 430 Sk sthāpana, sthāpanikā, cf Pk thappana n.. preservation of -p- is due to the paradigmatic identity with the MI base thappa- going back to the passive sthāpyate Nasalisation is not regular The short -i at the end and MG thāpaṇ indicate that -i is not the result of an earlier contraction of -ikā > -iā. but MI thappana n is replaced by an -ī, giving a feminine sthāpanī (cf Sk sthāpana f) which would explain the OG short -i and zero in MG

•

दउढसउ *daüḍhasau* "one hundred and fifty" num. dir sg 43 also Pk diva(?)ḍha saya 43 For ... s v Sk. dvyardha-, dvitīyārdha-, Pa diyaḍḍha-, Pk divaḍḍha- > *divaḍḍha- can explain OG daüḍha. MG doḍh Bloch ḍeḍh, Turner doḍh

दउमातिउ *daümātiu* "proper noun" m dir sg 305.

दडारमणउ *daḍāramaṇau* "playing with a ball" sub dir sg n 12 For daḍā ... s v daḍa.

दड *daḍa* "ball" ... dir sg m 322 Sk daṇḍa ... Pk daḍa ext ... -au in OG; it occurs elsewhere as ... daḍa Mod ... dado can be ... due to be analogical influence of M ...

दधिओलिउ *dadhioliu* "mixed with curds" adj dir. sg. m. 312. dadhi- lw. Sk. + oliu; Sk. ava + li. Pk oli, oli "to go down", ext. in OG. with -u This described a preparation in which cooked rice is soaked in curds.

दयालु *dayālu* "pious" adj. dir. sg. m. 3. Sk dayālukah Pk. *dayāluo.

दरसन *darasana* "vision" sub. dir. sg. n. 405. lw. Sk. darsana-.

दलतउ *dalatau* "pounding, preparing flour" pres part dir sg m 213. Sk. dalati Pk. dalai; MG dalvũ. Bloch daḷṇẽ. Turner dalnu.

दवर *davara* "string, cord" sub. (in the compound -ādikaham) 279; also davaraka sg. m. 601, 626. De. gives davaro, and is adopted in Jain Sanskrit. Bloch dor, Turner doro.

दस *dasa* "ten" num. 27. lw. Sk. daśa.

दसमउ *dasamau* "tenth" ord. dir. sg. n. 437. Note the -s- and dropping of the final nasal. lw Sk. v. s. v. daśa.

दस *dasa* "ten" num. dir. sg. 109; dasamai ord loc. sg. 355, 451; dase inst. pl. 29, 403, 618. Sk. daśa, Pk. dasa.

दहइ *dahai* "burns" v. pres. 3rd sg. 531; didhau past part. m. dir. sg. 14, 474; dādhī f. 112; dajhati pres part obl. pl. m. 473. Sk. dahati, dagdha-, Pk. dahai; Sk. dahyate, Pk. dajjhai. past part. (analogically from labdha- laddha-) daddha- Bloch dāhṇẽ, Turner dahanu.

दहि *dahi* "sour milk, curds" sub. dir. sg n. 312 also dahi 178. MG dahī, dahī. Sk. dadhi, Pk. dahi, ext Bloch dahī. Turner dahi.

दाढा *dāḍhā* "peak (figuratively used for the peak of a mountain)" sub dir. sg. f. 36. MG dāḍh f. "molar tooth". Connection between Sk damṣṭrah m. : Pa. dāṭhā f. is doubtful and non-Aryan sources are suggested. For cognates from Austric group and Dravidian group see Bloch BSOS vol. V. 4 and Turner under dāro

दाण *dāṇa* "tax levied by the king, road toll" sub dir sg n 129. MG. dāṇ Sk dānam Pk.

दाति *dāti* "giving" Jain theological term sub. f 253 Sk. datta- Pk datti f OG. dati.

दानि *dāni* "by gift, donation" sub. inst sg n 461 lw Sk. dāna + OG inst. suffix.

दातार *dātāra* "donors" sub. m. dir. pl. 471. lw. Sk.

दरिद्रिउ *daridriu* "poor" sub dir sg m ... Sk. (daridrya-) dariddi ... -u.

दिक्खिया *dikkhiyā* "renunciated, entered monkhood" past part. dir. pl. m. 112. Sk. dikṣitāḥ Pk. dikkhiā. lw. from Pk.

दियइ *diyai* "gives" v. pres. 3rd sg. 435, 483, 559, diyaiṁ pl. 386; diuṁ 1st sg. 160; diyau imp 3rd sg. 112; diyauṁ imp. 3rd pl. 625; dai imp 2nd sg. 550; deii fut. 3rd sg. 260, 466, 514, 550; desu fut. 1st sg. 386, 473; dejau precative 2nd sg.; diṁtau pres. part. dir sg m. 552, diyaṁtā obl. 552; deyatā pres. part. obl. sg 143; diyatai loc. sg. 401; diyamānai loc. (?) sg. 481; devā obl. of infinitive 123, 488, 628, de abs 326, de (v. l. dei) 73; dijai pass. sg. 91; dījaiṁ pl. 320, also diyaiṁ used as pass. pl. 620; divārai caus. pres. 3rd sg. 560, divārisiiṁ fut. 3rd sg. 435; divāriuṁ past part. dir. sg. n. 426; divārī dir. sg. f. 539; dīdhau past part. dir. sg. m. 109; dīdhauṁ dir. sg n. 352, 518, 564; dīdhāṁ pl. n. 527. cf. Sk. dadāti; Pk. dei. For a suggestion of different analogical influences (of nayati, labhate) see Turner under dinu, Tedesco JAOS, 43; Bloch deṇẽ.

दिन्न *dinna* proper noun m. dir. sg. 109.

दिवसे *divase* "by days" sub. inst. pl. 339 lw Sk divasa + OG –e, inst. pl. suffix.

दिवाकरु *divākaru* proper noun m. dir. sg. 426.

दिसा *disā* "directions" sub. obl. pl. f. 142, disi loc. sg. 446. Sk. diśā Pk. disā.

दीकिरउ *dīkirau* "son" sub. m. dir. sg 589, dīkirā obl. sg. 589. der. ? MG. dīkro.

दीकिरी *dīkirī* "daughter" sub. dir. sg. f. 91. 473. 488; MG. dīkrī Der. ?

दीयडी *dīyaḍī* "water flask" (generally made of skin), sub. f. dir. sg. Sk. dṛti– f. Pk. dii. ext

दीवउ *dīvau* "lamp" sub. loc. sg. m. 520. Sk. dīpaḥ m. Pk. diva m. ext. in. OG: divau. Bloch divā. Turner diyo.

दीवलोटी *dīvaloṭī* "lamp wick" sub. f. dir. sg. 519. There seems to be some error in the text, –lo– cannot be explained. Sk. dīpavarttiḥ f. Turner diwaṭ. MG. divet f.

दीसइ *dīsai* "appears, looks" v. pass. 3rd sg 461, 514; dīsaiṁ pl. 425. Sk. dṛśyate. Pk. dīssai. Bloch disṇẽ.

दीह *dīha* "days" sub. m. dir. sg. 397; also pl. 94. Sk. divasa–. Pk. diasa, diaha, dīha; MG dī.

दुप्राप्य *duprāpu* "difficult to obtain" adj. dir. sg. m 300. lw. Sk. duṣprāpya–.

दुर्गंधा *durgaṁdhā* proper noun dir. sg. f. 435.

दुहवण *duhavaṇa* "act of causing pain" sub. dir. sg. n. 441. v. s. v. duhaviyā.

दुहविया *duhaviyā* "displeased" past part. pl. 22; duhavevā obl. of inf. 441; duhaviyai pass. 3rd sg. 586. Pk. dūhavai, duhavai; prob. a base formed from Pk. duha, dūha. (Sk. duhkha–); but also cf. Pa. dubbhavati.

दुहेलउं *duhelauṁ* "calamity, misfortune" sub. dir. sg n. 556 duhelā adj. obl. sg. 'painful' 20. Sk. duhkha– Pk dukkha–, duha–, ext. with -illauṁ. Probably this is also the source of OG. dohilauṁ 'difficult'. MG dOylũ; Tessitori, however suggests Sk durlabha–; see 'Notes on OWR' §. 5.

दूध *dūdha* "milk" sub. dir sg n. 178, 311; dūdhi inst loc. sg. 311. Sk dugdhám n. Pk. duddhaṁ n Bloch dūdh. Turner dud.

देउ *deu* 'something which is to be given' sub. dir. sg. 211. Sk deyam Pk deya. v. s. v. diyai.

देखइ *dekhai* "sees" v. pres. 3rd sg. 185, 373, 519, dekhauṁ 1st sg 461, dekhisii fut 3rd sg. 550. also dekhisiiṁ 481, dekhau imp. 3rd pl. 489; dekhatu pres part. dir. sg. m. 538; dekhatā obl pl 427 453, 533 also dekhatāṁ gen. pl. 91. dekhati abs. 74 110, dikhālauṁ causal pres. 1st sg 74. 167, 535, dikhālatā pres. part. obl. 533, dikhāliu past part. dir. sg. m. 428; dikhāliyā pl. m. 390, dikhāli imp 2nd sg. 533; dikhāli abs 471 dīṭhau past part. dir. sg. m. 426; dīṭhauṁ sg. n. 539; dīṭhāṁ pl. n. 426, 519; dīṭhī sg. f 361, 575. Sk. drakṣyáti, Pa. dakkhati, contaminated with Sk. prekṣate: dekkhai. dikhāl– is the causal base with –āl– as the causative suffix; long –i– in some examples of the causal dikhāl– may be either scribal error, or influence of the past participle form dīṭh– The past participle is derived from Sk. dṛṣṭa–, Pk. diṭṭha–, ext. in OG dīṭhau; Bloch dekhṇẽ. Turner dekhnu.

देखणहार *dekhaṇahāru* "one who sees, desirous of seeing" sub dir. sg. m. 402, 487. OG. dekhaṇa + agentive suffix hāru der. s. v. dekhai.

देणहार *deṇahāru* "giver, desirous of giving" sub. m. dir. sg 426. OG deṇa + hāru agentive suffix. der. s. v diyai.

देवरई *devaraī* "place where gods take delight", sub. n. pl. 616. lw Sk. deva-ka–.

देवसिउ *devasiu* "that which refers to the day" sub. n. dir. sg. 342. Sk. daivasika– Pk. devasiyam OG. devasiu.

देस *desa* "country" sub. m. dir. sg 446, also desu 544. Sk. deśaḥ Pk. desa.

देसना *desanā* "sermon, preaching" sub f. dir sg. 515. lw. Sk. deśanā; Pk. desaṇā.

देसवटउ *desavaṭau* "exile" sub dir. sg m. 525. Sk. *deśa-vṛtta-, Pk *desavatta- ext in OG.

दोहलउ *dohalau* "longing, desire esp. of a pregnant woman for particular objects" sub dir. sg m. 81, 82. Sk. dohada m. (probably a Pk form of the word daur hṛda-); Pk. dohala- m.

दैवजोग *daivajoga* "by chance, destiny" sub. obl. sg. 426, 537 Sk. daivayogya-, OG. daiva- is Sk. lw ; Pk. jogga-.

दंडइ *daṁḍai* "taxes, punishes" v pres. 3rd sg 538; daṁḍiyai pass. sg 518 Sk. daṁḍayati, Pk. daṁḍai.

दंडाऊंछणा *daṁḍā ūṁchaṇā* "(by) the broom tied to the stick" broom refers to the bunch of soft woolen strands tied to the bottom of the stick used by a Jain monk, by that he sweeps the place he walks, he cleans books and brushes his own body. sub obl sg. 542; daṁḍāūṁchaṇai inst sg. 325; Sk. daṇḍaka+proñchanaka Pk. daṇḍaa-puṁchaṇaya. Sk. uñchati. daṇḍaka+uñchana- ext.

दंतवणु *daṁtavaṇu* "a twig (usually of the Babul tree) used for cleaning the teeth" sub. dir. sg. n. 201. Sk. dantapavanam n. Pa. dantapoṇam n., Pk. dantavaṇa- n.; MG. dātaṇ under the influence of dãt 'teeth', see Turner dataun.

दांडइ *dāṁḍai* "by a way, path" sub. m. loc. sg. 403. Sk. daṇḍa-, daṇḍaka- "a row, line". Pk. daṇḍaya-; note the change in meaning.

दांत *dāṁta* "teeth" sub. dir. pl. m. 74; dāṁti loc sg. 71. Sk. dāntaḥ m. Pk. danta- m. Bloch danta, Turner dãt.

द्रवडिउ *dravaḍiu* "ran" past part. dir. sg. m. 529. Sk. drávate, Pk. davae; dava- ext. with -ḍa-; Note the retention of initial dr-; however, MG. has dOṛ-vũ 'to run', MG. dOṭ f 'a run' is derivable from *dava-ṭṭi- (cf liṭī f. 'a line' from MI. *liha-ṭṭi-ā).

द्राख *drākha* "grapes" sub. f. 311. Sk. drākṣā f., Pk. dakkhā; note the retention of initial group dr-; in MG also 'darākh' f.

द्रुपदिकाटरी *drupadikāṭarī* 'proper noun, a forest so named.' sub. f. sg. 426.

द्वादसमु *dvādasamu* "twelth" ord. dir. sg. n. lw. Sk. dvādaśa+ OG. -mu; note the absence of nasalisation.

* *

धणी *dhaṇī* "proprietor, master" sub. dir. sg. m. 213, 518. Sk. dhanikaḥ, Pk. dhanio, dhaṇio. Note the contraction -iu > -ī having been worked out in OG. Turner dhanī.

धणुह *dhaṇuha* "bow" sub dir. sg. 25. Sk. dhanuṣ- dhanuṣa-; Pk. dhaṇuha.

धणुहिं *dhaṇuhiṁ* "bow" sub. loc. (inst.) sg. 454. Probably better reading should be dhaṇuhi, giving us regular loc. sg. of. dhaṇuha Sk. dhanuṣ-, Pk. dhaṇu, dhaṇuha m. dhaṇuhī f. v. s v. dhaṇuha.

धनदतु *dhanadattu* proper noun m. dir. sg. 550.

धनिकु *dhaniku* "rich" dir. sg. m. 466, lw. Sk; s. v dhaṇī.

धनु *dhanu* proper noun m. dir. sg. 553.

धरइ *dharai* "preserves, keeps, bears in mind", v pres. 3rd sg. 111, 520; dharau imp. 3rd sg. 562; dharatau pres. part. dir. sg. m. 430, 474; dharatāṁ (gen.) obl. 316; dharivā obl. inf. 279 474; dharī 158, 342, 518; dhariyai pass. sg 403, dhariyaiṁ pass. pl. 520. Sk. dhārati, Pk. dharai. Bloch dharṇẽ, Turner dharnu.

धर्म्म *dharmma* proper noun dir. sg. m. 110. lw. Sk.

धर्म्मघोष *dharmmaghoṣa* proper noun dir. sg. m. 435, 573.

धर्म्मनंदु *dharmmanaṁdu* proper noun m. dir. sg. 386.

धर्म्मयश *dharmmayaśa* proper noun m. dir. sg. 573.

धर्म्मवसु *dharmmavasu* proper noun m. dir. sg. 573.

धाडि *dhāḍi* "assault, attack" sub. f. dir. sg. 547. Sk. *dhāṭayati, dhāṭī; Pk. dhāḍemi, De. dhāḍi. Block dhāṛ.

धानि *dhāni* "grain" sub. loc. sg. n. 175. Sk. dhānyam, Pk. dhanna n. Bloch dhān, Turner dhān.

धायउ *dhāyau* "ran, followed" past part. m. dir. sg. 416; dhāyā pl. 529; dhāyatāṁ pres. part. obl. gen. pl. 417; dhāī past part. dir. sg. f. 473. Sk. dhāvati, Pk. dhāvai; Bloch dhāvṇẽ, Turner dhāunu.

धारावउं *dhārāvauṁ* "cause to place, put" v. caus. pres. 1st sg. 85. Sk. dhārayati, Pk. dhārei, caus. dhārāvei. The context is pāu dhārāvauṁ 'I will cause him to set his foot (here)'; In MG. this idiom develops in a verbal base padhār -vũ 'to welcome'.

धारवउं *dhāravaũ* 'should bear in mind' ger. n. pl. 10. Sk. dhārayitavyam n. Pk. dhāreyavvaṁ n.

धारिणि *dhāriṇi* proper noun f. dir. sg. 573.

धाहडी *dhāhaḍī* "a type of stone" sub. f. 20 der. not known.

धीर *dhīra* proper noun m. dir. sg. 522.

धुर *dhura* "chief" sub. obl. m. 32, Sk. Pk. dhura-.

धूजइ *dhūjai* "shakes trembles" v. pres. 3rd sg. 514; dhūjiuṁ past part. dir. sg. n. 514; dhūjate

pres. part. inst. pl. m. 213. Sk. dhūyáte; cf. Pk. dhua-.

धूंअरी *dhūṃarī* "a type of water-formation? cloud-smoke?" meaning not clear, it is considered to be an ap-kāya according to Jain theology 20

धूलि *dhūli* "in the dust" sub. f. loc sg 22 cf. MG. dhūḷ f. dhūṛ f. (in the dialects of Saurashtra). *dhūli- m. Sk. dhūliḥ m. f; for the Indo-European *dhuuli- see Turner under dhulo. Note that the P. L. S. and the Pahari languages have the reflexes of the -l- form

धोती *dhotī* "loin-cloth" sub. f. dir sg 365 v. s v dhovatī.

धोवती *dhovatī* "loin-cloth" sub. f. dir. sg. (v. l dhotī) 365. also see under dhotī. Der not clear. Turner dhotī.

ध्यायतु *dhyāyatu* "thinking, meditating" pres. part. m. dir. sg. 83; dhyāyatai inst. sg 73, dhyāyatī f. dir. sg. 561; dhyāyī abs. 74. lw. Sk. dhyāyati; dhyā- + OG. verbal suffixes.

न

न as negative particle 464; also used as an emphatic particle in constructions such as 'kahan na' 'please tell' 556. Sk. ná; Pk. na.

नउ *nau* "of" postposition, adjectival. dir sg. m 94; also naüṃ 94; nā pl. 491, 516, nai ghari 'to the house' loc. sg. 83; also no pāe 'at the feet of' 74; nī f. dir. sg. 521, 547. Der. uncertain, see Bloch §. 201, where he suggests Sk. tayena as a probable source.

नखे *nakhe* "on the nails" sub. m. loc. pl. 376. Sk. nakháḥ m. n.; Pk. ṇakkha is a lw. from Sk. on account of the geminate -kkh-; regular Pk. development is ṇaha OG. nakha is again a lw. from Sk., with the OG. loc. pl. suffix -e. Some IA languages have the evolutes of Pk. ṇaha; P. nahī and H. nah; MG. has preserved this form in the word naīrṇī 'nail-cutter' Sk. nakha-haraṇī- ext. in Pk. and in the word naiū 'underside of the nail' Pk. ṇaha-, OG. naha + suffix iū. Bloch nakh, Turner nakh.

नथी *nathī* "is not" v. pres. 3rd sg. 297, 444, 529; Sk. nā́sti. Pk. ṇatthi; short -a- is due to auxiliary usage.

नमतइ *namatai* "bowing" pres. part. m. loc. sg. 74; nami 427. Sk. námati, Pk. ṇamai. Bloch lavṇẽ, Turner nuhunu.

नमस्करिउ *namaskariu* "bowed, paid homage to" past part. dir. sg. m. 579; namaskarī abs. 85. lw. Sk. namaskṛ- + OG. suffixes.

नमि *nami* proper noun m. dir. sg. 110.

नरवर्मु *naravarmu* proper noun m. dir. sg. 425.

नव[1] *nava*[1] "new" adj. dir. sg. m. 74; navai loc. sg. 315; navāṃ n. pl. 517. navī f 622. Sk. náva-, Pk nava-; ext. in OG. Bloch navā, Turner nawlo.

नव[2] *nava*[2] "nine" num dir. sg. navo inst. pl. 10; Sk. náva- Pk nava; Bloch nau, Turner nau.

नवमउ *navamau* "ninth" ord. dir. sg. m. 62; navamaum n sg 247. for der. s. v. nava2.

नवसइं *nava saiṃ* "nine hundred" num. dir. pl. 28. nava + saiṃ, for der q. v.

नवाणवइ *navāṇavai* "ninetynine" num. 383; MG. navvāṇū, nauāṇū cf. Sk. nava + navatiḥ; Pk. nava + ṇauim, MG nauāṇū is standard colloquial. while the one with -vv- is a class-room form, probably analogical, cf. ekkāṇū '92', 'sattāṇū' '97', aṭṭhāṇū '98' etc.

नवीनउ *navīnau* "disgusted, fed up" adj m. dir. sg. 142, cf. Sk nirviṇṇa-; loss of initial -i- in closed syllable cannot be explained Possibly a late lw in OG. may be *niviṇṇa-.

नहीं *nahīṃ* "not" (v. l. nahi) 38, 648, 560. For various suggestions see Turner under nahī̃, "J. Bloch (p 292) compares M. āhṇẽ to be, old H. ah- (for which he tentatively suggests Sk. ābhavati, cf. Pk. āhūa-); S. K. chatterji, Beng. Lang. P 1039, derives from *asati (replacing Sk ásti, with subsequent special development of -s-, which is not impossible in such a word). Possibility of contamination with descendent of Sk. nahi must be considered".

नागपुरु *nāgapuru* proper noun m. dir. sg. 488.

नागिलु *nāgilu* proper noun m. dir. sg. 470.

नाच *nāca* "dance" sub. dir. sg m. 579. Sk. nṛtyam n Pk naccam n., for other IA cognates see Turner under nāc. Note that while OIA and MIA forms are n. gender, most of the NIA forms are m

नाचइ *nācai* "dances" v. pres. 3rd sg. 429. Sk. nṛ́tyati, Pk. ṇaccai. Bloch nācṇẽ, Turner nācnu.

नाठउ *nāṭhau* "fled, ran" past part. m. dir. sg. 428; nāṭhaum n. 453, nāṭhā pl. 537; nāṭhī f. dir. sg. 426. Sk. naṣṭáḥ, Pk. ṇaṭṭha-; Bloch nāṭ, Turner nāṭho.

नान्हा *nānhā* "small" adj. pl. m. 25. Sk. ślakṣṇáḥ Pk. laṇha-. Bloch lahān, sahān, Turner nāni, sānu.

नामे *nāme* "by names" sub inst. pl. 376. *nāmebhiḥ Pk. nāmehi.

नारकी *nārakī* "one who belongs to hell" adj sg. 21. lw. Sk.

नावि *nāvi* "barber" sub. dir. sg. m. 365. Sk. nāpitah m., Pk. nāvia– m. Bloch nāū, Turner nāū².

नासिका *nāsikā* "nose" sub. dir. sg. f. 620 lw. Sk. nasikā; note the palatal –s– before –i–.

नासिक्य *nāsikya* proper noun dir. sg. n. 386.

नासतउ *nāsatau* "fleeing, running" pres. part. dir. sg. m. 522, nāsatā pl. 128, 416; nāsī abs. 575; nāsāviu caus. past part. dir. sg. m. 522, nasāvia 183. Sk. nasyati Pk. ṇassai Bloch nāś, Turner nāsnu.

नाहि *nāhi* "navel" sub. dir. sg. f. 350. Sk. nā́bhiḥ, Pk. nāhi; lw. from Pk.

निक्षिपाविसु *nikṣipāvisu* "cause to throw" v. caus. fut. 1st sg. 188. lw. Sk. nikṣip + OG. verbal suffixes.

निग्रहाविउ *nigrahāviu* "caused to be arrested" caus. past part. dir. sg. m. 386, nigrahīyai pass. sg. 422. lw. Sk. nigraha– + OG. verbal suffixes.

निच *nica* "low" adj. dir. sg. 9. The short –i– may be a scribal error. lw. Sk. nicah.

नि[illegible] [illegible] "totally, absolutely, completely" adv. 22. Sk. niṣ-tulya, Pk. nittula, Ap. ṇittulla–; for Ap. –tt–> MG. –ṭ– cf. Ap. jettulla–, MG. jeṭlũ.

नित [illegible] "daily" adv. 85, 386. Sk. nitya–, Pk. nitta–.

निमिष [illegible] "winking or twinkling of the eyes" [illegible] 135, lw. Sk. nimiṣa– + OG. [illegible]

निमंत्रतां [illegible] "while inviting" pres. part. [illegible] Sk. nimantrayati, Pk. ṇimamtei [illegible] from Sk., or the –tr– group [illegible]

[illegible] [illegible] "claiming the reward of penitential acts" (Jain technical term). sub. dir. [illegible] Sk. [illegible]– n. Pk. [illegible]– n. [illegible]

[illegible] [illegible] "repudiated, removed" past part. [illegible] lw. Sk. nir-ā-kar– + OG. [illegible]

[illegible] [illegible] "[illegible]" v. pres. 3rd sg. 25 [illegible] Pk. [illegible]–.

[illegible] [illegible] "[illegible] conquered" adv. 156, 517. [illegible] in the 7th conjugation). [illegible]

[illegible] [illegible] "[illegible] out, defeated" past part. [illegible]

निवडु *nivadu* "strong" adj. dir. sg. n. 94. Sk. nibiḍa–, Pk. ṇiviḍa–.

निवर्त्तइ *nivarttai* "returns, turns away, repudiates" v. pres. 3rd sg. 578; nivarttaum 1st sg. 385; nivarttijiu prec. 3rd sg. 580; nivarttivā obl. of the inf. 352; nivarttāvaum caus. pres. 1st sg. 319. lw. Sk. (ni-vṛt–) nivarta– + OG. verbal suffixes.

निवारिया *nivāriyā* "stopped, objected" past part. m. dir. pl. 430; nivāri dir. sg. f. 560; nivāri imp. 2nd sg. 560. Sk. nivārayati, Pk. ṇivārei.

निश्चइं *niścaiṃ* "definitely" adv. (inst. sg.) 430. lw. Sk. niścaya– with OG. inst. suffix.

निषेधउं *niṣedhauṃ* "I prohibit, I deny" v. pres. 1st sg. 318; niṣedhiu past part. m. dir. sg. 444. lw. Sk. niṣedha– + OG. verbal suffixes.

निसा *nisā* "night" (first member of a compound) f. sg. 526. Sk. nisā, Pk. ṇisā.

निसेज *niseja* "seat" sub. dir. sg. f. 321. Sk. niṣadyā f. "a small bed or a couch", Pk. ṇisajjā, ṇisejjā f. Pk. –e– may be analogically influenced by Sk. sayyā Pk. sejjā; MG. sej.

नीगमइ *nīgamai* "passes, wastes" v. trans. pres. 3rd sg. 481; nīgamatām pres. part. gen. obl. pl. 480. Sk. nirgamayati, Pk. ṇiggamei.

नीचउं *nīcauṃ* "low" adv. adj. dir. sg. n. 44; nīcā obl. 586. Sk. nica–, Pk. ṇiya, ṇicca– (the latter, either a lw. from Sk. or analogically influenced by Sk. uccá–). Turner nic.

नींदणकरण *nīṃdaṇakaraṇa* "act of weeding" sub. dir. sg. n. 410. cf. Kashmiri ninda, Marathi nindṇẽ, MG. nĩd-vũ, Oriya niṛāibā, De. ṇind. [illegible] kuṭṭṇoddhāraṇam. Sk. nir-dātṛ– 'a weeder, reaper'.

नीपजइ *nīpajaim* "produces, creates" v. pres. 3rd sg. (v. l. nīpajai) 112; nīpajāvāṃ 1st pl. (1st sense) 446; nīpajāvi abs. 536. Sk. niṣpadyate, Pk. ṇippajjai. Bloch nipajṇẽ

नीपनउ *nīpanau* "produced, resulted" past part. m. dir. sg. 125; nīpanaum n. sg. 112; nīpanāṃ n. pl. 514; nīpani f. 400. Sk. niṣpanna– Pk. ṇippaṇṇa–.

नीपाइं *nīpāiṃ* "produces, places" v. pres. 3rd pl. 7. Sk. niṣpādayati (causal). Pk. ṇippāei, v. s. v. nīpajaim.

नीसरिउ *nīsariu* "gone out, went away" past part. m. dir. sg. 426, 549; nīsarium n. sg. 5[illegible], nīsariyām pl. m. 536; nīsarī sg. f. 474, 621. nīsariyaim pass. pl. 133. Sk. niḥsarati Pk. ṇīsarai.

padhium past part. dir. sg. n. 94; padhii loc. sg. 355; padhivauṁ ger. 355; padhivā obl. of inf. 94, 355; padhiyai pass. sg. 355, 438; padhiyaim pass. pl. 14, 355; padhiju precative 3rd sg. 353; padhī abs. 326, 329, 601. cf. Sk. paṭhati; Pk padhai. Bloch padhnē. Turner parnu.

पण *pana* "again, also" conj 492; note the early loss of -u- in open syllable; s v. puṇi. Sk. púnar Pk puna. Bloch paṇ, Turner pani

पणांगना *panāṁganā* "courterans" sub. f. pl. 89. lw. Sk. paṇāṁganā.

पतंग *pataṁga* "moth" sub. n. dir. sg. 21. lw. Sk. pataṁga-.

पत्ति *patti* "foot-soldier" sub. m. dir. sg. 445. lw. Sk. patti.

पद्मपत्रा *padmapatrā* proper noun dir. sg. f. 517.

पद्मप्रभ *padmaprabha* proper noun dir. sg. m. 110.

पनर *panara* "fifteen" num. 25, 36; panaramai ord. loc. sg. 355. Sk. páñcādaśa-, Pk. paṇṇarasa Ap. pannaraha; MG. pandar. Bloch pandhrā. Turner pandra.

पनरस *panarasa* "fifteen" num. 24. s. v. panara; it is an archaism based on Pk. paṇṇarasa.

पनरह *panaraha* "fifteen" num. 25, 326, 332, 333. s. v. panara; panaraha is an archaism based on Ap. pannaraha.

पमाडइं *pamāḍaiṁ* "cause to reach, cause to obtain" v. caus. pres. 3rd pl. 378; pamāḍauṁ caus. pres. 1st sg. 629; pamāḍiu caus. past part. dir. sg. m. 174; pamāḍiuṁ caus. past part. dir. sg. n. 388; pamāḍiyā past part. caus. pl. 22. Sk. prāpnoti, Pk. pāuṇai, pāvai; Dave (p. 160) suggests, Sk. -pn- > OG. -m- (cf. Sk. svapna- MG. samṇũ); Bloch pāvṇẽ, Turner pāunu.

परवालउं *paravālauṁ* "coral, young shoot" sub. dir. sg. n. 20; paravālāṁ pl. n. 620. Sk. pravāla- m. n., Pk. pavāla- ext. in OG. Note the retention of -r- in OG., also MG. parvāḷũ.

परसाखि *parasākhi* "visible to others, with others as witness" sub. loc. sg. 564; Sk. para+sākṣya- parasākṣye Pk. parasakkhi.

परहउ *parahau* "far, further away" adj. dir. sg. m. 426, 525; (used with orahau far and near); also parahau melhau "release him" 548; parahāṁ pl. n. 151; der. uncertain. v. s. v. orahau. oro 'near' and paro 'far' are used in MG. dialects. cf. Sk. pára- 'far, distant'; it is possible that Sk. ávara- and pára- may be the source of MG. oro, Oro and paro.

परहसिउ *parahasiu* "laughed, jested" past part. m. dir sg. (v. l. parahasiuṁ) 38. Sk. parihasita-, Pk. parihasia-.

पराभवी *parābhavī* "to defeat- in the construction parābhavi na sakiyaiṁ "not able to defeat." inf 380. lw Sk. parābhava + -ī OG. inf. suffix < Pk. -iuṁ < Sk. -itum.

परि *pari* "in that manner" adv. 74. cf. Sk. prakāreṇa. Pk. payāreṇa, payāriṁ; MG. pEr; see New Indian Antiquary non-Aryan origin is suggested. Turner pari.

परिठवइ *pariṭhavai* "causes to be steady" v. caus. pres. 3rd sg. 380. Sk. pariṣṭhāpayati, Pk. pariṭṭhavei; meaning may be reinforced by Pk. pariṭṭhavaṇa < Sk. pratiṣṭhāpana-. Note the short -i- in OG.

परिणमइ *pariṇamai* "results into, transforms" v. pres. 3rd sg. 521. Sk. pariṇamate, Pk. pariṇamai.

परिणिउ *pariṇiu* "married" past part. m. dir. sg. 94. pariṇī f. 142, 533; pariṇivā obl. of inf. 471; pariṇāvai caus. pres. 3rd sg. 470; pariṇāvivau ger. m. dir. sg. 400; pariṇāvī abs. 94. Sk. pariṇayati, Pk. pariṇei.

परिभ्रमी *paribhramī* "after wandering" abs. 423. lw. Sk. paribhram- + OG. abs. suffix -ī < Pk. -ia < Sk. -iya).

परिवर्जकि *parivarjaki* "one who gives up" sub. dir. sg. m. 492 (probably the final -i is a scribal error). lw. Sk. parivarjaka-.

परिसाडि *parisāḍi* "in the courtyard" sub. loc. sg. f. 217; Sk. pari-śālā Pk. *pari-sāla OG. pari-sāli MG. parsāḷ f. The explanation is doubtful since the text has -sāḍi and not -sāli.

परिहरइ *pariharai* "leaves, deserts" v. pres. 3rd sg. 325; pariharauṁ 1st sg. 516; parihariju prec. 3rd sg. 12. Sk. pariharati, Pk. pariharai.

परीखी *parīkhi* "having examined" abs. 382. Sk. parīkṣate, Pk. parikkhai. Bloch pārakhṇẽ, Turner parakh.

परीछइ *parīchai* "examines, knows" v. pres. 3rd sg. 470; parīchaiṁ 3rd pl. pass. 55. Sk. parīkṣate, Pk. paricchai, parikkhai v. s. v. parīkhi.

परीसइ *parīsai* "serves food" v. pres. 3rd sg. 112; parīsiyā past part. (adj.) pl. n. 563. Sk. pariveśati, Pk. parivisai.

परु *paru* "guest (outsider)" sub. dir. sg. m. 440. Sk. paraḥ, Pk. para-.

पलइ *palai* "observe, work" v. pres. 3rd sg. 441; cf. MG. paḷvũ; Sk. palati, Pk. palai.

पवित्तु *pavittu* "pure" adj. dir. sg. n. 540; lw. Pk. pavitta–; Sk. pavitra–.

पसरिउ *pasariu* "spread" past part. dir. sg. m. 446. Sk. prásarati Pk. pasarai. Bloch pasar, Turner pasarnu.

पसाउ *pasāu* "joy, satisfaction" sub. dir. sg. m. 446, 492; pasāi inst. sg. 559, Sk. prasāda– m. Pk. pasāya– m. Bloch pasay.

पहर *pahara* "watch, space of three hours" sub. m. dir. pl. 526; pahari loc. sg. 142, Sk. praharah Pk. pahara– m. Turner suggests Sk. praharah is probably a Sanskritised Persian pahra (Modern Persian pahre). Bloch pahar. Turner pahar.

पहिरणउं *pahiraṇaum* "dress, garment" sub. dir. sg. n. 523, Bloch suggests relationship with Persian perāhen (Mod. pers. pīrāhan), but Turner draws attention to the early occurrence of the word paridhā́nam in Atharvaveda; Bloch peharaṇ, Turner pairan.

पहिरइं *pahiraim* "puts on" v. pres. 3rd pl. 614; pahiri abs. 73, 526, also pihiri 537; pahirāvi caus. abs. 548. Sk. paridadhāti Pa. paridahati Pk. pahirai Turner pairanu.

पहिलउं *pahilaum* "first" num. ord. dir. sg. n. 133, pahilai loc. sg. 448 also pahile 514; pahili f. dir. sg. 109; pahilāṁ adv. usage, stereotyped loc. 'in the beginning' 419, cf. Sk. prathamá–, *prath-illa–, Pk. pahillai; Bloch pahila. Turner pailo.

पहिलेरउं *pahileraum* "earlier" adj. dir. sg. n. 179. OG. pahila + eraum; der. s. v. pahilaum.

पहुतउ *pahutau* "arrived, reached" past part. m. dir. sg. 74, 559, also pahutau 429; pahutā pl. 522; pahutai loc. sg. 113; pahuti f. dir. sg. 579; ... pahuci imp. 2nd sg. 481; pahucau imp. 2nd pl. 488. Note that in OG. the past participal form is pahut– while the imp. form (and present tense form in other OG. texts) is pahuc–; while in MG. the verbal base pahũc– underlies all derivative forms, which is a later anological extension. Turner's suggestion Sk. prábhūta– Pk. pahūa– replaced by pahutta (Sk. loan), and analogically (sicyáte; sikta) giving –c– and –t– bases, is supported by OG. pahuc– for present and pahut– for past participle. Bloch pohocṇẽ, Turner pahũcnu.

पाइक *pāika* "foot-soldier" sub. dir. sg. m. 445; pāyakaham obl. pl. 537. Sk. padātika–, pāyika replaced by Pk. pāikka (lw. from Sk.); short –i– in OG. is not regular. Bloch pāika.

पाउ *pāu* "foot" sub. dir. sg. m. 85; pāu loc. pl. 74, 526 Sk. pā́dah, Pk. pāa–, ext. in OG. Bloch pāv, Turner pāu.

पाउधारउ *pāudhārau* "welcome, lit. lay your foot on" v. pres. 1st sg. der. s. v. pāu and Sk. dhārayati, cf. MG. verbal base padhār–

पाउंछणउं *pāumchaṇaum* "broom used by Jain monks to wipe the floor– to prevent insects being killed while walking etc." sub. dir. sg. n. 326, cf. Sk. pada– proñchana–; Pk. pāumchaṇa –ext. in OG. for pāu q. v., cf. MG. pũchvũ "wipe, clean". Bloch pusṇẽ, Turner puchnu.

पाकउ *pākau* "sugar boiled for conserves, sweetmeat preparation" sub. dir. sg. m. 314 lw. Sk. pāka– ext. in OG.

पाखतिआं *pākhatiyām* "remaining at the back" sub. dir. pl. n. 529, also obl. pl. 405; pākhatiyām laggu 'attached to the back' pakhati 461; Sk. pakṣa–, pakṣati f., retention of –ti cannot be explained, unless as a special loan formation.

पाखाणि *pākhāṇi* "stone" sub. loc. sg. m. 635, lw. Sk. pāṣāṇa; Sk. –ṣ– written as –kh–.

पाखी *pākhī* "fortnightly" adj. f. loc. sg. 320, Sk. pākṣika– Pk. pakkhia–.

पाखे *pākhe* "without" prepositional usage stereotyped loc. 71, also pākhai 416, 474, 526. Sk. pakṣa–. Pk. pakkha–.

पाछउ *pāchau* "back, after" adv. adj. dir. sg. m. 110, pachaum n. 108, pāchai loc. sg. 441, also pāche 143, 433, 474; pāchā obl. sg. 451, also pl. 473, 515, also pācham pl. 451. Sk. paścā́, paścā́t, Pk. pacchā, paccha, ext. in OG. Turner pachi.

पाछिलउ *pāchilau* "one belonging to the end" adj. dir. sg. m. 232, pāchilai loc. sg. 325; pāchilaum n. sg. 305, also pāchilium 168; pāchiliyām obl. pl. n. 582, der. s. v. pāchau, Pk. paccha– ext. with –illa– ext.

पाछेरउं *pācheraum* "posterior" adj. comparative dir. sg. n. 478, pācha + –eraum, the comparative suffix is derived from Sk. –tara– ext. der. s. v. pāchau.

पाटलउ *pāṭalau* "wooden board" sub. dir. sg. m. 322, 326; pāṭalā obl. m. 322. Sk. paṭṭa– Pk. paṭṭa– ext. with –lla– ext. Bloch pāṭ, Turner pāṭi.

पाटि *pāṭi* "on the seat, bench" sub. loc. sg. f. 141. Sk. paṭṭikā, Pk. paṭṭiyā, MG. pāṭ f. also s. v. pāṭalau.

पाठविउ *pāṭhaviu* "sent, dispatched" caus. past part. dir. sg. m. 387, 488. Sk. prasthāpayati,

Pk. patthāvei, patthāvai, Bloch pāṭhaviṇẽ, Turner paṭhāunu.

पाडि *pāḍi* "area, extension, (metaphorically, 'jurisdiction') sub. f. loc. sg. 526, cf. Sk. pāṭa- m. pāṭaka-.

पाडोसी *pāḍosi* "neighbour" sub. dir. sg. m. 518, cf. MG. pāḍosi m. 'neighbour', pāḍos m. 'neighbourhood', Sk. prativāsī, cf. prativasati, Pa. paṭivasati, Pk. paḍivasai, for various suggestions see Turner under paṛosi; Bloch paros.

पाणी *pāṇī* "water" sub. dir. sg. n. 555; Sk. pāniyam Pk. pāṇiam, Bloch pāṇī, Turner pāni.

पाणीउ *pāṇīu* "water" sub. dir. sg. n. 314, also pāṇiu 20, Sk. pāniyam, Pk. pāṇiam, OG. pāṇi, further ext. in OG. by -u, s. v. pāṇi.

पात्तु *pāttu* "vessel, pot" sub. dir. sg. n. 561. Sk. pātram, Pk. pattam; OG. -tt- may be a scribal error or Prakritism.

पाधरउं *pādharaũ* "straight" adj. n. obl. 299; pādharī f. 20, 403 der. not known, Desi gives paddhara- 'straight'.

पाण्ही *pāṇhi* "heel" sub. dir. sg. f. 11; Sk. pārṣṇiḥ, f. ext., MG. pānī f.

पाए *pāe* "at the feet" sub. loc. pl. m. 193, Sk. pādau, Pk. pāhu, OG. pāye

पारणउं *pāraṇaũ* "breaking of the fast" sub. n. dir. sg. 85, 113, 551, 561, pāraṇā obl. sg. 112, pāraṇai loc. sg. 109 Sk. pāraṇa-, n. Pk. pāraṇaga- pāraṇaya-n

पारि *pāri* "beyond, across" adv. loc. sg. 239. Sk. pāra-, Pk. pāra-

पारता *pārata* "fulfilling, finishing" pres. part. obl. sg. 42, pāratalo 326, 317, pāratim caus. past part. n. dir. sg. 85, pāriyai pass. sg. 329, Sk. pārayati Pk. pārei

पार्श्वं *pārśva* proper noun m. dir. sg. 110.

पार्श्वु *pārśvu* proper noun m. dir. sg. 574

पालखी बइठु *pālakhī baiṭhu* "sitting cross legged" sub. dir. sg. m. 12 Sk. *paryaṅkikā- *paryaṅkika referring to bones in a special posture, MG. palāṭhī (the lengthening of initial syllable remains unexplained)

पालतउ *pālataũ* "maintaining, preserving" pres. part. m. dir. sg. 316, pālatā pl., pālatām pres. loc. sg. 214, pālyam past part. n. dir. sg. 441; pālatāa 24, pālyai pass. sg. 322 Sk. pālayati, Pk. pālei. Bloch pāḷṇẽ, Turner pālnu

पालि *pāli* "edge, boundary" sub. f. dir. sg. 474. 344. MG. pāḷ, Sk. pāli, Pk. pāli.

पासि *pāsi* "near" adv. stereotyped loc. 452. Sk. pārśva-, Pk. pāsa-; note -ā- in Pk. s. v. pāhai.

पाहइ *pāhai* "by (in the sense of agent)" postposition, stereotyped inst. sg. 533; extended form of OG. pāsa-; For examples of later usage see Tessitori § 70; Note the change in meaning from OG. pāsa-, and note the change -s- > -h-. Bloch pās.

पाहणु *pāhaṇu* "stone" sub. dir. sg. m. 20; pāhāṇ pl. 508; pāhāṇi inst. sg. 386. Sk. pāṣāṇaḥ, Pk. pāhāṇa-m., note Pk. -ṣ- > -h- change; MG. pāṇo (dialectal); Turner pahāro.

पिठरु *piṭharu* proper noun dir. sg. m. 108.

पिडाविसिइ *piḍāvisii* "will cause pain, torture" v. caus. fut. 3rd sg. 189. Sk. pīḍayati, Pk. pīlai, Bloch pīḍṇẽ, pīḷṇẽ.

पितरे *pitare* "by parents" sub. inst. pl. 161 Sk. pitar- OG. inst. pl. suffix.

पियइ *piyai* "drinks" v. pres. 3rd sg. 525; piyaum 1st sg. 463; pī imp. 2nd sg. 163; pīdhaum past part. n. dir. sg. 525; pīvaum ger. n. dir. sg. 521; pī abs. 556; pāi caus. abs. 557. Note the short and long -i- in the stem in the present tense, indicating OG. contraction of -iy- > -ī-, (though -y- is graphically retained; which is lost later giving pīī 3rd sg. pres.). The past participle -dh- is analogical extension from labdha - laddha type. Bloch piṇẽ, Turner piunu

पिराणउ *pirāṇau* "goad" sub. dir. sg. m. 6. cf. Sk. pratodaḥ; *pratodana-; MG. parOṇo m., parOṇī f.

पिरू *pirū* "pus" sub. dir. sg. 25. derivation not known. MG. paru.

पिहुलपणि *pihulapaṇi* "by breadth" sub. n. inst. sg. 614. OG. pihula + paṇi; Sk. pṛthula-, Pk. pihula-; MG. pOhḷũ.

पिहुलां *pihulāṃ* "broad, wide" adj. n. pl. 616. Sk. pṛthula-, Pk. pihula-; MG. pOhḷũ.

पीयाणउं *piyāṇaum* "march" sub. n. dir. sg. (v. l. payāṇaum) 449; Sk. prayāṇa-n. Pk. payāṇa-n. The -i- instead of the expected -a- (as shown in a later ms.) is either due to the following -y-, or, Marwari influence.

पीलुक *pīluka* "a type of tree" sub. dir. sg. 301. der. not known

पीसतउ *pīsatau* "crushing, pulverizing" pres. part. m. dir. sg. 213; Sk. pinaṣṭi, piṃṣati. Pk. pīsai; Bloch pīsṇẽ, Turner pīsnu.

पीहरि *pīhari* "in the paternal home (of the wife)" sub. n. loc. sg. 473, 574. cf. Sk. pitṛgṛha-; Pk. piharā-; MG. piyar.

पुट्टलिका *puttalika* "small bundle" sub. dir. sg. f. 601; of Sk. puta- bundle; *pautya-, Pk. poṭṭa-, puṭṭa-. MG. poṭlo m. a big bundle, poṭli f. a small bundle. Bloch poṭ, poṭṭā, Turner poti.

पुणि *puṇi* "again" adv. (v. l. puṇa) 36, 94, 492, also used in the sense of conj and emphasis. 547, 555. Sk. púnah api, Pk. puṇavi OG. puni. s. v. puṇa.

पुण्यरासि *puṇyarāsi* "piety, lit. a heap of piety" sub. dir. sg. m. 428; lw. Sk. punyarāsi -.

पुत्तु *puttu* "son" sub. m. dir. sg. 525; Sk. putrah, Pk. putto, putta; lw. Pk.

पुनिम *punima* "the night of the fullmoon" sub f. obl. sg. 483. Sk. pūrṇámāh m. "full moon", late Sk. pūrnimā f. Pk. puṇṇimā, f. MG. punam f. Bloch punav, Turner purnyā̃.

पुरिमताल *purimatālu* proper noun dir. sg. m. 516.

पुष्पपुर *puṣpapura* proper noun m. dir. sg. 544

पुष्पावतंसकि *puṣpāvatamsaki* proper noun m. loc. sg. 429.

पुहुंक *puhumka* "rice or grain scalded with hot water and then dried over fire" sub. pl. 502, Sk. pṛthuka-, Pk. pahumka-, MG. pÕk. Bloch pohā.

पूगउ *pūgau* "arrived, reached" past part. dir. sg. m. 296; pūgai loc. sg. 478. Turner, under pagnu suggests analogical formation of *pugga replacing puṇṇa (pūrṇáh) as past part. to pujjai (paryáte), and pujjai : *pugga formed on the analogy of bhajjai : bhagga.

पूछइ *pūchai* "asks" v. pres. 3rd sg. 448, also 2nd sg. 538; pūchi imp. 2nd sg. 538; pūchatai pres. part m. loc. sg. 522; pūchatām gen. obl pl 380, 536; pūchiu past part. m. dir. sg. 86; puchiyā pl. 112; pūchii loc. sg. 428; pūchī abs. 386, 573; pūchiyai pass. sg. 339. Sk. prccháti Pk. pucchai. Bloch pusṇē, Turner puchnu.

पूछणहारु *pūchaṇahāru* "one who asks. desirous to ask" sub. dir. sg. m. 577. OG. pūchaṇa-+hāra, der. s. v. pūchai.

पूजइ *pūjai* "worships, respects" v. pres. 3rd sg. 74; pūjaum 1st sg. 528; pūjitu past part. m. dir. sg. 74; pūjitā pres. pass. part. pl. 72. lw. Sk. pūjayati; or a lw. in Pk. as pujja-, and OG pūja- cf. Pk. pujjae pass., pujja-.

पूजारउ *pūjārau* "priest – who performs the worshipping ceremony in the temple –" sub. m. dir. sg. 527. Sk. pūjākara – est. for pūja – to be considered a lw. s. v. pūjai.

पूठि *pūṭhi* "at the back." adv. 447, 529, 537. Sk. pṛṣṭih f. ribs. Pk. piṭṭhi, puṭṭhi; MG. pūṭh f. Turner pith.

पूयडा *pūyaḍā* "pancakes" sub. dir. pl. m. 315 Sk. pūpa – Pk. pūa – la; ext. with -ḍa- MG. puṛo.

पूरइ *pūrai* "fills. supports" v. pres. 3rd sg. 470; pūraum 1st sg 466; pūratī pres. part. f. dir. sg. 559; pūrivā ger. pl. 457; purī abs. 516. Sk. pūráyati Pk pūrai Turner purnu.

पूरी *pūrī* "having assembled" abs. 614. the context is sabhā pūri 'having assembled the council'. Sk pūrayati 'fills'. Note the OG. change in meaning cf. MG (dialectal) tāḷũ purvũ 'to lock' v. s v. pūrai.

पूर्वावस्थां *pūrvāvasthām* "in the previous stage" sub. loc sg f 417. lw. Sk.

पूर्वि *pūrvi* "before, ahead" adv stereotyped loc. 109, 428, often followed by – him emphatic. lw. Sk. pūrva –

पेट *peṭa* "stomach" sub dir. sg. n. 38, Pk. peṭṭa – piṭṭa – n, cf. MG poṭ-lũ, s. v. OG. puṭṭalikā; also MG. peṛu 'lower belly'; hesitation in vowel quality may suggest an early lw; Bloch poṭ. Turner peṭ

पोतनपुरी *potanapuri* proper noun m. loc. sg. 480.

पोरिसि *porisi* "a type of Jain penance", Jain theological term. sub. dir. sg. f. 142. Sk. pauruṣī, Pk. porisī.

पोलिका *polikā* "a kind of cake" sub dir sg. f. 317. lw. Sk paulikā polikā; Pk. poliā, MG. poḷi.

पोवइ *povai* "sews. strings on, fixes on" v. pres. 3rd sg. 23 Sk. pravayati; próta-, Pk. poai, poa-, MG. however, continues a form with -r-, parov-vũ, for which see Turner ponnu.

पोषइ *poṣai* "supports, feeds" v. pres. 3rd sg. 538; poṣi abs. 516. Sk. poṣayati. Pk. posei; -ṣ- may suggest it to be a lw.

पोसहु *posahu* "a type of Jain penance, Jain theological term, sub. dir. sg. m. 547. Pa. uposatha Pk. posaha-.

पंचवीस *pamcavīsa* "twentyfive" num. dir. sg. 428; also pamcavīsā 420. Sk. pañcaviṃśat Pk. paṇṇavīsā f. panuvīsa f. n., Ap. pacīsam. Turner pacis.

पंचवीसमउ *pamcavīsamau* "twenty fifth" ord. dir. sg. 62; pamcavīsamā obl. 222. for der. s. v. pamcavīsa.

पंचास *pamcāsa* "fifty" num. dir sg. 424, 613. Sk. pañcāśát f. Pk. paṇṇāsam. Bloch pannās, Turner pacās.

पंचहुत्तरि *pamcahuttari* "seventy five" num. dir. 133. cf. Sk. pañcasaptatih f. Pk. pamcahattari Turner pacahattar.

पंचुंबरि *pamcumbari* "five un-eatables, udumbara and the rest", sub. f. sg 352. Sk. pamca + udumbara –, Pk. pamcumbara –; note the OG. -i as a suffix for f. derivation.

पंचेतालीस *pamcetalisa* "forty five" num. 9. 407. cf. Sk. pañcacatvārimśat Pk. panayālisa, Ap. pacatālīsaha. Turner paĩtālis.

पंडु *pamdu* "pale" adj. dir. sg. 213. Sk. pāndu– m. Pk. pamdu– m.

पांखिया *pāmkhiyā* "birds" sub. dir. pl. m. 102; Sk. pakṣī. Pk. pamkhi, pakkhi, pakkhia–; ext. in OG. with -u; Turner paṅkhī.

पांच *pāmca* "five" num. dir. sg. 74; also pamca 85; Sk. pañca–, Pk. pamca–. Bloch pā̃c, Turner pā̃c.

पांचमउं *pāmcamaum* "fifth" ord. dir. sg. n. 162, 355; pāmcamai loc. sg. 353. dir. s. v. pāmca.

पांचसइं त्रिसट्ठ *pāmcasaim trisaṭṭha* "five hundred sixty three" num. 37; dir. s. v. pāmca, saa, and trisaṭṭha.

पांजरउं *pāmjaraum* "cage" sub. dir. sg. n. 403; Sk. pañjara – Pk pamjara – ext. in OG. MG. pā̃jrũ; but also pĩjrũ in the compound hārpiñjar 'skeleton'. Bloch piñjar. Turner piñjarā.

पिंडु *pimḍu* "solid, mass" sub. dir. sg. m. 311 Sk pindah, Pk pinda–.

पींजतउ *pīmjatau* "carding" pres. part. dir. sg. m. 213 Sk. piñjayati, Pk. pimjei; MG. pĩjvũ.

पुंजि *pumji* "in a heap, in a lump" sub. loc. sg. m. 22. Sk. puñja–, Pk. pumja–.

पुंजी *pumji* "having cleaned, wiped" abs. 323. Sk. puñja– 'a heap', Pk. pumjai 'to make a heap' refers to the heap of dust made by sweepers who clean the rooms or floor. MG. pũjvũ to clean, may, however be connected with Sk. pra – yuj –, Pk. paumjai; s. v. paumji.

पुंयरा *pumyarā* "invisible insects in water" sub. m. pl. 21. cf. MG. porā, der. not known.

प्रकटिवा *prakaṭivā* "to manifest, publish" obl. of inf. 544; lw. Sk. prakaṭa–

प्रकासइ *prakāsai* "makes manifest, brings to light" v. pres. 3rd sg. 590; prakāsī abs. 630. lw. Sk. prakāśa–.

प्रजवलइ *prajvalai* "burns" v. pres. 3rd sg. 521; prajvaliu past part. m. dir. sg. 458; prajvālatā caus. pres. part. m. pl. 522. lw. Sk. prajval–.

प्रणमी *pranamī* "having bowed, respected" abs. 73, 489. lw. Sk. praṇam–; Pk. paṇamai.

पडिक्कमउं *paḍikkamaum* 'I atone' v. pres. 1st. sg. 349. lw. Sk. pratikram –.

प्रतिघाउ *pratighāu* "obstruction, resistance" sub dir. sg. m 7. Sk. pratighāta–; OG. prati lw. + ghāu.

प्रतिपाल्इ *pratipālai* "observes, follows" v. pres. 3rd sg. 464; pratipālī abs. 430. lw. Sk. pratipāl–.

प्रतिबुझइ *pratibujhai* "realises, knows" v. pres. 3rd sg. 471, pratibujhisii fut. 3rd sg 471; pratibodhī abs. 38. Sk. budhyate Pk. bujjhai; Sk. bodhati, OG. prati lw. + bujh –. Bloch bujhṇā, Turner bujhnu[2].

प्रभविउं *prabhaviuṁ* "happened, created" past part. dir. sg. n 426; prabhaviyai pass. sg 517. lw. Sk. prabhav – + OG. past participle n. suffix -iuṁ.

प्रवरु *pravaru* proper noun m. dir. sg. 516.

प्रवर्त्तावइ *pravarttāvai* "causes to circulate, spread" v. caus. pres. 3rd sg. 472; pravarttāviuṁ past part. n. dir. sg. 482; pravarttāvisu fut. 1st sg. 482; pravarttāvī abs. 517. lw. Sk. pravart–.

प्रवर्द्धइ *pravarddhai* "increases" v. pres. 3rd sg. 514. lw. Sk. pravardh–.

प्रवासाविउ *pravāsāviu* "caused to rain" caus. past part. m. dir. sg. 561. OG. pra+vāsāviu; Sk. varṣati, Pk. vassai.

प्रशंसिउ *praśamsiu* "praised" past part. m. dir. sg. 83. lw. Sk. praśams–.

प्रसवइ *prasavai* "gives birth, creates" v. pres. 3rd sg. lw. Sk. prasūyate, prasava–.

प्राइ हिं *prāi him* "generally" adv. stereotyped inst. 383. Sk. prāyeṇa.

प्राघुर्णकु *prāghurṇaku* "guest" sub. dir. sg. m. 440, short -u- may be scribal error. lw. Sk. prāghūrṇaka–, prāghuṇa–.

प्राणियउ *prāṇiyau* "being, living creature" sub. dir. sg. m. 518; prāṇiyai sub. inst. sg. 591; prāṇiyā obl. pl. m. 323; prāṇiyāṁ obl. pl. n. 400. Sk. prāṇin; OG. prāṇi + ext. with -u; -ya- in OG. prāṇiyāu cannot be explained, unless it is some representation of y-glide.

प्राणिवा *prāpivā* "to obtain, to attain" obl. of inf. 7. lw. Sk. prāp–.

प्राविहिं "generally" adv. stereotyped inst. 536. lw. Sk. prāyeṇa; prāy – + OG. inst. suffix. s. v. prāihiṁ.

प्रार्थिवा *prārthivā* "to request" obl. of inf. 575 lw. Sk. prārtha–.

प्रासुकेषणिउ *prāsukeṣaṇiu* "what is devoid of life and hence desirable, esp. food for Jain monks Jain theological term." adj. dir. sg. m. 561 lw. Sk. prāsuka – eṣaṇiya–.

[illegible] *pālanala* [illegible]

[illegible] *pālanaa* [illegible] Taraṅga [illegible]

[illegible] Tarara [illegible]

[illegible]

[illegible]

बळद *balada* "bulls" sub. pl. m. 507. Sk. balivardah m. Pk. balivadda- m., balidda- m., baladda- m., MG. baḷad. Turner baḷad.

बळही *balahi* "some preparation of milk" cf. MG. baḷi, der. not known

बळात्कारि *balātkari* "by force" sub. inst. sg. m. 3[illegible]; lw. Sk. balātkāra- + OG. inst. suffix -i.

बहिन *bahina* "sister" sub. f. dir. sg. 142, MG. bhen Sk. bhagini, Pk. bahinī; -n- in OG. indicates Sk. loan influence? Final -ī > -a is irregular. Bloch bahiṇ, Turner baini.

बहुत्तरि *bahuttari* "seventy two" num. dir. sg. also bahattari 74; cf. Sk. dvāsaptatiḥ, Pk. bāvattari, bāhattari. Bloch bāhattar, Turner bayāhattar.

बहुरा *bahurā* "sweeper's broom (?)" in a compound bahurālika, sub. 518. the context is buhāri (vuhāri) bahurālika': buhārī means sweeper. Sk. vyavahārin, cf. Pk. bahuriyā f. 'broom'

बाकुल *bakula* "a type of grain (?)" sub. dir. pl. m. (v. l. bakula) 433. Der. not known.

बाधउ *badhau* "tied, obstructed" past part. m. dir. sg. 434, 463, 474; badhi f. 480; Sk. badhnāti, Pk. baddha-, also see s. v. bāmdhai.

बाप *bapa* "father" sub. obl. sg. m. 108; Pk. bappa-. Bloch bap, Turner bap.

बार दूणई साठि *bara punaum sathi* "twelve multiplied by two is sixty." 614 This phrase indicates the manner in which multiplication tables are memorised in village schools. For derivations see under baraha, punaum, and sāthi.

बारमी *barami* "twelfth" ord. f. 259; bārahamai loc. sg. m. 3[illegible] der. s. v. bāraha.

बारह *baraha* "twelve" num. dir. sg. 94, 514; bāre (v. l. barahe) inst. pl. 113, cf. Sk. dvādaśa, As. Pk. duvālasa, duvālasa, Pk. bārasa, bāraha. Bloch barā, Turner bāra

बारि *bari* "at the door" sub. loc. sg. n. 85, Sk. dvāram Pk. bāra- n., Bloch bāri, Turner duwar

बावन *bavana* "fifty two" num. dir. sg. 74; cf. Sk. dvāpañcāśat, Pk. bāvannam. Bloch bāvan, Turner bāwan

बासठि *basathi* "sixty two" num. 616 cf. Sk. dvāṣaṣṭiḥ, Pk. bāsaṭṭhim, MG. bāsaṭh. Turner [illegible]

बाहिर *bahira* "outside" adv. 533, bāhiri (stereotyped loc.) 5[illegible], also bāhari 24, bāhiraü dir. sg. m. 112, 442, 549 cf. Sk. bahiḥ, perh. contam. by bāhyaḥ, Pk. bāhira-, MG. bāhar, bār. Bloch [illegible], Turner [illegible]

बि *bi* "two" num. dir. 94, 110, 432, 535; also be 433, 480, 556, 578; bihuṁ emphatic 386. Sk. dvē n. du. Pk. be, OG. bi; MG. bE; OG. be should be a result of a contraction of some MI emphatic form such as be-hu > beu > be; OG. bi is retained in numerous OG. compounds. The following numerals with bi are noted. bi saiṁ caurāsī 'two hundred eighty four' 616; bi saiṁ chavvisāṁ n. pl. 'two hundred twenty six' 78; bi sao chappanne loc. pl. 'two hundred fiftysix' 397; bi saiṁ chahuttara 'two hundred seventy six' 391; bi saiṁ trīsāṁ n. pl. 'two hundred thirty' 78; Bloch don, Turner dui.

बिगुणउं *biguṇaum* "double" adj. dir. sg. n. 461. OG. bi + guṇaum; for bi q. v. guṇaum s. v. guṇai. The lit. meaning of the compound is 'multiplied by two'.

बिडोत्तर सउ *bidottara sau* "one hundred and twelve" num. dir. sg. m. 421. MG. bāroterO; cf. Sk. dvādaśa- uttara- śata-. Note that the unemphatic bi- is used in the compound, as in other cases (v. s. v. bi), but MG. has replaced it by bā- on the analogy of bār 'twelve'. v. s. v. bāraha.

बियासी *biyāsi* "eighty two" num. 394, cf. Sk. dvyaśītiḥ f., Pk. bāsiim; MG. byāśi, bāśi Note the OG. bi- in compounds has been replaced by bā- in MG; here it is on the analogy of -ā- in MG ekāśi 'eightyone'. For a similar case see s. v. bilottara sau; also see s. v. bi. Turner bayāsī.

बीजउरा *bijaurā* "'seed filled,' a citron, Citrus Medica" sub. obl. sg. 16; Sk. bījapūraka- m. Pk. biaūraya- n.; reborrowed in Pk. the form may be *bijjaüraya-, MG. bijorū n.

बीजउं *bijaum* "second" ord. dir. sg. n. 417, 483; bijāṁ n. pl. 302, 417; bījā m. pl. 489; bījai inst. sg. 94, also bījo 489; bīje loc. sg. 613; bījī f. sg. 463. Sk. dvitīya- Pk. biijja-, ext. in OG. v. s. v. bi.

बीहइ *bihai* "fears" v. pres. 3rd sg. 3; bīhatau pres. part. m. dir. sg. 463; bīhāvatau caus. pres. part. m. dir. sg. 514; bīhāvī caus. abs. 433. Sk. bibhēti, Pk. bihei, bīhei, bīhai; note the long -ī- in Pk., which may be due to the analogy of Sk. bhītaḥ, Pk. bīia.

बुझ *bujjha* "know, awake" v. imp. 2nd sg. 433 lw. Pk. v. s. v. būjhavai.

बूझवइ *bujhavai* "enlightens, causes to know" v. pres. caus. 3rd sg. 340; būjhiyaiṁ pass. pres. 3rd pl. Sk. budhyate, Pk. bujjhai.

बोल *bola* "promise, words" sub. m. dir. pl. 433; bole inst. pl. 340. der. s. v. bolai.

बोलइ *bolai* "speaks" v. pres. 3rd sg. 380, 456; bolaiṁ pl. 147, 481, 543; bolau imp. 2nd pl. 534; bolatau pres. part. m. dir. sg. 514; bolatā pl. 538; bolivauṁ ger. dir. sg. n. 262; bolāviyai caus. pass. 3rd sg. 55, bolāviu caus. past part. m. dir. sg. 434; bolāvati caus. pres. part. f. dir. sg. 539. Buddhist Sk. bahubollakah 'talkative'. Pk. bollai; Bloch suggests Dravidian origin. Bloch bolṇẽ, Turner bolnu.

बंहुरा *baṁbhurā* 'proper noun, name of a town' f. dir. sg. 521.

बंबाली *baṁbāli* "surrounded, clustered" past part. f. dir. sg. 521. cf. Pk. Ap. vamāla-' to collect'; also baṁbāla-; der. not known.

बांधइ *bāṁdhai* "ties, obstructs" v. pres. 3rd sg. 522; bāṁdhauṁ 1st sg. 435, 443. also bādhau (nasal is dropped, probably influenced by participial baddha- 552; bāṁdhiu past part. m. dir. sg. 538; bāṁdhī abs. 448, 488. Sk. badhnāti, bandhati, Pk. bandhai. Bloch bā̃dhṇẽ, Turner bā̃dhnu.

बांनणउं *bāṁnaṇauṁ* "obeisance, act of bowing (to gods and teachers)" sub. n. dir. sg. 135; bāṁnaṇāṁ n. pl. 123, also bānaṇāṁ n. pl. 326, 338; bāṁnaṇai loc. sg. 135, also bānaṇai loc. sg. 160. Sk. vandana- Pk. vaṁdaṇa- ext. in OG. Note the special development -nd- > - ~n- in this word of theological usage. Note also initial v-> b-; s. v. vāṁdaṇauṁ.

*

भइंसि *bhaiṁsi* "buffalo" sub. f. sg. 311. MG. bhẽs, Sk. māhiṣī f. Pk. mahisī f. Bloch mhais f. Turner bhaĩsī.

भणइ *bhaṇai* "speaks, tells" v. pres. 3rd sg. 426; bhaṇisu fut. 1st sg. 455; bhaṇau imp. 3rd sg. 489; bhaṇi imp. 2nd sg. 546; bhaṇijiu precative 2nd sg. 435; bhaṇatau pres. part. m. dir. sg. 463; bhaṇatā obl. sg. 465; bhaṇatī f. dir. sg. 474; bhaṇii loc. sg. 455; bhaṇiu past part. m. dir. sg. 142, bhaṇiyā pl. 381; bhaṇiuṁ n. sg. 38; bhaṇiyāṁ n. pl. 154, 581; bhaṇī abs. 142; bhaṇivūṁ ger. n. dir. sg. 323; bhaṇiyai pass. sg. 365; bhaṇiyaiṁ pass. pl.; bhaṇāvai caus. pres. 3rd sg. 577; bhaṇāviu caus. past. part. m. dir. sg. 577. Sk. bhaṇati, Pk. bhaṇai. Turner bhannu.

भमतउ *bhamatau* "wandering" pres. part. m. dir. sg. 426; bhamiu past. part. m. dir. sg. 426; bhamiyā pl. 448; bhamāḍī caus. abs. 154; Sk. bhramati, Pk. bhamai, Bloch bhovṇẽ, Turner bhaũnu.

भरतक्षेत्र *bharatakṣetra* proper noun, name of the country. m. 425.

भरिउ *bhariu* "filled" past part. m. dir. sg. 461; also bhario lw. Pk. 461; bharī f. 464; bharivā obl. of inf. 38. Sk. bharati, Pk. bharai. Bloch bhar, bhār, Turner bharnu².

भलउं *bhalauṁ* "good, proper" adj. dir. sg. n. 434; 521; bhalī f. 426, 524. Sk. lex. bhallah, Pk. bhalla-; note the short -a-, being in an unemphatic form. Bloch bhalā, Turner bhalo.

भविक *bhavika* "having faith, householders - who are fit to achieve highest stage of deliverance". adj. m. dir. pl. 38; Sk. bhavya-, Pk. bhavia, OG. rebuilt with -ka, bhavika-.

भषी *bhaṣī* "having eaten" abs. 433. Sk. bhakṣáyati; Pk. bhakkhei. Note the -a- in the initial syllable, which is irregular.

भाई *bhāi* "brother" sub. m. dir. sg. 94; also pl. 427. Sk. bhrātṛka-, Pk. bhāia. Bloch bhāī, Turner bhāi.

भागडउ *bhāgaḍau* "simpleton, afflicted" adj. m. dir. sg. 38, Sk. bhagna-, Pk. bhagga- ext.- ḍau.

भाजइ *bhājai* "violates, breaks" pres. 3rd sg. 560, bhāgauṁ past part. n. sg. 444, bhāgāṁ n. pl. 91; bhāgī f. sg. 481; bhāṁjī abs. 514; also means 'ran away, fled' when followed by auxiliary gayā: bhājī gayā 484. Sk. bhanakti, bhajyáte, bhañjayati, past part. bhagna-; Pk. bhaṁjai, bhagga-. Bloch bhā̃ṇẽ, Turner bhā̃cnu, bhajānnu.

भाटि *bhāṭi* "hired" first part of the compound bhāṭ dāna- 'paying for hire' 468. Sk. bhāṭi f. 'wages, earnings of prostitution'; v.s.v. bhāḍā.

भाठु *bhāṭhu* "furnace, frying-pan i.e. where frying or roasting is done" sub. dir sg. m. 25. Sk. bhrāṣṭra-, Pk. bhaṭṭha- ext. in OG. gives MG. bhāṭho.

भाडा *bhāḍā* "on hire, rent" sub. obl. sg. n. 507, 521; Sk. lex. bhāṭam n. 'wages,' bhāṭiḥ f. 'earnings of prostitution'; Pk. bhāḍaya. MG. bhāṛū. Bloch bhāṛ, Turner bhāṛā.

भाणइ *bhāṇai* "in the plate" sub. loc. sg. 296. Sk. bhājanam Pk. bhāyaṇa-, ext. in OG. MG. bhāṇū.

भाणेज *bhāṇeja* "sister's children" sub. dir. pl. 142. Sk. bhāginīyah Pk. bhāiṇea, bhāiṇejja (cf. Sk. bhrātrīyah Pk. bhattijja-; MG. bhatrijo; Pk. forms suggest loan influence from Sk.) Turner bhānij.

भानु *bhānu* proper noun m. dir. sg. 544.

भावइ *bhāvai* "cherishes" v. pres. 3rd sg. 65; bhāvatau pres. part. m. dir. sg. 110; bhāvatāṁ obl. gen. pl. 108; bhāvisiiṁ fut. 3rd pl. 433; bhāvevī ger. f. 249; bhavādevau caus. ger. m. dir. sg. 80. Sk. bhāvayati Pk. bhāvei.

भिक्षाजीविया *bhikṣājīviyā* "living on alms" sub. dir. pl. m. 564, lw. Sk. bikṣājīvi ext. in OG. with -a.

भीति *bhīti* "wall" sub. f. 264, 601; also loc. sg. 44. Sk. bhittiḥ Pk. bhitti. Block bhī̃t, Turner bhit.

भीनउं *bhīnauṃ* "wet, softened" past part. n. dir. sg 549. bhinī adj. f. 601. It is not clear whether this is connected with Sk. past participle bhinna- pierced, (Sk. bhid-, bhinna-) as the context manu bhīnaum 'his heart softened—his mind was pierced—and hence softened' may suggest, or is it related with Sk. abhyajyate, abhyañjati, whose Gujarati evolute is bhī̃jvũ 'to be wet'? Bloch bhijnẽ, Turner bhijnu, bhignu.

भीमु *bhīmu* proper noun m. dir. sg. 487.

भीलु *bhīlu* "man of the bhila tribe" m. dir. sg. 418; bhillaham inst. pl. 418; Pk. bhilla-.

भुइं *bhuiṃ* "earth, distance" sub. f. dir. sg. 326, 461, 489, 511. Sk. bhūmiḥ f. Pk. bhūmi-. Bloch bhui, Turner bhui̊.

भूंभोलिउ *bhūṃbholiu* "a type of whirlwind" sub. m. dir. sg. 20. der. not known.

भुंहरि *bhuṃhari* "in the cellar" sub. n. loc. sg. 166, Pk. *bhūmi-ghara, (cf. Sk. bhūmi-gṛha- 'underground chamber') *bhūmihara-; MG. bhõyrũ n. Note the retention of -m- in OG.

भूख *bhūkha* "hunger" sub f. dir. sg. 112. cf. Sk. bubhukṣā, * bhūkṣā, Pk. bhukkhā. Bloch bhūk, Turner bhok.

भूखालूउ *bhūkhālūu* "hungry" adj. dir. m. 323. OG. bhūkhā + ālua, MG. bhukhālvo is the result of further extension of thūkhālu + a; this -a is later analogically replaced by -o (for gender) giving bhūkhālvo

भूखियां *bhūkhiyā̃* "hungry" past part. m. dir. pl. 433 der s. v. bhūkha.

भेटिउ *bheṭiu* "met" past part. m. dir. sg. 426. Pk. bhiṭṭiya-, Turner bheṭnu.

भेदे *bhede* "by difference" sub. inst. pl. 314 lw. Sk. bheda- + OG inst pl. suffix -e.

भोगवइ *bhogavai* "enjoys" v. pres. 3rd sg. 462; bhogavaim pl. 562; bhogavi imp. 2nd sg. 577; bhogavatau pres. part. m. dir. sg. 317. lw. Sk. bhoga-, derived as verbal base.

[illegible] "consumer" sub. dir. sg. m. 402; -t seems to be an error. lw. Sk.

भोजु *bhoju* proper noun m. dir. sg. 4[illegible]3.

भोलउ *bholau* "honest, simple-simpleton" adj. dir. sg. m. 38. Pk. bhola-, ext. in OG.; MG. bholo, Turner bholo, bhoro.

भोलपणइ *bholapaṇai* "by simplemindedness" sub. inst. sg. 297; OG. bhola + paṇaum. der. s. v. bholau.

भंड *bhaṃḍa* "impolite behaviour" sub. dir. sg. 12. Sk. bhaṇḍa—m. 'a jester, buffoon', Pk. bhaṇḍa- m. MG. bhā̃ḍ.

भंडारी *bhaṇḍārī* "store-keeper; a surname" sub. dir. sg. m. 402. Sk. bhāṇḍāgārika-, Pk. bhaṇḍāria- Turner bhaṛāri.

भांगउ *bhāṃgau* "division, part" sub. m. dir. sg. 283; bhāṃga pl. 285, also bhāṃgā m. pl. 134; bhāṃgai loc. sg. 285. MG. bhā̃go, Sk. bhaṅga-, Pk. bhaṃga-, ext. in OG.

भांडसाला *bhāṃḍaśālā* 'store-house' sub. f. 478, lw. late Sk.; cf. Guj. surname bhaṇsālī m. Sk.* bhāṇḍaśālika.

भांडी *bhāṃḍī* "barber's box" sub. f. dir. sg. 363. Sk. bhāṇḍī 'razor-case', Bloch bhāṇḍa, Turner bhā̃ṛo.

भांपणि *bhāṃpaṇi* "eyelashes" sub. f. 41; cf. Sk. pakṣman, pl. pakṣmāṇi..., Pk. pamha; MG. pā̃paṇ f. der. (with initial bh- in OG.) not clear.

भुंजइ *bhuṃjai* "roasts" v. pres. 3rd sg. 25; bhuṃjatau pres. part. m. dir. sg. 213. Sk. bhuñjati 'enjoys, consumes', Pk. bhuṃjai; note the significant change in meaning. MG. bhũjvũ 'to roast'.

भ्रमर *bhramara* "bee" sub. sg. m. 21. lw. Sk.

भ्रमरि *bhramari* "bee" sub. f. sg. 316. lw. Sk.

भ्रष्ट *bhraṣṭa* "roasted" past part. 200; lw. Sk. bhṛṣṭa-.

म

म *ma* "do not" prohibitive particle adv. 38. Sk. mā, Pk. ma.

मउड *maula* "crown" sub. m. dir. sg. 430. Sk. mukuṭa-, Pk. maula- m. n.; MG. mOṛ.

मउडेरउं *mauḍeraum* "little later" adj. dir. sg. n. 179; OG. mauḍa + eraum OG. comparative suffix; Sk. -tara-. MG. mOṛo adj. m. 'late'; der. not known.

मगध *magadha* proper noun m. dir. sg. 425.

मगसा *magasā* "name of mosquito-like insects" sub. m. pl. 401; cf. Sk. maśaka-, Pk. masaga-.

मच्छर *macchara* "jealousy" sub. m. 532. Sk. matsara-, Pk. macchara- m.; prob. lw. fr. Pk.

मणिपुर *maṇipura* proper noun, name of a town; m. dir. sg. 473, 522.

मणिपहु *maṇipahu* proper noun m. dir sg. 576.

मतिसागर *matisāgara* proper noun m. dir. sg. 425.

मदनदत्त *madanadatta* proper noun m. dir. sg. 426.

मदनु *madanu* proper noun m. dir. sg. 522.

मनइ *manai* "believes, considers v. pres. 3rd sg. 446; manauṁ 1st sg. 629; also mānauṁ 1st sg. 535; manatau pres. part. m. dir. sg. (v. l. mānatau) 73; manatā pl. 6; manatai loc. sg. 112; maniuṁ past part. n. dir. sg. 465; manāvaiṁ caus. pres. 3rd pl. 489; manāvī abs. 558. Sk. manyate, Pk. mannai; MG. mānvũ; OG -a- in the initial syllable may be due to analogical influence of word like manah; note the appearance of mā- in some varie lectionis. Bloch mānṇẽ, Turner mānnu.

मनोहारिउं *manohāriuṁ* "pleasant" adj. n. dir. sg. 94; Sk. manohārin lw. ext. in OG. with -om.

मरइ *marai* "dies" v. pres. 3rd sg. 446, 526, maratā pres. part. m. obl. pl. 537; marī abs. 111; ... mārai caus. pres. 3rd sg. 526; māraum 1st sg. 559 (in future sense); māri imp. 2nd sg. 446, 483, 530; mārivaum ger. 447; māriu past part. m. dir. sg. 447, 622; māriyā pl. 448, 537; mārie inst. sg. 622; mārāvivā obl. of inf. 434, 554; māri inf. 557. Sk. mārate, mārāyati, Pk. marai, mārei. Bloch marṇẽ, mārṇẽ. Turner marnu, mārnu.

मरिच *marica* "chillies, pepper" sub. n. 314. Sk. maricah m. Pk. maria- m. n.; perhaps a loan from Sk. in Pk., * maricca-. MG. mari. mareũ. Bloch miri, Turner maric.

मर्दी *mardī* "pounded, rubbed" past part. f. 519, marddiyaiṁ pass. pl. 519. lw. Sk. márdati, mard- + OG. verbal suffixes.

मल्लि *malli* proper noun m. dir. sg. 110.

मसली *masalī* "rubbed" past part. f. 519. cf. Sk. mūsalam n. 'pestle'; Bloch suggests Dravidian origin; MG. masaḷ-vũ 'to rub, squeeze'. Turner musārnu.

मसाण *masāṇa* "crematorium" sub. n. 251. Sk. śmaśānám n., Pk. masāṇa-; MG. masāṇ. Bloch masaṇ, mhasaṇ, Turner masān.

महरिषि *maharṣi* "great saint" sub. m. dir. sg. 300; also obl. 559, 561. lw. Sk.

महता *mahatā* "officers" sub. m. dir. pl. 489; mahate inst. pl. 489; also mahaṁtau m. dir. sg. 545, mahaṁtai inst. sg. 545. Sk. mahānta-, Pk. mahaṁta-; OG. extended, with significant change in meaning.

महानसी *mahānasī* "kitchen, belonging to food" sub. f. sg. 113; Sk. mahānasā- n., Pk. mahāṇasa- n., mahāṇasiya-.

महानदीयहं *mahānadīyahaṁ* "in the great rivers" sub. obl. pl. f. 618. lw. Sk. mahā + nadī; note -ya which suggests extension of nadī- in OG.

महपुरु *mahīpuru* proper noun m. dir. sg. 469.

महासत्तु *mahāsattu* "great soul" sub. m. dir. sg. 561. Sk. mahā-sattva-, Pk. mahā-satta-; lw. Pk.

महासाल *mahāsāla* proper noun m. dir. sg. 108.

महासेन *mahāsena* proper noun m. dir. sg. 521.

महेसरदत्तु *mahesaradattu* proper noun m. dir. sg. 434; also mahesaradatta 434, mahesaradatti inst. sg. 434.

महिसि *mahisi* "buffalo" sub. f. 264; Sk. mahiṣī, Pk. mahisī, also see s. v. bhaimsi.

महुय *mahuya* "a tree, Bassia Latifolia, bees-wax" (in a compound mahuyādika) sub. 501. Sk. madhūka- Pk. mahua- m.

महियारि *mahiyāri* "(woman) milk-vendor" sub. f. 300; mathita + kārī; Pk. * mahia + ārī; MG. mahiāri.

माउलउ *māulau* "mother's brother" sub. m. dir. sg. 142, māulai inst. sg. 142. Sk. mātula-, Pk. māula- ext. in OG. This word is not used in MG. and it is replaced by māmā, which has spread in all NIA languages; (cf. however, in dialects of saurashtra 'māḷo' is used in referring to a person who has done something unusual, it is also used as an exclamation of surprise, and inflected for gender; this comparison is extremely doubtful) Bloch māvḷā, māmā. Turner māmā.

माखी *mākhī* "house-fly" sub. f. dir. pl. 21, (v. l. māmkhi) 521; mākhīe inst. pl. 521. Sk. mákṣikā Pk. makkhiā. Bloch māśī, Turner mākho.

मागइ *māgai* "demands, asks," v. pres. 3rd sg. 470; māgiuṁ 470, 520; māgi imp. 2nd sg. 470; māgiyaiṁ pass. past part. n. dir. sg. 112, māgiyaiṁ pass. pl. (v. l. māmgiyaiṁ) 112. Sk. mārgati, Pk. maggai. Bloch māgṇẽ, Turner māgnu.

माटी *māṭī* "earth, soil" sub. f. dir. sg. 20, 185. Sk. mṛ́ttikā, Pk. maṭṭiā. Bloch māṭī, Turner māṭo.

माठउं *māṭhauṁ* "shortened (in idiomatic usage- 'inauspicious')" adj. dir. sg. n. 404; māṭhai (idiomatic usage : sājai māṭhai thihai) 'inauspicious' loc. sg. 282; MG. māṭhũ 'inauspicious, undesirable'. It is probable that earlier meaning 'shortened, rubbed, recast' came to mean 'inauspicious' especially in idiomatic usage, paired with sājauṁ; Sk. sajja- 'equipped'; māṭhauṁ: Sk. mṛṣṭa- 'repaired'. Sk. mṛṣṭa- Pk. maṭṭha- Turner māṭho.

माणस *māṇusu* "man" sub. dir. sg. m. 518, (v. l. māṇasu) 556, also mānusa 21. Sk. mánuṣah, Pk. māṇusa–; Bloch manūs. mānas, Turner mānis.

मातं *mātaṁ* "by the mother" sub. inst. sg. f. 81, also mātā 81 and mātāṁ inst. sg. 81. lw. Sk. mātā + OG. inst. suffixes.

माथउं *māthaum* "head" sub. dir. sg. n. 326; māthai loc. sg. 38, 327, 341, 483. Sk. mastaka–, Pk. matthaa–. Bloch māthā, Turner māth.

माय *māya* "mother" sub. f. dir. sg. 108, Sk. mátā, Pk. māyā, Bloch maī, Turner maī.

मायामउ *māyāmau* "illusory" adj. dir. sg. n. 430, lw. Sk. māyāmaya–.

मालव्य *mālavya* proper noun m. dir. sg. 534.

मावित्र *māvitra* "parents" sub. 132. MG. māvtar. Sk. mātāpitr–. Note the –tr– in OG; Pk. māupiu cannot explain OG. and MG. forms; it seems to be a later compound, as suggested by retention of –p–.

मासे *māse* "by the month" sub. m. inst. sg. 255, lw. Sk. māsa – + OG. suffix –e.

माहरउ *māharau* "my" pro. adj. m. sg. 94; māharā pl. 440, 463, 559; māharai inst. sg. 85; loc. sg. 85; māharaum n. dir. sg. 434, māharāṁ n. pl. 473; māharī f. 471; Sk. máma replaced by Pk. maha + OG. postposition rahaum (cf. rahaim, later haraim, hraim) is added. MG. mārū. For a different explanation i. e. maha + kāra– see Pischel §. 434. Turner mero.

माहि *māhi* "in, into" postpos. 73, 549, 554, (v. l. māhiṁ) 38; māha 426, 560; māhā 94, 562; māhaitau 'from' māha + itau 401; Sk. mádhyah, madhye, Pk. majjhe, OG. māhi (–jjh– >–h– in OG. is a special treatment in an auxiliary word). Bloch māj, Turner māī.

माहिलउ *māhilau* "belonging to the inside" adj. m. dir. sg. 548, der. s. v. māhi.

मिच्छामि दुक्कडु *micchāmi dukkadu* "may my sins be atoned, wiped out" a very common Jain phrase (Pk.) spoken while paying routine obeisance to the teachers, and on other religious occasions 38. Sk. mithyā me duṣkṛtam. Note the pronominal 'me' being confused with the verbal form.

मित्तु *mittu* "friend" sub. m. dir. sg. 553. Sk. mitra–, Pk. mitta–. lw. Pk.

मित्रानंदु *mitrānandu* proper noun m. dir. sg. 545.

मिलिउ *miliu* "met" past part. m. dir. sg. 434; miliyā pl. [illegible]; miliyāṁ n. pl. 626; miliim v. pres. 3rd pl. (note –li– instead of –la–; may be a scribal error) 282; miliva obl. of inf. 678 mili abs. 483. Sk. milati, Pk. milai, Bloch milṇẽ, Turner milnu.

मुक्तिगामियां *muktigāmiyāṁ* "those who are on the path to deliverance" sub. obl. pl. n. 408. lw. Sk. ext. in OG. by OG. n. dir. suffix –am muktigāmium.

मुखकोस *mukhakosa* "having covered the mouth by tying a piece of cloth" sub. m. dir. sg. 325. lw. Sk. mukha–; Sk. koṣah Pk. kosa– OG. kosa.

मुज्झ *mujjha* "infatuate, swoon" v. imp. 2nd sg. 435; Sk. múhyati, Pk. mujjhai; lw. Pk.

मुग *muga* "a particular kind of lentil" sub. 502. lw. Sk.; s. v. mumga.

मुनिसुव्रत *munisuvrata* proper noun m. dir. sg. 110.

मुयउ *muyau* "dead" past part. m. dir. sg. 94; also mūyau 432; Sk. mṛtáh, Pk. mua– ext.; OG. past part. is the result of extended base in Pk. that alone can explain –y– in OG. muyau. MG. however, has muo, result of an unextended base. Long –ū– in some forms explains the presence of the dialectal form Pk. muo OG. mū–o. Bloch melā, Turner moro.

मुर्मुर *murmura* "burning charcoal" sub. dir. sg. 20. lw. Sk. múrmura–.

मुसल *musala* "pestle" sub. dir. sg. 520. lw. Sk.

मुसइं *musaim* "robs, steals" v. pres. 3rd pl. 547; Sk. muṣṇāti, muṣati, Pk. musai.

मुहबारि *muhabāri* "on the mouth" sub. loc. sg. 325. Sk. mukha-dvāre Pk. muha-bāre, OG. muhabāri.

मुहंतो *muhaṁtī* "piece of cloth kept on the mouth by the Jains (of one sect) to prevent insects in the air from being killed by their breath during speech," sub. f. sg. 133. Sk. mukha-patrikā, Pk. muhavattiā; MG. mumti, mupatti. (cf. Pk. muha-patti).

मू *mū* "pers. pro. obl. sg. 94, 361, also mūṁ 386; 426; maim inst. sg. 401, 525, 518, (v. l. mai) 74. Ap. mahu, maim.

मूअ *mūa* "dumb" sub. dir. sg. 44. lw. Sk.

मूकइ *mūkai* "puts" v. pres. 3rd sg. 474; mūṁkisii fut. 3rd sg. 382; mūkiu past part. m. dir. sg. 550; mūkī abs. 463, 489, also mūṁki 74, 445, 485; mūṁkatī pres. part. f. dir. sg. 562. Sk. muñcáti, muktáh, Pk. mumcai, mukkai. Bloch muknẽ, Turner mukuro.

मूलि *mūli* "by sale" sub. inst. sg. 548; Sk. mūlya– Pk. mulla–.

मूलिगउ *mūligau* "principal, chief" sub. m. dir. sg. 446; Sk. mūle gatah OG. muli + gau.

मूड mūḍa "basket" (first member of a compound) sub. 477. lw. Sk. mūṭa, mūṭaka, mūḍaka.

मेखलां mekhalaṁ "chain, series" sub. f. loc. sg. 109. lw. Sk. mekhalā + OG. loc. suffix – m.

मेल्हइ melhai "leaves, abandons" v. pres. 3rd sg. 577; melhaum 1st sg. 106, 349; melhi imp. 2nd sg. 487, 544; melhau imp. 3rd sg. 548; melhisiim fut. 3rd sg. 382; melhiu past part. m. dir. sg. 387; melhiyā pl. 551; melhium n. sg. 465, also meliu 465; melhiyām n. pl. 25; melhī abs. 451, also melī 589; ... melhāvai caus. pres. 3rd sg. 548; melhāviu past part. m. dir. sg. 434, 548; melhiyai pass. sg. 529, also milhiyai 529. Der. not known. Pk. millai, MG. melvũ.

मेलावउ melāvau "meeting, union" sub. m. dir. sg. 578, Sk. melāpaka Pk. melāva–, melāvaya.

मेह meha "cloud" sub. m. sg. 483. Sk. megha– Pk. meha–.

मेहु mehu "rain" sub. m. dir. sg. 561. Sk. megha–, Pk. meha–.

मोकलइ mokalai "sends" v. pres. 3rd sg. 533, 536, 554; mokaliu past part. m. dir. sg. 108; mokaliyā pl. 454, 538; mokalāvī caus. abs. 400, 554, der. s. v. mukai. cf. Sk. mukta–.

मोकलउं mokalauṁ "open, free" adj. dir. sg. n. 203; mokalāṁ n. pl. 485; mokalā m. pl. 42. 44. Sk. mukta Pk. De. mukka –la– ext. in OG. MG. mokḷo, Bloch mokaḷ.

मोकलकरणु mokalakaraṇu "act of easing, spreading (one's feet)" sub. dir. sg. 301. OG. mokala + karaṇu. der. s. v. mokalauṁ.

मोटउं moṭauṁ "big" adj. n. dir. sg. 211; moṭe inst. sg. 464; moṭai inst. sg. m. 154. Sk. mahat-suffixed with –ṭṭ– (cf. Guj. liṭī 'line' MI. lihaṭṭiā, Sk. rekhā, lekhā; for –ṭṭ– as a MI formative suffix see Bhayani H. C. vāgvyāpār p.) Turner moṭo.

मोटेरी moṭerī "bigger" adj. f. 186; OG. moṭ + erī; for der. s. v. moṭauṁ.

मोतीलग motīlaga "(ornament) on which pearls are stitched" sub. 519. Sk. mauktika– Pk. mottia– OG. motī; Sk. lagyati Pk. laggai, OG. suffix – laga, lagī cf. hīrālaga.

मोदकचूरकादिक modakacūrakādika "modaka cūraka and others" sub. n. sg. 175. modakacūra seems to be the name of some sweet preparation; cf. a similar MG. name motīcūr.

मंकोडी maṁkoḍī "a small, black insect" sub. 21. MG. makoṛo m. also makoṛī f. For a possible confusion in the Sk. matkuṇa– and markaṭa– and its evolutes in Mod. IA languages see Turner under makunu. Final –ḍī may be influenced by MG. kīṛī 'ant', Sk. kīṭikā. Bloch mākaṛ.

मंजूस maṁjūsa "box- wooden" sub. obl. pl. 547; Sk. mañjuṣā, Pk. maṁjusā; MG. majus.

मंडक maṁḍaka "upper crust (which is thin) of a baked loaf" sub. m. dir. sg. 317. lw. Sk. maṇḍaka–, MG. mā̃ḍvo, mā̃ḍo; the former is derived from Pk. maṁḍo OG. maṁḍu– ext with –u, which is later analogically replaced by –o.

मंत्रींदु maṁtriṁdu "chief minister" sub. m. dir. sg. 545; Sk. mantrindra–, Pk. maṁtiṁdo; OG. has retained the –tr– group.

मांकडी māṁkaḍī "an iron piece (or sometimes wooden) fitted to the grindstone" sub. f. 20. Sk. lex. markaṭī. f. 'an iron monkey-shaped bolt'.

मांकुण māṁkuṇa "bed-bug" sub. 21. MG. mā̃kaṛ, mā̃kaṇ; Sk. lex. matkuṇaḥ, Pk. makkuṇa–, maṁkuṇa–. Turner makunu.

मांखण māṁkhaṇa "butter" sub. n. 495; also māṁkhaṇu. 316. Sk. mrakṣaṇam, Pk. makkhaṇa–. Bloch mākhaṇ; Turner makkhan.

मांडलां māṁḍalāṁ "circles" sub. dir. pl. n. 542. Sk. maṇḍalāni, Pk. maṁḍalāiṁ, OG. māṁḍalāṁ.

मूंग mūṁga "a particular kind of lentil" sub. dir. m. 288. Sk mudgaḥ Pk. mugga– s. v. mudga. Bloch mūg, Turner mun.

मूंठि mūṁṭhi "fist" sub. dir. sg. f. 309. MG. muṭh. muṭhi f. Sk. muṣṭiḥ– Pk. muṭṭhi–, Bloch muṭh. Turner muṭh.

*

य ya emphatic particle 113, 589. der. s. v. ī; cf. Sk. āpi, Pk. avi, vi, OG. ī.

यशोमती yaśomatī proper noun f. dir. sg. 108.

युगलियां yugaliyāṁ "pairs–refers to Jain mythology to a hoary past where pairs–brothers and sisters could marry" sub. pl. m. 36; lw. Sk. yugalin– OG. yugali + u.

युगंधर yugaṁdhara proper noun m. dir. sg. 515.

योगे yoge "by yoga" sub. inst. sg. m. 580. lw. Sk. yoga + OG inst. suffix.

*

रखे rakhe "lest" prohibitive particle (v. l. rākhe) 549; Sk. rākṣati, Pk. rakkhai.

रजु raju "dust" sub. dir. sg. 373. lw. Sk. rajaḥ.

रजतु rajatu "silver" sub. der. sg. 478. lw. Sk.

रतिमंजरी *ratimañjari* proper noun f. dir. sg. 425.

रत्नमंजरी *ratnamañjari* proper noun f. dir. sg. 488.

रत्नवती *ratnavati* proper noun f. dir. sg. 553.

रत्नरंग *ratnaranga* proper noun m. dir. sg. 451.

रलियायतु *raliyayatu* "pleased" adj. m. dir. sg. 557. Der. not known, cf. MG. raḷiyāt f. as a proper noun.

रसनिंद्रिउ *rasanindriu* "sense of taste, tongue" sub. dir. sg. 516; Sk. rasanendriya-, Pk. *rasaṇiṃdiya-, note the retention of -n- in OG., indicative of learned influence.

रहइं *rahaim* "for, to," post position 38, 85, 483, 516, v. l. raim 416. Der. uncertain; for various suggestions see Tessitori § 71, Dave pp. 59.

रहइ *rahai* "stays, remains" v. pres. 3rd sg. 94; rahaum 1st sg. 318, rahisii fut. 3rd sg. 536; rahisu 1st sg. 4[illegible], 474, raha imp. 2nd sg. 38; rahitau pres part m. dir. sg. 240, also rahitu 544, in both cases -i- cannot be explained; rahiu past part. m. dir. sg. 85, rahiyā pl. 109, rahiuṃ n. sg. 183, rahiyaṃ n. pl. 556, also rahiyām gen. obl. pl. 109, rati f. dir. sg. 474; rahivaum ger. 239, rahiyai pass. sg. 259; rahāvai caus. pres. 3rd sg. 477, 516; rahāvaum pres. 1st sg. 329, rahāvatā pres. part. obl. pl. 27[illegible], rahāviya past part. m. dir. pl. 529, rahāvī f. dir. sg. 575, rahāvī abs. 528, also rahāvī 481, rahāvā inf. 542, Sk. rahati Pk. rahai. Bloch rahṇẽ, Turner rahanu.

राइ *rāi* "night" sub. f. sg. 321, Sk. rātri Pk. ratti, rāī, rāi lw. fr. Pk.; note the exceptional loss of -tt- in MI. cf. MG. rāt f. v. s. v. rāti.

राइउ *rāiu* "belonging to night" adj. dir. sg. 321, Sk. rātri rātrika- Pk. rāia, s. v. rāt.

राउ *rāu* "king" sub. m. dir. sg. 73, also rāyu 5[illegible], rāya obl. sg. 527, rāi inst. sg. 142, 527, Sk. rājā, Pk. rāya, rāa, OG. ei ext. Bloch rāo, rāya, Turner rāu.

राख *rākha* "ashes" sub. f. 51[illegible], Sk. rakṣā f. "ashes used for preserving" Pk. rakkhā f., MG. rākh, Bloch rākh, Turner rākhyan.

राखिवउ *rākhivau* "to protect, preserve" ger. m. sg. 6[illegible], rākhiva obl. of inf. 441, 524, rākhivaim pass. pl. 449, Sk. rakṣati Pk. rakkhai. Bloch rākhṇẽ, Turner rākhnu.

[illegible] *[illegible]* "royal [illegible] royal seat" sub. m. dir. sg. [illegible], rājāsaṇa inst. sg. [illegible], lw. Sk. rājāsana-.

[illegible] *[illegible]* proper noun name of a town m. dir. sg. [illegible]

राजादेस *rājādesa* "royal command" sub. m. obl. sg. 446; lw. Sk. rājādeśa-.

राजि "on the throne, kingdom" sub. n. loc. sg. 108, 437, Sk. rājyo Pk. rajje OG. raji.

राणी *rāṇī* "queen" sub. f. dir. sg. 489; Sk. rājñī, Pk. raṇṇī, rāṇiā. Bloch rāṇī, Turner rāni.

राति *rāti* "night" sub. f. dir. sg. 326; also loc. sg. 142, 474. Sk. rátri, rātri, Pk. ratti, OG. rāti MG. rāt. Bloch rāt, Turner rāt.

राधा *rādhā* "cooked" past part. pl. 288; rādhī f. 311; MG. rādhvũ, Sk. rádhyati, caus. randhayati, raddhā; Pk. raddha, OG. ext., also s. v. rāṃdhaim. Bloch rā̃dhṇẽ, Turner rā̃dhnu.

राब *rāba* "porridge (sweetened)" sub. dir sg. f. 288, 311; Pk. (De.) rabbā; probably a lw. from Perso-arabic, cf. Ar. rubb; Turner rābari.

रामति *rāmati* "game, play" sub. f. dir. sg. 12. Sk. ramyati Pk. rammai, adj. ramma-, OG. rāma-ti, MG. ramat; initial short vowel due to analogy of Sk. ramate, MG. ramvũ, Turner ramāunu.

राष्ट्रवर्द्धन *rāṣṭravarddhana* proper noun m. dir. sg. 571.

रितु *ritu* "season" sub. dir. sg. 376, lw. Sk. ṛtu m.; MG. rutu f.

रिस *risa* "anger" sub. f. sg. 386, Sk. riṣyati, MG. ris. Bloch ris, Turner ris.

रलियायितु *raliyāyitu* "pleased" 510 (v. l. rahyāyitu); v. s. v. raliyāyitu.

रूसइं *rūsaim* "becomes angry", v. pres. 3rd sg. 470; rūthau past part. m. dir. sg. 511, 536, Sk. ruṣyati, ruṣṭa, Pk. rūsai, ruttha-, Bloch rusṇẽ.

रूडउ *rūḍau* "good, proper" adj. dir. sg. m. 131, rūḍaum n. sg. 517; rūḍī f. sg. 131, 571. Sk. rūpa- Pk. rūa-, ext. -ḍau.

रेलीयां *reliyāṃ* "poured" past part. n. pl. 91, relanaum 'act of pouring' sub. dir. sg. n. 217. der. not known, MG. reḍvũ 'to pour'.

रोयतउ *royatau* "weeping, lamenting" pres. part. dir. sg. m. 223; royati f. 583, Sk. roditi, Pk. roai. MG. rovũ, Turner runu.

रंजिउ *raṃjiu* "pleased" past part. m. dir. sg. 445, raṃjiyā pl. 456; raṃjavi caus. abs. [illegible], Sk. rañjita- Pk. raṃjia- ext. in OG.

रांकडा *rāṃkaḍā* "poor, unlucky, a term of reproach" sub. m. voc. sg. 322, Sk. raṅka-, Pk. raṃka-, ext. in OG.

रांढ *rāṃḍhā* "rope" sub. sg. 250, 443, MG. rā̃ḍhvũ 'a thick, coarse rope'; [illegible] rāṃḍhā ext. with -aṃ, can explain MG. form; der. not known.

रांधइं *rāṁdhaiṁ* "cook" v. pres. 3rd pl. 311; rāṁdhiyaiṁ pass. 3rd pl. 311; Sk. rādhyati. caus. randhayati; Pk. raṁdhai, v. s. v. rādhā, Bloch rāṁdhṇẽ, Turner rādhnu.

रूंधिउ *rūṁdhiu* "obstructed, prevented" past part. m. dir. sg. 446; rūṁdhī abs. 528; rūṁdhāviu caus. past. m. dir. sg. 554. Sk. rundhati, Pk. ruṁdhai, Bloch rudhṇẽ, rũdhṇẽ, Turner rūdhnu.

*

लखमण *lakhmaṇa* proper noun m. dir. sg. 469.

लखमीधर *lakhmīdhara* proper noun m. dir. sg. 553.

लखमीपुंज *lakhmīpuṁja* proper noun m. dir. sg. 461.

लगाडणि *lagāḍaṇi* "in the act of touching" sub. n. loc. sg. 164; dir. s.v. lāgai.

लगूंडु *lagūṁḍu* "a crooked piece of wood" sub. dir. sg. 239; lw. Pk. lagaṁḍa- der. not known

लगार *lagāra* "a little, slight" adv. 460, 468; usually followed by eka to indicate indefiniteness dir. uncertain; note MG alternating forms lagār-lagir. cf. OG. post pos. lagi; probably extension of lagg-; Turner lagāru

लगी *lagi* "on account of, as far as" post pos. 86, 450; Sk. lagyati 'is fixed to', Pk. laggai, Tessitori (72) suggests Ap. laggahiṁ as a probable source of this post position, also see s. v. lāgai, Bloch lāgī, Turner lāgnu.

लज्जालु *lajjālu* "modest" adj. dir. sg. m. 3. Sk. lajjālu- Pk. lajjāluo,

लट्टा *laṭṭā* "saffron, carthamus tinctorius, name of a plant" sub. f. sg. 311; Pk. laṭṭā; der. not known.

लपनसी *lapanasī* "a sweet preparation made of wheat and ghee" sub. f. 264. MG. lāpsī, this word is a sanskritisation of the current word "lāpsi", and the Sk. source; Sk. lapsikā f., Pk. lappasiyā; v. s. v. lāpasī.

लवणसमुद्र *lavaṇasamudra* name of an ocean (mythological). m. dir. sg. 530.

लहइ *lahai* "obtains, gets" v. pres. 3rd sg. 86; lahauṁ 1st sg. 528; lahisu fut. 1st sg. 260; lahisi 2nd sg. 521; lahī abs. 466, 558; lahiu past part. m. dir. sg. 470; ... lādhau past part. m. dir. sg. 426, also (v. l.) lādho 527; ladhā m. pl. 389; lādhauṁ n. sg. 74; lādhī f. sg. 365; lādhai loc. sg. 129, also lādho 438. Sk. labhate, labdha-, Pk. lahai, laddha-, Bloch lāhoẽ, lādhṇẽ, Turner lahanū.

लहुडउ *lahuḍau* "small" adj. dir. sg. m. 553; lahuḍā obl. sg. 578; lahuḍāṁ n. pl. 441; lahuḍi f. 338 (lahuḍi nīti, idiomatic 'urination'). Sk. laghú-, Pk. lahu- ext. in OG. -ḍau.

लाख *lākha* "one hundred thousand" sub. dir. 74; also lakhu 74; Sk. lakṣáḥ. Pk. lakkha-, Bloch lākh, Turner lākh

लाज *lāja* "shame, modesty" sub. dir. sg. f. 557. Sk. lajjā, Pk. lajjā, MG. lāj. Bloch lāj. Turner lāj.

लाजतउ *lājatau* "being ashamed, becoming bashful" pres. part. m. dir. sg. 557; lājī abs. 474. Sk lajjate, Pk lajjai

लागइ *lāgai* "sticks, attaches" but the participial form used as auxiliary means 'started'; v. pres. 3rd sg. 456, lagatā pres. part. m. obl. pl. 525, lāgato loc. 282, lāgau past part. m. dir. sg. 38, 74, lāga m. pl. 279; lāgāṁ m pl; lāgī f. sg 431, lagāḍaiṁ caus pres. 3rd pl. 154; lagāḍiyā past part pl. 22, lagāḍī abs. 341. Sk. lagyati, lagna-, Pk laggai, lagga-; Bloch lāgṇẽ, Turner lagnu

लाठी *lāṭhī* "a chocolate size sweet prepared out of sugar and sesamum, sometimes available in longer stick-bar-like sizes" sub. f. dir 314. MG revṛī, the text also glosses this word by revḍī, Sk *laṣṭi-m (Turner suggests contamination of yaṣṭih-m. with lakuṭaḥ) Pk. laṭṭhi f. 'stick' laṭṭhua (De) m 'an eatable'. Also cf MG. lāṭhī f 'stick'. Turner latho.

लापसी *lāpasī* "a sweet preparation made of wheat and ghee" sub. f. 315. Sk. lapsikā f, Pk. lappasiyā; MG. lāpsī.

लाभइं *lābhaiṁ* "obtain, achieve" v. pres. 3rd pl. 355, labhāḍaiṁ caus. pres. 3rd pl. 378. Sk. labhyate, labdha-, Pk. labbhai, laddha-; note that in MG., evolutes of active labhate (OG. lahai) and passive labhyate (OG. lābhai) do not survive, but the past participle ladh-(labdha-) is employed as an active base, lādhū 'I gain', and is further derived as a past participle lādh-y-ū n. 'found'. Bloch labhṇẽ, lāhṇẽ lādhṇẽ, Turner lahanū.

लिखिवउ *likhivau* "should write" ger. m. dir. sg. 259; likhiyā past part. pl. m 541; in the rest of the forms the base is passive: likhiyai pass. sg. 85, 425, 518, 590, likhiyaiṁ pl. 584; likhisii pass-fut. 3rd sg. 17, likhāviyaiṁ pass. of the causal base 3rd pl. 438. lw Sk. likhāti; Sk. likh + OG. verb inflection suffixes MG. lakhvū. Bloch lekh, lehṇẽ, lihiṇẽ, Turner lekhnu.

लियइ *liyai* "takes, accepts" v. pres. 3rd sg. 474; liyaiṁ 2nd sg. 466, liyaiṁ 3rd pl. 386; luṁ 1st sg. 433, 460, 465, 466, 516; lai imp. 2nd sg. 431, 465, 544, lesii fut. 3rd sg. 382; lesiiṁ fut. 3rd sg. 382; lesiiṁ fut. 3rd pl. 489; lesu fut. 1st sg. 223, 260, 577; lejiu precative 2nd pl.

वछणा *vacchaṇā* name of a river f. dir. sg. 574.

वछलु *vacchalu* "affectionate, kind" (second part of a compound mitravacchalu) m. dir. sg. 557. lw. Pk.

वडइ *vaḍai* "with" post. pos. indicating instrumentality. sg. 94. 507, 521; vaḍaim pl. 380. Ety. not known. MG. vaḍe.

वडउ *vaḍau* "elder, bigger" adj. m. dir. sg. 427. 447; vaḍai inst. sg. 461; vaḍā obl. sg. 578, vaḍī f. 300, 338 (idiomatic vaḍī mati 'act of defalcation'). Sk. Lex. vaḍrah 'big'. Pk. vaḍḍa–; MG. vaḍo; note the absence of compensatory lengthening in OG. and MG; perhaps an early lw. from Panjabi or Sindhi. Bloch vāḍ, Turner baṛo.

वणतउ *vaṇatau* "weaving" pres. part. dir. sg. m 213. Sk. vāyati, vāna 'the act of weaving'. Pa. viniti. probably changed to *vanati after Sk. ūti–, ūyate; Pk. viṇana–, vuṇaṇa–. MG vaṇvũ Bloch viṇṇẽ, Turner bunnu.

वणफल *vaṇaphala* "wild fruits" sub. dir. pl. n. 433. OG. vaṇa+ phala–, Sk. vanam, Pk. vaṇam OG vaṇa. Sk. phalam Pk. phalam OG. phala.

वणांतरि *vaṇāṃtari* "in the other forest" sub. loc. sg n. 557. Sk. vanāntare, Pk. vaṇāṃtare OG. vaṇaṃtari.

वधावइ *vadhāvai* "congratulates, welcomes" v. caus. pres. 3rd sg. 547. 502; vadhāviu past part. m. dir. sg. 73, 558. Sk. vardhāpayati Pk. vaddhāvei MG. vadhāvvũ. Panjabi, Lahanda and Sindhi cognates show absence of cerebralisation. Another evolute of the same in MG is vāḍhvũ 'to cut', and Panjabi, Sindhi also have vaḍḍhaṇa, vaḍhaṇu respectively. Bloch vāḍhṇẽ. vaḍhayā, Turner baṛnu, baṛai.

वधारियइं *vadhāriyaim* "are caused to increase" v caus. pass. 3rd pl. 185. Sk. vārdhate Pk. vaḍḍhai OG. vaddha– + causal āra–, cf. MG vadhārvũ, also similar forms sudhārvũ 'to cause to improve' suvārvũ 'to cause to sleep' etc. See Tessitori §. 141; also s. v. vadhāvai.

वर *vara* "good" adj. m. (first part of a compound varapurusu) 463; vari f. sg. 463. Sk. varam Pk. vara.

वरइ *varai* "chooses, marries" v. pres. 3rd sg. 471. Sk. varayati Pk. varai.

वरस *varasa* "years" sub. n. dir. pl. (v. l. varisa) 94, varasi loc. sg. 255, (v. l. varisi) 514; varase inst. pl. (v. l. varise) 113. Note the possible dialectal variation between varasa–and varisa–. Pk. varisa– (early loan fr. Sk. várṣa– to distinguish it from MIA evolute vassa– in the sense of 'rain' cf. Sindhi vasa f. 'rain', Sinhalese vas 'rain'.). Bloch varasṇẽ, Turner barsa, bāsi[3].

वरसइ *varasai* "rains" v. pres. 3rd sg. 483, varasaviu caus. past part. m. dir. sg. 561; varasāviyā pl. 517 Pk. varisai. (early lw. from Sk. várṣa–) see under varisa.

वरसालउ *varasālau* "monsoon" sub m. dir sg. 85. varasālai loc sg. 38, also varasāle loc. sg. 401; Pk. varisā + kala–, varisāla–, ext. in OG.; s. v varasa, MG. comāsũ 'monsoon' has replaced this word

वरु[1] *varu* "suitor, bridegroom" sub. m. dir. sg. 469. Sk. varáh Pk. vara– MG. var. Bloch var, Turner bar[2].

वरु[2] *varu* "boon, blessing" m dir. sg 470 Sk. várah Pk. vara– MG. var.

वरूइं *varūĩ* "in an undesirable way, ugly way" sub. sg 25 Probably connected with Sk. virūpa– v. s v. varūum.

वरूउं *varūum* "ugly, undesirable, hostile, not in proper form" adj. dir. sg n 384, also varūyaum 384, 629, also varuyaum 25, 389 Sk. virūpa–, Pk. viruva–, virua– ext in OG. Note the early loss of –i– in the open syllable. MG. varvũ adj.

वर्णवी *varṇavī* "having described" abs 987. varṇaviu past part. m. dir. sg. 519. lw. Sk. varṇayati, the causal base is taken as primitive and inflectional suffixes are attached to it.

वर्त्तइ *varttai* "stays, exists" v. pres. 3rd sg. 426; varttatā pres. part. m obl. sg 514. lw. Sk. varttate, varta–.

वर्त्तिए *varttie* "turned" past part. loc. sg. 38. lw. Sk. vartita–, vartite.

वलतउ *valatau* "turning back" pres. part. m. dir. sg. 110. valatā obl. 601; valiyai pass. sg. 451. Sk. valate. Pk. valai; MG. vaḷvũ 'to turn'.

वली *valī* "again" adv. 522, 549; again and again' vali valī 94. absolutive form of the OG. base val–; s. v. valatau.

वल्गुली *valgulī* "name of a disease?" valgulīrogu sub. m. dir. sg 432. lw. Sk valgulī, meaning is not clear.

वशइतउ *vaśaitau* "due to, as a result of" (also vasaitau, vasatau and vaśatau); 73, 94. OG. vaśa + itau; cf. Sk. vaśatah, vaśāt; Tessitori §. 72.2. suggests to connect Ap. hūmtau to OG. –tau, –thau ablative post-position of OWR. This –itau may be connected with MI –hiṃto, –hoṃto which are ablative suffixes der. uncertain s. v. itau.

435; liyata pres. part. (unenlarged) 452; liyatau pres. part m dir. sg 386,... lidhau past part m dir. sg. 416, 559, lidhaum n sg. 431, 446, 480, 481; lidhā m. pl. 386; lidhi f sg. 74, 539;. . lijaim pass. 3rd pl. 569; lijatau pass. pres. part 431. levaum ger. n. sg 223, levī f. 401; levā obl. (inf) 101, 147. 151, 463, 483, 558; lī abs 142, 528 also le 430, 466, 488, 536. Sk. lāti replaced by lei (probably under the influence of dei, (Sk dadāti), nei (nayati) in MI. OG li–. The past participle lita– is similarly replaced by laddha– on the analogy of labdha–: laddha–, and ext in OG. For the possible analogical influence of these forms see Tedesco JAOS 43; Turner also suggests Sk. labhate: Bloch lenẽ, Turner linu.

लिहीती *lihītī* "being wiped. licked" pass pres. part. f. 402, Sk. lihati, Pk lihai.

लीलावती *līlāvatī* proper noun f dir. sg. 473.

लूगडा *lūgaḍā* "cloth garment" sub. obl. sg n 321 Turner connects Sk. rugṇáh, Pk. lugga– 'worn out' with this word for garment. Turner lugā.

लूसिउ *lūsiu* "wiped out" past part, m. dir. sg. 74, 555 Pk. lumchai 'wipes, removes,' cleans (by wiping). MG. luchvũ 'to wipe'.

लूहणउ *luhanu* "(act of) wiping" sub. n. sg 12. Pk. lūhai 'to wipe'. cf. OG. lusa– to wipe, s v. lūsiu.

लेसाल *lesāla* "grammar school" sub. f. loc. sg. 432 Sk lekha-śālā, Pk. leha sālā, replaced in MG by nisāl.

लोयचउं *locaum* "I remonstrate" v pres. 1st. sg. 167. Used mainly by Jains, referring to notion of 'thinking'. lw. Sk. locate, Sk. loca+OG. verbal inflection.

लोटु *loṭu* "flour" sub. dir sg. m 311 der not known; probably connected with *loṭyate, cf. Sk. Dhātup. loṭati; Pk. loṭṭai rolls. tumble down, cf MG āloṭvũ 'to roll (on ground)'.

लोढतउ *loḍhatau* "combing. refers to the action of preparing cotton for making slivers" pres. part. dir. sg. m. 213. Sk. loṣṭate 'to gather into a heap or a lump'; Pk. loḍhai 'processing cotton as it comes off the plant. ginning'. MG. loḍhvũ is used in this sense.

लोपिवउं *lopivaum* "to abolish, to transgress" ger. n. sg 361; Sk. lupyāte, Pk. luppai.

लोयणंदु *lohanamda* proper noun m. dir. sg. 386.

लोही *lohī* "blood" sub. n. 25. Sk. lōhita– n. 'blood', Pk. lohia– n. Turner lohu[2].

लंखणु *lamkhanu* "act of throwing" sub. n. dir. sg. (second member of a compound kesalamkhanu, nakhalamkhanu, rulhira lamkhanu) 12. der. v. s. v. lāmkhai.

लंतक *lamtaka* "name of a heaven, acc. to Jains" proper noun m. sg. 26.

लंपटपणउं *lampaṭapanaum* "debauchery" sub. dir. sg. n 475 lw Sk. lampata + OG. suffix paṇaum.

लांखइ *lāmkhai* "throws" v. pres. 3rd sg. 529; lāmkhiu past part. m. dir. sg. 577; lāmkhiyā m. pl. 21; lāmkhatau pres. part. m. dir. sg. 213; lāmkhiyai pass. sg. 577; lāmkhī abs. 386, 434. In MG. the root lāmkh-survive dialectally (in the southern dialects). whil the standard form is nākh. Sk namkṣati Turner BSOS iv, pp. 533.

लांघिउ *lāmghiu* "crossed, passed" past part. m dir. sg. 85; lāmghī abs. 108; Sk. laṅghayati Pk lamghei. Turner nāghnu.

लांबपणि *lāmbapani* "by length" sub. inst. sg. 614. OG. lāmba + paṇi; dir. s. v. lāmbā.

लांबा *lāmbā* "tall, distant" adj. m. pl. 616. lambah Pk. lamba–, Bloch lāb. Turner lāmu

लिंबगडउं *limbagaḍaum* "a type of sweet prep tion" sub. dir. sg. n. 315, der. not kno –ḍa–um, apparently, are suffixes.

लींपी *limpi* "having besmeared, plastered" 185. Sk. limpáti, Pk. limpai. Bloch l Turner lipnu.

लूंटइ *lūmṭai* "robs" v. pres. 3rd sg. 520; lūm pass. 3rd sg. 518, Sk. luṇṭati, Pk. lumṭai. luṭṇũ, Turner luṭnu.

*

वइरि *vairi* "enemy" sub. m. dir. sg. 538, a 437. Sk. vairī, Pk. vairi–. MG. vEri, result of OG. ext. or later suffixation of vEr (Sk. vairam).

वइंगण *vaimgaṇa* "brinjals" (vaimgaṇa pra sub. pl. 501, Pa. vātimgana Pk. vai vaimgaṇa–, MG. vẼgaṇ. Bloch vãgi, baigun bhira.

वखाणइ *vakhāṇai* "expounds, explains, co v. pres. 3rd sg. 438; vakhāṇium past p sg. n. 111; vakhāṇāvī abs. of th base 601. Sk. vyākhyānam Pk. vakkhā rived also as a verb vakkhāṇai, OG. v Note the change in meaning in MG 'praise', vakhāṇvũ 'to praise, to ap Bloch vākhāṇ, Turner bakhānnu, bak

वखाणु *vakhāṇu* "commentary, explanat n. dir. sg. 318, Sk. vyākhyānam, P ṇam, MG. vakhāṇ 'praise'. v. s. v. Bloch vākhāṇ, Turner bakhān.

वच्छ *vaccha* "boy, child" term of e sub. m. voc. sg 38; vacchau voc. Pk. vaccha–.

[illegible] [illegible] name of a tree [illegible] f. [illegible] sg. [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] part [illegible] [illegible] [illegible] sg. [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible] past part [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] sg. [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible] adj. m. dir. sg. [illegible] [illegible] [illegible] sg. [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] Note the [illegible] [illegible] [illegible] perhaps [illegible] [illegible]. Bloch [illegible], Turner [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible] pres. part. [illegible] sg. [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] after Sk. [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] Bloch [illegible], Turner [illegible],

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible].

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] sg. [illegible] Sk. [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible] "to congratulate, welcome" v. caus. pres. 3rd sg. [illegible] [illegible] past part. m. dir. sg. [illegible] Sk. [illegible] [illegible] [illegible] MG [illegible] Panjabi [illegible] and Sindhi [illegible] show absence of [illegible] [illegible]. Another [illegible] of the verb in MG is [illegible] "to [illegible]", and Panjabi, Sindhi also have [illegible], [illegible] respectively. Bloch [illegible], [illegible]. Turner [illegible], [illegible].

[illegible] [illegible] "was caused to increase" v. caus. pass. 3rd sg. [illegible] Sk. [illegible] Pk. [illegible] [illegible] + causal [illegible], cf. MG. [illegible], also similar forms [illegible] "to cause to improve" [illegible] "to cause to sleep" etc. See Tessitori § 141, also s. v. vadhāvai.

[illegible] vara "good" adj. m. (first part of a compound varapramāṇa) 463; vari f. sg. 463. Pk. varam Pk. vara.

[illegible] varai "chooses, marries" v. pres. 3rd sg. 471. Sk. varayati Pk. varai.

[illegible] varasa "years" sub. n. dir. pl. (v. l. varisa) [illegible]94; varasi loc. sg. 255, (v. l. varisi) 514; varasa [illegible] obl. pl. (v. l. varisa) 115. Note the possible [illegible]al variation between varasa– and varisa–. [illegible] varisa– (early loan fr. Pk. varsa– to [illegible] it from MIA evolute vassa– in the sense of "rain" of Sindhi [illegible] f. "rain", [illegible] [illegible] [illegible] Bloch [illegible]. Turner [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible] v. pres. 3rd sg. 495, [illegible] [illegible] past part. m. dir. sg. [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] from Sk. [illegible] see [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] m. dir. sg. 85 [illegible] sg. [illegible], also [illegible] loc. sg. 401, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] has replaced this word

[illegible] [illegible] "[illegible]" sub. m. dir. sg. [illegible] Sk. [illegible] [illegible] MG. [illegible] Bloch [illegible], Turner [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible] m. dir. sg. 470 Sk. [illegible] [illegible] [illegible] MG [illegible]

[illegible] [illegible] "in an undesirable way, ugly way" [illegible] sg. [illegible] Probably connected with Sk. [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible] "ugly, undesirable, loathsome, not in proper form" adj. dir. sg. n. 341, also [illegible] 344, [illegible], also [illegible] [illegible] Sk. [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] ext. in OG. Note the early [illegible] [illegible] in the open syllable. MG [illegible] adj.

[illegible] [illegible] "having described" also 697, [illegible] past part. m. dir. sg. 310 [illegible] Sk. [illegible], the causal base is taken as primitive and inflectional suffixes are attached to it.

[illegible] [illegible] "stays, exists" v. pres. 3rd sg. 426, [illegible] pres. part. m. [illegible] sg. 514 [illegible] Sk. [illegible], [illegible].

[illegible] [illegible] "turned" past part. loc. sg. [illegible] [illegible] Sk. [illegible], [illegible]

[illegible] [illegible] "turning back" pres. part. m. dir. sg. 110, valata [illegible] 101, valiyal pass. sg. 451 Sk. valate Pk. valai; MG valvũ "to turn".

[illegible] vali "again" adv. 322, 519, again and again' vali vali 91. absolutive form of the OG. base vala–; s. v. valatau.

[illegible] valgula "name of a disease?" valgulīroga sub. m. dir. sg. 432. [illegible] Sk. valguli, meaning is not clear.

[illegible] valatau "due to, as a result of" (also vasaltau, vasatau and valatau); 75, 91. OG. vala + ītau; cf. Sk. valatah, valat; Tessitori § 72.2. suggests to connect Ap. hãntau to OG. –tau, –thau ablative post-position of OWR. This –ītau may be con[illegible] [illegible] MI –hinto, –honto, which are [illegible] [illegible] [illegible], der. [illegible] [illegible] [illegible] s. v. ītau.

435; liyata pres. part. (unenlarged) 452; liyatau pres. part. m dir. sg 386;... lidhau past part m. dir. sg. 416, 559; lidhaum n. sg. 431, 446, 480, 481; lidhā m. pl. 386; lidhī f. sg. 74, 539,.. .lijaim pass. 3rd pl. 569; lijatau pass pres. part 431, levaum ger. n. sg. 223; levī f. 401; levā obl. (inf.) 401, 417, 451, 463, 483, 558; leī abs 142, 528 also le 430, 466, 488, 536 Sk. lāti replaced by lei (probably under the influence of dei, (Sk dadāti). nei (nayati) in MI; OG. li–. The past participle lita– is similarly replaced by liddha– on the analogy of labdha– laddha–, and ext. in OG. For the possible analogical influence of these forms see Tedesco JAOS 43; Turner also suggests Sk. lábhate; Bloch lonẽ; Turner linu.

लिहीती *lihīti* "being wiped, licked" pass pres. part. f 402; Sk lihati, Pk. lihai.

लीलावती *līlāvatī* proper noun f. dir. sg. 473.

लूगडा *lūgaḍā* "cloth garment" sub. obl. sg. n 321. Turner connects Sk. rugṇáh, Pk. lugga– 'worn out' with this word for garment Turner lugā.

लूसिउ *lūsiu* "wiped out" past part, m. dir. sg. 74, 555. Pk. lumchai 'wipes, removes,' cleans (by wiping) MG. luchvũ 'to wipe'.

लूहणु *luhanu* "(act of) wiping" sub. n. sg. 12. Pk. lūhai 'to wipe'. cf. OG lūsa– to wipe, s. v. lūsiu.

लेसाल *lesāla* "grammar school" sub. f. loc. sg. 432 Sk. lekha-śālā, Pk. leha-sālā; replaced in MG by nisāḷ.

लोचउं *locaum* "I remonstrate" v. pres. 1st. sg. 167. Used mainly by Jains, referring to notion of 'thinking'. lw. Sk. locate, Sk. loca–+ OG. verbal inflection

लोटु *loṭu* "flour" sub. dir. sg. m. 311. der. not known; probably connected with *loṭyate, cf. Sk. Dhātup. loṭati; Pk. loṭṭai rolls, tumble down; cf. MG āḷoṭvũ 'to roll (on ground)'.

लोढतउ *loḍhatau* "combing, refers to the action of preparing cotton for making slivers" pres. part. dir. sg. m. 213. Sk. loṣṭate 'to gather into a heap or a lump'; Pk. loḍhai 'processing cotton as it comes off the plant, ginning'. MG. loḍhvu is used in this sense.

लोपिवउं *lopivaum* "to abolish, to transgress" ger. n. sg 361; Sk. lupyáte, Pk. luppai.

लोमवेदु *lomavedu* proper noun m. dir. sg. 386.

लोही *lohī* "blood" sub. n. 25. Sk. lóhita– n. 'blood', Pk. lohia– n. Turner lohu?

लंखणु *lamkhaṇu* "act of throwing" sub. n. dir. sg. (second member of a compound kesalamkhanu, nakhalamkhanu, rudhira lamkhanu) 12. der. v. s. v. lāmkhai.

लंतक *lamtaka* "name of a heaven, acc. to Jains" proper noun m. sg. 26.

लंपटपणउं *lampaṭapaṇaum* "debauchery" sub. dir. sg. n 475 lw. Sk. lampata + OG suffix paṇaum.

लांखइ *lāmkhai* "throws" v. pres. 3rd sg. 529; lāmkhiu past part. m. dir. sg. 577; lāmkhiyā m. pl. 21; lāmkhatau pres part. m. dir. sg. 213; lāmkhiyai pass. sg. 577; lāmkhī abs. 386, 431. In MG. the root lāmkh-survives dialectally (in the southern dialects), while the standard form is nākh. Sk. namkṣati. Turner BSOS iv, pp. 533.

लांघिउ *lāmghiu* "crossed, passed" past part. m. dir. sg. 85; lāmghī abs. 168; Sk. langhayati, Pk. lamghei. Turner nāghnu.

लांबपणि *lāmbapaṇi* "by length" sub. inst. sg. n. 614. OG. lāmba + paṇi; dir. s. v. lambā.

लांबा *lāmbā* "tall, distant" adj. m. pl. 616. Sk. lambah Pk. lamba–, Bloch lāb, Turner lāmo.

लिंहगटउं *limhagaṭaum* "a type of sweet preparation" sub. dir. sg. n. 315, der. not known. –ṭa–um, apparently, are suffixes.

लींपी *līmpī* "having besmeared, plastered" abs. 185. Sk. limpáti, Pk. limpai. Bloch lĩpnẽ, Turner lipnu.

लुंटइ *lūmṭai* "robs" v. pres. 3rd sg. 526; lūmṭiyai pass. 3rd sg. 518, Sk. luntati, Pk. lumṭai. Bloch luṭṇẽ, Turner luṭnu.

*

वइरि *vairi* "enemy" sub. m. dir. sg. 538, also pl. 457. Sk. vairī, Pk. vairi–. MG. vEri, is the result of OG. ext. or later suffixation of –i to vEr (Sk. vairam).

वइंगण *vaimgaṇa* "brinjals" (vaimgaṇa pramukha) sub. pl. 501. Pa. vātimgana Pk. vaimgaṇa–, vaimgaṇa–, MG. vẼgaṇ. Bloch vãgi, Turner baigun bhirā.

वखाणइ *vakhāṇai* "expounds, explains, comments" v. pres. 3rd sg. 438; vakhāṇium past part. dir. sg. n. 111; vakhāṇāvī abs. of the causal base 601. Sk. vyākhyánam Pk. vakkhāṇaṁ, derived also as a verb vakkhāṇai, OG. vakhāṇa–. Note the change in meaning in MG. vakhāṇ 'praise', vakhāṇvũ 'to praise, to appreciate'. Bloch vākhāṇ, Turner bakhānnu, bakhān.

वखाणु *vakhāṇu* "commentary, explanation" sub. n. dir. sg. 318, Sk, vyākhyānam, Pk. vakkhāṇam, MG. vakhāṇ 'praise'. v. s. v. vakhāṇ. Bloch vākhāṇ, Turner bakhān.

वच्छ *vaccha* "boy, child" term of endearment sub. m. voc. sg 38; vacchau voc. Pk. vaccha–.

वच्छगा *vacchagā* name of a river f. dir. sg. 574.

वच्छलु *vacchalu* "affectionate, kind" (second part of a compound mitravacchalu) m. dir. sg. 557. lw. Pk.

वडइ *vaḍai* "with" post. pas. indicating instrumentality. sg. 94, 307, 521; valaim pl. 386. Ety. not known. MG. vaṛe.

वडउ *vaḍau* "elder, bigger" adj. m. dir. sg. 427, 447; vaḍai inst. sg. 461; vaḍā obl. sg. 578, vaḍī f. 300, 338 (idiomatic vaḍī nīti 'act of defalcation'). Sk. lex. vadraḥ 'big'. Pk. vaḍḍa-; MG. vaṛo; note the absence of compensatory lengthening in OG and MG; perhaps an early lw. from Panjabi or Sindhi. Bloch vāṛ, Turner baṛo.

वणतउ *vaṇatau* "weaving" pres. part. dir. sg. m. 213. Sk. vāyati, vāna 'the act of weaving'. Pa. vināti, probably changed to *vunāti after Sk. ūtā-, ūyáte; Pk. viṇaṇa-, vuṇaṇa-. MG. vaṇvũ. Bloch viṇṇẽ, Turner bunnu.

वणफल *vaṇaphala* "wild fruits" sub. dir. pl. n. 433. OG. vaṇa+ phala-. Sk. vanam, Pk. vaṇam OG. vaṇa. Sk. phalam Pk. phalam OG. phala.

वणांतरि *vaṇāṃtari* "in the other forest" sub loc. sg. n. 557. Sk. vanāntare. Pk. vaṇāṃtare OG. vaṇāṃtari.

वधावइ *vadhāvai* "congratulates, welcomes" v caus. pres. 3rd sg. 547. 562; vadhāviu past part. m. dir. sg. 73,558. Sk. vardhāpayati Pk. vaddhāvei MG. vadhāvvũ. Panjabi, Lahanda and Sindhi cognates show absence of cerebralisation. Another evolute of the same in MG. is vādhvũ 'to cut', and Panjabi, Sindhi also have vaddhaṇā, vadhaṇu respectively. Bloch vāḍhṇẽ, vaḍhāyã, Turner barnu, baṛai.

वधारियइं *vadhāriyaiṃ* "are caused to increase" v caus. pass. 3rd pl. 485. Sk. vardhate Pk. vaddhei OG. vaddha-+ causal āra-. cf. MG. vadhārvũ, also similar forms sudhārvũ 'to cause to improve' suvārvũ 'to cause to sleep' etc. See Tessitori § 141; also s. v. vadhāvai.

वर *vara* "good" adj. m. (first part of a compound varapuruṣu) 463; vari f. sg. 463. Sk. varam Pk. vara.

वरइ *varai* "chooses, marries" v. pres. 3rd sg. 471. Sk. varayati Pk. varai.

वरस *varasa* "years" sub. n. dir. pl. (v. l. varisa) 94; varasi loc. sg. 255, (v. l. varisi) 514; varase inst. pl. (v. l. varise) 113. Note the possible dialectal variation between varasa-and varisa-. Pk. varisa- (early loan fr. Sk. várṣa- to [illegible] evolute vassa- in the sense of 'rain' cf. Sindhi vasa f. 'rain', Sinhalese vas 'rain'.). Bloch varasnẽ, Turner barsa, bāsi[3].

वरसइ *varasai* "rains" v. pres 3rd sg. 483, varasaviu caus. past part m. dir. sg 561; varasāviyā pl. 517. Pk. varisai, (early lw from Sk. várṣa-) see under varisa.

वरसालउ *varasālau* "monsoon" sub m dir sg 85. varasālai loc. sg. 38, also varasāle loc. sg 401, Pk. varisā + kala-, varisāla-, ext. in OG.; s. v varasa. MG comāsũ 'monsoon' has replaced this word

वरु[1] *varu* "suitor, bridegroom" sub. m. dir sg. 469. Sk. varáḥ Pk. vara- MG. var Bloch var, Turner bar[2].

वरु[2] *varu* "boon, blessing" m dir sg 470 Sk. váraḥ Pk vara- MG. var.

वरूइं *varūiṃ* "in an undesirable way, ugly way" sub sg 25 Probably connected with Sk. virūpa- v. s. v. varūum

वरूउं *varūuṃ* "ugly, undesirable, hostile, not in proper form" adj. dir. sg. n. 384, also varūyaum 384, 629, also varuyaum 25, 389. Sk virūpa-, Pk virūa-, virua-. ext. in OG. Note the early loss of -i- in the open syllable MG. varvũ adj.

वर्णवी *varṇavī* "having described" abs 987, varṇaviu past part. m dir. sg. 519 lw. Sk. varṇayati, the causal base is taken as primitive and inflectional suffixes are attached to it.

वर्तइ *varttai* "stays, exists" v. pres. 3rd sg. 426; varttatā pres. part m. obl. sg. 514. lw. Sk. varttate, varta-.

वर्तिए *varttie* "turned" past part. loc. sg. 38. lw. Sk. vartita-, vartite.

वलतउ *valatau* "turning back" pres. part m. dir. sg. 110; valatā obl. 601; valiyai pass. sg. 451. Sk. valate, Pk. valaï; MG. vaḷvũ 'to turn'.

वली *valī* "again" adv. 522, 549; again and again' vali vali 94. absolutive form of the OG. base val-; s. v. valatau.

वल्गुली *valguli* "name of a disease?" valgulirogu sub. m. dir. sg. 432. lw. Sk. valgulī, meaning is not clear.

वसइतउ *vasaitau* "due to, as a result of" (also vasaitau, vasatau and vaïtau); 7[illegible] vasa + itau; cf. Sk. va[illegible] § 72.2. suggests to [illegible] -tau, -thau al[illegible] This -itau may [illegible] hiṃto, -hoṃto [illegible] der.

वसु *vasu* proper noun m dir sg 551

वसा *vasā* "grease, fat, lard" sub f (in the compound vasādi) 459 Sk vasa. Pk vasā.

वसियां *vasiyāṁ* "settled, stayed" past part. n dir. pl. 579; vasi f dir sg 553 Sk vāsati, Pk. vasai. Turner basnu.

वहतउ *vahatau* "carrying" pres part m dir. sg. 386, vahata obl pl 91, vahata caus. pres. part obl. sg 463. Sk. vāhati Pk vahai Bloch vāhṇẽ, Turner bahanu.

वहिलउं *vahilaum* "early" adj adv dir sg. n. 571. 587; Pk. valulla- ext. in OG, Also noted as vihalau m, dir sg 490, also vahilau (v. l. vihalau) 545; may be connected with the root vah- 'to flow'. Bloch vahila.

वहू *vahū* "wife" sub f. dir. sg 560 Sk. vadhū́h. Pkt vahū Bloch vahū, Turner vahu

वाइउ *vāiu* "blowed (wind)" past part m dir sg 514. Sk vati Pk. vai

वाइणि *vāini* "reading" sub n loc. sg. 117. Sk. vācane Pk vāyane OG. vaim.

वाच्इं *vācaim* "reads" v. pres 3rd pl 614; vācijiu prec. 3rd sg 353. Iw. Sk. vācayati.

वाछरू *vācharū* "calves" sub. dir. pl. 589. Sk. vatsa-rūpa, Pk vaccha-rūva, Pk. vaccha. Bloch vāsrū, Turner bacheṛo.

वाच्छल्यु *vācchalyu* "donation, gift" sub. dir. sg. n. 381; Sk. vātsalyam Pk. vacchalla- 'affection, love' Note the change in meaning, and sanskritisation of the OG. word.

वाडइ *vāḍai* "in the yard, enclosure" sub. m. loc. sg. 25. Sk. vatah. Pk. vaḍa- ext. in OG, vāḍau, MG. vāṛo. Bloch vāḷā, Turner bār¹.

वाडि *vāḍi* "fence" sub. f. dir. sg. 481. Sk. vāṭī f. (cf. Sk. vāṭah m.; v. s. v. vāḍai), Pk. vāḍi. vāḍī. MG. vāṛ f. Bloch vāḷā, Turner bār¹.

वाणउत्रु *vāṇautru* "assistant in a bania's firm, usually the accountant)" sub. m. dir sg. 546; vāṇautrī inst. sg. 548. Sk. vāṇija-putrah, Pk. vaṇiutta-, note the retention of -tr- in OG.; MG. vāṇotar.

वाणवइ *vāṇavai* "describes" v. pres. 3rd sg. 173. cf. Sk. varṇayati, Pk. vaṇṇei; vaṇṇavei; the causal base is used as primitive in OG; note the OG. -ṇ- which cannot be explained, and the validity of this etymology becomes questionable. cf. however Marathi vāṇ, vān 'colour', Guj. vān 'colour'. Marathi vāṇaṇẽ, vāniṇẽ 'to praise'; Bloch has tried to connect the two verbs M. vāṇaṇẽ 'to describe' and H. (G.) 'to be ready', but ...

cannot be explained. T... verb vanāti 'likes,' and ... some other roots also m... vāṇ, vāṇaṇẽ, vāṇiṇẽ, Tur...

वाणारसी *vāṇārasī* name of a ...

वाणियउ *vāṇiyau* "bania, shop... sg. 550, vāṇiyā obl. sg. 12... Pk. vaṇia- ext. in OG vāṇ... vaṇiyau. Bloch vāṇi, Turner...

वात *vāta* "talk, news" sub. f. ... obl. sg. 548. Sk. vārtta, Pk. ...

वाधउं *vādhauṁ* "increased" pas... 91 Sk. vṛddhā- Pk. vaḍḍha- ... vadhvũ (archaic). Bloch vāḍhṇ...

वापरइ *vāparai* "uses, employs" ... 211. Iw. Sk. vyāpāra- + OG. ve...

वायइं *vāyaim* "strikes (the bell), ... 3rd pl. 376; the causal is used ... base. Sk. vādayati, Pk. vāyai.

वार *vāra* "turn, occasion" sub. f. dir... vārah m., Pk. vāra- m. Note that ... other IA languages vāra is f.; Pk. ... Sk. vela f. Pk. velā f. MG. vel f. als... tical meaning and usage). Bloch v... bār³.

वारउं *vāraum* "prevent, forbid" v. pres... 378. vārī abs. 320. Sk. vārayati, P... Turner bārnu.

वारवार *vāravāra* "again and again" adv. 33... vara reduplicated; for der. s. v. vāra.

वालउ *vālau* "name of a wire-like worm" su... sg. m. 21. Sk. lex. vālakah m. 'bracelet' ... connected with vāla- 'hair', made of h... hair. MG. vāḷo 'wire', vāḷi f. 'nose-ring'— ... cf. Sk. vālayati 'turns round', MG. vāḷvũ ... sweep, to turn round'. Bloch vāḷā, Turner bā...

वावइ *vāvai* "plants, sows" v. pres. 3rd sg. 48... vāvau imp. 3rd sg. 481; vāvivaum ger. dir. s... n. 280; vāvatā pres. part. m. dir. pl. 480; vāv... past part. f. dir. sg. 466. Sk. [illegible]payati, Pk. ... vāvei. Turner ubāunu.

वावि *vāvi* "in the well" sub. f. loc. sg. 74 Sk. vāpī f. Pk. vāvī f. MG. vāv.

वासइ *vāsai* "by residence" sub. m. inst. (loc.?) sg. 455. Sk. vāsa- Pk. vāsa-, OG. ext. vāsau. MG. vāso. Bloch vās.

वासंती *vāsaṁtī* proper noun f. dir. sg. 487

वासउत्र *vāsautra* ...

वार *vāra* "aid, army" sub. f. dir. sg. 431. cf. MG. (dialectal) vār f. 'army', also vhāre dhāvū 'to run to help', cf. vyāharati. Pk participial form vāharia- 'called out, challenged', cf. Sindhi vāhara 'guard' Panjabi vāhara 'protection', Bloch vārapē

वाहलइ *vāhalai* "in the rivulet, stream" sub. m loc. sg. 38. Ety. not clear; Det. gives three words for rivulets: vāhalo, vāhali and virao. cf MG. vāhEo OG. vāhalau is probably connected with Sk. vah- 'to flow'. Bloch vāhaḷ

वाहरइ *vāharai* "shouts, calls out" v. pres. 3rd sg. 474. Ety. not clear; (prob. the text may be corrupt and correct reading may be vāharai 'shouts, announces').

वाहिनि *vāhini* "in the conveyance i. e. cart" sub. n. loc. sg. 520. Sk. vāhane. Pk. vāhane OG vāhini.

विकुर्वी *vikurvī* "having changed, assuming different forms" abs. 474. Sk. vikurvana- 'ability to assume different forms'; lw. Sk.

विघटिउं *vighaṭium* "wiped off, removed, falsified" past part. n. dir. sg. 515. lw. Sk. vighaṭate. vighaṭ- + OG. verbal suffixes.

विगतभया *vigatabhayā* proper noun f. dir. sg. 573.

विचरइ *vicarai* "moves" pres. 3rd sg. 526. lw. Sk vicarati.

विचि *vici* "between, in the middle, amidst" adv. 223. Pk. vicca- n. middle. Turner suggests Sk. vyicah, uru-vyañc- 'wide space'; perhaps *dvi-tya-may explain Pk. vicca. Short -i- in the inital syllable may be due to its usage as a postposition; MG. has vac- (in formations like vaclũ, vacaḷ, vacet); vacce has duplication -cc- for emphasis). Turner bic.

विजउ *vijau* proper noun m. dir. sg. 525.

विजय *vijaya* proper noun m. dir. sg. 426.

विजयवती *vijayavatī* name of a town f. dir. sg. 425.

विढइ *viḍhai* "rebukes" v. pres. 3rd sg. (v. l. vaḍhai) 38; viḍhaim (v. l. vaḍhaim) pl. 578. MG. vaḍhvũ 'to rebuke'. Der. not known.

विणठउ *viṇaṭhau* "destroyed, fled" past part. m. dir. sg. 483. Sk. vinaṣṭa- Pk. viṇaṭṭha-, note the absence of compensatory lengthening.

विणासिवा *viṇāsivā* "to destroy" caus. inf. of purpose 441. Sk. vināśayati, Pk. viṇāsei.

विद्यापति *vidyāpati* proper noun, m. dir. sg. 480.

विद्वेषियां *vidveṣiyām* "rivals, haters" sub. obl. pl. m. 483. lw. Sk. vidveṣin, vidveṣi + OG. gender suffix-u, or -uṁ.

विधिसउं *vidhisaum* "according to the custom" adv. 325. note usage of saum; OG. vidhi + saum. vidhi-lw. Sk.; saum is derived from Sk. sahitam, see under saum.

विनइ *vinai* "in modesty" sub. m. loc. sg. 369. lw. Sk. vinaya-.

विनडिया *vinaḍiyā* "troubled" past part. m. dir. pl. 430. Sk naṭati, *vinaṭayati, Pk. viṇaḍei; Note that -n- when followed by a flapped sound in the second syllable (in this case, [ṛ]). is retained. cf. MG. kanarvũ to give trouble, harass Sk. ka-naṭ-).

विनाणि *vināṇi* "having checked, known" abs. 55. Sk. vijñāna- Pk. vinnāṇa-; OG. vināṇa- + verbal inflection, the -i- in the initial syllable may be the influence of Sk. spelling on the scribe.

विनासु *vināsu* "destruction" sub. m. dir. sg. lw. Sk. vināśa-.

विनेउ *vineu* "modest, instructed" adj. dir. sg. m. 163; lw. Sk. vineyah.

विपुला *vipulā* name of a town dir. sg. f. 464.

विप्रतारिवउ *vipratārivau* "should be cheated" ger. dir. sg. m. 153. lw. Sk. vipratārayati; vipratār- + OG. verbal inflection.

विमरसइ *vimarasai* "thinks" v. pres. 3rd sg. 590. Sk. vimṛśati, an early lw. in Pk. vimarisai; v. s. v. vimāsai.

विमल *vimala* proper noun m. dir. sg. 110.

विमला *vimalā* proper noun f. dir. sg. 516.

विमासइ *vimāsai* "thinks" v. pres. 3rd sg. 590; Sk. vimṛśati Pk. *vimassai, MG. vimasaṇ f. 'problem' (Sk. vimarśanā- Pk. *vimassaṇā f.). v. s. v. vimarasai.

विराधिया *virādhiā* "hurt, violated" past part. pl. 338; lw. Sk. vi-rādh- + OG. verbal inflection, past part. virādhia.

विलइ *vilai* "in oblivion, disappearance" sub. loc. sg. 471. lw. Sk. vilaya-.

विलपतउ *vilapatau* "lamenting, bemoaning" pres. part. m. dir. sg. 491. lw. Sk. vilapate, vilap + OG. inflectional suffixes.

विलिसियां *vilisiyām* "enjoy" v. fut. 1st pl. 455. lw. Sk. vilasati; Sk. vilas- + fut. 1st pers. pl. suffixes siyām (< Sk.-syāmah, this is a dialectal form in OG., probably Marwari, also notice the -i- in vilas- > vilis- which indicates Marwari influence); the loss of -s of the stem is due to the inflection suffix beginning with s-.

विलोकीतउ *vilokītau* "being observed" pass. pres. part. m. dir. sg. 516; lw. Sk. vilokayati, viloka

[illegible] 485; [illegible] should be [illegible] Sk. [illegible]

[illegible] [illegible]

[illegible] "[illegible]" past part. m. dir. sg. [illegible]

[illegible]

[illegible] [illegible] Turner suggests connection with Sk. [illegible], it is possible that [illegible] Turner [illegible].

वेचइ vecai "sells" v. pres. 3rd sg. 451, 457, 461 vecaüṃ 1st sg. 463, vecīm 1st pl. 466, veciya past part. m. dir. pl. 455, Mar. vecṇẽ 'to sell' Pk. [illegible], Bloch and Turner have suggested comparison with Sk. vyayaḥ but Turner doubts relationship, also v. s. v. [illegible] Bloch [illegible], Turner [illegible]

वेढ veḍha "binding, band" sub. 273 (bandhana [illegible] veḍha) Sk. veṣṭaḥ Pk. veḍho, also v. s. v. veḍhiu Bloch veḍh, veḍhṇẽ, Turner beṛh

वेढिय veḍhiya "surrounded, besieged" past part. m. dir. sg. Sk. veṣṭate, veṣṭita-, Pk. *veḍhia-, also v. s. v. veḍha, Bloch veḍhṇẽ, Turner [illegible]

वेरिय veriya "enemy, also troublesome" sub. dir. sg. m. 213, Sk. vairin-, Pk. vera- adj.

वेसर vesara "mule" sub. m. 507, lw. Sk. vesara, m. (cf. vega-vara-), Pk. vesara.

[illegible] [illegible] name of a town f. dir. sg. 85

[illegible] "having taken in confidence" (v. l. vīsāsī) conj. abs. 451, Sk. viśvāsayati Pk. vīsāsai, OG. vīsās- + abs. i

वेस vesa "dress" sub. m. dir. sg. 474. Sk. veṣaḥ Pk. vesa-.

[illegible] [illegible] name of a mountain loc. sg. 461.

वोलइ volai "passes" v. pres. 3rd sg. 539, Pk. volai, volei, cf. Sk. vilīyate, * vyapa- līyate.

[illegible] "servants, helpless (?)" sub. m. dir. [illegible] Sk. lx. vanthā- 'servant, crippled, unmarried'; Pk. vaṃṭha-. For [illegible] words expressing defectiveness cf. Sk.

[illegible] [illegible] defective, mutilated [illegible] Marathi [illegible] 'mutilated' [illegible] A non-aryan source is suggested, Turner [illegible]

वंकुड vaṃkuḍa "crooked" adj. dir. sg. m. 289. Sk. vakraḥ also [illegible] going crookedly Pk. vakka- vaṃka- MG. vāṃkū Bloch [illegible] Turner [illegible]

वंछउं vaṃchauṃ "I desire, I wish" v. pres. 1st sg. [illegible], also vaṃchaüṃ 531, vaṃchaüṃ [illegible] pl. 576, vaṃchatau pres. part. m. dir. sg. 455 vaṃchatau ger. dir. sg. m. 169, Sk. vāñchati [illegible] in Mar. idioms such as [illegible] 'to wish ill of some person', it is different from MG. vāṃcvũ 'to read' which [illegible] from Sk. vācayati, OG. vācai; the nasal may be due to the analogy of cintavvũ 'to think', which again in OG. citavai and [illegible] presents a confusion of Sk. cint- and [illegible], vacana- and cintana- occur frequently as pairs

वंदइ vaṃdai "bows, pays reverence" v. pres. 3rd sg. 73, vaṃdaüṃ 1st sg. 85, 630, vaṃdisu fut. 1st sg. 73, vaṃdi imp. 2nd sg. 158, vaṃdau imp. 3rd sg. 108, vaṃdatau pres. part. m. dir. sg. 110, vaṃdatāṃ obl. pl. 154, vāṃdita pass. pres. part. pl. 72 vaṃdiyaïṃ pass. pl. 526, vāṃdivā inf. 73, 108; vāṃdi abs. 85, 108. Sk. vandati, Pk. vaṃdai.

वंदणउं vaṃdaṇauṃ "obeisance, reverence" sub. n. dir. sg. 143. vāṃdaṇā obl. Sk. vandanam Pk. vaṃdaṇam OG. ext.

विंछिउ viṃchiu "scorpion" sub. m. 21. Sk. vṛścikaḥ Pk. viṃchia-, viñchia- MG. vīṃchī Bloch vĩcū Turner bicchī.

वींजइ vīṃjai "fans" v. pres. 3rd sg. 521. Sk. vījyate, Pk. *vijjai; the nasal in OG. vīṃjai, and MG. vĩjvũ 'fan' cannot be explained. See under vījāvaṇu. Bloch vijṇẽ.

व्यवस्थापिवि vyavasthāpivi "should be organised, arranged" ger. f. sg. 535. lw. Sk. vyavasthāpayati, OG. vyavasthāp- + OG. verbal suffixes.

व्यापारण vyāpāraṇa "use, setting to work" sub. n. sg. 440. lw. Sk. vyāpāraṇa- n.

व्यापार vyāpāra "activity" sub. dir. sg. m. 319. lw. Sk. vyāpāraḥ.

व्युत्सर्जउं vyutsarjauṃ "I give up" v. pres. 1st sg. 349. lw. Sk. vyutsarj- + OG. verbal inflection.

*

+ OG. passive. present participial and m. suffixes : -ī-ta-u.

विवर्जइ *vivarjai* "gives up" v. pres. 3rd sg. 513. lw. Sk. vivarjayati, vivarja-.

विशद *viśala* proper noun m. dir. sg. 463.

विशा *viśā* "a type of measure, sometimes used to measure ground and fields also," sub. f. 441. That which is a full measure is referred to as vis vasā in MG. and half-full is referred to as das vasā; der. not known.

विषइ *viṣai* "with reference to, regarding to" post pos. 73, 369; stereotyped loc; Sk. viṣaya-viṣaye, OG. viṣai; the -ṣ- is sanskritic influence on the scribe. MG. viśe.

विषइया *viṣaiyā* "belonging to the subject" sub. dir. pl. m. 326. lw. Sk. viṣaya-, OG. visai ext. -viṣaiu, the extended stem is declined for pl. viṣaiyā.

विषयाशक्तु *viṣayāśaktu* "attached to carnal pleasures" past part. m. dir. sg. (v. l. viṣayāsaktu) 516. lw. Sk. viṣayāsakta-.

विसाहणउं *visāhaṇauṁ* "material, apparatus" sub. n. dir. sg. 386. Sk. *visādhana-Pk. *visāhaṇa-OG. ext. visāhaṇauṁ MG. vasāṇũ 'materials (in the preparation of sweets)'.

विषु *viṣu* "poison" sub. n. dir. sg. 426 Sk. viṣám; Pk. visa- n. Turner bis2.

विशोधिकरणु *viśodhikaraṇu* "act of purifying" sub. dir. sg. n. 41. Sk. viśuddhi- Pk. visuddhi- OG. visodhi-; -karaṇu : Sk. karaṇam, Pk. karaṇaṁ.

विस्तरि *vistari* "in extenso, by expanding" sub. inst sg. m. 424, 601. lw. Sk. vistara- + OG. noun declension.

विस्तरी *vistarī* "spread" past part. f. 36. lw. Sk. v. s. v. vistariu.

विस्तारिउ *vistāriu* "expanded" past part. of the causal base m. dir sg. 314, vistārī abs. 74. lw. Sk. vistārayati, vistara- + OG. past part. suffix -iu.

विस्फुरइ *visphurai* "attacks" v. pres. 3rd sg. 431. lw. Sk. visphurati; MG. viphre 'attacks' is derived from the same source : Sk. visphurati, Pk. vipphurai.

विस्मउ *vismau* "astonishment" sub. m. dir. sg. 482, (v. l. vismaya) 110. lw. Sk. vismaya-.

विहरइ *viharai* "goes out (to collect alms-food)" v. pres. 3rd sg. 561; viharaim pl. 94; vihariu past part. m. dir sg. 85, also vihariyau (v. l. vihariu) 331; viharivā inf. 112; viharāvai ('offers alms') caus. pres. 3rd sg. 516; viharāviu past part. m. dir. sg. 112. viharāvī abs. 561 Sk. viharati, Pk. viharai.

विहलउ *vihalau* "quickly, early" v. s. v. vahilaum.

विहसइं *vihasaiṁ* "laugh, jest" v. pres. 3rd pl. 589; vihasiyāṁ past part. n. pl. 589. Sk. vihasati, Pk. vihasai.

वीकिणिवउं *vīkiṇivauṁ* "to sell" ger. dir. sg. n. 506. Sk. vikrīṇīte, replaced by Pk. vikkiṇai. cf. Sk. vikraya- MG. (dialectal) vekvũ. Bloch viknẽ.

वीकिवा *vīkivā* "to sell" inf. (obl.) 518; vīkii loc. sg. (of past part. vikiu) 477. Sk. vikrīyate, Pk. vikkei, MG. (dialectal) vekvũ; also v. s. v. vīkiṇivauṁ, vecai. Bloch viknẽ. Turner bikna.

वीज *vīja* "lightening" sub. f. dir. sg. 20, 314. Sk. vidyút. f. Pk. vijju f. Block vij, Turner bijuli.

वीजाणणु *vījāṇaṇu* "act of fanning" sub. dir sg. 12. Sk. vījyate, Pk. *vijjai, causal base vijjāva-. The nasal in MG. vī̃jṇo 'fan' and Sindhi viñuṇu cannot be explained; see under viṁjai Bloch vījṇā.

वीनवइ *vīnavai* "requests" v. pres. 3rd sg. 426; vīnaviu past part. m. dir. sg. 112; vīnavii loc. sg. 188. Sk. vijñāpayati, Pk. viṇṇavei, viṇṇavai. Turner. binti.

वीर *vīra* proper noun m. dir. sg. 110, 522.

वीरसेनु *vīrasenu* proper noun m. dir. sg. 521.

वीस *vīsa* "twenty" adj. num. 61. Sk. -viṁśat in compounds. Pk. vīsam MG. vīs. Bloch vīs, Turner bist.

वीसइं *vīsaiṁ* "twenty" adj. num. in the context vīsaiṁ navottara 'twenty-nine' 74; also vīsauṁ in the context eku sau vīsauṁ 'one-hundred twenty'. 71, also vīsauṁ sau 'one hundred twenty' 613; Sk. viṁśatiḥ f., Pk. vīsai; final nasal cannot be explained, cf. Ap. vīsaṁ.

वीसमइ *vīsamai* "on the twentieth" ord. loc. sg. 355. OG. vīsa + mau; v. s. v. vīsa.

वीसरिया *vīsariyā* "forgotten" past part. m. 604. Sk. vismarati Pk. vissarai, vissariya-, OG. vīsariu. Bloch visarṇẽ, Turner birsanu.

वीसामा *vīsāmā* "resting places" sub. dir. pl. m. 117; vīsāmai loc. sg. 117, vīsāme loc. pl. 117. Sk. viśrāmaḥ Pk. vissāma- OG. ext. vīsāmau. Bloch visāvṇẽ, Turner bisā.

वुडवुड रवु *vuḍavuḍa ravu* "imitation of b[illegible] sound made by the sinking of an ob[illegible]

सन्नी *sanni* "a type of jiva which has a mind" sub m. sg. 33. Sk. saṁjñin Pk. sanni [illegible]

संनइठउ *sannaïṭhau* "sincere" adj. m. dir. sg. [illegible] Sk. sanniṣṭha- ext. in OG. sanethau, note the final -hu which may be Ap. influence or borrowing from dialects of midland

समइ *samai* "at the time" sub m. loc. sg. 73 112; Sk. samayaḥ, samaye, Pk. samaya- OG saman, loc. sg. samai, MG. samo, same

समरइ *samarai* "remembers" v. pres. 3rd sg. [illegible], samaraïṁ 3rd pl. 579; samaraüṁ 1st sg. [illegible]; samarivā ger. pl. 541; samari abs. [illegible], samarāvai caus. pres. 3rd sg. 521 Sk. smarati Pk. samarai,

समरण *samaraṇa* "memory, remembrance" sub n. dir. sg. 435, also samaraṇu 204, 428, 460 samaraṇā f. 482; Sk. smaraṇam, smaraṇā, Pk samaraṇa- n.

समरावता *samarāvatā* "causing to repair" causal base, pres. part. obl. 533, Sk. samaracayati, Pk samārai; OG. samārai, caus. samarāvai, MG samārvũ "to cause to repair".

समा *samā* "like, of the same type" comp. adj. [illegible] 402, Sk. sama- Pk. sama- ext. in OG

समाइ *samāi* "is adjusted, is contained" v. pres. 3rd sg. 222; samāivauṁ ger. n. dir. sg. [illegible] Sk. sammāti, Pk. samma[illegible], MG. samāy Turner samāunu,

समायरइं *samāyaraïṁ* "behave, act" v. pres. 3rd pl. 560; samāyari abs. 530, here the initial -a- in sā- is due to analogical influence of the Jain theological term sāmāyara, [illegible], Sk. samācarati

समु *samu* "befitting, proper" adj. 516 [illegible] samā, Sk. sama, Pk. samaa, OG sama ext. with -u,

समोसरिउ *samosariu* "descended, appeared" past part. m. dir. sg. 73, 424; samosariyā pl. [illegible] Sk. samavasṛtaḥ, Pk. samosaria-

सय *saya* "hundred" num. dir. sg. [illegible], also [illegible] elsewhere. Sk. śatāni, Pk. sayaṁ saya- [illegible] 15, Turner sai

सरसउं *sarasaüṁ* "with, in relation to" [illegible] [illegible] dir. sg. [illegible] [illegible] [illegible] pl. 342; [illegible] [illegible] also [illegible] [illegible] [illegible] 579, Sk. [illegible] Pk. [illegible] for this change [illegible] [illegible] MG [illegible]

सरि *sari* [illegible] [illegible] Pk. [illegible] Turner [illegible]

सरिउं *sariuṁ* "gone, done" pass. part. [illegible] 91 Sk. sṛtaḥ Pk. sarai [illegible] Turner saranu

सरिखउ *sarikhau* "equal" adj. m. dir. sg. [illegible], sarikhai inst. sg. 94, sarikhā dir. pl. 454, sarikhī f. sg. [illegible] Sk. sadṛkṣa- Pk. sarikkha-, Bloch sārkhā, sarikha, Turner sari

सरीर *sarīra* "body" sub [illegible] dir. sg. [illegible], also sarīra (first part of a compound) [illegible] [illegible] inst. sg. 22 Sk. śarīra- Pk. sarīra-

सर्वसाचि *sarvasāci* "when all is at stake" [illegible] sub [illegible] sg. [illegible] OG. sarva [illegible], OG sarva is a Sk. [illegible] for an OG [illegible] of Sk. sarva- [illegible] sata [illegible] Sk. [illegible], Pk. [illegible] OG [illegible]

सव *sava* "all whole" pro. used with various emphatic particles [illegible] 110 [illegible] 517, [illegible] MG [illegible] is also the result of an emphatic form such as sava ko (Pk. sarvaḥ khalu, Pk. savvo khhu, savva ko; Sk. sarvaḥ, Pk. savva As sava MG, [illegible] "altogether, complete", the sava represents special [illegible] ing [illegible] that it is not used on its own, instead, various emphatic forms are used, Turner [illegible]

ससुर *sasura* "father-in-law, wife's or husband's father" sub m. sg. [illegible] Sk. śvaśuraḥ Pk. sasura MG sasro is the result of [illegible] form [illegible], see under [illegible]

सहस *sahasa* "thousand" num. dir. sg. 74, Sk. sahasra Pk. sahassa, [illegible]

सहि *sahi* "to tolerate, to suffer" [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] of the causal base [illegible] Sk. [illegible] Pk. [illegible]

सा *sā* "she" [illegible] [illegible] f. dir. sg. [illegible] [illegible], [illegible]

साकर *sākara* "sugar (crystals)" [illegible] f. [illegible] [illegible] Pk. sakkarā [illegible] sākar, sākar

साखि *sākhi* "in the presence of, as witness" [illegible] [illegible] sg. [illegible] 242, 294, 31[illegible], also used as a [illegible] [illegible] "witness, evidence" [illegible] "false evidence" [illegible] MG [illegible] [illegible] Sk. sākṣiṇaḥ [illegible] Pk. sakkhi [illegible] M [illegible]

[illegible]

[illegible]

शकटापिता *śakaṭāpitā* "father of one seated in a bullock-cart" sub. m. dir. sg. 94 lw. Sk. śakaṭā-pitā

शकटाल *śakaṭāla* proper noun m. dir. sg. 435.

शत्रुंजय *śatrumjaya* proper noun m. dir. sg. 435.

शाश्वतां *śāśvatām* "perpetual, eternal" adj. n. pl. 614 lw. Sk. śāśvatá–.

शींकउं *sīkaum* "a shelf generally hung in the kitchen in which remains of cooked food are kept" sub. n. dir. sg. (v. l. chīkaum) 434. Ved. Sk. śikyám "a kind of loop or swing made of rope and suspended from either end of a pole or yoke to receive a load", Pk. sikkaya–. MG. sikũ, chikũ (dialectal). Bloch sikẽ, Turner sikot.

शीलड *sīla* proper noun m. dir. sg. 110.

शीलडु *sīlu* proper noun m. dir. sg. 110.

शीलभद्र [illegible] proper noun m. dir. sg. 112.

शोचन्त [illegible] "lamenting" pres. part. dir. sg. m. 490, lw. Sk. [illegible] + tan

शोफ [illegible] "swelling" sub. m. dir. sg. 121, cf. Sk. [illegible] "morbid swelling, tumour".

शोभ [illegible] proper noun m. dir. sg. 119.

शंख [illegible] "conch" sub. m. 21. lw. Sk.

शांति [illegible] proper noun m. dir. sg. 110.

श्रीमागंदवति [illegible] proper noun f. dir. sg. 450.

श्रीमारंगु [illegible] proper noun m. dir. sg. 481.

श्मशान [illegible] "cemetery" sub. n. dir. sg. 360. lw. Sk. śmaśānam

श्रावक [illegible] "householder (Jain expression)" sub. m. dir. sg. 492 lw. Sk.

श्राविका [illegible] "Jain woman (f. of śrāvaka)" sub. f. dir. sg. [illegible] lw. Sk.

श्रेष्ठि [illegible] "merchant, tradesman" sub. [illegible] [illegible] [illegible] śreṣṭhim inst. sg. [illegible] [illegible] probably an effort to [illegible] common in the [illegible] resulted [illegible]

श्रेयांस [illegible] proper noun m. dir. sg. 110.

स

स [illegible] dem. pro. [illegible] f. 460, 429, [illegible] [illegible] v. s. v. [illegible]

[illegible] [illegible] past [illegible] 22, 93, 124, 547, [illegible] Sk. [illegible], Pk. [illegible]; note [illegible] Bloch [illegible]

[illegible] [illegible] dir. sg. 91 Sk. svayam, Pk. sayam

सउकी *sauki* "by the co-wife" f. sg. 426. Sk. *sapatknī, sapátnī; Bloch savat, Turner santā–. The reading should be sauki, note the MG. cognate śOk.

सकइ *sakai* "is capable" v. pres. 3rd sg. 339, 516, 537; sakaum 1st sg. 488, 512; also sakūm 339; sakin past part. m. dir sg. 456, 461; sakiyaim pass. pl. (honorific) 490. Sk. śaknóti, śakyáte, Pk. sakkai, sakkei, Bloch sakṇẽ, Turner saknu.

सगलूं *sagalūm* "all" adj. adv. dir. sg. n. 7, (v. l. sagalaa, sagalū) 91, 465; sagalām pl. 327; also sagala sg. 589, pl. 110; sagalā– m. sg. 10, sagalā pl. 437; sagalā obl. 66, 405; sagale inst. sg. 381, sagale loc. pl. 327; Sk. sakala– Pk. sagala– probably a late lw. in Pk. ext. in OG. Bloch saglā.

सतर *satara* "seventeen" num. dir. sg. 281. also satara 618; sataraha obl. sg. 281, 613; note the –t– in OG. MG. has geminated –tt–, sattar. Sk. saptádasa, Pk. sattarasa. Ap. sattaraha. Bloch satrā, Turner satra.

सतरमा *sataramā* "seventeenth" ord. obl. 222. sattara mai loc. sg. 333; note the –t–; cf. satara in OG. v. s. v. satara. OG. ordinal sataramau.

सतहुत्तर *satahuttara* "seventy-seven" num. dir. sg. (v. l. sattahuttara, satahattara). 71. cf. Sk. sáptasaptatiḥ f., Pk. sattahattarim. Turner satahattar.

सतावन *satāvana* "fiftyseven" num. 390; also sattāvana 401. Sk. saptapañcāśat Pk. sattava-ṇṇami; note the –t– in OG., MG. has geminated –tt– sattāvan; Turner satāuan.

सत्ताणवइ *sattāṇavai* "ninetyseven" num. 613; Sk. saptanavatiḥ f., Pk. sattaṇauim. MG. sattāṇu, Turner satanale.

सत्तावीस *sattāvīsa* "twenty-seven" num. 74, also in the idiom "sattavīsa cauka atthottara sau" "twentyseven multiplied by four is 108" 617, note that this OG. system of multiplication is similar to present day grammar school tradition of multiplication. Sk. saptáviṁśat f. Pk. sattāvīsam, Turner satāis.

सत्तोत्तर सउ *sattottara sayu* "one hundred and seven" "more by seven" num. 627 Sk. sapti–, Pk. satta–, sattottara–

सत्यासी *satyāsī* "eighty seven" num. 74, Sk. sapta-śītiḥ f. Pk. sattasīim; –t– in OG. and MG. satyāsī may be analogical cf. ekyāsī, byāsī, tryāsī, coryāsī etc. in MG. Turner satāsī.

सदिहरा *sadiharā* ? meaning and derivation not known

[illegible] a type of [illegible]

[illegible] which may be [illegible] ing from dialects of midland [illegible]

[illegible] at the time [illegible]

[illegible]

शकटापिता *śakaṭāpita* "father of one seated in a bullock-cart" sub. m. dir. sg. 94 lw. Sk sakaṭā-pitā

शकटाल *śakaṭāla* proper noun m dir. sg. 435.

शत्रुंजय *śatrumjaya* proper noun m dir. sg. 435.

शाश्वती *śāśvatīṃ* "perpetual, eternal" adj. n pl. 614 lw. Sk. śāśvata-.

शींकउं *śīkaüṃ* "a shelf generally hung in the kitchen in which remains of cooked food are kept" sub. n. dir. sg. (v. l. chikaum) 434. Ved. Sk. sikyām 'a kind of loop or swing made of rope and suspended from either end of a pole or yoke to receive a load', Pk sikkaya-. MG. sikũ, chikũ (dialectal). Bloch sikã, Turner sikol.

शीलादित्य *śīlā*[illegible] proper noun m. dir sg. 110.

शीलादित्य *śīla*[illegible] proper noun m dir sg 112.

शीलभद्र [illegible] proper noun m dir sg 112.

शोचतउ [illegible] "lamenting" pres part. dir. sg. m 390. lw Sk. [illegible] + tau

शोथु [illegible] "swelling" sub. m. dir. sg. 321. cf. Sk. [illegible] "morbid swelling, tumour".

शंबर [illegible] proper noun m dir. sg. 559.

शंख [illegible] "conch" sub m 21. lw Sk.

शांति [illegible] proper noun m. dir. sg 110.

श्रीमंतसुंदरी *śrīmanta sundarī* proper noun f dir sg. 485.

श्रीसारसंग *śrīsāraṃga* proper noun m dir sg. 484.

श्मशान *śmaśāna* "cemetery" sub. n. dir. sg. 360. lw. Sk śmaśānam

श्रावक [illegible] "householder (Jain expression)" sub m dir sg 497 lw Sk.

श्राविका [illegible] "Jain woman" (f. of śrāvaka) sub f dir sg [illegible] lw Sk.

श्रेष्ठि [illegible] "merchant, tradesman" sub. m (v. l. [illegible]) [illegible] śreṣṭhim inst. sg. [illegible] lw Sk. śreṣṭhin [illegible] probably an effort to [illegible] common with the standard [illegible] Sanskrit [illegible]

श्वेत [illegible] proper noun m dir sg 110.

स

स [illegible] "he, she, that" dem pro. m. f. 460, 420, 474 [illegible] 677 [illegible] Pk. so, sa v. s. v. [illegible]

सउं [illegible] "with" post [illegible] 22, 99, 128, 547, 574 [illegible] 2 [illegible] Pk [illegible]; note the [illegible] Bloch [illegible]

सइं [illegible] [illegible] dir. sg. 94 Sk svayam, Pk sayam

सउकी *saükī* "by the co-wife" f. sg. 426. Sk. *sapatknī, sapātnī; Bloch savat, Turner sautā-. The reading should be sauki, note the MG. cognate śOk.

सकइ *sakai* "is capable" v. pres. 3rd sg. 339, 516, 557; sakaum 1st sg. 488, 512; also sakūṃ 339; sakiu past part. m. dir sg. 456, 461; sakiyaiṃ pass. pl. (honorific) 490. Sk. śaknoti, sakyāte, Pk. sakkai, sakkei, Bloch saknẽ, Turner saknu.

सगलउं *sagalaüṃ* "all" adj. adv. dir. sg. n. 7, (v. l. sagalaṃ, sagalũ) 94, 465; sagalāṃ pl. 327; also sagala sg. 589. pl. 110; sagalū- m. sg. 10, sagalā pl. 473; sagalā obl. 66, 405; sagale inst. sg 381, sagale loc. pl. 327; Sk. sakala- Pk. sagala- probably a late lw. in Pk. ext. in OG. Bloch saglā.

सतर *satara* "seventeen" num. dir. sg. 281. also satara 618; sataraha obl. sg. 281, 613; note the -t- in OG. MG. has geminated -tt-, sattar. Sk. saptádaśa, Pk. sattarasa. Ap. sattaraha. Bloch satrā, Turner satra.

सतरमा *sataramā* "seventeenth" ord. obl. 222. sattara mai loc. sg. 353; note the -t-; cf. satara in OG. v. s. v. satara. OG. ordinal sataramau.

सतहुत्तर *satahuttara* "seventy-seven" num. dir. sg. (v. l. sattahuttara, satahattara). 74. cf. Sk. saptasaptatiḥ f., Pk. sattahattariṃ Turner satahattar.

सतावन *satāvana* "fiftyseven" num. 390; also sattāvana 401. Sk. saptapañcāśat Pk. sattāvaṇṇami; note the -t- in OG., MG. has geminated -tt- sattavan; Turner satāvan.

सताणवइ *satāṇavai* "ninetyseven" num. 617; Sk. saptanavatiḥ f., Pk. sattaṇauim. MG. sattāṇũ, Turner satānabe.

सतावीस *sattāvīsa* "twenty-seven" num. 74, also in the idiom "sattavīsa cauka atthottara sau" "twentyseven multiplied by four = 108" 617, note that this OG. system of multiplication is similar to present day grammar school tradition of multiplication. Sk. saptāviṃśati f., Pk. sattāvīsaṃ, Turner satāis.

सतोत्तर सउ *sattottara sau* "one hundred and seven" num. 427 Sk. sapta-, Pk. satta-, sattottara- "more by seven".

सत्यासी *satyāsī* "eighty seven" num. 74 Sk. saptāśītiḥ f. Pk. sattāsīim, -y- in OG. and MG. satyāsī, may be analogical cf. ekyāsī, bāyāsī, tryāsī, coryāsī etc. in MG. Turner satāsi.

सद्गुरु *sadruki* ? meaning and derivation not known

साठि *sāṭhi* "sixty" num. dir. sg. 10, 121 Sk. ṣaṣṭiḥ Pk. saṭṭhi OG. saṭhi MG. sāṭh Bloch sāṭh, Turner sāṭhi.

साठु *sāṭhu* "sixty" num. dir. sg. 71; also sāṭhu sau 'one hundred sixty' 618 Sk. ṣaṣṭiḥ f. Pk. saṭṭhi- f. OG. expected form is sāṭhi, but sāṭhu can be explained by analogical extension of -u from other numerals. v. s. v. sāṭhi

सात *sāta* "seven" num. dir. sg. 28, 73; sāte inst. pl. 438 Sk. saptá Pk. satta; Bloch sāt, Turner sāt.

सातगारव *sātagārava* "complascent on account of happiness, arrogance of happiness" (first part of a compound (sātagāravādi) sub. 566, Sk. sāta + gaurava, lw. (Jain theological term) in Pk. sāta + gārava.

सातमी *sātamī* "seventh" ord. f. dir. sg. OG. sāta + ord. suffix ma-u, v. s. v. sāta.

साति *sāti* "with, together" meaning is not clear, nor is derivation, 465, (context : tāharau ghoḍau āpaṇau sāti).

सातू *sātū* "cooked flour (sweetened)" sub. dir. sg. m. 288, Sk. sáktuḥ m. Pk. sattu-, sattua-, OG. sātū; Bloch sātū, Turner sātu.

साधइ *sādhai* "accomplishes" v. pres. 3rd sg. 431. lw. Sk. sādhayati.

सामहउ *sāmahau* "in front of, opposite" adj. adv. (v. l. sāmmau, sāmuhau, sāmuhum, samahau) dir. sg. m. n. 73, 488, 516, 545, 579; sāmmuhā obl. pl. 454; sāmuhī f. sg. 562. Sk. sammukhaḥ Pk. sammuha- OG. ext. Bloch samor. Turner sāmu.

सारवियइ *sāraviyai* "is accomplished" v. caus. pass. 3rd sg. 438. Sk. sárati Pk. sarai v. s. v. sarium. Bloch sarṇẽ. Turner sarnu.

सारिखा *sārikhā* "equal" adj. obl. 51. v. s. v. sarikhau.

सारिं *sārim* "dice" sub. f. dir. pl. 483. Sk. lex. sārī f. 'chessman' Pk. sāri f. 'colourful container from which dice are tossed while gambling'.

सास *sāsa* "breath" sub. m. 42. Sk. śvāsaḥ Pk. sāsa-, Turner sās.

सासू *sāsū* "wife or husband's mother" sub. f. 201. Sk. śvaśrūḥ Pk. sassū-, Bloch sāsū, Turner sāsu.

साहिउ *sāhiu* "held" past part. m. dir. sg. 556; sāhī abs. 435, 539, Sk. sādhayati Pk. sāhai sāhai, OG. sāhai.

सि *si* "they" dem. pro. nom. pl. 537; it occurs as a correlative, e. g. ji nāthā si nāthā. Sk. saḥ. Pk. so OG. sa analogically influenced by Sk. ye Pk. je OG. ji. Elsewhere, ti (Sk. te) is used.

सिखिउ *sikhiu* "learnt" past part. m. dir. sg. 361. (The initial short -i- is a scribal error, other mss. have long -ī-). Sk. śikṣate Pk. sikkhai, Bloch sikṇẽ, Turner siknu.

सिद्धिइं *siddhim* "towards perfection, salvation" sub. f. loc. sg. 121 lw. Sk. siddhi + OG. loc. suffix

सीत *sīta* "cold" adj. dir. sg. 166. Sk. sīta-.

सीदाइ *sīdai* "becomes despondent, gets afflicted, exhausted", pass. sg. 215. lw. Sk. sīdati.

सीधउं *sīdhaum* "established" adj. dir. sg. n. 102. Sk. siddham. Pk. siddha- ext. OG.; notice MG. 'sidhū' with altered meaning 'straight'. Turner sidho.

सीम *sīma* "upto, within the limit" post pos. 110; also sīmu 523. Sk. sīmán, sīmā, Pk. sīmā. Bloch sīv.

सीमंधरु *sīmamdharu* proper noun m. dir. sg. 547.

सीमालु *sīmālu* "staying on the border, frontier" sub. dir. sg. m. 451. Sk. sīmā- Pk. sīmāla-. v. s. v. sīma.

सीयाले *sīyāle* "in winter" sub. loc. sg. 401. Sk. śītakalaḥ, Pk. sīa- āla.

सु *su* "he" dem. pro. m. nom. sg. 109, 111, 365. Sk. saḥ, Pk. so. v. s. v. sa.

सुकुमारिका *sukumārikā* "a type of puri-like preparation." sub. f. 311. This is a sanskritization of the MG. suvāḷī. lw. Sk.

सुखिउ *sukhiu* "happy" adj. dir. sg. m. 91. lw. Sk. sukhī, OG. sukhī ext. with -u.

सुजाणु *sujāṇu* "intelligent, clever (man)" adj. dir. sg. m. 586; OG. su + jāṇu; v. s. v. jāṇa.

सुदत्तु *sudattu* proper noun m. dir. sg. 517.

सुद्धि *suddhi* "purification" sub. f. 345. Sk. śuddhiḥ, Pk. suddhi, lw. Pk.

सुदर्शनु *sudarśanu* proper noun m. dir. sg. 445.

सुपार्श्व *supārśva* proper noun m. dir. sg. 110.

सुभ *subha* "good, auspicious" adj. n. dir. sg. 435. Sk. śubha-; lw. Sk.

सुमति *sumati* proper noun m. dir. sg. 110.

सुमित्रु *sumitru* proper noun m. dir. sg. 451, 531 559.

सुरसेन *surasena* proper noun m. dir. sg. 521.

सुलहलादिक *sulahalādika* "sulahala and others; sulahala is a type of small insect" sub. 338, 401. Der. not known.

सुविधि *suvidhi* proper noun m. dir. sg. 110.

सुंद *sunda* proper noun m. dir. sg. 430.

सुसइ *susai* "dries" v. pres. 3rd sg. 516. short –u– in initial syllable may be graphic. Sk. suṣyati Pk. sussai (Sk. śoṣyati, Pk. sosai, MG sos-vũ)

सुसरउ *susarau* "father-in-law, wife's or husband's father" sub. m. dir. sg. 556. Sk. śvaśuraḥ, Pk. sasura– ext. in OG. sasurau, initial –u– may be graphic, or assimilatory. MG. sasro, v. s. v. sasura, Bloch sāsrā, Turner sasuro

सुह *suha* "joy, happiness" sub. n. dir. sg. 432. Sk. sukham Pk. suhaṁ OG. suh-u.

सूकइ *sūkai* "dries" v. pres. 3rd sg. 309. Sk. suṣkah Pk. sukkha–, sukka–, Bloch sukā, Turner suko, sukna.

सूकवणु *sūkavaṇu* "drying – action of–" sub. n. dir. sg. 12, v. s. v. sūkai.

सूकी *sūkī* "dry" adj. f. 601. v. s. v. sūkai. OG sūk– + feminine suffix –ī.

सूग *sūga* "disgust, dislike" sub. f. dir. sg. 435. cf. MG. sūg. f. der. not known.

सूचिउ *sūciu* "suggested, indicated" past part. m dir. sg. 501; sūcaveuaṁ caus. gen. n. sg. 10; sūcaveṁ n. pl. 10. Sk. sūcyate, sūcayati

सूझइ *sūjhai* "purifies, becomes clear" v. pres. 3rd sg. 13, 172, 230; sūjhavi caus. abs. 484. Sk. śudhyati Pk. sujjhai. Turner sujhnu.

सूनी *sūnī* "swollen" past part. f. dir. sg. 321 Sk. śūyate, śūnaḥ (cf. śūnya– originally 'hollowness, emptiness' MG. sūn) Pk. [illegible] MG sujvũ, sunvũ, Bloch sunā, Turner sujnu.

सूतउ *sūtau* "sleeping" adj. past part. m. dir. sg. 447. 482; sūtā obl. sg. 446; sutai loc. sg. 481. sūta inst. sg. 250. Sk. suptáḥ Pk. sutta. Turner sutnu.

सूत्रधार *sūtradhāra* "carpenter" sub. m. 404. ls. Sk.

सूलसलाण *sulasalaṇa* "act of cutting, arranging, trimming" sub. n. sg. 443. ls. Sk. salara + karaṇa.

सूवइ *suvai* "sleeps" v. pres. 3rd sg. 179; suvai pass. sg. 259; suyārī caus. abs. [illegible] Sk. svapiti. Pk. suvai. MG. suvũ. Turner sutnu.

सूवडउ *suvaḍau* "parrot" sub. m. dir. sg. [illegible] Sk. śuka– Pk. suva–ext. –ḍau MG. suḍo

सूर *sura* proper noun m. dir. sg. 443.

सूरण *suraṇa* "a vegetable which grows under the ground" sub. n. dir. sg. [illegible] MG [illegible] not known

सूरवा *suravā* "heroism" sub. f. sg. [illegible] Pk. sura [illegible]

सूर्य *sūrya* proper noun m. dir. sg. 474

सेउ *seu* "perspiration" sub. dir. sg. m. [illegible] Sk. svedaḥ Pk. seo, seu. MG. parsevo perspiration [illegible] Sk. prasvedaḥ. OG *parasau. replaced by parasco.

सेठि *seṭhi* "merchant, businessman (rich)" sub. m. obl. sg. 432. [illegible] Sk. śreṣṭh. Pk. seṭṭhi MG seṭh Bloch set Turner seṭh

सेविका *sevikā* "a type of [illegible] term" sub. f. [illegible] Sk. as Jain theological term" sub. f. [illegible] (not found in MW). Pk. [illegible]

सेव *seva* "service" sub. f. dir. sg. [illegible] seva [illegible] Sk. seva Pk. sevā

सेवाली *sevālī* proper noun m. dir. sg. [illegible]

सेवालाहारी *sevālāhārī* "one who lives by eating sevala– [illegible]" adj. m. dir. sg. [illegible] Sk. sevāla + āhārin

सेविउ *seviu* "served" past part. m. dir. sg. 31[illegible]. sevatau pres. part. m. dir. sg. [illegible]. sevyai pass. sg. 31[illegible] Sk. sevate Pk. sevai

सोधइ *sodhai* "find" v. pres. 1st pl. 4[illegible] sodhatau pres. part. m. dir. sg. [illegible] sodhi abs. [illegible] [illegible] of Sk. sudhha–, [illegible] or [illegible] developed as the NIA stem sodh– or this may [illegible] Sk. [illegible] to avoid confusion with sodh– from [illegible] see Turner sodhnu

सोल *sola* "sixteen" num. dir. sg. [illegible] Sk. ṣoḍaśa, Pk. solasa, solaha. Bloch sola, Turner sora

सोलमा *solamā* "sixteenth" ord. [illegible] [illegible]

सोसियकाय *sosiyakāya* [illegible] whose bodies have withered, emaciated" adj. m. dir. pl. 11[illegible] Sk. [illegible] kāya, Pk. [illegible] kāya. ls. Pk.

संघाती *saṁghātī* "having [illegible], struck" [illegible] Sk. *saṁghātaka– 'put together', [illegible] 'bringing together', cf. Pk. [illegible] struck [illegible] [illegible]

संघरावियां *saṁgharāviyāṁ* "caused to [illegible]" past part. of the causal [illegible] m. pl. [illegible] ls. Sk. [illegible]

संकलना *saṁkalanā* [illegible] adj. [illegible] [illegible]

संतरम *saṁtarama* "[illegible]" [illegible] Pk. [illegible]

संबशुचि *saṁbaśuci* proper noun m. dir. sg. [illegible]

संभूतर *saṁbhūtara* "a [illegible] eight and [illegible] of the [illegible], Jain theological term" [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

सुवेगु *suvegu* proper noun m. dir. sg. 430.

सुसइ *susai* "dries" v. pres. 3rd sg. 516. short –u– in initial syllable may be graphic. Sk. śúṣyati Pk. sussai (Sk. śoṣáyati, Pk. sosei, MG. sos-vũ).

ससुरउ *susurau* "father-in-law, wife's or husband's father" sub. m. dir. sg. 556. Sk. śváśuraḥ, Pk. sasura– ext. in OG. sasurau, initial –u– may be graphic, or assimilatory. MG. sasro. v. s. v. sasura. Bloch sāsrā, Turner sasuro.

सुहु *suhu* "joy, happiness" sub. n. dir. sg. 432. Sk. sukhám Pk. suhaṁ OG. suh-u.

सूकइ *sūkai* "dries" v. pres. 3rd sg. 309. Sk. śuṣkaḥ Pk. sukkha–, sukka–. Bloch sukā, Turner suko, suknu.

सूकवणु *sūkavaṇu* "drying – action of–" sub. n. dir. sg., 12. v. s. v. sūkai.

सूकी *sūkī* "dry" adj. f. 601. v. s. v. sūkai. OG. sūk– + feminine suffix –ī.

सूग *sūga* 'disgust, dislike" sub. f. dir. sg. 435. cf. MG. sūg. f. der. not known.

सूचिउ *sūciu* "suggested, indicated" past part. m. dir. sg. 501; sūcavevaum caus. gen. n. sg. 10; sūcavevāṁ n. pl. 10. Sk. sūcyate, sūcayati.

सूझइ *sūjhai* "purifies, becomes clear" v. pres. 3rd sg. 13, 172, 230; sūjhavī caus. abs. 484. Sk. śudhyati Pk. sujjhai. Turner sujhnu.

सूणी *sūṇī* "swollen" past part. f. dir. sg. 621. Sk. śūyate, śūnáh (cf. śūnyá– originally 'hollowness, emptiness' MG. sũn) Pk. sūa– sūṇa–. MG. sujvũ, suṇvũ. Bloch sunā, Turner sujnu.

सूतउ *sūtau* "sleeping" adj. past part. m. dir. sg. 447, 482; sūtā obl. sg. 446; sūtai loc. sg. 481; sūte inst. sg. 259. Sk. suptáh Pk. sutta. Turner sutnu.

सूत्रधार *sūtradhāra* "carpenter" sub. m. 408. lw. Sk.

सूदणकरण *sūdaṇakaraṇa* "act of cutting, arranging, trimming" sub. n. sg. 440. lw. Sk. sūdana – + karaṇa.

सूयइ *sūyai* "sleeps" v. pres. 3rd sg. 163; sūīyai pass. sg. 259; sūyāri caus. abs. 25. Sk. svápati, Pk. suvai, MG. suvũ. Turner sutnu.

सूयडउ *sūyaḍau* "parrot" sub. m. dir. sg. 463. Sk. śuka– Pk. sua– ext. –ḍau, MG. suḍo.

सूर *sūra* proper noun m. dir. sg. 445.

सूरण *sūraṇa* "a vegetable which grows under the ground" sub. n. dir. sg. 288. MG. sūraṇ. Der. not known.

सूरता *sūratā* "heroism" sub. f. sg. 48. Sk. śūraḥ Pk. sūra, OG. sūra + tā.

सूर्य *sūrya* proper noun m. dir. sg. 464.

सेउ *seu* "perspiration" sub. dir. sg. m. 309. Sk. svedaḥ Pk. seo, seu; MG. parsevo 'perspiration' Sk. prasvedaḥ, OG. *parasea, replaced by paraseo.

सेठि *seṭhi* "merchant, businessman (rich)" sub. m. obl. sg. 432, 548. Sk. śreṣṭhī Pk. seṭṭhi MG. seṭh. Bloch śeṭ Turner seṭh[1].

सेतिका *setikā* "a type of measure, more common as Jain theological term" sub. f. 459. lw. Sk. (not found in MW); Pk. seigā, seiā.

सेव *seva* "service" sub. f. dir. sg. (v. l. sevā) 432. Sk. sevā Pk. sevā.

सेवाली *sevāli* proper noun m. dir. sg. 109.

सेवालाहारी *sevālāhārī* "one who lives by eating sevāla– sea weeds–" adj. m. dir. sg. 109. lw. Sk. sevāla + āhārin.

सेविउ *seviu* "served" past part. m. dir. sg. 516; sevatau pres. part. m dir. sg. 222; seviyai pass. sg. 516. Sk. sevate Pk. sevai.

सोधउं *sodhauṁ* "find" v. pres. 1st pl. 456. sodhatau pres. part. m. dir sg. 382; sodhī abs. 325; cf. Sk. suddha–, śóddhum, which might have developed as the NIA stem sodh–; or this may be a lw. fr. Sk. sodháyati, to avoid confusion with soh– from śobhate. see Turner sodhnu.

सोळ *sola* "sixteen" num. dir. sg. 74. Sk. ṣoḍaśa, Pk. solasa, solaha. Bloch soḷā, Turner sora.

सोलमा *solamā* "sixteenth" ord. obl. 222, solamai loc. sg. 353; OG. sola + maa. v. s. v. sola.

सोसियकाय *sosiyakāya* "whose bodies have withered, emaciated" adj. m. dir. pl. 110. Sk. śoṣitakāya–, Pk. sosia + kāya; lw. Pk.

संकोडी *saṁkoḍī* "having reduced, shrunk" abs. 532. Sk. *saṁkṛta– 'put together'; sáṁkṛtiḥ f. 'bringing together'; cf. Pa. saṁkuṭito 'shrivelled, shrunk' Pk. saṁkuḍa–, saṁkoḍa– 'contraction'.

संक्रमाविया *saṁkramāviyā* "caused to move" past part. of the causal base m. pl. 22. lw. Sk. saṅkram– + OG. āv– ia.

संघाडउ *saṁghāḍau* "pair, couple" sub. m. dir. sg. 435. Sk. saṁghāṭa– Pk. saṁghāḍa– ext. OG.

संजम *saṁjama* "control, restraint" sub. m. dir. sg. 573; Sk. saṁyama– Pk. saṁjama– lw. Pk.

संजमसूरि *saṁyamasūri* proper noun m. dir. sg. 484.

संडासा *saṁḍāsā* "sides (two sides-right and left-of the body, Jain theological term)", sub. obl. pl. m. 100, 326; cf. MG. sā̃ḍso, sāṇso '
the sides of the pincers '
meaning in this
sides ' saṁḍāsā paḍile'
saṁḍāsa–. T-

सूंचलु *sūṁcalu* "a type of salt" sub. dir. sg. n. 20. MG. saṁcal; De. suṁcalu–. Initial –am–> –a– in MG. cannot be explained.

सूंठि *sūṁṭhi* "ginger" sub. f. sg. 314. also suṁṭhi 221. Sk. śuṇṭhiḥ, śuṇṭhi 'dry ginger'. Pk. suṇṭhi, MG sūṭh; final –i in OG. may be a prakritic influence. Bloch sũṭ, Turner sutho.

स्तवउं *stavaum* "I praise" v. pres. 1st sg. 377; staviśii fut. 3rd sg. 622; stavītai pass. pres. part. loc. sg. 80; lw. Sk. stava + OG. verbal inflection.

स्मसानि *smaśāni* "to the burial ground" sub. n. loc. sg. lw. Sk. śmaśānaṁ., OG. smasāṇ + loc. sg. suffix –i.

स्वाध्याउ *svādhyāu* "meditation, study." sub. m. dir. sg. (v. l. svādhyāya) 109. lw. Sk. svādhyāyaḥ, svādhyāya– (for final –u in OG. cf. Sk. vinaya– lw. in OG. vinau MG. vano, Sk. śatruñjaya– lw. in OG. śatrumjau MG. śatrumjo etc.)

*

हउं *haum* "I" 1st pers. pro. nom. sg. m. f. (v. l. hum, hau, hūṁ) 74, 85; Sk. ahám, Pk. aham, ahaṁ. Initial a– before h– develops as a murmured vowel in MG. hũ.

हकारइ *hakārai* "calls, invites" v. pres. 3rd sg. 403; also hakārei (v. l.) 544. Sk. lex. hakkāra 'making of the sound hak', onomat. sound of calling Pk. hakkārei, hakkārai; MG haṁkarvũ 'to drive'; also cf. MG. hāk f. 'call, shout, challenge'. Bloch hāknẽ, Turner hāknu, hakārnu.

हडि *haḍi* "wooden fetters" sub. f. dir. 402. Sk. haḍiḥ m., Pk. haḍi m., OG. haḍi f. MG. heḍ f.

हथियार *hathiyāru* "weapon" sub. n. dir. sg. 522. Sk. *hasta-kāra– Pk. hatthiyāra– n. Turner hatiyār.

हथोडउ *hathāḍau* "hammer" sub. dir. sg. m. 213. Sk. *hasta-kūṭa–; (Sk. hástaḥ and kūṭam 'mallet' Pk. kūḍa) Pk. *hattha-uḍa– MG hathoḍo. Nasalisation in OG cannot be explained. Turner hotro.

हरइ *harai* "takes away, robs" v. pres. 3rd sg.; harivā inf. of purpose 7. Sk. harati, Pk. harai. Bloch harṇẽ, Turner harnu.

हरखिउ *harakhiu* "pleased" past part. m. dir. sg. 479 harasiyā (v. l. harsiyā) pl. 142. Sk. hṛṣyati, harṣita; MG. harakh indicates that –s– should be interpreted as –kh– and hence the intervening stage *harisu. *harisu should be independent of the Pk. harisia

हरियालु *hariyālu* "sulphuret of arsenic, yellow orpiment" sub. dir. sg. m. [illegible] Sk. haritāla– m., Pk. hariāla– m. n.

हलावइ *halāvai* "cause to shake, move" v. caus. pres. 1st sg. 309 Pk. hallai MG. halāvũ, but cf. Hindi hilnā, Panjabi hillṇā. Dravidian origin is suggested. Bloch halṇẽ, Turner hilnu, hallinu.

[Devanagari] *[illegible]* proper noun m. dir. sg. 42[illegible]

हलुयउ *haluyau* "light (of weight)" adj. dir. sg. m. 602. Probably the text should be haluyau. cf. MG halvo Sk. laghuḥ, laghukaḥ, Pk. lahua–, halua–. Bloch suggests Dravidian origin. Bloch halū Turner halukā [illegible]

हव *hava* "now" adv. 452, [illegible] v. l. hava [illegible], MG have, cf. H and other Bihari dialects ab, abhi etc. Absence of –b– forms in the western group leads Chatterji (ODBL p. [illegible]) to suggest Sk. evam Pk. evvam for the a– of the demonstrative base of Sk. asau, [illegible] etc. h– in Guj. cannot be explained, but it may be analogical extension of Sk. adhunā, Pk. ahunā MG hamṇā; the alternant hiva with –i– in the initial syllable is properly explained by Pk. evvam, also the havaḍāṁ-havḍāṁ are explained as extended forms of hava. Thus MG hamṇā and havā [illegible] (dialectal) should be kept apart.

[Devanagari] *havaḍā* "just now" adv. 142, also havaḍāṁ [illegible], 573 for [illegible] hava

[Devanagari] *hasatau* "laughing, joking" pres. part. m. dir. sg. 22[illegible], 514 [illegible] Sk. hasati, Pk. hasai. Bloch hasṇẽ, Turner hāsnu

[Devanagari] *[illegible]* proper noun m. [illegible] sg. 4[illegible]

[Devanagari] *[illegible]* "drove out" past part. [illegible] dir. sg. 424 Pk. hakkā f. "call", MG [illegible]

[illegible] hakāra[illegible]

[Devanagari] *[illegible]* [illegible] sg. [illegible] 472 also [illegible] 478, Sk. hatta[illegible] [illegible] Pk. hatta– m. hatta[illegible] f. [illegible] MG hāṭ f. [illegible] Turner hāṭ

[Devanagari] *[illegible]* [illegible] Pk. [illegible] halla, [illegible] Bloch [illegible] Turner hal

[Devanagari] *[illegible]* [illegible] pl. 4[illegible] [illegible] Sk. [illegible] Pk. hatthaa [illegible] Bloch hāt Turner hāt

संतावइ *saṁtāvai* "troubles, harasses" v. caus. pres. 3rd sg. 526. Sk. saṁtāpayati Pk. saṁtāvei. MG. satāvvũ, note the loss of nasal in most of NIA languages. Turner satāunu.

संथारउ *saṁthārau* "a bed (of a monk), place where the monks live" sub. m. dir. sg. 541; saṁthārai loc. sg. 323; saṁthārā obl. 338; MG sãthro 'bed on which a person is placed before death'; Sk. saṁstāra-, Pk. saṁthār, OG. ext.

संदिसावउं *saṁdisāvauṁ* "I get permission" v. caus. pres. 1st sg. 342; Sk. saṁdiśati, Pk. saṁdisai, caus. saṁdisāvei.

संदेसउ *saṁdesau* "message" sub. dir. sg. m. 192, Sk. saṁdeśa- Pk. saṁdesa- ext. in OG.

संधूखण *saṁdhūkhaṇa* "act of lighting (fire)" sub. n. 440, note OG. -kh- for -kṣ-. Sk. saṁdhukṣaṇa- Pk. saṁdhukkhaṇa-.

संनिवेसि *saṁnivesi* "in the residence" sub. m. loc. sg. 112 Sk. saṁniveśa- Pk. saṁnivesa-.

संपजइ *saṁpajai* "succeeds, prospers, accrues" v. pres. 3rd sg. 588, Sk. saṁpadyate Pk. saṁpajjai.

संबंधिउ *saṁbaṁdhiu* "relative" sub. m. dir. sg. 17, 519, saṁbaṁdhiuṁ n. sg. 115, saṁbaṁdhiyāṁ n. pl. 135 Sk. saṁbandhin Pk. saṁbaṁdhi ext. in OG.

संबंधिवउ *saṁbaṁdhivau* "should be related" ger. (denominative) dir. sg. m. 513 OG. saṁbaṁdha- (v. s. v. saṁbaṁdhiu) as a verbal stem.

संभउ *saṁbhau* proper noun m. dir. sg. 110.

संभवइं *saṁbhavaiṁ* "likely to happen, develop, to produce" v. pres. 3rd pl. 433, saṁbhāviu caus. past part. m. dir. sg. 461, saṁbhāvitau pass. pres. part m. dir. sg. 110, saṁbhāvi abs. 534, Sk. saṁbhavati, Pk. saṁbhavai, lw. Pk.

संभार *saṁbhāra* "goods, stuff" sub. m. dir. sg. [illegible] Sk. saṁbhāraḥ Pk. saṁbhāro m. 'collection', v. s. v. saṁbhārai

[illegible] *[illegible]* "having attained, prevailed" abs. [illegible] Sk. [illegible], [illegible] OG. abs. [illegible]

[illegible] *saṁvacharia* "annual" sub. adj. 241; Sk. saṁvatsara-, saṁvatsarika, Pk. saṁvaccha-riya- lw. Pk.

[illegible] *[illegible]* "I praise" v. pres. 1st sg. 414; [illegible] pres. part m. dir. sg. 110, lw. Sk. [illegible], [illegible] + OG verbal [illegible]

[illegible] *saṁhari* "having destroyed, withdrawn" abs. [illegible] Sk. saṁharati Pk. saṁharai, lw. saṁhara- + OG abs. suffix

साईं *sāiṁ* "meet cordially, embrace" sub. inst. sg. 446, also sāīe inst. 578; ety. not clear. cf. Sk. sajātiḥ 'belonging to the same family', see Turner sāinu.

सांचरतउं *sāṁcaratauṁ* "moving, going" pres. part m. dir. sg. 376, Sk. sañcarati, Pk. saṁcarai.

सांढि *sāṁḍhi* "female camel" sub. f. dir. sg. 311, 558; Sk. saṇḍhikā, Pk. saṇḍhī, OG. sāṁḍhi, MG. sā̃ḍh m. 'uncastrated bull' should be separated from sā̃ḍh, sā̃ḍhṇī f. female camel'. The former is related to Sk. ṣaṇḍaḥ 'uncastrated'; the source of latter is not clear. Sk. saṇḍhikā is a sanskritization of Pk. saṇḍhī (hence short -i in OG and -zero in MG.). Bloch sā̃ṛ, Turner sā̃ṛ

सांधिउ *sāṁdhiu* "having connected, aimed" past part. loc. sg. 453, Sk. saṁdadhāti Pk. saṁdhāi OG. sāṁdhai, sāṁdhiu. Bloch sā̃dh, Turner sā̃dhnu.

सांपडिउ *sāṁpaḍiu* "attained" past part. m. dir. sg. 461 Sk. *saṁpatita- cf. Sk. saṁpatati v. s. v. paḍai, Bloch sā̃paṛṇẽ.

सांभरइ *sāṁbharai* "remembers" v. pres. 3rd sg. 326, 345, sāṁbharaiṁ 3rd pl. 604; sāṁbharũ 1st sg. 345; sāṁbharatā pres. part. obl. 341 sāṁbhari past part. f. 604, Sk. saṁharati 'collects', saṁbhārayati, Pk. saṁbhārei 'garnishes'; MG. sambhārvũ 'to remember' and sambhār 'masala used in cooking preparations', Turner saṁālnu, sambhārnu.

सांभलइ *sāṁbhalai* "hears, listens" v. pres. 3rd sg. 429, 529; sāṁbhalau imp. 2nd pl. 329; sāṁbhalata pres. part. (unenlarged [illegible]); sāṁbhalatau pres. part. m. dir. sg. 426, sāṁbhalatā obl. pl. 126, saṁbhaliu past part. m. dir. sg. 367, 519; sāṁbhaliuṁ n. sg. 109, sāṁbhaliyai pass. sg. 137, 420, sāṁbhaliyaiṁ pass. pl. 371; sāṁbhalivā inf. of purpose 426; sāṁbhali abs. 85, 109, 408. cf. MG bhāḷvũ 'to observe, see', nihāḷvũ 'to see', sā̃bhaḷvũ 'to hear', sambhāḷvũ 'to guard, take care of'. Sk. bhalayate, nirbhālayati and sambhālayati. For -r- forms in MG sambhārvũ, sambhār, see under sāmbharai. Turner sambhinu, niyalnu, sambhārnu

[illegible] *[illegible]* proper noun m. dir. sg. 523

सिंह *siṁha* proper noun m. dir. sg. 447.

सींचइ *sīṁcai* "sprinkles" v. pres. 3rd sg. 531, [illegible] pres. part m. dir. sg. 547 Sk. siñcati, Pk. [illegible] Bloch [illegible], Turner [illegible]

[illegible] *[illegible]* "rock-salt" sub. dir. sg. n. [illegible] Sk. saindhava- Pk. siṁdhava-

सुंचलु *suṁcalu* "a type of salt" sub. dir. sg. n. 20. MG saṁcal; De. suṁcalu–. Initial -uṁ-> -a- in MG cannot be explained.

सुंठी *suṁṭhi* "ginger" sub. f. sg. 314. also suṁṭhī 291. Sk. śuṇṭhiḥ, śuṇṭhī 'dry ginger'. Pk. suṇṭhī, MG. sūṭh; final -ī in OG. may be a prakritic influence. Bloch sū̃ṭ, Turner suṭho.

स्तवउं *stavauṁ* "I praise" v. pres. 1st sg. 377; stavisiī fut. 3rd sg. 622; stavītai pass. pres. part. loc. sg. 80; lw. Sk. stava + OG. verbal inflection.

स्मसानि *smasāni* "to the burial ground" sub. n. loc. sg. lw. Sk. śmaśānáṁ., OG. smasān + loc. sg. suffix -i.

स्वाध्याउ *svādhyāu* "meditation, study." sub. m. dir. sg (v. l. svādhyāya) 109. lw. Sk. svādhyāyaḥ, svādhyāya- (for final -u in OG. cf. Sk. vinaya- lw. in OG. vinau MG. vano, Sk. śatruñjaya- lw. in OG. śatruṁjau MG. śatruṁjo, etc.)

*

हउं *hauṁ* "I" 1st pers. pro. nom. sg. m. f. (v. l. huṁ, hau, hūṁ) 74, 85; Sk. ahám, Pk. ahaṁ, ahaaṁ. Initial a- before h- develops as a murmured vowel in MG. hũ.

हकारइ *hakārai* "calls, invites" v. pres. 3rd sg. 403; also hakārei (v. l.) 544. Sk. lex. hakkāra 'making of the sound hak', onomat. sound of calling. Pk. hakkārei, hakkārai; MG. haṁkārvũ 'to drive'; also cf. MG. hāk f. 'call, shout, challenge'. Bloch hā̃kṇẽ, Turner hā̃knu, hakārnu.

हडि *haḍi* "wooden fetters" sub. f. dir. 402. Sk. haḍiḥ m., Pk. haḍi m., OG. haḍi f. MG. heṛ f.

हथियारु *hathiyāru* "weapon" sub. n. dir. sg. 529. Sk. *hasta-kāra- Pk. hatthiyāra- n. Turner hatiyār.

हथूंडू *hathūṁḍū* "hammer" sub. dir. sig. m. 213. Sk. *hasta-kūṭa-; (Sk. hástaḥ and kū́ṭam 'mallet' Pk. kūḍa) Pk. *hattha-ūḍa-, MG. hathoro. Nasalisation in OG. cannot be explained. Turner hotro.

हरइ *harai* "takes away, robs" v. pres. 3rd sg; harivā inf. of purpose 7. Sk. hárati, Pk. harai. Bloch harṇẽ, Turner harnu.

हरषिउ *harasiu* "pleased" past part. m. dir. sg. 429. harasiyā (v. l. harṣiyā) pl. 142. Sk. hárṣati, harṣita; MG. harakh indicates that -ṣ- should be interpreted as -kh- and hence the intervening stage *hariṣai, *hariṣiu should be independent of the Pk. harisia.

हरियालु *hariyālu* "sulphuret of arsenic, yellow orpiment" sub. dir. sg. m. 20 Sk. haritāla- m., Pk. hariāla- m. n.

हलावउं *halāvauṁ* "cause to shake, move" v. caus. pres. 1st sg. 309. Pk. hallai. MG. halvũ; but cf. Hindi hilnā, Panjabi hillaṇā; Dravidian origin is suggested. Bloch hālṇẽ, Turner hilnu, hallinu.

हरिदत्त *haridatta* proper noun m dir. sg. 425.

हलयउ *halayau* "light (of weight)" adj. dir. sg. m. 602. Probably the text should be haluyau; cf. MG haḷvo Sk. laghuḥ, laghukaḥ, Pk. lahua-, halua-, Bloch suggests Dravidian origin Bloch halū. Turner haluko, halaũ.

हव *hava* "now" adv. 452, 590, (v. l. hiva) 480; MG. have; cf B and other Bihari dialects ab, abe, abai etc. Absence of -b- forms in the western group leads Chatterji (ODBL p 856) to suggest Sk. evám, Pk evvam; for the a- of the demonstrative base cf Sk. asau, adyā, átra etc. h- in Guj cannot be explained, but it may be analogical extension of Sk. adhunā, Pk. ahuṇā MG. hamṇā̃ OG. alternant hiva with -i- in the initial syllable is properly explained by Pk. evvam; also OG. havaḍāṁ- hivaḍāṁ are explained as extended forms of hava-. Thus, MG. hamṇā̃ and havṛā̃, havṛe (dialectal) should be kept apart

हवडा *havaḍā* "just now" adv. 142, also havaḍāṁ 465, 573. for der s. v. hava.

हसतउ *hasatau* "laughing, jesting" pres. part. m. dir. sg. 223, 514, 530. Sk. hasati. Pk. hasai; Bloch hasṇẽ. Turner hā̃snu.

हस्तिपुर *hastipura* proper noun m. dir. sg. 461.

हाकिउ *hākiu* "drove out" past part. m. dir. sg. 428. Pk. hakkā f. "call"; MG. hā̃kvũ to drive; s. s. v. hakārai.

हाट *hāṭa* "shop" sub. sg 386, 478, also haṭṭa 478; Sk haṭṭaḥ m. 'market', lex. haṭṭī f.; Pk. haṭṭa- m. haṭṭiā, haṭṭī f. "small shop', MG. hāṭ f. n. Turner hāṭ

हाडु *hāḍu* "bone" sub. n. dir. sg 245 MG hāṛ n. 'bone' Pk. De. haḍḍa; Bloch suggests connection with Sk. ásthi n. 'bone', asthi f. 'kernel of fruit', asthila f. 'round pebble', but -ṣṭha- > -ḍḍa- cannot be explained. Bloch hāṛ, Turner hā̃ṛ.

हाथ *hātha* "hand" sub. m dir sig 58; hāthi inst. sg 558, 559; also loc sg. 545; hāthe inst. pl. 463; also loc. pl. 10; Sk. hástaḥ. Pk. hattha-, Bloch hāt, Turner hāt.

संतावइ *saṁtāvai* " troubles, harasses " v. caus. pres. 3rd sg. 526. Sk samtāpayati Pk. samtāvei. MG. satāvvũ; note the loss of nasal in most of NIA languages. Turner satāunu.

संथारउ *saṁthārau* " a bed (of a monk), place where the monks live " sub. m. dir sg. 541, samthārai loc. sg. 323; samthārā obl. 338; MG sãthro ' bed on which a person is placed before death'; Sk. samstāra–, Pk. samthār, OG. ext.

संदिसावउं *saṁdisāvauṁ* " I get permission " v. caus. pres. 1st sg. 342; Sk. samdiśati, Pk. samdisai, caus. samdisāvei.

संदेसउ *saṁdesau* " message " sub. dir. sg. m. 192. Sk. samdeśa– Pk. samdesa– ext. in OG.

संधूखण *saṁdhūṣaṇa* " act of lighting (fire) " sub. n. 440; note OG. –ṣ– for –kh–. Sk. samdhukṣaṇa– Pk. saṁdhukkhana–.

संनिवेसि *saṁnivesi* " in the residence " sub. m loc. sg. 112. Sk. samniveśa– Pk. samnivesa–.

संपजइ *saṁpajai* " succeeds, prospers. accrues " v. pres. 3rd sg. 588. Sk sampadyate Pk. sampajjai.

संबंधिउ *saṁbaṁdhiu* " relative " sub. m. dir. sg. 16, 519; sambamdhium n. sg. 115; sambamdhiyāṁ n. pl. 135. Sk. sambandhin Pk. sambaṁdhi ext. in OG.

संबंधिवउ *saṁbaṁdhivau* " should be related " ger. (denominative) dir. sg. m. 513. OG. sambamdha– (v. s. v. sambamdhiu) as a verbal stem.

संभव *saṁbhava* proper noun m. dir. sg. 110.

संभवइं *saṁbhavaiṁ* " likely to happen, develop; to produce " v. pres. 3rd pl. 433; sambhāviu caus. past part. m. dir. sg. 461; sambhāvitau pass. pres. part m. dir. sg. 110; sambhāvī abs. 534. Sk. sambhavati, Pk. saṁbhavai, lw. Pk.

संभारु *saṁbhāru* " goods, stuff " sub. m. dir. sg. 463. Sk. sambhārah Pa. sambhāro m. ' collection '. v. s. v. sāmbharai.

संभूषी *saṁbhūṣī* " having adorned, provided " abs. 547. lw. Sk. sambhūṣati, sambhūṣ– + OG. abs. suffix.

संवच्छरिय *saṁvacchariya* " annual " sub. adj. 385; Sk. saṁvatsara–, sāṁvatsarika. Pk. samvaccha-riya– lw. Pk.

संस्तवउं *saṁstavauṁ* " I praise " v. pres. 1st sg. 614; saṁstavatau pres. part. m. dir. sg. 110. lw. Sk. saṁstavate, samstav + OG. verbal suffixes.

संहरि *saṁhari* " having destroyed, withdrawn " abs. 463. Sk. saṁharati Pk. samharai, lw. saṁhar– + OG. abs. suffix.

सांइं *sāiṁ* " meet cordially, embrace " sub. inst. sg. 446, also sāiṁ inst. 578; ety. not clear. cf. Sk. sajātih ' belonging to the same family ', see Turner sāinu.

सांचरतउं *sāṁcaratauṁ* " moving, going " pres. part m dir. sg. 376. Sk. sañcarati, Pk. samcarai.

सांढि *sāṁḍhi* " female camel " sub. f. dir. sg. 311, 558; Sk. sandhikā. Pk. saṇḍhī, OG. sāṁḍhi, MG. sā̃ḍh m. ' uncastrated bull ' should be separated from sā̃ḍh, sā̃ḍhṇī f. female camel '. The former is related to Sk. śaṇḍah ' uncastrated '; the source of latter is not clear Sk. saṇḍhikā is a sanskritization of Pk. saṇḍhi (hence short -i in OG. and –zero in MG.). Bloch sā̃ḍ, Turner sā̃ḍ

सांधिइ *sāṁdhii* " having connected, aimed " past part. loc. sg. 453. Sk. saṁdadhāti Pk. samdhāi OG. sāṁdhai, sāṁdhiu. Bloch sā̃dh, Turner sā̃dhnu.

सांपडिउ *sāṁpaḍiu* " attained " past part. m. dir. sg. 461. Sk. *sampatita– cf. Sk. saṁpatati. v. s. v. paḍai. Bloch sā̃paṛṇẽ.

सांभरइ *sāṁbharai* " remembers " v. pres. 3rd sg. 326, 345; sāmbharaim 3rd pl. 604; sāmbharūṁ 1st sg. 345; sāmbharatā pres. part. obl. 345. sāmbharī past part. f. 604. Sk. sáṁbharati ' collects ', śambhārayati, Pk. sambhārei ' garnishes '; MG. sambhārvũ ' to remember ' and sambhār 'masala used in cooking preparations'. Turner samālnu, sambhārnu.

सांभलइ *sāṁbhalai* " hears, listens " v. pres. 3rd sg. 429, 529; sāmbhalau imp. 2nd pl. 329; sāmbhalata pres. part. (unenlarged 86); sāṁbhalatau pres. part. m. dir. sg. 426, sāmbhalatā obl. pl. 426; sāmbhaliu past part. m. dir. sg. 307, 519; sāmbhalium n. sg. 109, sāṁbhaliyai pass. sg. 157, 420, sāmbhaliyaiṁ pass. pl. 371; sāṁbhalitū pass. pres. part. m. sg. 326; sāṁbhalivā inf. of purpose 426; sāṁbhalī abs. 85, 109, 408. cf. MG. bhāḷvũ ' to observe, see ', nihāḷvũ ' to see ', sā̃bhaḷvũ ' to hear ', sambhāḷvũ ' to guard, take care of '. Sk. bhālayate, nibhālayati and sambhālayati. For –r– forms in MG. sāṁbhārvũ, sambhār, see under sāmbharai. Turner samālnu, niyālnu, sambhārnu.

सिंहदत्तु *siṁhadattu* proper noun m. dir. sg. 525.

सिंहु *siṁhu* proper noun m dir. sg. 487.

सींचइ *sīṁcai* " sprinkles " v. pres. 3rd sg. 521; sīṁcatau pres. part m. dir. sg. 549. Sk. siñcáti, Pk. siñcai. Bloch sĩcṇẽ, Turner sĩcnu.

सींधवु *sīṁdhavu* " rock-salt " sub. dir. sg. n. 29. Sk. saindhava– Pk. siṁdhava–.

सूंचलु *sūṁcalu* "a type of salt" sub. dir. sg. n. 20. MG. saṁcaḷ; De. suṁcalu–. Initial -um-> -a- in MG. cannot be explained.

सूंठि *sūṁṭhi* "ginger" sub. f. sg. 314. also sumthī 291. Sk. śuṇṭhiḥ, śuṇṭhī 'dry ginger'. Pk. suṇṭhī, MG. sũṭh; final -ī in OG. may be a prakritic influence. Bloch sũṭ, Turner suṭho.

स्तवउं *stavauṁ* "I praise" v. pres. 1st sg. 377; stavisii fut. 3rd sg. 622; stavītai pass. pres. part. loc. sg. 80; lw. Sk. stava + OG. verbal inflection.

स्मसानि *smasāni* "to the burial ground" sub. n. loc. sg. lw. Sk. śmaśānáṁ., OG. smasān + loc sg. suffix -i.

स्वाध्याउ *svādhyāu* "meditation, study." sub. m. dir. sg (v. l. svādhyāya) 109. lw. Sk. svādhyāyaḥ, svādhyāya– (for final -u in OG. cf. Sk. vinaya- lw. in OG. vinau MG. vano, Sk. śatruñjaya- lw. in OG. śatruṁjau MG. satrumjo, etc.)

*

हउं *hauṁ* "I" 1st pers. pro. nom. sg. m. f. (v. l. huṁ, hau, hūṁ) 74, 85; Sk. ahám, Pk. aham, ahaaṁ. Initial a- before h- develops as a murmured vowel in MG. hũ.

हकारइ *hakārai* "calls, invites" v. pres. 3rd sg. 403; also hakārei (v. l.) 544. Sk. lex. hakkāra 'making of the sound hak", onomat. sound of calling Pk. hakkārei, hakkārai; MG hamkārvũ 'to drive'; also cf. MG. hāk f. 'call, shout, challenge'. Bloch hā̃kṇẽ, Turner hā̃knu, hakārnu.

हडि *haḍi* "wooden fetters" sub. f. dir. 402. Sk. hadih m., Pk. hadi m., OG. hadi f. MG. heṛ f.

हथियारु *hathiyāru* "weapon" sub. n. dir. sg. 529. Sk. *hasta-kāra- Pk. hatthiyāra- n Turner hatiyār.

हथूंडू *hathūṁḍū* "hammer" sub. dir. sig. m. 213. Sk. *hasta-kūṭa-; (Sk. hástaḥ and kū́ṭam 'mallet' Pk. kūḍa) Pk. *hattha-ūḍa-. MG. hathoṛo, Nasalisation in OG. cannot be explained. Turner hotro.

हरइ *harai* "takes away, robs" v. pres. 3rd sg; harivā inf. of purpose 7. Sk. hárati, Pk. harai. Bloch harṇẽ, Turner harnu.

हरखिउ *haraṣiu* "pleased" past part. m. dir. sg. 429. haraṣiyā (v. l. harṣiyā) pl. 142. Sk. hárṣati, harṣita; MG. harakh indicates that -ṣ- should be interpreted as -kh- and hence the intervening stage *hariṣai, *harisiu should be independent of the Pk. harisia.

हरियालु *hariyālu* "sulphuret of arsenic, yellow orpiment" sub. dir. sg. m. 20. Sk. haritāla- m., Pk hariāla- m. n.

हलावउं *halāvauṁ* "cause to shake, move" v. caus. pres. 1st sg. 309. Pk. hallai. MG. halvũ; but cf. Hindi hilnā, Panjabi hillanā; Dravidian origin is suggested. Bloch hālṇẽ, Turner hilnu, hallinu.

हरिदत्तु *haridattu* proper noun m dir sg. 425.

हलयउ *halayau* "light (of weight)" adj dir. sg m. 602. Probably the text should be halayau; cf. MG halvo. Sk. laghuḥ, laghukaḥ, Pk. lahua-, halua-; Bloch suggests Dravidian *origin*. Bloch halū, Turner haluko, halaũ.

हव *hava* "now" adv. 452, 590, (v l. hiva) 480; MG. have; cf. [illegible] and other Bihari dialects ab, abe, abai etc. Absence of -b- forms in the western group leads Chatterji (ODBL p. 850) to suggest Sk. evám, Pk evvam; for the a- of the demonstrative base cf. Sk. asau, adyá, átra etc. h- in Guj. cannot be explained, but it may be analogical extension of Sk. adhunā, Pk. ahuṇā MG. hamṇā. OG. alternant hiva with -i- in the initial syllable is properly explained by Pk. evvam; also OG. havaḍām- hivaḍām are explained as extended *forms of* hava-. Thus, MG. hamṇā and havṇā, havṇe (dialectal) should be kept apart

हवडा *havaḍā* "just now" adv. 142, also havaḍām 465, 573. for der s v hava

हसतउ *hasatau* "laughing, jesting" *pres.* part. m. dir. sg. 223, 514, 536. Sk. hasati, Pk. hasai; Bloch hasṇẽ, Turner hā̃snu.

हस्तिपुरु *hastipuru* proper noun m dir. sg. 461.

हाकिउ *hākiu* "drove out" past part. m. dir. sg. 423. Pk hakkā f. "call"; MG hā̃kvũ to drive; v. s v. hakārai.

हाट *hāṭa* "shop" sub. sg. 386, 478, also haṭṭa 178; Sk haṭṭaḥ m 'market'. lex. haṭṭī f.; Pk. haṭṭa- m. haṭṭigā, haṭṭī f. "small shop', MG. hāṭ f. n. Turner hāṭ.

हाडु *hāḍu* "bone" sub. n. dir. sg 245. MG hāṛ n. 'bone' Pk. De. haḍḍa; Bloch suggests connection with Sk. ásthi n. 'bone', aṣṭhi f. 'kernel of fruit', aṣṭhīla f. 'round pebble', but -ṣṭha- > -ḍḍa- cannot be explained. Bloch hāṛ, Turner hāṛ.

हाथ *hātha* "hand" sub. m dir sig 58; hāthi inst sg 558, 559; also loc sg 545; hāthe inst. pl. 463; also loc. pl. 10; Sk. hástaḥ, Pk hattha-. Bloch hāt, Turner hāt.

सूंचलु *sūṁcalu* "a type of salt" sub. dir. sg. n. 20 MG saṁcal; De. suṁcalu–. Initial –aṁ–> –a– in MG. cannot be explained.

सूंठि *sūṁṭhi* "ginger" sub. f. sg. 314. also suṁṭhī 291. Sk. śuṇṭhiḥ, śuṇṭhi 'dry ginger'. Pk. suṇṭhī, MG. sūṭh; final –ī in OG. may be a prakritic influence. Bloch sũṭ. Turner suṭho.

स्तवउं *stavaüṁ* "I praise" v. pres. 1st sg. 377; staviśii fut. 3rd sg. 622; stavitai pass. pres. part. loc. sg. 80; lw. Sk. stava + OG. verbal inflection.

स्मशानि *smaśāni* "to the burial ground" sub. n. loc. sg. lw. Sk. śmaśānám., OG. smasān + loc. sg. suffix –i.

स्वाध्याउ *svādhyāu* "meditation, study." sub. m. dir. sg (v. l. svādhyāya) 109. lw. Sk. svādhyāyaḥ, svādhyāya– (for final –u in OG. cf. Sk. vinaya– lw. in OG. vinau MG. vano, Sk. śatruñjaya– lw. in OG. śatruṁjau MG. satrumjo, etc.)

*

हउं *haüṁ* "I" 1st pers. pro. nom. sg. m. f. (v. l. hum, hau, hūṁ) 74, 85; Sk. ahám, Pk. aham, ahaaṁ. Initial a– before h– develops as a murmured vowel in MG. hũ.

हकारइ *hakāraï* "calls, invites" v. pres. 3rd sg. 403; also hakārei (v. l.) 544. Sk. lex. hakkāra 'making of the sound hak', onomat. sound of calling. Pk. hakkārei, hakkārai; MG. haṁkārvũ 'to drive'; also cf. MG. hāk f. 'call, shout, challenge'. Bloch hā̃kṇẽ, Turner hā̃knu, hakārnu.

हडि *haḍi* "wooden fetters" sub. f. dir. 402. Sk. haḍiḥ m., Pk. haḍi m., OG. haḍi f. MG. heṛ f.

हथियारु *hathiyāru* "weapon" sub. n. dir. sg. 529. Sk. *hasta-kāra– Pk. hatthiyāra– n. Turner hatiyār.

हथूंडउ *hathūṁḍaü* "hammer" sub. dir. sig. m. 213. Sk. *hasta-kūṭa–; (Sk. hástaḥ and kū́ṭam 'mallet' Pk. kūḍa) Pk. *hattha-ūḍa–, MG hathoro. Nasalisation in OG. cannot be explained. Turner hotro.

हरइ *haraï* "takes away, robs" v. pres. 3rd sg; harivā inf. of purpose 7. Sk. hárati, Pk. harai. Bloch harṇẽ, Turner harnu.

हरषिउ *harasiu* "pleased" past part. m. dir. sg. 429. harasiyā (v. l. harsiyā) pl. 142. Sk. hárṣati, harṣita; MG harakh indicates that –s– should be interpreted as –kh– and hence the intervening stage *harisai, *harisiu should be independent of the Pk. harisia.

हरियालु *hariyālu* "sulphuret of arsenic, yellow orpiment" sub. dir. sg. m. 20 Sk. haritāla– m., Pk. hariāla– m. n.

हलावउं *halāvauṁ* "cause to shake, move" v. caus. pres. 1st sg 309. Pk. hallai. MG. halvũ; but cf. Hindi hilnā, Panjabi hillanā; Dravidian origin is suggested. Bloch hālṇẽ, Turner hilnu, hallinu.

हरिदत्तु *haridattu* proper noun m. dir. sg. 425.

हलयउ *halayau* "light (of weight)" adj. dir. sg. m. 602. Probably the text should be haluyau; cf MG. haḷvo. Sk. laghuḥ, laghukaḥ, Pk. lahua–, halua–, Bloch suggests Dravidian origin. Bloch haḷū. Turner haluko, halaū.

हव *hava* "now" adv. 452, 590, (v. l. hiva) 480; MG have; cf H and other Bihari dialects ab, abe, abai etc. Absence of –b– forms in the western group leads Chatterji (ODBL p. 856) to suggest Sk. evám, Pk. evvam; for the a– of the demonstrative base of Sk. asau, adyá, átra etc. h– in Guj. cannot be explained, but it may be analogical extension of Sk. adhunā, Pk. ahuṇā MG hamṇā. OG alternant hiva with –i– in the initial syllable is properly explained by Pk. evvam; also OG. havaḍāṁ– hivaḍāṁ are explained as extended forms of hava–. Thus, MG. hamṇā and havā, have (dialectal) should be kept apart.

हवडा *havaḍā* "just now" adv. 142, also havaḍāṁ 465, 573. for der. s. v. hava.

हसतउ *hasatau* "laughing, jesting" pres. part. m. dir. sg. 223, 514, 536. Sk. hasati. Pk. hasai; Bloch hasṇẽ, Turner hā̃snu.

हस्तिपुरु *hastipuru* proper noun m. dir. sg. 461.

हाकिउ *hākiu* "drove out" past part. m. dir. sg. 428. Pk. hakkā f. "call"; MG. hā̃kvũ to drive; v. s. v. hakāraï.

हाट *hāṭa* "shop" sub. sg. 398, 478, also haṭṭa 478; Sk. haṭṭaḥ m. 'market', lex. haṭṭī f.; Pk. haṭṭa– m. haṭṭiyā. haṭṭī f. 'small shop', MG. hāṭ f. n. Turner hāṭ.

हाडु *hāḍu* "bone" sub. n. dir. sg. 245 MG. hāṛ n. 'bone' Pk. De. haḍḍa; Bloch suggests connection with Sk. ásthi n. 'bone', aṣṭhi f. 'kernel of fruit', aṣṭhilā f. 'round pebble', but –ṣṭha– > –ḍḍa– cannot be explained. Bloch hāṛ, Turner hāṛ.

हाथु *hāthu* "hand" sub. m. dir. sig. 38, hāthi inst. sg. 538, 539; also loc. sg. 545; hāthe inst. pl. 453; also loc. pl. 10; Sk. hástaḥ. Pk. hattha–, Bloch hāt, Turner hāt.

संतावइ *samtāvai* " troubles, harasses " v. caus. pres. 3rd sg. 526. Sk. samtāpayati Pk. samtāvei, MG. satāvvũ; note the loss of nasal in most of NIA languages. Turner satāunu.

संथारउ *saṁthārau* " a bed (of a monk), place where the monks live " sub. m. dir. sg. 541, samthārai loc. sg 323; samthārā obl. 338; MG. sãthro ' bed on which a person is placed before death'; Sk. samstāra-, Pk. saṁthār, OG. ext.

संदिसावउं *saṁdisāvauṁ* " I get permission " v. caus. pres. 1st sg. 342; Sk. samdiśati, Pk. samdisai, caus. samdisāvei.

संदेसउ *saṁdesau* " message " sub. dir. sg. m. 192. Sk. samdeśa- Pk. samdesa- ext. in OG.

संधूषण *saṁdhūṣaṇa* " act of lighting (fire) " sub. n. 440; note OG. -ṣ- for -kh-. Sk. samdhukṣa-ṇa- Pk. saṁdhukkhaṇa-.

संनिवेसि *saṁnivesi* " in the residence " sub. m loc. sg. 112. Sk. samniveśa- Pk. samnivesa-.

संपजइ *saṁpajai* " succeeds, prospers, accrues " v. pres. 3rd sg. 588. Sk. sampadyate Pk. sampajjai.

संबंधिउ *saṁbaṁdhiu* " relative " sub. m. dir. sg. 16, 519; sambamdhium n. sg 115; saṁbamdhi-yāṁ n. pl. 135. Sk. sambandhin Pk. sambaṁdhi ext. in OG.

संबंधिवउ *saṁbaṁdhivau* " should be related " ger. (denominative) dir. sg. m. 513. OG. saṁbam-dha- (v. s. v. sambamdhiu) as a verbal stem.

संभव *saṁbhava* proper noun m. dir. sg. 110.

संभवइं *saṁbhavaiṁ* " likely to happen, develop; to produce " v pres. 3rd pl. 433; sambhāviu caus. past part. m. dir. sg. 461; sambhāvitau pass. pres. part. m. dir. sg. 110; saṁbhāvī abs. 534. Sk. sambhavati, Pk. saṁbhavai, lw. Pk.

संभारु *sambhāru* " goods, stuff " sub. m. dir. sg. 463. Sk. sambhārah Pa. sambhāro m. ' collection '. v. s. v. sāmbharai.

संभूषी *saṁbhūṣī* " having adorned, provided " abs. 515. lw. Sk. sambhūṣati, sambhūṣ- + OG. abs. suffix.

संवच्छरिय *saṁvacchariya* " annual " sub. adj. 385; Sk. saṁvatsara-, sāṁvatsarika. Pk. samvaccha-riya- lw. Pk.

संस्तवउं *saṁstavauṁ* " I praise " v. pres. 1st sg. 614; saṁstavatau pres. part. m. dir. sg. 110. lw. Sk. saṁstavate, samstav + OG. verbal suffixes.

संहरि *saṁhari* " having destroyed, withdrawn " abs. 463. Sk. samharati Pk. samharai. lw. saṁhar- + OG. abs. suffix.

सांईं *sāṁiṁ* " meet cordially, embrace " sub. inst. sg. 446, also sāi inst. 578; ety. not clear. cf. Sk. sajātih ' belonging to the same family ', see Turner sāinu.

सांचरतउं *sāṁcaratauṁ* " moving, going " pres. part m dir. sg. 376. Sk. sañcarati, Pk. samcarai.

सांढि *sāṁḍhi* " female camel " sub. f. dir. sg. 311, 558. Sk. sandhikā, Pk. sandhi, OG. sāmdhi. MG sā̃ḍh m. ' uncastrated bull ' should be separated from sā̃ḍh, sā̃ḍhṇī f. female camel '. The former is related to Sk. śáṇḍah ' uncastrated '; the source of latter is not clear. Sk. saṇḍhikā is a sanskritization of Pk. saṁḍhi (hence short -i in OG. and -zero in MG.). Bloch sā̃ṛ, Turner sā̃ṛ

सांधिइ *sāṁdhii* " having connected, aimed " past part. loc. sg. 453. Sk. samdadhāti Pk. saṁdhāi OG. sāmdhai, sāmdhiu. Bloch sā̃dh, Turner sā̃dhnu.

सांपडिउ *sāṁpaḍiu* " attained " past part. m. dir. sg. 461. Sk. *sampatita- cf. Sk. saṁpatati, v. s. v. paḍai. Bloch sā̃paṛṇẽ.

सांभरइ *sāṁbharai* " remembers " v. pres. 3rd sg. 320, 345; sāmbharaiṁ 3rd pl. 604; sāmbharūṁ 1st sg. 345; sāmbharatā pres. part. obl. 345. sāmbhari past part. f. 604. Sk. sáṁbharati ' collects ', sambhārayati, Pk. sambhārei ' garnishes '; MG. sambhārvũ ' to remember ' and sambhār 'masala used in cooking preparations'. Turner samālnu, sambhārnu.

सांभलइ *sāṁbhalai* " hears, listens " v. pres. 3rd sg. 429, 529; sāmbhalau imp. 2nd pl. 329; sāmbha-lata pres. part. (unenlarged [illegible]); sāmbhalatau pres. part. m. dir. sg. 426, sāmbhalatā obl. pl. 426; sāṁbhaliu past part. m. dir. sg. 367, 519; sāmbhaliuṁ n. sg. 109; sāṁbhaliyai pass. sg. 157, 420, sāmbhaliyaiṁ pass. pl. 371; sāṁbhalitū pass. pres. part. m. sg. 326; sāṁbhalivā inf. of purpose 426; sāṁbhalī abs. 85, 109, 498. cf. MG. bhāḷvũ ' to observe, see ', nihāḷvũ ' to see ', sā̃bhaḷvũ ' to hear ', sambhāḷvũ ' to guard, take care of '. Sk. bhālayate, nibhālayati and sam-bhālayati. For -r- forms in MG. sambhārvũ, sambhār, see under sāmbharai. Turner samālnu, niyālnu, sambhārnu.

सिंहदत्तु *siṁhadattu* proper noun m. dir. sg. 523.

सिंहु *siṁhu* proper noun m. dir. sg. 487.

सींचइ *sīṁcai* " sprinkles " v. pres. 3rd sg. 521; sīṁcatau pres. part m. dir. sg. 519. Sk. siñcáti, Pk. siñcai. Bloch sĩcṇẽ, Turner sĩcnu.

सींधवु *sīṁdhavu* " rock-salt " sub. dir. sg. n. 20. Sk. saindhavá- Pk. siṁdhava-.

सूंचलु *sūṃcalu* "a type of salt" sub. dir. sg. n. 20. MG saṃcal; De. sumcalu-. Initial -um-> -a- in MG. cannot be explained.

सूंठि *sūṃṭhi* "ginger" sub. f. sg. 314. also suṃṭhi 291. Sk. śuṇṭhiḥ, śuṇṭhi 'dry ginger'. Pk. suṇṭhī, MG. sūṭh; final -i in OG. may be a prakritic influence. Bloch sū̃ṭ. Turner sutho.

स्तवउं *stavauṃ* "I praise" v. pres. 1st sg. 377; stavisii fut. 3rd sg. 622; stavitai pass. pres. part. loc. sg. 80; lw. Sk. stava + OG. verbal inflection.

स्मशानि *smaśāni* "to the burial ground" sub. n. loc. sg. lw. Sk. śmaśānaṁ., OG. smaśān + loc sg. suffix -i.

स्वाध्याउ *svādhyāu* "meditation, study." sub. m. dir. sg (v. l. svādhyāya) 109. lw. Sk. svādhyāyaḥ, svādhyāya- (for final -u in OG. cf. Sk. vinaya- lw. in OG. vinau MG. vano, Sk. śatruñjaya- lw. in OG. śatrumjau MG. śatrumjo, etc.)

*

हउं *hauṃ* "I" 1st pers. pro. nom. sg. m. f. (v. l. hum, hau, hūṃ) 74, 85; Sk. ahám, Pk. aham. ahaṁ. Initial a- before h- develops as a murmured vowel in MG. hũ.

हकारइ *hakārai* "calls, invites" v. pres. 3rd sg. 403; also hakārei (v. l.) 544. Sk. lex. hakkāra 'making of the sound hak", onomat. sound of calling. Pk. hakkārei, hakkārai; MG. haṃkārvũ 'to drive'; also cf. MG. hā̃k f. 'call, shout, challenge'. Bloch hā̃knẽ, Turner hā̃knu, hakārnu.

हडि *haḍi* "wooden fetters" sub. f. dir. 402. Sk. haḍiḥ m., Pk. haḍi m., OG. haḍi f. MG. heṛ f.

हथियारु *hathiyāru* "weapon" sub. n. dir. sg. 529. Sk. *hasta-kāra- Pk. hatthiyāra- n. Turner hatiyār.

हथूंडु *hathūṃḍu* "hammer" sub. dir. sig. m. 213. Sk. *hasta-kūṭa-; (Sk. hástaḥ and kū́ṭam 'mallet' Pk. kūḍa) Pk. *hattha-ūḍa-. MG. hathoṛo. Nasalisation in OG. cannot be explained. Turner hotro.

हरइ *harai* "takes away, robs" v. pres. 3rd sg; harivā inf. of purpose 7. Sk. hárati, Pk. harai. Bloch harṇẽ, Turner harnu.

हरषिउ *harașiu* "pleased" past part. m. dir. sg. 429. harașiyā (v. l. harṣiyā) pl. 142. Sk. hárṣati, harṣita; MG. harakh indicates that -ṣ- should be interpreted as -kh- and hence the intervening stage *harișai, *harișiu should be independent of the Pk. harisia.

हरियालु *hariyālu* "sulphuret of arsenic, yellow orpiment" sub. dir. sg. m. 20. Sk. haritāla- m., Pk. hariāla- m. n.

हलावउं *halāvauṁ* "cause to shake. move" v. caus pres. 1st sg 309. Pk. hallai. MG. halvũ; but cf. Hindi hilnā, Panjabi hillanā; Dravidian origin is suggested. Bloch hālnẽ, Turner hilnu, hallinu.

हरिदत्तु *haridattu* proper noun m. dir. sg. 425.

हलयउ *halayau* "light (of weight)" adj. dir sg. m. 602. Probably the text should be haluyau; cf. MG. haḷvo Sk. laghuḥ, laghukaḥ, Pk. lahua-, halua-, Bloch suggests Dravidian origin. Bloch haḷũ. Turner haluko, halaũ.

हव *hava* "now" adv. 452, 590, (v. l. hiva) 480; MG. have; cf. ▪ and other Bihari dialects ab, abe, abai etc. Absence of -b- forms in the western group leads Chatterji (ODBL p 856) to suggest Sk. evám, Pk. evvam; for the a- of the demonstrative base cf. Sk. asaú, adyá, átra etc. h- in Guj. cannot be explained, but it may be analogical extension of Sk. adhunā, Pk. ahuṇā MG. hamṇā. OG. alternant hiva with -i- in the initial syllable is properly explained by Pk. evvam; also OG. havaḍāṃ- hivaḍāṃ are explained as extended forms of hava-. Thus, MG. hamṇā and havṛā, havṛe (dialectal) should be kept apart.

हवडा *havaḍā* "just now" adv. 142, also havaḍāṃ 465, 573. for der s v hava.

हसतउ *hasatau* "laughing, jesting" pres. part. m. dir. sg 223, 514, 536. Sk. hasati, Pk. hasai; Bloch hasṇẽ, Turner hā̃snu.

हस्तिपुरु *hastipuru* proper noun m. dir. sg. 461.

हाकिउ *hākiu* "drove out" past part. m. dir. sg. 428. Pk. hakkā f. "call"; MG. hā̃kvũ to drive; v. s. v. hakārai.

हाट *hāṭa* "shop" sub. sg. 386, 478, also haṭṭa 478; Sk. haṭṭaḥ m. 'market', lex. haṭṭī f.; Pk. haṭṭa- m. haṭṭiyā, haṭṭī f. "small shop', MG. hāṭ f. n. Turner hāṭ.

हाडु *hāḍu* "bone" sub. n. dir. sg 245. MG. hāṛ n. 'bone' Pk. De. haḍḍa; Bloch suggests connection with Sk. ásthi n. 'bone', asthiḥ f. 'kernel of fruit', aṣṭhīla f. 'round pebble', but -ṣṭh- > -ḍḍa- cannot be explained. Bloch hāṛ, Turner hāṛ.

हाथ *hātha* "hand" sub. m. dir. sig. 38; hāthi inst. sg. 538, 559; also loc sg. 545; hāthe inst. pl. 463; also loc. pl. 10; Sk. hástaḥ. Pk. hattha-. Bloch hāt, Turner hāt.



सुरेगु *suregu* proper noun m. dir. sg. 430.

सुसइ *susai* "dries" v. pres. 3rd sg. 516. short -u- in initial syllable may be graphic. Sk. śúṣyati Pk. sussai (Sk. śoṣáyati, Pk. sosei, MG. sos-vũ).

सुसरउ *susarau* "father-in-law, wife's or husband's father" sub. m. dir. sg. 556. Sk. śváśuraḥ, Pk. sasura- ext. in OG. sasurau, initial -u- may be graphic, or assimilatory. MG. *sasro*. v. s. v. sasura. Bloch sāsrā, Turner sasuro.

सुहु *suhu* "joy, happiness" sub. n. dir. sg. 432. Sk. sukhám Pk. suhaṁ OG. suh-u.

सूकइ *sūkai* "dries" v. pres. 3rd sg. 309. Sk. śuṣkaḥ Pk. sukkha-, sukka-. Bloch sukā, Turner suko, suknu.

सूकवणु *sūkavaṇu* "drying - action of-" sub. n. dir. sg. 12. v. s. v. sūkai.

सूकी *sūkī* "dry" adj. f. 601. v. s. v. sūkai. OG. sūk- + feminine suffix -ī.

सूग *sūga* "disgust, dislike" sub. f. dir. sg. 435. cf. MG. sūg. f. der. not known.

सूचिउ *sūciu* "suggested, indicated" past part. m. dir. sg. 501; sūcavevauṁ caus. gen. n. sg. 10; sūcavevāṁ n. pl. 10. Sk. sūcyate, sūcayati.

सूझइ *sūjhai* "purifies, becomes clear" v. pres. 3rd sg. 13, 172, 230; sūjhavī caus. abs. 484. Sk. śudhyati Pk. sujjhai. Turner sujhnu.

सूणी *sūṇī* "swollen" past part. f. dir. sg. 521. Sk. śūyate, śūnáḥ (cf. śūnyá- originally 'hollowness, emptiness' MG. sūn) Pk. sūn- sūṇa-. MG. sujvũ, sunvũ. Bloch sunā, Turner sujnu.

सूतउ *sūtau* "sleeping" adj. past part. m. dir. sg. 447, 482; sūtā obl. sg. 446; sūtai loc. sg. 481; sūte inst. sg. 269. Sk. suptáḥ Pk. sutta. Turner sutnu.

सूत्रधार *sūtradhāra* "carpenter" sub. m. 408. lw. Sk.

सूदणकरण *sūdanakaraṇa* "act of cutting, arranging, trimming" sub. n. sg. 440. lw. Sk. sūdana- + karana.

सूयइ *sūyai* "sleeps" v. pres. 3rd sg. 163; sūīyai pass. sg. 259; sūyārī caus. abs. 25. Sk. svápati, Pk. suvai, MG. suvũ. Turner sutnu.

सूयडउ *sūyaḍau* "parrot" sub. m. dir. sg. 463. Sk. śuka- Pk. sua- ext. -ḍau, MG. suṛo.

सूर *sūra* proper noun m. dir. sg. 445.

सूरण *sūraṇa* "a vegetable which grows under the ground" sub. n. dir. sg. 288. MG. sūraṇ. Der. not known.

सूरता *sūratā* "heroism" sub. f. sg. 48. Sk. śūraḥ Pk. sūra, OG. sūra + tā.

सूर्य *sūrya* proper noun m. dir. sg. 464.

सेउ *seu* "perspiration" sub. dir. sg. m. 309. Sk. svedaḥ Pk. seo, seu; MG. parsevo 'perspiration' Sk. prasvedaḥ, OG. *paraseu, replaced by parseo.

सेठि *seṭhi* "merchant, businessman (rich)" sub. m. obl. sg. 432, 548. Sk. śreṣṭhī Pk. seṭṭhi MG. śeṭh. Bloch set Turner seth[1].

सेतिका *setikā* "a type of measure, more common as Jain theological term" sub. f. 459. lw. Sk. (not found in MW); Pk. seigā, seiā.

सेव *seva* "service" sub. f. dir. sg. (v. l. sevā) 432. Sk. sevā Pk. sevā.

सेवाली *sevālī* proper noun m. dir. sg. 109.

सेवालाहारी *sevālāhārī* "one who lives by eating sevāla- sea weeds-" adj. m. dir. sg. 109. lw. Sk. sevāla + āhārin.

सेविउ *seviu* "served" past part. m. dir. sg. 516; sevatau pres. part. m. dir. sg. 222; seviyai pass. sg. 516. Sk. sevate Pk. sevai.

सोधउं *sodhauṁ* "find" v. pres. 1st pl. 456. sodhatau pres. part. m. dir sg. 382; sodhī abs. 325; cf. Sk. *śuddha-*, śóddhum, which might have developed as the NIA stem *sodh-*; or this may be a lw. fr. Sk. śodháyati, to avoid confusion with soh- from śobhate. see Turner sodhnu.

सोल *sola* "sixteen" num. dir. sg. 74. Sk. ṣoḍaśa, Pk. solasa, solaha. Bloch soḷā, Turner sora.

सोलमा *solamā* "sixteenth" ord. obl. 222; solamai loc. sg. 355, OG. sola + mau. v. s. v. sola.

सोसियकाय *sosiyakāya* "whose bodies have withered, emaciated" adj. m. dir. pl. 110. Sk. śoṣita-kāya-, Pk. sosia + kāya; lw. Pk.

संकोडी *saṁkoḍī* "having reduced, shrunk" abs. 532. Sk. *saṁkṛta- 'put together'; sáṁkṛtiḥ f. 'bringing together'; cf. Pa. saṁkuṭito 'shrivelled, shrunk' Pk. saṁkuḍa-, saṁkoḍa- 'contraction'.

संक्रमाविया *saṁkramāviyā* "caused to move" past part. of the causal base m. pl. 22. lw. Sk. saṅkram- + OG. āv- ia.

संघाडउ *saṁghāḍau* "pair, couple" sub. m. dir. sg. 435. Sk. saṁghāṭa- Pk. saṁghāḍa- ext. OG.

संजम *saṁjama* "control, restraint" sub. m. dir. sg. 573; Sk. saṁyama- Pk. saṁjama- lw. Pk.

संजमसूरि *saṁjamasūri* proper noun m. dir. sg. 484.

संडासा *saṁḍāsā* "sides (two sides-right and left- of the body, Jain theological term)" sub. obl. pl. m. 160, 326; cf. MG. sā̃ḍso, sā̃so 'pincers', the sides of the pincers have given a different meaning in this context 'having wiped the sides' saṁḍāsā paḍilehī; Sk. saṁdaṁśa-, Pk. saṁḍāsa-. Turner sanāso.

शकटापिता *śakaṭāpitā* "father of one seated in a bullock-cart" sub. m. dir. sg. 94. lw. Sk. śakaṭā- pitā.

शकटाल *śakaṭāla* proper noun m. dir. sg. 435.

शत्रुंजउ *śatrumjau* proper noun m. dir. sg. 435.

शाश्वतां *śāśvatām* "perpetual. eternal" adj. n. pl. 614. lw. Sk. śāśvatá-.

शीकउ *śīkau* "a shelf generally hung in the kitchen in which remains of cooked food are kept" sub. n. dir. sg. (v. l. chīkaum) 434. Ved. Sk. śikyám 'a kind of loop or swing made of rope and suspended from either end of a pole or yoke to receive a load', Pk. sikkaya-, MG. sikũ, chikũ (dialectal); Bloch sikẽ, Turner sikoṭ.

शीतल *sītala* proper noun m. dir. sg. 110.

शीतलु *śītalu* proper noun m. dir. sg. 112.

शुद्धबुद्धि *suddhabuddhi* proper noun m. dir. sg. 516.

शोचतउ *śocatau* "lamenting" pres. part. dir. sg. m 590; lw. Sk. suc-, soca- + tau.

शोपु *śopu* "swelling" sub. m. dir. sg. 521. cf. Sk. sopha- m. 'morbid swelling, tumour'.

शंकर *śamkara* proper noun m. dir. sg. 559.

शंख *śamkha* "conch" sub. m. 21. lw. Sk.

शांति *śāmti* proper noun m. dir. sg. 110.

शृंगारसुंदरी *śrmgāra sumdarī* proper noun f. dir. sg. 480.

शृंगारसेनु *śrmgārasenu* proper noun m. dir sg. 481.

श्मशान *śmaśāna* "cemetery" sub. n. dir. sg. 360. lw. Sk. samasanam.

श्रावकु *śrāvaku* "householder (Jain expression)" sub. m. dir. sg. 487 lw. Sk.

श्राविका *śrāvikā* 'Jain woman' (f. of śrāvaka) sub f. dir sg. 510. lw. Sk.

श्रेष्ठि *śreṣṭhi* "(rich) merchant, businessman" sub. m. (v. l. śreṣṭhi) 85, 565. śreṣṭhim inst. sg. 350. lw. Sk. śreṣṭhin, probably an effort to sanskritise the already common sethi resulted in the vulgar sanskrit śreṣṭhi-.

श्रेयांस *śreyamsa* proper noun m. dir. sg. 110.

*

स *sa* "he she, that" dem. pro. m. f. 400, 420, 431, 465, 473, Sk. sah, sā; Pk. so, sā. v. s. v. su.

सउं[1] *saum[1]* "with" post pos. 22, 99, 128, 547, 578; sai inst. 3; Sk. sahitam, Pk. sahiam; note the loss of -h-; see Bloch sĩ.

सउं[2] *saum[2]* "self" pro. dir. sg. 94. Sk. svayam, Pk. sayam.

सउकी *sauki* "by the co-wife" f. sg. 126. S *sapatkni, sapátnī; Bloch savat. Turner sautā The reading should be sauki, note the MG. co[illegible] nate śOk

सकइ *sakai* "is capable" v. pres. 3rd sg. 33[illegible] 516, 557; sakaum 1st sg. 188, 512; also sakũ 339; sakiu past part. m. dir sg. 456, 46[illegible] sakiyaim pass. pl. (honorific) 190. Sk. śaknóti śakyáte. Pk. sakkai. sakkei, Bloch sakṇẽ, Turne saknu.

सगलूं *sagalūm* "all" adj. adv. dir. sg. n. 7, (v. l sagalaṃ, sagalũ) 94, 465; sagalām pl. 327; also sagala sg. 589. pl. 110; sagalā- m. sg 10 sagalā pl. 433; sagalā obl. 66, 405; sagale inst sg. 381, sagalo loc. pl. 327; Sk. sakala- Pk sagala- probably a late lw. in Pk. ext. in OG. Bloch saglā.

सतर *satara* "seventeen" num. dir. sg. 281, also sataru 618; sataraha obl. sg. 281, 613; note the -t- in OG. MG. has geminated -tt-, sattar. Sk. saptádasa, Pk. sattarasa. Ap. sattaraha. Bloch satrā, Turner satra.

सतरमा *sataramā* "seventeenth" ord obl. 222. sattara mai loc. sg. 335; note the -t-; cf. satara in OG. v. s. v. satara. OG. ordinal sataramau.

सतहुत्तर *satahuttara* "seventy-seven" num. dir. sg. (v. l. sattahuttara, satahattara). 74. cf. Sk. sáptasaptatiḥ f., Pk. sattahattariṁ. Turner satahattar.

सतावन *satāvana* "fiftyseven" num. 390; also sattāvana 401. Sk. saptapañcāśat Pk. sattāvaṇṇami; note the -t- in OG., MG. has geminated -tt- sattāvan; Turner satāwan.

सत्ताणवइ *sattāṇavai* "ninetyseven" num. 613; Sk. saptanavatiḥ f., Pk. sattāṇauim, MG. sattāṇũ, Turner satānabe.

सत्तावीस *sattāvīsa* "twenty-seven" num. 74, also in the idiom "sattāvīsa cauku atthottara sau" 'twentyseven multiplied by four = 108' 617; note that this OG. system of multiplication is similar to present day grammar school tradition of multiplication. Sk. saptávimśatiḥ f. saptávimsat f. Pk. sattāvīsam, Turner satāis.

सत्तोत्तर सय *sattottara saya* "one hundred and seven" num. 423. Sk. sapti-, Pk. satta-, sattottara- 'more by seven'.

सत्यासी *satyāsī* "eighty seven" num. 71. Sk. saptāśītiḥ f. Pk. sattāsiim; -y- in OG. and MG. satyāśī may be analogical cf. ekyāśī, byāsī, tryāśī, coryāśī etc. in MG. Turner satāsi.

सत्रिका *satrikā* 9. meaning and derivati[illegible] known.

[illegible] "a type of jiva which has a [illegible] [illegible] sg. 33 Sk. samjñin Pk. [illegible]

[illegible] "[illegible]" adj. [illegible] sg. [illegible] Pk. [illegible]-ext. in OG. [illegible], note [illegible] feature which may be Ap. influence or borrowing from dialects of midland

[illegible] "at the time" sub. [illegible] loc. sg. [illegible] 113; Sk. samayah, samaye, Pk. samaya- [illegible] [illegible], loc. sg. samai, MG [illegible]

[illegible] "remembers" v. pres. 3rd sg. [illegible] samarain 3rd pl. 570; samarataum [illegible] [illegible] samarita pr. pl. 511; samarataum [illegible] [illegible] pres. 3rd sg. 521 Sk. smarati Pk. samarai

[illegible] "memory, remembrance" [illegible] n. dir. sg. 435, also samarana [illegible] 425 [illegible] samarana f. 482; Sk. smaranam, smarana Pk. samarana-n

[illegible] "causing to repair" [illegible] [illegible] pres. part. 461, 573, Sk. samara- [illegible] [illegible], [illegible], samaravai, caus. [illegible] [illegible] "to cause to repair".

[illegible] "like, of the same type" [illegible] [illegible] Sk. sama- Pk. sama-ext. in the [illegible]

[illegible] "be adjusted, be contained" [illegible] [illegible] 3rd sg. 322; samaisaum [illegible] [illegible], Pk. samamai, [illegible] [illegible]

[illegible]

[illegible] "befitting, proper" [illegible] [illegible] Sk. [illegible] Pk. [illegible]

[illegible]

[illegible] "hundred" [illegible]

[illegible]

[illegible]

साठि *sāthi* "sixty" num. dir. sg. 10, 121. Sk. ṣaṣṭiḥ Pk. saṭṭhi OG. sāṭhi. MG. sāṭh. Bloch sāṭh, Turner sāṭhi.

साठु *sāṭhu* "sixty" num. dir. sg. 74; also sāṭhu sau 'one hundred sixty' 618. Sk. ṣaṣṭiḥ f. Pk. saṭṭhi- f. OG. expected form is sāṭhi, but sāṭhu can be explained by analogical extension of -u from other numerals. v. s. v. sāṭhi.

सात *sāta* "seven" num. dir. sg. 28, 73, sāte inst. pl. 438. Sk. saptá Pk. satta, Bloch sāt, Turner sāt.

सातगारव *sātagārava* "complascent on account of happiness, arrogance of happiness" (first part of a compound (sātagāravāḍu) sub. 560. Sk. sāta + gaurava, lw. (Jain theological term) in Pk. sāta + gārava.

सातमी *sātamī* "seventh" ord. f. dir. sg. OG. sāta + ord. suffix ma-u. v. s. v. sāta.

साति *sāti* "with, together" meaning is not clear, nor is derivation, 465. (context: tāharau ghoḍau āpaṇau sāti).

सातू *sātū* "cooked flour (sweetened)" sub. dir. sg. m. 288. Sk. saktuḥ m. Pk. sattu-, sattua-. OG. sātū; Bloch sātū, Turner sātu.

साधइ *sādhai* "accomplishes" v. pres. 3rd sg. 431 lw. Sk. sādhayati.

सामहउ *sāmahau* "in front of, opposite" adj. adv. (v. l. sāmmau, sāmuhau, sāmuhum, samahau) dir. sg. m. n. 73, 488, 516, 543, 579, sammuha obl. pl. 451; sāmahī f. sg. 562. Sk. sammukhaḥ Pk. sammuha- OG. ext. Bloch samor. Turner sāmu.

सारवियइ *sāraviyai* "is accomplished" v. caus. pass. 3rd sg. 438. Sk. sārati Pk. sarai v. s. v. sarium. Bloch sarnẽ, Turner sarnu.

सारिखा *sārikhā* "equal" adj. obl. 51. v. s. v. sarikhau.

सारिं *sāriṃ* "dice" sub. f. dir. pl. 483. Sk. lex. sārī f. 'chessman' Pk. sārī f. 'colourful container from which dice are tossed while gambling'.

सास *sāsa* "breath" sub. m. 42. Sk. śvāsaḥ Pk. sāsa-, Turner sās.

सासू *sāsū* "wife or husband's mother" sub. f. 201. Sk. śvaśrūḥ Pk. sassū-, Bloch sāsū, Turner sāsu.

साहिउ *sāhiu* "held" past part. m. dir. sg. 556; sāhī abs. 435, 539. Sk. sādhayati Pk. sāhei sāhai, OG. sāhai.

सि *si* "they" dem. pro. nom. pl. 537. ... Pk. se ... analogically influenced by Sk. ... Pk. ... OG. ... elsewhere, ti (Sk. te) is used.

सिखिउ *sikhiu* "learnt" past part. m. dir. sg. 365. (The initial short -i- is a scribal error, other mss. have long -ī-). Sk. śikṣate Pk. sikkhai, Bloch sikṇẽ, Turner sikhnu.

सिद्धिं *siddhiṃ* "towards perfection, salvation" sub. f. loc. sg. 121 lw. Sk. siddhi + OG. loc. suffix.

सीत *sīta* "cold" adj. dir. sg. 466. Sk. śīta-

सीदाइ *sīdāi* "becomes despondent, gets afflicted, exhausted" pass. sg. 243. lw. Sk. sīdati.

सीधउं *sīdhauṃ* "established" adj. dir. sg. n. 102. Sk. siddham. Pk. siddha- ext. OG.; notice MG. 'sīdhũ' with altered meaning 'straight'. Turner sidho.

सीम *sīma* "upto, within the limit" post pos. 110, also sīmu 323. Sk. sīmān, sīmā, Pk. sīmā. Bloch s. v.

सीमंधर *sīmaṃdhara* proper noun m. dir. sg. 517.

सीमालु *sīmālu* "staying on the border, frontier" sub. dir. sg. m. 451. Sk. sīmā- Pk. sīmāla-. v. s. v. sīma.

सीयाले *sīyāle* "in winter" sub. loc. sg. 401. Sk. śītakālaḥ, Pk. sīa-āla.

सु *su* "he" dem. pro. m. nom. sg. 109, 111, 303. Sk. saḥ. Pk. so. v. s. v. sa.

सुकुमारिका *sukumārikā* "a type of puri-like preparation." sub. f. 311. This is a sanskritization of the MG. suvāḷī. lw. Sk.

सुखिउ *sukhiu* "happy" adj. dir. sg. m. 94. lw. Sk. sukhi, OG. sukhi ext. with -u.

सुजाणु *sujāṇu* "intelligent, clever (man)" adj. dir. sg. m. 580; OG. su + jāṇu; v. s. v. jāṇai.

सुदत्तु *sudattu* proper noun m. dir. sg. 517.

सुद्धि *suddhi* "purification" sub. f. 315. Sk. śuddhiḥ, Pk. suddhi, lw. Pk.

सुदर्शनु *sudarśanu* proper noun m. dir. sg. 445.

सुपार्श्व *supārśva* proper noun m. dir. sg. 110.

सुभ *subha* "good, auspicious" adj. n. dir. sg. 435. Sk. śubha-; lw. Sk.

सुमति *sumati* proper noun m. dir. sg. 110.

सुमित्रु *sumitru* proper noun m. dir. sg. 451, 534 559.

सुरसेन *surasena* proper noun m. dir. sg. 521.

सुलहलादिक *sulahalādika* "sulahala and others; sulahala is a type of small insect" sub. 338,

सुवेगु *suvegu* proper noun m. dir. sg. 430.

सुसइ *susai* "dries" v. pres. 3rd sg. 516. short -u- in initial syllable may be graphic. Sk. śuṣyati Pk. sussai (Sk. śoṣáyati, Pk. sosei, MG. sos-vũ).

सुसुरउ *susurau* "father-in-law, wife's or husband's father" sub. m. dir. sg. 556. Sk. śvásurah, Pk. sasura- ext. in OG. sasurau, initial -u- may be graphic, or assimilatory. MG. sasro. v. s. v. sasura. Bloch sāsrā, Turner sasuro.

सुहु *suhu* "joy, happiness" sub. n. dir. sg. 432. Sk. sukhám Pk. suhaṁ OG. suh-u.

सूकइ *sūkai* "dries" v. pres. 3rd sg. 309. Sk. suṣkah Pk. sukkha-, sukka-. Bloch sukā, Turner suko, suknu.

सूकवणु *sūkavaṇu* "drying-action of-" sub. n. dir. sg. 12. v. s. v. sūkai.

सूकी *sūkī* "dry" adj. f. 601. v. s. v. sūkai. OG. sūk- + feminine suffix -ī.

सूग *sūga* "disgust, dislike" sub. f. dir. sg. 435. cf. MG. sūg. f. der. not known.

सूचिउ *sūciu* "suggested, indicated" past part. m. dir. sg. 501; sūcavevaum caus. gen. n. sg. 10; sūcavevāṁ n. pl. 10. Sk. sūcyate, sūcayati.

सूझइ *sūjhai* "purifies, becomes clear" v. pres. 3rd sg. 13, 172, 230; sūjhavī caus. abs. 484. Sk. śudhyati Pk. sujjhai. Turner sujhnu.

सूणी *sūṇī* "swollen" past part. f. dir. sg. 521. Sk. śūyate, śūnáh (cf. śūnyá- originally 'hollowness, emptiness' MG. sūn) Pk. sūṇa- sūṇa-. MG. sujvũ, sunvũ. Bloch sunā, Turner sujnu.

सूतउ *sūtau* "sleeping" adj. past part. m. dir. sg. 447, 482; sūtai loc. sg. 481, sūtā obl. sg. 446; sūte inst. sg. 259. Sk. suptáh Pk. sutta. Turner sutnu.

सूत्रधार *sūtradhāra* "carpenter" sub. m. 408. lw. Sk.

सूदणकरण *sūdaṇakaraṇa* "act of cutting, arranging, trimming" sub. n. sg. 440. lw. Sk. sūdana -+ karaṇa.

सूयइ *sūyai* "sleeps" v. pres. 3rd sg. 163; sūyai pass. sg. 259; sūyāri caus. abs. 25. Sk. svápati, Pk. suvai, MG. suvũ. Turner sutnu.

सूयडउ *sūyaḍau* "parrot" sub. m. dir. sg. 463. Sk. śuka- Pk. sua- ext. -ḍau, MG. suṛo.

सूर *sūra* proper noun m. dir. sg. 445.

सूरण *sūraṇa* "a vegetable which grows under the ground" sub. n. dir. sg. 288. MG. sūraṇ. Der. not known.

सूरता *sūratā* "heroism" sub. f. sg. 48. Sk. śūrah Pk. sūra, OG. sūra + tā.

सूर्य *sūrya* proper noun m. dir. sg. 464.

सेउ *seu* "perspiration" sub. dir. sg. m. 309. Sk. svedah Pk. seo, seu; MG. parsevo 'perspiration' Sk. prasvedah, OG. *parasen, replaced by parasco.

सेठि *seṭhi* "merchant, businessman (rich)" sub. m. obl. sg. 432, 548. Sk. śreṣṭhī Pk. seṭṭhi MG. seṭh. Bloch set Turner seṭh[2].

सेतिका *setikā* "a type of measure, more common as Jain theological term" sub. f. 459. lw. Sk. (not found in MW); Pk. seigā, solā.

सेव *seva* "service" sub. f. dir. sg. (v. l. sevā) 432. Sk. sevā Pk. sevā.

सेवाली *sevālī* proper noun m. dir. sg. 109.

सेवालाहारी *sevālāhārī* "one who lives by eating sevāla-sea weeds-" adj. m. dir. sg. 109. lw. Sk. śevāla + āhārin.

सेविउ *seviu* "served" past part. m. dir. sg. 516; sevatau pres. part. m dir. sg. 222; seviyai pass. sg. 516. Sk. sevate Pk sevai.

सोधउं *sodhaum* "find" v. pres. 1st pl. 456. sodhatau pres. part. m. dir sg. 382; sodhī abs. 325; cf. Sk. suddha-, śóddhum, which might have developed as the NIA stem sodh-; or this may be a lw. fr. Sk. sodháyati, to avoid confusion with soh- from sobhate. see Turner sodhnu.

सोल *sola* "sixteen" num. dir. sg. 74. Sk. ṣoḍaśa, Pk. solasa, solaha. Bloch soḷā, Turner sora.

सोलमा *solamā* "sixteenth" ord. obl. 222; solamai loc. sg. 355; OG. sola + mau. v. s. v. sola.

सोसियकाय *sosiyakāya* "whose bodies have withered, emaciated" adj. m. dir. pl. 110. Sk. śoṣita-kāya-, Pk. sosia + kāya; lw. Pk.

संकोडी *saṁkoḍī* "having reduced, shrunk" abs. 532. Sk. *saṁkṛta- 'put together'; sáṁkṛtih f. 'bringing together'; cf. Pa. saṁkutito 'shrivelled, shrunk' Pk. saṁkuḍa-, saṁkoḍa- 'contraction'.

संक्रमाविया *saṁkramāviyā* "caused to move" past part. of the causal base m pl. 22. lw. Sk. sankram- + OG. āv- ia.

संघाडउ *saṁghāḍau* "pair, couple" sub. m. dir. sg. 435. Sk. saṁghāta- Pk. saṁghāḍa- ext. OG.

संजम *saṁjama* "control, restraint" sub. m. dir. sg. 573; Sk. samyama- Pk. saṁjama- lw. Pk.

संजमसूरि *saṁjamasūri* proper noun m. dir. sg. 481.

संडासा *saṁḍāsā* "sides (two sides-right and left- of the body, Jain theological term)" sub. obl. pl. m. 160, 326; cf. MG. sā̃ṛso, sāṇso 'pincers', the sides of the pincers have given a different meaning in this context 'having wiped the sides' saṁḍāsā paḍilehī; Sk. saṁdaṁśa-, Pk. saṁḍāsa-. Turner sanāso.

साठि *sāṭhi* "sixty" num. dir. sg. 10. 421. Sk ṣaṣṭih Pk. saṭṭhi OG. sāṭhi MG sāṭh. Bloch sāṭh. Turner sāṭhi.

साठु *sāṭhu* "sixty" num. dir. sg. 71; also saṭhu sau 'one hundred sixty' 618 Sk. ṣaṣṭih f. Pk. saṭṭhi- f. OG. expected form is sāṭhi, but sāṭhu can be explained by analogical extension of -u from other numerals. v. s. v. sāṭhi

सात *sāta* "seven" num. dir sg 28, 73; sāte inst pl. 438. Sk. saptá Pk. satta; Bloch sāt, Turner sāt.

सातगारव *sātagārava* "complascent on account of happiness, arrogance of happiness" (first part of a compound (sātagāravādi) sub. 566. Sk. sāta + gaurava, lw. (Jain theological term) in Pk. sāta + gārava.

सातमी *sātami* "seventh" ord. f. dir. sg. OG. sāta+ ord. suffix ma-u. v. s. v. sāta.

साति *sāti* "with, together" meaning is not clear, nor is derivation. 465. (context: tāharaü ghoḍaü āpaṇaü sāti).

सातू *sātū* "cooked flour (sweetened)" sub. dir. sg. m. 288. Sk. saktuh m. Pk. sattu-, sattua-, OG. sātū; Bloch sātū, Turner sātu.

साधइ *sādhai* "accomplishes" v. pres. 3rd sg. 431 lw. Sk. sādhayati.

सामहउ *sāmahaü* "in front of, opposite" adj. adv. (v. l. sāmmaü, sāmuhaü, sāmuhaüṁ, samahaü) dir. sg. m. n. 73, 488, 516, 545, 579. sāmmuhā obl. pl. 454; sāmahi f. sg. 562. Sk. sammukhah Pk. sammuha- OG ext Bloch samor. Turner sāmu.

सारवियइ *sāraviyai* "is accomplished" v. caus. pass. 3rd sg. 438 Sk. sārati Pk sarai v s. v. sarauṁ. Bloch sarṇẽ, Turner sarnu.

सारिखा *sārikhā* "equal" adj. obl 51 v. s. v sarikhaü.

सारि *sārim* "dice" sub f dir. pl. 483. Sk. lex. sāri f. 'chessman' Pk. sari f 'colourful container from which dice are tossed while gambling'.

सास *sāsa* "breath" sub. m. 42. Sk. śvāsah Pk. sāsa-, Turner sās.

सासू *sāsū* "wife or husband's mother" sub. f. 201. Sk. śvaśrūh Pk. sāsū-, Bloch sāsū. Turner sās.

साहिउ *sāhiu* "held" past part. m. dir. sg. 556. sāhi abs. 435, 539. Sk. sādhayati Pk. sāhai sāhai, OG. sāhai.

सि *si* "they" dem. pro. nom. pl. 577; it occurs as a correlative, e. g. ji nāṭhā si nāṭhā. Sk. sah. Pk. so OG. sa analogically influenced by Sk. ye Pk. je OG. ji. Elsewhere, ti (Sk. te) is used.

सिखिउ *sikhiu* "learnt" past part. m. dir. sg. 365. (The initial short -i- is a scribal error, other mss. have long -ī-). Sk. sikṣate Pk. sikkhai. Bloch sikṇẽ. Turner siknu.

सिद्धिइं *siddhim* "towards perfection, salvation" sub. f loc. sg. 121. lw. Sk. siddhi + OG. loc. suffix

सीत *sīta* "cold" adj. dir. sg. 400. Sk. śīta-.

सीदाइ *sīdāi* "becomes despondent, gets afflicted, exhausted". pass. sg. 245. lw. Sk. sīdati.

सीधउं *sīdhauṁ* "established" adj. dir. sg. n. 102. Sk. siddham. Pk. siddha- ext. OG.; notice MG. "sīdhũ" with altered meaning 'straight'. Turner sidho.

सीम *sīma* "upto, within the limit" post pos. 110; also sīmu 523. Sk. sīmán, sīmā, Pk. sīmā. Bloch s.v.

सींमंधर *sīmaṁdhara* proper noun m. dir. sg. 547.

सीमाडु *sīmāḍu* "staying on the border, frontier" sub. dir. sg. m. 451. Sk. sīmā- Pk. simāla-. v. s. v. sīma.

सीयाले *sīyāle* "in winter" sub. loc. sg. 401. Sk. śītakālah, Pk. sīa- āla.

सु *su* "he" dem. pro. m. nom. sg. 109, 111, 365. Sk. sah. Pk. so. v. s. v. sa.

सकुमारिका *sukumārikā* "a type of puri-like preparation." sub. f. 311. This is a sanskritization of the MG. suvāḷī. lw. Sk.

सुखिउ *sukhiu* "happy" adj. dir. sg. m. 94. lw. Sk. sukhī, OG. sukhi ext. with -u.

सुजाणु *sujāṇu* "intelligent, clever (man)" adj. dir. sg. m. 586; OG. su + jāṇu; v. s. v. jāṇai.

सुदत्तु *sudattu* proper noun m. dir. sg. 547.

सुद्धि *suddhi* "purification" sub. f. 345. Sk. śuddhih, Pk. suddhi, lw. Pk.

सुदर्शनु *sudarśanu* proper noun m. dir. sg. 445.

सुपार्श्व *supārśva* proper noun m. dir. sg. 110.

सुभ *subha* "good, auspicious" adj. n. dir. sg. 435. Sk. śubha-; lw. Sk.

सुमति *sumati* proper noun m. dir. sg. 110.

सुमित्रु *sumitru* proper noun m. dir. sg. 451, 534 539.

सुरसेन *surasena* proper noun m. dir. sg. 521.

सुलहलादिक *sulahalādika* "sulahals and others; sulahala is a type of small insect" sub. 233, 401. Der. not known.

सुविधि *suvidhi* proper noun m. dir. sg. 110.

[illegible] proper noun m. dir. sg. 439

[illegible] "dries" v. pres. 3rd sg. 510 [illegible] initial syllable may be graphic. Sk. [illegible] Pk. [illegible] (Sk. śoṣyati, Pk. [illegible]) [illegible]

[illegible] "father-in-law, wife's or husband's father" sub. m. dir. sg. 536. Sk. śvaśuraḥ Pk. sasura- ext. in OG. sasurau. Initial [illegible] may be graphic, or assimilatory. MG sasro [illegible] s. v. sasura, Bloch sāsrā, Turner sasuro

[illegible] "joy, happiness" sub. n. dir. sg. 472 Sk. sukham Pk. sukham OG. sukh-u

[illegible] "dries" v. pres. 3rd sg. 302. Sk. [illegible] Pk. sukkha-, sukka-. Bloch suka, Turner suko [illegible]

[illegible] "drying — action of —" sub. n. dir. sg. 12, v. s. v. [illegible]

[illegible] "dry" adj. f. 601, v. s. v. [illegible] sukh- + feminine suffix -ī.

[illegible] "disgust, dislike" sub. f. dir. sg. 435 cf. [illegible] f. der. not known

[illegible] "suggested, indicated" past part. m. dir. sg. 501; [illegible] caus. gen. [illegible] sg. [illegible] [illegible] n. pl. 10. Sk. sūcyate, [illegible]

[illegible] "purifies, becomes clear" v. pres. 3rd sg. 13, 172, 230; [illegible] caus. [illegible] 454 Sk. [illegible] Pk. sujjhai, Turner [illegible]

[illegible] "swollen" past part. f. dir. sg. 321 Sk. [illegible] (cf. [illegible] originally "hollowness, emptiness") [illegible] Pk. [illegible] [illegible] Bloch [illegible] Turner [illegible]

[illegible] "sleeping" adj. past part. m. dir. sg. 447, 452; [illegible] sg. 446; [illegible] sg. 441 [illegible] sg. 330. Sk. suptaḥ Pk. sutta Turner [illegible]

[illegible] "carpenter" sub. m. [illegible] Sk. [illegible]

[illegible] "act of cutting, severing, trimming" sub. n. sg. [illegible] [illegible]

[illegible] "sleeps" v. pres. 3rd sg. [illegible] [illegible] Sk. [illegible] Pk. [illegible] Mil. [illegible] Turner [illegible]

[illegible] "pare[illegible]" sub. m. dir. sg. [illegible] Pk. [illegible]

[illegible] proper noun m. dir. sg. 467

[illegible] [illegible]

[illegible] "[illegible]" sub. f. [illegible]

[illegible]

सन्नी *sanni* "a type of jīva which has a mind" sub. m. sg. 33. Sk. saṃjñin Pk. saṇṇi lw. Pk.

सनेठउ *sanethau* "sincere" adj. m. dir. sg. 444. Sk. saṃniṣṭha- ext. in OG. sanethau, note the final -ha which may be Ap. influence or borrowing from dialects of midland

समइ *samai* "at the time" sub. m. loc. sg. 73 112; Sk. samayah, samaye, Pk. samaya- OG. samau, loc. sg. samai, MG samo, same

समरइ *samarai* "remembers" v. pres. 3rd sg. 348, samaraim 3rd pl. 573; samaraum 1st sg. 345, samarivā ger. pl. 341; samari abs. 299, samarāvai caus. pres. 3rd sg. 521. Sk. smarati Pk. samarai.

समरण *samaraṇa* "memory, remembrance" sub. n. dir. sg. 435, also samaraṇu 264, 428, 460, samaraṇā f. 482; Sk. smaraṇam, smaraṇā, Pk. samaraṇa- n.

समरावता *samarāvatā* "causing to repair" causal base, pres. part. obl. 533, Sk. samaracayati, Pk. samārai; OG. samārai, caus. samarāvai, MG samārvũ 'to cause to repair'.

समा *samā* "like, of the same type" conj. adj. pl. 462, Sk. sama- Pk. sama- ext. in OG.

समाइ *samāi* "is adjusted, is contained" v. pres. 3rd sg. 222; samāivaum ger. n. dir. sg. 374. Sk. sammāti, Pk. sammāi, MG samay, Turner samāunu,

समाचरइं *samācaraiṃ* "behave, act" v. pres. 3rd pl. 300; sāmācarī abs. 316, here the initial -ā- in sā- is due to analogical influence of the Jain theological term sāmācārī, lw. Sk. samācarati,

समू *samū* "befitting, proper" adv. 316, v. l. samā, Sk. sama, Pk. sama-, OG. samu, ext with -u,

समोसरिउ *samosariu* "descended, appeared" past part. m. dir. sg. 73, 429; samosaryā pl. 321 Sk. samavasṛtah, Pk. samosaria-

सय *saya* "hundred" num. dir. sg. 489; also sau elsewhere. Sk. śatám, Pk. sayam, saya- Bloch sẽ, Turner sai.

सरसउं *sarasauṃ* "with, in relation to" adj. adv. n. dir. sg. (v. l. sarisaũ, sarasu) 91, sarasam pl. 342; sarasau, m. dir. sg. 108, 435, 488, 559; also sarasū 489; sarisī f. (v. l. sarasī) 363, 570. Sk. sadṛśa- Pk. sarisa (see Pischel § 245 for this change), OG. ext. sarisau, sarasau. MG. sarso, sarsi, sarsũ Bloch sarsõ.

सरि *sari* "arrow" sub. n. loc. sg. 433. Sk. śara Pk. sara OG. sari Turner sar[1].

सरिउं *sariuṃ* "gone, done" past part. n. dir. sg. 91. Sk. sarati Pk. sarai Bloch sarnẽ, Turner sarnu

सरिखउ *sarikhau* "equal" adj. m. dir. sg. 486; sarikhai inst. sg. 91, sarikhā dir. pl. 451; sarikhī f. sg. 489. Sk. sadṛkṣa- Pk. sarikkha-, Bloch sārkhā, sārikhā, Turner sari.

सरीर *sarīra* "body" sub. n. dir. sg. 464; also sarīra (first part of a compound) 432, sarīre inst. sg. 22. Sk. śarīra-, Pk. sarīra-,

सर्वनासि *sarvanāsi* "when all is at stake, destruction" sub. m. loc. sg. 441, OG. sarva + nāsa, OG. sarva is a Sk. lw. (for an OG. evolute of Sk. sarva- v. s. v. sava), Sk. nāśah, nāśe, Pk. nase, OG. nasi.

सव *sava* "all, whole" pro. used with various emphatic particles savai 110, sava him 38, 517; savi hum 7, MG. sabu, sau is also the result of an emphatic form such as sava hu (Sk. sarvah khalu, Pk. savvo khu, savva hu), Sk. sarvah, Pk. savva As. sava MG. sāv 'altogether, complete', OG. sava represents special weakening note that it is not used on its own, instead, various emphatic forms are used, Turner sab.

ससुर *sasura* "father-in-law, wife's or husband's father" sub. m. sg. 201, Sk. śvaśurah, Pk. sasura, MG. sasro is the result of OG. extended form sasurau, see under susurau.

सहस्स *sahassa* "thousand" num. dir. sg. 74; Sk. sahasra- Pk. sahassa-, lw. Pk.

सहि *sahi* "to tolerate, to suffer" inf. 483; sahīvivaum ger. dir. sg. n. of the causal base 219. Sk. sáhate, Pk. sahai

सा *sā* "she" dem. pro. f. dir. sg. 555. Sk. sā, Pk. sa

साकर *sākara* "sugar (crystals)" sub. f. 314. Sk. śarkarā, Pk. sakkarā Bloch sākhar, sākar.

साखि *sākhi* "in the presence of, as witness" sub. f. loc. sg. 166, 349, 384, 516; also used as a dir. form sākhi 'witness, evidence' (kūḍi sākhi 'false evidence') 450. MG. sākh, śākh f. 'prestige, reputation', Sk. sākṣyam, sākṣye, Pk. sakkhe, OG. sakhi MG. sākh

साचउ *sācau* "truthful" adj. m. dir. sg. 548. sācaum dir. n. sg. 381; sācai loc. sg. 453. Sk. satyá-, Pk. sacca ext. OG. Bloch sāc, sāñcā, Turner sāco.[1]

साजइ *sājai* "healthy, fit" adj. loc. sg. 282 (in the idiom sājai māthai thikai). Sk. sajjah Pk. sajjo OG. ext. sāja-u. MG sājo 'healthy, unhurt'.

135; liyata pres. part. (unenlarged) 452; liyatau pres. part. m. dir. sg. 386;... lidhau past part. m. dir. sg. 416, 559; lidhaum n. sg. 431, 416, 480, 481; lidhā m. pl. 386; lidhī f. sg. 74, 539;......lijaim pass. 3rd pl. 569; lijatau pass. pres. part. 431; . levaum ger. n. sg. 223; levī f. 401; levā obl. (inf.) 401, 417, 451, 463, 483, 558; leī abs. 112, 528 also le 430, 466, 488, 530. Sk. lāti replaced by lei (probably under the influence of dei, (Sk. dadāti), nei (nayati) in MI; OG. li-. The past participle lita- is similarly replaced by liddha- on the analogy of labdha-: laddha-, and ext. in OG. For the possible analogical influence of these forms see Tedesco JAOS 43; Turner also suggests Sk. labhate; Bloch lenẽ, Turner linu.

लिहीतौ *lihīti* "being wiped, licked" pass pres. part. f. 402; Sk. lihati, Pk. lihai.

लीलावती *līlāvatī* proper noun f. dir. sg. 473.

लूगडा *lūgaḍā* "cloth garment" sub. obl. sg. n 321. Turner connects Sk. rugnáh, Pk. lugga- 'worn out' with this word for garment. Turner lugā.

लूसिउ *lūsiu* "wiped out" past part. m. dir. sg. 74, 555 Pk. lumchai 'wipes, removes,' cleans (by wiping). MG. luchvũ 'to wipe'.

लुहणु *luhaṇu* "(act of) wiping" sub. n. sg 12. Pk. lūhai 'to wipe' cf. OG lusa- to wipe, s. v. lūsiu.

लेसाल *lesāla* "grammar school" sub. f. loc sg. 432. Sk. lekha-śālā, Pk leha-sālā; replaced in MG by nisāl.

लोचउं *locaum* "I remonstrate" v pres. 1st. sg. 167. Used mainly by Jains, referring to notion of 'thinking'. lw Sk locate, Sk. loca-+ OG. verbal inflection

लोटु *loṭu* "flour" sub dir sg m 311 der. not known, probably connected with *loṭyate, cf. Sk. Dhātup loṭati, Pk loṭṭai rolls. tumble down; cf MG āloṭvũ 'to roll (on ground)'

लोढतउ *loḍhatau* "combing, refers to the action of preparing cotton for making slivers" pres. part. dir. sg. m. 213. Sk loṣṭate 'to gather into a heap or a lump'; Pk. loḍhai 'processing cotton as it comes off the plant, ginning'. MG. loḍhvũ is used in this sense

लोपिवउं *lopivaum* "to abolish, to transgress" ger. n. sg 301; Sk. lupyāte, Pk. luppai.

लोयणाक्षु *loyaṇākṣu* proper noun m. dir sg. 386.

लोहि *lohi* "blood" sub. n. 25. Sk. lohita- n 'blood', Pk. lohia- n. Turner lohu.

लांखणु *lāṃkhaṇu* "act of throwing" sub. n. dir. sg. (second member of a compound kesalamkhanu, nakhalamkhanu, rudhira lamkhanu) 12. der. v. s. v. lāṃkhai.

लांतक *lāṃtaka* "name of a heaven, acc. to Jains" proper noun m. sg. 26.

लंपटपणउं *lampaṭapaṇaum* "debauchery" sub. dir. sg. n. 475 lw. Sk. lampaṭa + OG. suffix paṇaum.

लांखइ *lāṃkhai* "throws" v. pres. 3rd sg. 529; lāṃkhiu past part. m. dir. sg. 577; lāṃkhiyā m. pl. 21; lāṃkhatau pres. part. m. dir. sg. 213; lāṃkhiyai pass. sg. 577; lāṃkhī abs. 386. 434. In MG. the root lāṃkh-survives dialectally (in the southern dialects), while the standard form is nākh. Sk. namkṣati. Turner BSOS iv, pp. 533.

लांघिउ *lāṃghiu* "crossed, passed" past part. m. dir. sg. 85; lāṃghi abs. 168; Sk. laṅghayati, Pk. laṃghei. Turner nāghnu.

लांबपणि *lāmbapaṇi* "by length" sub. inst. sg. n. 614. OG. lāmba + paṇi; dir. s. v. lāmbā.

लांबा *lāmbā* "tall, distant" adj. m. pl. 616. Sk. lambaḥ Pk. lamba-, Bloch lāb, Turner lāmu.

लिंहगटउं *liṃhagaṭaum* "a type of sweet preparation" sub. dir. sg. n. 315. der. not known. -ṭa-um, apparently, are suffixes.

लींपी *līmpī* "having besmeared, plastered" abs. 185. Sk. limpáti, Pk. limpāi. Bloch lĩpṇẽ, Turner lipnu.

लुंटइ *lūṃṭai* "robs" v. pres. 3rd sg. 520; lūṃṭiyai pass. 3rd sg. 518. Sk. luṇṭati, Pk. lumṭai. Bloch luṭṇẽ, Turner luṭnu.

*

वइरि *vairi* "enemy" sub. m. dir. sg. 538, also pl. 457. Sk. vairi, Pk. vairi-. MG. vẽri, is the result of OG. ext. or later suffixation of -ī to vẽr (Sk. vairam).

वइंगण *vaiṃgaṇa* "brinjals" (vaiṃgaṇa pramukha) sub. pl 501. Pa. vātiṃgana Pk. vaiṃgaṇa-, vaiṃgaṇa-, MG. vĩgaṇ. Bloch vãgi, Turner baigun bhira.

वखाणइ *vakhāṇai* "expounds, explains, comments" v. pres. 3rd sg. 438; vakhāṇium past part. dir. sg. n. 111; vakhāṇavī abs. of the causal base 601. Sk. vyākhyánam Pk. vakkhāṇam, derived also as a verb vakkhāṇai, OG. vakhāṇa-. Note the change in meaning in MG. vakhāṇ 'praise', vakhāṇvũ 'to praise, to appreciate'. Bloch vākhāṇ, Turner bakhannu, bakhān.

वखाणु *vakhāṇu* "commentary, explanation" sub. n. dir. sg. 318. Sk. vyākhyānam, Pk. vakkhāṇam, MG. vakhāṇ 'praise'. v. s. v. vakhāṇai. Bloch vākhāṇ, Turner bakhān.

वच्छ *vaccha* "boy, child" term of endearment. sub. m. voc. sg. 38; vacchau voc. pl. 111. lw Pk. vaccha-.

[illegible] *vahagi* name of a river f. dir. sg. 574.

[illegible] *vachala* "affectionate, kind" (second part of a compound mitravacchala) m. dir. sg. 557. lw. Pk.

वडइ *vaḍi* "with" post. pos. indicating instrumentality. sg. 94, 507, 521; valaim pl. 398 Ety. not known. MG. vaṛe.

वडउ *vaḍo* "elder, bigger" adj. m. dir. sg. 427. 467; vaḍai inst. sg. 461; vaḍa old sg. 379. 467; vaḍi f. 230, 238 (idiomatic vaḍi niti 'act of defilation'). Sk. lx. vadrah 'big'. Pk. vaḍḍa-; MG. vaṛo; note the absence of compensatory lengthening in OG and MG; perhaps an early lw. from Panjabi or Sindhi. Bloch vaḍ, Turner baṛo.

वणतउ *vaṇatau* "weaving" pres. part. dir. sg. m. 213. Sk. vāyati, vāna 'the act of weaving'; Pa. vināti, probably changed to *vunati after Sk. tīti-, ūyate; Pk. viṇaṇa-, vunana-. MG. vanvũ. Bloch viṇṇẽ, Turner bunnu.

वणफल *vaṇaphala* "wild fruits" sub. dir. pl. n. 433. OG. vaṇa+ phala-. Sk. vanam, Pk. vaṇam OG. vaṇa. Sk. phalam Pk. phalam OG. phala.

वणांतरि *vaṇāṃtari* "in the other forest" sub. loc. sg. n. 557. Sk. vanāntare. Pk. vaṇiṃtare OG. vaṇāṃtari.

वधावइ *vadhāvai* "congratulates, welcomes" v. caus. pres. 3rd sg. 547. 562; vadhāviu past part. m. dir. sg. 73,558. Sk. vardhāpayati Pk. vaddhāvei MG. vadhāvvũ. Panjabi, Lahanda and Sindhi cognates show absence of contralisation. Another evolute of the same in MG. is vādhvũ 'to cut', and Panjabi, Sindhi also have vaḍḍhaṇā, vaḍhaṇu respectively. Bloch vāḍhṇẽ, vaḍhāyā, Turner baṛnu, baṛai.

वधारियइं *vadhāriyaiṃ* "are caused to increase" v. caus. pass. 3rd pl. 485. Sk. vardhate Pk. vaddhei OG. vaddha- + causal āra-. cf. MG. vadhārvũ; also similar forms sudhārvũ 'to cause to improve' suvārvũ 'to cause to sleep' etc. See Tessitori § 141; also s. v. vadhāvai.

वर *vara* "good" adj. m. (first part of a compound varapuruṣu) 463; vari f. sg. 463. Sk. varam Pk. vara.

वरइ *varai* "chooses, marries" v. pres. 3rd sg. 471. Sk. varayati Pk. varai.

वरस *varasa* "years" sub. n. dir. pl. (v. l. varisa) 94; varasi loc. sg. 255, (v. l. varisi) 514; varase inst. pl. (v. l. varise) 113. Note the possible dialectal variation between varasa- and varisa-. [illegible]isa- (early loan fr. Sk. varṣa- to [illegible]ish it from MIA evolute vasa- in the sense of 'rain' cf. Sindhi vasa f. 'rain', Sinhalese vas 'rain' . . Bloch varas 'rain'. Turner barsa. bas[illegible]

वरसइ *varasai* "rains" v. pres. 3rd sg. 493, vara[illegible] 561; varasāviu caus. past part. m. dir. sg. 561; varasāviya pl. 517. Pk. varisai (early lw. from Sk. varṣa-) see under varisa

वरसालउ *varasālo* "monsoon" sub. m. dir. sg. 85. varasālai loc. sg. 85, also varasāle loc. sg. 461, Pk. varisa + kala-, varisala-, ext. in OG.; s. v. varasa. MG. comāsũ 'monsoon' has replaced this word

वर[1] *vara* "suitor, bridegroom" sub. m. dir. sg. 469. Sk. varaḥ Pk. vara- MG. var. Bloch var. Turner bar[2]

वर[2] *vara* "boon blessing" m. dir. sg. 470. Sk. varah Pk. vara- MG. var.

वरुवं *varuṃ* "in an undesirable way, ugly way" sub. sg. 25. Probably connected with Sk. virūpa- v. s. v. varūum

वरूउं *varūum* "ugly, undesirable, hostile, not in proper form" adj. dir. sg. n. 384, also varūyaum 384, 629, also varayaum 25, 389. Sk. virūpa-, Pk. virūva-, virua-, ext. in OG. Note the early loss of -i- in the open syllable. MG. varvũ adj.

वर्णवी *varṇavi* "having described" abs. 987, varṇaviu past part. m. dir. sg. 519. lw. Sk. varṇayati, the causal base is taken as primitive and inflectional suffixes are attached to it.

वर्त्तइ *varttai* "stays, exists" v. pres. 3rd sg. 426; varttatā pres. part. m. obl. sg. 514. lw. Sk. varttate, varta-.

वर्त्तिए *varttie* "turned" past part. loc. sg. 38. lw. Sk. vartita-, vartite.

वलतउ *valatau* "turning back" pres. part. m. dir. sg. 110; valatā obl. 601; valiyai pass. sg. 151. Sk. valate, Pk. valai; MG. vaḷvũ 'to turn'.

वली *vali* "again" adv. 522, 519; again and again' vali vali 94. absolutive form of the OG. base val-; s. v. valatau.

वल्गुली *valguli* "name of a disease?" valgulirogu sub. m. dir. sg. 432. lw. Sk. valguli, meaning is not clear.

वसइतउ *vasaitau* "due to, as a result of" (also vasaitau, vasatau and vaśatau); 73, 91. OG. vaśa + itau; cf. Sk. vaśataḥ, vaśāt; Tessitori § 72.2. suggests to connect Ap. hūmtau to OG. -tau, -thau ablative post-position of OWR. This -itau may be connected with MI -hiṃto, -homto which are ablative suffixes, der. uncertain s. v. itau.

435; liyata pres. part. (unenlarged) 452; liyatau pres. part. m. dir. sg. 386;... līdhau past part. m. dir. sg. 416, 559; līdhaum n. sg. 434, 416, 480, 481; līdhā m. pl. 386; līdhī f. sg. 74, 539;......lijaim pass. 3rd pl. 569; lījatau pass. pres. part. 434; . levaum ger. n. sg. 223, levī f. 401; levā obl. (inf.) 401, 147, 451, 463, 483, 538; leī abs. 112, 528 also le 130, 466, 488, 536. Sk. lāti replaced by lei (probably under the influence of dei, (Sk. dadāti), nei (nayati) in MG; OG li–. The past participle lita– is similarly replaced by liddha– on the analagy of labdha–: laddha–, and ext. in OG. For the possible analogical influence of these forms see Tedesco JAOS 43; Turner also suggests Sk. lābhate; Bloch levẽ; Turner linu.

लिहीतीं *lihitī* "being wiped, licked" pass pres part. f. 402; Sk lihati, Pk lihai.

लीलावती *līlāvatī* proper noun f. dir. sg. 473.

लूगडा *lūgaḍā* "cloth garment" sub obl. sg. n 321 Turner connects Sk. rugṇāh, Pk. lugga– 'worn out' with this word for garment. Turner lugā.

लूसिउ *lūsiu* "wiped out" past part, m. dir. sg. 74, 555. Pk. lumchai 'wipes, removes,' cleans (by wiping). MG. luchvũ 'to wipe'.

लुहणु *luhaṇu* "(act of) wiping" sub. n. sg. 12. Pk, lūhai 'to wipe'. cf. OG lusa– to wipe, s v. lūsiu.

लेसाल *lesāla* "grammar school" sub. f. loc. sg. 432. Sk. lekha-śālā, Pk leha-sālā; replaced in MG. by nisāḷ.

लोचउं *locauṁ* "I remonstrate" v. pres. 1st. sg. 167. Used mainly by Jains, referring to notion of 'thinking' lw. Sk locate, Sk. loca–+ OG. verbal inflection.

लोटु *loṭu* "flour" sub. dir. sg m. 311 der. not known; probably connected with *loṭyate, cf. Sk. Dhātup loṭati; Pk loṭṭai rolls, tumble down; cf. MG āloṭvũ 'to roll (on ground)'.

लोढतउ *loḍhatau* "combing, refers to the action of preparing cotton for making slivers" pres. part. dir. sg. m. 213. Sk. loṣṭate 'to gather into a heap or a lump'; Pk. loḍhai 'processing cotton as it comes off the plant, ginning'. MG. loḍhvũ is used in this sense

लोपिवउं *lopivauṁ* "to abolish, to transgress" ger. n. sg 361; Sk. lupyate, Pk. luppai.

लोभनंदु *lobhanaṁdu* proper noun m. dir. sg. 386.

लोही *lohī* "blood" sub. n. 25. Sk. lohita– n. 'blood', Pk. lohia– n. Turner lohu².

लंखणु *laṁkhaṇu* "act of throwing" sub. n. dir. sg. (second member of a compound kesalaṁkhaṇu, nakhalaṁkhaṇu, rudhira laṁkhaṇu) 12. der. v. s. v. lāṁkhai.

लंतक *laṁtaka* "name of a heaven, acc. to Jains" proper noun m. sg. 26.

लंपटपणउं *laṁpaṭapaṇauṁ* "debauchery" sub. dir. sg. n 475 lw. Sk. lampaṭa + OG. suffix paṇauṁ.

लांखइ *lāṁkhai* "throws" v. pres. 3rd sg. 529; lāṁkhiu past part. m. dir. sg. 577; lāṁkhiyā m pl. 21; lāṁkhatau pres part. m. dir. sg. 213; lāṁkhiyai pass. sg. 577; lāṁkhī abs. 386, 434 In MG. the root lāṁkh-survives dialectally (in the southern dialects), while the standard form is nākh. Sk. namkṣati, Turner BSOS iv, pp 533.

लांघिउ *lāṁghiu* "crossed, passed" past part. m. dir. sg. 85; lāṁghi abs. 168; Sk. laṅghayati, Pk laṁghei. Turner nāghnu.

लांबपणि *lāṁbapaṇi* "by length" sub. inst. sg. n. 614, OG, lamba + paṇi; dir. s. v. lambā.

लांबा *lāṁbā* "tall, distant" adj. m. pl. 616. Sk. lambah Pk. lamba–, Bloch lā̃b, Turner lāmu.

लिंहगटउं *liṁhagaṭauṁ* "a type of sweet preparation" sub. dir. sg. n. 315, der. not known. –ṭa–um, apparently, are suffixes.

लींपी *līṁpī* "having besmeared, plastered" abs. 185. Sk. limpáti, Pk. limpāi. Bloch lĩpnẽ, Turner lipnu.

लूंटइ *lūṁṭai* "robs" v. pres. 3rd sg. 520; lūṁṭiyai pass. 3rd sg. 518, Sk. luṇṭati, Pk. lumṭai. Bloch luṭṇẽ, Turner luṭnu.

*

वइरि *vairi* "enemy" sub. m. dir. sg. 538, also pl. 457. Sk. vairī, Pk. vairi–. MG. vErī, is the result of OG. ext. or later suffixation of –i to vEr (Sk. vairam).

वइंगण *vaiṁgaṇa* "brinjals" (vaiṁgaṇa pramukha) sub. pl. 501. Pa. vātiṁgana Pk. vaiṁgaṇa–, vaiṁgaṇa–, MG. vẼgaṇ. Bloch vā̃gi, Turner baigun bhira.

वखाणइ *vakhāṇai* "expounds, explains, comments" v. pres. 3rd sg. 438; vakhāṇiuṁ past part. dir. sg. n. 111; vakhāṇāvī abs. of the causal base 601. Sk. vyākhyánam Pk. vakkhāṇam, derived also as a verb vakkhāṇai, OG. vakhāṇa–. Note the change in meaning in MG. vakhāṇ 'praise', vakhāṇvũ 'to praise, to appreciate'. Bloch vākhāṇ, Turner bakhānnu, bakhān.

वखाणु *vakhāṇu* "commentary, explanation" sub. n. dir. sg. 318, Sk. vyākhyānam, Pk. vakkhāṇam, MG. vakhāṇ 'praise'. v. s. v. vakhāṇai, Bloch vākhāṇ, Turner bakhān.

वच्छ *vaccha* "boy, child" term of endearment. sub. m. voc. sg. 38; vacchau voc. pl. 111, lw Pk. vaccha–.

वच्छणी *vacchaṇī* name of a river f. dir. sg. 574.

वच्छलु *vacchalu* "affectionate, kind" (second part of a compound mitravacchalu) m. dir. sg. 557. lw Pk.

वडइ *vaḍai* "with" post. pas. indicating instrumentality. sg. 94, 307, 521; vaḍaim pl. 386. Ety. not known. MG. vaṛe.

वडउ *vaḍau* "elder, bigger" adj. m. dir. sg 427, 447; vaḍai inst. sg. 461; vaḍa obl sg 578, vaḍī f. 300, 338 (idiomatic vaḍi mīṭi 'act of defalcation'). Sk. lex. vadrah 'big'. Pk vaḍḍa-; MG. vaṛo; note the absence of compensatory lengthening in OG. and MG; perhaps an early lw. from Panjabi or Sindhi. Bloch vāḍ, Turner baṛo.

वणतउ *vaṇatau* "weaving" pres. part. dir. sg. m. 213. Sk. vayati, vāna 'the act of weaving'; Pa. vināti, probably changed to *vunāti after Sk. āti-, ūyāte; Pk. viṇana-, vuṇaṇa-. MG vaṇvū. Bloch viṇṇẽ, Turner bunnu.

वणफल *vaṇaphala* "wild fruits" sub. dir pl. n. 433. OG. vaṇa+ phala-, Sk. vanam, Pk. vaṇam OG. vana. Sk. phalam Pk. phalam OG. phala.

वणांतरि *vaṇāṃtari* "in the other forest" sub. loc. sg n. 557. Sk. vanāntare. Pk. vaṇāṃtare OG. vaṇāṃtari.

वधावइ *vadhāvai* "congratulates, welcomes" v. caus. pres. 3rd sg. 547. 562; vadhāviu past part. m. dir. sg. 73, 558. Sk. vardhāpayati Pk. vaddhāvei MG. vadhāvvũ. Panjabi, Lahanda and Sindhi cognates show absence of cerebralisation. Another evolute of the same in MG. is vādhvũ 'to cut', and Panjabi, Sindhi also have vaddhaṇa, vaḍhaṇu respectively. Bloch vāḍhṇẽ, vaḍhāyā, Turner baṛnu, baṛai.

वधारियइं *vadhāriyaim* "are caused to increase" v caus. pass. 3rd pl. 485. Sk. vardhate Pk. vaddhei OG. vaddha- + causal āra-, cf. MG. vadhārvũ; also similar forms sudhārvũ 'to cause to improve' suvārvũ 'to cause to sleep' etc. See Tessitori §. 141; also s. v. vadhāvai.

वर *vara* "good" adj. m. (first part of a compound varapuruṣu) 463; vari f. sg. 463. Sk. varam Pk. vara.

वरइ *varai* "chooses, marries" v. pres. 3rd sg. 471. Sk. varayati Pk. varai.

वरस *varasa* "years" sub. n. dir. pl. (v. l. varisa) 94; varasi loc. sg. 255, (v. l. varisi) 514; varase inst. pl. (v. l. varise) 113. Note the possible dialectal variation between varasa- and varisa-. Pk. varisa- (early loan fr. Sk. várṣa- to distinguish it from MIA evolute vassa- in the sense of 'rain' cf Sindhi vasa f. 'rain', Sinhalese vas 'rain'.) Bloch varasṇẽ, Turner barsa, basi³

वरसइ *varasai* "rains" v pres 3rd sg. 483, varasāviu caus. past part m dir sg 561, varasāviya pl. 517. Pk varisai. (early lw from Sk. várṣa-) see under varasa.

वरसालउ *varasālau* "monsoon" sub m. dir sg. 85. varasālai loc sg. 58, also varasāle loc. sg. 401; Pk. varisā + kala-. varisāla-, ext. in OG.; s. v. varasa, MG comāsũ 'monsoon' has replaced this word.

वरु¹ *varu* "suitor, bridegroom" sub. m. dir. sg. 469. Sk. varáh Pk vara- MG. var Bloch var, Turner bar²

वरु² *varu* "boon, blessing" m dir. sg. 470. Sk. várah Pk. vara- MG. var.

वरूइं *varūṃ* "in an undesirable way, ugly way" sub. sg 25 Probably connected with Sk. virūpa- v. s v. varūaṃ.

वरूअउं *varūaṃ* "ugly, undesirable, hostile, not in proper form" adj. dir sg. n. 384, also varūyaum 384, 620, also varuyaum 25, 389. Sk. virūpa-, Pk virūa-, virua-, ext in OG. Note the early loss of -i- in the open syllable MG. varvũ adj.

वर्णवी *varṇavī* "having described" abs 987, varṇaviu past part m. dir. sg. 519. lw. Sk. varṇayati, the causal base is taken as primitive and inflectional suffixes are attached to it.

वर्तइ *varttai* "stays, exists" v. pres 3rd sg. 426; varttatā pres. part m. obl. sg. 514. lw. Sk. varttate, varta-.

वर्तिए *vartie* "turned" past part. loc. sg. 38. lw. Sk. vartita-, vartite

वलतउ *valatau* "turning back" pres. part m. dir. sg. 110, valatā obl. 604; valiyai pass. sg. 451. Sk. valate. Pk. valai; MG. vaḷvũ 'to turn'.

वली *valī* "again" adv. 322, 549; again and again' vali vali 94 absolutive form of the OG. base val-; s. v. valatau.

वल्गुली *valguli* "name of a disease?" valgulirogu sub. m. dir. sg. 432. lw. Sk. valgulī, meaning is not clear.

वशइतउ *vaśaitau* "due to, as a result of" (also vasaitau, vasatau and vaśatau); 73, 94. OG. vaśa + itau; cf. Sk. vaśatah. vaśāt; Tessitori §. 72.2. suggests to connect Ap. hũmtau to OG. -tau, -thau ablative post-position of OWR. This -itau may be connected with MI -hiṃto, -homto which are ablative suffixes der. uncertain s. v. itau.

[illegible] vāhara "aid, army" sub. f. dir. sg. 474. cf. MG. (dialectal) vār f. 'army', also vāhar dhāvā 'to run to help', cf. vyāharati. Pk participial form vāharia- 'called out, cf. al ... cf. Sindhi vahera 'guard' Panjabi ... vāhara 'protection', Bloch vārav?

[illegible] vāhalam "in the rivulet, stream" sub m loc. sg. 28. Ety. not clear; Dhā gives three words for rivulets; vāhalo, vāhalī and vāran. cf. MG. vāhlo OG vāhalau is probably connected with Sk. vah- 'to flow'. Bloch vāhalī.

[illegible] vāharai "shouts, calls out" v. pres. 3rd sg. 474. Ety. not clear; (prsd. the text may be corrupt and correct reading may be vāharai 'shouts, announces').

[illegible] vāhani "in the conveyance i. e. cart" sub n. loc. sg. 520. Sk. vāhane, Pk. vāhaṇe OG vāhiṇi.

[illegible] vikurvī "having changed, assuming different forms" abs. 474. Sk. vikurvaṇa- 'ability to assume different forms'; lw. Sk.

विघटिउं vighaṭium "wiped off, removed, falsified" past part. n. dir. sg. 513. lw. Sk. vighaṭate vighaṭ- + OG. verbal suffixes.

[illegible] vicakṣaṇā proper noun f. dir. sg. 573.

विचरइ vicarai "moves" pres. 3rd sg. 526. lw. Sk. vicarati.

विचि vici "between, in the middle, amidst" adv. 223. Pk. vicca- n. middle, Turner suggests Sk. vyācah, uru-vyañc- 'wide space'; perhaps *dvi-tya-may explain Pk. vicca. Short -i- in the inital syllable may be due to its usage as a postposition; MG. has vac- (in formations like vaclū, vacāl, vacaṭ; vacce has duplication -cc- for emphasis). Turner ble.

विजउ vijau proper noun m. dir. sg. 525.

विजय vijaya proper noun m. dir. sg. 426.

विजयवती vijayavatī name of a town f. dir. sg. 425.

विढइ viḍhai "rebukes" v. pres. 3rd sg. (v. l. vaḍhai) 38; viḍhaim (v. l. vaḍhaim) pl. 578. MG. vaḍhvū 'to rebuke'. Der. not known.

विणठउ viṇaṭhau "destroyed, fled" past part. m. dir. sg. 483. Sk. vinaṣṭa- Pk. viṇaṭṭha-, note the absence of compensatory lengthening.

विणासिवा viṇāsivā "to destroy" caus. inf. of purpose 111. Sk. vināśayati, Pk. viṇāsei.

विद्यापति vidyāpati proper noun, m. dir. sg. 460.

विद्वेषियां vidveṣiyām "rivals, haters" sub. obl. pl. m. 483. lw. Sk. vidveṣin, vidveṣi + OG. gender ..., or -um.

विधिसउं vidhisaum "according to the custom" adv. 325. note usage of saum: OG. vidhi + saum, vidhi-lw. Sk., saum is derived from Sk. sahitam. see under saum.

विनइ vinai "in modesty" sub. m. loc. sg. 369. lw. Sk. vinaya-.

विनडिया vinaḍiyā "troubled" past part. m. dir. pl. 470. Sk. naṭati, *vinaṭayati, Pk. viṇaḍei. Note that -n- when followed by a flapped sound in the second syllable (in this case, [ṛ]), is retained, cf. MG. kanaḍvū 'to give trouble, harass' Sk. ka-naṭ-).

विनाणी vinānī "having checked, known" abs. 55. Sk. vijnana- Pk. viṇṇāṇa-; OG. vinana- + verbal inflection, the -i- in the initial syllable may be the influence of Sk. spelling on the scribe.

विनास vināsa "destruction" sub. m. dir. sg. lw. Sk. vināśa-.

विनेउ vineu "modest, instructed" adj. dir. sg. m. 163; lw. Sk. vineyah.

विपुला vipulā name of a town dir. sg. f. 464.

विप्रतारिवउ vipratārivau "should be cheated" ger. dir. sg. m. 453. lw. Sk. vipratārayati, vipratār- + OG. verbal inflection.

विमरसइ vimarasai "thinks" v. pres. 3rd sg. 590. Sk. vimṛśati, an early lw. in Pk. vimarisai; v. s. v. vimāsai.

विमल vimala proper noun m. dir. sg. 110.

विमला vimalā proper noun f. dir. sg. 516.

विमासइ vimāsai "thinks" v. pres. 3rd sg. 590; Sk. vimṛśati Pk. *vimassai, MG. vimasaṇ f. 'problem' (Sk. vimarśanā- Pk. *vimassaṇā f.). v. s. v. vimarasai.

विराधिया virādhiā "hurt, violated" past part. pl. 358, lw. Sk. vi-rādh- + OG. verbal inflection, past part. virādhia.

विलइ vilai "in oblivion, disappearance" sub. loc. sg. 471. lw. Sk. vilaya-.

विलपतउ vilapatau "lamenting, bemoaning" pres. part. m. dir. sg. 491. lw. Sk. vilapate, vilap + OG. inflectional suffixes.

विलसिसियां vilasisiyām "enjoy" v. fut. 1st pl. 455. lw. Sk. vilasati; Sk. vilas- + fut. 1st pers. pl. suffixes siyām (< Sk.-syāmah, this is a dialectal form in OG., probably Marwari, also notice the -i- in vilas- > vilis- which indicates Marwari influence); the loss of -s of the stem is due to the inflection suffix beginning with s-.

विलोकीतउ vilokītau "being observed" pass. pres. part. m. dir. sg. 516; lw. Sk. vilokayati, viloka

वसु *vasu* proper noun m dir sg 551

वसा *vasā* "grease, fat lard" sub f (in the compound vasādi) 459 Sk vasa. Pk vasā

वसियौं *vasyāṁ* "settled, stayed" past part n dir pl. 579; vasī f dir sg 553 Sk vasati, Pk vasai. Turner basnu.

वहतउ *vahatau* "carrying" pres part m dir sg 386, vahata obl pl 94, vahata caus pres part obl sg 463. Sk vahati Pk vahai Bloch vāhaṇẽ, Turner bahanu

वहिलउं *vahilaum* "early" adj adv dir sg. n 571, 587; Pk. vahilla- ext in OG. Also noted as vihalau m, dir. sg 490, also vahilau (v. l. vihalau) 545, may be connected with the root vah- 'to flow' Bloch vahila

वहू *vahū* "wife" sub f. dir. sg 560 Sk vadhū́. Pkt vahū Bloch vahū, Turner vahu

वाइउ *vāu* "blowed (wind)" past part m dir sg 514. Sk vāti Pk vai

वाइणि *vāini* "reading" sub n loc sg. 117. Sk vācane Pk vayane OG. vaim

वाचइं *vācaim* "reads" v. pres. 3rd pl. 514; vacīju prec 3rd sg 353 ln Sk vacayati

वाछरू *vāchurū* "calves" sub dir. pl. 580. Sk vatsa-rūpa, Pk vaccha-ruva. Pk vaccha. Bloch vāsrũ, Turner bachero

वाछल्यु *vāchalyu* "donation, gift" sub dir. sg. n. 381; Sk. vatsalyam Pk. vacchalla- 'affection, love' Note the change in meaning, and sanskritisation of the OG. word.

वाडइ *vāḍai* "in the yard, enclosure" sub. m loc sg. 25. Sk. vatah. Pk. vaḍa- ext in OG, vaḍau, MG vāro Bloch vāḍa, Turner bārī

वाडि *vāḍi* "fence" sub f dir sg 181. Sk. vāṭī f. (cf. Sk vāṭah m, v. s. v. vāḍai), Pk vāḍi, vāḍī. MG vāṛ f Bloch vāḍā, Turner bārī.

वाणउत्रु *vāṇautru* "assistant in a bania's firm, usually the accountant)" sub. m. dir sg 548; vāṇautri inst sg. 518. Sk. vāṇija-putrah, Pk. vāṇiutta-, note the retention of -tr- in OG.; MG vāṇotar.

वाणवइ *vāṇavai* "describes" v. pres. 3rd sg. 173. cf. Sk. varṇayati, Pk. vaṇṇei; vaṇṇavei; the causal base is used as primitive in OG; note the OG -ṇ- which cannot be explained, and the validity of this etymology becomes questionable. cf. however Marathī vāṇ, vāṇ 'colour', Guj vāṇ 'colour'. Marathī vāṇaṇẽ, vāṇiṇẽ 'to praise'; Bloch has tried to connect the two verbs M. vāṇaṇẽ 'to describe' and H. (G) bannā 'to be ready'; but n-ṇ alternations cannot be explained Turner suggests another verb vantīl 'likes,' and further suggests that some other roots also may be confused Bloch vān, vanaṇẽ, vāṇiṇẽ, Turner baunu.

वाणारसी *vāṇārasī* name of a town f. dir. sg 553.

वाणियउ *vāṇiyau* "bania, shopkeeper" sub. m dir. sg 559, vāṇiyā obl. sg. 427, 434 Sk. vaṇijāh, Pk. vaṇia- ext in OG, vāṇia, here written as vaṇiyau Bloch vāṇī, Turner baniyā.

वात *vāta* "talk, news" sub. f. dir sg 142, 183; obl sg 548. Sk vārttā, Pk. vattā. Turner bāt.

वाधउं *vādhaum* "increased" past part. dir. sg. n. 94 Sk vṛddha- Pk. vaddha- ext. in OG, MG, vadhvũ (archaic). Bloch vāḍhṇẽ, Turner baṛnu.

वावरइ *vāparai* "uses, employs" v. pres. 3rd sg. 244 lw. Sk. vyāpara- + OG. verb inflection.

वायइं *vāyaim* "strikes (the bell, gong)" v. pres. 3rd pl. 376, the causal is used as primitive base. Sk. vadāyati, Pk. vāyai.

वार *vāra* "turn, occasion" sub. f. dir. sg. 85. Sk. varah m., Pk. vāra- m. Note that in MG and other IA languages vāra is f.; Pk. vārā f. (cf. Sk. vela f. Pk. vela f. MG. vel f. also has identical meaning and usage). Bloch vār, Turner bārī.

वारउं *vāraum* "prevent, forbid" v. pres. 1st sg. 578. vārī abs. 520. Sk. vārayati, Pk. vārei. Turner barnu.

वारवार *vāravāra* "again and again" adv. 338. OG. vara reduplicated; for der. s. v. vāra.

वालउ *vālau* "name of a wire-like worm" sub. dir. sg. m. 21. Sk. lex. vālakah m. 'bracelet' prob. connected with vāla- 'hair', made of horse-hair. MG. vāḷo 'wire', vāḷī f. 'nose-ring'—also cf. Sk. vālayati 'turns round', MG. vāḷvũ, to sweep, to turn round'. Bloch vāḷā, Turner bālo.

वावइ *vāvai* "plants, sows" v. pres. 3rd sg. 462; vavau imp. 3rd sg. 481; vāvivaum ger. dir. sg. n. 280; vāvatā pres. part. m. dir. pl. 480; vāvī past part. f. dir. sg. 466. Sk. vāpayati, Pk. vāvei. Turner ubāunu.

वावि *vāvi* "in the well" sub. f. loc. sg. 74 Sk. vāpī f. Pk. vāvī f. MG. vāv.

वासइ *vāsai* "by residence" sub. m. inst. (loc.?) sg. 455. Sk. vāsa- Pk. vāsa-, OG. ext. vāsau. MG. vāso. Bloch vās.

वासंती *vāsaṁtī* proper noun f. dir. sg. 487.

वासुपूज्य *vāsupūjya* proper noun m. dir. sg. 110.

वास्तव्य *vāstavya* "resident" sub. m. dir. pl. lw. Sk. vāstavya.

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

+OG. passive, present participial and m. suffixes : -i-ta-u.

विवर्जइ *vivarjai* "gives up" v. pres. 3rd sg. 513. lw. Sk. vivarjayati, vivarja-.

विशाद *visada* proper noun m. dir. sg. 463.

विसा *visā* "a type of measure, sometimes used to measure ground and fields also," sub. f. 411. That which is a full measure is referred to as vis vasā in MG. and half-full is referred to as das vasā; der. not known.

विषइ *viṣai* "with reference to, regarding to" post pos. 73, 369; stereotyped loc; Sk. viṣaya-viṣaye, OG. viṣai; the -ṣ- is sanskritic influence on the scribe, MG. vise.

विषइया *viṣaiyā* "belonging to the subject" sub. dir pl. m. 326. lw. Sk. viṣaya-, OG. viṣai ext. viṣaiu, the extended stem is declined for pl. viṣaiyā.

विषयासक्तु *viṣayāsaktu* "attached to carnal pleasures" past part. m. dir. sg. (v. l. viṣayāsaktu) 516. lw. Sk. viṣayāsakta-.

विसाहणउं *visāhaṇaum* "material, apparatus" sub. n. dir. sg. 380. Sk. *visādhana- Pk. *visāhaṇa- OG. ext. visāhaṇaum MG. vasāṇũ 'materials (in the preparation of sweets)'.

विसु *visu* "poison" sub. n. dir. sg. 426. Sk. viṣám; Pk. visa- n. Turner bis².

विसोधिकरणु *visodhikaraṇu* "act of purifying" sub. dir. sg n. 41. Sk. visuddhi- Pk. visuddhi- OG. visodhi-, -karaṇu : Sk. karaṇam, Pk. karaṇaṁ.

विस्तरि *vistari* "in extenso, by expanding" sub. inst sg. m. 421, 601. lw. Sk. vistara- + OG. noun declension

विस्तरी *vistarī* "spread" past part. f. 36. lw. Sk. v. s. v. vistariu.

विस्तारिउ *vistāriu* "expanded" past part. of the causal base m. dir sg. 514. vistārī abs. 74. lw. Sk. vistārayati. vistara- + OG. past part. suffix -iu.

विस्फुरइ *visphurai* "attacks" v. pres. 3rd sg. 131. lw. Sk. visphurati; MG. viphre 'attacks' is derived from the same source : Sk. visphurati, Pk. vipphurai.

विस्मउ *vismau* "astonishment" sub. m. dir. sg. 482, (v. l. vismaya) 110. lw. Sk. vismaya-.

विहरइ *viharai* "goes out (to collect alms-food)" v. pres. 3rd sg. 561; viharaim pl. 94; viharin past part. m. dir sg. 85. also vihariyau (v. l. viharin) 331; vihariva inf. 112; viharāvai ('offers alms') sg. pres. 3rd sg. 316; viharāviu past part. m. dir. sg. 112. viharāvī abs. 564 Sk. viharati, Pk. viharai.

विहलउ *vihalau* "quickly, early" v. s. v. vahilaum.

विहसइं *vihasaiṁ* "laugh, jest" v. pres. 3rd pl. 589; vihasiyām past part. n. pl. 589. Sk. vihasati. Pk. vihasai.

वीक्रिणिवउं *vīkiṇivaum* "to sell" ger. dir. sg. n. 506. Sk. vikrīṇīte, replaced by Pk. vikkiṇai. cf. Sk. vikraya- MG. (dialectal) vekvũ. Bloch vikṇẽ

वीकिवा *vīkivā* "to sell" inf. (obl.) 518; vīkii loc. sg. (of past part. vikiu) 477. Sk. vikrīyate, Pk. vikkei, MG. (dialectal) vekvũ; also v. s. v. vikiṇivaum, vecai. Bloch vikṇẽ. Turner biknu.

वीज *vīja* "lightening" sub. f. dir. sg. 20, 514. Sk. vidyút. f. Pk. vijju f. Bloch vij, Turner bijuli.

वीजाणउ *vījāṇau* "act of fanning" sub. dir sg. 12. Sk. vījyate, Pk. *vijjai, causal base vijjāva-. The nasal in MG. vĩjṇo 'fan' and Sindhi viñuṇu cannot be explained; see under vīṁjai Bloch vijṇā.

वीनवइ *vīnavai* "requests" v. pres. 3rd sg. 426; vīnaviu past part. m. dir. sg. 112; vīnavii loc. sg. 188. Sk. vijñapayati. Pk. vinnavei. viṇṇavai. Turner. binti.

वीर *vīra* proper noun m. dir. sg. 110, 522.

वीरसेनु *vīrasenu* proper noun m. dir. sg. 521.

वीस *vīsa* "twenty" adj. num. 61. Sk. -viṁśat in compounds, Pk. vīsaṁ MG. vīs. Bloch vīs, Turner bis¹.

वीसइं *vīsaiṁ* "twenty" adj. num. in the context vīsaiṁ navottara 'twenty-nine' 74; also vīsaum in the context eku sau vīsaum 'one-hundred twenty', 74, also vīsaum sau 'one hundred twenty' 613; Sk. viṁśatiḥ f., Pk. vīsai; final nasal cannot be explained, cf. Ap. vīsaṁ.

वीसमइ *vīsamai* "on the twentieth" ord. loc. sg. 335. OG. vīsa + mau; v. s. v. vīsa.

वीसारिया *vīsāriyā* "forgotten" past part. m. 601. Sk. vismarati Pk. vissarai, vissariya-, OG. vīsāriu, Bloch visarṇẽ, Turner birsanu.

वीसामा *vīsāmā* "resting places" sub. dir. pl. m. 117; vīsāmai loc. sg. 117, vīsāme loc. pl. 117. Sk. viśrāmaḥ Pk. vīsāma- OG. ext. vīsāmau. Bloch visāvṇẽ, Turner bisā.

बुड्बुड रवु *buḍbuḍa ravu* "imitation of bubbling sound made by the sinking of an object in

[illegible] dir. sg. m. 441; [illegible] the text [illegible] cf. Sk. [illegible]

[illegible]

[illegible] "[illegible] (?)" [illegible] cf. MG. [illegible] Sk. [illegible] Pk. [illegible] OG. [illegible] Turner [illegible] Agrawal has shown that Sk. [illegible] in the sense of '[illegible]' by [illegible] in his [illegible].

[illegible] "[illegible]" past part. m. dir. sg. 314. Sk. [illegible] Pk. [illegible] OG. [illegible]

[illegible] "having [illegible]" abs. 263, [illegible] past part. n. sg. 573, Sk. [illegible] Pk. [illegible]

[illegible] "distant, far" adj. dir. sg. m. 158. MG. [illegible] Pk. [illegible] Turner suggests connection with Sk. [illegible] it is possible that Sk. [illegible] is borrowed in Pk. as [illegible] Turner [illegible].

[illegible] "sells" v. pres. 3rd sg. 461, 477, 481, [illegible] 1st sg. 483; [illegible] 1st pl. 466; [illegible] past part. m. dir. pl. 435. MG. [illegible] 'to sell'. Pk. [illegible] Bloch and Turner have suggested comparison with Sk. vyayah, but Turner doubts relationship; also v. s. v. vikrīṇā, vikiṇivaum, Bloch vecṇē, Turner becnu.

वेढ vedha "binding, band" sub. 373 (bandhana-rajju vedha). Sk. veṣṭah Pk. veḍho; also v. s. v. vedhiu Bloch veḍh, veḍhṇē. Turner beṛ².

वेढिउ vedhiu "surrounded, besieged" past part. m. dir. sg. Sk. veṣṭate, veṣṭita-, Pk. *veḍhia-; also v. s. v. vedha, Bloch veḍhṇē, Turner beṛnu.

वेविर vevira "one who trembles" sub. dir. sg. m. 213. Sk. vepate, Pk. vevira- adj.

वेसर vesara "mule" sub. m. 507. lw. Sk. vesara, m. (cf. vega-sara-), Pk. vesara.

वेसाली vesāli name of a town f. dir. sg. 85.

वेसासी vesāsī "having taken in confidence" (v. 1. visāsī) caus. abs. 451. Sk. viśvāsayati Pk. visāsai, OG. vesās- + abs. ī.

वेसु vesu "dress" sub. m. dir. sg. 474. Sk. veṣaḥ Pk. vesa-.

वैताढ्य vaitāḍhya name of a mountain loc. sg. 464.

वोलइ volai "passes" v. pres. 3rd sg. 559. Pk. volai, vokī, cf. Sk. viliyate, *vyapa-liyate.

वंठ vaṃṭha "servants, helpless (?)" sub. m. dir. pl. 538. Sk. lex. vaṇṭha- 'servant, crippled, maimed, unmarried'; Pk. vaṃṭha-. For a [illegible] words expressing defectiveness cf. Sk. vaṇṭah 'tailless' [illegible] 'defective', muṇḍaḥ '[illegible]', [illegible] Maratha [illegible] 'mutilated', [illegible] and Lahanda [illegible] 'tailless, shameless, wifeless'. A non-aryan source is suggested, Turner [illegible].

वांकउ vāṃkaum "crooked" adj. dir. sg. n. 259. Sk. vakrah (also cf. [illegible] Sk. vaṅkuh going crookedly) Pk. vakka- vaṃka-, MG. vāṅkū Bloch vāk Turner baṅgo.

वांछउं vāṃchaum "I desire, I wish" v. pres. 1st sg. 19, 158, 329, also vāṃchaum 374, vāṃchau 2nd pl. 374, vāṃchatau pres. part. m. dir. sg. 433, vāṃchavau ger. dir. sg. m. 169. Sk. [illegible] Preserved in MG. idiom such as vāru [illegible] koinū būrū vāṃcvū 'to wish ill of some person', which is different from MG. vāṃcvū 'to read' which is a lw. from Sk. vācayati. OG. vacai; the nasal may be due to the analogy of cintavvū 'to think' (which again in OG. citavai and cintavai presents a confusion of Sk. cint- and citta-), vāñchana- and cintana- occur frequently as pairs.

वांदइ vāṃdai "bows, pays reverence" v. pres. 3rd sg. 73; vāṃdaum 1st sg. 85, 630, vāṃdisu fut. 1st sg. 73; vāṃdi imp. 2nd sg. 158, vāṃdau imp. 3rd sg. 108; vāṃdatau pres. part. m. dir. sg. 110, vāṃdatāṃ obl. pl. 151, vāṃditā pass. pres. part. pl. 72 vāṃdiyaiṃ pass. pl. 320, vāṃdivā inf. 73, 108, vāṃdī abs. 85, 108. Sk. vandati, Pk. vaṃdai.

वांदणउं vāṃdaṇaum "obeisance, reverence" sub. n. dir. sg. 143, vāṃdaṇā obl. Sk. vandanam Pk. vaṃdaṇam OG. ext.

विंछी viṃchī "scorpion" sub. m. 21. Sk. vṛścika Pk. vicchia-, viṃchia- MG. vīṃchī Bloch [illegible] vīcū Turner bicchī.

वींजइ viṃjai "fans" v. pres. 3rd sg. 521. Sk. vījyate, Pk. *vijjai; the nasal in OG. viṃjai, and MG. vīṃjṇo 'fan' cannot be explained. See under vījāvaṇu. Bloch vijṇā.

व्यवस्थापिवी vyavasthāpivī "should be organised, arranged" ger. f. sg. 535. lw. Sk. vyavasthāpayati, OG. vyavasthāp- + OG. verbal suffixes.

व्यापारण vyāpāraṇa "use, setting to work" sub. n. sg. 440. lw. Sk. vyāpāraṇa- n.

व्यापार vyāpāra "activity" sub. dir. sg. m. 349. lw. Sk. vyāpārah.

व्युत्सृजउं vyutsṛjaum "I give up" v. pres. 1st sg. 349. lw. Sk. vyutsṛj- + OG. verbal inflection.

*

+ OG. passive, present participial and m. suffixes : -i-ta-u.

विवर्जइ *vivarjai* "gives up" v. pres. 3rd sg. 513. lw. Sk. vivarjayati, vivarja-

विशाद *viśada* proper noun m. dir. sg. 163.

विशा *viśā* "a type of measure, sometimes used to measure ground and fields also. sub. f. 441. That which is a full measure is referred to as vis vasā in MG. and half-full is referred to as das vasā ; der. not known.

विषइ *visai* "with reference to, regarding to" post pos. 73. 369 ; stereotyped loc. Sk. visaya-visaye, OG. visai, the -ṣ- is sanskritic influence on the scribe, MG. vise.

विषइया *visaïyā* "belonging to the subject" sub. dir. pl. m. 326 lw. Sk. visaya-, OG. visai ext. visaiu, the extended stem is declined for pl. visaiyā.

विषयासक्त *visayāsaktu* "attached to carnal pleasures" past part. m. dir. sg. (v. l. visayāsaktu) 510, lw. Sk. visayāsakta-.

विसाहणउं *visāhaṇaum* "material, apparatus" sub. n. dir. sg. 386. Sk. *visādhana- Pk. *visāhaṇa- OG. ext. visāhaṇaum MG. vasāṇũ 'materials (in the preparation of sweets)'.

विष *visu* "poison" sub. n. dir. sg. 426. Sk. visám; Pk. visa- n. Turner bis[2].

विसोधिकरणु *visodhikaraṇu* "act of purifying" sub. dir. sg. n. 41. Sk. visuddhi- Pk. visuddhi- OG. visodhi-; -karaṇu : Sk. karaṇam, Pk. karaṇaṁ.

विस्तरि *vistari* "in extenso, by expanding" sub. inst. sg. m. 424, 601. lw. Sk. vistara- + OG. noun declension.

विस्तरी *vistarī* "spread" past part. f. 36. lw. Sk. v. s. v. vistāriu.

विस्तारिउ *vistāriu* "expanded" past part. of the causal base m. dir sg. 514. vistārī abs. 74. lw. Sk. vistārayati, vistāra- + OG. past part. suffix -iu.

विस्फुरइ *visphurai* "attacks" v. pres. 3rd sg. 431. lw. Sk. visphurati; MG. viphre 'attacks' is derived from the same source : Sk. visphurati, Pk. vipphurai.

विस्मउ *vismau* "astonishment" sub. m. dir. sg. 482, (v. l. vismaya) 110. lw. Sk. vismaya-.

विहरइ *viharai* "goes out (to collect alms-food)" v. pres. 3rd sg. 561 ; viharaim pl. 91 ; vihariu past part. m. dir sg. 85, also vihariyau (v. l. vihariu) 531 ; viharivā inf. 112 ; viharāvai ('offers alms') caus. pres. 3rd sg. 516 ; viharāviu past part. m. dir. sg. 112, viharāvi abs. 561 Sk. viharati, Pk. viharai.

विहलउं *vihelum* "quickly, early" v. s. v. vahilaum.

विहसइं *vihasaim* "laugh, jest" v. pres. 3rd pl. 589, vihasiyaim past part. n. pl. 589. Sk. vihasati Pk. vihasai.

वीकिणिवउं *vikinivaum* "to sell" ger. dir. sg. n. 308 Sk. vikrinite, replaced by Pk. vikkiṇai. cf. Sk. vikraya- MG. (dialectal) vekvũ. Bloch vikṇe

वीकिवा *vikivā* "to sell" inf. (obl.) 548 ; vikii loc. sg. (of past part. vikiu) 177. Sk. vikrīyate, Pk. vikkei. MG. (dialectal) vekvũ; also v. s. v. vikinivaum, vecai. Bloch vikṇẽ, Turner bikmu.

वीज *vija* "lightening" sub. f. dir. sg. 20, 514. Sk. vidyut. f. Pk. vijju f. Bloch vij, Turner bijuli.

वींजणउ *vimjaṇau* "act of fanning" sub. dir sg. 12. Sk. vijyate, Pk. *vijjai, causal base vijjāva-. The nasal in MG. vĩjṇo 'fan' and Sindhi viñaṇu cannot be explained; see under vimjai Bloch vijṇa.

वीनवइ *vinavai* "requests" v. pres. 3rd sg. 426; vinavia past part. m. dir. sg. 112 ; vinavii loc. sg. 188. Sk. vijñapayati, Pk. viṇṇavei, viṇṇavai. Turner, binti.

वीर *vira* proper noun m. dir. sg. 110, 522.

वीरसेनु *virasenu* proper noun m. dir. sg. 521.

वीस *visa* "twenty" adj. num. 61. Sk. -viṁśat in compounds, Pk. vīsaṁ MG. vis, Bloch vis, Turner bis[1].

वीसइं *visaim* "twenty" adj. num. in the context visaiṁ navottara 'twenty-nine' 74 ; also visaum in the context eku sau visaum 'one hundred twenty', 71, also visaum sau 'one hundred twenty' 613 ; Sk. viṁśatiḥ f., Pk. visai ; final nasal cannot be explained, cf. Ap visaṁ.

वीसमइ *visamai* "on the twentieth" ord. loc. sg 355. OG. visa + mau ; v. s. v. visa.

वीसारिया *visāriyā* "forgotten" past part. m. 604 Sk. vismarati Pk. vissarai, vissariya-, OG vissariu, Bloch vi-arṇẽ, Turner birsanu.

वीसामा *visāmā* "resting places" sub. dir. pl. m. 117 visāmai loc. sg. 117, visāme loc. pl. 117. Sk viśrāmaḥ Pk. vissāma- OG. ext. visāmau. Bloch visavṇẽ, Turner bisā.

वुडवुडा रव *vudavuḍa rava* "imitation of bubbling sound made by the sinking of an object i

सुरगु *suragu* proper noun m. dir. sg. 430.

सुसइ *susai* "dries" v. pres. 3rd sg. 516, short -u- in initial syllable may be graphic. Sk. śuṣyati Pk. sussai (Sk. śoṣayati, Pk. sosei, MG. sos-vũ).

सुसरउ *susarau* "father-in-law, wife's or husband's father" sub. m. dir. sg. 556, Sk. śvaśuraḥ, Pk. sasura- ext. in OG. sasurau, initial -u- may be graphic, or assimilatory. MG. sasro. v. l. v. sasura, Bloch sāsrā, Turner sasuro.

सुह *suhu* "joy, happiness" sub. n. dir. sg. 432. Sk. sukham Pk. suhaṁ OG. suh-u.

सूकइ *sūkai* "dries" v. pres. 3rd sg. 300, Sk. śuṣkah Pk. sukkha-, sukka-. Bloch sukā, Turner suko, sukau.

सूकवणु *sūkavaṇu* "drying — action of-" sub. n. dir. sg. 12, v. s. v. sūkai.

सूकी *sūkī* "dry" adj. f. 601, v. s. v. sūkai. OG. sūk- + feminine suffix -ī.

सूग *sūga* 'disgust, dislike" sub. f. dir. sg. 435, cf. MG. sūg, f. der. not known.

सूचिउ *sūciu* "suggested, indicated" past part. m dir. sg. 501; sūcaveraüṁ caus. gen. n. sg. 10; sūcaverāṁ n. pl. 10. Sk. sūcyate, sūcayati.

सूझइ *sūjhai* "purifies, becomes clear" v. pres. 3rd sg. 13, 172, 230; sūjhavi caus. abs. 484. Sk śudhyati Pk. sujjhai, Turner sujhnu.

सूनी *sūnī* "swollen" past part. f. dir. sg. 521, Sk. śūyate, śūnāḥ (cf. śūnyā- originally 'hollowness, emptiness' MG. sūn) Pk. sūṇa- suṇa-, MG. sujvũ, sunvũ, Bloch sunā, Turner sujnu.

सूतउ *sūtau* "sleeping" adj. past part. m. dir. sg 447, 482; sūtā obl. sg. 446; sūtai loc. sg. 481, sūte inst. sg. 250, Sk. suptáḥ Pk. sutta. Turner sutnu.

सूत्रधार *sūtradhāra* "carpenter" sub. m. 408. lw. Sk.

सूलणकरण *sūlaṇakaraṇa* "act of cutting, arranging, trimming" sub. n. sg. 440. lw. Sk. siālana + karaṇa.

सूयइ *sūyai* "sleeps" v. pres. 3rd sg. 163; sūyai pass. sg. 259; sūyāri caus. abs. 25. Sk. svāpati, Pk. suvai, MG. suvũ. Turner sutnu.

सूयडउ *sūyaḍau* "parrot" sub. m. dir. sg. 463, Sk. śuka- Pk. sua- ext. -ḍau, MG. suḍo.

सूर *sūra* proper noun m. dir. sg. 443.

सूरण *sūraṇa* "a vegetable which grows under the ground" sub. n. dir. sg. 288. MG. sūraṇ. Der. not known.

सूरता *sūratā* "heroism" sub. f. sg. 48. Sk. śūraḥ Pk. sūra, OG. sūra + tā.

सूर्य *sūrya* proper noun m. dir. sg. 4?4.

सेउ *seu* "perspiration" sub. dir. sg. m. 2??. Sk. svedah Pk. seo, seu, MG. parsevo 'perspiration' replaced by Sk. prasvedah, OG. *parseu, parseo.

सेठि *seṭhi* "merchant, businessman (rich)" sub. m. obl. sg. 432, 549. Sk. śreṣṭhī Pk. seṭṭhi MG. seṭh, Bloch seṭ Turner seṭh².

सेतिका *setikā* "a type of measure, more common as Jain theological term" sub. f. 459 lw. Sk. (not found in MW), Pk. seigā, seiā.

सेव *seva* "service" sub. f dir. sg. (v. l. sevā) 432 Sk. seva Pk. sevā

सेवाली *sevālī* proper noun m dir. sg. 109.

सेवालाहारी *sevālahārī* "one who lives by eating sevala — sea weeds—" adj. m dir. sg. 109. lw. Sk. sevala + āhārin.

सेविउ *seviu* "served" past part m. dir. sg. 516; sevatau pres. part m dir. sg 222, seviyai pass. sg. 516, Sk. sevate Pk. sevai.

सोधउं *sodhaüm* "find" v. pres 1st pl. 456, sodhatau pres. part. m dir sg. 242, sodhi abs. 325; cf. Sk. suddha-, śiddham, which might have developed as the NIA stem sodh-, or this may be a lw. fr. Sk. sodhayati, to avoid confusion with soh- from śobhate see Turner sodhnu.

सोल *sola* "sixteen" num. dir sg 74, Sk. ṣoḍaśa, Pk. solasa, solaha, Bloch soḷa, Turner sora.

सोलमा *solamā* "sixteenth" ord. obl. 222; solamai loc. sg 335, (lw) sola + rama, v. s. v. sola.

सोसियकाय *sosiyakāya* "whose bodies have withered, emaciated" adj. m. dir. pl. 110, Sk. śoṣita-kāya-, Pk. sosia + kāya, lw Pk

संकोडी *saṁkoḍī* "having reduced, shrunk" abs. 532, Sk. *saṁkoṭa- 'put together', ?? f. 'bringing together'; cf. Pk saṁkhalite 'shrivelled, shrunk' Pk. saṁkula-, saṁkoḍa- 'contraction'

संक्रामिया *saṁkrāmiyā* "caused to move" past part of the causal base m pl 22 lw Sk saṁkram- + [illegible]

संघाडउ *saṁghāḍau* "pair, couple" sub m. dir sg. 4??, Sk. saṁghāṭa- Pk. saṁghāḍa- ext [illegible]

संयम *saṁyama* "control, restraint" sub. m. dir sg. 373; Sk. saṁyama- Pk. saṁjama- lw. Pk

संयमसूरि *saṁyamasūri* proper noun m dir. sg. 4??

संलेखना *saṁlekhanā* "[illegible] (two [illegible] and [illegible] of the body, Jain theological term)" sub. [illegible] pl. m. 1??, 3??; cf. MG. [illegible] [illegible] [illegible] the [illegible] of the [illegible] have [illegible] meaning in this context 'having [illegible] the sides' [illegible] [illegible] samlesa- Turner [illegible]

साठि *sāṭhi* "sixty" num. dir. sg. 10, 121. Sk. ṣaṣṭiḥ Pk. saṭṭhi OG. sāṭhi MG. sāṭh. Bloch sāṭh, Turner sāṭhi.

साठु *sāṭhu* "sixty" num. dir. sg. 74; also sāṭhu sau 'one hundred sixty' 618. Sk. ṣaṣṭiḥ f. Pk. saṭṭhi- f. OG. expected form is sāṭhi, but sāṭhu can be explained by analogical extension of -u from other numerals. v. s. v. sāṭhi.

सात *sāta* "seven" num. dir. sg. 29, 73; sāte inst. pl. 438. Sk. saptá Pk. satta-, Bloch sāt, Turner sāt.

सातगारव *sātagārava* "complascent on account of happiness, arrogance of happiness" (first part of a compound (sātagāravādi) sub. 566. Sk. sāta + gaurava, lw. (Jain theological term) in Pk. sāta + gārava.

सातमी *sātamī* "seventh" ord. f. dir. sg. OG. sāta + ord. suffix ma-u, v. s. v. sāta.

साति *sāti* "with, together" meaning is not clear, nor is derivation. 465. (context: tahārau ghoḍau āpanau sāti).

सातू *sātū* "cooked flour (sweetened)" sub. dir. sg. m. 288. Sk. sáktuḥ m. Pk. sattu-, sattua-, OG. sātū; Bloch sātū, Turner sātu.

साधइ *sādhai* "accomplishes" v. pres. 3rd sg. 434. lw. Sk. sādhayati.

सामहउ *sāmahau* "in front of, opposite" adj. adv. (v. l. sāmmau, sāmuhau, sāmuhum, samahau) dir. sg. m. n. 73, 488, 516, 545, 579; sāmmuhā obl. pl. 454; sāmuhī f. sg. 562. Sk. sammukhaḥ Pk. sammuha- OG. ext. Bloch samor, Turner sāmu.

सारवियइ *sāraviyai* "is accomplished" v. caus. pass. 3rd sg. 438. Sk. sārati Pk. sarai v. s. v. sarium. Bloch sarṇẽ, Turner sarnu.

सारिखा *sārikhā* "equal" adj. obl. 51. v. s. v. sarīkhau.

सारिं *sāriṁ* "dice" sub. f. dir. pl. 483. Sk. lex. sārī f. 'chessman' Pk. sāri f. 'colourful container from which dice are tossed, while gambling'.

सास *sāsa* "breath" sub. m. 42. Sk. śvāsaḥ Pk. sāsa-, Turner sās.

सासू *sāsū* "wife or husband's mother" sub. f. 201. Sk. śvaśrūḥ Pk. sassū-. Bloch sāsū, Turner sās.

साहिउ *sāhiu* "held" past part. m. dir. sg. 536, sāhi abs. 435, 539. Sk. sādhayati Pk. sāhai sāhai, OG. sāhai.

सि *si* "they" dem. pro. nom. pl. 537; it occurs as a correlative, e. g. ji nāṭhā si nāṭhā. Sk. saḥ. Pk. so OG. sa analogically influenced by Sk. ye Pk. je OG. pl. Elsewhere, ti (Sk. te) is used.

सिखिउ *sikhiu* "learnt" past part. m. dir. sg. 365. (The initial short -i- is a scribal error, other mss. have long -ī-). Sk. śikṣate Pk. sikkhai, Bloch sikṇẽ, Turner siknu.

सिद्धिं *siddhiṁ* "towards perfection, salvation" sub. f. loc. sg. 121. lw. Sk. siddhi + OG. loc suffix.

सीत *sīta* "cold" adj. dir. sg. 166. Sk. sīta-.

सीदाइ *sīdāi* "becomes despondent, gets afflicted, exhausted", pres. sg. 215. lw. Sk. sīdati.

सीधउं *sīdhaum* "established" adj. dir. sg. n. 102. Sk. siddham. Pk. siddha- ext. OG.; notice MG. "sidhũ" with altered meaning 'straight'. Turner sidho.

सीम *sīma* "upto, within the limit" post pos. 110, also sīmu 523. Sk. sīmán, sīmā, Pk. simā. Bloch s. v.

सीमंधर *sīmaṁdhara* proper noun m. dir. sg. 547.

सीमालु *sīmālu* "staying on the border, frontier" sub. dir. sg. m. 451. Sk. sīmā- Pk. sīmāla-. v. s. v. sīma.

सीयाले *sīyāle* "in winter" sub. loc. sg. 401. Sk. sītakālaḥ, Pk. sīa- āla.

सु *su* "he" dem. pro. m. nom. sg. 109, 111, 305. Sk. saḥ. Pk. so, v. s. v. sa.

सुकुमालिका *sukumālikā* "a type of puri-like preparation." sub. f. 311. This is a sanskritization of the MG. suvāḷī. lw. Sk.

सुखिउ *sukhiu* "happy" adj. dir. sg. m. 94. lw. Sk. sukhī, OG. sukhu ext. with -u.

सुजाणु *sujāṇu* "intelligent, clever (man)" adj. dir. sg. m. 586; OG. su + jāṇu; v. s. v. jāṇai.

सुदत्तु *sudattu* proper noun m. dir. sg. 517.

सुद्धि *suddhi* "purification" sub. f. 315. Sk. śuddhiḥ, Pk. suddhi, lw. Pk.

सुदर्शनु *sudarśanu* proper noun m. dir. sg. 445.

सुपार्श्व *supārśva* proper noun m. dir. sg. 110.

सुभ *subha* "good, auspicious" adj. n. dir. sg. 435. Sk. subha-; lw. Sk.

सुमति *sumati* proper noun m. dir. sg. 110.

सुमित्रु *sumitru* proper noun m. dir. sg. 451, 534, 539.

सुरसेन *surasena* proper noun m. dir. sg. 521.

सुलहलादिक *sulahalādika* "sulahala and others; sulahala is a type of small insect" sub. 338, 401. Der. not known.

सुविधि *suvidhi* proper noun m. dir. sg. 110.

[illegible] proper noun m. dir. sg. 420

[illegible] "dries" v. pres. 3rd sg. 310 [illegible] initial syllable may be graphic. Sk. [illegible] Pk. [illegible] (Sk. [illegible], Pk. [illegible], MG [illegible]

[illegible] "father-in-law, wife's or husband's father" sub. m. dir. sg. 556, Sk. [illegible] Pk. [illegible] ext. In OG, [illegible] [illegible] may be graphic, or assimilatory MG [illegible] [illegible], Hindi [illegible], Turner [illegible]

[illegible] "joy, happiness" sub. n. dir. sg. 472 Sk. [illegible] Pk. [illegible] OG. [illegible]

[illegible] "dries" v. pres. 3rd sg. [illegible] Sk. [illegible] Pk. [illegible] Hindi [illegible], Turner [illegible]

[illegible] "drying—action of [illegible]" [illegible] sg. 13, v. [illegible] v. [illegible]

[illegible] "dry" adj. f. 631, [illegible] + feminine suffix [illegible]

[illegible] "disgust, dislike" sub. f. dir. sg. 435 cf. Mod. [illegible] f. [illegible] not known

[illegible] "suggested, indicated" past part. [illegible] dir. sg. 601 [illegible] Sk. [illegible]

[illegible] "purifies, becomes clear" v. pres. 3rd sg. 13, 178, 237 [illegible] Pk. [illegible] Turner [illegible]

[illegible] "swollen" past part. f. dir. sg. [illegible] Sk. [illegible] Pk. [illegible] Mod. [illegible] Turner [illegible]

[illegible] "sleeping" adj. past part. [illegible] 402 [illegible] Pk. [illegible] Turner [illegible]

[illegible] "carpenter" [illegible]

[illegible]

[illegible]

साठि *sāṭhi* "sixty" num dir sg 10, 121 Sk. ṣaṣtiḥ Pk. saṭṭhi OG. saṭhi MG. sāṭh Bloch sāṭh, Turner saṭhi.

साठु *sāṭhu* "sixty" num dir. sg. 74; also saṭhu sau 'one hundred sixty' 618 Sk. ṣaṣṭiḥ f. Pk. saṭṭhi- f. OG. expected form is sāṭhi, but sāṭhu can be explained by analogical extension of -u from other numerals. v. s. v. sāṭhi

सात *sāta* "seven" num dir sg 28, 73, sāte inst pl. 438 Sk. saptá Pk. satta, Bloch sāt, Turner sāt.

सातगारव *sātagārava* "complascent on account of happiness, arrogance of happiness" (first part of a compound (sātagāravāli) sub. 566, Sk. sāta + gaurava, lw. (Jain theological term) in Pk. sāta + gārava.

सातमी *sātamī* "seventh" ord. f. dir. sg. OG. sāta + ord. suffix ma-u, v. s. v. sāta.

साति *sāti* "with, together" meaning is not clear, nor is derivation. 465, (context: taharau gholau āpaṇau sāti).

सातू *sātū* "cooked flour (sweetened)" sub. dir. sg. m. 288, Sk. sáktuḥ m. Pk. sattu-, sattua-, OG. sātū; Bloch sātū, Turner sātu.

साधइ *sādhai* "accomplishes" v. pres. 3rd sg 431 lw. Sk. sādhayati.

सामहउ *sāmahau* "in front of, opposite" adj. adv. (v. l. sāmmau, sāmuhau, sāmuhum, samahau) dir. sg. m. n. 73, 488, 516, 545, 579, sāmmuhā obl. pl. 454; sāmuhi f. sg 562. Sk. sammukhaḥ Pk. sammuha- OG. ext Bloch samor, Turner sāmu.

सारवियइ *sāraviyai* "is accomplished" v caus. pass. 3rd sg. 438. Sk. sārati Pk. sarai v. s. v. sarium. Bloch sarṇẽ, Turner sarnu.

सारिखा *sārikhā* "equal" adj. obl. 51. v. s. v. sarikhau.

सारिं *sāriṁ* "dice" sub. f. dir. pl. 483, Sk. lex. sārī f. 'chessman' Pk. sāri f. 'colourful container from which dice are tossed while gambling'.

सास *sāsa* "breath" sub. m. 42, Sk. śvāsaḥ Pk. sāsa-, Turner sās.

सासू *sāsū* "wife or husband's mother" sub. f. 201, Sk. śvaśrūḥ Pk. sasū-, Bloch sāsū, Turner sās.

साहिउ *sāhiu* "held" past part. m. dir. sg. 556, sāhī abs. 435, 539, Sk. sādhayati Pk. sāhai sāhai, OG. sāhai.

सि *si* "they" dem. pro. nom. pl. 537; it occurs as a correlative, e. g. ji nāthā si nāthā, Sk. saḥ. Pk. se OG. se analogically influenced by Sk. ye Pk. je OG. je. Elsewhere, ti (Sk. te) is used.

सिखिउ *sikhiu* "learnt" past part. m. dir. sg. 50 (The initial short -i- is a scribal error, other mss. have long -ī-). Sk. śikṣate Pk. sikkhai, Bloch sikṇẽ, Turner sikṇu.

सिद्धिं *siddhiṁ* "towards perfection, salvation" sub. f. loc. sg. 121 lw. Sk. siddhi + OG. loc. suffix

सीत *sīta* "cold" adj. dir. sg. 166, Sk. sīta-.

सीदाइ *sīdāi* "becomes despondent, gets afflicted, exhausted" pres. sg. 215, lw. Sk. sīdati.

सीधउं *sīdhauṁ* "established" adj. dir. sg. n. 102. Sk. siddham, Pk. siddha- ext. OG.; notice MG. 'sidhũ' with altered meaning 'straight'. Turner sidho

सीम *sīma* "upto, within the limit" post pos. 110, also sīmu 523, Sk. sīmān, sīmā, Pk. sīmā. Bloch s. v.

सीमंधर *sīmaṁdhara* proper noun m. dir. sg. 547.

सीमालु *sīmālu* "staying on the border, frontier" sub. dir. sg. m. 451. Sk. sīmā- Pk. sīmāla-. v. s. v. sīma.

सीयाले *sīyāle* "in winter" sub. loc. sg. 401. Sk. śītakālaḥ, Pk. sia- āla.

सु *su* "he" dem. pro. m. nom. sg. 109, 111, 365, Sk. saḥ, Pk. so, v. s. v. sa.

सुकुमारिका *sukumārikā* "a type of puri-like preparation." sub. f. 311. This is a sanskritization of the MG. sūvaḷī. lw. Sk.

सुखिउ *sukhiu* "happy" adj. dir. sg. m. 91. lw. Sk. sukhī, OG. sukhi ext. with -u.

सुजाणु *sujāṇu* "intelligent, clever (man)" adj. dir. sg. m. 586; OG. su + jāṇu; v. s. v. jāṇai.

सुदत्तु *sudattu* proper noun m. dir. sg. 547.

सुद्धि *suddhi* "purification" sub. f. 345, Sk. śuddhiḥ, Pk. suddhi, lw. Pk.

सुदर्शनु *sudarśanu* proper noun m. dir. sg. 445.

सुपार्श्व *supārśva* proper noun m. dir. sg. 110.

सुभ *subha* "good, auspicious" adj. n. dir. sg. 435. Sk. śubha-; lw. Sk.

सुमति *sumati* proper noun m. dir. sg. 110.

सुमित्रु *sumitru* proper noun m. dir. sg. 451, 531 559.

सुरसेन *surasena* proper noun m. dir. sg. 521.

सुलहलादिक *sulahalādika* "sulahala and others; sulahala is a type of small insect" sub. 338, 401. Der. not known.

सुविधि *suvidhi* proper noun m. dir. sg. 110.

[illegible] proper noun m. dir. sg. 430.

[illegible] *susai* "dries" v. pres. 3rd sg. 316, short -u- in initial syllable may be graphic, Sk. śuṣyati Pk. sosai (Sk. śoṣayati, Pk. sosei, MG. sos-vũ),

[illegible] *sasaraü* "father-in-law, wife's or husband's father" sub. m. dir. sg. 530, Sk. śvaśuraḥ, Pk. sasura- ext. in OG. sasurau, initial -a- may be graphic, or assimilatory, MG. sasro, v. s. v. sasara, Bloch sāsrā, Turner sasuro.

[illegible] *suha* "joy, happiness" sub. n. dir. sg. 432, Sk. sukham Pk. suham OG. suh-u.

[illegible] *sūkai* "dries" v. pres. 3rd sg. 309, Sk. śuṣkaḥ Pk. sukkha-, sukka-, Bloch sukā, Turner suko, sukna,

सूकवणु *sūkavaṇu* "drying – action of–" sub. n. dir. sg. 12, v. s. v. sūkai,

सूकी *sūkī* "dry" adj. f. 601, v. s. v. sūkai, OG. sūk- + feminine suffix -ī,

सूग *sūga* "disgust, dislike" sub. f. dir. sg. 435, cf. MG. sūg, f. der. not known.

सूचिउ *sūciu* "suggested, indicated" past part. m. dir. sg. 501; sūcavevaum caus. gen. n. sg. 10; sūcavevām n. pl. 10, Sk. sūcyate, sūcayati,

सूझइ *sūjhai* "purifies, becomes clear" v. pres. 3rd sg. 13, 172, 230; sūjhavī caus. abs. 484, Sk. śudhyati Pk. sujjhai, Turner sujhnu,

सूणी *sūṇī* "swollen" past part. f. dir. sg. 521, Sk. śūyate, śūnaḥ (cf. śūnyá- originally 'hollowness, emptiness' MG. sūn) Pk. sūṇa- sūṇa-, MG. sujvũ, sujvũ, Bloch sunā, Turner sujnu,

सूतउ *sūtau* "sleeping" adj. past part. m. dir. sg. 447, 482; sūtā obl. sg. 446; sūtai loc. sg. 481; sūte inst. sg. 259, Sk. suptáḥ Pk. sutta, Turner sutnu,

सूत्रधार *sūtradhāra* "carpenter" sub. m. 408. lw. Sk.

सूदणकरण *sūdaṇakaraṇa* "act of cutting, arranging, trimming" sub. n. sg. 410. lw. Sk. sūdana – + karaṇa.

सूयइ *sūyai* "sleeps" v. pres. 3rd sg. 163; sūīyai pass. sg. 259; sūyārī caus. abs. 25. Sk. svápati, Pk. suvai, MG. suvũ. Turner sutnu.

सूयडउ *sūyaḍau* "parrot" sub. m. dir. sg. 463, Sk. śuka- Pk. sua- ext. -ḍau, MG. suḍo.

सूर *sūra* proper noun m. dir. sg. 41[illegible]

सूरण *sūraṇa* "a veg[illegible] ground" sub. n [illegible] not known.

सूरता [illegible]

सूर्य *sūrya* proper noun m. dir. sg. 41[illegible]

सेउ *seu* "perspiration" sub. [illegible] Sk. svedaḥ Pk. seo, seu; [illegible] Sk. prasvedaḥ, OG. [illegible] parasev.

सेठि *seṭhi* "merchant, [illegible]" sub. m. obl. sg. 432, 349, Sk. śreṣṭhi Pk. [illegible] ṣeṭh, Bloch [illegible] Turner seṭhī.

सेलिका *selikā* "a type of [illegible] as Jain theological term" sub. f. [illegible] (not found in MW); [illegible]

सेव *seva* "service" sub. f. dir. sg. [illegible] Sk. sevā Pk. sevā,

सेवाडी *sevāḍī* proper noun m. dir. sg. [illegible]

सेवालाहारी *sevālāhārī* "one who lives by eating śevāla-sea weeds" sub. m. dir. sg. [illegible] Sk. śevāla + āhāra,

सेविउ *seviu* "served" past part. m. dir. sg. [illegible] sevatau pres. part. m. dir. sg. 221, [illegible] pass. sg. 516, Sk. sevate Pk. sevai,

सोधउं *sodhaum* "find" v. pres. 1st pl. [illegible] sodhatau pres. part. m. dir sg. 212; [illegible] cf. Sk. śuddha-, śodhana, which might have developed as the NIA stem sodha-, or [illegible] be a lw. fr. Sk. śodhayati, to avoid confusion with sodh- from [illegible], see Turner sodhnu

सोल *sola* "sixteen" num. dir. sg. [illegible] Sk. ṣoḍaśa Pk. solasa, solaha. Bloch sola, Turner sora

सोलमा *solamā* "sixteenth" ord. adj. [illegible] mai loc. sg. 335; OG. sola + mau, [illegible]

सोसियकाय *sosiyakāya* "whose body has [illegible] ed, emaciated" adj. m. dir. pl. [illegible] kāya-, Pk. sosia + kāya, lw. Pk.

संकोडी *saṁkoḍī* "having raised, drawn [illegible]" 532, Sk. *saṁkṛta- 'put together' [illegible] f. 'bringing together'; cf. Pk. [illegible] 'shrivelled, shrunk' Pk. [illegible] 'contraction'.

संक्रमाविया *saṁkramāviyā* "caused to [illegible]" part. of the causal base m. pl. [illegible] saṅkram- + OG. āv-ia,

संघाडउ *saṁghāḍau* "pair, couple" [illegible] sg. 435, Sk. saṅghāṭa- Pk. [illegible]

संजम *saṁjama* "control, [illegible]" sg. 573; Sk. [illegible]

संजमसरि [illegible]

संतावइ *samtāvai* "troubles, harasses" v. caus. pres. 3rd sg. 526. Sk. samtāpayati Pk. samtāvei. MG. satāvvũ; note the loss of nasal in most of NIA languages. Turner satāunu.

संथारउ *samthāraü* "a bed (of a monk), place where the monks live" sub. m. dir. sg. 541, samthārai loc. sg. 323; samthārā obl. 338; MG sāthro 'bed on which a person is placed before death'; Sk. samstāra-, Pk. samthār, OG. ext.

संदिसावउं *samdisāvaum* "I get permission" v. caus. pres. 1st sg. 342; Sk. samdiśati, Pk. samdisai, caus. samdisāvei.

संदेसउ *samdesaü* "message" sub. dir. sg. m. 192. Sk. samdesa- Pk. samdesa- ext. in OG.

संधुखण *samdhukhaṇa* "act of lighting (fire)" sub. n. 440. note OG. -ṣ- for -kh-. Sk samdhukṣaṇa- Pk. samdhukkhaṇa-.

संनिवेसि *samnivesi* "in the residence" sub. m loc. sg. 112. Sk samnivesa- Pk. samnivesa-.

संपजइ *sampajai* "succeeds, prospers, accrues" v. pres. 3rd sg. 589. Sk sampadyate Pk. sampajjai.

संबंधिउ *sambamdhiu* "relative" sub. m. dir. sg. 16, 519, sambamdhiuṁ n sg 115, sambamdhiyāṁ n. pl 135. Sk. sambandhin Pk. sambamdhi ext. in OG.

संबंधिवउ *sambamdhivaü* "should be related" ger. (denominative) dir. sg. m. 513 OG. sambamdha- (v. s. v. sambamdhiu) as a verbal stem.

संभव *sambhava* proper noun m dir sg 110.

संभवइं *sambhavaim* "likely to happen, develop, to produce" v pres. 3rd pl 433, sambhaviu caus. past part. m. dir. sg. 461, sambhāvitau pass. pres. part m dir. sg 110, sambhāvi abs. 531. Sk. sambhavati, Pk. sambhavai, lw Pk.

संभार *sambhāra* "goods, stuff" sub. m. dir. sg. 4?3 Sk. sambhāraḥ Pk sambhāro m. 'collection' v. s. v. sambharai.

संभूवी *sambhūvī* "having adorned, provided" abs. 51? lw. Sk sambhāvati, sambhāva- + [illegible] also [illegible].

संवछरिउ *samvacchariu* "annual" sub adj. 585; Sk samvatsara-, sāmvatsarika, Pk samvacchariya- lw. Pk.

साईं *sāīṁ* "meet cordially, embrace" sub. inst. sg. 146, also sāīe inst. 578; ety. not clear. cf. Sk. sajātiḥ 'belonging to the same family', see Turner sāinu.

सांचरतउं *sāmcarataüṁ* "moving, going" pres. part m. dir. sg. 376. Sk. sañcarati, Pk. samcarai.

सांढि *sāṁḍhi* "female camel" sub. f. dir. sg. 311, 558; Sk. saṇḍhikā, Pk. saṇḍhī, OG. sāṁḍhi, MG. sā̃ḍh m. 'uncastrated bull' should be separated from sā̃ḍh, sā̃ḍhṇi f. female camel'. The former is related to Sk. sáṇḍaḥ 'uncastrated'; the source of latter is not clear Sk. saṇḍhikā is a sanskritization of Pk. saṇḍhi (hence short -i in OG. and -zero in MG.). Bloch sā̃ṛ, Turner sā̃ṛ

सांधिइ *sāmdhii* "having connected, aimed" past part. loc. sg. 453. Sk. samdadhāti Pk. samdhai OG. sāmdhai, sāmdhiu. Bloch sā̃dh, Turner sā̃dhnu.

सांपडिउ *sāmpaḍiu* "attained" past part. m. dir. sg. 461. Sk. *sampatita- cf. Sk. sampatati. v. s. v. paḍai. Bloch sā̃parṇẽ.

सांभरइ *sāmbharai* "remembers" v. pres. 3rd sg. 326, 345; sāmbharaiṁ 3rd pl. 604; sāmbharūṁ 1st sg. 345; sāmbharatā pres. part. obl. 345. sāmbhari past part. f. 601. Sk. sámbharati 'collects', sambhārayati, Pk. sambhārei 'garnishes'; MG. sambhārvũ 'to remember' and sambhār 'masala used in cooking preparations'. Turner samālnu, sambhārnu.

सांभलइ *sāmbhalai* "hears, listens" v. pres. 3rd sg. 429, 529, sambhalau imp. 2nd pl. 329; sāmbhalata pres. part. (unenlarged 86); sāmbhalatau pres. part. m. dir. sg. 426, sāmbhalatā obl. pl. 426, sambhaliu past part. m. dir. sg. 367, 519; sāmbhaliuṁ n. sg. 109, sāmbhaliyai pass. sg. 157, 420, sāmbhaliyaiṁ pass. pl. 371; sāmbhalatī pass. pres. part. m. sg. 326; sāmbhalivā inf. of purpose 426; sāmbhali abs. 85, 100, 409. cf MG. bhāḷvũ 'to observe, see', nihāḷvũ 'to see', sā̃bhaḷvũ 'to hear', sambhāḷvũ 'to guard, take care of'. Sk. bhālayate, nibhālayati and sambhālayati. For -r- forms in MG. sāmbhārvũ, sambhār, see under sambharai. Turner samālnu, niyālnu, sambhārnu.

सिंहलसु *simhalasu* proper noun m dir. sg 525

सांचलु *saṁcalu* "a type of salt" sub. dir. sg. n. 20 MG. saṁcal; De. saṁcalu–. Initial –aṁ– > –a– in MG. cannot be explained.

सूंठि *sūṁṭhi* "ginger" sub. f. sg. 314. also suṁṭhi 291. Sk. śuṇṭhīḥ, śuṇṭhī 'dry ginger'. Pk. suṇṭhi, MG. sũṭh; final –i in OG. may be a prakritic inference. Bloch sũṭ. Turner suṭho.

स्तवउं *stavauṁ* "I praise" v. pres. 1st sg. 377; stavisiiṁ fut. 3rd sg. 622; stavitai pass. pres. part. loc. sg. 80; lw. Sk. stava + OG. verbal inflection.

स्मशानि *smaśāni* "to the burial ground" sub. n. loc. sg. lw. Sk. śmaśānam., OG. smaśān + loc. sg. suffix –i.

स्वाध्याउ *svādhyāu* "meditation, study." sub. m. dir. sg. (v. l. svādhyāya) 109. lw. Sk. svādhyāyaḥ, svādhyāya– (for final –u in OG. cf. Sk. vinaya– lw. in OG. vinau MG. vano, Sk. śatruñjaya– lw. in OG. śatruṁjau MG. śatruṁjo, etc.)

*

[illegible] *hauṁ* "I" 1st pers. pro. nom. sg. m. f. (v. l. haṁ, hau, hũṁ) 74, 65; Sk. ahám, Pk. aham. ahaam. Initial a– before h– develops as a murmured vowel in MG. hũ.

हकारइ *hakārai* "calls, invites" v. pres. 3rd sg. 403; also hakārei (v. l.) 544. Sk. lex. hakkāra 'making of the sound hak', onomat. sound of calling Pk. hakkārei, hakkārai; MG. haṁkārvũ 'to drive'; also cf. MG. hāk f. 'call, shout, challenge'. Bloch hā̃kṇẽ, Turner hā̃knu, hakārnu.

हडि *haḍi* "wooden fetters" sub. f. dir. 402. Sk. haḍiḥ m., Pk. haḍi m., OG. haḍi f. MG. heṛ f.

हथियारु *hathiyāru* "weapon" sub. n. dir. sg. 329. Sk. *hasta-kāra– Pk. hatthiyāra– n. Turner hatiyār.

हथूंडु *hathūṁḍu* "hammer" sub. dir. sig. m. 213. Sk. *hasta-kūṭa–; (Sk. hástaḥ and kūṭam 'mallet' Pk. kūḍa) Pk. *hattha-ūḍa–. MG. hathoḍo. Nasalisation in OG. cannot be explained. Turner hotro.

हरइ *harai* "takes away, robs" v. pres. 3rd sg; harivā inf. of purpose 7. Sk. hárati, Pk. harai. Bloch harṇẽ, Turner harnu.

हरषिउ *harasiu* "pleased" past part. m. dir. sg. 429. harasiyā (v. l. harṣiyā) pl. 142. Sk. hárṣati, harṣita; MG. harakh indicates that –ṣ– should be interpreted as –kh– and hence the intervening stage *harisai, *harisiu should be independent of the Pk. harisia.

हरियालु *hariyālu* "sulphuret of arsenic, yellow orpiment" sub. dir. sg. m. 20. Sk. haritāla– m., Pk. hariāla– m. n.

हलावउं *halāvauṁ* "cause to shake, move" v. caus. pres. 1st sg. 309. Pk. hallai, MG. halvũ; but cf. Hindi hilnā, Panjabi hillanā; Dravidian origin is suggested. Bloch hālnẽ, Turner hilnu, hallinu.

हरिदत्त *haridatta* proper noun m. dir. sg. 425.

हलयउ *halayau* "light (of weight)" adj. dir. sg. m. 602. Probably the text should be haluyau; cf MG haḷvo Sk. laghuḥ, laghukaḥ, Pk. lahua–, halua–. Bloch suggests Dravidian origin. Bloch haḷū, Turner haluko, halaũ.

हव *hava* "now" adv 452, 590, (v. l. hiva) 480; MG have; cf H and other Bihari dialects ab, abe, abai etc. Absence of –b– forms in the western group leads Chatterji (ODBL p. 856) to suggest Sk. evám, Pk. evvam; for the a– of the demonstrative base cf. Sk. asau, adyá, átra etc. h– in Guj cannot be explained, but it may be analogical extension of Sk. adhunā, Pk. ahunā MG. haṃṇā. OG alternant hiva with –i– in the initial syllable is properly explained by Pk. evvam; also OG. havadām– hivalām are explained as extended forms of hava–. Thus, MG. haṃṇā and havṛā, havre (dialectal) should be kept apart.

हवडा *havaḍā* "just now" adv. 142, also havadām 465, 573. for der. s. v. hava

हसतउ *hasatau* "laughing, jesting" pres. part. m. dir. sg. 223, 514, 536. Sk. hasati, Pk. hasai; Bloch hasṇẽ, Turner hā̃snu.

हस्तिपुर *hastipura* proper noun m. dir. sg. 461.

हाकिउ *hākiu* "drove out" past part. m. dir. sg 428. Pk. hakkā f. "call"; MG. hā̃kvũ to drive; v. s. v. hakārai.

हाट *hāṭa* "shop" sub. sg. 386, 478, also haṭṭa 478; Sk. haṭṭaḥ m. 'market', lex. haṭṭī f.; Pk. haṭṭa– m. haṭṭigā, haṭṭī f. "small shop', MG. hāṭ f. n. Turner hāṭ.

हाडु *hāḍu* "bone" sub. n. dir. sg 245. MG hāṛ n. 'bone' Pk. De. haḍḍa; Bloch suggests connection with Sk. ásthi n. 'bone', aṣṭiḥ f. 'kernel of fruit', aṣṭhīlā f. 'round pebble', but –ṣṭha– > –ḍḍa– cannot be explained. Bloch hāṛ, Turner hāṛ.

हाथ *hātha* "hand" sub. m. dir. sig. 38, hāthi inst. sg. 538, 539; also loc. sg. 541; hāthe inst. pl. 463; also loc. pl. 10; Sk. hásthaḥ, Pk. hattha–. Bloch hāt, Turner hāt.

संतावइ *saṃtāvai* " troubles, harasses " v. caus. pres. 3rd sg. 326. Sk. saṃtāpayati Pk. saṃtāvei. MG. satāvvũ; note the loss of nasal in most of NIA languages. Turner satāunu.

संथारउ *saṃthāraü* " a bed (of a monk), place where the monks live " sub. m. dir. sg. 541. saṃthārai loc. sg. 323; saṃthārā obl. 338; MG. sãthro ' bed on which a person is placed before death'; Sk. saṃstāra-, Pk. saṃthār, OG. ext.

संदिसावउं *saṃdisāvaum* " I get permission " v. caus. pres. 1st sg. 312, Sk. saṃdiśati, Pk. saṃdisai, caus. saṃdisāvei.

संदेसउ *saṃdesaü* " message " sub. dir. sg. m. 192. Sk. saṃdeśa- Pk. saṃdesa- ext in OG.

संधुखण *saṃdhuṣaṇa* " act of lighting (fire) " sub. n. 440. note OG. -ṣ- for -kh-. Sk saṃdhukṣaṇa- Pk. saṃdhukkhaṇa-.

संनिवेसि *saṃnivesi* " in the residence " sub. m loc. sg. 112. Sk saṃniveśa- Pk. saṃnivesa-.

संपजइ *saṃpajai* " succeeds, prospers, accrues " v. pres. 3rd sg. 588. Sk sampadyate Pk. saṃpajjai.

संबंधिउ *saṃbaṃdhiu* " relative " sub. m. dir. sg. 16, 519, saṃbaṃdhiuṃ n sg 115, saṃbaṃdhiyāṃ n. pl 135. Sk. sambandhin Pk. saṃbaṃdhi ext. in OG.

संबंधिवउ *saṃbaṃdhivaü* " should be related " ger. (denominative) dir. sg. m. 513. OG. saṃbaṃdha- (v. s. v. saṃbaṃdhiu) as a verbal stem.

संभव *saṃbhava* proper noun m. dir sg. 110.

संभवइं *saṃbhavaiṃ* " likely to happen, develop, to produce " v pres. 3rd pl 433, saṃbhāviu caus. past part. m. dir. sg. 461, saṃbhāvitau pass. pres. part m dir. sg 110, saṃbhāvī abs. 534. Sk. saṃbhavati, Pk. saṃbhavai, lw Pk.

संभार *saṃbhāra* " goods, stuff " sub. m. dir. sg. 463. Sk. saṃbhāraḥ Pk. saṃbhāro m. ' collection ', v. s. v. saṃbhārai

संहरी *saṃhārī* " having adorned, provided " abs. 515. lw. Sk. saṃharati, saṃhara- + OG. abs. [illegible]

संवछरिउ *saṃvacharia* " annual " sub. adj. 343; Sk. saṃvatsara-, sāṃvatsarika. Pk. saṃvaccha-riya- lw. Pk.

संस्तवउं *saṃstavaum* " I praise " v. pres. 1st sg 614, saṃstavatau pres part m. dir. sg 110. lw Sk saṃstavate, saṃstav + OG verbal [illegible]

संहरी *saṃharī* " having destroyed, withdrawn " abs 613. Sk saṃharati Pk saṃharai, lw. saṃhara- + OG abs [illegible]

साइं *sāiṃ* " meet cordially, embrace " sub. inst. sg. 446, also sāĩ inst. 578; ety. not clear. cf. Sk. sajātiḥ ' belonging to the same family ', see Turner sāinu.

सांचरतउं *sāṃcaratauṃ* " moving, going " pres. part. m. dir. sg. 376. Sk. sañcarati, Pk. saṃcarai.

सांढि *sāṃḍhi* " female camel " sub. f. dir. sg. 311, 558; Sk. saṇḍhikā. Pk. saṇḍhī, OG. sāṃḍhi, MG. sā̃ḍh m. ' uncastrated bull ' should be separated from sā̃ḍh, sā̃ḍhṇī f. female camel '. The former is related to Sk. śaṇḍaḥ ' uncastrated '; the source of latter is not clear Sk. saṇḍhikā is a sanskritization of Pk. saṇḍhi (hence short -i in OG and -zero in MG.). Bloch sā̃ḍ, Turner sā̃ḍ

सांधिउ *sāṃdhiu* " having connected, aimed " past part. loc. sg. 453. Sk. saṃdadhāti Pk. saṃdhai OG. sāṃdhai, sāṃdhiu. Bloch sā̃dh, Turner sā̃dhnu.

सांपडिउ *sāṃpaḍiu* " attained " past part. m. dir. sg. 461. Sk. *sampatita- cf. Sk. sampatati, v. s. v. paḍai. Bloch sā̃parṇẽ.

सांभरइ *sāṃbharai* " remembers " v. pres. 3rd sg. 326, 345; sāṃbharaiṃ 3rd pl. 604; sāṃbharũṃ 1st sg. 345; sāṃbharatā pres. part. obl. 345. sāṃbharī past part. f. 601. Sk. saṃbharati ' collects ', saṃbhārayati, Pk. saṃbhārei ' garnishes '; MG. sambhārvũ ' to remember ' and sambhār 'masala used in cooking preparations'. Turner samālnu, sambhārnu.

सांभलइ *sāṃbhalai* " hears, listens " v. pres. 3rd sg. 429, 529, sāṃbhalau imp. 2nd pl. 329; sāṃbhalata pres. part. (unenlarged 86); sāṃbhalatau pres. part. m. dir. sg. 426, sāṃbhalatā obl. pl. 426, sāṃbhaliu past part. m. dir. sg. 367, 519; sāṃbhaluṃ n. sg. 109, sāṃbhalīyai pass. sg. 157, 420, sāṃbhalīyaiṃ pass pl. 371; sāṃbhalītī pass. pres. part. m. sg. 326; sāṃbhalivā inf. of purpose 426; sāṃbhalī abs. 85, 109, 498. cf MG bhāḷvũ ' to observe, see ', nihāḷvũ ' to see ', sā̃bhaḷvũ ' to hear ', sambhāḷvũ ' to guard, take care of '. Sk. bhālayate, nibhālayati and sambhālayati. For -r- forms in MG sambhārvũ, sambhār, see under sāṃbharai. Turner samālnu, niyālnu, sambhārnu.

सिंहदत्त *siṃhadatta* proper noun m dir sg 525

सिंह *siṃha* proper noun m dir. sg 487.

सींचइ *sīṃcai* " sprinkles " v. pres 3rd sg 521; sīṃcatau pres part m dir sg 519 Sk. siñcati, Pk siṃcai Bloch sĩcṇẽ, Turner sĩcnu

सींधव *sīṃdhava* " rock-salt " sub. dir. sg. m. 22 Sk saindhava- Pk. siṃdhava-

संचलु *sūṁcalu* "a type of salt" sub. dir. sg. n. 20. MG. saṁcal; De. sumcalu–. Initial -um–> -a- in MG. cannot be explained.

संठी *sūṁṭhi* "ginger" sub. f. sg. 314. also sunthī 291. Sk. śuṇṭhiḥ, śuṇṭhi 'dry ginger'. Pk. suṇṭhī, MG. sũṭh; final -ī in OG. may be a prakritic influence. Bloch sũṭ, Turner sutho.

स्तवउं *stavauṁ* "I praise" v. pres. 1st sg. 377; stavisii fut. 3rd sg. 622; stavitai pass. pres. part. loc. sg. 80; lw. Sk. stava + OG. verbal inflection.

स्मसानि *smasāni* "to the burial ground" sub n. loc. sg. lw. Sk. śmaśānám., OG. smasān + loc. sg. suffix -i.

स्वाध्याउ *svādhyāu* "meditation, study." sub. m. dir. sg. (v. l. svādhyāya) 109. lw. Sk. svādhyāyaḥ, svādhyāya- (for final -u in OG. cf. Sk. vinaya- lw. in OG. vinau MG. vano, Sk. śatruñjaya- lw. in OG. śatruṁjau MG. śatrumjo, etc.)

*

हउं *haum* "I" 1st pers. pro. nom. sg. m f. (v. l. hum, hau, hūm) 74, 85; Sk. ahám, Pk. aham, ahaam. Initial a- before h- develops as a murmured vowel in MG. hũ.

हकारइ *hakārai* "calls, invites" v. pres. 3rd sg. 403; also hakārei (v. l.) 544. Sk. lex. hakkāra 'making of the sound hak", onomat. sound of calling. Pk. hakkārei, hakkārai; MG. hamkārvũ 'to drive'; also cf. MG. hāk f. 'call, shout, challenge'. Bloch hãkṇẽ, Turner hãknu, hakārnu.

हडि *haḍi* "wooden fetters" sub. f. dir. 402. Sk. haḍiḥ m., Pk. haḍi m., OG. haḍi f. MG. heṛ f.

हथियारु *hathiyāru* "wepon" sub. n. dir. sg. 529. Sk. *hasta-kāra- Pk. hatthiyāra- n. Turner hatiyār.

हथूंडउं *hathūṁḍũ* "hammer" sub. dir. sig. m. 213. Sk. *hasta-kūṭa-; (Sk. hástaḥ and kúṭam 'mallet' Pk. kūḍa) Pk. *hattha-ūḍa-. MG. hathoṛo. Nasalisation in OG. cannot be explain[illegible] hotro.

[illegible] way, robs" v. pres. 3rd sg; [illegible] pose 7. Sk. hárati, Pk. harai. [illegible] rnu.

[illegible] past part. m. dir. sg. [illegible] vā) pl. 142. Sk. hárṣati, [illegible] indicates that -a- [illegible] -kh- and hence the [illegible] sai, *harisiu should be harisia.

हरियालु *hariyālu* "sulphuret of arsenic, yellow orpiment" sub. dir. sg. m. 20. Sk. haritāla- m., Pk. hariāla- m. n.

हलावउं *halāvauṁ* "cause to shake, move" v. caus. pres. 1st sg. 309. Pk. hallai, MG. halvũ; but cf. Hindi hilnā, Panjabi hillanā; Dravidian origin is suggested. Bloch hālṇẽ, Turner hilnu, hallinu.

हरिदत्तु *haridattu* proper noun m. dir. sg. 425.

हलयउ *halayau* "light (of weight)" adj dir. sg. m. 602. Probably the text should be haluyau; cf MG. haḷvo. Sk. laghúḥ, laghukaḥ, Pk. lahua-, halua-, Bloch suggests Dravidian origin. Bloch haḷũ. Turner haluko, halaũ

हव *hava* "now" adv. 452, 590, (v. l hiva) 480; MG. have; cf H. and other Bihari dialects ab, abe, abai etc. Absence of -b- forms in the western group leads Chatterji (ODBL p. 836) to suggest Sk. evám, Pk evvam; for the a- of the demonstrative base cf Sk. asau, adyá, átra etc. h- in Guj. cannot be explained, but it may be analogical extension of Sk. adhunā, Pk. ahuṇā MG. hamṇā OG. alternant hiva with -i- in the initial syllable is properly explained by Pk. evvam; also OG. havaḍām- hivaḍām are explained as extended forms of hava-. Thus, MG. hamṇā and havrā, havṛe (dialectal) should be kept apart

हवडा *havaḍā* "just now" adv. 142, also havaḍām 465, 573. for der. s v. hava.

हसतउ *hasatau* "laughing, jesting" pres. part. m. dir. sg. 223, 514, 536. Sk. hasati, Pk. hasai; Bloch hasṇẽ, Turner hãsnu.

हस्तिपुरु *hastipuru* proper noun m. dir. sg. 461.

हाकिउ *hākiu* "drove out" past part. m. dir. sg. 428. Pk. hakkā f. "call"; MG. hãkvũ to drive; v. s. v. hakārai.

हाट *hāṭa* "shop" sub. sg 386, 478, also haṭṭa 478; Sk. haṭṭaḥ m. 'market', lex. haṭṭī f.; Pk. haṭṭa- m. haṭṭigā, haṭṭī f. "small shop', MG. hāṭ f. n. Turner hāṭ.

हाडु *hāḍu* "bone" sub. n. dir. sg 245. MG. hāṛ n. 'bone' Pk. De. haḍḍa; Bloch suggests connection with Sk. ásthi n. 'bone', aṣṭhiḥ f. 'kernel of fruit', aṣṭhīla f. 'round pebble', but -ṣṭha- > -ḍḍa- cannot be explained. Bloch hāṛ, Turner hāṛ.

हाथ *hātha* "hand" sub. m dir sg. 28; hāthi inst. sg. 538, 559; also loc sg. [illegible] o inst. pl. 463; also loc. [illegible] 10; [illegible] h, Pk. hattha-, Bloch [illegible]

हाथियउ *hāthiyau* "elephant" sub. dir. sg. m. 341; hāthiyā pl. 74; Sk. hastī m., Pk. hatthi, OG. hāthi- ext. with -u; Bloch hattī, Turner hāti.

हारइ *hārai* "is defeated, loses" v. pres. 3rd sg. 470; hārium past part. n. dir. sg. 471; hārī abs. 470. Original causal is employed as a primitive base Sk. hārayati, Pk. hārei, hāraī.

हासउं *hāsaum* "laughter" sub. dir. sg. n. 520. Sk. hāsyam, Pk. hassa- n. OG. hāsa- ext. -um.

हियइ *hiyī* "heart" sub. n. obl. sg. 111, 446, 578; Sk. hṛdayam Pk. hiaam, OG. hiyaum Bloch hiyyā, Turner hiyo.

हिव *hiva* "now" adv. 571. for der. s. v. hava.

हिवडां *hivaḍām* "just now" adv. 427, 576; for der. s. v. hava.

हीरालग *hīrālaga* "(ornament) on which diamonds are studded" sub. 519. Sk. hīraka- Pk. hīraa, OG hīrā; Sk. lagyati, Pk. laggai, OG. suffix -laga, lagi. cf. motīlaga.

हीलिउ *hīliu* "insulted, did not show respect" past part. n. sg. 133 Pk. hīlai 'insults', prob. connected with Sk. helā, or hīḍ- hīḷ- hīḍati, hīḷati. OG hīla- is suffixed with Sk. past part. suffix -ita, which in turn is suffixed by OG. -u. Bloch heḷaṇẽ

हुयणहार *hūyaṇahāra* "that which is destined, that which is going to be" sub. n. dir. sg. 179. OG. (huyai) huyaṇa + hāra

हेठइ *heṭhai* "below" adv. adj. sg. loc.(v. l. heṭhi) 38, heṭhī f. 420, heṭhau m. dir. sg. 589; goes with genitive or compounded with stem. Sk. adhastāt contam. upariṣṭāt would give *adhiṣṭāt; Buddhist Sk. heṣṭā, heṣṭāto, Pk. heṭṭhā, heṭṭha-.

हे *he* particle for address, vocative particle 580. Sk. he. Pk. he -e is retained as a special treatment in OG

होइ *hoi* "is, becomes" v. pres. 3rd sg. 74, 425, (also used in fut. sense) 468; hoisi fut. 3rd sg 434, 550, hoisim pl. 539; hoisi 2nd sg 437, hoisu 1st sg 470, 473, hoisum 1st pl. 110; hoyatai pres. part. loc. sg. 59, 539 ,-used as conditional. hoijiu precative 3rd sg. 527, 528; hoijium 1st sg. 516, 571; hoī abs. 430, 474; hoivaum ger. n. dir. sg. 420, hoivā inf. of purpose 577. huyai v. pres. 3rd. sg. 109, 473, 526; huyaim pl. 74; huum 1st sg. (in fut. sense) 473. huu imp. 3rd sg. 386; hūyau past part. m. dir. sg. 74, 85, 386; also hūau, 38, hūu 365; huyaum n. sg. 74; huī f. sg. 94, 463; huyā 538, (v. l. hūā) 142 pl; huyām n. pl. 85; hūṃtau [illegible]res. part. m. dir. sg. 522, 540, also hūṃtu 73, 425; hūṃtā pl. 425, 473; as an auxiliary after other past participle: mokaliyā huṃtā 538, also 401; also hūto m. sg. 402 and hūtā m. pl. 425, 473; hūtī f. sg. 425; huṃtai loc. sg. 529; also huṃte 438; huṃtai inst. sg. 539; hunta unenlarged pres. part. 426, huntai enlarged pres. part. loc. sg 386 used in conditional sense. huī abs. 463, 474. Sk. bhávati, *bhoti, Pk. hoi, hoaī; Bloch hoṇẽ, Turner hunu.

होडपातनु *hoḍapātanu* "making a noise, making a bet" sub. n. dir. sg. 12. De. huḍḍā, hoḍ la, MG. hoṛ. f.; OG. hoḍa + pātanu lw. Sk.

होला *holā* "parched grain" sub. m. obl. (in a compound: puhuṃkā holādika) 502; MG. Oḷo 'parching of green seeds of gram; prepared and consumed on the field as a part of festival.' der. not known.

हंस *haṃsa* proper noun m. dir. sg. 431.

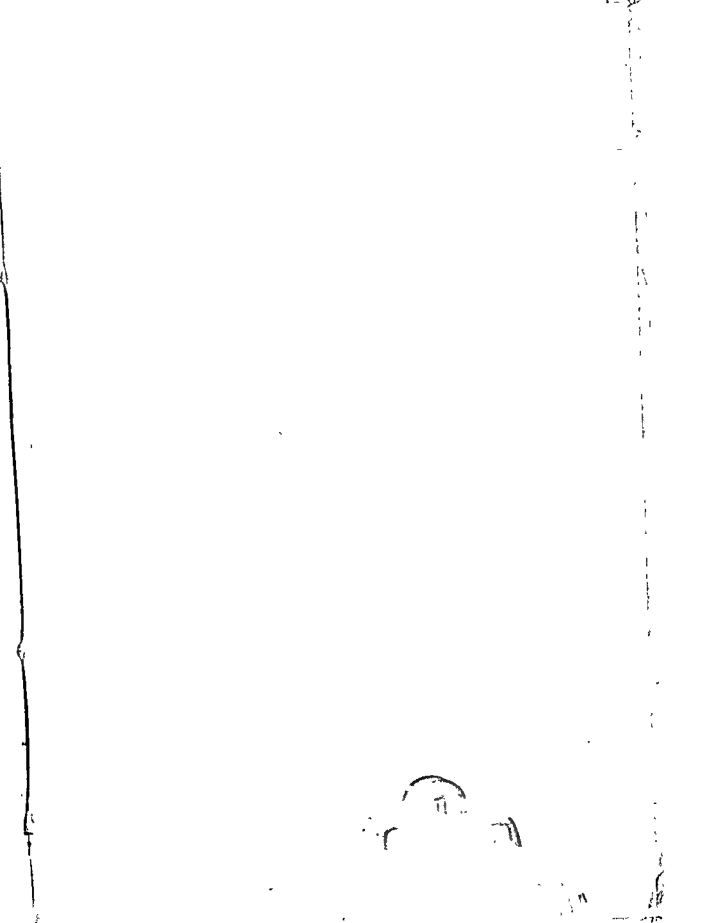
हांडी *hāṃḍī* "earthen cooking pot" sub. f. sg. 175 late Sk. haṇḍikā f. Turner hā̃ṛi.

हांडुली *hāṃḍulī* "small earthen pot (for cooking)" sub. f. sg. 178; for der. [illegible] v. hāṃḍi, MG. hā̃ḍlī, hā̃ḍlī.

हिं *hiṃ* emphatic particle 38, 74, 108, 416, 454, see Intro.

हींगलो *hīṃgalo* "Ferula Asa Fœtida" sub. dir. sg. m. 20. Sk. hiṅguḥ m. Pk. hiṃgula- m. n. OG. ext. hiṃgulau. MG. hĩgḷo. Bloch hĩg. hiṃgūḷa. Turner hiṅ.

हींडइ *hīṃḍai* "walks" v. pres. 3rd sg. 525; hīṃḍatau pres. part. m. dir. sg 544. Sk. dhātup hiṇḍate, Pk. hiṃḍai, MG. hĩḍvũ. Turner hĩṛnu



हाथियउ *hāthiyau* "elephant" sub. dir. sg. m. 344; hāthiyā pl. 74; Sk. hastí m., Pk. hatthi, OG. hāthi- ext. with -u; Bloch hattī, Turner hāti.

हारइ *hārai* "is defeated, loses", v. pres. 3rd sg. 470; hārium past part. n. dir. sg. 471; hārī abs. 470. Original causal is employed as a primitive base. Sk. hārayati, Pk. hārei, hārai.

हासउं *hāsauṁ* "laughter" sub. dir. sg. n. 520. Sk. hāsyam, Pk. hassa- n. OG. hāsa- ext. -um.

हिया *hiyā* "heart" sub. n. obl. sg. 111, 446, 578; Sk. hŕdayam Pk. hiaam, OG. hiyauṁ Bloch hiyyā, Turner hiyo.

हिव *hiva* "now" adv. 571. for der. s. v. hava.

हिवडां *hivaḍāṁ* "just now" adv. 427, 576; for der. s. v. hava.

हीरालग *hīrālaga* "(ornament) on which diamonds are studded" sub. 519. Sk. hīraka- Pk. hīraa, OG. hīrā; Sk. lagyati, Pk. laggai, OG. suffix -laga, lagi. cf. motīlaga.

हीलिउ *hīlīu* "insulted, did not show respect" past part. n. sg 153. Pk. hīlai 'insults', prob. connected with Sk. helā, or hīḍ- hīḷ- hīḍati, hīḷati. OG. hīla- is suffixed with Sk. past part. suffix -ita, which in turn is suffixed by OG. -u. Bloch heḷaṇẽ.

हुयणहार *huyaṇahāra* "that which is destined, that which is going to be" sub. n. dir. sg. 170. OG. (huyai) huyana + hāra.

हेठइ *heṭhai* "below" adv. adj sg. loc. (v. l. heṭhi) 38, heṭhī f 420; heṭhau m. dir. sg. 589; goes with genitive or compounded with stem. Sk. adhástāt contam upáriṣṭat would give *adhiṣṭāt; Buddhist Sk. heṣṭā, heṣṭāto, Pk. heṭṭhā, heṭṭha-.

हे *he* particle for address, vocative particle 580. Sk. hē. Pk. he -e is retained as a special treatment in OG.

होइ *hoi* "is, becomes" v. pres 3rd sg. 74, 425, (also used in fut. sense) 466; hoisii fut. 3rd sg 434, 550; hoisiṁ pl. 538; hoisi 2nd sg. 437; hoisu 1st sg 470, 473; hoisum 1st pl. 110; hoyatai pres. part loc sg. 59, 539;—used as conditional. hoijiu precative 3rd sg. 527, 528; hoijiuṁ 1st sg. 516, 571; hoī abs. 430, 474; hoivauṁ ger. n. dir. sg. 420, hoivā inf. of purpose 577. huyai v. pres. 3rd. sg. 109, 473, 526; huyaiṁ pl. 74; huuṁ 1st sg. (in fut. sense) 473. huu imp. 3rd sg. 386; hūyau past part. m. dir. sg. 74, 85, 386; also hūau, 38, hūu 365; huyauṁ n. sg. 74; huī f. sg. 94, 463; huyā 538, (v. l. hūā) 142 pl; huyāṁ n. pl. 85; hūṁtau pres. part. m. dir. sg. 522, 540, also hūṁtu 73, 425; hūṁtā pl. 425, 473; as an auxiliary after other past participle: mokaliyā huṁtā 538, also 401; also hūto m. sg. 402 and hūtā m. pl. 425, 473; hūtī f. sg. 425; huṁtai loc. sg. 529; also huṁte 438; huṁtai inst. sg. 539; hauta unenlarged pres. part. 426, hautai enlarged pres. part. loc. sg 386 used in conditional sense. huī abs. 463, 474. Sk. bhávati, *bhoti, Pk. hoi, hoai; Bloch hoṇẽ, Turner hunu.

होडपातणु *hoḍapātaṇu* "making a noise, making a bet" sub. n. dir. sg. 12. De. huḍḍā, hoḍḍa, MG. hoṛ. f.; OG. hoḍa + pātaṇu lw. Sk.

होला *holā* "parched grain" sub. m. obl. (in a compound : puhuṁkā holādika) 502; MG. oḷo 'parching of green seeds of gram; prepared and consumed on the field as a part of festival.' der. not known.

हंस *haṁsa* proper noun m. dir. sg. 451.

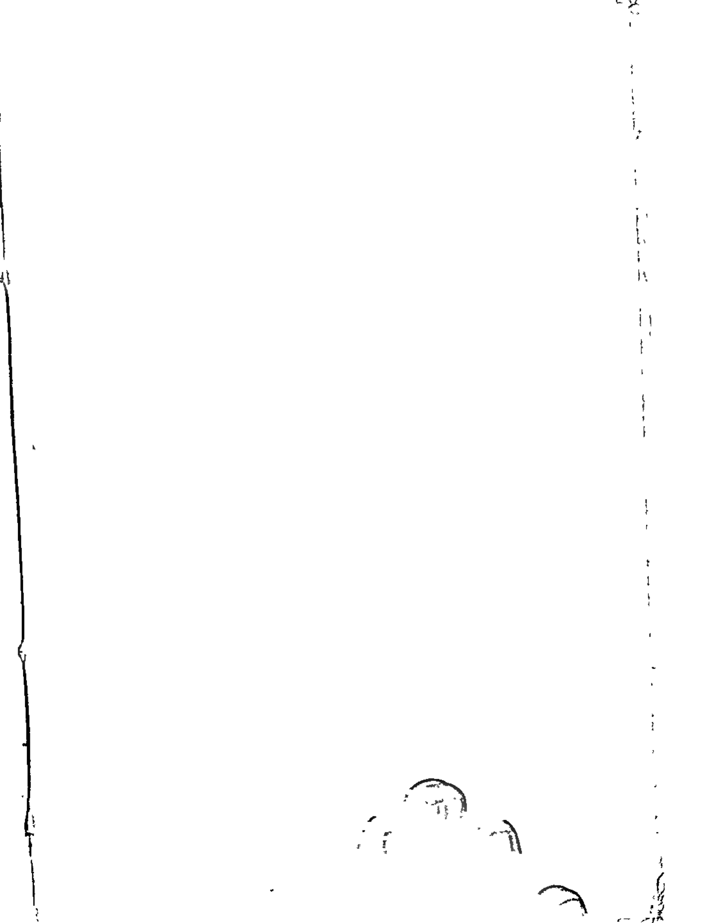
हांडी *hāṁḍī* "earthen cooking pot" sub. f. sg. 175 late Sk. haṇḍikā f. Turner hā̃ṛī.

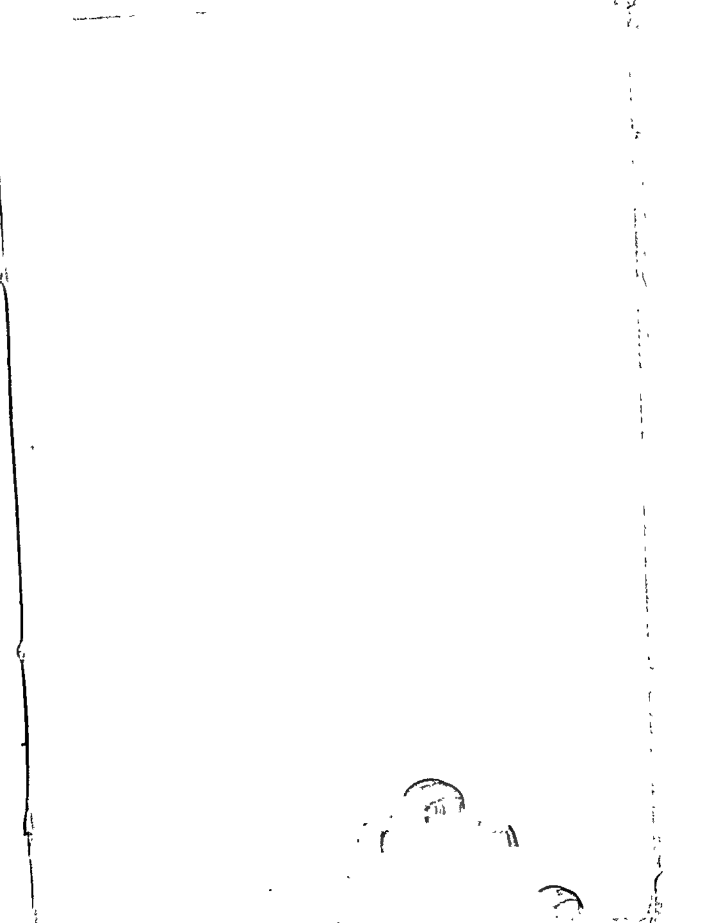
हांडुली *hāṁḍulī* "small earthen pot (for cooking)" sub. f. sg. 178; for der. s. v. hāṁḍī, MG. hā̃ḍī, hā̃llī.

हिं *hiṁ* emphatic particle. 38, 74, 108, 416, 454, see Intro.

हींगलो *hīṁgalo* "Ferula Asa Fœtida" sub. dir. sg. m. 20. Sk. hiṅguḥ m. Pk. hiṁgula- m. n. OG. ext. hiṁgulau. MG. hĩ̄gḷo. Bloch hĩg, hiṁgūḷa. Turner hiṅ.

हींडइ *hīṁḍai* "walks" v. pres. 3rd sg. 525; hīṁḍatau pres. part. m. dir. sg. 514. Sk. dhātup. hiṇḍate, Pk. hiṁḍai, MG. hī̃ḍvũ. Turner hĩṛnu





संतावइ *saṁtavai* "troubles, harasses" v. caus. pres. 3rd sg. 526. Sk. saṁtāpayati Pk. saṁtavei, MG. satāvvũ; note the loss of nasal in most of NIA languages. Turner satāunu.

संथारउ *saṁthārau* "a bed (of a monk), place where the monks live" sub. m. dir. sg. 541. saṁthārai loc. sg. 323; saṁthārā obl. 338. MG. sãthro 'bed on which a person is placed before death'; Sk. saṁstāra-, Pk. saṁthār, OG. ext.

संदिसावउं *saṁdisāvaum̐* "I get permission" v. caus. pres. 1st sg. 342; Sk. saṁdiśati, Pk. saṁdisai, caus. saṁdisāvei.

संदेसउ *saṁdesau* "message" sub. dir. sg. m. 102. Sk. saṁdeśa- Pk. saṁdesa- ext. in OG.

संधूखण *saṁdhūkhaṇa* "act of lighting (fire)" sub. n. 440; note OG. -ṣ- for -kh-. Sk. saṁdhukṣaṇa- Pk. saṁdhukkhaṇa-.

संनिवेसि *saṁnivesi* "in the residence" sub. m. loc. sg. 112. Sk. saṁniveśa- Pk. saṁnivesa-.

संपजइ *saṁpajai* "succeeds, prospers, accrues" v. pres. 3rd sg. 588. Sk. saṁpadyate Pk. saṁpajjai.

संबंधिउ *saṁbaṁdhiu* "relative" sub. m. dir. sg. 16, 519; saṁbaṁdhium n. sg. 115; saṁbaṁdhiyām̐ n. pl. 135. Sk. sambandhin Pk. saṁbaṁdhi ext. in OG.

संबंधिवउ *saṁbaṁdhivau* "should be related" ger. (denominative) dir. sg. m. 513. OG. saṁbaṁdha- (v. s. v. saṁbaṁdhiu) as a verbal stem.

संभव *saṁbhava* proper noun m. dir. sg. 110.

संभवइं *saṁbhavaim̐* "likely to happen, develop; to produce" v. pres. 3rd pl. 433; saṁbhāviu caus. past part. m. dir. sg. 461; saṁbhāvitau pass. pres. part. m. dir. sg. 110; saṁbhāvi abs. 534. Sk. sambhavati, Pk. saṁbhavai, lw. Pk.

संभारु *saṁbhāru* "goods, stuff" sub. m. dir. sg. 463. Sk. sambhāraḥ Pa. sambhāro m. 'collection', v. s. v. sāṁbharai.

संभूषी *saṁbhūṣī* "having adorned, provided" abs. 545. lw. Sk. sambhūṣati, saṁbhūṣ- + OG. abs. suffix.

संवच्छरिय *saṁvacchariya* "annual" sub. adj. 383; Sk. saṁvatsara-, sāṁvatsarika, Pk. saṁvacchariya- lw. Pk.

संस्तवउं *saṁs'tavaum̐* "I praise" v. pres. 1st sg. 614; saṁstavatau pres. part. m. dir. sg. 110. lw. Sk. saṁstavate, saṁstav + OG. verbal suffixes.

संहरि *saṁhari* "having destroyed, withdrawn" abs. 463. Sk. saṁharati Pk. saṁharai, lw. saṁhar- + OG. abs. suffix.

साईं *sāim̐* "meet cordially, embrace" sub. inst. sg. 116, also sāne inst. 578; ety. not clear, cf. Sk. sajātiḥ 'belonging to the same family', see Turner sainu.

सांचरतइं *sāṁcaratāṁ* "moving, going" pres. part. m. dir. sg. 376. Sk. saṁcarati, Pk. saṁcarai.

सांढि *sāṁḍhi* "female camel" sub. f. dir. sg. 311, 558. Sk. saṇḍhikā, Pk. saṁḍhi, OG. sāṁḍhi, MG. sā̃ḍh m. 'uncastrated bull' should be separated from sā̃ḍh, sā̃ḍhṇī f. 'female camel'. The former is related to Sk. śaṇḍaḥ 'uncastrated'; the source of latter is not clear. Sk. saṇḍhikā is a sanskritization of Pk. saṁḍhi (hence short -i in OG. and -zero in MG.). Bloch sā̃ḍ, Turner sā̃ḍ.

सांधिउ *sāṁdhiu* "having connected, aimed" past part. loc. sg. 157. Sk. saṁdadhāti Pk. saṁdhāi OG. sāṁdhai, sāṁdhiu. Bloch sā̃dh, Turner sā̃dhnu.

सांपडिउ *sāṁpaḍiu* "attained" past part. m. dir. sg. 461. Sk. *sampatita- cf. Sk. sampatati, v. s. v. paḍai. Bloch sā̃paḍṇẽ.

सांभरइ *sāṁbharai* "remembers" v. pres. 3rd sg. 326, 345, sāṁbharaim 3rd pl. 604; sāṁbharūm 1st sg. 345; saṁbharatā pres. part. obl. 345. sāṁbhari past part. f. 601. Sk. sáṁbharati 'collects', sambhārayati, Pk. saṁbhārei 'garnishes'; MG. saṁbhārvũ 'to remember' and sambhār 'masala used in cooking preparations'. Turner samalnu, samlhārnu.

सांभलइ *sāṁbhalai* "hears, listens" v. pres. 3rd sg. 429, 529, saṁbhalau imp. 2nd pl. 329; sāṁbhalata pres. part. (unenlarged 86); sāṁbhalatau pres. part. m. dir. sg. 426, sāṁbhalatā obl. pl. 426, sāṁbhaliu past part. m. dir. sg. 367, 519; sāṁbhalium n. sg. 109; sāṁbhaliyai pass. sg. 157, 420, sāṁbhaliyaim pass. pl. 371; sāṁbhalitā pass. pres. part. m. sg. 320; sāṁbhalivā inf. of purpose 426; sāṁbhalī abs. 85, 100, 498. cf. MG. bhāḷvũ 'to observe, see', nihāḷvũ 'to see', sā̃bhaḷvũ 'to hear', sambhāḷvũ 'to guard, take care of'. Sk. bhālayate, nibhālayati and sambhālayati. For -r- forms in MG. sambhārvũ, sambhār, see under sāṁbharai. Turner samālnu, niyālnu, sambhārnu.

सिंहदत्त *siṁhadatta* proper noun m. dir. sg. 525.

सिंह *siṁhu* proper noun m. dir. sg. 487.

सींचइ *sīṁcai* "sprinkles" v. pres. 3rd sg. 521; sīṁcatau pres. part. m. dir. sg. 519. Sk. siñcáti, Pk. siñcai. Bloch siṁcṇẽ, Turner siṁcnu.

सींधवु *sīṁdhavu* "rock-salt" sub. dir. sg. n. 20 Sk. saindhavá- Pk. siṁdhava-.

सुंचळु *sũncalu* "a type of salt" sub. dir. sg. n. 20. MG samcal]; De. suṁcalu–. Initial –um–> –a– in MG cannot be explained.

सुंठि *sũṇṭhi* "ginger" sub. f. sg. 314 also sumthī 291. Sk. śuṇṭhiḥ, śuṇṭhī 'dry ginger'. Pk. suṃṭhī, MG sũṭh; final –ī in OG. may be a prakritic influence. Bloch sũṭ, Turner suṭho.

स्तवउं *stavaũ* "I praise" v. pres. 1st sg. 377; stavisii fut. 3rd sg. 622; stavitai pass. pres. part. loc. sg. 80; lw. Sk. stava + OG verbal inflection.

स्मशानि *smaśāni* "to the burial ground" sub. n. loc. sg. lw. Sk. śmaśānaṁ., OG. smaśān + loc sg. suffix –i.

स्वाध्याउ *svādhyāu* "meditation, study." sub. m. dir. sg. (v. l. svādhyāya) 100. lw. Sk svādhyāyaḥ. svādhyāya– (for final –u in OG. cf. Sk. vinaya– lw. in OG. vinau MG. vano, Sk. śatruñjaya– lw. in OG. śatrumjau MG. śatrumjo, etc.)

*

हउं *haũ* "I" 1st pers. pro. nom. sg. m. f. (v. l. hum, hau, hũm) 74, 85; Sk. ahám, Pk. aham. ahaṁ. Initial a– before h– develops as a murmured vowel in MG. hũ.

हकारइ *hakārai* "calls, invites" v. pres. 3rd sg. 403; also hakārei (v. l.) 541. Sk. lex. hakkāra 'making of the sound hak", onomat. sound of calling Pk. hakkārei, hakkārai; MG. hamkarvũ 'to drive'; also cf. MG. hāk f. 'call, shout, challenge'. Bloch hãkṇẽ, Turner hãknu, hakārnu.

हडि *haḍi* "wooden fetters" sub. f. dir. 402. Sk haḍiḥ m., Pk. haḍi m., OG. haḍi f. MG heḍ f

हथियारु *hathiyāru* "weapon" sub. n. dir. sg. 329. Sk. *hasta-kāra– Pk. hatthiyāra– n Turner hatyār.

हथउडउ *hathauḍaũ* "hammer" sub dir. sg. m. 213. Sk. *hasta-kūṭa–; (Sk. hástaḥ and kūṭam 'mallet' Pk. kūḍa) Pk. *hattha-uḍa–, MG hathoḍo. Nasalisation in OG. cannot be explained. Turner hotro.

हरइ *harai* "takes away, robs" v. pres. 3rd sg.; harivā inf. of purpose 7. Sk. hárati, Pk. harai Bloch harṇẽ, Turner harnu

हरसिउ *harasiu* "pleased" past part. m. dir. sg. 429, harasiyā (v. l. harsiyā) pl. 142. Sk. hṛṣyati, harṣita; MG. harakh indicates that –s– should be interpreted as –kh– and hence the intervening stage *harisai, *harisiu should be independent of the Pk. harisia

हरियाळु *hariyālu* "sulphuret of arsenic, yellow orpiment" sub. dir. sg. m. 20 Sk. haritāla– m. Pk hariāla– m. n.

हलावउं *halāvaũ* "cause to shake, move" v. caus. pres. 1st sg. 302 Pk. hallai. MG. halvũ. but cf. Hindi hilnā, Panjabi hillṇā. Dravidian origin is suggested. Bloch hālṇẽ, Turner hilnu, hallinu.

[illegible] *hari[illegible]* proper noun m. dir. sg. 425

[illegible] *halayau* "light (of weight)" adj. dir. sg. m. 602 Probably the text should be halayaũ. cf MG halvo Sk. laghuḥ, laghukaḥ, Pk lahua–, halua– Bloch suggests Dravidian origin. Bloch halū Turner halka halaū

हव *hava* "now" adv 412, 590; v. l. havaṁ 484. MG have, cf H and other Bihari dialects ab, abe, abai etc. Absence of –h– forms in the western group leads Chatterji (ODBL p. [illegible]) to suggest Sk evam Pk evvam, for the a– cf the demonstrative base of Sk asau adas, atra etc. h– in Guj cannot be explained, but it may be analogical extension of Sk. adhunā, Pk ahunā MG hamṇā. OG alternant hiva with –i– in the initial syllable is properly explained by Pk. evvam, also OG havaliṁ hivaliṁ are explained as extended forms of hava– Thus MG. hamṇā and havṇā havṇe (dialectal) should be kept apart

हवडां *havaḍāṁ* "just now" adv. 142, also havaliṁ 465, 573 for der. s. v. hava

हसतउ *hasatau* "laughing, jesting" pres. part. m. dir. sg. 223, 314, 330 Sk. hasati, Pk. hasai, Bloch hasṇẽ Turner hãsnu

हस्तिपुर *hastipura* proper noun m. dir. sg. 461

हाकिउ *hākiu* "drove out" past part. m. dir. sg. 428 Pk hakkā f. "call", MG hākvũ to drive, s. v. hakārai

हाट *hāṭa* "shop" sub. sg. 269, 428, also hāṭṭa 474, Sk haṭṭaḥ m. 'market' [illegible] haṭṭa– m. [illegible] MG hāṭ f. n. Turner hāṭ

हाड *hāḍa* "bone" sub. m. dir. sg. 34[illegible] MG hāḍ [illegible] Pk. De. haḍḍa, Bloch suggests connection with Sk. asthi n. 'bone' [illegible] 'kernel of fruit', aṣṭhilā f. 'round pebble', but –ṣṭhi– > –ḍḍ– cannot be explained. Bloch hāḍ. Turner hāḍ

हाथ *hātha* "hand" sub. m. dir. sg. [illegible] inst. sg. [illegible], also [illegible] pl. 473, also [illegible] pl. 1[illegible], Sk. hastaḥ, Pk hattha– Bloch hāt, Turner hāt

संतावइ *samtāvai* " troubles, harasses " v. caus. pres. 3rd sg. 526. Sk. samtāpayati Pk. samtāvei. MG. satāvvũ; note the loss of nasal in most of NIA languages. Turner satāunu.

संथारउ *samthārau* " a bed (of a monk), place where the monks live " sub. m. dir. sg. 541; samthārai loc. sg. 323; samthārā obl. 338; MG sāthro ' bed on which a person is placed before death'; Sk. samstāra–, Pk. samthār, OG. ext.

संदिसावउं *samdisāvaum* " I get permission " v. caus. pres. 1st sg. 312; Sk. samdiśati, Pk. samdisai, caus. samdisāvei.

संदेसउ *samdesau* " message " sub. dir. sg. m. 192. Sk. samdeśa– Pk. samdesa– ext. in OG.

संधुखण *samdhukhana* " act of lighting (fire) " sub. n. 440, note OG. –ṣ– for –kh–. Sk. samdhukṣana– Pk. samdhukkhana–.

संनिवेसि *samnivesi* " in the residence " sub. m loc. sg. 112. Sk. samniveśa– Pk. samnivesa–.

संपजइ *sampajai* " succeeds, prospers, accrues " v. pres. 3rd sg. 588. Sk. sampadyate Pk. sampajjai.

संबंधिउ *sambamdhiu* " relative " sub. m. dir. sg. 16, 519; sambamdhium n. sg. 115; sambamdhiyām n. pl. 135. Sk. sambandhin Pk. sambamdhi ext. in OG.

संबंधिवउ *sambamdhivau* " should be related " ger. (denominative) dir. sg. m. 513. OG. sambamdha– (v. s. v. sambamdhiu) as a verbal stem.

संभर *sambhara* proper noun m. dir. sg. 110.

संभवइं *sambhavaim* " likely to happen, develop; to produce " v pres. 3rd pl. 433; sambhāviu caus. past part. m. dir. sg. 461; sambhāvitau pass. pres. part. m. dir. sg. 110; sambhāvi abs. 551. Sk. sambhavati, Pk. sambhavai, lw Pk.

संभारु *sambhāru* " goods, stuff " sub. m. dir. sg. 463. Sk. sambhārah Pa. sambhāro m. ' collection ', v. s. v sāmbharai.

संभूषी *sambhūṣī* " having adorned, provided " abs. 511. lw. Sk. sambhūṣati, sambhūṣ– + OG. abs. suffix.

संवच्छरिय *samvacchariya* " annual " sub. adj. 383; Sk. samvatsara–, sāmvatsarika. Pk. samvacchariya– lw. Pk.

संस्तवउं *samstavaum* " I praise " v. pres. 1st sg. 614; samstavatau pres. part. m. dir. sg. 110. lw. Sk. samstavate, samstav + OG. verbal suffixes.

संहरी *samharī* " having destroyed, withdrawn " abs. 463. Sk. samharati Pk. samharai. lw. samhar– + OG. abs. suffix.

सांईं *sāmīm* " meet cordially, embrace " sub. inst. sg. 416, also sāīe inst. 578; ety. not clear. cf. Sk. sajātih ' belonging to the same family ', see Turner sāinu.

सांचरतउं *sāmcaratauṁ* " moving, going " pres. part. m. dir. sg. 376. Sk. sañcarati, Pk. samcarai.

सांढि *sāmdhi* " female camel " sub. f. dir. sg. 311, 558. Sk. sandhikā, Pk. sandhī, OG. sāmdhi MG. sā̃ḍh m. ' uncastrated bull ' should be separated from sā̃ḍh, sā̃ḍhṇī f. female camel '. The former is related to Sk. śaṇḍah ' uncastrated ' the source of latter is not clear. Sk. sandhikā is a sanskritization of Pk. saṇḍhi (hence short –i in OG. and –zero in MG.). Bloch sā̃ṛ, Turner sā̃ṛ

सांधिइ *sāmdhii* " having connected, aimed " past part. loc. sg. 453. Sk. samdadhāti Pk. samdhā OG. sāmdhai, sāmdhiu. Bloch sā̃dh, Turner sā̃dhnu.

सांपडिउ *sāmpadiu* " attained " past part. m. dir. sg. 461. Sk. *sampatita– cf. Sk. sampatati v. s. v. padai. Bloch sā̃paṛṇẽ.

सांभरइ *sāmbharai* " remembers " v. pres. 3rd sg. 326, 345; sāmbharaim 3rd pl. 604; sāmbharūm 1st sg. 345; sāmbharatā pres. part. obl. 345 sāmbharī past part. f. 604. Sk. sāmbharati ' collects ', sambhārayati, Pk. sambhārei ' garnishes '; MG. sambhārvũ ' to remember ' and sambhār 'masala used in cooking preparations' Turner samālnu, sambhārnu.

सांभलइ *sāmbhalai* " hears, listens " v. pres. 3rd sg. 429, 529; sāmbhalau imp. 2nd pl. 329; sāmbhalata pres. part. (unenlarged 86); sāmbhalatau pres. part. m. dir. sg. 426, sāmbhalatā obl. pl. 426; sāmbhaliu past part. m. dir. sg. 367, 519; sāmbhalium n. sg. 109; sāmbhaliyai pass. sg. 157, 420, sāmbhaliyaim pass. pl. 371; sāmbhalitā pass. pres. part. m. sg. 326; sāmbhalivā inf. of purpose 426; sāmbhalī abs. 85, 109, 498. cf. MG. bhāḷvũ ' to observe, see ', nihāḷvũ ' to see ', sā̃bhaḷvũ ' to hear ', sambhāḷvũ ' to guard, take care of '. Sk. bhālayate, nibhalayati and sambhālayati. For –e– forms in MG. sambhārvũ, sambhār, see under sāmbharai. Turner samālnu, niyālnu, sambhārnu.

सिंहदत्तु *simhadattu* proper noun m. dir. sg. 525.

सिंहु *simhu* proper noun m. dir. sg. 487.

सींचइ *sīmcai* " sprinkles " v. pres. 3rd sg. 521; sīmcatau pres. part. m. dir. sg. 519. Sk. siñcati, Pk. siñcai. Bloch sĩcṇẽ, Turner sĩcnu.

सींधवु *sīmdhavu* " rock-salt " sub. dir. sg. n. 2) Sk. saindhava– Pk. simdhava–.

सूंचलु *sũmcalu* "a type of salt" sub. dir. sg. n. 20. MG. saṁcal; De. suṁcalu–. Initial –uṁ–> –a– in MG. cannot be explained.

सूंठी *sũmṭhi* "ginger" sub. f. sg. 314. also suṁṭhī 291. Sk. śuṇṭhiḥ, śuṇṭhi 'dry ginger'. Pk suṇṭhī, MG. sũṭh; final –ī in OG. may be a prakritic influence. Bloch sũṭ, Turner suṭho.

स्तवउं *stavaum* "I praise" v. pres. 1st sg. 377; staviśi fut. 3rd sg. 622; stavītai pass. pres. part. loc. sg. 80; lw. Sk. stava + OG. verbal inflection.

स्मसानि *smaśāni* "to the burial ground" sub. n. loc. sg. lw. Sk. śmaśānáṁ., OG. smaśān + loc. sg. suffix –i.

स्वाध्याउ *svādhyāu* "meditation, study." sub. m. dir. sg. (v. l. svādhyāya) 109. lw. Sk svādhyāyaḥ, svādhyāya– (for final –u in OG. cf. Sk. vinaya– lw. in OG. vinau MG. vano, Sk. śatruñjaya– lw. in OG. śatruṁjau MG. satrumjo, etc.)

*

हउं *haum* "I" 1st pers. pro. nom. sg. m. f. (v. l. hum, hau, hūṁ) 74, 85; Sk. ahám, Pk. aham, ahaaṁ. Initial a– before h– develops as a murmured vowel in MG. hũ.

हकारइ *hakārai* "calls, invites" v. pres. 3rd sg. 403; also hakārei (v. l.) 544. Sk. lex. hakkāra 'making of the sound hak', onomat. sound of calling. Pk. hakkārei, hakkārai; MG. haṁkārvũ 'to drive'; also cf. MG. hāk f. 'call, shout, challenge'. Bloch hā̃kṇē, Turner hā̃knu, hakārnu.

हडि *haḍi* "wooden fetters" sub. f. dir. 402. Sk. haḍiḥ m., Pk. haḍi m., OG. haḍi f. MG. heṛ f.

हथियारु *hathiyāru* "weapon" sub. n. dir. sg. 529. Sk. *hasta-kāra– Pk. hatthiyāra– n. Turner hatiyār.

हथूंडू *hathūmḍū* "hammer" sub. dir. sig. m. 213. Sk. *hasta-kūṭa–; (Sk. hástaḥ and kū́ṭam 'mallet' Pk. kūḍa) Pk. *hattha-ūḍa–. MG. hathoṛo. Nasalisation in OG. cannot be explained. Turner hotro.

हरइ *harai* "takes away, robs" v. pres. 3rd sg; harivā inf. of purpose 7. Sk. hárati, Pk. harai. Bloch harṇē, Turner harnu.

हरषिउ *harasiu* "pleased" past part. m. dir. sg. 429. harasiyā (v. l. harṣiyā) pl. 142. Sk. hárṣati, harṣita; MG. harakh indicates that –ṣ– should be interpreted as –kh– and hence the intervening stage *hariṣai, *hariṣiu should be independent of the Pk. harisia.

हरियालु *hariyālu* "sulphuret of arsenic, yellow orpiment" sub. dir. sg. m. 20 Sk. haritāla– m., Pk. hariāla– m. n.

हलावउं *halāvauṁ* "cause to shake, move" v. caus pres. 1st sg. 309. Pk. hallai, MG. halvũ; but cf. Hindi hilnā, Panjabi hillaṇā; Dravidian origin is suggested. Bloch hālṇē, Turner hilnu, hallinu.

हरिदत्तु *haridattu* proper noun m. dir. sg. 425.

हलयउ *halayau* "light (of weight)" adj. dir. sg. m. 602. Probably the text should be haluyau; cf. MG. haḷvo. Sk. laghúḥ, laghukaḥ, Pk. lahua–, halua–; Bloch suggests Dravidian origin. Bloch haḷū, Turner haluko, halaũ.

हव *hava* "now" adv. 452, 590, (v. l. hiva) 480; MG have; cf. H and other Bihari dialects ab, abe, abai etc. Absence of –b– forms in the western group leads Chatterji (ODBL p. 856) to suggest Sk. evám, Pk. evvam; for the a– of the demonstrative base of Sk. asau, adyá, átra etc. h– in Guj. cannot be explained, but it may be *analogical extension of* Sk. adhunā, Pk. ahuṇā MG. hamṇā̃ OG alternant hiva with –i– in the *initial syllable is properly explained* by Pk. evvam; also OG. havaḍāṁ– hivaḍāṁ are explained as extended forms of hava–. Thus, MG. hamṇā̃ and havrā, havṛe (dialectal) should be kept apart.

हवडा *havaḍā* "just now" adv. 142, also havaḍāṁ 465, 573. for der. s. v. hava

हसतउ *hasatau* "laughing, jesting" pres part m. dir. sg. 223, 514, 536. Sk. hasati, Pk. hasai; Bloch hasṇē, Turner hā̃snu.

हस्तिपुरु *hastipuru* proper noun m. dir. sg. 461.

हाकिउ *hākiu* "drove out" past part. m. dir. sg. 428. Pk hakkā f. "call", MG. hā̃kvũ to drive; v. s. v. hakārai.

हाट *hāṭa* "shop" sub. sg 386, 478, also haṭṭa 478; Sk haṭṭaḥ m. 'market', lex. haṭṭī f.; Pk. haṭṭa– m. haṭṭigā, haṭṭī f 'small shop', MG. hāṭ f. n. Turner hāṭ.

हाडु *hāḍu* "bone" sub. n. dir. sg. 245. MG. hāṛ n. 'bone' Pk. De. haḍḍa; Bloch suggests *connection* with Sk. *ásthi n.* 'bone', aṣṭīḥ f. 'kernel of fruit', aṣṭhīla f. 'round pebble', but –ṣṭha– > –ḍḍa– cannot [illegible] explained. *Bloch* hāṛ, Turner hāṛ.

हाथ *hātha* "hand" sub. m dir sig 38; hāthi inst. sg 538, 559; also loc. sg. 547; hāthe inst. pl. 463; also loc. pl 10; Sk. hásthaḥ, Pk. hattha–. Bloch hāt, Turner hāt.

संतावइ *saṁtāvai* " troubles, harasses " v. caus. pres. 3rd sg. 526. Sk. saṁtāpayati Pk. saṁtāvei. MG. satāvvũ; note the loss of nasal in most of NIA languages. Turner satāunu.

संथारउ *saṁthārau* " a bed (of a monk), place where the monks live " sub. m. dir sg. 541; saṁthārai loc. sg. 323; saṁthārā obl. 338; MG. sãthro ' bed on which a person is placed before death'; Sk. samstāra–, Pk. saṁthār, OG. ext.

संदिसावउं *saṁdisāvauṁ* " I get permission " v. caus. pres. 1st sg. 342; Sk. saṁdiśati, Pk. saṁdisai, caus. saṁdisāvei.

संदेसउ *saṁdesau* " message " sub. dir. sg. m. 192. Sk. saṁdeśa– Pk. saṁdesa– ext. in OG.

संधूषण *saṁdhūṣaṇa* " act of lighting (fire) " sub. n. 440; note OG. -ṣ- for -kh-. Sk. saṁdhukṣaṇa– Pk. saṁdhukkhaṇa–.

संनिवेसि *saṁnivesi* " in the residence " sub. m loc. sg. 112. Sk. saṁniveśa– Pk. saṁnivesa–.

संपजइ *saṁpajai* " succeeds, prospers, accrues " v. pres. 3rd sg. 588. Sk. sampadyate Pk. sampajjai.

संबंधिउ *saṁbaṁdhiu* " relative " sub. m. dir. sg. 16, 519; sambaṁdhiuṁ n. sg. 115; sambaṁdhiyāṁ n. pl. 135. Sk. sambandhin Pk. sambaṁdhi ext. in OG.

संबंधिवउ *saṁbaṁdhivau* " should be related " ger. (denominative) dir. sg. m. 513. OG. sambaṁdha– (v. s. v. sambaṁdhiu) as a verbal stem.

संभव *saṁbhava* proper noun m. dir. sg. 110.

संभवइं *saṁbhavaiṁ* " likely to happen, develop; to produce " v pres. 3rd pl 433; sambhāviu caus. past part. m. dir. sg. 461; sambhāvitau pass. pres. part m. dir. sg. 110, sambhāvi abs. 534. Sk. sambhavati, Pk. sambhavai, lw. Pk.

संभार *saṁbhāra* " goods, stuff " sub. m. dir. sg. 463. Sk. sambhāraḥ Pa. sambhāro m. ' collection '. v. s. v sāṁbharai.

संभूषी *saṁbhūṣī* " having adorned, provided " abs. 517. lw. Sk. sambhuṣati, sambhuṣ– + OG. abs. suffix.

संवच्छरिय *saṁvaccharīya* " annual " sub. adj. 383; Sk. saṁvatsara–, sāṁvatsarika, Pk. saṁvacchariya– lw. Pk.

संस्तवउं *saṁstavauṁ* " I praise " v. pres. 1st sg. 614; saṁstavatau pres. part. m. dir. sg. 110. lw. Sk. saṁstavate, saṁstav + OG. verbal suffixes.

संहरि *saṁhari* " having destroyed, withdrawn " abs. 463. Sk. saṁharati Pk. saṁharai. lw. saṁhar– + OG. abs. suffix.

सांईं *sāṁīṁ* " meet cordially, embrace " sub. inst. sg. 416, also sāīṁ inst. 578; ety. not clear. cf. Sk. sajātiḥ ' belonging to the same family ', see Turner sāinu.

सांचरतउं *sāṁcaratauṁ* " moving, going " pres. part m dir. sg. 376. Sk. sañcarati, Pk. saṁcarai.

सांढि *sāṁḍhi* " female camel " sub. f. dir. sg. 311, 558. Sk. saṇḍhikā, Pk. saṇḍhī, OG. sāṁḍhi. MG. sā̃ḍh m. ' uncastrated bull ' should be separated from sā̃ḍh, sā̃ḍhṇī f. female camel '. The former is related to Sk. śaṇḍaḥ ' uncastrated '; the source of latter is not clear Sk. saṇḍhikā is a sanskritization of Pk. saṇḍhi (hence short -i in OG and -zero in MG). Bloch sā̃r, Turner sā̃r

सांधिइ *sāṁdhii* " having connected, aimed " past part. loc. sg. 453. Sk. saṁdadhāti Pk. saṁdhāi OG. sāṁdhai, sāṁdhiu. Bloch sā̃dh, Turner sā̃dhnu.

सांपडिउ *sāṁpaḍiu* " attained " past part. m. dir. sg. 461 Sk. *saṁpatita– cf. Sk. saṁpatati, v. s. v. paḍai. Bloch sā̃parṇẽ.

सांभरइ *sāṁbharai* " remembers " v. pres. 3rd sg. 326, 345; sāṁbharaiṁ 3rd pl. 604; sāṁbharūṁ 1st sg. 345; sāṁbharatā pres. part. obl. 345. sāṁbharī past part. f. 604. Sk. sambharati ' collects ', sambhārayati, Pk. saṁbhārei ' garnishes '; MG. sambhārvũ ' to remember ' and sambhār ' masala used in cooking preparations'. Turner samālnu, sambhārnu.

सांभलइ *sāṁbhalai* " hears, listens " v. pres. 3rd sg. 429, 529; sāṁbhalau imp. 2nd pl. 329; sāṁbhalata pres. part. (unenlarged 86); sāṁbhalatau pres. part. m. dir. sg. 420, sāṁbhalatā obl. pl. 426, sāṁbhaliu past part. m. dir. sg. 367, 510; sāṁbhaliuṁ n. sg. 109; sāṁbhaliyai pass. sg. 157, 420, sāṁbhaliyaiṁ pass. pl. 371; sāṁbhalitā pass. pres. part. m. sg. 320; sāṁbhalivā inf. of purpose 426; sāṁbhalī abs. 85, 109, 498. cf. MG. bhāḷvũ ' to observe, see ', nibhāḷvũ ' to see ', sā̃bhaḷvũ ' to hear ', sambhāḷvũ ' to guard, take care of '. Sk. bhālayate, nibhālayati and sambhālayati. For -r- forms in MG. sambhārvũ, sambhār, see under sāṁbharai. Turner samālnu, niyālnu, sambhārnu.

सिंहदत्तु *siṁhadattu* proper noun m. dir. sg. 525.

सिंहु *siṁhu* proper noun m. dir. sg. 487.

सींचइ *sīṁcai* " sprinkles " v. pres. 3rd sg. 521; sīṁcatau pres. part. m. dir. sg. 549. Sk. siñcati. Pk. siñcai. Bloch sĩpṇẽ, Turner sĩcnu.

सींधवु *sīṁdhavu* " rock-salt " sub. dir. sg. n. 20 Sk. saindhava– Pk. siṁdhava–.

संचलु *sūmcalu* "a type of salt" sub. dir. sg. n. 20. MG. saṁcal; De. suṁcalu–. Initial –um–> –a– in MG. cannot be explained.

संठी *sūmṭhī* "ginger" sub. f. sg. 314. also suṁṭhī 291. Sk. śuṇṭhiḥ, śuṇṭhī 'dry ginger'. Pk suṇṭhī, MG. sūṭh; final –ī in OG. may be a prakritic influence. Bloch sũṭ, Turner suṭho.

स्तवउं *stavaum* "I praise" v. pres. 1st sg. 377; *staviśii* fut. 3rd sg. 622; *stavītai* pass. pres. part. loc. sg. 80; lw. Sk. stava + OG. verbal inflection.

स्मसानि *smasāni* "to the burial ground" sub n. loc. sg. lw. Sk. śmaśānaṁ., OG. smasān + loc. sg. suffix –i.

स्वाध्याउ *svādhyāu* "meditation, study." sub. m. dir. sg. (v. l. svādhyāya) 109. lw. Sk svādhyāyaḥ, svādhyāya– (for final –u in OG. cf. Sk. vinaya– lw. in OG. vinau MG. vano, Sk. śatruñjaya– lw. in OG. śatruṁjau MG. śatruṁjo, etc.)

*

हउं *haum* "I" 1st pers. pro. nom. sg. m f. (v. l. hum, hau, hūm) 74, 85; Sk. ahám, Pk. aham, ahaam. Initial a– before h– develops as a murmured vowel in MG. hũ.

हकारइ *hakārai* "calls, invites" v. pres. 3rd sg. 403; also hakārei (v. l.) 544. Sk. lex. hakkāra 'making of the sound hak", onomat. sound of calling. Pk. hakkārei, hakkārai; MG. haṁkārvũ 'to drive'; also cf. MG. hāk f. 'call, shout, challenge'. Bloch *hā̃kṇẽ*, Turner hā̃knu, hakārnu.

हडि *haḍi* "wooden fetters" sub. f. dir. 402. Sk. haḍiḥ m., Pk. haḍi m., OG. haḍi f. MG. heḍ f.

हथियारु *hathiyāru* "weapon" sub. n. dir. sg. 529. Sk. *hasta-kāra– Pk. hatthiyāra– n. Turner hatiyār.

हथूंडु *hathūmḍu* "hammer" sub dir. sg. m. 213. Sk. *hasta-kūṭa–; (Sk. hástaḥ and kūṭam 'mallet' Pk. kūḍa) Pk. *hattha-ūḍa–, MG. hathoḍo. Nasalisation in OG. cannot be explained. Turner hoṭro.

हरइ *harai* "takes away, robs" v. pres. 3rd sg; harivā inf. of purpose 7. Sk. hárati, Pk. harai. Bloch harṇẽ, Turner harnu.

हरषिउ *harașiu* "pleased" past part. m. dir. sg. 429. harașiyā (v. l. harșiyā) pl. 142. Sk. hárșati, harșita; MG harakh indicates that –ș– should be interpreted as –kh– and hence the intervening stage *harișai, *harișia should be independent of the Pk. harisia.

हरियालु *hariyālu* "sulphuret of arsenic, yellow orpiment" sub. dir. sg. m. 20. Sk. haritāla– m., Pk. hariāla– m. n.

हलावउं *halāvaum* "cause to shake. move" v. caus. pres. 1st sg. 309. Pk. hallai. MG. halvũ; but cf. Hindi hilnā, Panjabi hillaṇā; Dravidian origin is suggested. Bloch hālṇẽ, Turner hilnu, hallinu.

हरिदत्तु *haridattu* proper noun m. dir. sg. 425.

हलयउ *halayau* "light (of weight)" adj. dir. sg. m. 602. Probably the text should be haḷuyau; cf. MG. haḷvo. Sk. laghuḥ, laghukaḥ, Pk. lahua–, halua–; Bloch suggests Dravidian origin Bloch haḷū, Turner haluko, halaũ.

हव *hava* "now" adv. 452, 590, (v l hiva) 480; MG have; cf H. and other Bihari dialects ab, abo, abai etc. Absence of –b– forms in the western group leads Chatterji (ODBL p. 856) to suggest Sk. evám, Pk. evvam; for the a– of the demonstrative base cf. Sk. asau, adyá, átra etc. h– in Guj. cannot be explained, but it may be analogical extension of Sk. adhunā, Pk. ahuṇā MG. haṁṇā OG alternant hiva with –i– in the initial syllable is properly explained by Pk. evvam; also OG. havaḍām– hivaḍām are explained as extended forms of hava–. Thus, MG. haṁṇā and havṛā, havṛe (dialectal) should be kept apart.

हवडा *havaḍā* "just now" adv. 142, also havaḍām 465, 573. for der s. v hava.

हसतउ *hasatau* "laughing, jesting" pres. part. m. dir. sg 223, 514, 536. Sk. hasati, Pk. hasai; Bloch hasṇẽ, Turner hā̃snu.

हस्तिपुरु *hastipuru* proper noun m dir. sg. 461.

हाकिउ *hākiu* "drove out" past part m dir. sg. 428. Pk. hakkā f. "call"; MG. hā̃kvũ to drive; v. s. v. hakārai.

हाट *hāṭa* "shop" sub. sg. 386, 476, also haṭṭa 478; Sk. haṭṭaḥ m. 'market', lex haṭṭī f.; Pk. haṭṭa– m haṭṭigā, haṭṭī f. "small shop", MG. hāṭ f. n. Turner hāṭ.

हाडु *hāḍu* "bone" sub. n. dir. sg. 245. MG. hāḍ n. 'bone' Pk. De. haḍḍa; Bloch *suggests* connection with Sk. ásthi n. 'bone', asthi f. '*kernel of fruit*', aṣṭhīlā f. '*round pebble*', but –ṣṭha– > –ḍḍa– cannot be explained. Bloch *hāḍ*, Turner *hāḍ*.

हाथ *hātha* "hand" sub m dir sg 38; hāthi inst. sg. 538, 559; also loc. sg 545; hāthe inst. pl. 463; also loc. pl 10; Sk. hástaḥ, Pk. hattha–. Bloch hāt, Turner hāt.

संतावइ *saṁtāvai* " troubles, harasses " v. caus. pres. 3rd sg. 526. Sk. saṁtāpayati Pk. saṁtāvei, MG satāvvũ; note the loss of nasal in most of NIA languages. Turner satāunu.

संथारउ *saṁthārau* " a bed (of a monk), place where the monks live " sub. m. dir. sg. 541, saṁthārai loc. sg. 323; saṁthārā obl. 338; MG sãthro 'bed on which a person is placed before death'; Sk. saṁstāra-, Pk. saṁthār, OG. ext.

संदिसावउं *saṁdisāvauṁ* " I get permission " v. caus. pres. 1st sg. 312; Sk. saṁdiśati, Pk. saṁdisai, caus. saṁdisāvei.

संदेसउ *saṁdesau* " message " sub. dir. sg. m. 192. Sk. saṁdeśa- Pk. saṁdesa- ext. in OG.

संधुखण *saṁdhukhaṇa* " act of lighting (fire) " sub. n. 440; note OG. -ṣ- for -kh-. Sk. saṁdhukṣaṇa- Pk. saṁdhukkhaṇa-.

संनिवेसि *saṁnivesi* " in the residence " sub. m. loc. sg. 112. Sk. saṁniveśa- Pk. saṁnivesa-.

संपजइ *saṁpajai* " succeeds, prospers, accrues " v. pres. 3rd sg. 588. Sk. sampadyate Pk. sampajjai.

संबंधिउ *saṁbaṁdhiu* " relative " sub. m. dir. sg. 16, 519; sambaṁdhiuṁ n. sg. 115; sambaṁdhuyāṁ n. pl. 135. Sk. sambandhin Pk. sambaṁdhi ext. in OG.

संबंधिवउ *saṁbaṁdhivau* " should be related " ger. (denominative) dir. sg. m. 513. OG. sambaṁdhia- (v. s. v. sambaṁdhiu) as a verbal stem.

संभर *saṁbhara* proper noun m. dir. sg. 110.

संभवइं *saṁbhavaiṁ* " likely to happen, develop; to produce " v. pres. 3rd pl. 433; sambhāviu caus. past part. m. dir. sg. 461; sambhāvītau pass. pres. part. m. dir. sg. 110; sambhāvī abs. 534. Sk. sambhavati, Pk. saṁbhavai, lw. Pk.

संभारु *saṁbhāru* " goods, stuff " sub. m. dir. sg. 463. Sk. sambhāraḥ Pa. sambhāro m. 'collection', v. s. v. sāṁbharai.

संभूषी *saṁbhūṣī* " having adorned, provided " abs. 515. lw. Sk. sambhūṣati, sambhūṣ- + OG. abs. suffix.

संवच्छरिय *saṁvaccchariya* " annual " sub. adj. 385; Sk. saṁvatsara-, sāṁvatsarika, Pk. saṁvaccha-riya- lw. Pk.

संस्तवउं *saṁstavauṁ* " I praise " v. pres. 1st sg. 614; saṁstavatau pres. part. m. dir. sg. 110. lw. Sk. saṁstavate, saṁstav + OG. verbal suffixes.

संहरी *saṁharī* " having destroyed, withdrawn " abs. 463. Sk. saṁharati Pk. saṁharai, lw. saṁhar- + OG. abs. suffix.

साईं *sāīṁ* " most cordially, embrace " sub. inst. sg. 116, also sāīṁ inst. 578; ety. not clear, cf. Sk. sajātiḥ 'belonging to the same family', see Turner sāinu.

सांचरतउ *sāṁcaratau* " moving, going " pres. part. m. dir. sg. 376. Sk. saṁcarati, Pk. saṁcarai.

सांढि *sāṁḍhi* " female camel " sub. f. dir. sg. 311, 518. Sk. saṇḍhikā, Pk. saṁḍhi, OG. sāṁḍhi, MG sā̃ḍh m. 'uncastrated bull' should be separated from sā̃ḍh, sā̃ḍhṇi f. 'female camel'. The former is related to Sk. ṣaṇḍaḥ 'uncastrated'; the source of latter is not clear. Sk. saṇḍhikā is a sanskritization of Pk. saṁḍhi (hence short -i in OG. and -zero in MG.). Bloch sā̃ṛ, Turner sā̃ṛ.

सांधिउ *sāṁdhiu* " having connected, aimed " past part. loc. sg. 153. Sk. saṁdadhāti Pk. saṁdhai OG. saṁdhai, sāṁdhiu, Bloch sā̃dh, Turner sā̃dhnu.

सांपडिउ *sāṁpaḍiu* " attained " past part. m. dir. sg. 461. Sk. *sampatita- cf. Sk. sampatati, v. s. v. paḍai. Bloch sā̃paṛṇẽ.

सांभरइ *sāṁbharai* " remembers " v. pres. 3rd sg. 326, 345; sāṁbharaiṁ 3rd pl. 604; sāṁbharũṁ 1st sg. 343; sambharatī pres. part. obl. 345. sāṁbhari past part. f. 601. Sk. sāṁbharati 'collects', sambhārayati, Pk. saṁbhārei 'garnishes'; MG. sambhārvũ 'to remember' and sambhār 'masala used in cooking preparations'. Turner samālnu, saṁbhārnu.

सांभलइ *sāṁbhalai* " hears, listens " v. pres. 3rd sg. 429, 529; sāṁbhalau imp. 2nd pl. 329; sāṁbhalata pres. part. (unenlarged 86); sāṁbhalatau pres. part. m. dir. sg. 426, sāṁbhalatā obl. pl. 126; sāṁbhaliu past part. m. dir. sg. 367, 519; sāṁbhaluṁ n. sg. 109; sāṁbhaliyai pass. sg. 157, 420, sāṁbhaliyaiṁ pass. pl. 371; sāṁbhalītũ pass. pres. part. m. sg. 320; sāṁbhalivā inf. of purpose 426; sāṁbhalī abs. 85, 109, 498. cf MG. bhāḷvũ 'to observe, see', nihāḷvũ 'to see', sā̃bhaḷvũ 'to hear', sambhāḷvũ 'to guard, take care of'. Sk. bhālayate, nibhālayati and sambhālayati. For -r- forms in MG. sambhārvũ, sambhār, see under sāṁbharai. Turner samālnu, niyālnu, sambhārnu.

सिंहदत्तु *siṁhadattu* proper noun m. dir. sg. 525.

सिंहु *siṁhu* proper noun m. dir. sg. 487.

सींचइ *sīṁcai* " sprinkles " v. pres. 3rd sg. 521; sīṁcatau pres. part. m. dir. sg. 519. Sk. siñcati, Pk siñcai. Bloch sĩcṇẽ, Turner sĩcnu.

सींधवु *sīṁdhavu* " rock-salt " sub. dir. sg. n. 20 Sk. saindhavá- Pk. siṁdhava-.

सुंचलु *suṁcalu* "a type of salt" sub. dir. sg. n. 20. MG. saṁcaḷ; De. suṁcalu–. Initial –um–> –a– in MG. cannot be explained.

सूंठी *sūṁṭhi* "ginger" sub. f. sg. 314. also suṁṭhi 231. Sk. śuṇṭhiḥ, śuṇṭhī 'dry ginger'. Pk. suṇṭhī, MG. sũṭh; final –ī in OG. may be a prakritic influence. Bloch sũṭ, Turner sutho.

स्तवउं *stavauṁ* "I praise" v. pres. 1st sg. 377; stavisiũ fut. 3rd sg. 622; stavītai pass. pres. part. loc. sg. 80; lw. Sk. stava + OG. verbal inflection.

स्मसानि *smasāni* "to the burial ground" sub. n. loc. sg. lw. Sk. śmaśānáṁ., OG. smasān + loc sg. suffix –i.

स्वाध्याउ *svādhyāu* "meditation, study." sub. m. dir. sg. (v. l. svādhyāya) 109. lw. Sk. svādhyāyaḥ, svādhyāya– (for final –u in OG. cf. Sk. vinaya– lw. in OG. vinau MG. vano, Sk. śatruñjaya– lw. in OG. śatruṁjau MG. śatrumjo, etc.)

*

हउं *hauṁ* "I" 1st pers. pro. nom. sg. m. f. (v. l. hum, hau, hūṁ) 74, 85; Sk. ahám, Pk. aham, ahaaṁ. *Initial a– before h– develops as a murmured vowel in MG.* hũ.

हकारइ *hakārai* "calls, invites" v. pres. 3rd sg 403; also hakārei (v. l.) 544. Sk. lex. hakkāra 'making of the sound hak', onomat. sound of calling. Pk. hakkārei, hakkārai; MG. haṁkārvũ 'to drive'; also cf. MG. hā̃k f. 'call, shout, challenge'. Bloch hā̃kṇẽ, Turner hā̃knu, hakārnu.

हडि *haḍi* "wooden fetters" sub. f dir. 402. Sk. haḍiḥ m., Pk. haḍi m., OG. haḍi f. MG. heṛ f.

हथियारु *hathiyāru* "weapon" sub. n. dir. sg. 529. Sk. *hasta-kāra– Pk. hatthiyāra– n. Turner hatiyār.

हथुंडु *hathūṁḍū* "hammer" sub. dir. sg. m. 213. Sk. *hasta-kūṭa–; (Sk. hástaḥ and kū́ṭam 'mallet' Pk. kūḍa) Pk. *hattha-ūḍa–. MG. hathoro. Nasalisation in OG. cannot be explained. Turner hotro.

हरइ *harai* "takes away, robs" v. pres. 3rd sg; *harivā inf. of purpose 7. Sk. hárati, Pk. harai.* Bloch harṇẽ, Turner harnu.

हरसिउ *harasiu* "pleased" past part. m. dir. sg. 429. harasiyā (v. l. harṣiyā) pl. 142. Sk. hárṣati, harṣita; MG. harakh indicates that –ṣ– should be interpreted as –kh– and hence the intervening stage *harisai, *harisiu should be independent of the Pk. harisia.

हरियालु *hariyālu* "sulphuret of arsenic, yellow orpiment" sub. dir. sg. m. 20. Sk. haritāla– m., Pk hariāla– m. n.

हलावउं *halāvauṁ* "cause to shake, move" v. caus. pres. 1st sg. 309. Pk. hallai, MG. halvũ; but cf. Hindi hilnā, Panjabi hillaṇā; Dravidian origin is suggested. Bloch hālṇẽ, Turner hilnu, hallinu.

हरिदत्तु *haridattu* proper noun m. dir. sg. 425.

हलयउ *halayau* "light (of weight)" adj. dir. sg. m. 602. Probably the text should be haluyau; cf MG haḷvo. Sk. laghúḥ, laghukaḥ, Pk. lahua–, halua–, Bloch suggests Dravidian origin. Bloch haḷū. Turner haluko, halaũ.

हव *hava* "now" adv 452, 590, (v. l hiva) 480; MG. have; cf H. and other *Bihari dialects* ab, abe, abai etc. Absence of –b– forms in the western group leads Chatterji (*ODBL* p. 856) to suggest Sk evám, Pk. evvam, for the a– of *the demonstrative base cf.* Sk. asaú, adyá, átra etc. h– in Guj cannot be explained, but it may *be analogical extension of* Sk. adhunā, Pk. ahunā MG. hamṇā OG. alternant hiva with –i– *in the initial syllable is properly explained by* Pk. evvam; also OG. havaḍāṁ– hivaḍāṁ are *explained as extended forms of* hava–. Thus, MG. hamṇā and havṛā, havre (dialectal) should be kept apart

हवडा *havaḍā* "just now" adv. 142, also havaḍāṁ 465, 573. for der s v. hava.

हसतउ *hasatau* "laughing, jesting" pres. part. m dir. sg. 223, 514, 536. Sk. hasati, Pk. hasai; Bloch hasṇẽ, Turner hā̃snu.

हस्तिपुरु *hastipuru* proper noun m. dir. sg. 461.

हाकिउ *hākiu* "drove out" past part m. dir. sg. 428. Pk hakkā f. "call"; MG hā̃kvũ to drive; v. s. v. hakārai.

हाट *hāṭa* "shop" sub. sg 386, 478, also haṭṭa 478; Sk haṭṭaḥ m. 'market', lex. haṭṭī f.; Pk. haṭṭa– m. haṭṭigā, haṭṭī f. "small shop', MG. hāṭ f. n. Turner hāṭ.

हाडु *hāḍu* "bone" *sub. n. dir. sg.* 245. MG. hāṛ n. 'bone' Pk. De. haḍḍa; Bloch suggests connection with Sk. ásthi n. 'bone', asṭiḥ f. 'kernel of fruit', asṭhīla f. 'round pebble', but –stha– > –ḍḍa– cannot be explained. Bloch hāṛ, Turner hāṛ.

हाथ *hātha* "hand" sub. m. dir sg 38; hāthi inst. sg. 538, 559; also loc. sg. 545; hāthe inst. pl. 463; also loc. pl. 16; Sk. hástaḥ, Pk. hattha–. Bloch hāt, Turner hāt.

संचलु *sãmcalu* "a type of salt" sub. dir. sg. n. 20. MG saṃcaḷ; De. samcalu–. Initial -am-> -a- in MG. cannot be explained.

सूंठी *sũṃṭhi* "ginger" sub. f. sg. 314. also sumṭhī 291. Sk. śuṇṭhiḥ, śuṇṭhī 'dry ginger'. Pk. suṇṭhī, MG. sũṭh; final -ī in OG. may be a prakritic influence. Bloch sũṭ, Turner sutho.

स्तवउं *stavaum* "I praise" v. pres. 1st sg. 377; *stavisii fut.* 3rd *sg.* 622; *stavitai pass. pres.* part. loc. sg. 80; lw. Sk. stava + OG. verbal inflection.

स्मसानि *smasāni* "to the burial ground" sub. n. loc. sg. lw. Sk. śmaśānám., OG amasān + loc. sg. suffix -i.

स्वाध्याउ *svādhyāu* "meditation, study." sub. m dir sg (v. l. svādhyāya) 109. lw. Sk. svādhyāyaḥ, svādhyāya– (for final -u in OG. cf. Sk. vinaya-lw. in OG. vinau MG. vano, Sk. śatruñjaya-lw. in OG. śatrumjau MG. śatrumjo, etc.)

*

हउं *haum* "I" 1st pers. pro. nom. sg. m. f. (v. l. hum, hau, hūṃ) 74, 85; Sk. ahám, Pk. aham, ahaam. *Initial a- before h- develops as a* murmured vowel in MG. hũ.

हकारइ *hakārai* "calls, invites" v. pres. 3rd sg 403; also hakārei (v. l.) 544. Sk. lex. hakkāra 'making of the sound hak', onomat. sound of calling. Pk. hakkārei, hakkārai; MG. hamkārvũ 'to drive'; also cf. MG. hāk f. 'call, shout, challenge'. Bloch hā̃kṇẽ, Turner hā̃knu, hakārnu.

हडि *haḍi* "wooden fetters" sub. f. dir. 402. Sk. haḍiḥ m., Pk. haḍi m., OG. haḍi f. MG. heḍ *f.*

हथियारु *hathiyāru* "weapon" sub. n. dir. sg 529. Sk. *hasta-kāra– Pk. hatthiyāra– n. Turner hatiyār.

हथूंडु *hathūṃḍu* "hammer" sub. dir. sg. m. 213. Sk. *hasta-kūṭa–; (Sk. hástaḥ and kūṭam 'mallet' Pk. kūḍa) Pk. *hattha-ūḍa–. MG. hathoḍo. Nasalisation in OG. cannot be explained. Turner hotro.

हरइ *harai* "takes away, robs" v. pres. 3rd sg; harivā *inf. of purpose* 7. Sk. hárati, Pk. *harai.* Bloch harṇẽ, Turner harnu.

हरषिउ *harṣiu* "pleased" past part. m. dir. sg. 429, harasiyā (v. l. harṣiyā) pl. 142. Sk. hṛṣati, harṣita; MG. harakh indicates that -ṣ- should be interpreted as -kh- and hence the intervening stage *harisai, *harisia should be independent of the Pk. harisia.

हरियालु *hariyālu* "sulphuret of arsenic, yellow orpiment" sub. dir. sg. m. 20. Sk. haritāla– m., Pk. hariāla– m. n.

हलावउं *halāvaum* "cause to shake, move" v. caus. pres. 1st sg. 309. Pk. hallai, MG. halvũ; but cf. Hindi hilnā, Panjabi hillanā; Dravidian origin is suggested. Bloch hālnẽ, Turner hilnu, hallinu.

हरिदत्तु *haridattu* proper noun m. dir. sg 425.

हलयउ *halayau* "light (of weight)" adj. dir sg. m. 602. *Probably the text should be* halayau; cf. MG haḷvo Sk. laghuḥ, laghukaḥ, Pk lahua–, halua–, Bloch *suggests* Dravidian origin. Bloch haḷũ, Turner haluko, halaũ

हव *hava* "now" adv. 452, 590, (v. l. hiva) 480; MG. have; cf. H. and other Bihari dialects ab, abo, abai etc. Absence of -h- forms in the western group leads Chatterji (ODBL p. 856) to suggest Sk. evám, Pk. evvam; for the a- of the demonstrative base cf. Sk. asau, adyā, átra etc. *h- in Guj. cannot be explained, but it may* be analogical extension of Sk. adhunā, Pk. ahuṇā MG. hamṇā OG alternant hiva with -i- in the initial syllable is properly explained by Pk. evvam; also OG. havaḍām- hivaḍām are explained as extended forms of hava–. Thus, MG. hamṇā and havṇe. havṛe (dialectal) should be kept apart

हवडा *havaḍā* "just now" *adv.* 142, *also* havaḍām 465, 573 for der. s. v. hava.

हसतउ *hasatau* "laughing, jesting" pres. part. m dir. sg 223, 514, 536. Sk. hasati, Pk. hasai, Bloch hasṇẽ, *Turner* hā̃snu.

हस्तिपुरु *hastipuru* proper noun m. dir. sg. 461.

हाकिउ *hākiu* "drove out" past part. m. dir. sg 425. Pk. hakkā f. "call"; MG hā̃kvũ to drive; v. s. v. hakārai.

हाटु *hāṭu* "shop" sub. sg [illegible], 478, also haṭṭa 478; Sk haṭṭaḥ m. 'market', lex. haṭṭī f., Pk. haṭṭa– m. haṭṭiā, haṭṭī f. 'small shop', MG hāṭ f. n. Turner hāṭ

हाडु *hāḍu* "bone" sub. n. dir. sg 245 MG hāḍ n. 'bone' Pk De. haḍḍa; Bloch suggests connection with Sk. asthi n. 'bone', aṣṭhi f. 'kernel of fruit', aṣṭhīlā f. 'round pebble', but -ṣṭha- > -ḍḍa- cannot be explained. Bloch hāḍ, Turner hāḍ.

हाथ *hātha* "hand" sub. m. dir. sg. [illegible], hāthi inst. sg 528, 559; also loc. sg. 541; hāthe inst. pl. [illegible]; also loc. pl. 10; Sk. hástaḥ, Pk. hattha–, Bloch hāt, Turner hāt

संतावइ *samtāvai* " troubles, harasses " v. caus. pres. 3rd sg. 526. Sk. samtāpayati Pk. samtāvei. MG. satāvvũ; note the loss of nasal in most of NIA languages. Turner satāunu.

संथारउ *samthārau* " a bed (of a monk), place where the monks live " sub. m. dir sg. 541; samthārai loc. sg. 323; samthārā obl. 338; MG. sãthro 'bed on which a person is placed before death'; Sk. samstāra-, Pk. samthār, OG. ext.

संदिसावउं *samdisāvaum* " I get permission " v. caus. pres. 1st sg. 342; Sk. samdiśati, Pk. samdisai, caus. samdisāvei.

संदेसउ *samdesau* " message " sub. dir. sg. m. 192. Sk. samdeśa- Pk. samdesa- ext. in OG.

संधूयण *samdhūyana* " act of lighting (fire) " sub. n. 440, note OG. -y- for -kh-. Sk. samdhukṣana- Pk. samdhukkhana-.

संनिवेसि *samnivesi* " in the residence " sub. m loc. sg. 112. Sk. samniveśa- Pk. samnivesa-.

संपजइ *sampajai* " succeeds, prospers. accrues " v. pres. 3rd sg. 588. Sk. sampadyate Pk. sampajjai.

संबंधिउ *sambamdhiu* " relative " sub. m. dir. sg. 16, 519; sambamdhium n. sg 115; sambamdhiyām n. pl. 135. Sk. sambandhin Pk. sambamdhi ext. in OG.

संबंधिवउ *sambamdhivau* " should be related " ger. (denominative) dir. sg. m. 513. OG. sambamdha- (v. s. v. sambamdhiu) as a verbal stem.

संभव *sambhava* proper noun m. dir. sg. 110.

संभवइं *sambhavaim* " likely to happen, develop; to produce " v pres. 3rd pl 433; sambhāvia caus. past part. m. dir. sg. 461; sambhāvitau pass. pres. part m. dir. sg. 110; sambhāvi abs. 554. Sk. sambhavati, Pk. sambhavai, lw. Pk.

संभारु *sambhāru* " goods, stuff " sub. m. dir. sg. 463. Sk. sambharah Pk. sambhāro m. 'collection'. v. s. v. sāmbharai.

संभूषी *sambhūṣi* " having adorned, provided " abs. 515. lw. Sk. sambhūṣati, sambhuṣ- + OG. abs. suffix.

संवच्छरिय *samvacchariya* " annual " sub. adj. 383; Sk. samvatsara-, sāmvatsarika. Pk. samvacchariya- lw. Pk.

संस्तवउं *samstavaum* " I praise " v. pres. 1st sg. 614; samstavatau pres. part. m. dir. sg. 110. lw. Sk. samstavate, samstav + OG. verbal suffixes.

संहरी *samhari* " having destroyed, withdrawn " abs. 463. Sk. samharati Pk. samharai. lw. samhar- + OG. abs. suffix.

सांईं *sāmim* " meet cordially, embrace " sub. inst. sg. 446, also sāīe inst. 578; ety. not clear. cf. Sk. sajātih 'belonging to the same family', see Turner sāinu.

सांचरतउं *sāmcaratam* " moving, going " pres. part m dir. sg. 376. Sk. sañcarati, Pk. samcarai.

सांढि *sāmdhi* " female camel " sub. f. dir. sg. 311, 558; Sk. sandhikā, Pk. sandhi, OG. sāmdhi, MG. sā̃dh m. 'uncastrated bull' should be separated from sā̃dh, sā̃ḍhṇī f. female camel'. The former is related to Sk. śaṇḍah 'uncastrated'; the source of latter is not clear Sk. sandhikā is a sanskritization of Pk. sandhi (hence short -i in OG. and -zero in MG.). Bloch sā̃r, Turner sā̃r

सांधिउ *sāmdhiu* " having connected, aimed " past part. loc. sg. 453. Sk. samdadhāti Pk. samdhai OG. sāmdhai, sāmdhiu. Bloch sā̃dh, Turner sā̃dhnu.

सांपडिउ *sāmpadiu* " attained " past part. m. dir. sg. 461. Sk. *sampatita- cf. Sk. sampatati, v. s. v. padai. Bloch sā̃parṇẽ.

सांभरइ *sāmbharai* " remembers " v. pres. 3rd sg. 326, 345; sāmbharaim 3rd pl. 604; sāmbharūm 1st sg. 345; sāmbharatā pres. part. obl. 345. sāmbhari past part. f. 604. Sk. sambharati 'collects', sambhārayati, Pk. sambhārei 'garnishes'; MG. sambhārvũ 'to remember' and sambhār 'masala used in cooking preparations'. Turner samālnu, sambhārnu.

सांभलइ *sāmbhalai* " hears, listens " v. pres. 3rd sg. 429, 529; sāmbhalau imp. 2nd pl. 329; sāmbhalata pres. part. (unenlarged 86); sāmbhalatau pres. part. m. dir. sg. 426. sāmbhalatā obl. pl. 426; sāmbhalia past part. m. dir. sg. 367, 519; sāmbhalium n. sg. 109; sāmbhaliyai pass. sg. 157, 420, sāmbhaliyaim pass. pl. 371; sāmbhalitā pass. pres. part. m. sg. 320; sāmbhalivā inf. of purpose 426; sāmbhali abs. 83, 100, 498. cf. MG. bhāḷvũ 'to observe, see', nihāḷvũ 'to see', sā̃bhaḷvũ 'to hear', sambhāḷvũ 'to guard, take care of'. Sk. bhālayate, nibhālayati and sambhālayati. For -r- forms in MG. sambhārvũ, sambhār, see under sāmbharai. Turner samālnu. niyālnu, sambhārnu.

सिंहदत्तु *simhadattu* proper noun m. dir. sg. 525.

सिंहु *simhu* proper noun m. dir. sg. 487.

सींचइ *sīmcai* " sprinkles " v. pres. 3rd sg. 521; simcatau pres. part m. dir. sg. 519. Sk. siñcati, Pk. siñcai. Bloch sĩcṇẽ, Turner sĩcnu.

सींधवु *sīmdhavu* " rock-salt " sub. dir. sg. n. 20. Sk. saindhavā- Pk. simdhava-.

सूंचलु *sūmcalu* "a type of salt" sub. dir. sg. n. 20. MG. samcal; De. sumcalu–. Initial –um–> –a– in MG. cannot be explained.

सुंठी *sūmṭhi* "ginger" sub. f. sg. 314. also sumthī 291. Sk. śuṇṭhīh, śuṇṭhi 'dry ginger'. Pk. suṇṭhi, MG. sũṭh; final –i in OG. may be a prakritic influence. Bloch sũṭ, Turner sutho.

स्तवउं *stavaum* "I praise" v. pres. 1st sg. 377; stavisii fut. 3rd sg. 622; stavitai pass. pres. part. loc. sg. 80; lw. Sk. stava + OG. verbal inflection.

स्मसानि *smasāni* "to the burial ground" sub. n loc. sg. lw. Sk. śmaśānám., OG. smasān + loc. sg. suffix –i.

स्याध्याउ *syādhyāu* "meditation, study." sub. m. dir. sg. (v. l. svādhyāya) 109. lw. Sk. svādhyāyah, svādhyāya– (for final –u in OG. cf. Sk. vinaya– lw. in OG. vinau MG. vano, Sk. śatruñjaya– lw. in OG. śatrumjau MG. śatrumjo, etc.)

*

हउं *haum* "I" 1st pers. pro. nom. sg. m. f. (v. l. hum, hau, hūṁ) 74, 85; Sk. ahám, Pk. aham, ahaam. Initial a– before h– develops as a murmured vowel in MG. hũ.

हकारइ *hakārai* "calls, invites" v. pres. 3rd sg. 403; also hakārei (v. l.) 544. Sk. lex. hakkāra 'making of the sound hak", onomat. sound of calling. Pk. hakkārei, hakkārai; MG. hamkārvũ 'to drive'; also cf. MG. hāk f. 'call, shout, challenge'. Bloch hãkṇẽ, Turner hãknu, hakārnu.

हडि *hadi* "wooden fetters" sub. f. dir. 402. Sk. hadih m., Pk. haḍi m., OG. hadi f. MG. heṛ f.

हथियारु *hathiyāru* "weapon" sub. n. dir. sg. 529. Sk. *hasta-kāra– Pk. hatthiyāra– n. Turner hatiyār.

हथूंडु *hathūmḍu* "hammer" sub. dir. sig. m. 213. Sk. *hasta-kūṭa–; (Sk. hástah and kūṭam 'mallet' Pk. kūḍa) Pk. *hattha-ūḍa–. MG. hathoḍo. Nasalisation in OG. cannot be explained. Turner hotro.

हरइ *harai* "takes away, robs" v. pres. 3rd sg; harivā inf. of purpose 7. Sk. hárati, Pk. harai. Bloch harṇẽ, Turner harnu.

हरषिउ *harasiu* "pleased" past part. m. dir. sg. 429. harasiyā (v. l. harsiyā) pl. 142. Sk. hárṣati, harsita; MG. harakh indicates that –ṣ– should be interpreted as –kh– and hence the intervening stage *harisai, *harisiu should be independent of the Pk. harisia.

हरियालु *hariyālu* "sulphuret of arsenic, yellow orpiment" sub. dir. sg. m. 20. Sk. haritāla– m., Pk. hariāla– m. n.

हलावउं *halāvaum* "cause to shake, move" v. caus. pres. 1st sg. 309. Pk. hallai. MG. halvũ; but cf. Hindi hilnā, Panjabi hillaṇā; Dravidian origin is suggested. Bloch hālṇẽ, Turner hilnu, hallinu.

हरिदत्तु *haridattu* proper noun m. dir. sg. 425.

हलयउ *halayau* "light (of weight)" adj. dir. sg. m. 602. Probably the text should be haluyau; cf. MG. haḷvo. Sk. laghuh, laghukah, Pk. lahua–, halua–, Bloch suggests Dravidian origin. Bloch haḷū. Turner haluko, halaũ.

हव *hava* "now" adv. 452, 590, (v. l. hiva) 480; MG have; cf H and other Bihari dialects ab, abe, abai etc. Absence of –b– forms in the western group leads Chatterji (ODBL p. 856) to suggest Sk. evám, Pk. evvam; for the a– of the demonstrative base cf. Sk. asau, adyá, átra etc. h– in Guj cannot be explained, but it may be analogical extension of Sk. adhunā, Pk. ahunā MG. hamṇā OG alternant hiva with –i– in the initial syllable is properly explained by Pk. evvam; also OG, havaḍām- hivaḍām are explained as extended forms of hava–. Thus, MG. hamṇā and havrā, havre (dialectal) should be kept apart

हवडा *havaḍā* "just now" adv. 142, also havaḍām 465, 573. for der. s. v. hava.

हसतउ *hasatau* "laughing, jesting" pres. part. m dir. sg. 223, 514, 536. Sk. hasati, Pk. hasai, Bloch hasṇẽ. Turner hãsnu.

हस्तिपुरु *hastipuru* proper noun m. dir. sg. 461.

हाकिउ *hākiu* "drove out" past part. m. dir. sg. 428. Pk. hakkā f. "call"; MG hãkvũ to drive; v. s. v. hakārai.

हाटु *hāṭu* "shop" sub. sg. 386, 478, also haṭṭa 478; Sk. haṭṭah m. 'market', lex. haṭṭi f.; Pk. haṭṭa– m haṭṭiā, haṭṭi f. "small shop", MG. hāṭ f. n. Turner hāṭ.

हाडु *hāḍu* "bone" sub. n dir. sg. 245. MG hāṛ n. 'bone' Pk. De. haḍḍa; Bloch suggests connection with Sk. ásthi n. 'bone', asthi f. 'kernel of fruit', asthīlā f. 'round pebble', but –stha– > –ḍḍa– cannot be explained. Bloch hāṛ, Turner hāṛ.

हाथु *hāthu* "hand" sub. m. dir. sig. 24; hāthi inst. sg. 538, 559; also loc. sg. 545; hāthe inst. pl. 463; also loc. pl. 10; Sk. hástah. Pk. hattha–. Bloch hāt. Turner hāt.